खोज में उपलब्ध

हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों

का

अठारहवाँ त्रैवार्षिक विवरण

[सन् १९४१—४३ ई०]

प्रथम भाग

संपादक

पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र

मध्यप्रदेशीय शासन के संरक्षण में काशी नागरीप्रचारिणी सभा

द्वारा संपादित और प्रकाशित

काशी

सं० २०१६ वि०

खोज में उपलब्ध

हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों

का

अठारहवाँ त्रैवार्षिक विवरण

[सन् १९४१—४३ ई०]

प्रथम भाग

संपादक

पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र

उत्तरप्रदेशीय शासन के संरक्षण में काशी नागरीप्रचारिणी सभा
द्वारा संपादित और प्रकाशित

काशी

सं० २०१५ वि०

प्रकाशक—नागरीप्रचारिणी सभा, काशी
मुद्रक—महताबराय, नागरी मुद्रण, काशी
प्रथम संस्करण, सं० २०१५, १००० प्रतियाँ
मूल्य ११)

विषय सूची

———

वक्तव्य

खोज का अठारहवाँ त्रैवार्षिक विवरण पाठकों के सामने प्रस्तुत है। इसमें सन् १९४१-४३ ई० के खोज कार्य का उल्लेख किया गया है। यह दो जिल्दों में है। सामग्री की उपयोगिता की दृष्टि से इसका संक्षेपीकरण नहीं किया गया इसलिये कुछ बृहद् होते हुए भी अनुसंधान की दृष्टि से इसकी उपादेयता और बढ़ गई है। इस विवरण को भूतपूर्व निरीक्षक पं० विश्वनाथप्रसाद जी मिश्र ने खोज विभाग के साहित्यान्वेषकों, विशेषतः श्री दौलतराम जुयाल की सहायता से हिंदी में संपादन किया था। हिंदी में संपादन होने से इसमें उल्लिखित ग्रंथों और ग्रंथकारों का अनुक्रम भी हिंदी वर्णमाला के अनुसार है। पहले अंग्रेजी राज्य में प्रांतीय सरकार के नियमानुसार खोज विवरण अंग्रेजी में तैयार किए जाते थे इसलिये उनमें उक्त अनुक्रम अंग्रेजी लिपि के अनुसार रहते थे। अब यह बाधा नहीं रह गई है। पं० विश्वनाथप्रसाद जी मिश्र ने इस विवरण को छपने के पूर्व अच्छी तरह देख लिया था।

हम उत्तर प्रदेशीय सरकार के आभारी हैं जिसकी सहायता से खोज विवरणों का प्रकाशन हो रहा है तथा जिसे इस कार्य के संरक्षण का श्रेय प्राप्त है। खोज विवरणों का प्रकाशन संतोषप्रद रूप में अग्रसर हो रहा है। अब तीन खोज विवरण (सन् १९४४-४६; ४७-४९ ई०; ५०-५२ ई०) और रह गए हैं जिनके छप जाने पर वह पुराना कार्य समाप्त हो जाएगा जो प्रकाशन व्यवस्था के अभाव में दीर्घकाल से रुका हुआ था। हमें पूर्ण आशा है कि राज्यशासन की सहायता से उक्त शेष विवरण भी शीघ्र छप जाएँगे।

मैं सभा के प्रधान मंत्री डा० राजबली पांडेय के प्रति आभार प्रकट करना अपना कर्तव्य समझता हूँ जिन्होंने इस कार्य में पूर्ण रुचि लेते हुए इस विवरण को नागरी मुद्रणालय में छपवाने का तुरंत प्रबंध कर दिया। मुद्रणालय के मैनेजर बाबू महताबराय जी का मैं विशेष अनुगृहीत हूँ जिन्होंने प्रस्तुत विवरण को समय पर छापने के अतिरिक्त प्रूफ संशोधन के कार्य में बड़ी सहायता पहुँचाई। खोज विभाग के अन्वेषक श्री दौलतराम जुयाल के परिश्रम और लगन से ही यह कार्य शीघ्र संपन्न हो सका है। इस खोज विवरण को प्रस्तुत करने का श्रेय भी उनको है। अतः वे विशेष रूप से धन्यवाद के भाजन हैं। खोज विभाग के सहायक श्री कुलदीपनारायण जी 'झड़प' एवं श्री शिवशंकर मिश्र को भी उनकी सहायता के लिये धन्यवाद देता हूँ।

उत्तर प्रदेशीय राज्यशासन द्वारा दिए गए प्रथम १०,०००) रु० के अनुदान से चार त्रैवार्षिक विवरण (सन् १९२६-३७ ई०) छापे गए थे। उनके पश्चात् चार त्रैवार्षिक विवरणों (सन् १९३८-४९ ई०) के प्रकाशन के निमित्त भी राज्यशासन से १६ जुलाई १९५६ ई० की राजाज्ञा द्वारा कृपापूर्वक ७०००) रु० का द्वितीय अनुदान मिला। हमने

आशा की थी कि इस द्वितीय अनुदान से उक्त शेष विवरणों में से तीन त्रैवार्षिक विवरण छाप लिए जाएँगे, परंतु ऐसा संभव न हो सका। इधर जो दो त्रैवार्षिक विवरण (सन् १९३८-४० ई०, पृष्ठ संख्या ४८८ ; सन् १९४१-४३ ई० पृष्ठ संख्या ११६६) छापे गए हैं उनमें कहीं अधिक व्यय हो गया। इसका कारण एक तो प्रस्तुत खोज विवरण का दो जिल्दों में छपना है और दूसरा कागज का अधिक महँगा हो जाना है। अस्तु, अब सन् १९५० ई० के पहले के केवल दो खोज विवरण छपने शेष रह गए हैं। मेरा विश्वास है कि राज्य सरकार की सहायता से हम इन्हें भी शीघ्र प्रकाशित कर देंगे।

काशी
७-१-५९

हजारीप्रसाद द्विवेदी
निरीक्षक, खोज विभाग

प्राचीन हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों की खोज का ❀
अठारहवाँ त्रैवार्षिक विवरण

(सन् १९४१—४३ ई०)

इस त्रिवर्षी (सन् १९४१, ४२, ४३ ई०) में खोज का कार्य दो निरीक्षकों और दो संयुक्त निरीक्षकों की देखरेख में हुआ। प्रथम वर्ष पं० विद्याभूषण जी मिश्र निरीक्षक और पं० रामबहोरी जी शुक्ल संयुक्त निरीक्षक रहे। तत्पश्चात् डा० वासुदेवशरण जी अग्रवाल को निरीक्षक और मुझे संयुक्त निरीक्षक चुना गया। परंतु यह चुनाव भी अधिक नहीं टिक सका और उक्त अवधि की परिसमाप्ति पर सभा ने निरीक्षक का कार्यभार मुझे ही सौंप दिया। फलतः यह खोज विवरण मेरे निरीक्षण में तैयार किया गया है।

विवरण को आरंभ करने के पहले मैं पं० परशुराम जी चतुर्वेदी (बलिया) स्वर्गीय पं० अयोध्यासिंह जी उपाध्याय 'हरिऔध' (आजमगढ़) और पं० देवीप्रसाद जी शुक्ल (सरस्वती संपादक, प्रयाग) के प्रति आभार प्रदर्शित करना अपना कर्तव्य समझता हूँ जिन्होंने अपने-अपने क्षेत्रों में सभा के अन्वेषकों को अमूल्य सहायता प्रदान की। वास्तव में इन विद्वानों के परिश्रम और पूर्ण सहयोग से ही प्रस्तुत खोज का कार्य संतोषप्रद रूप में संपन्न हुआ।

प्रस्तुत खोज विवरण की कार्यावधि में खोज का कार्य बलिया, आजमगढ़ और इलाहाबाद जिलों तथा काशी नगर में हुआ। बलिया का कार्य समाप्त हो जाने पर वहाँ के अन्वेषक श्री दौलतराम जुयाल आजमगढ़ जिले में कार्य करने के लिये भेज दिए गए।

इस कार्यकाल के समाप्त होने के लगभग एक वर्ष पहले खोजकार्य में बाधा डालने वाली दो घटनाएँ हुईं। एक तो इलाहाबाद में कार्य करनेवाले नये अन्वेषक श्री महेशचंद्र गर्ग एम० ए० ने अकस्मात् त्यागपत्र दे दिया और दूसरे अगस्त आंदोलन के कारण पुराने अन्वेषक श्री दौलतराम जुयाल अपने कार्यक्षेत्र से काशी लौट आए। फिर भी जैसा आगे के विवरणों से पता चलेगा, कार्य को संतोषप्रद स्थिति में लाने का पूरा प्रयास किया गया।

श्री महेशचंद्र गर्ग के स्थान पर श्री उदयशंकर त्रिवेदी की नियुक्ति की गई थी; परंतु छह मास पश्चात् वे भारत कलाभवन में चले गए। उनके स्थान पर श्री विद्याधर त्रिवेदी नियुक्त हुए। श्री दौलतराम जुयाल तथा नवीन अन्वेषक सभा में रहकर आर्यभाषा पुस्तकालय के हस्तलिखित ग्रंथों के विवरण लेने और प्रस्तुत खोज विवरण के प्रस्तुत करने का कार्य करते रहे।

❀ यह सारा विवरण खोज विभाग के अन्वेषक श्री दौलतराम जुयाल ने प्रस्तुत किया है, जिसके लिये वे धन्यवादार्ह हैं। विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

इस त्रिवर्षी के आरंभ में युक्तप्रांत (अब उत्तर प्रदेश) की सरकार की एक विशेष आज्ञा (आर्डर नंबर १४५५।ऐक्स वी ३१३।४०) प्राप्त हुई जिसका पालन करते हुए निम्नलिखित चार बातों का ध्यान रखा गया —

१—हस्तलिखित ग्रंथ प्राप्त करना ।

२—महत्वपूर्ण हस्तलिखित ग्रंथों की, जो प्राप्त न हो सकें, प्रतिलिपि करना ।

३—प्राप्त हुए हस्तलिखित ग्रंथों की जिल्दबंदी करना तथा उनकी नामानुक्रमणिका तैयार करना ।

४—उन हस्तलिखित ग्रंथों का विवरण लेना जो अबतक खोज में न मिले हों तथा पूर्व विवृत उन ग्रंथों का भी विवरण लेना जो रचनाकाल, लिपिकाल, पाठ की शुद्धता अथवा अन्य दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण हों ।

इनके अनुसार प्रस्तुत तीन वर्षों में किस प्रकार कार्य हुआ, उसका विवरण क्रमानुसार इस प्रकार है—

१—प्राप्त किए गए समस्त हस्तलिखित ग्रंथों की संख्या ११० है जिनकी सूची आगे परिशिष्ट ६ में दी गई है ।

२—जिन ग्रंथों की प्रतिलिपियाँ हुई हैं उनके नाम इस प्रकार हैं—

१—नल दमन काव्य—सूरदास (अष्टछाप के सूरदास से भिन्न) कृत । यह प्रबंध काव्य है ।

२—संतवाणियों की चार जिल्दें जिनमें ३४ ग्रंथ हैं । इनमें बावरी साहबा, बीरू साहब, बुल्लासाहब, गुलाल साहब, भीखा साहब और देवकीनंदन साहब आदि निर्गुन संतों के उच्चकोटि के पद हैं । ये संत एक ही परंपरा के हैं ।

३—रूपसरी—शिव नारायण स्वामी कृत ।

४—संतसागर— ,, ,, ,,

५—संताखरी— ,, ,, ,,

६—संतविचार— ,, ,, ,,

७—संत उपदेश— ,, ,, ,,

८—शब्द ग्रंथ महिमा— ,, ,, ,,

९—शब्द ग्रंथ संताखरी— ,, ,,

३—हस्तलिखित ग्रंथों की जिल्दबंदी तथा नामानुक्रमणिका प्रस्तुत करने का कार्य चल रहा है जो थोड़े दिनों में संपन्न हो जायगा ।

४—विवरण लेने के कार्य का, जो विवरण का प्रधान अंग है, आगे विस्तार पूर्वक वर्णन किया जाता है —

समस्त ७५० ग्रंथों की ८०८ प्रतियों के विवरणपत्र प्राप्त हुए। इनमें जोधपुर के श्री महावीर सिंह गहलोत एम० ए० के भेजे हुए १०४ ग्रंथों के विवरण भी संमिलित हैं। यह कार्य तीन वर्षों में इस प्रकार विभक्त है—

सन् ईसवी	विवरण लिए हुए ह० लि० ग्रंथों की संख्या।
१९४१	२४३
१९४२	३५३
१९४३	२१२

३८९ ग्रंथकारों के रचे ६०१ ग्रंथों की ६६१ प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। उनके अतिरिक्त १४७ ग्रंथ ऐसे हैं जिनके रचयिता अज्ञात हैं। ३२४ ग्रंथकारों के निर्मित ५१८ ग्रंथ खोज में बिल्कुल नवीन हैं। इनमें २५५ ऐसे नवीन ग्रंथ सम्मिलित हैं जिनके रचयिता तो ज्ञात थे, किंतु उनके इन ग्रंथों का पता नहीं था।

ग्रंथों और उनके रचयिताओं का शताब्दिक्रम निम्नलिखित है—

शताब्दी	१२वीं	१३वीं	१५वीं	१६वीं	१७वीं	१८वीं	१९वीं	अज्ञात	योग
ग्रंथकार	१	१	५	२०	५६	५७	४१	२०५	३८९
ग्रंथ	१	१	२१	१०	४१	४८	३७	६४९	८०८

ग्रंथों का विषयानुसार विभाजन इस प्रकार है—

(१)—धार्मिक और सांप्रदायिक ३४, (२) भक्ति, स्तोत्र और माहात्म्य—२२८, (३) आध्यात्मिक तथा दर्शन—५९, (४) कोकशास्त्र—३, (५) लीला विहार—३७, (६) उपदेश, नीति और ज्ञान वैराग्य—९८, (७) प्रेम और श्रृंगार—५०, (८) जीवनी—१०, (९) स्वरोदय—७, (१०) शालिहोत्र—४, (११) योग—२, (१२) काव्य—५२, (१३) सामुद्रिक—१, (१४) कथा कहानी तथा वार्ता—१७, (१५) रमल तथा शकुन—५, (१६) रीति और पिंगल—३६, (१७) विरुदावली तथा वंशावली—१०, (१८) इंद्रजाल तथा तंत्र मंत्र—४, (१९) पुराण और इतिहास—२३, (२०) पौराणिक कथा—३३, (२१) राजनीति—५, (२२) अलंकार—८, (२३) संगीत—३, (२४) कोश—२, (२५) यात्रा—१, (२६) ज्योतिष २, (२७) वैद्यक—१९, (२८) विविध—५५।

नवीन रचयिताओं में जो मुख्य हैं उनका उल्लेख सिद्ध (नाथ योगी), संत,

प्रेमकथानक काव्य रचयिता, रीति-ग्रंथों के प्रणेता तथा फुटकल ग्रंथों के रचयिताओं के क्रम से किया जाता है—

१—सिद्धों या नाथ योगियों में गोरखनाथ, भरथरी, चिरपट, गोपीचंद, जलंधरी पाव, पृथ्वीनाथ, चौरंगीनाथ, कणेरीपाव, हालीपाव, मीडकीपाव, हणवंत, नागा अरजन, सिद्धहरताली, सिद्धगरीब, धुंधलीमल, रामचंद्र, बालगुदाई, घोड़ाचोली, अजैपाल, चौंणक नाथ, देवलनाथ, महादेव, पारवती, सिद्धमालीपाव, सुकुलहंस और दत्तात्रेय हैं।

प्रस्तुत खोज में इनकी बानियाँ या सबदियाँ मिली हैं जो हस्तलेख (सभा में विद्यमान, हस्तलेख संख्या ८७३) में एक ही जगह दी हुई हैं। पुष्पिका भी एक ही है जिसका आरंभ का वाक्य इस प्रकार है—

'इति सिधूं की वाणी संपूर्ण''

इससे यद्यपि यह प्रकट होता है कि ये सिद्ध थे तथापि इनमें केवल गोरखनाथ, चिरपट, जलंधरीपाव, चौरंगीनाथ, कणेरीपाव, और नागा अरजन ही ऐसे हैं जिनके नाम सिद्धों की नामावली से मिलते हैं (देखिये पं० रामचंद्रशुक्ल का हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ ८) गोरखनाथ, चिरपट, जलंधरीपाव, तथा नागा अरजन नाथों की परंपरा में भी हैं। शेष नाम न तो सिद्धों के नामों से मिलते हैं और न नाथों के नामों से ही। फिर भी, ये नाम लोगों में प्रसिद्ध हैं और अब जहाँ तहाँ इनकी सबदी और बानियाँ भी मिल रही हैं। इन्हें अलौकिक शक्तिसंपन्न भी बतलाया जाता है; कदाचित् अलौकिक शक्तिसंपन्न मानकर ही इन्हें सिद्ध कहा गया है, विशेष अर्थ में ये सिद्ध नहीं थे।

कुछ नाम हणवंत, रामचंद्र, महादेव, और पारवती ऐसे हैं जो कुतूहल उत्पन्न करते हैं तथा जिनके मूल रचयिता होने में संदेह होता है। ये नाम पुराणों में आए देव, देवी और अवतारों के हैं। इनके विषय में यह समझना कि इन्होंने सबदियाँ आदि कही हैं, युक्तिसंगत नहीं जँचता। इन सबदियों में से बहुतों की भाषा प्राचीन है, जैसे—गोरखनाथ की वाणियाँ तथा भरथरी, चरपट, गोपीचंद और कणेरी आदि की सबदियाँ।

हस्तलेख में हणिवंत वीर, हालीपाव, कणेरीपाव, भरथरी, लाल या ठीकर, सतवंती, और रुघनाथ (?) के कुछ पद अलग से भी संगृहीत हैं। इसी में "महापुरुषों के पद फुटकर" शीर्षक से कुछ और प्राचीन संतों और योगियों के पद दिए हैं जिनमें मछीन्द्रनाथ के भी थोड़े से पद हैं।

खेद है, प्रस्तुत, बानियों और सबदियों द्वारा इन सिद्धों के समय तथा परिचय के विषय में कुछ ज्ञात नहीं होता। सामान्यतः इनका समय १० वीं शताब्दी से लेकर १४ वीं शताब्दी तक कहा जाता है।

बानियों का विषय संसार को निस्सार बताकर योग द्वारा मुक्तिलाभ करना है।

रचनाकाल का उल्लेख नहीं मिलता, लिपिकाल संवत् १८५५ है। हस्तलेख में सिद्धों की बानियों के अतिरिक्त, निरगुन संतों की भी रचनाएँ हैं, देखिये सेवादास।

गोरखनाथ पिछले खोज विवरणों में कई बार उल्लिखित हैं, देखिये खोज विवरण (२-६, १६६, १७९, १५६, १६८, १४३, २९९, २१९, १५७) (३-८५) (९-९९) (पं० रिपोर्ट ३३) (३५-३०)। इस बार अन्य सिद्धों के साथ नाम आने के कारण ही यहाँ उनका उल्लेख किया गया है। उनकी जो रचनाएँ मिली हैं उनके नाम इस प्रकार हैं—

१-गोरखबोध, २-दत्तात्रयगोरख संवाद, ३-गोरख गणेशगुष्टि, ४-ज्ञान तिलक, ५-आभै मातरा, ६-बीतीस लक्षन, ७-ग्रंथ सिद्धि पुराण, ८-चोबीस सिध्य, ९-आत्माबोध ग्रंथ, १०-ग्रंथ खड़ाचारी, ११-रसरासि ग्रंथ, १२-ग्रंथ गिनानमाला (ज्ञानमाला), १३-ग्रंथ रोमावली पंचमातरा, १४-पंच अगनि तिथि जोग ग्रंथ, १५-ग्रंथ सपतवार नौ ग्रह, १६-आत्माबोध,१७-सिप्यादरसण, १८-अष्टमुद्रा, १९-अष्ट चक्र व न खै बोध, २०-रामबोध, २१-पद और २२-सबदी।

पदों के अर्थ भी सूत्र रूप में दिए गए हैं।

नीचे प्रस्तुत सिद्धों की बानियों से थोड़े-थोड़े उद्धरण दिए जाते हैं—

गोरखनाथ

॥ अथपद ॥ राग आसावरी ॥

मारौ मारौ श्रपणी नृमल जल पैठी। त्रिभुवन डसतां गोरख नाथ दीठी ॥ टेक ॥
मारि ल्यौ श्रपनी जगाइ ल्यौ भूंरा। जिनमारी श्रपनी ताकौ कहा करै जौंरा ॥ १ ॥
श्रपनी कहै मैं अमला मलीया। ब्रह्मा विष्ण महादेव छलीया ॥ २ ॥

× × × ×

॥ अथ भरथरी जी की सबदी ॥

अहंकारे प्रथमी षीणी पहौपै षीणां भूंरा।
सतिसति भापंतरा जोगी भरथरी पिंड का बैरी जूंरा ॥ १ ॥

दुषिया रोवंत सुषीया हसंत केला करंत कांमंणी।
सूरा जूझंत भूंदू भाजंत सति सति भापंत राजाभरथरी ॥ २ ॥
दुषी राजा दुषी प्रजा दुखी बांभण वांणीयां।
सुषी राजा भरथरी ज्यन गुर का सबद पिंछांणीयां ॥ ३ ॥

× × ×

॥ अथ चिरपट जी की सबदी ॥

काया तरवर माकड़ चित। डालै पातै भरमै नित।
कलपै झलपै दह दिस जाइ। तिस कारणि कोइ सिधनथाइ ॥ १ ॥

ढीलक छोटी मन भंग फिरै । घरि घरि नैन पसारा करै ।
षाया झरै न वाचा फुरै । ता कारणि भूंदू झरि झरि मरै ॥ २ ॥
मन चंचल पवना चंचल चंचल वाई धारा ।
या घटिमधि तीनूं चंचल क्यूं राषिवा झरता पिंड का द्वारा ॥ ३ ॥

× × ×

॥ गोपीचंद जी की सबदी ॥

राजा तजिलै पूता पाट तजिलै तजिलै हस्ती घोड़ा ।
सति सति भाषंत मातामैणांवती रे पूता कलि मैं जीवन थोड़ा ॥ १ ॥
राजा कै घरि रांणी होती माता हमरै होती माई जी ।
सत षणै चौवारै बैठंती माता यहू ग्यांन कहां तै ल्याइ जी ॥ २ ॥
गुरु हमारै गोरष बोलीए चरपट है गुर भाइ जी ।
एक सबद हमकूं गुरु गोरखनाथ दीया सो वो लष्या मैणांवती माइजी ॥३॥

× × ×

मन चलंतां पवन चलै पवन चलंतां विंद ।
विंद चलंतां कंध पड़ै तूं भाषै गोपीचंद ॥ १९ ॥

× × ×

॥ अथ जलंधरी पाव जी की सबदी ॥

सुनि मंडल मैं मन का वासा । जहां प्रम जोति प्रकासा ॥
आपै पूछै आपै कहै । सतगुर मिलैपै प्रम पद लहै ॥
एक अचंभा ऐसा हुवा । गागर मांहि उपास्या कूवा ॥
वोछी नेज पहूचै नांही । लोक पाया सामरि मरि जांही ॥

× × ×

॥ पृथीनाथ जी की सबदी ॥

हंस चढ्या साइर तिरूं सिंध चढ्या वन मांही ।
हस्तीपाषर मेल्हि कै मन सूं जूझैण जांही ॥ १ ॥
सोउं तौ हाथि न आवई जागूं तौ भागा जाइ ।
मन ही सेती झूझना बाघ हूवा जगषाइ ॥ २ ॥

× × × ×

मन मुद्रा सुरति सिका सतगुर सबदां बेध्यां कांन ।
जोगी का घर कठिन है पृथीनाथ कहै बैकूंठ आसांन ॥४॥

× × × ×

॥ चौरंगीनाथजी की सबदी ॥

मूल सींचोरे अवधू मूल सींचौ ज्यूं तरवर मेल्हंत डालं ।
अम्हे चौरंगी मूल सींचिया अनभै उतरया पारं ॥ १ ॥

मालीलो भल मालीलो सींचै सहज कियारी।
उनमन कला एक पहौप निपाया आवागमन निवारी ॥ २ ॥

मारिबा तौ मनमस्त मारिबा लुटिबा पवन भंडारं।
साधिबा तौ पंच तत साधिबा सेयबा तौ निरंजन निराकारं ॥३॥

× × × ×

॥ कणेरीपावजी की सबदी ॥

सगौ नहीं संसार चित नहीं आवै बैरी।
निरभै होइ निसंक हरष मैं हंस्यौ कणेरी ॥ १ ॥
हंस्यौ कणेरी हरष मैं एक लड़ैआ रन।
जुरा विछोही जो मरद मरन विछोह्या मन ॥ २ ॥
मनवा मेरा बीज विजोवै पवना बाडि लगावै।
चेतन रावल पहरै बैठा मृघा पेतन पावै ॥ ३ ॥

× × × ×

॥ हालीपावजी की सबदी ॥

अजपा जपौ रे अवधु अजपा जपौ पुजौ निरंजन थांन।
गगन मंडल मैं जोति लपाई देपि धरेबा ध्यान ॥ १ ॥
ल्यौकी आंषि चेतन की पांषि। दिवि रहै दिष्टि सुनिकूं झांषि।
अगम अगोचर तहां गुरुकूं लहै। एतत देपि सिध हालीपाव कहै ॥

× × × ×

॥ मीडकीपावजी की सबदी ॥

पिंड चलंतां सबको देखै प्राण चलंत अकेला।
प्रान चलंता जे नर देषै तास गुरू मैं चेला ॥ १ ॥

कहां बसै गुरू कहां बसै चेला। कूण सषेत्र कैसैं मेला।
ऐसा ग्यान कथौ रे भाई। गुर सिख की कूंणवो लपाई ॥ १ ॥

× × × ×

॥ हणवंतजी की सबदी ॥

वक्ता आगे श्रौता होइबा धींगं देखि मसकीनं।
सिधकै आगै साधिक होइबा यूं सति सति भापंत हणवंतवीरं ॥ १ ॥

बेद पढ़े पढ़ि पंडित मुवा पढ़ि गुणि भाट नगारी।
राज करंता राजा मुवा रूप देषि देषि नारी ॥ २ ॥

× × × ×

॥ नागा अरजन की सबदी ॥

दारु तैं दाष उतपनी दाष कथी नही जाई।
दाष दारू जब परचाभया दाष मैं दारू समाई ॥ १ ॥

पूरब उतपति पछिम निरंतर उतपति परलै काया।
अभि अंतरि पिंड छाडि प्रान भरपुर रहै।
सिध संकेत "नागा अरजन" कहै ॥ २ ॥
आपा मेटिला सतगुर थामिला।
न करिवा जोग जुगति कर हेला ॥
उनमन डोरी जब पैंचीला।
तब सहज जोति का मेला ॥ ३ ॥

× × × ×

॥ सिध हरतालीजी की सबदी ॥

जोगी सो जो जुगतिजाणै आपा थांभि रहावै।
वाहै जोतै काटै क्यारी पांणी चुपन गिरावै ॥ १ ॥
जोगी सो जो चौर कूं रापै ससि की भिष्या होइ समांगै।
गगन मंडल मैं रोपै पंभ नाद बिंद बाईस थंभ ॥ २ ॥

× × × ×

करमन काया छाया न माया। सो तत "सिध हरताली" पाया ॥११॥

\+ + + +

॥ सीध गरीबजी की सबदी ॥

काया नगरी मैं मन रावल। अहनिस सीझै तहां नृमल चावल।
चावल सीझि पकाई डीव। सति सति भाषंत "सिध गरीब" ॥ १ ॥

× × × ×

॥ धुधलीमलजी की सबदी ॥

॥ चौरासी परण मुधा मार्या ता समझ्या की कथा ॥

आइसजी आवौ

बाबा आवत जात बहुत जुग बीता कछु न चढीया हाथं।
अब का आवण सुफल फलीया पाया निरंजन सिध का साथ ॥ १ ॥ आइस जावौ ॥
बाबा बैठा उठी उठा बैठी बैठी उठि जगदीठा।
घरि घरि रावल भिष्या मांगै अमी महारस मिंठा ॥ २ ॥ आइसजी बैठो।

× × × ×

बाबा जिन रठ गाया तिन सघ पाया तजि षेचर बुधि मति बोलै।
जैसा कमावै तैसा पाबै। सति सति भाषै धुधली सोलै ॥१४॥१५॥

॥ रामचंद्र जी की सबदी ॥

अगनि कुंड समो नारी घृतं कुंड समो नरा ।
जंघ जोडि प्रसंगांनांम क्यूं तौ मन निहचलरे लखमणां ॥ १ ॥ १६ ॥

॥ बाल गुदाई जी की सबदी ॥

जास माता सीलवंती पिता अस्तन भापते ।
तास पुत्र भये जोगेस्वर पुनिरपि जन्म न बिंदते ॥ १ ॥
चहुँ दिस जोगी सदामलंग पेलै बर कामनि कै संग ।
हसै पेलै रापै भाव रापै काया गढ़ का राव ॥ २ ॥

× × ×

अधिक तत्तते गुरु बोलिए सम तत्त गुर भाई ।
हीन तत्त ते चेला बोलीए सति सति भापै बालदाई ॥ १३ ॥ १७ ॥

॥ घोड़ाचोली जी की सबदी ॥

श्री गोरषनाथ पंथ का भेव । अनंत सिधा मिलि पायो भेव ।
पाया भेव भई प्रतीत । अनंत सीधा मैं गोरष अतीत ॥ १ ॥
रावल ते जे चालै रांही । उलटी लहर समंद्र समांही ।
पंच तत का जाने भेव । तेतौ रावल प्रतषि देव ॥ २ ॥

× × ×

अंचितं पुरांणां गगन गरास । बोलै घोड़ाचोली मछिंद्र का दास ।
अचितं फुरै हार्यौ न आवै । तब घोड़ाचोली कहां तू पावै ॥ १४ ॥

× × ×

॥ अजैपाल जी की सबदी ॥

मूंड मूंडे भेष वितूंडे नां बूझी सतगुर की बांनी ।
सुनि सुनि करि भूलेव सवा आपा सुध न जाणी ॥ १ ॥
नाभि सुनि तैं पवनां उठया प्रम सुनि मैं पैसा ।
तिहि सुनि तैं पिंड ब्रह्मंड उपज्या ते सुनि है कैसा ॥ २ ॥

× × ×

जुरा मरन काल सरब व्यापै कांम बसंत सरीरं ।
लपमण कहैं हौ बाबा अजैपाल तुम कूंण आरंभ थीरं ॥ १७ ॥

× × ×

॥ चौणकनाथ जी की सबदी ॥

काकड़ी करमठ कीजै रे अवधू बाइ चलै असरालं ।
सूनैं देवल चौर पैंडैगा चेतो रे चेतन हारं ॥ १ ॥

सिंध साधक मेरै बाइसूं विंद गगन मैं फेरे।
मनका बाकल चुणि चुणि पोलै सीढी उपरि मन क्यूं डोलै ॥ १ ॥

× × ×

॥ देवलनाथ जी की सबदी ॥

देवल भए दीसंतरी सब जग मेल्ह्या जोइ ।
नादी वेदी बहौ मिलै प्रभेदी मिलै न कोई ॥ १ ॥

× × ×

॥ महादेव जी की सबदी ॥

गगन मन बाकि लै त्रिविधि दुष काटि लै थापि लैं बाला पंच भूत ।
हरि रस पाकि लै जनम भै भागि लै भाषंत सति 'सिव' अवधूतं ॥ १ ॥

× × ×

॥ पारबती जी की सबदी ॥

जल मल भरीया दल । अगनि न बलै नाभि कै तल ।
अगनि न बलै न प्रगटै किरन । ताकारनि "पारबती" जगत्र का मर्न ॥ १ ॥

× × ×

॥ सिधमालीपाव जी की सबदी ॥

'सिधमाली पावलो' सिधमालीपावलो सहजैं सींचत वयारी ।
उनमनी कलां एक पहौपनिपाया जोगिद्र आवागवन निवारी ॥ १ ॥

× × ×

चंद सूर दोई फूला फूली रचिलै पवनां मांल संजोइ ।
गगन सिपर बैठो चौसरि गूथै विरला बूझंत कोई ॥ ५ ॥ २४ ॥

॥ सुकल हंस जी की सबदी ॥

देवल देषंता पंडिता देवल पड हडसी । राजा देषंता रिण वासं ।
गुरु चेलै प्रतषि बाद होसी ॥
पुत्रन मांनसी माइ बापं ॥ १ ॥

× × ×

विमल विचार गिर कंदलि पैसिबा सुकुल हंस भाषंत ते डंसं ।
चीया चेतन दोइ सम कर मेलिवा उडि न जाइसी प्रमहंसं ॥ ५॥२४ ॥

॥ दत्तात्रेय जी की सबदी ॥

षिमा जापं सील सेवा पंच इंद्री हूतासनं ।

उनमनि मंडप निरवांन देवा सदा जीवत भावना भेव ॥
लोलीन पूजा मन मह्रूप सति सति भाषत श्री दत्तदेव अवधूत ॥ १ ॥

× × ×

हणवंत का पद

बाघनि लोरे बाघनि लो बाघनि है बट पाड़ी लो।
हेत करै घट भीतरि पैसे सोषि लेवै नौ नाड़ी लो ॥ टेक ॥
जिंद भी सोषे विंद भी सोषे सोषे सुंदरि काया लो।

× × ×

ते नर जोनि कदे नहीं आवै सति सति भाषे हणवंत वीरं लो ॥ २ ॥ १ ॥

× × ×

॥ सतवंती के पद ॥

गहीयौ बाला सति सबद सुषधारा गगनमंडल चढ़ि प्रीत्म प्रसौ।
रूप बरन तै न्यारा ॥ टेक ॥
धरता कूं करता मति मांनौ सति कौ सबद चिताऊं।
अब लग करम लह्यौ नही मेरौ गुज बीज कहि जाऊँ ॥ १ ॥

× × ×

इंच्छया वोऊ आदि लूं माया यूं सति भाषै सतवंती ॥ ६ ॥ १ ॥८ ॥

संतों में बावरी साहिबा, बीरू साहब, यारी साहब, बुल्ला साहब, और विरंच गोसाईं मुख्य हैं।

२—प्रथम चार संत गुरुशिष्य क्रम से एक ही परंपरा के हैं। एक हस्त लेख में इनके कुछ शब्द तथा बानियाँ मिली हैं जो रचयिताओं के क्रम से इस प्रकार हैं —

रचयिता	रचना।
बावरीसाहिबा	केवल एक शब्द।
बीरू साहब	दो शब्द।
यारीसाहब	तीन रचनाएँ १—इयारी साहब के शब्द, २—रमैनी, ३—राम के कहरा।
बुल्ला साहब	साखी। इनके कुछ शब्द पिछले खोज विवरण (२०-२१) में भी आ चुके हैं।

रचनाओं का विषय साधारणतः संत मतानुसार दार्शनिक सिद्धांतों का वर्णन एवं ज्ञानोपदेश है। रचना काल किसी में नहीं है, लिपिकाल संवत् १८६७ है।

इनके द्वारा रचयिताओं के संबंध में कुछ भी ज्ञात नहीं होता; परंतु ग्रंथस्वामी (इस परंपरा के अनुयायी, बलिया जिला के अंतर्गत चिटबड़ा गाँव में स्थित मठ के महंत) से जो कुछ ज्ञात हुआ है वह निम्नलिखित है—

"बावरी साहिबा निरगुन पंथी मुसलमान महिला थीं। इन्होंने अलग पंथ चलाया जिसका नाम आगे चलकर सत्यनामी पंथ पड़ा। सत्यनामी पंथ का विशेष प्रचार करनेवाले जगजीवनदास उन्हीं की शिष्य परंपरा में बुल्लासाहब के शिष्य थे। इनकी गुरुशिष्य प्रणाली यों है—
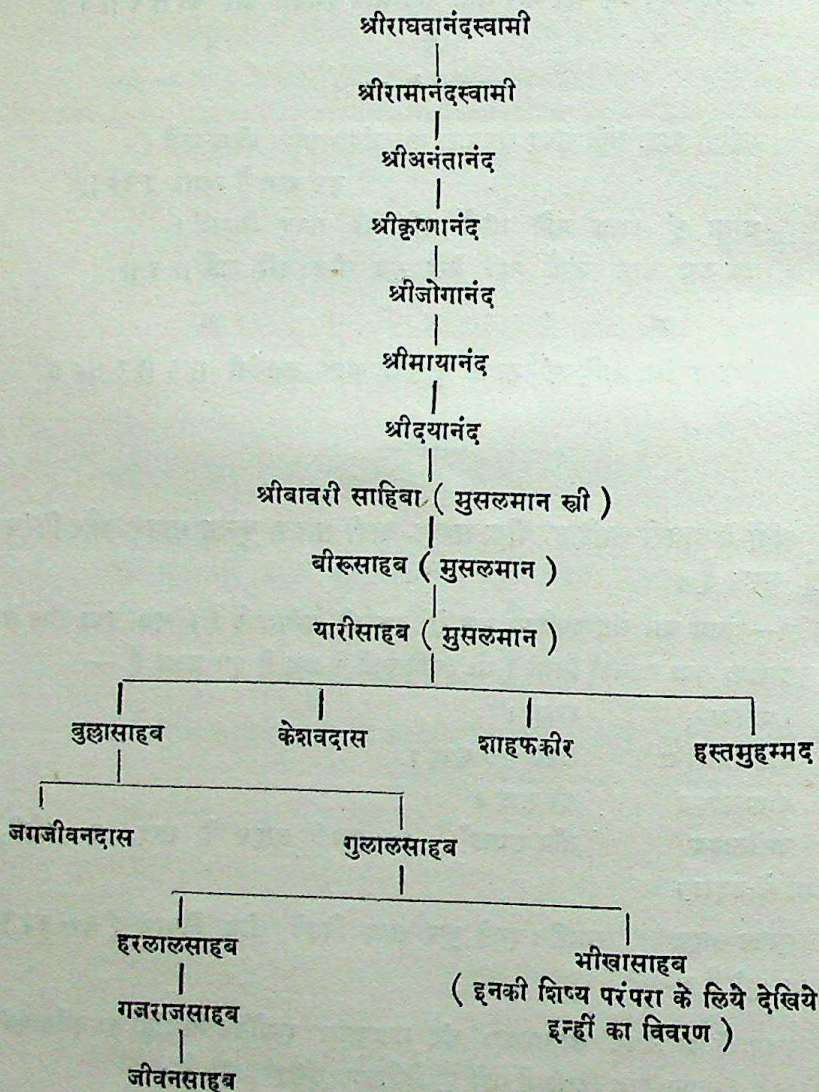
|
तेजधारी साहब
|
देवकीनंदन साहब
|
वनमाली साहब
|
वृजमोहन साहब
|
श्रीराजारामजी
(चिटबड़ा गाँव के वर्तमान महंत)

बावरी साहिबा, बीरूसाहब और यारी साहब तीनों ही मुसलमान थे तथा दिल्ली के निवासी थे। बावरी साहिबा अकबर बादशाह के पहले वर्तमान थीं। यारी साहब के विषय में कहा जाता है कि वे शाही घराने के थे तथा केशवदास, शाहफकीर और हस्त मुहम्मद नामक इनके तीन शिष्य और थे। ये पहुँचे हुए संत थे।"

यारी साहब के शिष्यों में से केशवदास और शाह फकीर की भी कुछ रचनाओं के विवरण लिए गए हैं जिनका उल्लेख प्रस्तुत विवरण में यथास्थान किया गया है।

इस पंथ का वाङ्मय भी विस्तृत है जिसकी महत्ता अन्य निरगुन पंथियों के वाङ्मय से कम नहीं है। आध्यात्मिक ज्ञान और दार्शनिक विचारावली के साथ-साथ इसकी अधिकांश रचनाओं में कवित्व भी दृष्टिगोचर होता है।

३—विरंच गोसांई (जनविरंज वा विरंचराम)—इनकी 'शब्दावली' नामक रचना मिली है जिसमें ज्ञान, वैराग्य और भक्ति संबंधी अनेक पद हैं। रचनाकाल लिपिकाल का कोई पता नहीं चला। विषय की दृष्टि से रचना अच्छी है। भाषा में भोजपुरी और मैथिली का मिश्रण है।

रचयिता ने अपने लिये दो अन्य नाम 'जनविरंज' और 'विरंचराम' भी प्रयुक्त किए हैं। रचना द्वारा इनका कोई विवरण नहीं मिलता; परंतु ग्रंथस्वामी के कथनानुसार ये बलिया जिला के अंतर्गत गड़वार के पास दामोदरपुर के निवासी एवं जाति के पांडेय ब्राह्मण थे। इनके वंशज अभी तक उक्त ग्राम में रहते हैं। लोगों द्वारा पता चला कि ये सिद्ध महात्मा थे तथा इनकी मृत्यु हुए लगभग साठ सत्तर वर्ष हो गए। इस कथन का और लोगों ने भी समर्थन किया है।

प्रस्तुत रचना पढ़ने से ज्ञात होता है कि ये निर्गुण और सगुण में कोई अंतर नहीं मानते थे —

> 'निर्गुन सर्गुन एक मूल है भेद भाव नहीं कीजिए।
> गगन सो जो अमिय बरसै अमृत प्याला पीजिए॥'

फिर भी, इनकी वर्णन-शैली और विचारधारा अधिकतर निरगुन संतों की सी है।

षट्चक्र के मार्ग का अवलंबन करके त्रिकुटी की त्रिवेणी धारा में स्नान करने का उल्लेख ये भी करते हैं —

'मध्य त्रिकुटी त्रिवेणीधारा करत मज्जन सोई।'

कबीर की तरह अलख पुरुष के साथ विवाह करने का भी वर्णन करते हैं; परंतु उसके ढंग से नहीं। कबीर का इस विषय में यह पद 'दुलहिनि गावहु मंगल चार। हम घर आये हो राम भरतार' प्रसिद्ध है। इनकी दुलहिन विवाह करने के निमित्त स्वयं ही प्रिय के देश को चलती है --

मंगल

"दुलहीनी चललीही दुलहा वीआहन दुलहा न आवे ए देस हे।
सब सखिअन मिलि मंगल गावल दुलहीनि भेजे ले संदेस हे॥
नाही कोइ हीत बंधु बाबा दा नही मोरा माता ना करेले दुलार हे।
नगर के लोग सब देपेला तमाशा व्याह करेलो लज्या छोड़ी हे॥
रुपन ब्रीष तहा मडवा न देषो देसवा परेला उजारि हे।
अलष पुरुष वाकी तहा हवै वसगीति (? बसगति) नाही कीछु तहां ठहराव हे॥
जब हम चलली पीआ पुर सषिया सुरति न डगर बनाइ हे।
जन वीरंज मंगल नीति उपजत अनभो गति के लषाव हे॥"

इनका सगुण भक्ति संबंधी भी एक पद दिया जाता है --

"देषी सखी कान्ह करत लरकाई।
प्रवल जाइके डगर रोकत प्रभु दधि मोर पाइ मटुकी दे गीराई॥
वोरहनो देवे गइलो नंद द्वारे हृदय प्रीति रहेलो मुसुकाई।
वोरहन मानत नाही नंदरानी कहत विरंज अब घर फिरि लजाई॥"

प्रेम-कथानक काव्य-रचयिताओं में दुखहरण और रतनरंग उल्लेखनीय हैं।

४--दुखहरण--इनके कुछ 'कवित्त' और दो ग्रंथ 'पुहुपावती' तथा 'भक्तमाल' मिले हैं। इन सब रचनाओं का विषय भक्ति है। 'कवित्त' और 'पुहुपावती' में मलूक का उल्लेख गुरू के रूप में होने के कारण उन्हें एक ही रचयिता दुखहरण द्वारा रचित मान लिया गया है। 'भक्तमाल' भी जो अपूर्ण है अन्य दो रचनाओं की तरह भक्ति विषयक ग्रंथ होने के कारण इन्हीं की कृति जान पड़ती है।

'कवित्त' में मुक्ति के लिये भगवान् से प्रार्थना की गई है। इसमें रचनाकाल तथा लिपिकाल उल्लिखित नहीं हैं।

'पुहुपावती' एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है जिसकी रचना प्रेम कथानक काव्यों के ढंग पर की गई है। इसका आभास ग्रंथांत में उल्लिखित मृगावती, चित्रावली और मधुमालती के

नामों से मिलता है। फिर भी वस्तुविन्यास सब भारतीय है। कथा का सार इस प्रकार है--

'राजपुर देश का राजा प्रजापति सात द्वीप नौखंड में सब राजाओं का शिरमौर था। शत्रुरहित होने के कारण वह कोई अस्त्र नहीं रखता था। उसको भगवती की तपस्या से एक राजकुमार नामक पुत्र प्राप्त हुआ जिसके विषय में ज्योतिषियों ने भविष्यद्वाणी की कि वह बीस वर्ष की अवस्था में एक रूपवती स्त्री के प्रेम में पड़कर वैराग्य धारण करेगा। फिर उसके साथ विवाह कर तथा मार्ग में एक राजा को जीतकर घर लौटेगा।

निदान बीस वर्ष की अवस्था होने पर एक दिन राजकुमार पिता के पास उन राजाओं के साथ युद्ध करने की आज्ञा माँगने गया जिन्होंने उसके पिता के देश का कुछ भाग जीत लिया था। परंतु राजा ने बालक समझकर राजकुमार को आज्ञा नहीं दी। इस पर राजकुमार असंतुष्ट होकर परदेश चला गया। मार्ग में उसे ऐसा भयानक और गहन वन मिला जिसमें न तो कोई मार्ग था और न कोई पथिक ही। भूख प्यास भी सताने लगी। पास में धन तो था पर भोजन न था। ऐसी विकट स्थिति में राजकुमार को धन की तुच्छता ज्ञात हुई। जब भूख प्यास से प्राण बहुत अकुलाने लगे तो भगवद्कृपा से उसे एक बनजारा मिला जिससे भोजन लेकर उसने क्षुधा की तृप्ति की। वह फिर आगे बढ़ा। दस दिन तक चलते रहने पर अनूपगढ़ नामक नगर में पहुँचा। यहाँ के राजा का नाम अंबर तथा रानी का नाम वसुधा था। सूर्य प्रधान और चंद्र आदि बड़े मंत्री थे। पवन और मेघ क्रमशः अगुआ और महंत थे। पाताल का वासुकी इस राजा के डर से डरता था और इन्द्र नित्य सेवा में उपस्थित रहता था। राजा की पुहुपावती नामक एक पुत्री थी। एक दिन संयोगवश झरोखे से झाँकते हुए उसकी दृष्टि राजकुमार पर पड़ी जिसके सौंदर्य पर वह मुग्ध हो गई। फलतः राजकुमार के बिना उसकी विकलता बढ़ने लगी। किसी प्रकार वह मालिन को दूती बनाकर राजकुमार से मिली। राजकुमार भी, जो पहले से ही पुहुपावती से प्रेम करने लगा था, उसे पाकर अत्यंत प्रसन्न हुआ। मिलन हो जाने पर दोनों ने विधिपूर्वक विवाह हो जाने तक काम के वशीभूत न होने की प्रतिज्ञा की, जिसे निभाते हुए दोनों नित्य प्रति मिलते रहे।

एक दिन राजा अंबर आखेट के लिये चला। राजकुमार भी साथ हो लिया। राजा राजकुमार का परिचय पाकर हर्षित हुआ और उसको अपने साथ ले गया। वन में पहुँचकर राजकुमार ने सिंहनी का पीछा किया जो उसे बहुत दूर ले गई। उसने सिंहनी को तो मार दिय। परंतु मार्ग भूलकर सिंहलद्वीप जा पहुँचा। वहाँ उसकी भेंट उसके मामा सज्ञान से हुई जो उसको खोजता फिरता था। वह राजकुमार को पकड़कर राजपुर ले गया। राजा और रानी पुत्र को पाकर प्रसन्न हुए। उन्होंने शीघ्र ही काशिराज की पुत्री रूपवंती से उसका विवाह कर दिया। परंतु राजकुमार को उससे किसी प्रकार की भी प्रसन्नता न हुई प्रत्युत वह पुहुपावती के विरह में रात दिन उदासचित्त रहने लगा। उधर पुहुपावती को भी राजकुमार का वियोग असह्य हो उठा। उसने मालिन को फिर दूती बनाकर राजकुमार

को ढूँढ़ लाने के निमित्त भेजा। दूती जो अत्यंत विचक्षण बुद्धि की थी, राजपुर पहुँची और बड़े कौशल से राजकुमार को विरागी वेश में अनूपगढ़ ले चली। मार्ग में के धर्मपुर नामक देश का दानव राजकुमार को उठा ले गया। दूती वहीं छूट गई। दानव ने राजकुमार का विवाह सात समुद्र पार बेगमपुर देश के राजा बेगमराइ की पुत्री रँगीली से कर दिया। राजकुमार को इस विवाह से भी कोई हर्ष न हुआ। किसी प्रकार युक्तियों द्वारा दानव को विरागी बनाकर वह अनूपगढ़ के लिए चल पड़ा। रँगीली के प्रार्थना करने पर उसको भी साथ ले लिया। परंतु यह साथ टिक न सका। सात समुद्र पार करते समय रँगीली राजकुमार से बिछुड़ गई। वह एक द्वीप में पहुँची और वहाँ शिव पार्वती के आज्ञानुसार एक मंदिर में चतुर्भुज देवता की उपासना करने लगी। शिव जी ने उसको उक्त उपासना द्वारा पति दर्शन होने का वरदान दिया।

राजकुमार कठिनाइयों को पार करता हुआ फिर धर्मपुर पहुँचकर दूती से मिला। वहाँ से दोनों अनूपगढ़ पहुँचे जहाँ राजकुमार और पुहुपावती का विवाह हो गया और दोनों सुखपूर्वक रहने लगे।

इधर राजपुर देश में राजकुमार की प्रथम स्त्री भी तरुणावस्था को पहुँच गई। उसे भी पति का वियोग सताने लगा। उसने अपनी मैना को पति ढूँढ़ लाने के लिये भेजा। मैना राजकुमार की खोज में अनूपगढ़ पहुँची और उसको रूपवती का संदेश दिया। संदेश पाकर राजकुमार को अपने देश तथा माता पिता और स्त्री की याद आई। वह पुहुपावती को लेकर शीघ्र देश की ओर चला। मार्ग में उज्जैन के राजा रोठ गँवार के साथ युद्ध हुआ जिसमें उसने विजय प्राप्त की। यहीं पर मैना के प्रयत्न से रँगीली से भी मिलन हुआ। इस प्रकार दो स्त्रियों तथा मैना के साथ राजकुमार अपने देश पहुँचा। राजा और रानी फिर से पुत्र को पाकर हर्षित हुए और शीघ्र ही उसका राजतिलक कर दिया। रूपवंती भी पति को पाकर प्रसन्न हुई।

अंत में परमात्मा (अधम उधारन) राजकुमार की परीक्षा लेने के निमित्त उससे पुहुपावती माँगने आए। राजकुमार ने पुहुपावती को सहर्ष प्रदान कर अपनी दानशीलता का परिचय दिया जिससे भगवान् ने उसको मनोवांछित वरदान दिया।

ग्रंथ में २७ खंड हैं। इसका रचनाकाल सं० १७२६ वि० और लिपिकाल संवत् १८६७ है। रचना प्रायः दोहे चौपाइयों में की गई है। बीच बीच में कवित्त, सवैया कुंडलिया और अरिल छंद भी हैं। भाषा अवधी है। हस्तलेख अत्यंत जीर्ण शीर्ण अवस्था में है और बीच से खंडित है। इसके पत्रों के क्रम में भी गड़ बड़ है।

भक्तमाल—इसमें प्राचीन और मध्यकाल के भक्तों की महिमा का वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। इसकी प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है।

रचयिता ने अपना परिचय केवल पुहुपावती में दिया है। उसके अनुसार इनके पिता का नाम घाटमदास था। जाति के कायस्थ और गाधीपुर (गाजीपुर) के निवासी

थे। इनके तीन मित्र थे जिनके नाम प्रेमराज, बेचनराम तथा मुरलीधर थे। इन्होंने अपने गुरू मलूकदास, जन्मस्थान गाधीपुर और तत्कालीन बादशाह औरंगजेब का विस्तृत वर्णन किया है।

ये सुप्रसिद्ध संत शिवनारायण स्वामी के गुरू जान पड़ते हैं, देखिये प्रस्तुत विवरण में शिवनारायण स्वामी पर लिखी गई टिप्पणी इसकी संभावना इस बात से प्रकट होती है कि शिवनारायण स्वामी बलिया जिले के अंतर्गत चंदवार ग्राम के रहनेवाले थे। पहले गाजीपुर और बलिया एक ही जिले के अंग थे। चंदवार और गाधीपुर (गाजीपुर जो प्रस्तुत रचयिता का जन्मस्थान है) पास पास ही हैं, अतः दोनों संतों का समीप में रहने के कारण परिचय एवं सत्संग हो जाना संभव जान पड़ता है।

५—रतनरंग—इनकी "छिताई कथा" नाम से एक रचना मिली है। रचना में अलाउद्दीन की देवगिरि विजय की यह कथा वर्णित है—

"देवगिरि में राजा रामदेव राज्य करता था। उसके समय में दिल्ली से एक चित्रकार वहाँ गया और चार वर्ष तक रहा। जब वह आने लगा तो राजा ने अलाउद्दीन के लिये बहुमूल्य भेंट और भीमसेनी कपूर भेजा। अलाउद्दीन ने भेंट को देख कर कपूर की विशेष प्रशंसा की। इस पर देवगिरि की एक दासी हँसी और कहा कि जिस कपूर की तुम भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहे हो वह हम लोगों के लिये तुच्छ पदार्थ है।

चित्रकार ने देवगिरि की राजकुमारी छिताई का भी चित्र दिखाया जिसे देखते ही बादशाह मूर्छित हो गया। फिर क्या था, देवगिरि पर चढ़ाई हुई और विजय के रूप में अलाउद्दीन की अभिष्ठ पूर्ति हुई।"

कथा ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। छिताई का उल्लेख बहुत पहले से ही काव्यों में होता आ रहा है। पदमावत (जायसीकृत) और वीरचरित्र या वीरसिंहदेव चरित (केशव कृत) में भी यह नाम मिलता है।

ग्रंथ में रचनाकाल तो नहीं है, परंतु लिपिकाल दिया है जो संवत् १६८२ है। लिपि प्राचीन और दुर्बोध है। भाषा व्रज है जिसमें पौढ़ता और एकरूपता का अभाव है।

प्रेम-कथा-काव्यों की एकधारा सूफी धारा से भिन्न भारतीय पद्धति पर चल रही थी जिसका प्रमाण प्रस्तुत 'छिताई कथा' से भी मिलता है।

रचयिता के जीवनवृत्त के विषय में प्रस्तुत रचना से कुछ विदित नहीं होता। रचनाकाल न होने से समय का भी अनुमान नहीं लगाया जा सकता; परंतु लिपिकाल संवत् १६८२ होने के कारण इनकी प्राचीनता स्पष्ट प्रकट होती है।

रीतिग्रंथ-प्रणेताओं में लाल और श्रीधर मुरलीधर नवीन हैं।

६—लाल-ये "विक्रमविलास या नवरस" नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ में

नायिका भेद विषय का वर्णन है। इस विषय की यह उत्तम रचना है। उदाहरणों में अन्य कवियों के भी छंद दिए गए हैं। खोज में इसकी दो प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। एक प्रति में, जो पूर्ण है, रचना काल का कोई उल्लेख नहीं; परंतु दूसरी में जो अपूर्ण है रचना काल संवत् १६४० दिया है।

इसकी पुष्पिका के पश्चात् भी एक संवत् का उल्लेख है जो १६४२ है। दोनों संवतों के दोहे नीचे दिए जाते हैं—

"सोलह से चालीस में संवत् अवधारू।
चेतमास शित पछ पुण्य नवमी भृगु वारू॥"

× × × ×

सोलह से वालीस में संवत अवधारू।
चेतमास शुभ पछ पुण्य नवमी भृगुवारू॥

दोहों को देखने से स्पष्ट पता चलता है कि "चालीस" और 'वालीस' शब्दों को छोड़ इनमें और कोई अंतर नहीं। अतः ये दोनों एक ही संवत् का उल्लेख करते हैं। विचार करने पर रचनाकाल सं० १६४० ही ठीक जँचता है।

यदि संवत् १६४२ होता तो "सोलह से वालीस" न लिखकर "सोलह से बयालीस अथवा ब्यालीस" लिखा जाता जिससे 'बयालीस, का स्पष्ट बोध होता। लेख प्रमाद से चालीस का ही 'वालीस' हो गया जान पड़ता है। अस्तु।

लिपिकाल प्रथम प्रति में संवत् १८७२ और दूसरी में संवत् १७२१ है। रचयिता किसी विक्रमशाही के आश्रित थे। इससे अधिक इनका और कोई परिचय नहीं मिलता। ग्रंथ की प्रथम प्रति के ऊपर ग्रंथ का एवं एक व्यक्ति नेवजीलाल दीक्षित का नाम इस प्रकार उल्लिखित है—

विक्रम विलास की पोथी भाषा॥१॥
नेवजीलाल दीक्षित॥१॥

हो सकता है कि नेवजीलाल दीक्षित रचयिता का ही नाम हो।

इन्होंने अपने दो ग्रंथों का भी उल्लेख किया है जिनके नाम, 'कथामाधवानल' और 'नाटक ऊषाहार' हैं, यथा—

कथा माधवानल करी नाटक ऊषाहार।
तृप्ति ना मानी लाल तब नवरस कियो विचार॥

आश्रयदाता की वंशावली इस प्रकार दी है—
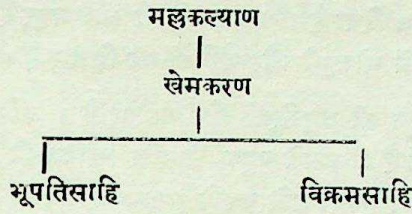
वंशावली से यह प्रकट नहीं होता कि यह राज वंश कहाँ का था।

७—श्रीधर मुरलीधर—इन्होंने "भाषा भूषण" नामक ग्रंथ की संवत् १७६७ वि० में रचना की। ग्रंथ में संस्कृत के 'चंद्रालोक' और 'कुवलयानंद' ग्रंथों के आधार पर अलंकारों का निरूपण किया गया है। इसकी रचना महाराज जसवंतसिंह के भाषाभूषण के ढंग पर हुई है। आधे दोहे में लक्षण और आधे में उदाहरण दिए गए हैं। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति कब लिखी गई, पता नहीं चलता।

रचयिता प्रयाग के निवासी ओझा ब्राह्मण थे। इनके आश्रयदाता का नाम नवाब मुशल्लेह खान बहादुर था जिनकी आज्ञा पर ग्रंथ की रचना हुई। इनका श्रीधर नाम था और मुरलीधर नाम से प्रसिद्ध थे—

"श्रीधर ओझा विप्रवर मुरलीधर जसनाम।
तीरथराज प्रयाग में सुवस वस्यो रविधाम"॥

हिंदुओं में कई नाम हुआ भी करते हैं।

फुटकर ग्रंथों के नवीन रचयिताओं में गोपाल (जनगोपाल) और लखन-सेनी मुख्य हैं।

८—गोपाल (जनगोपाल)—ये "रासपंचाध्यायी" ग्रंथ के रचयिता हैं। नाम के अतिरिक्त इनका और वृत्त नहीं मिलता। पिछले खोज विवरणों में गोपाल नामक कई रचयिताओं के उल्लेख हैं; परंतु ये उनसे सर्वथा भिन्न हैं। खोज में इनका पता पहली बार लगा है।

इनकी 'रासपंचाध्यायी' काव्य की दृष्टि से उत्तम रचना है। इसमें श्रीकृष्ण और गोपियों के प्रसिद्ध रास का वर्णन है। रचनाकाल संवत् १७५५ और लिपिकाल संवत् १८८१ है। कविता दोहा, चौपाई, छप्पय, तोटक, भुजंगप्रयात, गीतिका, कवित्त और सवैया आदि अनेक छंदों में की गई है।

९—लखनसेनी—इनकी "कान्ह की बारहमासी या बारहमासा" नामक रचना की दो प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। रचना में श्रीकृष्ण के प्रवास पर राधा के बारह महीनों के विरह का वर्णन है। रचनाकाल का उल्लेख किसी प्रति में नहीं है। लिपिकाल

केवल एक में संवत् १७८५ दिया है। रचना सरस और मधुर है। कविता दोहे चौपाइयों में की गई है। भाषा में भोजपुरी और मैथिली का मिश्रण है।

प्राप्त प्रतियों में बहुत सी अशुद्धियाँ और पाठांतर हैं। बलिया जिले से विवृत प्रति अत्यंत जीर्णशीर्ण अवस्था में है। उसके बहुत से अंश खंडित हो गए हैं तथा कितने ही स्थलों के अक्षर मिट गए हैं। दूसरी प्रति यद्यपि सुवाच्य है तथापि लिपिकर्त्ता के लेख दोष से मूल शब्दों में बहुत से परिवर्तन हो गए हैं। इसके दोहों में अधिकतर "लखनसेनी असगावा राधा न तजु प्रान' पद बार-बार आया है। बलिया की प्रति में ऐसा नहीं है। मिलान करने पर बलिया वाली प्रति का पाठ अधिक शुद्ध पाया जाता है।

रचयिता का नाम के अतिरिक्त और कोई परिचय नहीं मिलता। बलिया वाली प्रति में दो स्थानों में 'राजा' शब्द प्रयुक्त हुआ है, जैसे—

"लखनसेनी कवी उपर वो राजा चीतवै वाट।"

× × ×

"राजा मनसाह जपी के लाए रहै अती धीआना।"

इससे प्रकट होता है कि ये एक एक राजा थे। परंतु दूसरी प्रति में 'राजा' शब्द का कहीं उल्लेख न होने के कारण कोई निश्चित बात नहीं कही जा सकती। नाम के साथ "सेनी" शब्द से यदि ये सेनवंशी राजाओं में से कोई रहें हों तो असंभव नहीं।

इस वंश के राजाओं ने मध्यकाल में पालवंश के पश्चात् बंगाल में राज्य किया था।

एक लखनसेनी खोज विवरण (६—१६७) पर 'महाभारत भाषा—के रचयिता के रूप में उल्लिखित हैं। हो सकता है कि ये दोनों एक ही हों।

ज्ञात रचयिताओं में जो मुख्य हैं उनका उल्लेख संत, रीति और फुटकल ग्रंथों के रचयिताओं के क्रम से किया जाता है।

संतों में गुलाल साहब, जगजीवनदास, धरनीधरदास, नवनिधिदास, सेवादास और हरिदास निरंजनी उल्लेखनीय हैं।

१०–गुलालसाहब—निर्गुण संतों की एक परंपरा बावरी साहिबा, बीरूसाहब, यारीसाहब और बुल्लासाहब से भी चली जिसको सत्यनामी संप्रदाय कहते हैं। इसी परंपरा में बुल्लासाहब के शिष्य प्रस्तुत संत गुलालसाहब हुए। ये भीखा साहब के गुरु थे। जिला गाजीपुर के भुड़कुड़ा में इनका निवासस्थान था। इनके समय का कोई पता नहीं चलता। परंतु जैसा इनके शिष्य भीखा साहब का समय (संवत् १७८८ के लगभग) खोज विवरण (२०–१८) से स्पष्ट है इनका समय इससे कुछ पूर्व अथवा इसके लगभग मानना उचित है। ये उच्चकोटि के संत थे। 'गुलालसाहब की वाणी' नाम से इनके कुछ पद खोज में पहले मिल चुके हैं, देखिये खोज विवरण (२०–५५)।

प्रस्तुत खोज में दो रचनाएँ और मिली हैं जिनके नाम, १—रामजी के सहस्रनाम और २—शब्द हैं। पहली में रामके एक सौ नामों का वर्णन है तथा दूसरी में आध्यात्मिक विषय का प्रतिपादन है। पदों में शीर्षकों की योजना नहीं है। 'शब्द' नाम से पदों का विवरण ले लिया गया है। इसमें भोजपुरी शब्द रूपों का भी प्रयोग है। रचनाकाल किसी कृति में नहीं है। लिपिकाल संवत् १८३८ तथा १८४० के अंतर्गत है। हस्तलेख में ये दोनों संवत् दिए हैं।

११—जगजीवनदास—इनका उल्लेख इनकी 'बानियों' तथा अन्य ग्रंथों के साथ पहले भी हो चुका है, देखिए खोज विवरण (९-१२२) (२३-१७५) (२६-१८७) (२९-१६३)। इनके अनुसार ये सत्यनामी पंथ के प्रवर्तक, कोटा (बाराबंकी) के रहनेवाले थे और संवत् १७६१ में वर्तमान थे।

इस त्रिवर्षी में इनके गुरु के विषय में कुछ पता चला है।

बलिया के चिटबड़ागाँव में महंत राजाराम जी के यहाँ श्री बावरी साहबा, बीरू साहब, यारीसाहब और बुल्लासाहब आदि की बानियों का एक हस्तलेख मिला है, देखिए (भीखा साहब)। महंत जी के कहने से ज्ञात हुआ कि ये सब संत एक ही परंपरा के हैं जिसे सत्यनामी संप्रदाय कहते हैं। जगजीवनदास बुल्लासाहब के शिष्य थे। सत्यनामी संप्रदाय का प्रचार करने के कारण ही इनका नाम इसके प्रवर्तकों में गिना गया।

इस बार इनकी बानियों के फिर से विवरण लिए गए हैं। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८५५ है। इनमें इनकी तीन रचनाएँ—१—चिंतावणी जोग ग्रंथ, २—प्रेमनामो जोग ग्रंथ और ३—पद संमिलित हैं। इनका विषय निर्गुणमतानुसार ज्ञानोपदेश है। ये बानियाँ एक बड़े हस्तलेख में हैं जिसके लिये देखिए सेवादास।

१२—धरनीदास—इनके निम्नलिखित वह ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं—

१—धरनीदास जू को संकटमोचन—रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल संवत् १८३८ और १८४०। विषय—प्राचीन तथा अर्वाचीन भक्तों का गुणगान।

२—महराई गोसाईं धरनीदास—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—योगानुकूल एक आध्यात्मिक कथा का वर्णन है जो इस प्रकार है—

"एक दिन मेरा मन पहाड़ पर चढ़ा (षट् चक्र भेदन में प्रवृत्त हुआ)। उसने (मन ने) वहाँ नाना प्रकार की गायों (चित्त वृत्तियों अथवा इंद्रियों) के समूह को विचरता हुआ देखा जिसमें अगणित गायें (चित्तवृत्तियों या इंद्रियों के भेद उपभेद)

थीं तथा जिनसे दसों दिशाएँ आच्छादित हो गईं। इनमें कितनी ही तो बहिला थीं और कितनी ही गाभिन तथा ब्याई हुई। कुछ बड़े सींगोंवाली, कुछ छोटे सींगोंवाली और कुछ विना सींगोंवाली थीं। इनके साथ छोटे बड़े तथा मध्यमावस्था की बछियाँ और बछड़े भी थे। लाली, गौली (गौरी), धवरी, पीली आदि अनेक रंगों से सुशोभित थीं। महरा (गोपालक भगवान) ने नीचे धरती और ऊपर आकाश दोनों को गायों के विचरने का स्थान बनाया (योग में त्रिकुटी से नीचे शरीर का भाग धरती है तथा ऊपर का आकाश)। वहाँ (त्रिकुटी पहाड़ पर) उत्तम घास लहलहा रही है तथा शीतल जलाशय भी है (त्रिकुटी के ऊपर अमृत का झरना मानते हैं)। मन ने यह सब देखकर भी जब महरा (गोपालक, भगवान्) को नहीं देखा तो बड़ा उदास हुआ; परंतु कुछ ही समय पश्चात् पावों के नूपुरों के बजने की ध्वनि (अनहद शब्द) हुई। एक साकार रूप भी दृष्टिगोचर हुआ जिसकी कटि पतली थी और जो लंबी काछनी (धोती) कसे तथा ऊपर से पीला दुपट्टा ओढ़े हुए था। उसकी कटि का वर्णन नहीं हो सकता (यह गोलोक की स्थिति है)। सारा अंग चंदन की खौर से पुता हुआ अनंत गंगा की धाराओं की शोभा धारण करता था। मस्तक पर मुकुट और हाथ में सुंदर लाल लकुटी थी। भाल में सूक्ष्म तिलक एवं कंठ तुलसी की माला से सुशोभित था। सुंदर नासिका, पतले होंठ और बड़ी बड़ी आँखें थीं। मुकुट के बीच में मोरपंख जड़ा हुआ था एवं प्रफुल्लित मुख पर मुसकान विराजमान थी। फिर क्या था, उस शोभा के ऊपर "धरनी" ने अपने को निछावर कर दिया। मन ने पृथ्वी पर शिर रख उस मूर्ति को प्रणाम किया और प्रभु ने मस्तक पर हाथ धर कर आशीर्वाद दिया।

इसके पश्चात् कुछ उपदेश करके कहा कि यह कहानी मात्र (मसलक बात) नहीं है। जब तक चरवाहा (भगवान्) को इस मन ने देख नहीं लिया तब तक वह अगाध (अवगाह) जल में (भवसागर में) तैर रहा था। ऐसे अवसर पर जब कान्हा ने वंशी बजाई तो उसके (मन के) आनंद की सीमा न रही। मानों भिक्षुक को राज्य प्राप्त हो गया हो। वंशी की ध्वनि सुनकर वह ऊपर (सहस्त्रदल कमल की ओर) चला गया जहाँ उसे एक अद्भुत ही खेल देखने को मिला। विना सूर्य का वहाँ प्रकाश था तथा रिमझिम जलधारा मोती के अनुरूप बरसती थी। सुनने में प्रिय लगनेवाला सघन घन गर्जन हो रहा था और दसों दिशाओं में बिजली चमक रही थी। नाना प्रकार के सुरंग फूल झड़ पड़ते थे जिनमें भँवरा (मन) भूल पड़ा (यहाँ पर मन का अस्तित्व नहीं रहता)। वहाँ एक चक्र फिर रहा था जिसकी ओर एक सांप (कुंडलिनी) उड़ा हुआ चला जाता था। वहाँ न तो धर्म कर्म ही था और न पुण्य पाप ही। उस चक्र पर एक महरा खड़ा था जिसका कोई वर्ण नहीं था तथा जिसका कोई वर्णन भी नहीं किया जा सकता था। उसकी प्रतीति का अनुमान तभी लग सका जब वह सुरति (सं० स्मृति) में परिणत हो गया।

आगे यह प्रतिपादन किया गया है कि इंद्रियों तथा चित्तवृत्तियों का खून (निरोध) नहीं किया जाना चाहिए। ये सब ईश्वर (महरा) की गायें हैं जो स्वयं इनको मिलाकर चून (सकचून) या आटा (सुधार) करता रहता है। इनके ठीक-ठीक पालन करने से ही वह मनुष्य को निहाल कर देता है।"

ग्रंथ विषय की दृष्टि से उत्तम है।

३—उधवा प्रसंग—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—आध्यात्मिक ज्ञान का वर्णन। यह भी उत्तम रचना है। इसकी भाषा भोजपुरी है। यद्यपि इसके नाम से उद्धवगोपी संवाद की ध्वनि निकलती है तथापि उधवा वास्तव में एक स्थानीय गीत विशेष है। इसकी रचना बरवै छंदों में की गई है।

४—पद—रचनाकाल, लिपिकाल अज्ञात। विषय-ज्ञान और भक्ति। ये पद उच्चकोटि के हैं। इनकी भाषा कबीर की भाषा की तरह ही पूर्वी है। कुछ पदों में फारसी के शब्द भी व्यवहृत हुए हैं।

५—बोधलीला—रचनाकाल, लिपिकाल अप्राप्त। विषय—ब्रह्म के विषय में ज्ञानोपदेश।

६—ककहरा—रचनाकाल लिपिकाल अविदित। विषय—नागरी अक्षरों के क्रम से चौपाइयों में ज्ञानोपदेश।

प्रथम रचना भीखा साहब कृत 'रामसहस्रनाम' के साथ एक हस्तलेख में है। 'उधवा प्रसंग' और 'पद' नामक रचनाओं का भी एक ही हस्तलेख है। प्रथम रचना के अंतिम पद में गुरु बनोदानंद का उल्लेख होने से पता चलता है कि ये रचयिता के गुरु थे। इसकी पुष्टि पं० परशुरामजी चतुर्वेदी के एक लेख से भी होती है जो "बाबा धरनीदासजी" शीर्षक से श्रावण, संवत् १९९४ के कल्याण के 'संत अंक' में निकला है। उसके अनुसार बाबा धरनीदास मांझी गाँव (जिला सारन, सूबा बिहार) के रहनेवाले थे। ये परशुराम-दास के पुत्र और जाति के कायस्थ थे। पितामह का नाम टिकैतराय था जो प्रयाग की ओर से मुसलमानों के आक्रमण के कारण इधर चले आए थे। पिता और पितामह दोनों प्रसिद्ध वैष्णव थे। ये पाँच भाई थे जिनके नाम क्रमशः धरनीदास, लछीराम, छत्रपति, बेनी और कुलमनि थे। इन्होंने एक पद में अपने पिता की मृत्यु का संवत् १७१३ वि० दिया है—

सत्रह सै संवत लीपंत तेरह अधिकानो। समय नाम अषारह पछ उजियार वपानो॥
तिथि परीवा बुधवार गंग सरबंग अहाए। परसराम तन तज्यो वास वैकुंठ सिधायो॥

इससे प्रकट होता है कि ये उक्त संवत् में वर्तमान थे। इन्होंने अपनी गुरु परंपरा का भी उल्लेख किया है जो यहाँ दी जाती है—

इनकी तीन गद्दियाँ सहतवार (बघांव), मिलकी और गुहियाँ छपरा (जिला, बलिया) में हैं। सहतवार में चैनराम बाबा की और मिलकी में महाराज बाबा की समाधियाँ हैं। गुहियाँ छपरा में सुदिष्ट बाबा जी का स्थान है जहाँ उनके नाम पर एक बड़ा मेला (धनुषयज्ञ) लगता है। मिलकी में वर्तमान महंत श्रीबाबा लक्ष्मणदास जी भूतपूर्व नाम भूमदेव तिवारी हैं।

रचयिता का उल्लेख पिछले खोजविवरण (९—७१) में भी हुआ है, परंतु उसमें इनका कोई वृत्त नहीं दिया है ।

१३—नवनिधिदास बाबा—इनकी 'मंगल गीता' महत्वपूर्ण रचना है । इसकी प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है । इसमें वर्णित विषय इस प्रकार हैं—

१—कवित्त गंगाजी के, २—कृष्णपुकार, ३—ककहरा या कहरा, ४—निर्गुण तथा सगुण विषय के पद, ५—फगुआ, ६—बारहमासा, ७—सिद्धांत संबंधी रचनाएँ और ८—रामखेलावन वाक्य ।

अंतिम विषय 'रामखेलावन वाक्य, रचयिता और उनके पुत्र रामखेलावन के संवाद के रूप में है जिसमें आत्मज्ञान, संतमहिमा, अनुभव, राजनीति और तुलसी माहात्म्य आदि का वर्णन है ।

कृष्णपुकार में संवत् १९०५ का उल्लेख है जो रचनाकाल है —

दोहा

त्रिपन छपै जानिए कृष्ण चरित्र शुभसिद्धि ।
संमत उनइस सौ पांचमैं भाषेउ जन नवनिद्धि ॥२॥

लिपिकाल संवत् १९७४ है ।

ग्रंथ की अधिकांश रचना पूर्वी में है । 'घाँटों' जैसे स्थानीय गीत को अपनाकर उसमें पद रचना की गई है ।

ग्रंथ से रचयिता का परिचय नहीं मिलता; परंतु ग्रंथस्वामी का (जो रचयिता के ही वंशज हैं) कहना है कि वे जाति के कायस्थ और लखौलिया ग्राम (बलिया) के रहनेवाले थे । इनका वंश वृक्ष इस प्रकार है—

ये चार भाई थे जिनके नाम क्रमानुसार मनबोधदास, जोधदास, नवनिधिदास और गतिदास थे । इस समय मनबोधदास का ही वंश चल रहा है । शेष भाइयों का वंश एक एक दो दो पीढ़ियों के पश्चात् रुक गया । ग्रंथस्वामी जो इन सबके उत्तराधिकारी हैं, श्री-मनबोधदास जी की चौथी पीढ़ी में हैं ।

नवनिधिदास जी के गुरु का नाम चनरूराम था जिसका मूल रूप रामचंद्र है । ये (रामचंद्र) उच्चकोटि के कवि थे; इनकी "चरण चंद्रिका" उत्तम रचनाओं में से है,

देखिये (पं० रामचंद्र शुक्ल कृत 'हिंदी साहित्य का इतिहास' संशोधित और प्रवर्द्धित संस्करण—पृष्ठ सं० ४०६)। ये लखौलिया (रचयिता के स्थान) से एक मील की दूरी पर चंडाडीह के निवासी थे और इनके वंश में अब भी एक सदाचारी पुरुष हैं जिनका नाम पं० श्यामाचरणदास है जो संन्यासाश्रम में प्रविष्ट हो गए हैं तथा परमहंस कहलाते हैं।

लखौलिया से थोड़ी दूर नवनिधिदास जी का मंदिर भी बना है जहाँ प्रत्येक वर्ष चैत्र पुर्णिमा को संतसम्मेलन होता है।

खोज विवरण (९—२११) पर उल्लिखित नवनिधिदास भी प्रस्तुत रचयिता ही हैं। उक्त विवरण में इनके कबीरपंथी होने की संभावना की गई है; परंतु यह ठीक नहीं जान पड़ता। यद्यपि इन्होंने निर्गुण भक्ति विषयक रचनाएँ की हैं, फिर भी, ये सगुणोपासना का गुणगान अधिक करते हैं। इनके गुरु भी सगुणोपासक ही थे। अतः इन्हें कबीरपंथी मान लेना उचित नहीं। निर्गुण-सगुण का उल्लेख ये इस प्रकार करते हैं—

जैसुराम सु अर्थ यह दुइता दुइत विभेद।
नृगुन श्रगुण जुक्त करि सकल रसातल भेद॥

कहीं-कहीं 'श्रीवल्लभ' तथा 'वल्लभस्वामी' का भी उल्लेख किया है—

श्रीवल्लभ श्रीवल्लभस्वामी। गोकुल नायक अंतर जामी॥
वल्लभ वल्लभ निसुदिन भजै। काम क्रोध दुख सुख सव तजै॥

आरंभ में श्रीगणेश की स्तुति की गई है तथा कृष्णपुकार में श्रीकृष्ण भक्ति का वर्णन है।

रचना काव्य की दृष्टि से उत्तम है।

१४—सेवादास—इनके निम्नलिखित १७ ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं। उक्त ग्रंथों में से कुछ ग्रंथ पंजाब खोज विवरण (पं० २२-९९) पर आ चुके हैं; परंतु उसमें उद्धरण न दिए जाने के कारण इनको प्रस्तुत विवरण में सम्मिलित कर लिया गया है—

१—आत्मज्ञान—विषय, आत्मज्ञान। रचनाकाल, अज्ञात। लिपिकाल, संवत् १८५५। इसकी भाषा में राजस्थानी की पुट है।

२—किंवत—विषय, निर्गुण ब्रह्म का विवेचन एवं ज्ञानोपदेश। लि० का० संवत् १८५५।

३—कुंडलियाँ—विषय, निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश। इसमें २४ अंग हैं। लि० का० सं० १८५५।

४—गुरुमंत्र जोगग्रंथ—विषय, राममंत्र महिमा वर्णन। लि० का० संवत् १८५५।

५—गुरुमहमा जोगग्रंथ—विषय, गुरु महिमा वर्णन। लि० का० संवत् १८५५।

६—चंद्राइणा —विषय, ज्ञानोपदेश। इसमें बारह अंग हैं। लि० का० संवत् १८५५।

७—चिंतावणी जोगग्रंथ—विषय, ईश्वर भजन करने का उपदेश। लि० का० संवत् १८५५।

८—तत्व निरणौ (तत्वनिर्णय)—विषय, तत्वों का निरूपण। लि० का० संवत् १८५५।

९—तिथिजोगग्रंथ—विषय, तिथियों का दार्शनिक वर्णन। लि० का० सं० १८५५।

१०—नाँवमहमा जोगग्रंथ—विषय, नाम महिमा वर्णन। लि० का० संवत् १८५५।

११—पद—विषय, निर्गुण सिद्धांत वर्णन एवं ज्ञानोपदेश। लि० का० संवत् १८५५।

१२—वावनी जोगग्रंथ—विषय, 'क' से लेकर 'ह' तक प्रत्येक अक्षर पर चौपाई रचकर ज्ञानोपदेश किया गया है। लि० का० संवत् १८५५।

१३—रेखता—विषय, ज्ञानोपदेश। इसमें नौ अंग हैं। लि० का० संवत् १८५५।

१४—वंदना जोगग्रंथ—विषय, निरंजन ब्रह्म की वंदना। लि० का० संवत् १८५५।

१५—सवइया—विषय, ज्ञानोपदेश। लि० का० सं० १८५५।

१६—सपतवार जोगग्रंथ—विषय, सात वारों का दार्शनिक विवेचन। लि० का० सं० १८५५।

१७—साखी—विषय, ज्ञानोपदेश। इसमें ५७ अंग हैं। लि० का० संवत् १८५५।

ये सब ग्रंथ एक ही हस्तलेख में हैं। पुष्पिका के अनुसार रचयिता हरिदास (निरंजनी) के शिष्य थे, यथा—

"श्री श्री दयाल जी श्री हरिदास जी का साध श्री स्वामी जी श्री सेवादास जी वृकत (? विरक्त) महापुरुष ति सिष श्री स्वामी जी श्री अमरदास जी॥ ता प्रसादि सिष श्री श्री स्वामी जी श्री श्री दरसण दास ता प्रसादि सिष मुकनदास पठनार्थ"।

इसके अनुसार इनकी गुरुशिष्य परंपरा इस प्रकार है—

हरिदास (निरंजनी)
|
सेवादास
|
अमरदास
|
दरसणदास
|
मुकनदास

हस्तलेख के आरंभ में ग्रंथों और रचयिताओं की एक विस्तृत अनुक्रमणिका भी दी हुई है जिसमें इस प्रकार लिखा है—

"सेवादास जी की वाणी चेला हरिदास जी का निरंजनी"

अतः इससे भी स्पष्ट है कि ये सुप्रसिद्ध हरिदास 'निरंजनी' के ही शिष्य थे।

खोज विवरण (९—२८८) में इनकी वाणियों का उल्लेख है जिसमें इन्हें मलूक-दास जी का शिष्य कहा गया है। परंतु उसके विवरणों को देखने से ऐसा कोई पता नहीं चलता। केवल टिप्पणी में ही इन्हें मलूक दास जी का शिष्य लिखा है जो प्रामाणिक नहीं जँचता।

इनके समय का तो कहीं स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता; परंतु इनके गुरु हरिदास जी के मृत्युकाल के आधार पर जान पड़ता है कि ये सत्रहवीं शताब्दी के अंत में वर्तमान रहे होंगे, देखिए प्रस्तुत विवरण में हरिदास 'निरंजनी'।

प्रस्तुत हस्तलेख बड़े महत्व का है इसमें निरगुन संतों के अतिरिक्त सिद्धों और नाथों के भी ग्रंथ एवं वाणियाँ दी हुई हैं। सिद्धों के नाम के लिये देखिये आरंभ में सिद्धों का विवरण (संख्या १)। निर्गुन संतों के नाम इस प्रकार हैं—

१—सेवादास जी, २—हरीदास जी, ३—कबीर, ४—नामदेव ५—रैदास जी, ६—पीपा, ७—जगजीवनदास, ८—तुलसीदास और ९—सुंदरदास।

हस्तलेख में कबीर के १२१ पदों पर टीका है। ऐसी ही टीका गोरखनाथ के पदों पर भी है। इसमें अन्य रचयिताओं की भी रचनाएँ हैं। जो इस प्रकार हैं—

१—विचार माल—अनाथ कृत, २—साधप्रछया जोग ग्रंथ और भक्ति बैकुंठ जोग—पृथ्वीनाथ कृत, ३—महापुरुषों की वाणी (इसमें मछींद्र के भी पद हैं), ४—सुख-मनि—नानककृत, ५—गुणमाया संवाद, गुणादि बोध और हरिचंद सत—ध्यानदास कृत, ६—रामरक्ष्या—रामानंदकृत, ७—पदितनामा—फरीद जी कृत, ८—नांवमाला (नाममाला), ९—प्रश्णोत्तरीमाला, १०—साधको ब्यौरौ, ११—ब्रह्म जिज्ञासा, १२—प्रह्लादचरित्र, ध्रु चरित्र और जड़भरतचरित्र—गोपालकृत, १३—भरथरी चरित—जीवणदास (? जीवन-दास) कृत, १४—सुख संवाद जोग ग्रंथ, १५—मोहमर्द राजा की कथा—जन जगन्नाथ

कृत, १६—चिंतावणी—खेमकृत, १७—चिंतावणी—लालदास कृत, १८—मुख नामौ-जोगग्रंथ और गुन कठियारा जोग ग्रंथ—वाजिदकृत, १९—ज्ञान बत्तीसी, २०—कबीर रैदास संवाद—सेनाकृत, २१—ग्रंथ नौ नाथ कौ, २२—राममंत्र जोगग्रंथ, २३—नाम महमा जोग ग्रंथ, २४—सवैया और चितावणी—सुंदरदास कृत, २५—अनंतदासकृत—पीपा की परिचई, तिलोचन की परिचई, धनाजी की परिचई, नामदेव की परिचई, कबीर की परचई और सेउ समम की परिचई, २६—हरीदास की परिचई, २७—सेवादास की परिचई, २८—ज्ञान समुद्र—सुंदरदास कृत, २९—भक्तिभावंती-प्रपन्न—गणेशानंद।

१५—हरिदास निरंजनी—इनकी रचना "हरिदास जी की वाणी" का पिछली खोज में विवरण लिया जा चुका है, देखिए खोज विवरण (९–१०९)। इस बार भी इसका विवरण लिया गया है। इसमें छोटी बड़ी ४९ रचनाएँ संगृहीत हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं—

१—ब्रह्मस्तुति जोगग्रंथ, २—मूलमंत्र जोगग्रंथ, ३—नाँवमाला जोग ग्रंथ, ४—नाँव निरूप जोग ग्रंथ, ५—निरंजन लीला जोग ग्रंथ, ६—साध चाल मोतीदाम जोगग्रंथ, ७—निरंजन लीला जोग ग्रंथ, ८—जोग संग्राम जोग ग्रंथ, ९—अष्ट पदई जोग ग्रंथ, १०—निराकार की वंदना, ११—निरपषा मूल जोग ग्रंथ, १२ - प्राण प्रसिध प्रमात्मां पूजा जोग ग्रंथ, १३—जोग समाधि जोगग्रंथ, १४—जोगध्यान जोगग्रंथ, १५—प्राणमाला जोगग्रंथ, १६—आत्मा अभ्यास जोगग्रंथ, १७—उतपति अहेत जोग ग्रंथ, १८—सबद परछया जोग ग्रंथ, १९—बीरारस बैराग जोग ग्रंथ, २०—भ्रम विधूंस जोग ग्रंथ, २१—चिंतावणी उपदेश जोग ग्रंथ, २२—मन चिरत जोग ग्रंथ, २३—मनमद विधूंस जोग ग्रंथ, २४—मनहठ जोग ग्रंथ, २५—मनप्रसंग जोग ग्रंथ, २६—मनमतौ जोग ग्रंथ, २७—मन उपदेश जोग ग्रंथ, २८—व्याहलौ जोग ग्रंथ, २९—तोडरमल जोग ग्रंथ, ३०—इम्रतफल जोग ग्रंथ, ३१—ग्यान उपदेश जोग ग्रंथ, ३२—सपतवार जोग ग्रंथ, ३३—हंस परमोध जोग ग्रंथ, ३४—बड़ी तिथि जोग ग्रंथ ३५—लहुड़ी तिथि जोगग्रंथ, ३६—चालीसपदी जोग ग्रंथ, ३७—चौदापदी जोगग्रंथ, ३८—तीसपदी जोग ग्रंथ, ३९—बारा पदी जोग ग्रंथ, ४०—बावनी जोग ग्रंथ, ४१—सूरसमांधि कौ अरथ, ४२—निखरति प्रवरति जोग ग्रंथ, ४३—मायाछंद जोग ग्रंथ, ४४—जोगमूल सुष जोग ग्रंथ, ४५—ग्यान अग्यान पारछया जोग ग्रंथ, ४६—पद, ४७—किंवत, ४८—कुंडलिया, ४९—साखी।

इनका विषय साधारणतः संतमतानुसार दार्शनिक विवेचन तथा ज्ञानोपदेश है। रचना काल ज्ञात नहीं, लि० का० संवत् १८५५ है।

रचयिता निरंजनी पंथ के प्रवर्तक के रूप में प्रसिद्ध हैं। जिस हस्तलेख में इनकी बानियाँ हैं उसमें एक रघुनाथ दास रचित "हरिदास जी की प्रचई" भी है। ये (परिचयीवाले) हरिदास प्रस्तुत रचयिता ही हैं। 'प्रचई' में इनका जन्मस्थान डीडपुर लिखा है—

प्रथम डीडपुर प्रगटे आई । व्रष चमाल गृह माँझ रहाई ॥

× × ×

इनका मृत्यु संवत् १६०० वि० है । उसका दोहा इस प्रकार है—

संवत् सोलै सै जु सईका । रुति वसंत आनंद लईका ॥
फागुणि सुदि षष्टमी जाना । जन हरिदास हरिमाझ समाना ॥ २ ॥

इसके अतिरिक्त इनका और परिचय नहीं मिलता। इनका उल्लेख पिछले खोज विवरणों में भी हो चुका है, देखिए खोज विवरण (२–६४; पं० २२–६७)।

प्रस्तुत हस्तलेख महत्वपूर्ण है । इसमें अनेक सिद्धों और संत महात्माओं की कृतियाँ हैं । इसके लिये देखिए 'सेवादास' जो प्रस्तुत रचयिता के ही शिष्य थे ।

२—रीतिग्रंथों के ज्ञात रचयिताओं में मतिराम, रसानंद, रामसिंह और सेवकराम मुख्य हैं ।

१६—मतिराम—इस त्रिवर्षी में भी इस कवि के पिंगल विषयक ग्रंथ "पिंगल या छंदसार संग्रह" की एक अपूर्ण प्रति का विवरण लिया गया है । रचनाकाल का उल्लेख नहीं है । लिपिकाल सुखदेवमिश्र के 'रसरत्नाकर' के लिपिकाल के आधार पर संवत् १८९२ के लगभग है, ये दोनों ग्रंथ एक ही हस्तलेख में हैं ।

प्रस्तुत ग्रंथ का उल्लेख खोज विवरण (१२-११२) (पं० २२-६४) में हो चुका है । अंतिम खोज विवरण में रचनाकाल १७५८ दिया हुआ है जो संभवतः संवत् में है । इसकी रचना राजा स्वरूपसिंह के आश्रय में हुई । कवि कथित वंशवृक्ष यों है—

वीरसिंहदेव
|
चंद्रभानसिंह
|
मित्रसाहि
|
स्वरूपसिंह

बुंदेलों की उपाधि 'पंचम' का व्यवहार स्वरूपसिंह के नाम के साथ बराबर हुआ है । रचयिता का और कोई वृत्त नहीं मिलता ।

१७—रसानंद—इनका 'वृजेन्द्रप्रकाश' नायिका भेद विषयक विशाल ग्रंथ है । इसमें 'प्रकाश' नाम से पंद्रह अध्याय हैं । काव्य की दृष्टि से यह उत्तम रचना है । भाषा व्रजी है तथा इसमें कवित्त, सवैया, दोहा, छप्पय, पद्धरी आदि छंद प्रयुक्त हैं । रचनाकाल संवत् १८९१ और लिपिकाल संवत् १९७६ है । आधुनिक काल का लिखा होने से हस्तलेख में पत्रों के बदले पृष्ठ संख्याएँ दी गई हैं ।

रचयिता ने अपना जो वृत्त दिया है उसके अनुसार ये व्रजमंडल में गंगा यमुना के बीच बसे विश्वपुर नामक ग्राम के निवासी थे । वह स्थान कौशिक मुनि का स्थान भी

कहा जाता है। नृप वलवंतसिंह के यश को सुनकर ये विश्वपुर छोड़ भरतपुर गए जहाँ मोदी बलदेव नामक एक व्यक्ति से उनका परिचय हुआ। मोदी ने इनके साथ मित्रवतव्यवहार किया और श्री गोपाल मंदिर में जिसके महंत का नाम जुगलदास था उनके रहने का प्रबंध कर दिया। साथ ही उन्हें राजा के लिये ग्रंथ रचने का परामर्श दिया। गोपाल मंदिर के महंत का नाम जुगलदास था।

वल्लभाचार्य की वंदना करने के कारण रचयिता वल्लभानुयायी ज्ञात होते हैं। तृतीय प्रकाश के प्रारंभ में एक दोहा इस प्रकार है—

श्री गुपाल गुरुदेव के वंदौ चरन सरोज।
रस आनंद तिनकी कृपा रचि कविता रस चोज॥

इससे विदित होता है कि उनके गुरु का नाम गुपाल था। परंतु जैसा ऊपर लिखा गया है भरतपुर में उनके रहने का प्रबंध श्री गोपाल मंदिर में कर दिया गया था, अतः यह संदेह होता है कि दोहे में उल्लिखित 'श्री गुपाल' का तात्पर्य मंदिर के ठाकुर जी से तो नहीं है ?

रचयिता के आश्रयदाता भरतपुर नरेश महाराज बलवंत सिंह थे। संक्षिप्त विवरण के अनुसार महाराज बलवंत सिंह का राज्यकाल संवत् १८९२ से १९१० तक था, परंतु प्रस्तुत ग्रंथ में रचनाकाल संवत् १८९१ दिया है जो महाराजा के राज्यकाल का नहीं है, जैसा—

तिनसौं प्रघटै मित्रता मनपाया वहु मोद।
नृप वृजेंद्र हित ग्रंथ कौ कीनौ मंत्र विनोद॥६॥
समझि मनोरथ ग्रंथ कौ नृप आज्ञा प्रमाँन।
श्रीगुपाल के मंद्र मधि दियो कविहि स्वस्थान॥७॥

रेखांकित शब्दों से स्पष्ट हो जाता है कि ग्रंथ की रचना उस समय हुई जब महाराज बलवंत सिंह सिंहासनारूढ़ हो गए थे। यही नहीं, प्रस्तुत ग्रंथ कवि ने दशहरे के उत्सव में महाराज को भेंट रूप में दिया था, यथा —

पाइ विजय दशमी सुदिन, नृपवलवंत उदार।
नजर गुजारन हेत यह कीनौ ग्रंथ तयार॥१२॥

खोज विवरण (पं० २२—९५) में भी प्रस्तुत ग्रंथ का उल्लेख है; परंतु उसमें उद्धरण नहीं दिए गए हैं।

रचयिता का 'संग्राम रत्नाकर' नाम का दूसरा ग्रंथ भी पिछली खोज में मिला है, देखिये खोज विवरण (९—२६०)।

१८—रामसिंह (महाराजा)—इन महाराजा का उल्लेख पिछले खोज विवरणों में भी हुआ है, देखिए खोज विवरण (६-२१७) (१२-१४९) (२६-३९६)। ये नरवर ग्वालियर के राजा थे। उक्त खोज विवरणों के आधार पर ये संवत् १८३९ में वर्तमान

थे; परंतु प्रस्तुत खोज में प्राप्त "रसिक शिरोमणि" ग्रंथ के रचनाकाल के अनुसार इनका समय संवत् १८३० के लगभग निश्चित होता है। ये एक प्रतिभासंपन्न कवि थे। इनके आजतक मिले प्रायः सभी ग्रंथ साहित्यिक दृष्टि से उत्तम हैं।

इस बार इनके "रसिक शिरोमणि" और "सहस्रनाम चौपई" नाम से दो ग्रंथ और मिले हैं। प्रथम नायिका भेद विषयक ग्रंथ है। इसकी रचना सं० १८३० में हुई। लिपिकाल नहीं दिया है। दूसरे ग्रंथ में कृष्ण के सहस्र नामों का चौपाइयों में वर्णन है। रचनाकाल लिपिकाल नहीं दिए हैं।

१९—सेवक या सेवकराम—प्रस्तुत खोज में इस कवि के निम्नलिखित दो ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं—

१—वागविलास—रचना काल लिपिकाल अज्ञात। विषय महाराज हरिशंकर ने काशी में एक रमणीय बाग लगवाया था जिसका ग्रंथ में बड़ा मनोरंजक एवं विशद वर्णन किया गया है। बाग को उस समय की उपलब्ध उत्तम से उत्तम मनोरंजक सामग्रियों से सुसज्जित किया गया था जिसका स्पष्टीकरण विषय की अनुक्रमणिका से होता है। विषय की दृष्टि से तो ग्रंथ उत्तम है ही परंतु साहित्यिक और ऐतिहासिक दृष्टि से भी यह महत्वपूर्ण है। कवि ने इसमें अपने आश्रयदाता महाराज रामरतन और महाराज हरिशंकर तथा उनके पूर्वजों का विस्तृत वर्णन किया है। इनका विस्तारपूर्वक उल्लेख आगे कवि के वृत्त के साथ किया जाएगा।

रचयिता ने ग्रंथ में जहाँ तहाँ ठाकुर, धनिराम, शंकर और अपने पुत्र मान के भी कुछ कवित्त सवैये दिए हैं।

२—वागविलास—प्रस्तुत प्रति में ग्रंथ के नाम का उल्लेख नहीं है। परंतु इसका विवरण पहले भी खोज विवरण (२३-३८३) पर आ चुका है जिसके आधार पर इसका नाम 'वागविलास' ज्ञात हुआ। इसमें नायिका भेद का विस्तारपूर्वक वर्णन है। विषय को स्पष्ट करने के लिये व्रजभाषा के गद्य का भी आश्रय लिया गया है जिसे वार्ता नाम दिया है। कवि ने इसमें अपने पूर्ववर्ती कवियों की भी नकल की है। एक उदाहरण नीचे दिया जाता है जिसमें वेनीप्रवीन के एक कवित्त का अनुकरण किया गया है—

रैनि मैं जगाई कल करन न पाई इमि,
ललन सताई परजंक अंक महियाँ।

ससकि कसकि कहरतहूँ वितीत निसा,
मसकि 'प्रवीनवेनि' कीन्ही चित्त चहियाँ।
भोर भये भौन के सुकौन लगिगइ सोइ,
सखिन जगाइवे को जाइ गहि वहियाँ।
चौंकि परि चकि परि औचक उचकि परी,
सकि परि जंकि परि बकि परि नहियाँ ॥१८०॥

—वेनीप्रवीन

वेनीप्रवीन का यह कवित्त त्रास के उदाहरण में है। प्रस्तुत कवि ने इसका अनुकरण नवोढ़ा के उदाहरण में इस प्रकार किया है—

ठाढी चित्रशाला में विशाला वरमाला आजु,
चंपे की सी माला रति जाकी लगै छहियाँ।
जानि सुने 'सेवक' अजानि को निशंक मानि,
आनि चुपचापहीं पिछानि गही वहियाँ।
चौंकि चितै चंचला सी ससि कौ उससि परी,
वसि परी कसी परी प्यारी अंक महियाँ।
चूकि परी चकि परी उचकि उचकि परी,
छकि परी छकि परी वकि परी नहियाँ ॥९९॥

इस कवित्त का सारा बनाव वेनीप्रवीन के कवित्त का सा ही है। चौथा चरण तो अक्षर-अक्षर मिलता है। जो कुछ अंतर देखने में आता है उसमें लिपिकर्त्ता का लिपि दोष प्रत्यक्ष विद्यमान है। रचना काल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

ये दोनों ग्रंथ आधुनिक पीले कागज पर लिखे हुए एक ही हस्तलेख में हैं जिसमें पत्र संख्याओं के बदले पृष्ठ संख्याएँ दी हुई हैं। पुष्पिका का उल्लेख किसी में नहीं है।

'बागविलास' में रचयिता ने अपना और अपने आश्रयदाता का विस्तृत वृत्त दिया है जिसके अनुसार ये असनी (अश्वनी) के रहने वाले थे। इनके प्रपितामह का नाम ऋषिनाथ, पितामह का ठाकुर और पिता का नाम धनिराम था। पुत्र का नाम मान तथा पौत्र का काशी (कसिया) था। मुरलीधर और कृष्ण भतीजे थे। बड़े भाई का नाम शंकर था। दोनों भाई महाराज रामरतन और हरिशंकर के आश्रय में रहते थे। खोज विवरण (९–२८९) में इन्हें महाराज देवकी नंदन सिंह के आश्रित कहा गया है जो भूल है। उक्त विवरण में इनके एक ग्रंथ बरवै नखशिख का भी उल्लेख है। इनके परिवार के उपर्युक्त

सभी व्यक्ति साहित्य और काव्य कला में प्रवीण थे। ऐसा विदित होता है कि इन लोगों का काशी नरेश एवं आश्रयदाता के वंशजों के साथ परंपरागत संबंध बना हुआ चला आता था।

ऋषिनाथ—जिन्होंने अलंकार मंजरी की रचना की, काशीराज बरिबंड सिंह के आश्रय में थे। बिहारी सतसई के टीकाकार ठाकुर महाराज देवकी नंदन सिंह के आश्रित थे जिन्होंने इनको कड़ामानिकपुर का तहसीलदार बनाया। धनीराम महाराज जानकी प्रसाद के आश्रय में रहते थे जिनके नाम पर उन्होंने राम चंद्रिका पर तिलक, जुक्तरामापण तिलक-सहित और रामाश्वमेध की रचनाएँ कीं। संस्कृत ग्रंथ काव्यप्रकाश के आठ प्रकाशों का उलथा करने के पश्चात् उनकी मृत्यु हो गई। उनके एक ग्रंथ 'रामगुणोदय' का उल्लेख खोज विवरण (३—११६) पर हो चुका है जिसमें उन्हें देवकीनंदनसिंह के आश्रित होना लिखा गया है।

रचयिता के समय का कोई निश्चित पता नहीं चलता। परंतु जैसा कि इन्होंने अपने आश्रयदाता द्वारा संवत् १९१३ (सन् १८५७) के गदर में अंग्रेजों की सहायता करने का उल्लेख किया है, अतः इसी समय के लगभग इनका भी वर्त्तमान रहना सिद्ध होता है।

इन्होंने कुछ अन्य कवियों के नामों का भी उल्लेख किया है—

श्रीवांधोपति के सुकवि हैं किशोर सरूप।
वंशगोपाल सुकवितथा अरु मदनेस अनूप॥६॥

श्री द्विज मन्नालाल कवि कमलापति रसतज्ञ।
सुवन सुकवि मणिदेव के श्री हनुमान रसज्ञ॥७॥

श्री काश्वीश्वर के सुकवि के सुकवि त्यौं जानकी प्रसाद।
तेजे नंदकिशोर कवि लछिमन वचन अवाद॥८॥

सुकवि भवानी कामता काशी तथा सचेत।
ममकवितापर करिकृपा जब तब दरसन देत॥९॥

मिसिर स्यामसुंदर भिषज है असनी के वास।
रहत काव्य के चोप नृप हरिशंकर के पास॥१०॥

श्रीदंगति किशोर कवि व्यास गनेस प्रसाद।
दुषभंजन श्रीराम कवि रामभरोस अवाद॥११॥

सिउगोविंद श्रीकृष्ण कवि मुरलीधर शुभनाम।
इन सबके गुन गनन को सेवक सेवकराम॥१२॥

ऐसा विदित होता है कि ये सब कवि इनके समसामयिक थे।

इन्होंने अपने आश्रयदाताओं की वंशावली देकर उनका जो वर्णन किया है वह इस प्रकार है—
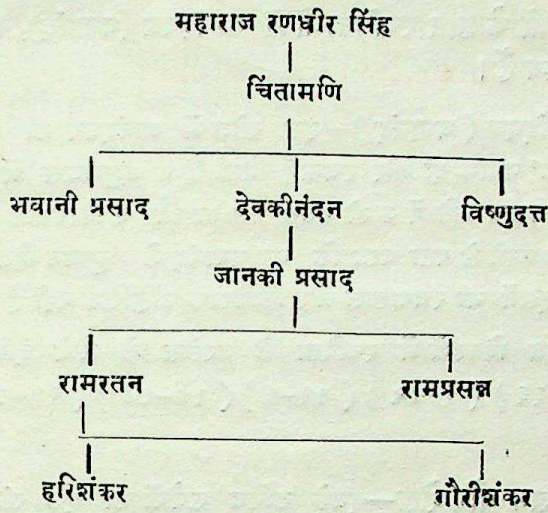
इस वंश का मूल पुरुष ब्रह्मा और गोत्र शांडिल्य लिखा है। इनका स्थान अनिमापुर ग्राम (अब ऐनापुर) था। ये श्रृंगवेरपुर तथा भद्रादिकपुर के स्वामी थे। इनके यहाँ कन्नौज के राजा जयचंद के भेजे हुए पत्रों के विद्यमान रहने का उल्लेख किया गया है। ये महाराजा बड़े यशस्वी, वीर, दानी, दयावान, प्रजाप्रिय और शरणागत वत्सल हुए। इनमें प्रसिद्ध कुछ पुरुषों का वर्णन किया गया है जो निम्नलिखित प्रकार से है —

रणधीरसिंह—इन्होंने एक नृप के भाई को जो नृप के क्रोध के कारण भाग आया था—शरण दी थी। इसके लिये इन्हें लड़ाई भी लड़नी पड़ी जिसमें शत्रु को बुरी तरह परास्त किया। लड़ाई में ये खेत रहे।

भवानी प्रसाद—नवाब गयाजुद्दीन हैदर (लखनऊ) ने इनकी कुछ भूमि एक दूसरे राजा को दे दी थी। इस पर इन्होंने हैदर से लड़ाई ठान ली और बादशाह के द्वारा उसको नीचा दिखाकर अपनी भूमि वापिस ले ली।

देवकीनंदन सिंह—इन्होंने डंकन साहब (अंग्रेज) से मित्रता जोड़कर बहुत से गढ़ों को छुड़वाया था। डंकन साहब ने इन्हें प्राग का सूबेदार नियत किया। काशी रामापुरा में इन्होंने अपनी एक ड्योढ़ी का निर्माण किया। शिवपंचायतन मंदिर बनवाया और गौरीगंज बसाया। असनी के ठाकुर कवि को जो इनके कवि थे कड़ामानिकपुर का तहसीलदार बनाया।

राम रतन—ये बड़े प्रतिभाशाली थे। सितारा और डुमराँव के राजा तथा काशी के राजा ईश्वरी प्रसाद, बेतिया और टिकारी के राजा, लाट गवर्नर तथा टामसेन इनके घर पर आए थे। इन्हें महारानी विक्टोरिया की ओर से भी बड़ा सम्मान मिला था।

हरिशंकर—संवत् १९१३ (सन् १८५७) के गदर में इन्होंने अंग्रेजों की सहायता की जिसके फलस्वरूप इन्हें भी बड़ा भारी सम्मान प्राप्त हुआ।

फुटकल ग्रंथों के ज्ञात रचयिताओं में आनंदघन (घनानंद), आलम और शेख तथा रसखान मुख्य हैं।

२०—आनंदघन (घनानंद)—इस खोज में आनंदघन की 'जमुना जस' और 'आनंदघन के कवित्त' नामक दो और रचनाएँ मिली हैं। जमुनाजस में यमुना माहात्म्य वर्णित है। इसकी प्रस्तुत प्रति में न तो रचनाकाल का और न लिपिकाल का ही उल्लेख है। कवित्तों की छानबीन करने से पता चला कि यह घनानंद के 'सुजान हित' नामक ग्रंथ की खंडित प्रति है। इसमें भी रचनाकाल और लिपिकाल उल्लिखित नहीं हैं।

पिछले खोज विवरणों में रचयिता के उल्लेख के लिये देखिये खोज विवरण (००-७९) (३-६६) (६-७९) (१२-४) (१७-१८) (२३-१४) (२६-१२) (दि० ३१-६)।

२१—आलम और शेख—इनके कवित्त सवैयों का एक संग्रह इस त्रिवर्षी में मिला है। आलम का रचनाकाल संवत् १७५३ के लगभग माना गया है और वे मुअज्जम-शाह के आश्रित कहे गए हैं।* इनके 'आलमकेलि' और 'आलम कवि की कविता' ग्रंथों का उल्लेख पहले हो चुका है, देखिए खोज विवरण (३-३३; ९-३)।

शेख का खोज में अभीतक उल्लेख नहीं किया गया था। पर जब आलम की कविता के साथ इनकी भी रचना मिलती है तो इनका उल्लेख भी आवश्यक है।

प्रस्तुत संग्रह में आलम के २२६ और शेख के ४५ कवित्त सवैये हैं। इनके अतिरिक्त ४४ कवित्त सवैये छापरहित हैं। इनका विषय श्रृंगार और भक्ति है। इन्होंने श्री कृष्ण लीला के अतिरिक्त शिव और राम की भी स्तुति की है।

छानबीन करने से पता चलता है कि तीनों रचनाएँ एक ही हैं। 'आलम केलि' नाम गलत है, शुद्ध नाम 'आलमके कवित्त लिष्यते' ही रहा होगा। 'के'के आगे का शब्द 'कवित्त' और 'लि' के आगे के दो अक्षर 'ष्यते' हस्तलेख के जीर्ण या अत्यंत प्राचीन होने के कारण मिट गए जिससे अन्वेषण कर्त्ता ने पढ़ने में आने योग्य 'के' और 'लि' अक्षरों को ही मिलाकर 'केलि' शब्द लिख दिया।

प्रस्तुत प्रति आदि अंत में खंडित है। इसमें रचनाकाल और लिपिकाल के उल्लेख नहीं हैं।

२२—रसखान—इनके अधोलिखित दो ग्रंथ खोज में मिले हैं—

१—कवित्त—इसमें कुल ९२ कवित्त सवैये हैं। ये कवित्त सवैये कुछ अन्य रचनाओं के साथ एक हस्तलेख में हैं। अन्य रचनाओं के नाम इस

---

* यह भ्रम है आलम एक ही हुए हैं जो अकबर के समय में थे, देखिए 'आलम और उनका समय'; नागरीप्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ५०, सं० २००२, पृ० ३४।

प्रकार हैं—१—कुछ संस्कृत रचनाएँ, २—रसखान के कवित्त, ३—श्रीकृष्णस्तोत्र—मिश्रसुखलालकृत, ४—अयोध्यापच्चीसी—बारैठमेदराम जी कृत, ५—कलिपचीसी—पद्माकर।

प्रस्तुत कवितों में राधाकृष्ण का शृंगार तथा भक्ति का वर्णन है। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १९७६ दिया है।

२—दानलीला—इसमें दही बेचने के निमित्त जाती हुई गोपियों को कृष्ण द्वारा रोकने और उनसे गोरस लेने की कथा संक्षेप में वर्णित है। कथा कवित्त सवैयों में उत्तर प्रत्युत्तर के रूप में है। रचनाकाल और लिपिकाल के उल्लेख नहीं हैं। रचना दानलीला प्रसंग के फुटकर सवैयों का संग्रह मात्र है।

रचयिता व्रजभाषा के लब्धप्रतिष्ठ कवि के रूप में प्रसिद्ध हैं। प्राप्तरचनाओं से इनका और कोई वृत्त नहीं मिलता।

२३—अज्ञातनामा लेखकों की रचनाओं में "कामरूप का किस्सा" उल्लेखनीय है। रचनाशैली द्वारा तथा मंगलाचरण में अल्लाह की वंदना होने से यह किसी मुसलमान लेखक की रचना विदित होती है—

अल्लाही बाद कात्र कार है। दुआलिम का पैदा करन हार है॥
न कोई करै तेरी कुदरत बढ़आ। नहीं इलम तेरा किसी पर अइआ॥

ग्रंथांत का छंद इस प्रकार है—

मुकररहो मिहनत से राहत मिले। दरीनेक वखतीव हितारतपुले॥
बरूदवर महंमद कहो हरका दाम। हुआठजलहक का किसा तमाम॥

इसमें सूफी आख्यान काव्यों की भाँति प्रेम कथा वर्णित है जिसका संक्षेप यों है—

अवध गोरखपुर के राजा महाराजपत को किसी दरवेश की कृपासे पुत्र हुआ जिसका नाम कामरूप रखा गया। ज्योतिषियों ने उसके भाग्य में बारह बरस पर विपत्ति का योग बताया जिसके अनुसार उसे वियोगी बनना था। निदान समय आने पर राजकुमार को एक स्वप्न हुआ जिसमें उसका प्रेम सरनद्वीप की राजकुमारी कामकला से हो गया। स्वप्न भंग हो जाने पर भी उसका प्रेम नहीं छूटा। स्वप्न की राजकुमारी कामकला के बिना उसे जीवन भार सदृश लगने लगा। बहुत से उपचार किए गए, परंतु सब व्यर्थ।

उधर सरनद्वीप की राजकुमारी कामकला को भी राजकुमार का साही स्वप्न हुआ और वह भी राजकुमार के प्रेम में विकल रहने लगी। उसने सुमित नाम का अपना पुरोहित

राजकुमार को खोज लाने के निमित्त भेजा। भाग्यवश सुमित ब्राह्मण की भेंट राजकुमार से हो गई जिसको उसने कामकला का परिचय दिया। राजकुमार इससे अत्यंत प्रसन्न हुआ और अपने छह मित्रों को लेकर पुरोहित के साथ सरनद्वीप को चला। जहाजों द्वारा वे सरनद्वीप के निकट पहुँचे ही थे कि अचानक समुद्र में भयानक तूफान उठा। जितने जहाज थे सब के सब डूब गए। राजकुमार, उसके मित्र और सुमित पंडित डूबने से बच तो गए, पर साथ न रह सके। सब एक दूसरे से अलग-अलग समुद्र की तरंगों में बहने लगे।

राजकुमार, किसी प्रकार, बचकर एक द्वीप में पहुँचा जहाँ वह रानी रावता के बंधन में पड़ा। वहाँ से किसी प्रकार छुटकारा मिला तो एक परी उसे कोहकाफ पर्वत पर ले उड़ी। वहाँ से भी निकला तो तसमपैर नाम के जंतु के अधिकार में जा पड़ा। इस प्रकार उसे बारह मास तक विकट कष्टों एवं कठोर दुर्भाग्य का सामना करना पड़ा। पश्चात् उसे वह दरवेश मिला जिसकी कृपा से उसका जन्म हुआ था। उसकी सहायता से उसका भाग्य पलटा और उसको एक-एक करके सब साथी मिल गए तथा सुमित पुरोहित भी बच निकला। सबको साथ लेकर वह फिर सरन द्वीप को चला। वहाँ पहुँच कर और कुछ कष्ट झेलने के अनंतर कामकला से उसका विवाह हो गया। अपने प्रधान मित्र मित्रचंद का भी विवाह कामकला की सखी कामलता से (जो दीवान की पुत्री थी) करवा दिया।

इस तरह सफलता प्राप्त कर और कुछ दिन सरन द्वीप में रहकर राजकुमार मित्रों-सहित तथा कामकला और कामलता को लेकर अपने देश लौट आया।

रचना काव्य की दृष्टि से तो अधिक महत्व की नहीं; परंतु भाषा की दृष्टि से महत्व-पूर्ण है। इसकी भाषा खड़ी बोली है जिसमें फारसी के शब्द भी मिश्रित हैं। छंद का ढंग तथा कुछ फारसी शब्द ही विदेशी हैं, शेष सब स्वदेशी है। उपमाएँ भी भारत की ही हैं। उदाहरणार्थ, नीचे कुछ उद्धरण दिए जाते हैं—

महल में बना नाच अउ रंग सभ। बजे हरतरफ ताल मृदंगसभ॥
सहेली सखी साथ मिलकर सभन। सवारे कला काम का सभ बदन॥
सपी जो रहे नित कला कामपास। करे हंस के परीतम (प्रीतम) रिझावने की बात॥
कोई बालगूथे केई चीर अंग। केई फूल गूथे से भूषन के संग॥
बतीसो बरन करके सोलहिसिंगार। पुले अनपुले गल मो फूलों के हार॥
कलाकाम ने जब कीआ सभ बरन। बनी पदमनी सी वह कामन दुलहन॥
कुअर को गए ले कलाकाम पास। भवर नै लीआजाके अरविंद वास॥

× × ×

चंदर बदन अलकां (अलकें) विसीअर (विषधर) की।
भंवे कमान अधर सुरखी॥
कुच उत्तिग (उत्तंग) बावा पिक सोहै।
ग्रीवीदेप कपोतन मोहै॥

कट केहर नासा सुक केरी।
गत गिइंद (गयंद) मनमथ मन हेरी ॥

× × ×

रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता। प्रेम की महत्ता दिखाने में रचयिता ने सुप्रसिद्ध प्रेमी व्यक्तियों के नाम गिनाए हैं जिनमें हिंदू और मुसलमान दोनों हैं। इनमें अवध के नवाब का भी उल्लेख है जिससे वाजिद अलीशाह की ओर संकेत होता है। अतः स्पष्ट है कि रचना वाजिदअलीशाह के पश्चात् हुई।

प्रस्तुत प्रति के पत्रों के क्रम में गड़बड़ है। पत्र संख्या १० के पश्चात् २१ से लेकर ३० तक के पत्रें हैं तथा ३० के पश्चात् ११ से लेकर २० तक के। शेष क्रम ठीक है।

नीचे प्रस्तुत विवरण के परिशिष्टों की सूची दी जाती है।

परिशिष्ट १—ग्रंथकारों पर टिप्पणियाँ।
" २—ग्रंथों के विवरण पत्र (उद्धरण, विषय, लिपि, और कहाँ वर्तमान हैं आदि विवरण)।
" ३—उन रचनाओं के विवरण पत्र (उद्धरण, विषय, लिपि और कहाँ वर्तमान हैं आदि विवरण) जिनके लेखक अज्ञात हैं।
" ४ (क)—प्रस्तुत खोज में मिले नवीन रचयिताओं की नामावली।

(ख) ज्ञातनामा उन रचयिताओं की नामावली जिनके प्रस्तुत खोज में नवीन ग्रंथ मिले हैं।

(ग) काव्य-संग्रहों में आए नवीन कवियों की सूची।
" ५—ग्रंथकार और उनके आश्रयदाताओं की सूची।
" ६—अन्वेषकों द्वारा सभा के लिये प्राप्त किए गए हस्तलिखित ग्रंथों की सूची।

विश्वनाथप्रसाद मिश्र
निरीक्षक, खोज विभाग

प्रथम परिशिष्ट

उपलब्ध हस्तलेखों के रचयिताओं पर टिप्पणियाँ

प्रथम परिशिष्ट

रचयिताओं पर टिप्पणियाँ

१ अजैपाल—अजैपाल का नाम सिद्धों के साथ आया है। इनकी थोड़ी सी बानियाँ मिली हैं। इनके तथा बानियों के लिये देखिए 'गोरखनाथ' और 'सिद्धों की वाणी' का विवरण-पत्र, संख्या ५९ तथा विवरण अंश में संख्या १। इनका वृत्त अज्ञात है।

२ अनंतदास—इस त्रिवर्षी में अनंतदास के तीन ग्रंथ मिले—(१) धना जी की परिचयी, (२) रांका बाँका की परिचयी और (३) सेउ समद की परिचयी। रचना-काल किसी ग्रंथ में नहीं दिया है, तीनों का लिपिकाल संवत् १८५६ है। विषय इनके नाम से ही ज्ञात है। प्रथम दो ग्रंथ नवीन प्राप्त हुए हैं। तीसरे ग्रंथ का उल्लेख खोज विवरण (३२–९) में भी है। ये रचनाएँ बड़े आकार के हस्तलेख में हैं जो बड़ा महत्वपूर्ण है। इसके लिये देखिए 'सेवादास'।

रचयिता पिछले कई खोज विवरणों में उल्लिखित है, देखिए खो० वि० (१–१३३) (६–१२८) (९–५) (२३–१८)। इनका कोई विशेष वृत्त इधर नहीं मिला।

३ अनाथ—अनाथदास के दो ग्रंथ प्राप्त हुए हैं—विचारमाला और सर्वसार उपदेश या प्रबोध चंद्रोदय नाटक। इनके ये ग्रंथ पिछले खोज विवरणों में भी उल्लिखित है, देखिए (१५–१२९) (९–१३१) (१२–७) (२०–८) (२३–१९) (२६–१५) (२९–१५)। इस बार सर्वसार उपदेश या प्रबोध चंद्रोदय नाटक द्वारा इनकी निम्नांकित गुरु-परंपरा का भी पता चलाः—

मुरारिदास
|
हरिदास मौनी
|
अनाथ

उक्त नाटक का रचनाकाल सं० १७२६ है। इस बार इसकी दो प्रतियाँ मिलीं हैं। एक में लिपिकाल सं० १९०५ भी दिया हुआ है।

४ अभय सोम—अभयसोम और उनकी रचित 'मानतुंग मानवती चउपई' का पहले पहल पता चला है। ये जैनमतावलंबी थे। इसके अतिरिक्त इनका और कोई वृत्त ज्ञात नहीं।

उक्त ग्रंथ में 'मानतुंग-मानवती' की कथा वर्णित है। इसका रचनाकाल सं० १७२० तथा लिपिकाल सं० १७५९ है। ग्रंथ की भाषा राजस्थानी है।

५ अमृतलाल—अमृतलाल और इनके ग्रंथ "आत्मविचार वैराग या ज्ञान वहोत्तरी" नए मिले हैं। ग्रंथ में जैन आगमों के अनुसार मोक्ष ज्ञान का प्रतिपादन किया गया है :—

दोहा

वोल वहुतरा किया जिन आगम अनुसार।
सुने सुनावे सुरदवे ते पावे भव पार॥

ग्रंथ का रचनाकाल संवत् १९०७ तथा लिपिकाल सं० १९२६ है। यह राजस्थानी गद्य में है। भाषा में गुजराती का भी मिश्रण है।

रचयिता का वासस्थान रतनपुरी था। और कोई वृत्त नहीं मिलता।

६ अस्वपति रषीसुर—अस्वपति रषीसुर का पता पहले पहल ही लगा है। इनका "शालि होत्र" नाम का अपूर्ण गद्यग्रंथ मिला है जिसमें घोड़ों के लक्षण और उनकी बीमारियों के उपचार वर्णित हैं। इसमें रचनाकाल नहीं दिया है; लिपिकाल सं० १८६३ है।

रचयिता के नाम का उल्लेख पुष्पिका में अस्वपति रषीसुर है। अन्य वृत्त अप्राप्त है।

७ आत्माराम—इनका पता पहले ही पहल लगा है। ये जयपुर के महाराज सवाई जयसिंह के आश्रित थे तथा उन्हीं के आदेश से और उन्हीं के नाम पर इन्होंने 'जयसिंह प्रकाश' ग्रंथ की रचना की। यह महाकवि कालिदास के रघुवंश का पद्यबद्ध अनुवाद

है। प्राप्त प्रति आधुनिक रूलदार कागज पर पत्र की एक ओर लिखी गई है। पुष्पिका के पश्चात् एक दोहे में संवत् १७७१ दिया है, जो रचना-काल जान पड़ता है—

सत्रह सै इकहत्तरा दसराहौ गुरुवार।
राम कियौ उज्जेनि मैं कै रघुवंश विचार॥

'राम' रचयिता का उपनाम है, जो ग्रंथ में सर्वत्र प्रयुक्त हुआ है।

रचयिता, जैसा दोहे से प्रकट है, उज्जैन का निवासी था। अन्य वृत्त अज्ञात है। टीका द्वारा ये कवि ज्ञात होते हैं। अनुवाद का एक नमूना देखिए—

श्लोक— इति विरचित वाग्भिर्वन्दि पुत्रैः कुमारः
सपदि विगत निद्रस्तल्पमुञ्झाञ्चकार।
मद पटु निनदद्भिर्वोधिवो राजहंसैः,
सुरपतिरिव गाङ्गं सैकतं सुप्रतीकः॥

अनुवाद— यह भांति विरचित वचन वंदी,
पुत्र तिन बोधित ठयो।
ततकाल भूप कुमार उठि कै,
सेज को छोड़त भयो॥

मदते मनोहर सवद भाषैं राज हंसनि भीरज्यौं।
जिमि जागि सुरगज सुप्रतीक तजै सुगंगातीरज्यों॥

८ आत्माराम—आत्माराम का "स्वातिग शुभ लक्षिन" ग्रंथ खोज में नया मिला है। इसमें सात्विक जीवन का निरूपण है। अन्त में, जैसी संतों की पद्धति थी, हठयोग की साधना के भी छंद हैं। ग्रंथ में रचनाकाल नहीं दिया गया, लिपि काल सं० १८०९ है।

जैसा कि नीचे के उद्धरणों से विदित होता है, ग्रंथकार स्वामी चरणदास जी के शिष्य थे।

चरनदास के चरन को ऐसो उत्तिम ध्यान।
आत्माराम पग्यो रहै छाड़ि करम अज्ञान॥

× × ×

चरनदास को ध्यान धरियै।

× × ×

चरनदास की गुरु-शिष्य परंपरा जो अन्वेषक को मिली है, इस प्रकार है—

सुखदेव
|
चरणदास
|
आत्माराम
|
लछिराम
|
साधु-शरण

स्वामी चरणदास का रचनाकाल संवत् १७६० से सं० १८३८ तक माना जाता है। इसलिए इनका रचनाकाल अट्ठारहवीं शती का उत्तरार्द्ध और उन्नीसवीं शती का पूर्वार्द्ध ठहरता है।

९ आनंदकवि —प्रस्तुत खोज में आनंद कवि की 'रासपंचाध्यायी' मिली है। जैसा कि नाम ही से प्रकट है यह श्रीमद्‌भागवत की 'रासपंचाध्यायी' का पद्यबद्ध अनुवाद है। रचनाकाल संवत १८३५ दिया गया है। लिपिकाल का पता नहीं चला।

रचयिता काशी निवासी थे। अन्य वृत्त अप्राप्य है। ये सन् १९०३ के खोज-विवरण की संख्या ३७ पर उल्लिखित 'आनंद अनुभव' के रचयिता 'आनंद' ही जान पड़ते हैं आनंद अनुभव में भी इनके काशी वासी होने का उल्लेख है। इसका रचनाकाल सं० १८४२ है।

१० आनंदघन (घनानंद)--इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या २० पर हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

११ आनंदघन (मुनि)—'आनंदघन चौबीस स्तवन' के रचयिता आनंदघन मुनि खोज में पहले पहल ही मिले हैं। ये जैन थे और जैसा नाम से ही विदित है इसमें चौबीसों तीर्थंकरों की स्तुति की गई है। ये राजस्थान के रहनेवाले थे, क्योंकि रचना में राजस्थानी मिश्रित व्रज का प्रयोग है।

रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

१२ आलम और शेख--इनके लिये देखिए विवरण अंश में संख्या २१ जहाँ इनका उल्लेख कुछ विस्तार से किया गया है।

१३ इंद्रदत्त--इस खोज में प्राप्त 'पदसंग्रह' नामक एक संग्रह में सूरदास और इंद्रदत्त के पद मिलते हैं। सूरदास तो वे ही प्रसिद्ध 'सूरसागर' के रचयिता हैं, पर इंद्रदत्त का वृत्त अज्ञात है। इसमें सूरदास के ही पद अधिक हैं। इंद्रदत्त के पद साधारण हैं। ये भी कोई कृष्णभक्त रहे होंगे।

'पदसंग्रह' का हस्तलेख जीर्णशीर्ण और खंडित है। इसके दो पत्रे नागरी और शेष कैथी लिपि में हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

१४ ईसवी खाँ--ईसवी खाँ ने 'रसचंद्रिका' नाम से विहारी सतसई की टीका की है। इस खोज में इसकी दो प्रतियों का उल्लेख है। एक प्रति, जो बलिया में प्राप्त हुई है, अपूर्ण है। उसमें पत्र संख्या १०४ के पश्चात् ३८ पन्ने गायब हैं। इसमें लिपिकाल तो नहीं दिया है, पर रचना काल अंत में दिया गया है। किंतु कुछ अक्षरों के मिट जाने से अस्पष्ट है। दूसरी प्रति पूर्ण है और काशी नागरी प्रचारिणी सभा के आर्य भाषा-पुस्तकालय के रत्नाकर-संग्रह में सुरक्षित है। इसमें रचनाकाल का दोहा आरंभ में है और स्पष्ट है। इसके अनुसार 'रस-चंद्रिका' सं० १८०९ में निर्मित हुई। दोहों के क्रम में ये प्रतियाँ एक दूसरी से भिन्न हैं। बलिया की प्रति में अकारादि क्रम से दोहे रखे गये हैं और पहला दोहा यह है--

अपने अपने मत लगे, बादि मचावत शोर।
ज्यौं ज्यौं सबही सेइयौ, एकै नंद किशोर॥

सभा की प्रति में पहला दोहा 'मेरी भवबाधा हरौ राधा'' 'सोइ है। इसमें अकारादि क्रम बिल्कुल नहीं है। पाठ और लिपि की शुद्धता की दृष्टि से दोनों प्रतियाँ उत्तम हैं।

रचयिता ने इसकी रचना नरवर नरेश छत्रसिंह के इच्छानुसार की थी। ये महाराजा छत्रसिंह महाराजा राम सिंह (संवत् १८३९ में वर्तमान) के पिता थे, जिसका उल्लेख खोज विवरण (६--२१७) में हुआ है।

१५ उदय—उदय कवि कृत 'ककावली' या 'कका बत्तीसी' नाम की छोटी सी रचना मिली है। इसमें 'क' से लेकर 'ह' तक अक्षर क्रम से बत्तीस दोहे हैं जिनमें नीति और उपदेश की बातें कथित हैं। रचनाकाल संवत् १७२५ है। लिपिकाल नहीं दिया है। भाषा राजस्थानी मिश्रित व्रज है।

रचयिता उदयपुर का निवासी था। खोज में ये नये ही मिले हैं।

१६ उदैराज—उदैराज की "उदैराज दोहावली" संयोग-वियोग श्रृंगार विषयक रचना है। यह अपूर्ण है तथा इसके रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। ग्रंथ की भाषा मिश्रित राजस्थानी है।

ग्रंथकार के विषय में और कुछ ज्ञात नहीं होता। कहीं ये 'ककावली' के रचयिता 'उदय' ही न हों।

१७ उदैराज—उदैराज की "उदैराज बावनी" नामक पुस्तक मिली है जो अपूर्ण है। यह रचना नीति और धर्मोपदेश विषयकी है। रचना काल संवत् १६७६ तथा लिपिकाल संवत् १७७३ हैं। इसकी भाषा भी राजस्थानी है।

रचयिता का कोई परिचय नहीं मिलता। इन्होंने ग्रंथ के आरंभ में "उदय सिंह नाम नृप उचरूँ" और अंत में 'चहुवाण राण नृप सोनगिरि बसा बास जगनाथरौ' उल्लेख

किया है। इससे पता चलता है कि उदयसिंह सोनगिरि के चहुवान राजा थे। संभवतः रचयिता इन्हीं के आश्रय में रहे होंगे। इन्होंने आरंभ में नवकार की वंदना की है, जिससे ये जैन प्रतीत होते हैं।

१८ उमराव या जन उमराव--भक्त गीतामृत के रचयिता उमराव का पता शोध में पहली ही बार लगा है। अन्वेषक ने इन्हें कायस्थ बतलाया है, पर उद्धृत अवतरणों से जाति का कोई पता नहीं चलता। अन्य वृत्त भी अज्ञात है।

ग्रंथ का रचना काल संवत् १६०५ है और लिपिकाल संवत् १९१४। इसमें तुलसी, जटायु, शबरी, रामदास, श्रीधरस्वामी, श्रीनिंवादित्य, अंवरीष, प्रह्लाद, कृष्णदास, अजामिल, निष्कंचन, मोरध्वज, साखीगोपाल, कामध्वज, भुवन चौहान राजा जयमल, गुहाराम, सुदामा, मामा भनेज ग्वाल, वंशी, रंतिदेव, चंद्रहास राजा, खड्गसेन कायस्थ, रंतवंत वाई, और रत्नावली वाई प्रभृति भक्तों के चरित्र वर्णित हैं।

तुलसीदास जी के संबंध में कहा गया है कि वे कान्यकुब्ज ब्राह्मण और बाल्मीकि के अवतार थे।

१९ कणेरीपाव--कणेरीपाव सिद्धों में से हैं। इन्हीं का नाम कन्हपा या कर्णपाद था। अभी तक इनका कोई प्रामाणिक वृत्त नहीं मिला। प्रस्तुत शोध में इनकी कुछ वानियों के विवरण लिए गए हैं, देखिये, "सिद्धों की वाणियों" का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १।

२० कनक सोम--प्रस्तुत शोध में कनक सोम का पता पहिली बार लगा है। इनकी "आषाढ़ भूत चौपई" की दो प्रतियाँ मिली हैं। रचनाकाल संवत् १६३८ है। एक प्रति का लिपिकाल संवत् १७८२ तथा दूसरी का संवत् १८३१ है। इसमें 'आषाढ़ भूत' नाम के जैन साधु का चरित्र वर्णित है। ग्रंथ की भाषा राजस्थानी है।

रचयिता का नाम केवल ग्रंथांत में मिलता है। इसके अतिरिक्त इनका कुछ भी चरित्र ज्ञात नहीं।

२१ कबीर--कबीर के नाम पर इस त्रिवर्षी में निम्नलिखित ग्रंथ ऐसे मिले जिनका पता पहले नहीं लगा था--

(१) कबीर दास की बाणी--लिपिकाल सं० १८५५ है। इसमें इनकी चार रचनाएँ साखी, रमैणी, पद और रेखता हैं। यह बानी एक बड़े हस्तलेख में है जिसके लिये देखिए 'सेवादास'। इसी हस्तलेख में आगे चलकर कबीर की दो अन्य रचनाएँ भी हैं, एक "पद कबीर जी का अरथ सहित--" (१२१ पद-सटीक) और दूसरा "रमैणी जन्मबोध।"

(२) नामदेव की लीला--लिपिकाल सं० १८३५। इसमें भक्त नामदेव का चरित्र अंकित है। कबीर का नाम ग्रंथांत में दिया गया है।

(३) ग्रंथ भव तारन—लिपिकाल सं० १९२८। विषय-कबीर का धर्मदास को ज्ञानोपदेश। रचयिता का नाम अंत में आया है।

(४) सुखसागर—लि० का० सं० १८१२ दिया है। इसमें परब्रह्म के स्वरूप तथा कबीर के संसार में आने का हेतु वर्णित है।

(५) कबीर और शंकराचार्य की गोष्ठी—लि० का० सं० १८१२। विषय-कबीर द्वारा शंकराचार्य (संन्यासी संप्रदाय) को तत्त्वज्ञान का उपदेश।

(६) संतोषबोध—लि० का० सं० १८१२। विषय—जीव विषयक ज्ञान का वर्णन।

(७) ज्ञान प्रगास या धर्मदास बोध—लि० का० सं० १८७९। विषय—कबीरदास का धर्मदास को निर्गुण ज्ञानोपदेश।

(८) सुख निदान—लि० का० अज्ञात। विषय-कबीर धर्मदास संवाद।

(९) स्वरोदय—लि० का० अज्ञात। विषय-स्वरोदय वर्णन।

इन सबका रचना काल नहीं दिया गया है।

इनमें से प्रथम को छोड़कर शेष में शायद ही कबीर की वास्तविक रचनाएँ मिलें। ये कबीर पंथ के परवर्ती-साधु-महात्माओं की रचनाएँ हैं।

२२ करताराम द्विज "करता"—करताराम द्विज, उपनाम "करता" 'शालिहोत्र नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ की दो अपूर्ण प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। पहली में' रचनाकाल तो दिया है, पर पदावली गड़बड़ है—

री भव बक्र सोनागइ नंदु*जुत करी सम्य (? समय) जानी।
असाढ़ सी सीत सुभ पंचमी सनी को वासर मानी।

लिपिकाल संवत् १९०९ है। दूसरी प्रति में लिपिकाल नहीं दिया है, परंतु रचनाकाल सं० १८५४ है। इसमें रचना काल इस प्रकार दिया है:—

वेद वान बसु भू सहित है सुभ संमत साच।
कातीक बदि बुध छटी केशन वाह शै पाच॥

रचयिता ने ग्रंथ में अपने नाम का उल्लेख "कवी द्वीज करताराम" (प्रथम प्रति) किया है। कहीं कहीं केवल 'करता' का प्रयोग है। अतः इनका पूरा नाम करतारामद्विज और उपनाम 'करता' जान पड़ता है। ग्रंथ की दूसरी प्रति से ज्ञात होता है कि इन्होंने अपना कुछ वृत्त भी लिखा है, पर प्रति के त्रुटित होने से केवल निम्नोद्धृत अंश ही प्राप्त है :—

हरिगीतिका छंद

"शरकार गोरषपुर में सीधुआ विमल वीष्यात।
पावन पड़ोना जाके.........................."

पड़रौना रियासत के पास सीधुआ गोरखपुर जिले का एक गाँव है। रचयिता

कदाचित् पडरौना के राजा के आश्रित थे। प्रथम प्रति की इस पंक्ति से इसका कुछ पता चलता है:—"सीरमनी राऐ रजाए को सुख पाए कवी 'करता' कहा।"

शोध में प्रथम बार ही इनका पता चला है।

*कदाचित यह चरण इस प्रकार है:—विधिभव वक्त्र सुनाग इंदुजुत करी समय जानी। विधि वक्त्र =४, भववक्त्र =५, नाग=८, इंदु=१=१८५४।

२३ कल्यानपुजारी—इस खोज में "कल्यान पुजारी जी की बानी" मिली हैं। कल्याण पुजारी राधा वल्लभ संप्रदाय के अनुयायी थे। इन्होंने श्री सुंदरवर जी को अपना गुरु लिखा है जो श्री हित हरिवंश जी के पौत्र और वनचंद जी के पुत्र थे। राधा-वल्लभ संप्रदाय में सुंदरवर जी का जन्मकाल सं० १६०९ माना जाता है। अतः इनका काव्यकाल विक्रम की सत्रहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध था। ये अनन्य भक्त तथा वृंदावन सेवी थे। राधावल्लभ मंदिर में पुजारी के कार्य पर नियुक्त थे।

इनकी उपर्युक्त रचना अपूर्ण है। रचनाकाल और लिपिकाल भी अज्ञात हैं। इसमें श्री हित हरिवंश जी, वनचंद जी, कृष्णचंद्र जी, गोपीनाथ जी, मोहनचंद्र जी और सुंदरवर जी की प्रशंसा तथा राधाकृष्ण के मान, रूप, रति, सुरतांत आदि केलि क्रीड़ाओं का वर्णन है। यह एक अत्यंत सरस और सुंदर रचना है। रचना कवित्त सवैया और पदों में की गई है।

इनकी कुछ बानियों का पता पहले भी लग चुका है, देखिये खोज विवरण (१२-८९)। पर प्रस्तुत बानियाँ उनसे भिन्न हैं। उक्त विवरण में इन्हें वनचंद जी का शिष्य लिखा गया है, पर अब स्पष्ट हो गया कि ये उनके पुत्र सुंदरवर जी के शिष्य थे।

२४ कविया करणीदान या करणीदान—ये जोधपुर नरेश महाराज अभयसिंह के आश्रित थे। इनका एक ग्रंथ 'बृहद सिणगार पहले मिल चुका है, देखिए खोज विवरण (१-१०५; २९-१८६)। इस बार इनका 'सूरज प्रकाश' नामक एक बृहद् और नया ग्रंथ मिला है। इसमें जोधपुर के महाराज अयभसिंह का जीवनचरित्र वर्णित है। रचना काल संवत् १७८७ है; लिपिकाल अज्ञात है।

"राजस्थान में हिंदी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज" के संपादक ने लिखा है कि 'बृहद सिणगार' सूरज प्रकाश का संक्षिप्त रूप है।

२५ काशीराम—"कवित्त काशीराम" के रचयिता काशीराम का वृत्त अज्ञात है। खोज में पहले भी दो काशीराम मिले हैं। एक 'कनक मंजरी की कथा' के रचयिता (देखिये खोज, ३-७) और दूसरे 'परशुराम संवाद' के (देखिये खोज २३-२०६)। परंतु इनमें से किसी के साथ प्रस्तुत कवि की अभिन्नता स्थापित करने के लिये कोई सूत्र नहीं मिलता। फिर भी संभावना होती है कि 'परशुराम संवाद' के कर्ता ये ही हैं।

इन कवित्तों के रचना काल का पता नहीं है, परंतु लिपिकाल संवत् १७८७ के आस पास हो सकता है क्योंकि एक ही हस्तलेख में इन कवित्तों के साथ 'अद्वैत प्रकाश' भी है जिसका लिपिकाल सं० १७८७ है।

कवित्तों के देखने से ये प्रतिभाशाली व्यक्ति प्रतीत होते हैं।

२६ किशोर जन—इनका पता खोज में प्रथमबार ही चला है। ये पारीख कुल के थे। इन्होंने अपना निवासस्थान मथुरा (व्रजमंडल) के अंतर्गत रामगढ़ (रामपुरी) बतलाया है, जहाँ कमलापति बाराह भगवान हैं तथा जिनके समीप अर्जुन के बाण से निकली हुई सरिता बहती है।

इनकी उपलब्धकृति का नाम "उषा चरित्र" है जिसका रचनाकाल संवत् १६६४ तथा लिपिकाल संवत् १८१९ है। इसमें वाणासुर की पुत्री ऊषा का प्रख्यात चरित्र वर्णित है। रचना दोहा, चौपाई, सवैया और अरिल्ल छंदों में की गई है। भाषा व्रज है जिसमें राजस्थानी शब्दों का भी मेल है।

२७ किसन या जन किसन—इनकी कृति 'रुक्मिणी विवाह' है। यह राजस्थानी मिश्रित व्रजभाषा में है। अतः ये राजस्थान के होंगे। ग्रंथ में नाम का उल्लेख अंत में हुआ है:—

"रुक्मिनी व्याह कथ्यो ज्यन क्रिस्ने सीखे सुनै सुनावै।"

ग्रंथ में रचना काल का और प्रतिलिपि में लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। रचना पदों में है, इसमें रुक्मिनी के विवाह का वर्णन है। इसकी प्रतिलिपि नरवर में किसी बाई रत्नावली ने की है।

२८ किसनिया—"किसनिया रा दूहा" प्रस्तुत खोज में प्राप्त हुआ है। इसमें नीति विषय के पद्य हैं। 'दूहा' नाम से दोहे को ही नहीं समझना चाहिये। राजस्थान में सोरठा को भी दोहा कहते हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। भाषा राजस्थानी है। डिंगल की रचना है। रचयिता राजस्थान के चारण थे। इनकी रचना का राजस्थान में राँजिया की रचना की ही भाँति प्रचार है।

२९ कुलपति मिश्र—कुलपति मिश्र आगरा निवासी परशुराम माथुर (चौबे) के पुत्र थे। ये जयपुर नरेश महाराज रामसिंह के आश्रित थे। इनके दो ग्रंथ 'युक्ति तरंगिनी' और 'दुर्गा भक्ति चंद्रिका' मिले हैं। दोनों ग्रंथ खोज में पहले आ चुके हैं, देखिये खोज विवरण (६-१२५; १२-१००; २३-२३१)। प्रथम ग्रंथ खोज विवरण (६-१२५) पर उल्लिखित है; परंतु उसमें इसके उद्धरण नहीं हैं। इसका रचनाकाल संवत् १७४३ तथा प्रति का लिपिकाल संवत् १९०७ है। इसमें नखशिख नायिकाभेद और रसों का वर्णन है।

पुष्पिका में किसी चत्रभुज ने एक वाक्य जोड़कर अपने को कुलपति का वंशज लिखा है।

३० कुशलसिंह—इनके "गीताज्ञान" और "अर्जुन गीता या राम रतन गीता" नामक दो ग्रंथों के विवरण लिये गये हैं। इनका उल्लेख पिछले खोज विवरणों में हो चुका है, देखिये खोज विवरण (२३-२३१ और ३४७)। 'अर्जुन गीता या रामतरन गीता' को दो ग्रंथकारों 'राम रतन' और 'कुशल सिंह', के नाम पर लिखकर उक्त विवरण में भूल की

गई है। वास्तव में यह एक ही की रचना है। ध्यान देने से स्पष्ट हो जाता है कि 'राम रतन' ग्रंथकार का नाम नहीं है, बल्कि ग्रंथ का ही नाम है। नीचे वे उद्धरण दिये जाते हैं जिनमें 'रामरतन' नाम आया है:—

रामरतन गीता गीता के आरजुन कीन्ह अनुसार।
शांतन सुनही जौ चीत दे मुक्ती होई सवसार॥

× × ×

तब कछु ज्ञान ह्रीदय मह आवा। रामरतन गीता प्रभु गाथा।

तथा पुष्पिका में

इति श्री रामरतन गीता संपूरनं।

इससे स्पष्ट है कि 'राम रतन' ग्रंथकार का नहीं ग्रंथ का नाम है। कुशल सिंह का रचयिता के रूप में स्पष्ट उल्लेख अधोलिखित अर्धाली में पाया जाता है:—"भाषा कुशलसींघतेही नामा। क्रीपा गुरुदेव अवर श्रीरामा।"

वस्तुतः यह गीता किन्हीं रामरत्न के नाम पर बनाई गई है। ये कुशलसिंह के आश्रयदाता थे या पुरखा यह नहीं कहा जा सकता।

उक्त विवरण में कुशलसिंह को बाराबंकी जिले के मथुरा नामक स्थान का निवासी कहा गया है। इनके रचना काल के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं।

इस बार "अर्जुनगीता या रामरतनगीता" की दो प्रतियों के विवरण लिए गये हैं जिनमें से एक में केवल लिपिकाल संवत् १८९६ दिया है।

३१ कृष्णदासहित—पिछली खोज विवरण (१२-९६) के अनुसार ये 'समय प्रबंध' के रचयिता हैं। इन्हें हित हरिवंश के संप्रदाय का अनुयायी तथा गोस्वामी गोवर्द्धन लाल जी का शिष्य लिखा गया है। साथ ही इनका स्थितिकाल सत्रहवीं शती माना गया है।

प्रस्तुत शोध में इनके दो ग्रंथ 'धमारि' और 'सिद्धांत के पद' मिले हैं। रचनाकाल और लिपिकाल किसी में नहीं हैं। प्रथम रचना में होरी के अवसर पर श्रीकृष्ण की लीलाओं का तथा द्वितीय में सांप्रदायिक सिद्धान्तों का वर्णन है।

३२ कृष्णप्रसाद भट्ट—इन्होंने अनेक कवियों के कृष्णलीला विषयक कवित्त-सवैयों का संग्रह—"कृष्णगीतामृत लहरी" नाम से किया है। प्राप्त प्रति अपूर्ण है। इसके पन्ने अलग अलग खर्रे के रूप में हैं। इसमें कुल १२ तरंगे थीं; परंतु १, ४, ७, ११ और १२ तरंगों का पता नहीं चलता। लिपिकार ने कहीं-कहीं पत्र के एक ही ओर और कहीं-कहीं दोनों ओर लिखा है। रचनाकाल तथा लिपिकाल नहीं दिये हैं। साहित्यिक दृष्टि से यह संग्रह महत्वपूर्ण है।

संग्रह के आरंभिक अंश से प्रकट होता है कि इनके पिता का नाम चिंतामणि था। ये गुजरात के भट्ट ब्राह्मण थे। गौडीयमाध्व संप्रदायानुयायी श्रीराधा गोविंद जी इनके गुरु

थे। गुरु के आदेशानुसार इन्होंने बहुत से कवियों के कवित्त-सवैये इकट्ठे किये और यह संग्रह प्रस्तुत किया। संग्रह का नाम पुष्पिका में "श्रीकृष्णलीलामृत सिंधु" भी मिलता है।

ये खोज में नए मिले हैं।

३३ केवल राम वृंदावन जीवन—इनकी 'पदावली' का पता चला है। कदाचित् ये पंजाब के थे, क्योंकि इनके कुछ पद पंजाबी में हैं। इनका परिचय अज्ञात है। कविता से ये प्रौढ़ कवि प्रतीत होते हैं।

पदावली का प्रधान वर्ण्य विषय तो राधाकृष्ण का प्रेम और भक्ति है; पर राम, हनुमान, गंगा आदि के पद भी मिलते हैं। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं।

पदों का क्रम रागों के अनुसार है।

३४ केशव—प्रस्तुत खोज में केशव की एक रचना 'जंबू के रेखते' नाम से मिली है। रचनाकाल संवत् १७१२ और लिपिकाल संवत् १७६५ हैं। इसमें एक जैन महापुरुष जंबूकुमार की मातृभक्ति तथा उनके वैराग्य और गृहत्याग का वर्णन है।

रचयिता जैन थे और गोइंदवाल नामक स्थान में रहते थे। इनके गुरु का नाम हंसराज गणि था। ये खोज में पहली बार ही मिले हैं।

३५ केशवदास—इनका 'रासा' (रासा श्री केशवदास जी का) मिलता है। ये निर्गुणमार्गी संत थे और श्री बावरी साहबा की परंपरा में यारी साहब के शिष्य थे। प्रस्तुत रचना में केवल दो पद हैं। पदों में पंजाबी तथा मारवाड़ी शब्द मिलते हैं, अतः रचयिता मारवाड़ और पंजाब की सीमा पर के रहने वाले ज्ञात होते हैंः—

"नीझर झरंदा दसो दीसा बरषै अमृत वानी।"

× × ×

"पीया थारे रूप लोभानी हो।"

विशेष वृत्त के लिये देखिये 'भीखा साहब'। पदों में तत्त्वज्ञान का प्रतिपादन है। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल उपर्युक्त संग्रह के लेखनकाल के आधार पर १८६७ है।

३६ केशवदास—इनकी कृति 'भागवत' आदि और अंत में खंडित है। इसके केवल छः पन्ने उपलब्ध हुए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल का पता नहीं चलता। ग्रंथकार का नाम एक स्थान पर यों आया हैः—

गुर गणपति ने सारदा ब्रह्मा वेदव्यास।
नारद शुक शौनक नमूं कहे एम "केशवदास"।

ग्रंथ के नाम का भी उल्लेख है :—

संसारी पड़ता सहु अवलोकी अंधकूप।
दया करी दीवो करो श्री भागवतस्वरूप"॥

ग्रंथ की भाषा राजस्थानी है जिसमें गुजराती का भी मिश्रण है। इससे प्रकट होता है कि रचयिता उधर का ही रहने वाला था।

३७ कोविद—इनके "पद" के तीन पत्रे प्राप्त हुए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। आरम्भ में दो स्थलों पर "रामोजजति" का उल्लेख है। प्रायः ये राम सीता विषयक पद हैं। इनमें उन्हीं के क्रीड़ा विहारादि का वर्णन है। एक पद में राजकुमार का भी उल्लेख है जिसका अभिप्राय राम ही जान पड़ता है।

रचयिता के विषय में पदों द्वारा कुछ भी ज्ञात नहीं होता। इनका नाम प्रत्येक पद में आया है।

पिछले दो खोज विवरणों में चंद्रमणि मिश्र उपनाम 'कोविद' का उल्लेख है, देखिए खोज विवरण (६–६२; २६-२४); परंतु यह प्रकट नहीं होता कि वे प्रस्तुत से भिन्न हैं अथवा अभिन्न।

३८ कृपाराम—कृपाराम की "कंठमाल" और "विशुनपद क्रीपाराम जी" छोटी रचनाएँ हैं। प्रथम में (रचयिता के कथनानुसार) नाभादास के भक्तमाल के अनुसरण पर हरिभक्तों की महिमा का वर्णन है।

> शाधुन के महिमा प्रभु नीजमुष दुरवाशा प्रतीभापु।
> नाभामत ले "रामक्रीपा" एह कंठमाल रुचीरापु॥

दूसरी में सृष्टि का वर्णन है।

इनके रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और कोई परिचय नहीं मिलता। कंठमाल द्वारा ये रामोपासक जान पड़ते हैं:—

> वीनती शभ भक्तन सों कीजै।
> अवधचंद्र त्रीप राव लाडिलो ताशुभगती मोही दीजै॥

संभवतः खोज विवरण (४–४६; ५-६; ६–१८३; ९–१५५, २२६) पर आए रामानुज संप्रदाय के साधु कृपाराम यही हैं।

३९ खड़िया खेमा—खड़िया खेमा का पता प्रस्तुत शोध में पहली बार लगा है। ये राजस्थानी विदित होते हैं; क्योंकि इनका रचा हुआ "खड़िया खेमा का परिहा" राजस्थानी भाषा में है। अन्य वृत्त अप्राप्त है।

रचना में नायिका का शृंगार वर्णित है। रचना काल, लिपिकाल अज्ञात हैं।

४० खड़िया बख्ता—खड़िया बख्ता कृत "अभैसिंह रा कवित्त" का विवरण खोज में प्रथम बार लिया गया है। यह राजस्थानी भाषा में लिखा गया है जिससे इसका रचयिता राजस्थान का रहने वाला विदित होता है। विवरण कर्त्ता श्री महावीर सिंह गहलौत ने इन्हें चारण लिखा है। अन्य वृत्त नहीं मिलता।

रचना में रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है इसमें महाराज अभयसिंह का यश वर्णित है। यह पता नहीं चलता कि ये महाराज कहाँ के थे। फिर भी, जोधपुर,

के होने की संभावना है जिनका राज्यकाल सं० १७८१-१८०५ तक था, देखिए खोज विवरण (२-४३, ७२, ८१, ४०) (१-१०५)।

४१ खींवड़ा—खींवड़ा का पता प्रस्तुत शोध में प्रथम बार लगा है। इनका ग्रंथ 'खींवड़ा रा दूहा' राजस्थानी भाषा में है। इसलिये ये राजस्थानी कवि विदित होते हैं। अन्य वृत्त अज्ञात है।

रचना में नीति के दोहे और सोरठे संगृहीत हैं। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल सं० १८४३ दिया है।

४२ खेम जी—'चिंतावणी' ग्रंथ के रचयिता खेम जी के विषय में प्रस्तुत ग्रंथ द्वारा कुछ भी ज्ञात नहीं होता। परंतु पिछले खोजविवरणों से पता चलता है कि ये दादू पंथी साधु थे और इन्होंने 'सुख संवाद' नामक ग्रंथ लिखा (खोज १-१३४; २-९४; २३-२०६)।

प्रस्तुत ग्रंथ भी 'ग्रंथ ज्ञान उपदेश' नाम से पहले आ चुका है (खोज-३२-११७)। इसका रचनाकाल अब भी अज्ञात ही है। लिपिकाल सं० १८५६ है।

४३ गंगादत्त—ये 'लीला सागर' नामक वृहद् ग्रंथ के रचयिता हैं और प्रस्तुत शोध में इनका पता प्रथम बार ही लगा है। इन्होंने अपना जो विवरण दिया है उसके अनुसार ये सिरमौर की रानी हृदयश्री के आश्रित थे। रियासत सिरमौर (पंजाब) की राजधानी विलासपुर का इन्होंने वर्णन किया है जो सतलज नदी के तट पर बसा हुआ है।

यद्यपि इन्होंने प्रभुवंश और कविवंश वर्णन में एक तरंग (अध्याय) का उपयोग किया है तथापि इसमें केवल एक दोहा और एक कवित्त है जिनमें विलासपुर का वर्णन है। उक्त तरंग की पुष्पिका में अवश्य ही आश्रयदाता तथा अपने नाम का उल्लेख किया है:—

ब्यासदेव को नगर जिह है विलासपुरी ख्यात।
वसत सतरुद्रा तीर में लसत दीप हूँ सात ।।२।।

।। कवित्त ।।

चरचा रहति जहाँ वेदन के भेदन की अरचा सदैव देव जगर मगर हैं।
सरम के सिंधु मेले करम अनेक करें धरम धरनपुर वगर वगर हैं।
गुननि गँभीर धीर वीरन की भीर बसे गंगादत्त सुकवि वखानत अगर हैं।
सकल विलास को निवास भास दुष्टनि को नगर विलासपुर सोभित नगर हैं ।।३।

इति श्री मन्महाराज कुमारि राणी हिरदै श्री सरमौरी रचतिये गंगादत्त विरंचिते लीलासागरे प्रभु कविवंश वर्णनो नाम प्रथमोतरंगः ।। ? ।।

विदित होता है कि प्रभुवंश वर्णन तथा कविवंश वर्णन के उद्धरण छूट गए हैं, क्योंकि एक दोहे और एक कवित्त के लिये ही एक तरंग का उपयोग नहीं हो सकता था। अस्तु।

ग्रंथ पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध नाम से दो भागों में है। पूर्वार्द्ध में ५३ तरंग हैं तथा उत्तरार्द्ध में ५५। इसमें नारद और श्री कृष्ण के प्रश्नोत्तर के रूप में महाभारत एवं पुराणों

के आधार पर भक्तिविषयक अनेक कथाएँ वर्णित हैं। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८८६ दिया है।

रचना व्रजभाषा में है जो काव्य की दृष्टि से अच्छी है।

४४ गंगाराम (कायस्थ)—संस्कृत ग्रंथ 'कर्म विपाक' के अनुवादक के रूप में इनका पता प्रथम बार ही लगा है। ये जाति के कायस्थ और संवत् १७३९ में वर्त्तमान थे। अपने विषय में इन्होंने निम्नलिखित प्रकार से लिखा है:—

रामानंद सुत पटनावासी। भुअपति अवर गजेंद्र नेवासी।
संसक्रित केहु बूझि न परई। तेहि निति भाष छंद उचरई॥

इससे विदित होता है कि इनके पिता का नाम रामानंद था जो पटना के रहनेवाले थे। रचना अवधी में दोहा-चौपाई वृत्तों में की गई है। रचनाकाल संवत् १७३९ तथा लिपिकाल संवत् १८७१ है।

४५ गंगाराम तिवारी—इनका पता शोध में प्रथम बार लगा है। इनके लिखे हुए दो अपूर्ण ग्रंथ "बारह मासा" और "फुटकल कवित्त" प्राप्त हुए हैं। संक्षिप्त विवरण में एक गंगाराम त्रिपाठी (मालवीय) का उल्लेख है लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि प्रस्तुत रचयिता उससे भिन्न हैं अथवा अभिन्न। इन्होंने "फुटकर कवित्त" में महाराज डालचंद के यश का वर्णन किया है जिससे पता चलता है कि वे उनके आश्रय में रहे होंगे। यदि राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द के प्रपितामह डालचंद यही हों तो इनका समय उनके कालानुसार सं० १८८७ के पूर्व ठहरता है, देखिए खोज विवरण (६-२३६, १९५)।

ग्रंथस्वामी के कथनानुसार ये प्रयाग निवासी थे जहाँ के बड़े बूढ़े इनके विषय में जानते हैं। प्रथम रचना का विषय शृंगार है और इसकी रचना बरवै छंदों में की गई है। दूसरी रचना कवित्तों में है।

रचनाकाल और लिपिकाल किसी भी रचना में नहीं दिए हैं। काव्य की दृष्टि से ये रचनाएँ उत्तम हैं।

४६ गजानंद—इन्होंने 'नेमनाथ रीधमाल' की रचना की जिसमें नेमनाथ जी का यशोगान है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल के उल्लेख नहीं हैं। भाषा राजस्थानी है।

रचयिता के विषय में कोई पता नहीं चलता, परंतु ग्रंथ में प्रयुक्त भाषा से ये राजस्थान के जान पड़ते हैं।

रचना के अंत में मीरा का माधुर्य भाव का पद है। इनकी रचना भी माधुर्य भाव की है।

४७ गणेश कवि—इस कवि की १—कालिका अष्टक २—जनकवंश वर्णन ३—त्रिवेणी जी के कवित्त और ४—रामचंद्र यश वर्णन नामक चार छोटी २ रचनाएँ नवीन प्राप्त हुई हैं। इनके दो ग्रंथों के विवरण पहले भी लिए जा चुके हैं, देखिये (खोज

३-२४, ९-८३) जिनके अनुसार ये गुलाब कवि के पुत्र और सं० १८९२ के लगभग वर्त्तमान थे। काशी नरेश राजा ईश्वरीप्रसाद और उदितनारायण सिंह इनके आश्रयदाता थे।

प्राप्त रचनाओं में रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। विषय इनके नाम से ही स्पष्ट हो जाते हैं। ये रचनाएँ साहित्यिक कोटि की हैं।

४८ गरीब दास—ये "भक्तन के नाममाला या भक्त वछावली" के रचयिता हैं जिसका इस बार विवरण लिया है। पिछले खोज विवरणों में इस नाम के कई रचयिताओं के उल्लेख हैं, परंतु ये उन सबसे भिन्न, बावरी साहिबा, बीरू साहब, यारी साहब, बुल्ला साहब तथा गुलाल साहब की परंपरा में संत गुलाल साहब के शिष्य हैं। इन संतों का इन्होंने विस्तृत वर्णन किया है। गुलाल साहब की विशेष प्रशंसा की है। दादूदयाल जी तथा अन्य भक्तों का साधारण वर्णन मात्र है।

रचना का नाम प्रारंभ में 'भक्तन्ह कै नाममाला' तथा पुष्पिका में "भक्त वछावली" दिया है। यह भीखा साहब कृत "राम सहस्रनाम" के साथ एक ही हस्तलेख में है जिसमें दो लिपिकाल सं० १८३८ (विचारमाला) और १८४० (हस्तलेख के अंत में) दिए हैं। रचना काल अज्ञात है।

४९ गिरिधरदास (गोपालचंद)—ये भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र के पिता थे। हिन्दी साहित्य के मर्मज्ञ होने के साथ-साथ ये अच्छे कवि थे। पिछले खोजविवरणों में इनके दो ग्रंथों "बुधकथा" और "श्री कृष्ण चरित कवितावली" के उल्लेख हैं, (खोज १२-६०; २६-१४०)। इस बार इनकी एक नवीन रचना "कथामृत" नाम से मिली है। यह पत्राकार प्राचीन लीथो में छपी है, पर प्रस्तुत प्रति खंडित है। इसमें दशावतारों की कथा का वर्णन रहा होगा; परंतु प्राप्त प्रति में मच्छ, कच्छ, नृसिंह, वामन और राम की कथाओं तक ही वर्णन है। कच्छप की कथा उस अंश के अंत के पत्रों के खंडित हो जाने से अपूर्ण रह गई है। शेष कथाएँ पूर्ण है।

प्रत्येक कथा भाग भिन्न-भिन्न स्थानों में छपा है, उसका ब्योरा नीचे दिया जाता है:—

१ मच्छ कथामृत—रचना काल सं० १९०६ वि०, लि० का० सं० १९११। "बाबू श्रीगोपाल चंद्र की आज्ञानुसार यंत्रालय मो कांद हिंद पांडे की हउली में मुनशी हरवंशलाल वो हनुमान प्रसाद ने छापी दसखत कन्हैयालाल ता० २६ अप्रैल सन् १८५४ इसवी श्री हरिः ॥

२ नृसिंह कथा—लिपिकाल सं० १९११ वि०। श्री बाबू गोपाल चंद्र की आज्ञानुसार पाषाणयंत्र में मुद्रित भई। श्रीकृष्णायनमः। लि० कन्हैयालाल ॥

३ वामनकथा—रचना काल १९०६ वि०; लिपिकाल सं० १९११ वि०। श्री बाबू गोपालचंद्र जी की आज्ञानुसार रामकटोरा के निकट बाग में मुन्ना-लाल पाठक ने पाषाण यंत्र से मुद्रित किया॥ इस कथामृत में

आगे भूल से चार सै तैंतीस का अंक दो बेर लिख गया है इसलिए पीछे पाँच सै बयासी का अंक घटा दिया। अब बराबर जानना।

दोहा

विरच्यो गिरधरदास जू लिख्यो कन्हैयालाल।
छाप्यो मुन्नालाल ने, रामकटोरा हाल ॥ १ ॥

४ रामकथा—लिपिकाल सं० १९११ वि०। श्री बाबू गोपालचंद की आज्ञानुसार रामकटोरा के निकट बाग में मुन्नालाल पाठक ने पाषाण यंत्र से मुद्रित किया। लि० कन्हैयालाल खत्री ॥

'कच्छप कथा' अपूर्ण होने के कारण उसका विवरण अप्राप्त है।

५० गुरुदत्त—खोज में इनका पता पहली बार लगा है। अमेठी के राजा गुरुदत्त सिंह से ये भिन्न हैं। इनकी तीन रचनाओं-१-"कवित्त" २-"कवित्त हनोमान जी के" तथा ३—"कवित्त श्री विंध्याचल देवी जी को"—के विवरण लिए गए हैं। येसब खर्राकार हस्तलेख में संगृहीत हैं जिसमें नित्यानंद (देखिये प्रस्तुत विवरण में नित्यानंद) नामक सुकवि के भी कवित्त हैं। प्रथम रचना में सिखों के अकालीदल और गुरु गोविंदसिंह की बड़ाई की गई है। शेष दो रचनाओं का विषय उनके नाम से स्पष्ट है। रचनाकाल तथा लिपिकाल किसी में नहीं दिया है। काव्य की दृष्टि से तीनों रचनाएँ अच्छी हैं।

रचयिता का नाम जहाँ तहाँ कवित्तों में प्रयुक्त हुआ है। इसके अतिरिक्त और कोई वृत्त नहीं मिलता।

५१ गुरुप्रसाद नारायण—ये 'सन्निपात चंद्रिका' नामक वैद्यक ग्रंथ के कर्त्ता हैं। इन्होंने अपना निवास स्थान आजमगढ़ लिखा है। वंश परिचय इस प्रकार है:—

"हरजूसिंह के वंस नाथसिंह नाम जो पाया।
गुरुदयाल भै तासु तने कान्हूसिंघ जायो ॥
तीनही को सुत जुगल श्रेष्ट गुनभयो निधाना।
गुरुप्रसाद लघु नाम गुरुनारायण जाना ॥

ये नानकपंथी थे :—

गुरु नान्हक को शिष्य नाम आनंद जो पायो।
विद्या दीन्हो मोंहि पंडित शिव वच पढ़ायो ॥
तीनही के परसाद करी कविता मैं भाषी।
नाम चंद्रिका सन्निपात यहि को लिखि राषी ॥

ग्रंथ का रचना काल संवत् १९१२ वि० है। लिपिकाल इसके साथ लिखे गये 'दयाविलास' के आधार पर सं० १९१२ वि० के लगभग है। ये दोनों ग्रंथ एक ही हस्तलेख में हैं।

५२ गुलाल साहब—इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या १० पर विस्तारपूर्वक हो चुका है; अतः देखिए उक्त अंश।

५३ गुलाब सिंह—ये 'अध्यात्म रामायण' के रचयिता हैं। इस नाम के रचयिता पिछले खोज विवरणों में आए हैं (देखिए खोज विवरण ३-७८, ९-१९०); परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि वे प्रस्तुत से भिन्न हैं अथवा नहीं। इनका और कोई परिचय नहीं मिलता।

ग्रंथ मूल संस्कृत से अनूदित है। प्रस्तुत प्रति अयोध्याकांड की है। इसका रचनाकाल अज्ञात है; लिपिकाल सं० १६१३ है। प्रतिलिपि दोषपूर्ण है।

५४ गुविंद—प्रस्तुत खोज में इनकी दो रचनाएँ मिली हैं। पहला कोई 'अलंकार' ग्रंथ है और दूसरा "कवित्त सार संग्रह"। प्रथम ग्रंथ अपूर्ण है। ग्रंथ का आरंभ अलंकार भेद से होता है। इसमें अलंकारों के उदाहरण मात्र दिए गए हैं, लक्षण नहीं। उदाहरण अधिकांश रचयिता के स्वनिर्मित हैं। कुछ केशवदास आदि अन्य कवियों के भी हैं। दूसरी रचना में ऋतुवर्णन संबंधी कवित्त-सवैये संगृहीत हैं जो गुविंद, देव, कालिदास, केशवदास, ठाकुर, भवानी और घासीराम के हैं। ऋतुवर्णन वसंत से आरंभ होकर हेमंत पर समाप्त होता है। वर्षा के अंतर्गत हिंडोला और शरद् के अंतर्गत रास के कवित्त हैं। रचनाओं में रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं।

रचयिता के विषय में भी कुछ ज्ञात नहीं होता। पिछले खोज विवरण (२३-१३७) (१२-६६) (३२-१८८) में आए हुए गुविंद से इनकी एकता स्थापित करने के लिये कोई प्रमाण नहीं मिलता। दोनों रचनाओं में "गुविंद" की रचना अधिक होने से अन्वेषक ने दोनों का कर्तृत्व 'गुविंद' से जोड़ दिया है। हो सकता है, संग्रहकर्त्ता भी कोई अन्य व्यक्ति हों।

५५ गो० गोकुलनाथ—प्रस्तुत खोज में गो० गोकुलनाथ द्वारा रचित "चौरासी वैष्णवों की वार्ता" की चार अपूर्ण प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। रचनाकाल किसी में नहीं दिया है। लिपिकाल केवल एक में संवत् १८४९ दिया है। इसमें पुष्टिमार्ग के अनुयायी चौरासी भक्तों (जिनमें अष्टछाप के कवि भी सम्मिलित हैं) की वार्ताएँ ब्रजभाषा गद्य में लिखी गई हैं।

गो० गोकुलनाथ जी श्री वल्लभाचार्य जी के पौत्र और गुसाँई श्री विट्ठलनाथ जी के पुत्र थे।

५६ गोपाल (जन गोपाल)—इनका विस्तृत उल्लेख विवरण अंश में संख्या ८ पर हो चुका है। अतः देखिए उक्त अंश।

ये "रास पंचाध्यायी" के रचयिता हैं। नाम के अतिरिक्त इनका और वृत्त नहीं मिलता। पिछले खोज विवरणों में गोपाल नामक कई रचयिताओं का उल्लेख है; परंतु ये उनसे सर्वथा भिन्न हैं। खोज में इनका पता पहली बार लगा है।

इनकी 'रास पंचाध्यायी' काव्य की दृष्टि से उच्च कोटि की रचना है। इसमें श्रीकृष्ण और गोपियों के प्रसिद्ध रास का वर्णन है। रचनाकाल संवत् १७५५ और लिपिकाल संवत् १८८१ है।

५७ गोपालदास चाणक—इनका पता खोज में पहली बार लगा है। इनकी रची हुई निम्नलिखित छह रचनाएँ तथा इनके पुत्र माखन का बनाया "श्रीनाथ पिंगल" एक जिल्द में मिले हैं। इन सबके विवरण लिए गए हैं:—

१ कर्मशतक—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—कर्म की प्रधानता तथा कलियुग के प्रभाव से मनुष्य के कर्मों में काम, क्रोध, मद, लोभ के समावेश का वर्णन।

२ कीर्तिशतक—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—ब्रह्मा, विष्णु, महेश की कीर्ति का वर्णन।

३ पुन्यशतक—रचना काल-लिपिकाल अज्ञात हैं। विषय—राजाओं को न्यायपूर्वक राज्य करने का उपदेश।

४ विनोदशतक—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—राधाकृष्ण का कुंज विहार तथा बारह मासा।

५ बीरशतक—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—छह प्रकार के बीरों—सत्य-वीर, दानवीर, उत्साहवीर, संग्रामवीर, और विद्यावीर का सात्विक, राजस तथा तामस गुणों के अनुसार वर्णन।

६ सिंगारशतक—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—नायिकाभेद और रसों का संक्षेप में वर्णन।

इन रचनाओं के साथ प्रयुक्त 'शतक' शब्द से स्पष्ट है कि इनमें सौ सौ छंद रहे होंगे; पर प्राप्त प्रतियों में किसी में भी पूरे छंद नहीं हैं।

जैसा ऊपर लिखा गया है, ये रचनाएँ माखन कृत "श्रीनाथ पिंगल" के साथ एक हस्तलेख में हैं। यह हस्तलेख सैय्यद कासिम अली, प्रधान अध्यापक नार्मल स्कूल, छुईखदान स्टेट से प्राप्त हुआ है। उनका एक पत्र इसके भीतर रखा हुआ है जिसमें प्रस्तुत रचयिता (गोपाल) और उनके पुत्र (माखन) के विषय में इस प्रकार लिखा है:—

"ये दोनों कवि (माखन और उनके पिता गोपाल) छत्तीसगढ़ म० प्रा० के प्रमुख गण्यमान्य धुरंधर कवि हो गये हैं। पं० लोचन प्रसाद जी पांडेय ने दिसंबर १४ की 'हितकारिणी' में इन दोनों कवियों की जीवनी दर्शाते हुए इनकी लिखी पुस्तकों पर प्रकाश डाला था। इनकी कई पुस्तकें बड़े २ राजाओं ने प्रकाशित करा दी हैं। अब ये दो (श्रीनाथ पिंगल और शतक जो सभा में भेजे गये हैं) और मिली हैं जो अभी तक भी प्रकाशित नहीं हो सकीं।

'गोपाल कवि' रतनपुर (बिलासपुर) के रहने वाले थे। इनके पिता का नाम गंगाराम था। इनके पुत्र का नाम माखन था। इन दोनों पिता पुत्रों ने कविता में कई ग्रंथ

रचे थे। इनका कविता काल संवत् १७५९ वि० (सन् १७०२) दृष्टिगोचर हुआ है। इनके सात मुख्य २ कविता ग्रंथ इन समेत मिल चुके हैं:—

(१) भक्त चिंतामणि—२५० पृ० काकेर नरेश ने प्रकाशित करा दी।
(२) राम प्रताप—पं० जयलाल जी ने मुद्रित करा दी।
(३) जैमिनी अश्वमेध—खैरागढ़ नरेश ने प्रकाशित करा दी।
(४) खूब तमाशा—प्रकाशित हो गया।
(५) सुदामा चरित्र—प्रकाशित नहीं हुआ।
(६) छंद विलास—
(७) विनोद शतक—(प्रस्तुत शतकों के आदि में यह नाम भी दिया है।)

'इनके ग्रंथों में राजसिंह राजा का वर्णन आया है। ये राजसिंह राजा संवत् १७५६ से १७७६ तक शासन करते रहे हैं; छंद विलास से ही पता चलता है। राजसिंह रतनपुरा के राजा थे जो आज विलासपुर के अंतर्गत है। और ग्रंथों में रायपुर का प्रकाश दिखता है। इससे मालुम होता है कि रायपुर का राजवंश रतनपुर के घराने का है। राजसिंह के कोई संतान(?) हुई इससे रायपुर में सम्मिलित हो गया हो। और गोपाल और माखन कवि इनके चाणक थे इससे यह भी रायपुर आ गए हों—या ग्रंथ के अंत में रायपुर आ गये हों—जो कुछ भी हो। इन ग्रंथों में एक महत्व और भी उल्लेखनीय है कि माखन कवि ने **ग्रंथ रचे पर पितृभक्ति क्षोभ (?) के कारण उन्हीं पिता के नाम से इतिग्रंथ किया गया है।** राजा राजसिंह हैहयवंशी थे और बड़े प्रजाभक्त तथा विद्यानुरागी तथा विद्वानों के मान करने वाले थे"।

ऊपर के मोटे अक्षरों में लिखे वाक्य से सहमत होना तथ्य को देखते कठिन है। प्रस्तुत हस्तलेख में केवल "श्रीनाग पिंगल" ही माखनकृत है। शतक गोपाल कृत ही है; क्योंकि उनमें इनके नाम की छाप कवित्त और सवैयों में मिलती है। पुष्पिका में तो नाम है ही। अतः ये शतक माखनकृत न होकर गोपालकृत ही हैं। हो सकता है, अन्य किसी रचना में वैसी स्थिति भी हो।

"श्रीनाग पिंगल" में राजा राजसिंह रायपुर (मध्यप्रांत) के हैहयवंशी बतलाए गए हैं:—

राजसिंह नृपराज मणि हैहो वंश प्रकाश।
सुवस रायपुर में रच्यो सुंदर छंदविलास ॥४॥
सदा सुकवि गोपाल को श्री गोपाल कृपाल।
तित सासन हित तै रच्यौ छंद विलास रसाल ॥५॥

५८ गोपीचंद—प्रस्तुत खोज में इनकी कुछ 'वाणियों' के विवरण लिए गए हैं। इनके लिये देखिए "सिद्धों की वाणी" का विवरण पत्र, संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १।

५९ गोरखनाथ—इनका विस्तृत उल्लेख विवरण अंश में संख्या १ पर हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

६० गोविंद स्वामी या गोविंद प्रभु—ये अष्टछाप के कवि हैं। इनके विषय में जनश्रुति है कि ये पद बनाकर यमुना में बहा देते थे। इनकी भतीजी ने किसी तरह २५२ पद और १२ धमार बचा लिए। कहते हैं, अब तक इनके येही पद और धमार मिलते हैं। प्रस्तुत खोज में इनके 'पद' तीन नामों से मिले हैं जो नीचे दिए जाते हैं :—

१ गोविंद प्रभु की बानी - रचना काल, लिपिकाल अज्ञात। विषय—दान लीला, मानलीला, गोचारण और रूपवर्णन।

२ पदावली—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय-बाललीला, रूपवर्णन, मानलीला आदि।

३ गोविंदस्वामी के २५२ कीर्त्तन - रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय, कृष्णलीला और कृष्ण भक्ति।

पूर्वविवृत—(३२-६७)।

६१ गोविंद सुकवि—इनकी "राधामुष षोडशी" नामक रचना का विवरण लिया गया है। इसके रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता। रचना कवित्तों में की गई है जिनमें श्री राधा के मुख की शोभा का वर्णन है। इसके नाम से विदित होता है कि इसमें १६ कवित्त रहे होंगे, परंतु प्राप्त अंश में केवल १२ कवित्त हैं। अतः यह अपूर्ण है। रचना काव्य की दृष्टि से उत्तम है। इसमें कठिन शब्दों के अर्थ दिए गए हैं और कहीं-कहीं अलंकारों का भी निर्देश कर दिया गया है।

रचयिता का नामोल्लेख केवल कवित्तों में है। इसके अतिरिक्त और कोई पता नहीं लगता।

खोज विवरण (पं० रि०—३४) (२३-१३७) पर दो गोविंद कवि आए हैं; परंतु उनका प्रस्तुत रचयिता के साथ साम्य स्थापित करने के लिये कोई आधार नहीं मिलता।

६२ घनस्याम—ये "नासकेतु पुराण" के अनुवादक हैं। अनुवाद दोहा, चौपाई और सोरठों में हुआ है। रचनाकाल संवत् १९१५ है। लिपिकाल उल्लिखित नहीं है।

रचयिता रामानुजपंथी जान पड़ते हैं। इन्होंने प्रस्तुत अनुवाद राम पदारथलाल गोलवारा आजमगढ़ के आज्ञानुसार किया :—

"राम पदारथलाल गोलवार आजमगढ़ी।
तेहि आज्ञानुसार घनस्याम रचना किए॥"

और परिचय नहीं मिलता। ये आज तक मिले इस नाम के ग्रंथकारों से पृथक् ही जान पड़ते हैं।

६३ घोड़ा चोली—घोड़ा चोली का नाम केवल सुनने में आता था। प्रस्तुत खोज में इनकी घोड़ा चोली नामक कुछ औषधियों के नुसखों के तथा कुछ 'वाणियों' के विवरण लिए गए हैं।

रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख किसी में भी नहीं है। प्रथम रचना गद्य में है जिसमें खड़ीबोली की क्रियाएँ हैं। इसकी शैली निराली है। कहीं तो हिन्दी ही है और कहीं कहीं हिंदी मिश्रित संस्कृत। नीचे दिए उद्धरणों से यह स्पष्ट हो जायगा :—

"ए सर्व बराबरि करि कपड़छान करना ये सर्वक बराबरी अजेपाल शुद्ध करि मीजी लेना पुनः सर्व एकत्र षरलना भंगरा रस सुं षरलना दि २१ पुनः गोली मुग प्रमान अथवा मृत प्रमान अर्चितं नित्य सर्व रोग नाशनं।"

'वाणियों' के लिये देखिये, "सिद्धों की बानियों" का विवरण पत्र संख्या–५९ और विवरण अंश में संख्या –१।

रचयिता का कालादि तथा विशेष वृत्त अप्राप्त है। 'घोड़ाचोली' रचना में एक स्थान पर इसके नाम का उल्लेख इस प्रकार हुआ है :—

"घोराचोली सिधकालापानि नमोस्तुते श्रीगोरषनाथ पादुकां नमस्तुते सिधदाता गणेश"

इससे विदित होता है कि 'घोराचोली' कोई सिद्ध हैं और गोरखनाथ की पादुका को नमस्कार करने के कारण संभवतः गोरख के शिष्य अथवा गोरखपंथी हैं। 'कालापानि' नाम भी हो सकता है उन्हीं का हो। जो कुछ हो, उक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि घोड़ाचोली नामक कोई सिद्ध हुए हैं। और उनके नाम पर 'वाणियाँ' भी मिली हैं। अतः दोनों रचनाओं के घोड़ाचोली नामधारी रचयिता एक ही हैं।

६४ चंडीदान—इनकी रची "अमल को कविता" नामक छोटी सी रचना के विवरण लिया गया है। इसमें अफीम खाने वालों की दशा का वर्णन किया है। यह अपूर्ण है। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं। भाषा राजस्थानी है।

रचयिता का कोई वृत्त नहीं मिलता। इनके नाम का उल्लेख विवरण पत्र में दिए गए उद्धरणों में नहीं है।

६५ चंद्रदास—ये "श्रृंगार सागर" नामक ग्रंथ के कर्त्ता हैं। इन्होंने अपने विषय में इतना ही लिखा है कि—मैंने हंसपुरी नामक ग्राम में बसकर यह पुराण बनाया:—

ग्राम सो हंसपुरी वसिके एहु पूरन दिव्य पुरान संवारो।
चंद तजे रसभाव सबै रच जोग शो छीरहि अंत विचारो॥

ग्रंथ का रचनाकाल संवत् १८०५ और लिपिकाल संवत् १९०२ है। इसमें बारह अध्याय हैं जिनमें कृष्णस्वरूप का श्रृंगार पूर्ण वर्णन किया गया गथा है। यह उत्तम काव्य-कृति है।

खोज (१९०९–३८) पर भी एक चंद्रदास उल्लिखित हैं जिन्होंने 'रामायण' भाषा और 'नेहतरंग' ग्रंथों का प्रणयन किया। ये कदाचित् कृष्णसंप्रदाय के नहीं हैं, अतः इनसे भिन्न हैं।

६६ चिंतामनि—इनकी "चिंतामनि पद्धति" वैद्यक विषयक रचना है। इसका रचना काल संवत् १७८८ है हस्तलेख अपूर्ण रहने से लिपिकाल अज्ञात है। रचना गद्यपद्य दोनों में है। गद्य पूरबी का है खड़ी बोली मिश्रित।

रचयिता का नाम केवल अध्यायों की पुष्पिकाओं में दिया हुआ है—"इति श्री रीषी राममिश्र अत्मज श्री चिंतामनि पध्यतौ प्रथमा आलोंक:।।"

इसके अनुसार इनका नाम चिंतामनि तथा इनके पिता का नाम रिषीराम मिश्र था। अन्य परिचय अज्ञात है।

६७ चिंतामणि—प्रस्तुत शोध में इनके द्वारा रचित "रास मंडल" का विवरण लिया गया है। इसमें रचनाकाल का उल्लेख नहीं है, लिपिकाल संवत् १८२५ है। विषय कृष्ण और गोपियों का रास वर्णन है जो भागवत के आधार पर झूलना छंदों में है। झूलनों की संख्या तीस है। अंत में एक छप्पय भी है। काव्य की दृष्टि से रचना सरस है।

रचयिता के नाम का उल्लेख आरंभ में तथा पुष्पिका में हुआ है। नाम के अतिरिक्त और कोई परिचय नहीं मिलता। अतः नहीं कहा जा सकता कि ये चिंतामणि कौन हैं।

६८ चिरपट—चिरपट का नाम सिद्धों के साथ आया है। प्रस्तुत खोज में इनकी कुछ 'बानियाँ' प्राप्त हुई हैं। बानियों द्वारा इनके विषय में कुछ ज्ञात नहीं होता। विशेष के लिये कृपया देखिए, "सिद्धों की वाणी" का विवरण पत्र संख्या-५६ और विवरण अंश मे संख्या—१

६९ चेतन—इनके तीन ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं जिनके नाम नीचे दिए जाते हैं:—

(१) कक्का पैंतीसी—रचनाकाल १८४५, लिपिकाल संवत् १८७०। विषय-ज्ञानोपदेश। ककहरा पद्धति पर राग रागिनियों में पद रचना है।

(२) चैत्य वंदना—रचनाकाल अप्राप्त, लिपिकाल सं० १८७०। विषय—चौबीस जैन तीर्थंकरों की वंदना।

(३) लघुपिंगल भाषा—रचनाकाल संवत् १८४७ लिपिकाल संवत् १८७०। विषय—पिंगल। र० का० का दोहा इस प्रकार है:—

१ ८ ४ ७

'चंद सिद्ध वेदा मुनी, मास पोस गुनपान।
श्वेत बीज गुरुवार को, पूरे ग्रंथ सुजान।।"

"सिद्ध" को "सिद्धि" मानकर संवत् १८४७ होता है। इसकी रचना 'रूपदीप-चिंतामणि' नामक पिंगल ग्रंथ को देखकर की गई है। 'रूपदीप चिंतामणि' जयकृष्ण कृत है, देखिए खोज (००-८०; ९-१३८)। प्रस्तुत सब ग्रंथ एक ही हस्तलेख में हैं।

रचयिता जैन थे। इनके गुरु का नाम ऋद्धि विजय वाचक था। इनका जन्म बंग प्रदेश में हुआ। गुरु से दीक्षा लेकर इन्होंने यात्रा की और फिर अपने देश को लौट आए। "कक्का पैंतीसी" के अंत में संवत् १८४५ दिया है जो रचनाकाल है:—

१ ८ ४ ५

इक अष्ट चतुर चित पंथ धरिये विक्रम के इहसाल रे।
अतिमाह उज्जल चंद जनमें बुद्ध चेतन लाल रे।।

७० चौणकनाथ—इनकी बानियों के विवरण लिए गए हैं जिनके लिये देखिए—"सिद्धों की वाणी" का विवरण पत्र और गोरखनाथ संख्या–५९ तथा विवरण अंश में संख्या १। इन्हें सिद्ध कहा गया है। अन्य वृत्त अज्ञात है।

७१ चौरंगीनाथ—चौरंगीनाथ का नाम गोपीचंद भरथरी की कहानी में सुनने को मिलता है। इस बार इनकी कुछ बानियाँ मिली हैं, जिनके लिये देखिए "सिद्धों की वाणी" का विवरण पत्र संख्या–५९ और विवरण अंश में संख्या १। विशेष वृत्त इनका अज्ञात है।

७२ जन छबील—प्रस्तुत शोध में इनका पता प्रथम बार लगा है। इनके रचे "हरिभक्ति विलास (उत्तरखंड)" नामक ग्रंथ का विवरण लिया गया है। इसमें पत्रों की संख्या ३१७ से आरंभ होती है और ४०१ में समाप्त। कदाचित् ४०० पत्रों में पूर्व खंड और उत्तर खंड दोनों साथ ही रहे होंगे। प्राप्त अंश से रचनाकाल का कोई पता नहीं चलता। लिपिकाल संवत् १८१९ है। ग्रंथ की रचना भागवत के आधार पर हुई है। साहित्य की दृष्टि से इसका कोई महत्त्व नहीं।

रचयिता का नाम के अतिरिक्त और वृत्त नहीं मिलता। कदाचित् आरंभ में इन्होंने अपना वृत्त तथा रचनाकाल दिया होगा जो अप्राप्त है।

७३ जगजीवन दास—इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या ११ पर हो चुका है। अतः देखिए उक्त अंश।

७४ जगन्नाथ (जन)—इनके द्वारा रचित "मोहमर्दराजा की कथा" का विवरण लिया गया है। इसमें मोहमर्द राजा की कथा का पौराणिक आख्यान वर्णित है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १८५६ इस आधार पर है कि प्रस्तुत ग्रंथ एक बड़े आकार के हस्तलेख में है जिसमें इस संवत् में लिखी गई कई रचनाएँ हैं। इसके लिये देखिए, सेवादास।

ग्रंथ द्वारा रचयिता के विषय में और कुछ ज्ञात नहीं होता। एक जगन्नाथ इसी नाम के ग्रंथ के रचयिता के रूप में पहले भी आ चुके हैं, देखिए खोज विवरण (२३–१७७) (२६–१६४) (२९–१६४) (पं० रि० २२)। परंतु ग्रंथों के आपस में न मिलने के कारण यह नहीं कहा जा सकता कि वे तथा प्रस्तुत रचयिता एक ही हैं।

७५ जगराम—इनका प्रथम बार ही पता लगा है। इनके 'पद संग्रह' का विवरण लिया गया है। संग्रह के प्रारंभ में कुछ दोहे और कवित्त हैं, फिर पद। विषय, जिनदेव की भक्ति है। भाषा ब्रज है। बीच में कुछ पद पंजाबी के भी हैं। रचनाकाल और लिपिकाल का पता नहीं चलता।

रचयिता के विषय में केवल इतना ही ज्ञात होता है कि ये जैन थे।

७६ जनप्रसाद—खोज में ये नए मिले हैं। इनके एक "पदसंग्रह" का पता

लगा है जिसमें रामचरित का वर्णन है। इसके रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। पद सुंदर तथा सरस हैं।

रचयिता का नाम कहीं-कहीं 'दास प्रसाद' भी दिया है। अन्य वृत्त अप्राप्त है। ये रामोपासक हैं।

७७ जयराम—इनकी "श्रीमद्भगवतगीता की टीका" मिली है जिसका विवरण लिया गया है। पुष्पिका से पता चलता है कि इसकी रचना श्री रामानुजाचार्य के श्रीभाष्य के अनुसार है। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। अनुवाद दोहे चौपाइयों में किया गया है।

रचयिता ने अपने विषय में किसी प्रकार का उल्लेख नहीं किया। खोज विवरण (ज-१३०) पर ज्वर विनाशन के रचयिता एक जयरामदास उल्लिखित हैं; परंतु प्रस्तुत रचयिता से उनकी एकता स्थापित करने के साधन नहीं हैं।

७८ जयसिंहदास—ये 'हितोपदेश के कथा' के कर्ता हैं और सारंगगढ़ कोट के राजा उद्योत साहि के मंत्री देवकीनंदन के आश्रय में रहते थे। उनके कहने से इन्होंने प्रस्तुत ग्रंथ की रचना की। इसके अतिरिक्त इनका और कोई परिचय नहीं मिलता। खोज में ये नवोपलब्ध हैं।

प्रस्तुत हस्तलेख अंत से खंडित है। रचनाकाल संवत् १७८२ है। लिपिकाल हस्तलेख खंडित होने के कारण अप्राप्य है।

७९ जलंधरी पाव—जलंधरी पाव का नाम गोपीचंद और भरथरी की कहानियों में आता है। प्रस्तुत शोध में इनकी कुछ वाणियाँ मिली हैं जिनके लिये देखिये 'सिद्धों की वाणी' का विवरणपत्र संख्या—५९ और विवरण अंश में संख्या १। इनका वृत्त खोज में अब भी अनुपलब्ध है।

८० जानकी प्रसाद—ये 'युक्ति रामायण' के रचयिता हैं। इनका जीवन वृत्त प्राप्त नहीं है। परंतु जैसा सेवक या सेवक राम (संख्या २९८) के विवरण से ज्ञात होता है कि उन (सेवक के) पिता धनीराम ने महाराज रणधीर सिंह के वंशज बाबू देवकीनंदन के पुत्र जानकी प्रसाद के नाम पर १—रामचन्द्रिका पर तिलक, २—जुक्त रामायण तिलक सहित और ३—रामाश्वमेध नाम के तीन ग्रंथ रचे। संभवतः वे जानकीप्रसाद यही हैं। ग्रंथ अपूर्ण है। इसमें रामचरित्र का वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। इसमें अध्यायों के बदले 'प्रतीहार' है। समस्त प्रतीहारों की संख्या लगभग ७ है। छः पूर्ण हैं तथा सातवाँ अपूर्ण। रचयिता ने छंदों के बदले में विशेष रुचि दिखलाई है। खोज में ये नवोपलब्ध हैं।

८१ जिनदास—इनकी प्रस्तुत रचना 'नेमिनाथ राजमती मंगल' में नेमिनाथ और राजमती के विवाह तथा वैराग्य का वर्णन है। ग्रंथ का रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १८०९ दिया है।

रचयिता के विषय में कोई अन्य बात नहीं विदित होती। खोज विवरण (१७–८९) पर एक जिनदास पंडित का उल्लेख है जिन्हें जैन कवि कहा गया है। वे संवत् १६४४ के लगभग वर्तमान थे। संभवतः वे तथा प्रस्तुत जिनदास एक ही हैं।

८२ जीवनधन—इनका पता खोज में पहली बार लगा है। ये 'सुरतांत लीला' के रचयिता हैं, विशेष परिचय नहीं मिलता। इनका नाम ग्रंथ के अंत में केवल एक स्थान पर आया है। रचनाकाल प्राप्त न होने से यह भी नहीं कहा जा सकता कि ये किस समय में वर्तमान थे।

ग्रंथ में राधा और कृष्ण का दाम्पत्य विलास वर्णित है। रचना अधिकतर रोला छंदों में हुई है। दोहे, चौपाई, कवित्त और सवैये का भी प्रयोग किया गया है। भाषा ब्रजी है। लिपिकाल संवत् १८४० दिया है।

८३ जुगतानंद—इनके दो ग्रंथों 'भक्ति प्रबोध' और 'भगवत गीतामाला' के विवरण लिए गए हैं। खोज में ये नवीन मिले हैं। केवल प्रथम ग्रंथ से ही इनके विषय में कुछ पता चलता है जिसके अनुसार ये सुखदेव जी के शिष्य चरणदास जी के शिष्य थे। इन्होंने कुछ पदों में राजस्थानी शब्दों का प्रयोग किया है जिससे ये राजस्थानी विदित होते हैं। यह रचना संवत् १८२४ में हुई, अन्य परिचय नहीं मिलता। इन्होंने निर्गुण और सगुण दोनों को रचना का विषय बनाया है। एक ओर राधा कृष्ण का गान तो दूसरी ओर 'अजपा' और 'सतगुरु' का वर्णन। इस ग्रंथ में भक्ति और ज्ञान-वैराग्य संबंधी नाना विषयों का विविध छंदों में निरूपण है। इस दृष्टि से ग्रंथ कई अंशों में विभाजित हो सकता है, किंतु इन अंशों में परस्पर विचित्र प्रकार की एक रूपता पाई जाती है। विषय के साथ-साथ नवीन छंद रखने की चेष्टा की गई है। दोहा, चौपाई, पद, कवित्त और कुंडलिया आदि विविध छंदों का प्रयोग किया गया है। कृष्ण, सुखदेव, गुरुचरणदास की प्रार्थना के पश्चात् गुरुमहिमा, साधु महिमा, मन जग निवृत्ति, वैराग्य, नाम माहात्म्य अजपा जाप, कृष्ण चरित्र, सुकदेव स्तुति और बारहमासा आदि विषयों का वर्णन है। इसकी प्रस्तुत प्रति में लिपिकाल नहीं दिया है।

दूसरा ग्रंथ—'भगवत गीता माला' गीता का अनुवाद है। अंत में रामाष्टक, हनुमान जैत, विष्णु पंजर स्तोत्र आदि भी हैं। इससे रचयिता के विषय में कुछ ज्ञात नहीं होता। विषय साम्य तथा रचयिता के नामसाम्य के कारण ही इसे एवं प्रथम ग्रंथ को एक ही रचयिता की कृतियाँ मान लिया गया है। इसमें रचनाकाल नहीं है। विवरण पत्र के उद्धरणों में लिपिकाल का उल्लेख नहीं है, परंतु अन्वेषक ने लिपिकाल सं० १८५९ माना है।

८४ जेठुवा—'जेठुवारा सोरठा' के इस रचयिता का पता प्रथम बार ही लगा है। रचना में केवल १३ सोरठे हैं जिनमें नीति का विषय वर्णित है। रचनाकाल तथा लिपिकाल नहीं दिए हैं।

रचयिता के विषय में और कुछ ज्ञात नहीं होता। रचना राजस्थानी भाषा में होने के कारण ये राजस्थानी ज्ञात होते हैं।

८५ जैतसिंह (महापात्र)—इस रचयिता की निम्नलिखित तीन रचनाएँ खोज में मिली हैं—

(१) 'साहिजादे माजम के कवित्त' या 'मुअज्जम शाह के कवित्त'—रचनाकाल अज्ञात, लिपिकाल संवत् १७४२। विषय—मोअज्जम शाह की प्रशंसा का वर्णन।

(२) माजम प्रभाव अलंकार—रचनाकाल संवत् १७२७, लिपिकाल अज्ञात। विषय—अलंकारों का वर्णन। इसमें मोअज्जमशाह की वंशावली भी दी है।

(३) प्रबोध चन्द्रोदय नाटक (भाषानुवाद)—रचनाकाल और लिपिकाल संवत् १७६२। विषय—संस्कृत के प्रबोध चंद्रोदय नाटक का अनुवाद।

प्रथम ग्रंथ की दो प्रतियों के विवरण लिए गए हैं जिनमें से एक प्रति तथा अन्य दो ग्रंथ एक हस्तलेख में हैं। यह (हस्तलेख) रचयिता के हाथ का ही लिखा हुआ है। स्याही और लिपि के साथ साथ प्रबोध चन्द्रोदय नाटक की पुष्पिका से भी इसकी पुष्टि होती है, यथा—

'इति श्री प्रबोध चंद्रोदय नाटकस्य तस्य भाषा करिष्य महापात्र जेतसिंहस्य षष्टमो अंकः लिषितं स्वहस्त ज्येष्ठ वदि षष्टी गुरौ संवत् १७६२ ॥ पुस्तक संपूर्ण शुभमस्तु ॥'

प्रथम ग्रंथ के ७७ वें कवित्त के पश्चात् इस प्रकार का उल्लेख है:—संवत् १७४२ शाके १६०७ श्रावणे मासे कृष्णपक्षे नवमी भ ३७ ग ४० संध्या समये मकर लग्ने श्री महापात्र जयतसिंहस्य चत्वारिंशतमो ४० वर्षं प्रविष्टः।

इससे स्पष्ट है कि रचयिता का जन्म संवत् १७०३ में हुआ था। ये असनी जिला फतेहपुर के महापात्र नरहरि के वंशज मनिराम के पुत्र थे। मोअज्जम शाह इनके आश्रयदाता थे जिनकी प्रशंसा में तथा जिनके नाम पर इन्होंने प्रथम दो ग्रंथ रचे।

दूसरे ग्रंथ 'माजम प्रभाव अलंकार' में आश्रयदाता की वंशावली इस प्रकार दी है:—

शाहजहाँ के पश्चात् औरंगजेब का नाम न देना स्पष्ट भूल है। मोअज्जमशाह जो बहादुर शाह के नाम से गद्दी पर बैठा औरंगजेब का पुत्र था। मोअज्जमशाह के कवित्तों में कुछ अन्य लोगों के कवित्त मिले हुए ज्ञात होते हैं। एक जगह शाहजहाँ की घटना के संबंध में सं० १६२२ का उल्लेख है; परंतु उसमें जेत की छाप नहीं है। संभवतः यह कवित्त इनके पिता मनिराम का है जो शाहजहाँ के समय में वर्तमान थे। इन कवित्तों में राजा जयसिंह राघोराय और छत्रसाल आदि ऐतिहासिक व्यक्तियों के भी उल्लेख पाए जाते हैं।

मोअज्जम शाह के संबंध में अनेक युद्धों का वर्णन है। यह रचना साहित्यिक होने के साथ-साथ ऐतिहासिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है।

८६ ज्ञानदास—इनका नाम के अतिरिक्त और कोई परिचय नहीं मिलता। इनकी छोटी सी रचना 'तमाल–मद्य भांग–मांसानां निषेध' का विवरण लिया गया है। विषय नाम से ही स्पष्ट है। लिपिकाल-संवत् १८७८ है। रचनाकाल अज्ञात है। ग्रंथ ब्रह्मांड पुराण के एक अध्याय का अनुवाद है।

८७ टीपू सुलतान (अनुवादक पूर्णवल्लभ मिश्र)—प्रस्तुत ग्रंथ 'मामूल अतिब्बा' के मूल कर्त्ता टीपू सुलतान दक्षिणी भारत के प्रसिद्ध शासक थे। इनका जन्मकाल सं० १८०६ तथा राज्यकाल सं० १८४० से १८५६ तक था।

मूल ग्रंथ फारसी में है जिसको टीपू सुलतान ने संगृहीत किया था। इसका हिंदी अनुवाद बुलंदशहर जिला के निवासी पूर्णवल्लभ मिश्र ने किया। टीका के रचनाकाल के अनुसार ये संवत् १९०७ में वर्तमान थे।

ग्रंथ का विषय वैद्यक है।

८८ टोडरानंद—'टोडरानंद वैद्यक' के रचयिता के नाम का कोई निश्चित पता नहीं चलता। ग्रंथ के नाम के आधार पर ही 'टोडरानंद' अनुमानित किया गया है। अन्वेषक का कहना है—'मैंने भंडारकर के संग्रह में 'टोडरानंद' (व्यवहार सौख्य) ग्रंथ देखा है जो संवत् १७३१ के लगभग का लिखा है। उसमें अकबर के नाम का स्पष्ट उल्लेख है।'

रचयिता का कोई परिचय नहीं मिलता। टोडरमल के आश्रित होना अनुमित हो सकता है। लेखक का नाम 'टोडर' होना भी संभव है।

ग्रंथ का विषय उसमें आए वैद्यक शब्द से स्पष्ट है। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १७३७ है। इसकी भाषा अवधी और खड़ी बोली का मिश्रण है।

८९ ठाकुर कवि—इनका कोई परिचय नहीं मिलता। पिछले खोजविवरणों में उल्लिखित इस नाम के रचयिताओं से ये भिन्न जान पड़ते हैं। इनका रचा हुआ 'महाभारथ कर्न आरजुनी' नामक ग्रंथ मिला है जिसमें इन्होंने अपने को 'कवी ठाकुर' कहा है :—

'तीनी लोक सब देषै कवी ठाकुर कहै गाई।'

इसी के आधार पर इन्हें 'ठाकुर कवि' मान लिया गया है। ग्रंथ में कर्णार्जुन युद्ध का वर्णन है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं है। लिपिकाल संवत् १७९६ है। इसकी भाषा अवधी है जिसमें भोजपुरी के शब्दों का भी मेल है।

९० ठाकुरदास 'ठाकुर'—इनका प्रस्तुत ग्रंथों द्वारा कोई परिचय नहीं मिलता, परंतु ग्रंथस्वामी (पंडित जगन्नाथ मिश्र) का कथन है कि ये मेरे पुरखे थे और इनका समय लगभग १००।१५० वर्ष प्राचीन है। इन्होंने ग्रंथों में अपना नाम 'ठाकुर' या 'ठाकुरदास' दिया है।

इनके दो ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं जिनमें ग्रंथ के नामों का स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता। एक में नाम 'शब्द सतगुरु के' दिया है तथा दूसरे में 'ज्ञा० गी०' है जो संभवतः 'ज्ञान गीता' है। प्रथम में भक्ति, ज्ञान और वैराग्य संबंधी पदों का संग्रह है। इसके नाम से विदित होता है कि संग्रह किसी शिष्यों ने किया है। मूल नाम केवल 'शब्द' रहा होगा। शिष्य ने आदर प्रदर्शित करने के लिये ही 'शब्द सतगुरु के' लिखा है।

इस रचना से पता चलता है कि रचयिता सनातन धर्म में आस्था रखने वाला था। साथ ही उसकी शैली निरगुनियों की सी है। एक ओर कलियुग के प्रभाव का वर्णन तथा सनातन धर्म का अवलंबन करने का उपदेश करते हैं तो दूसरी ओर निरगुनियों की तरह परमतत्व का विवेचन करते हैं। उदाहरणार्थ दो पद दिए जाते हैं :—

कलजुग और सनातन धर्म

कलजुगवा कपट पट खोलु रे।
जौ कलजुगऊ कपट पट खोलवे सीआराम सुधि पइवे।
निज सतगुरु चर्ण निरेखो अगम निगम गति पइवे ॥ १ ॥
साधु संत कै करौ वंदगी तनमन वा जी वारो।
भक्ति सनातन मारग लीजै रोको जम के द्वार हो ॥ २ ॥
राजनेति गति राज करौ तु धर्म सनातन लेव।
जैसे कर्णी करि राखै ताकै तैसे देव ॥ ३ ॥
राम भक्ति से नेह लगावो ज्ञान वैराग्य बढ़ावो।
माता पिता परिवार पालना संत नाम गुण गावो ॥ ४ ॥ आदि ॥

निर्गुण विवेचन

नहीं आकाश है नहीं पाताल है नहीं मृत्युलोक की कारसाजी।
नहीं जमराज हैं नहीं धर्मराज हैं नहीं पाप नहीं पुन्य ताजी ॥
चंद्र अरु सूर्य तारंगणा पवन जल नहीं हिंदुआ तुरकसोजी।
नहीं वह हद है नहीं अनहद है नहीं वह जगमगी जोति साजी ॥
भूत वयताल नहीं काल शयतान नहीं जगत परिपंच नहीं कोउ काजी।
रूप अखंड है लहर आनंद है अगम की पंथ है सत्यसाजी।
दास ठाकुर सोइ देश में पेश नीज जागता पुरुश शेश कल साजी ॥ १ ॥

दूसरी रचना 'ज्ञान गीता' का विषय आध्यात्मिक है जो एक रूपक द्वारा स्पष्ट किया गया है।

काशी रूपी काया में एक मनसराज ब्राह्मण बुद्धि रूपी स्त्री के साथ रहता था। वह विश्वनाथ का बड़ा भक्त था। उसकी भक्ति की परीक्षा लेने के लिए भगवान् ने एक अघोरी साधु के भेप में उसके पास जाकर तपस्या की सिद्धि के निमित्त उसका मांस मांगा। भगवान् ने ब्राह्मण से कहा, 'तू बड़ा भक्त है। मुझे तपस्या की सिद्धि तब प्राप्त हो सकती है जब मैं तेरे जैसे भक्त का मांस खाऊँ। अतः हे भक्त! मुझे अपना मांस दो।'

ब्राह्मण ने पहले तो अपने से उत्तम भक्त की खोज की; परंतु जब कोई नहीं मिला तो स्वयं स्त्री पुत्र के साथ साधु की इच्छा पूर्ण करने के लिये तैयार हो गया। इसपर भगवान् बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने प्रत्यक्ष दर्शन देकर ब्राह्मण से बरदान माँगने के लिये कहा। ब्राह्मण ने पुत्ररूप में अपने यहाँ जन्म लेने की प्रार्थना की। भगवान् ने तथास्तु कहकर उसकी इच्छा पूर्ण की।

आगे मनसराज पुत्र द्वारा बैकुंठ लाभ करता है। बुद्धि को भी ज्ञान प्रात होता है और वह पुत्र से योग विषयक ज्ञान प्राप्त करती है। इसके पश्चात् ग्रंथ खंडित है।

योग के प्रकरण में त्रिकुटी, इंगला, पिंगला और अनहद नाद आदि का वर्णन निर्गुणियों की शैली पर हुआ है।

रचनाकाल और लिपिकाल किसी ग्रंथ में नहीं दिए हैं।

६१ तुरसीदास (गुसांई)-- तुरसीदास गुसांई का उल्लेख पहले खोज विवरण (३५-१००) में भी हो चुका है। उसके अनुसार ये निरंजनी पंथ के साधु थे और शेरपुर (राजपूताना) में महंत थे।

इस बार इनकी बानियाँ 'तुरसीदास की बाणियों' के नाम से मिली हैं जिनमें तीन ग्रंथ हैं—'साखी' 'ग्रंथ चौअक्षरी' और 'पद'। 'ग्रंथ चौअक्षरी' में तीन छोटी-छोटी रचनाएँ हैं—१—करनीसार जोग ग्रंथ, २—साध सुलक्षन जोग ग्रंथ, ३—तत्व गुनभेद

जोग। इन सबका विषय निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश है। रचनाकाल किसी में नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८५६ है। ये बानियाँ एक बड़े आकार के हस्तलेख में हैं जिनके लिए देखिए 'सेवादास'।

९२ तेज—ये 'भ्रमर गीत' के रचयिता हैं। ग्रंथ द्वारा इनके विषय में कोई विवरण नहीं मिलता। तेज नाम रचना में केवल एक स्थान पर है, इससे संदिग्ध है।

ग्रंथ अपूर्ण है। इसमें गोपी उद्धव संवाद वर्णित है। रचनाकाल, लिपिकाल अज्ञात है। कविता सरस हैं।

९३ त्रिलोकसिंह—प्रस्तुत खोज में इनका 'राजनीति चंद्रिका' नामक ग्रंथ विवृत हुआ है। यह राजनीति विषय पर लिखा गया है जिसमें राजपुरोहित नृप लक्षण तथा राज्य के लिये त्याज्य और विहित कर्मों का वर्णन है। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १९०५ दिया है। इसकी भाषा परिमार्जित है।

त्रिलोकी सिंह नाम के एक कवि के 'सभा प्रकाश' ग्रंथ का उल्लेख खोज विवरण (५-२२१) पर भी है। दोनों एक ही हो सकते हैं। उक्त खोज विवरण के अनुसार रचयिता के जीवनवृत्त के संबंध में कोई नवीन बात नहीं विदित होती। उसमें इनके कुँवर गोपाल सिंह के पिता होने की संभावना की गई है जो सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में वर्तमान थे, देखिए खोज विवरण (६-४२)।

९४ दत्तात्रेय – प्रस्तुत खोज में इनके नाम से कुछ बानियाँ मिली हैं। पता नहीं कि ये प्रसिद्ध साधक दत्तात्रेय ही हैं या कोई अन्य व्यक्ति। इनके विषय में देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र और गोरखनाथ संख्या-५९ तथा विवरण अंश में संख्या १। इनका वृत्त अज्ञात है।

९५ दयादेव – इनका पहले पहल पता चला है। 'कवित्त दयादेव के' नाम से इनकी एक रचना का इस बार विवरण लिया गया है। इसमें विप्रलंभ श्रृंगार के सात कवित्त हैं जो काव्य की दृष्टि से उत्तम हैं। विवरणपत्र में उद्धृत अंश से तो रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता ; परंतु अन्वेषक ने लिपिकाल संवत् १८१३ लिखा है जिसका आधार विदित नहीं होता। इसकी भाषा राजस्थानी मिश्रित ब्रजी है।

रचयिता के जीवनवृत्त के संबंध में कुछ विदित नहीं होता।

९६ दयाल कवि—'भाषा महिमन (शिव महिम्न)' के रचयिता हैं। इन्होंने यह रचना नृपति सुजानसिंह के आज्ञानुसार की :—

> नरपति सिंह सुजान ने आयसु दीन्ह्यो मोहिं।
> रचि भाषा महिमन करौ सैव सराहै तोहिं ॥
> नरपति सिंह सुजान पै करौ कृपा जगदीश।
> करौ चक्कवै जगत को ... ... यहुदीस ॥

पता नहीं ये सुजान सिंह कहाँ के राजा थे। अनुमान से ये भरतपुर के महाराज बदनसिंह के पुत्र सुजान सिंह हो सकते हैं। इनका राज्यकाल संवत् १८१२ से संवत् १८२० तक था।

पिछले दो खोज विवरणों में जनदयाल और दयाल नामक रचयिताओं का उल्लेख है, देखिए खोज विवरण (२६–१९३) और (३८–३५)। यह नहीं कहा जा सकता कि प्रस्तुत रचयिता इनमें से कोई एक है या नहीं।

रचना 'महिम्न स्तोत्र' का अनुवाद है और कवित्त सवैयों में की गई है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

६७ दयालनेमि—ये 'अवगत उल्लास' अन्य नाम 'आत्मप्रकाश या सर्वसार संग्रह' के रचयिता हैं। इनका वृत्त अज्ञात है। ग्रंथ में कहीं कहीं खड़ी बोली का मेल है जिससे अनुमान होता है कि ये १८वीं शताब्दी के बाद हुए होंगे:—

नहीं काहू की ह्वै रहती है। सबहूँ कौ अंतर दहती है।
कृष्णादिक सों छल करती है। यह काहू सों नहीं डरती है।

माया, पत्र सं० ५९

ग्रंथ वेदांत विषय का है। आरंभ में रचयिता ने स्वयं अपनी (आत्मरूप में) वंदना की है। पश्चात् पंचदेवताओं की प्रार्थना है जो केवल परंपरा पालनार्थ की गई जान पड़ती है।

इसमें ९ अध्याय (प्रयोग) हैं तथा इसमें कवित्त और दोहों का विशेष प्रयोग किया गया है। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं।

६८ दयालाल—इनकी 'प्रेम बत्तीसी' नामक रचना का प्रस्तुत खोज में विवरण लिया गया है। इसमें कृष्ण और गोपियों के प्रेम का वर्णन गोपी उद्धव संवाद के रूप में किया गया है। रचनाकाल तथा लिपिकाल अज्ञात हैं। इसकी रचना कवित्तों में हुई है। भाषा ब्रजी है। काव्य की दृष्टि से ग्रंथ साधारणतः अच्छा है।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त अन्य कोई विवरण नहीं मिलता।

६९ दलपत या दौलत विजय—ये 'नवरस विलास (खुमान रासो ?)' नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति—जो दो जिल्दों में है—अपूर्ण है। इस प्रति में सात खंड पूरे हैं और आठवाँ खंड अधूरा है। यह पुराने देशी कागज में लिखी है तथा इसमें ६१२ पन्ने (पहली जिल्द में १–९० तक और दूसरी में ९१–६१२ तक) हैं। प्रत्येक पत्र के एक ओर लिखा है, दूसरी ओर खाली छोड़ दिया गया है। इसका लेख बहुत आधुनिक (अधिक से अधिक १०–२० वर्ष का) है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। ग्रंथ में उसके नाम का उल्लेख स्पष्ट रूप से नहीं मिलता। तीसरे और चौथे खंडों की पुष्पिकाओं में 'नवरस विलास' ग्रंथ के नाम के रूप में उल्लिखित है इसलिये

उपयुक्त न होते हुए भी एवं किसी निश्चित नाम के अभाव में इसी को ग्रंथ का नाम मान लिया गया है। आर्यभाषा पुस्तकालय (काशी नागरी प्रचारिणी सभा) में यह 'खुमान-रासो' नाम से है। ग्रंथ में यह नाम कहीं नहीं आया है, पर खुमान के चरित को प्रधानता दी गई है:—

साहसीक आषाढ़ सिध क्षत्री मोड खुमाण।
गाहक्रमल्ल दातार गुरु अनमी अवली बाण ॥ १४ ॥
उदयो ज्यूँ उदयाचलें झलहल तेजे भाण।
रायजादो रघुवंस रिधु प्रगट्यो पुता प्रमाण ॥ १५ ॥
चरित तास गुणचौपई अधिकभाव अधिकार।
सुण्या घणों सुष संपजे सयणा सुभा मझार ॥ १६ ॥

—पत्र ३

बड़े अक्षरों वाले पद में आए 'चरित' शब्द से यदि ग्रंथ का नाम 'खुमानचरित' मान लें तो सार्थक न होगा, क्योंकि एक तो इसमें आद्योपांत खुमाण का चरित्र नहीं दिया है और दूसरे इसके कतिपय खंडों की पुष्पिकाओं में प्रयुक्त 'बाप्पा खुमाणचरित्र' (द्वि० खं०), 'करण खुमाणचरित्र' (च० खं०) और 'कानड़देक सासोड रति सुंदरी देवलदे इत्यादिक चरित्र' (च० खं०) नाम भी ग्रहण करने पड़ेंगे जो उचित नहीं कहे जा सकते।

श्री अगरचंद नाहटा का एक लेख 'खुमाणरासो का रचनाकाल और रचयिता' नाम से नागरी प्रचारिणी पत्रिका (वर्ष ४४, संवत् १९९६, नवीन संस्करण—भाग २०, अंक ४) में निकला है। उक्त लेख में खुमाणरासो की जिस प्रति का उल्लेख है उससे प्रस्तुत प्रति कुछ पाठांतरों और 'अथ' से प्रारंभ होनेवाले अंश (जो इसमें नहीं है) को छोड़कर अविकल रूप से मिलती है। मिलान के लिये आदि अंत के थोड़े से उद्धरण दिए जाते हैं:—

पत्रिका में छपे श्री नाहटा जी के लेख से

प्रारंभ—॥ ६६० ॥ श्री अंबिकाय नमः ॥ सकल पंडित शिरोमणि पंडित श्री १०८ श्री हिमत्त विजयगा चरण कमले भ्यो नमः ॥

॥ गाहा ॥

ॐ ऐं मंत्र अपारं, सारद प्रणमांमि माय सुष सन्नं।
सिद्ध ऋद्ध बुद्धि सिरं, पूरे वरवेद पडि पुन्नं ॥ १ ॥

अंत—तुरत मजघर तेडिया, दीधा त्या शिरपाव।
तीन नदी वां ....

प्रस्तुत प्रति से

प्रारंभ—श्री गणेशाय नमः

ओं ऐं मंत्र अपारं। सारद प्रणमांमि माय सुप्रसन्नं।
सिद्ध ऋद्ध बुद्धि सिरं। पूरे वर बेद पडि पुन्नं ॥ १ ॥

अंत—तुरत गजधर तेड़िया दीध्या त्यां शिरपाव।
तीन नदी बाँ ... ...

ग्रंथ के प्रत्येक खंड की कथा का वर्णन संक्षेप में इस प्रकार है :—

प्रथम खंड (पत्र १–६५ तक)

शारदा, गणेश और गुरु की वंदना, चित्रकोट (चित्तौड़) का वर्णन तथा सूर्यवंशी राजाओं की वंशावली के अनंतर वाप्पारावल की कथा का वर्णन। कथा यों है:—चित्रकोट रघुवंशियों की राजधानी थी। उनमें से गहिलो नाम का एक पुरुष गांजणगढ़ आया। उसके वंश में श्रीपंजर हुआ जिसके समय में गढ़ मुसलमानों के हाथ में चला गया। श्री पंजर की रानी किसी तरह प्राण बचाकर मेवाड़ भागी और वहाँ किसी नागेल (नागल) द्विज के यहाँ रहने लगी। उसने वाप्पारावल को जन्म दिया। वाप्पारावल जब आठ बरस का हुआ तो वह वन में गाय चराने के निमित्त जाने लगा। वन में उसे हारीत ऋषि के दर्शन हुए। ऋषि की कृपा से उसे शिव जी का आशीर्वाद प्राप्त हुआ कि वह चित्तौड़ का राजा होगा। ऋषि ने उसको एक लिंग की उपासना करने का भी उपदेश दिया। इन्हीं घटनाओं के क्रम में उसको देवी के भी दर्शन हुए जिसने प्रसन्न होकर सदा उसकी सहायता करने का वचन दिया। आशाओं के साथ-साथ वाप्पा का तेज और उत्साह बढ़ा। उसने चित्रकोट के राजा चित्रसेन के यहाँ प्रति दिन एक लाख मुद्रा वेतन पर चाकरी कर ली। थोड़े दिन पश्चात् उसे द्रोणगिरि के एक दानव को मारने की आज्ञा हुई जिसने चित्रसेन के राज्य के एक भाग की प्रजा को खाकर समूल नष्ट कर दिया था। वाप्पा ने देवी की सहायता से दानव को मार दिया और गांजणगढ़ को मुसलमान बादशाह (सुलतान साह सलेम) के हाथ से छीन लिया। जब लौटकर आया तो चित्रसेन को मारकर चित्रकोट (चित्तौड़) पर भी अधिकार कर लिया। उसने दानव और चित्रसेन की पुत्रियों से विवाह किया और सुखपूर्वक राज्य करने लगा। इस समय वाप्पा की अवस्था सोलह वर्ष की थी। संवत् ४९१ (?) में वह चित्तौड़ की गद्दी पर बैठा। संवत् का उल्लेख इस प्रकार है:—

संवत च्यार एकाणुवे एकलिंग अंबाव।
वर दीधो वापावदें सगत कियो सुपचात ॥ २८ ॥

× × ×

शुक्ल पक्ष वैशाख सुध पंचमी पुष्य नषत।
श्री गुरुवासर चित्रगढ़ बेठो वप्प तखत ॥ ३१ ॥

वाप्पा के बावन पुत्र हुए। उनके तरुण हो जानेपर उसने अश्वमेध यज्ञ किया।

इस खंड की पुष्पिका इस प्रकार है :—

इति श्री दोलत विजय विरचिते बापारो अधिकार संपूर्ण ॥ श्री रघुवंशान्वने बापातें खुमाण विचें आठ पेढी थई हिवें खुमाण रावल रो अधिकार कहे छें ॥ १ ॥ प्रथम खंड ॥

द्वितीय खंड (पत्र ६६—११० तक)

वाप्पा रावल की ७वीं पीढ़ी (संभवतः) में करण राजा हुआ। उसका पुत्र खुमाण हुआ। करण के पास पुरपट्टन से एक गजधर (?) आया। वह वास्तुशास्त्र का जाननेवाला था। करण ने उसको एक महल बनवाने की आज्ञा दी। जिसके अनुसार उसने महल बनाकर तैयार किया। महल के एक खंड में उसने दिल्ली का चित्र बनाया जिसमें पाँच पद्मिनी स्त्रियों को भी अंकित किया गया था। खुमान इन स्त्रियों पर मोहित हो गया। उसको गजधर से पता चला कि वे दिल्ली के तोमर राजा की पुत्रियाँ हैं। अंततोगत्वा खुमाण का विवाह उनसे हो गया। दूसरा खंड समाप्त हो जाता है जिसकी पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री चित्रकोटाधिपती श्री रघुवंशे वापा पुमांण चरित्रे रति सुन्दरी अभीग्रहकरण चित्रकारिका चरित्र रमण राजकुंवारी पाणी वृद्ध पंचसहेली चित्रगढ़ मिलण दौलतविजय रचिते द्वितीय पंड सम्पूर्णम् ॥ २ ॥

तृतीयखंड (पत्र ११०–२३० तक)

इसमें खुमान की रतिक्रीड़ाओं और नलवरगढ़ की राजपुत्री तिलोत्तमा के साथ विवाह करने का वर्णन है। नायिका भेद, बारहमासा, षट्-ऋतु और संगीत आदि का विशद वर्णन दिया गया है। इस खंड की पुष्पिका यों है:—

इति श्री रघुवंशे चित्रकोटाधिपती वापारावल पट्टालंकार रावल करण तनुज पुंमाण चरित्रे दंपति संवाद पंच सहेली आपेटक अधिकार नलवरगढ़ गमन लाषागृहे तिलोत्तमा आगमण धींगा गवरी पुनर पीटेटन मृत संजीवन एकत मिलन सामान्य बनिसाष्टनायका भाव नवरस विलास त्रितियोपंड सपूर्णम् ॥ ३ ॥

चतुर्थखंड (पत्र २३०–४०८ तक)

इसमें खुमान का महम्मद गजनी के साथ घोर युद्ध का वर्णन है। युद्ध में खुमान को विजय श्री मिली। पश्चात् करण रावल ने खुमान को गद्दी पर बिठाया और स्वयं काशी वास करने लगा। करण ने ६१ वर्ष २० दिन राज्य किया। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री सूर्यवंशे वापारावल पट्टालंकार करण पुमांण चरित्रे संदेशा मोचन पुनः प्रीयतेडण चित्रगढ़ आगमन गजनीपत महमद पातसाह चित्रगढ़ आगमनं सामंत जुद्धकरणं सामंत नायका जुद्धकरणं पातशाह ग्रहं मोंचन कांनड़देक सामोड रति सुंदरी देवल दे इत्यादिक चरित्रे यं दौलत विजय विरचिते नवरस विलास ग्रंथस्य चतुर्थे पंड संपूर्ण ॥४॥

पंचमखंड पत्र (४०८--४५१ तक)

आलणसी चित्तौड़ का राजा हुआ। उसका गुजरात के राजा जयसिंह से युद्ध हुआ जिसमें आलणसी को विजय प्राप्त हुई। जयसिंह ने उससे अपनी पुत्री का विवाह कर जान बचायी। पश्चात् आगे के रावलों की वंशावली दी है, जिसमें समरसिंह का उल्लेख

है। उसने दिल्लीपति पृथ्वीराज को अपनी पुत्री विवाही। पृथ्वीराज ने संयोगिता (जयचंद की पुत्री) के साथ बलपूर्वक विवाह किया। महम्मदगोरी ने पृथ्वीराज पर आक्रमण किया और संयोगिता को माँगा। इसपर लड़ाई छिड़ गई। समरसिंह पृथ्वीराज की ओर से लड़ा और वीरतापूर्वक मारा गया। इसी प्रसंग में पृथ्वीराजरासा (पत्र ४२५) का भी उल्लेख है। यहाँ से चित्तौड़गढ़ के रावलों (गहलोतों) की पदवी राया हुई। भीम चित्तौड़ का रावल हुआ। इसका छोटा भाई भारत था। इनके पिता का नाम सूरजमल था। भारत दिल्ली दरबार में चला गया। भीम को पुत्री के अतिरिक्त और कोई संतान न थी। अतः उसने अपने जामाता को चित्तौड़ का उत्तराधिकारी बनाया। परंतु भीम की मृत्यु हो जाने के पश्चात् राजविद्रोह हुआ और भारत (भीम के छोटे भाई) को बुलाया गया। अंत में राहप (?) को राजगद्दी मिली और वह प्रथम राणा हुआ। इस खंड की पुष्पिका निम्नलिखित है:—

इति श्री चित्रकोटाधिपति सूर्यान्वये बापारावल पट्टालंकार करण षुमांण संताने राणा राहप अधिकारेयं दौलतविजय विरचिते आलणसी रावल समरसिंघ रावल अधिकारे पंचम खंड संपूर्णम् ॥ ५ ॥

षष्टम खंड (पत्र ४५१–५१६ तक)

इसमें रतनसेन पद्मिनी की कथा दी हुई है। अलाउद्दीन पद्मिनी के लिये चित्तौड़ पर चढ़ाई करता है जिसमें वह हार जाता है। पुष्पिका निम्नलिखित है:—

इति श्री चित्रकोटाधिपति बापा खुमाणात्वने राणा रतनसेन पद्मिनी गोराबादल संबंध किंचित पूर्वोक्तं किंचीत ग्रन्थाधिकारेण पं० दौलतविजय विरचितोयं (षष्टा) धिकारं संपूर्णम् ॥ ६ ॥

सप्तम खंड (पत्र ५१६--५६८ तक)

इस खंड में हम्मीर और अलाउद्दीन तथा राणा सांगा और बाबर की लड़ाइयों का वर्णन है। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री वी दलपतो विरचितोयं बापा षुमाण वंशा नृवने षंड सप्तमो समाप्तं।

अष्टम खंड अपूर्ण (पत्र ५६८--६१२ तक)

यह खंड अपूर्ण है। इसमें संख्या ५६८ से ६१२ तक के ही पन्ने हैं। जितना अंश उपलब्ध है उसमें विक्रमसिंह, वनवीरसिंह, उदयसिंह, प्रतापसिंह, अमरसिंह, करणेश जगतसिंह और राजसिंह तक के राणाओं कावर्णन है। राणा उदयसिंह और राणाप्रतापसिंह का वर्णन कुछ विस्तार से है।

रचयिता ने अपने नाम दलपति और कवि दल्ल भी दिए हैं। ये अपने को देवीसुत और कमलासुत लिखते हैं। तपगछ साधुओं की परंपरा में ये शांतिविजय के शिष्य (तनुज) थे।

तपगछ गिरूआ गणधार। सुमति साधू बसें सुषकार ॥ ९६ ॥
पंडित पदमविजें गुरूराय। पट्टोदय गिरि रवि कहवाय ॥ ९७ ॥
जयबुध शांति विजयनो शीश। जंपैं दौलत मनह जगीस ॥

—द्वितीय खंड, पत्र संख्या ११० ।

सोहे तपगछ कुल सिणगार। पंडित पद्मविजय सिरदार ॥
जय विजें पंडित जयकार। शिशु तस शांति विजय सुषकार ॥ ५५ ॥
तास तनुज उलट चित धरी। सेवें शक्त त्रिपुर सुंदरी ॥
किल कायम कवियण दोलती। गुण रचियो गुणवेधकवती ॥५६॥

—तृतीय खंड, पत्रसंख्या २३० ।

जय सीस शांति सुधिराज सुत करजोडी दलपति कहैं।

—चतुर्थ खंड, पत्र संख्या ४०७ ।

बड़े अक्षरों वाले पद से विदित होता है कि इन्होंने त्रिपुर सुंदरी की सेवा करके उलटा कार्य किया। इनकी परंपरा इस प्रकार है:—

सुमतिसाधु > पं० पद्मविजय > जय विजय > शांतिविजय > दौलतविजय। इस परंपरा से यह स्पष्ट नहीं होता कि यह वंशानुक्रम से है या गुरुशिष्य के अनुक्रम से। अन्य परिचय अज्ञात है। श्री अगरचंद नाहटा ने अपने लेख में जिसका ऊपर उल्लेख किया गया है, शांतिविजय का समय सं० १७३३–५६ वि० के लगभग निश्चित करके वही इनका भी समय माना है।

वीरगाथा काल के ग्रंथों में 'खुमानरासो' का स्थान सर्वप्रथम माना जाता है। परंतु यदि हम प्रस्तुत ग्रंथ को वही खुमानरासो मान लें तो यह भूल होगी। बाह्य और अभ्यंतर के परीक्षण से यह बहुत पीछे की रचना सिद्ध होती है। सबसे पहली बात तो यह है कि इसकी भाषा बहुत प्राचीन नहीं है। दूसरी बात यह है कि इसमें राणा राजसिंह तक का वर्णन मिलता है। तीसरी बात यह कि इसमें कुछ इधर के कवियों की भी रचनाएँ दी गई हैं, जिनमें आलम (अकबरकालीन) भी एक है। आलम का सुप्रसिद्ध कवित्त 'प्रेम रंग पगे जगमगे' उद्धृत है, पर इसके केवल तीन ही चरण दिए हैं जो बहुत ही विकृत रूप में इस प्रकार हैं :—

प्रेम जगजगें जगमगे जामनी के जोबन को जोति हुते ज्यूं उमहत हैं।
आलंम नमत हो नीक्याई नीके नयन की कमल पाँष पर भौंर फरत है।
चाहत हैं उड़वे कूं देषत मयंक मुखी जानत हैं रयण ताते ताहि में रहत हैं ॥९२॥

मूल कवित्त इस प्रकार है:—

प्रेम रंग पगे जगमगे जगे जामनि के, जोबन की जोति जगि जोर उमगत हैं।
मदन के माते मतवारे ऐसे घूमत हैं, झूमत हैं झुकि झुकि झंपि उघरत हैं।

आलम सो नवल निकाई इन नैनन की, पाँखुरी पदुम पै भंवर थिरकत हैं।
चाहत हैं उड़िबे को देखत मयंक मुख, जानत हैं रैनि तातें ताहि में रहत हैं ॥

चौथी बात यह है कि इसमें कहीं कहीं खड़ी बोली मिश्रित पद भी दिये हैं, परंतु उनमें खड़ी बोली के जो रूप प्रयुक्त हुए हैं वे बहुत प्राचीन काल के नहीं हैं। उदाहरण के लिये 'हरिवंश स्वामी' का एक सवैया दिया जाता है:—

मेरा चित्त बसैं उस मित की पास तौ मिरा का चिरा की जाणै विधाता।
तां बिछड़ां मोहि खान न भावै नो पाणी न फूल न पान सुहाता।
जागत जागत रैन पड़ी सही नींद न आवैं जी सेझ सुहाता।
'हरिवंस' के साभी कूँ ऐसे भजूं तैसैं सावण बूँद पपीहा लुभाता ॥ २३० ॥

सवैया छंद भी बहुत प्राचीन नहीं है।

पाँचवीं बात यह है कि इसमें कहीं भी 'खुमानरासो' अथवा 'खुमानरास' नाम नहीं आए हैं।

छठीं बात यह है कि इसके अनुसार खुमाण का युद्ध महम्मद गजनी के साथ हुआ था न कि खलीफा अलमामू के साथ।

१०० दलेल सिंह—इनके निम्नलिखित ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं :—

(१) मुक्ति रत्नाकर—यह विशालकाय ग्रंथ है, इसकी दो प्रतियाँ मिली हैं। रचनाकाल सं० १७५५ है। लिपिकाल दोनों प्रतियों का अज्ञात है। विषय—गोलोक का वर्णन और राधा कृष्ण एवं उनके अवतार लेने के हेतु का वर्णन करना है। साथ साथ बदरिकाश्रम सतश्रृंग, व्यंकटादि (जो गोलोक में माना गया है), गंगा चरित्र, तुलसी चरित्र, कैलाश और अवधपुरी (इसको भी गोलोक में माना है) का भी वर्णन है। इनमें १४ अध्याय हैं जिनके नाम रत्नप्रकाश रखे गए हैं। इसकी एक प्रति अपूर्ण है।

(२) राम रसार्णव—यह भी विशालकाय ग्रंथ है। इसकी तीन प्रतियाँ मिली हैं जिनमें से दो अपूर्ण हैं। रचनाकाल संवत् १७५० और लिपिकाल संवत् १८६५ एवं फसली सन् १२४६ हैं। विषय—प्रधानतः रामचरित्र का वर्णन है। इसके अतिरिक्त दशावतार, हरिश्चंद्र चरित्र, सहस्रनाम, मार्कण्डेय चरित्र, माया दर्शन, गाधि चरित्र आदि का भी वर्णन है। इसमें अध्यायों के बदले 'तरंग प्रकाश' नाम हैं जिनकी संख्या एक प्रति में ५३, दूसरी में ३० तथा तीसरी में ४६ हैं। दूसरी प्रति प्रथम प्रति से प्राचीन जान पड़ती है। प्रथम प्रति में ग्रंथ रचना का समाप्तिकाल भी दिया है जो सं० १७५३ है।

(३) शिवसागर—यह भी वृहद् ग्रंथ है। इसके तीन हस्तलेखों के विवरण लिए गए हैं। रचनाकाल संवत १७५७ है लिपिकाल तीनों के क्रमशः सं० १८१६, १८४८ और १८९६ हैं। विषय—ब्रह्मवैवर्त तथा अन्य पुराणों के आधार पर देवदेवी प्रादुर्भाव, सृष्टि वर्णन, नारद, प्रकृति, गंगा, तुलसी, सावित्री, गणपति तथा गोलोक और शिव एवं श्री कृष्ण चरित्र का वर्णन किया गया है। ग्रंथ में अध्याय का नाम 'तीर्थ संगम' दिया है। समस्त 'तीर्थ संगमों' की संख्या ३३ है। इसके प्रस्तुत हस्तलेखों की पुष्पिकाओं में एक-एक संवत् और दिया है।प्रथम दो प्रतियों का संवत् तो मिलता है जो सं० १७७१ है, परंतु तीसरी प्रति का इनसे भिन्न संवत् १७६३ है।

महि[1] मुनि[7] सागर[7] सिंधु[1] सुत भौ संबत् जब ष्यात।
पुस्तक लिखि पूरन किए सिव सागर सिवदान॥

(प्रथम दो प्रति)

स्मत दीन्हेउ राम[3] रस[6] दिन[7] ससि[1] मास बैसाष।
उमडेउ सागर शंभु कै पूरन जन अभिलाष॥

(तीसरी प्रति)

इससे पता चलता है कि मूल प्रति की नकल एक बार सं० १७६३ में हुई होगी और फिर संवत् १७७१ में। पहली दूसरी प्रतियाँ १७७१ की अनुलिपि वाली शाखा में हैं, तीसरी प्रति १७६३ वाली शाखा में। इस ग्रंथ का उल्लेख खोज विवरण (२०-३२) पर हो चुका है।

काव्य की दृष्टि से प्रथम दो ग्रंथ महत्वपूर्ण हैं। शिव सागर विशेषतः पौराणिक ग्रंथ है।

तीनों ग्रंथों की शैली रामचरित मानस की सी है। इनमें भी दोहे और चौपाइयाँ हैं। साधारणतः सात-सात चौपाइयों के पश्चात् एक दोहा है। भाषा अवधी है जिसमें ब्रजी, मगही और भोजपुरी के भी शब्द मिश्रित हैं।

रचयिता, राजा दलेल सिंह करनपुरा के राजा हिम्मत सिंह के पौत्र और राजा रामसिह के पुत्र थे। खोज विवरण (२०-३२) पर इन्हें चौहान क्षत्रिय कहा गया है।

निवास स्थान का नाम 'रागरसार्णव' में रामगढ़ और 'शिव सागर' में शिवगढ़ दिया है। इसके अतिरिक्त ग्रंथों के द्वारा इनके विषय में और कुछ ज्ञात नहीं होता; परंतु डुमराँव निवासी पं० अक्षयवट मिश्र के एक पत्र द्वारा इनके संबंध में कुछ ज्ञातव्य बातें प्रकट हुई हैं। मिश्र जी ने रचयिता के उक्त तीन ग्रंथ तथा चतुरदास कृत भागवत एकादशस्कंध, इन चारों को अपनी मृत्यु से पहले सभा को दिया था। हस्तलिखित ग्रंथों

में प्रत्येक ग्रंथ का संक्षिप्त परिचय दिया है। प्रस्तुत रचयिता के विषय में उन्होंने जो कुछ लिखा है वह यों है :—

'करणपुरा के राजा हेमंतसिंह उनके पुत्र रामसिंह उनके पुत्र दलेल सिंह थे जिनकी यह रचना है। करनपुरा को छोड़कर ये लोग रामगढ़ में रहने लगे। 'राम रसार्णव' में रामगढ़ और 'शिवसागर' में शिवगढ़ लिखा है। ये लोग या तो दोनों के मालिक थे अथवा एक ही किले के दो नाम थे। अब भी करनपुरा (मगह) में है। रामगढ़ में क्षत्रिय लोग निवास करते हैं। राजा दलेल सिंह कवि और अच्छे ग्रंथकार थे।'

मिश्रजी ने यह भी लिखा है कि रचयिता के स्वनिर्मित और भी ग्रंथ हैं।

प्रस्तुत खोज विवरण में आए पद्मन (संख्या १३१) के आश्रयदाता दलेलसिंह भी प्रस्तुत रचयिता ही हैं।

१०१ दशरथ—इनके दो ग्रंथ 'नवीन' और 'वृत्त विचार (पिंगल)' मिले हैं। पहले ग्रंथ की तीन प्रतियाँ मिली हैं। इसका विषय नायिकाभेद है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल दो प्रतियों में संवत् १७९२ है और तीसरी में संवत् १८६९। प्रथम दो प्रतियों में पुष्पिका के बाद कविवंश का उल्लेख किया है और फिर संवत् का वर्णन है। यह संवत् रचनाकाल का न होकर लिपिकाल का होना सिद्ध होता है, क्योंकि कवि वंश वर्णन में जो दोहे दिए गए हैं उनमें दोहों की संख्याएँ ग्रंथ में आए दोहों के क्रम से दी हुई हैं। संवत् के दोहे में संख्या का क्रम उनसे संबद्ध न होकर आगे लिपिकर्त्ता के नाम वाले दोहे से संबद्ध है। ये केवल दो दोहे हैं जिनमें क्रम संख्याएँ १–२ दी हुई हैं तथा जिनमें संवत् और लिपिकर्त्ता का वर्णन है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि यह रचनाकाल न होकर लिपिकाल है। इसके लिपिकर्त्ता हरजू मिश्र थे जो जौनपुर निवासी और बिहारी सतसई के दोहों के नवीनक्रम से संपादन करनेवाले थे। देखिए प्रस्तुत विवरण में 'हरजू मिश्र'। रचयिता ने अपना जो वंश वर्णन दिया है उसके अनुसार वे असनी के महापात्र नरहरि के बंधु सदबंधु के पुत्र चतुर्भुज के वंशज थेः—

महापात्र नरहरि भयो अनुज तासु सदबंधु।
तिन तनभो चत्रभुज दियो जिहि दिलीस रसबंधु ॥ ४३८ ॥
तिन कुल पंचादरति कवि भौ 'दशरथ' इहिनाम।
काढ़्यो निजबुधि सिंधुमथि एक नवीन ललाम ॥ ४३९ ॥

विषय की दृष्टि से यह ग्रंथ महत्वपूर्ण है।

दूसरे ग्रंथ 'वृत्त विचार (पिंगल)' में छंदशास्त्र का संक्षेप में प्रतिपादन है। इसके साथ-साथ राम का यश भी वर्णित है। यह प्रत्येक अध्याय की पुष्पिका में उल्लिखित 'इति रघुवर कीर्तए...' से स्पष्ट है। इसमें मात्रावृत्त, वर्णवृत्त और उभय वृत्तों का वर्णन है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १७९३ है।

प्रस्तुत दोनों ग्रंथ पहले भी मिल चुके हैं, देखिए खोज विवरण (९-५७, ५८) (६-१५३)। इनके अनुसार ये ग्रंथ अलग-अलग रचयिताओं के माने गए हैं तथा 'वृत्त विचार' और 'पिंगल' को एक दूसरे से भिन्न माना गया है। वास्तव में ये एक ही रचयिता के जान पड़ते हैं। इसका एक कारण तो यह है कि इस बार ये दो ग्रंथ (नवीन और वृत्तविचार) एक ही हस्तलेख में लिपिबद्ध मिले हैं जिससे प्रकट होता है कि एक ही रचयिता की कृति मानी जाने के कारण ऐसा किया गया होगा। दूसरा कारण यह है कि दोनों ग्रंथ रीति विषयक हैं। एक नाम के दो रचयिताओं द्वारा की गई एक ही प्रकार की रचना संभवतः देखने में नहीं आती। अतः दोनों ग्रंथों को एक ही रचयिता का मानने में कोई अड़चन नहीं पड़ती। 'वृत्त विचार' और 'पिंगल' भी एक ही ग्रंथ हैं। इस बार मिली 'वृत्त विचार' ग्रंथ की प्रति के प्रत्येक पत्र के कोने में 'पीं' अक्षर लिखा हुआ है। इससे स्पष्ट होता है कि 'पीं' से 'पिंगल' का ही अर्थ है। अतः ये दोनों नाम एक ही ग्रंथ के हैं। इन्हें अलग-अलग मानने में जो भूल हुई है उसका कारण खोज विवरण (१९०६-८ सं० १५३) में आए पिंगल ग्रंथ का उद्धरण न दिया जाना है।

१०२ दामोदर दास 'हित'—इनका उल्लेख पिछले दो खोज विवरणों में हो चुका है, देखिए खोज विवरण (१२-४६) (२९-७४)। इनके अनुसार ये राधावल्लभी संप्रदाय के अनुयायी थे। श्री हित हरिवंश जी के तृतीय पुत्र श्री गोपीनाथ जी के शिष्य श्री लाल स्वामी इनके गुरु थे। इनका समय सं० १६८७ है। प्रस्तुत खोज में इनकी तीन रचनाएँ और मिली हैं जिनके नाम नीचे दिए जाते हैं:—

१—दामोदर स्वामी के पद—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय होली के अवसर पर श्री कृष्ण की क्रीड़ाओं का वर्णन।

२—राधा कृष्ण वर्णन—रचनाकाल लिपिकाल अविदित। विषय—राधा कृष्ण के प्रेम का वर्णन।

३—हरिनाम महिमा—रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल सं० १८३४। विषय—हरिनाम की महिमा का वर्णन।

१०३ दिनेश पाठक—इन्होंने 'रसिक संजीवनी' की रचना की जिसकी दो प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। एक प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं। दूसरी में रचनाकाल संवत् १७२४ और लिपिकाल सं० १७६४ दिए हैं। इस प्रति में रचयिता का परिचय भी दिया है जिसके अनुसार ये मगपुर पट्टन के निवासी दामोदर ब्राह्मण के पुत्र थे। ये सोन गंगा के बीच में बसे भोजपुर नामक नगर के राजा अमर साहि के अनुज प्रबल सिंह के आश्रय में रहते थे। आश्रयदाता का वंशवृक्ष निम्नलिखित है:—

राम साहि
|
संग्रामसाहि
|
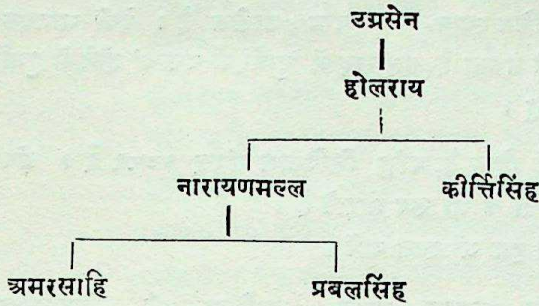
इस दृष्टि से ग्रंथ का ऐतिहासिक महत्व भी है। इसका विषय रसों का प्रतिपादन और नायिका भेद का वर्णन है। परंतु श्रृंगार के अतिरिक्त और रसों का वर्णन केवल नाम के लिये ही है। इसमें ग्रंथकार ने राधा कृष्ण के प्रति भक्ति भावना भी व्यक्त की है, यथाः—

> श्री राधा राधा रमन के किए यथा गुनगान।
> भई रसिक संजीवनी हरि भगतन की प्रान ॥

रचयिता का पता प्रथम बार ही चला है।

१०४ दिलेराम—दिलेराम 'अलंकार दीपक' ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ का विषय, जैसा उसके नाम से प्रकट है, अलंकारों का वर्णन करना है। इसमें यद्यपि लक्षण और उदाहरण पद्य में हैं, तथापि इन्हें अधिक स्पष्ट करने के लिये ब्रजभाषा गद्य का भी प्रयोग किया गया है। रचनाकाल सं० १८४५ की श्रीकृष्ण जन्माष्टमी है:—

> वाण⁵ वेद⁴ धृति¹⁸ शक भए श्री विक्रम भूपाल।
> अलंकार दीपक रच्यो जनमाठे नंदलाल ॥

लिपिकाल अज्ञात है। ग्रंथ महत्वपूर्ण है।

रचयिता ने ग्रंथांत में अपना परिचय दिया है जिसके अनुसार ये ब्रज के तरसोपरि ग्राम के मधुसूदन पांडे के पौत्र और घनश्याम पांडे के पुत्र तथा शिव प्रसाद के शिष्य थे। घनश्याम पांडे के पाँच भाई थे। एक भाई का नाम जयचंद था जो विशेष प्रसिद्ध हुए। अन्य भाइयों का नाम नहीं दिया है।

गुरु के नाम का उल्लेख यों है :—

> शिवरूप (रूपी) शिव के वरन शिवप्रसाद पदध्यायी (इ)।
> अलंकार दीपक कर्‌यो भाषा मैं सुखपाई (इ) ॥ २ ॥

१०५ दुखहरण—इनके लिए देखिए विवरण अंश संख्या—३ जहाँ इनका उल्लेख विस्तृत रूप से किया गया है।

१०६ दुर्गादेवी (अज्ञात)—प्रस्तुत खोज में इनके नाम से एक 'साठिका' ग्रंथ मिला है। विवरणपत्र पर उद्धृत अंशों में कहीं भी दुर्गादेवी का नाम नहीं मिलता और न

अन्वेषक ने यही लिखा है कि किस स्थान पर इनका उल्लेख है। देवी भागवत में देवी द्वारा संवत्सरों का वर्णन है। हो सकता है, अनुवाद में 'दुर्गादेवी उवाच' होने से दुर्गादेवी को रचयिता मान लिया हो। अस्तु।

ग्रंथ में रचनाकाल नहीं दिया है, परंतु लिपिकाल संवत् १७५९ है। ग्रंथ गद्य में लिखा गया है जिसमें खड़ी बोली के भी रूप मिलते हैं।

अनुवादक के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं।

१०७ देवकी नंदन साहब—प्रस्तुत रचयिता की निम्नलिखित चार रचनाएँ मिली हैः—

१—चतुर मासा तथा फुटकल पद—रचनाकाल अज्ञात, लिपिकाल संवत् १८८६। इसमें चौमासा, श्री कृष्ण चरित्र तथा अध्यात्म आदि विषयों का वर्णन है। इसका नाम नहीं दिया है। इसमें चौमासा और फुटकल पद संगृहीत हैं।

२—शब्द—रचनाकाल अप्राप्त, लिपिकाल सं० १८८६। विषय—निर्गुण तथा सगुण भक्ति का वर्णन।

३—शब्द—रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल सं० १८८६। विषय—इसमें कृष्णलीला तथा अध्यात्म संबंधी पदों का संग्रह है।

४—कुंडलियाँ—रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १८८६। विषय—संसार से विरक्तिपूर्वक राम नाम का स्मरण।

ये रचनाएँ एक ही हस्तलेख में हैं। विषय की दृष्टि से ये प्रौढ़ रचनाएँ हैं। 'शब्द' और 'कुंडलियाँ' साहित्यिक दृष्टि से भी सुंदर हैं। इनसे रचयिता की कवित्वशक्ति का परिचय मिलता है। रचनाओं में झूलना, हिंडोल, चंचरीक, कबित्त, अरिल्ल तथा कुंडलिया आदि छंद प्रयुक्त हुए हैं। रचयिता का नाम प्रत्येक पद तथा कुंडलिया में दिया है। ग्रंथों में कहीं स्पष्ट उल्लेख नहीं। ग्रंथस्वामी श्री राजाराम जी का, जो कि चिटबड़ागाँव (बलिया जिला) में सत्यनामी पंथ के एक मठ के महंत हैं, कहना है कि ये उनके (महंत जी के) परबाबा थे। श्री गुलाल साहब के शिष्य श्री हरलाल साहब के वंश में उत्पन्न श्री तेजधारी साहब इनके पिता थे। ये जाति के कौशिक क्षत्रिय थे।

'चतुरमासा' के पश्चात् भिन्न स्याही में कुछ श्लोक और दोहे लिखे हैं जिनमें रचयिता की मृत्यु तिथि सं० १९१३ दी हुई है :—

गुण[3] ससि[1] ग्रह[9] मेरु[1] सम्वते सुप्रमाणं दिनकर दिन मध्ये श्रावने शुक्र नौम्यां।
सुनषत अनुराधे लग्नतूले सुष्यातः तनु तजि ब्रह्मलीनं देवकी नंदनोयं॥ १॥
राम[3] चन्द्र[1] ग्रह[9] चन्द्रे[1] नवम्यां श्रावणे सिते देवकी नंदनोदेहा रवौ ब्रह्मत्वमासवान्॥१॥

गत संवत् उनतीस सत अधि त्रैयोदस जान।
श्रावन सीत नौमी तिथी रवीवासर परमान ॥ १ ॥

बुध्यमान गुननिधि चतुर देवकी नंदन उदार।
तजि शरीर स्वतत्र प्रभु भार मिले करतार ॥ २ ॥

वोणइस सत तेरह अधीक शंवतगत अस्थूल।
श्रावन शुक्ल सुखंड तिथि रविदिन मंगलमूल ॥ १ ॥
सीयाराम पद ध्यान करि गुरुपद कमल सनेह।

देवकी नंदन सुगवन करि राम धाम तजि देह ॥ २ ॥
संवत जानहु धीर गुन[3] शशि[1] ग्रह[9] गन द्वीज [1]।
देवकी तजेउ सरीर रवि नउमी श्रावन सुकल ॥

मृत्युकाल से प्रकट होता है कि प्रस्तुत हस्तलेख रचयिता के जीवन काल में ही लिखा गया था। इसमें भिन्न स्याही से मृत्युकाल के लिखे जाने का कारण उचित है, क्योंकि वह मृत्यु के पश्चात् लिखा गया है।

इन संवतों से स्पष्ट है कि रचयिता सं० १८८६ से पूर्व वर्तमान थे। ये चिटबड़ागाँव में सत्यनामी (ऐसा मठ के वर्तमान महंत से ज्ञात हुआ) मठ के महंत थे।

इनकी गुरु परंपरा बावरी साहिबा, बीरू साहब, यारी साहब, बुल्ला साहब और गुलाल साहब से प्रारंभ होती है (देखिए प्रस्तुत खोज में भीखा साहब का विवरण)।

१०८ देवदत्त—इनके रचित 'इंद्रजाल' में नाना प्रकार के फल देनेवाले जंत्र-मंत्रों का संग्रह है। इसके रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता का नाम इसमें कई बार आया है। इसके अतिरिक्त और कोई परिचय नहीं मिलता।

१०९ देवलनाथ—प्रस्तुत खोज में इनकी कुछ वाणियाँ विवृत हुई हैं। इनके लिये देखिए 'सिद्धों की वाणी' और गोरखनाथ संख्या—५९ तथा विवरण अंश संख्या १। इन्हें सिद्ध कहा गया है। विशेष वृत्त अज्ञात है।

११० देवाराम बाबा—इनके भक्ति संबंधी 'कुछ पद' मिले हैं। इनके रचनाकाल और लिपिकाल के विषय में कोई पता नहीं चलता। अधिकांश पदों की रचना भोजपुरी भाषा में की गई है।

रचयिता के विषय में इन पदों द्वारा कुछ विदित नहीं होता। ग्रंथ स्वामी पं० साधुशरण तिवारी से जो कुछ ज्ञात हुआ वह यों है:—

देवाराम बाबा प्रसिद्ध महात्मा हो गए हैं। ये बिहार प्रांत के आरा जिला में डाकखाना उमरावगंज के अंतर्गत कारजा ग्राम के निवासी थे। सन् ५७ के गदर में मारे गए सुप्रसिद्ध कुँवर सिंह के समय में वर्तमान थे। कुँवरसिंह ने इनकी मृत्यु के पश्चात् इनके

कुटुम्ब के नाम ५० बीघा जमीन निःशुल्क दी थी जो अभी तक चली आती है। बाबा जी के विषय में बहुत सी अलौकिक बातें कही जाती हैं।

१११ देवीदास व्यास--इनकी 'नारद नीति' महाभारत के सभापर्व के एक अध्याय का हिंदी रूपांतर है। राजसूय यज्ञ के अवसर पर नारद ऋषि ने महाराज युधिष्ठिर को राजा के धर्म, कर्म और नीति विषय पर जो उपदेश दिया था उसीका इसमें वर्णन है। रचनाकाल संभवतः संवत् १७२० है:—

संमत सतरह सै समै वीसैं करण विवेक।
रसिकराज कारण रची टीका अर्थ अनेक॥

इसमें सतरह सै तो स्पष्ट है। उत्तर पद 'वीसै करण विवेक' का 'वीसै' शब्द बीस संख्या का सूचक जान पड़ता है जिससे संवत् १७२० निश्चित होता है।

लिपिकाल संवत् १८६८ है। ग्रंथ गद्य में लिखा गया है जिसकी भाषा अधिकांश राजस्थानी है।

इसकी रचना महाराज करणेश के पुत्र राजकुमार अनूपसिंह के निमित्त हुई है। यह राजवंश बीकानेर का जान पड़ता है, देखिए खोज विवरण (२-७६)।

रचयिता के विषय में केवल इतना ही ज्ञात होता है कि ये राजकुमार अनूपसिंह के आश्रित थे।

११२ देवीदास—इस रचयिता की 'अंगदवीर' नामक रचना मिली है। इसमें सत्तर रेखते हैं जिनमें अरबी-फारसी शब्दों का बाहुल्य है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। पुस्तक में रावण की सभा में अंगद की वीरता का वर्णन है।

रचयिता का नाम ग्रंथांत में आए 'ए देवीदास हरफ करो आवत मम तुम' के आधार पर देवीदास मान लिया गया है। इसके अतिरिक्त और कुछ ज्ञात नहीं है।

११३ द्विज प्रयोग (प्रयाग)—इन्होंने लावनी में 'नागलीला' की रचना की जिसमें श्री कृष्ण द्वारा कालियनाग के दमन का वर्णन है। रचना खड़ी बोली में है। अरबी फारसी के भी शब्द प्रयुक्त हैं। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख न होने से यह नहीं कहा जा सकता कि खड़ी बोली का यह रूप किस काल का है। इसमें संदेह नहीं कि ख्याल और टप्पाबाजों की ही तरह लावनीबाज भी खड़ी बोली के प्रसार के कारण थे। इनका समय १९वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से आरंभ होता है। अतः प्रस्तुत रचना भी इसी काल की हो सकती है।

रचयिता का नाम ग्रंथांत में आए 'द्विज प्रयोग प्रभु को यह लीला छंदलावनी गान करै मधुरमूर्ति नटबर गिरधारी' से 'द्विज प्रयोग' (प्रयाग द्विज) विदित होता है। और वृत्त अप्राप्त है।

११४ धरनीदास—इनके लिये देखिए विवरण अंश में संख्या १२ जहाँ इनका उल्लेख विस्तृत रूप में किया गया है।

११५ धुँधलीमल—इन्हें सिद्धों में गिना गया है। इनकी वाणियों का विवरण 'सिद्धों की वाणी' के विवरण के साथ लिया गया है। इनके लिये देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या—५९ और विवरण अंश में संख्या—१। इनका वृत्त और समय अज्ञात है।

११६ ध्यानदास—इस रचयिता के तीन ग्रंथ मिले हैं जिनके नाम विषयादि के अनुसार नीचे दिए जाते हैं:—

१—गुण माया संवाद जोग ग्रंथ—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १८५६। विषय—गुण और माया से रहित होकर भगवद्भक्ति करने का उपदेश।

२—गुणादि बोध जोग ग्रंथ—रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल संवत् १८५६। विषय—शून्य का स्वरूप वर्णन।

३—हरिचंद सत—रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल संवत् १८५६। विषय—राजा हरिचंद की कथा।

ये रचनाएँ एक ही हस्तलेख में हैं। हस्तलेख के लिये कृपया देखिए प्रस्तुत विवरण में 'सेवादास'। हस्तलेख सभा में ही है।

तीसरा ग्रंथ खोजविवरण (१-१०७) में आ चुका है। उसमें इन्हें साधुशरण का गुरु कहा गया है। अन्य वृत्त अब भी अप्राप्त है। इनके अन्य दो ग्रंथों—दानलीला और मानलीला का उल्लेख खोज विवरण (६-१६० ए, बी) में हुआ है।

११७ ध्रुवदास—ये सुप्रसिद्ध भक्त कवि श्री आचार्य हित हरिवंश जी के शिष्य एवं उन्हीं के अनुयायी थे। इनके बहुत से ग्रंथ पिछले खोज विवरणों में उल्लिखित हैं, देखिए खोज विवरण (००-८, १३, १८, १९, २०, २१) (२-२६४, २४४) (६-१५९) (३८-४२)। ये संवत् १६८६ के लगभग वर्तमान थे। इस बार इनकी निम्नलिखित रचनाएँ और प्राप्त हुई हैं:—

१—भजनाष्टक—इसकी दो प्रतियाँ मिली हैं। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८३५ दिया है। विषय है श्री राधाकृष्ण की भक्ति का उपदेश। इसमें केवल दो दोहे हैं।

२—शृंगार मनी—रचनाकाल, लिपिकाल अज्ञात। एक सौ दो दोहों में राधा के अंगों का शृंगारपूर्ण वर्णन है।

३—रसमंजरी—रचनाकाल लिपिकाल अप्राप्त। विषय—राधा कृष्ण की क्रीड़ाओं का वर्णन।

४—प्रिया जू की नामावली (नामावली या प्रिया नामावली)—इसकी तीन प्रतियाँ मिली हैं। विषय—श्री राधा जी के नामों का वर्णन।

रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल केवल एक प्रति में दिया है-- संवत् १८३५।

५—दानविनोद—रचनाकाल तथा लिपिकाल अप्राप्त। विषय है दानलीला।

६--आनंदाष्टक—दो प्रतियाँ मिली हैं। दूसरी प्रति में भजनाष्टक भी संमिलित है। रचनाकाल तथा लिपिकाल नहीं दिए है। आठ दोहों में राधाकृष्ण का गुणगान है।

११८ नंददास—अष्टछाप के प्रसिद्ध कवियों में से एक और गुसाईं विट्ठलनाथ जी के शिष्य जो संवत् १६२४ के लगभग वर्तमान थे। इनकी बहुत सी रचनाएँ पिछले खोज विवरणों में आ चुकी हैं, देखिये खोज विवरण (१-११, ६९) (२-५८, ७०,२०९) (३-१५३) (६-२००) (९-२०८) (२३-२९४) (१७-११९) (पं० २२-७२)।

प्रस्तुत शोध में इनकी दो रचनाएँ, १--नायक नायिका भेद और २—नाम चिंतामणि माला और मिली हैं। पहले का विषय उसके नाम से ही प्रकट है। संस्कृत की श्री भानुदत्त कृत रसमंजरी के आधार पर इसकी रचना हुई है। पंचाध्यायी की तरह इसकी भी रचना एक मित्र के कहने से हुई:—

'एक मीत हमको अस गुन्यो। मैं नायका भेद नहिं सुन्यो।'

× × × ×

'रसमंजरी अनुसार करि नंद सुमति अनुसार।'

—नायिकाभेद

नाम का ऐसा ही उल्लेख नाममाला में भी है:—

'तिनहिं नंद यथा सुमति रचत नाम की दाम'

इसके रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। इसी ग्रंथ का उल्लेख पिछले खोज विवरण (६-२००) पर हुआ है; परंतु उसमें उद्धरण नहीं दिए गए हैं। इस बार इसके उद्धरण प्राप्त हुए हैं। इसमें श्री कृष्ण के नामों का वर्णन किया गया है। रचनाकाल और लिपिकाल इसमें भी नहीं दिए गए हैं।

११९ नरसी मेहता—इनकी 'हारसमय हारमाला' नामक रचना का विवरण लिया गया है जिसमें एक सौ सोलह पदों का संकलन है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९४४ है। विषय भक्ति है। इसकी भाषा पछाहीं हिंदी है जिसमें गुजराती का अधिक मिश्रण है।

नरसी मेहता का नाम भक्तों में प्रसिद्ध है। प्रस्तुत रचना द्वारा इनका कोई वृत्त ज्ञात नहीं होता।

१२० नरहरि (महापात्र)—इनके ग्रंथ 'रुक्मिणी मंगल' का उल्लेख खोज विवरण (३-११) पर हो चुका है। ये संवत् १६०७ के लगभग वर्तमान थे। ये जाति

के भाट तथा बादशाह अकबर के आश्रित थे। इन्हीं की प्रार्थना पर बादशाह ने गोबध बंद कर दिया था। ये असनी निवासी थे।

प्रस्तुत त्रैवार्षिक खोज में इनके कवित्त 'नरहरि के कवित्त या कवित्त नरहरि महापात्र के' नाम से विवृत हुए हैं। इसमें इनके केवल कवित्त ही नहीं हैं दोहा, छप्पै और कुंडलियाँ भी हैं। इनकी समस्त संख्या १२४ है। विषय विविध हैं जैसे, सोने, लोहे को वादु (झगड़ा), तेली तमोली को वादु आदि। इनके अतिरिक्त कुछ प्रशस्तियाँ हैं और फिर भक्ति विषयक रचनाएँ। प्रशस्तियों में शेरशाह और वीरसिंह नृपति का उल्लेख पाया जाता है।

रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। दोनों प्रतियों का पाठ दोष पूर्ण है।

१२१ नवनिधि दास (बाबा)—इनका विस्तृत उल्लेख विवरण अंश में संख्या १३ पर हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

१२२ नवलदास साहि—ये 'वद्र्धमान पुराण' नामक जैन ग्रंथ के रचयिता हैं। इनका कोई परिचय नहीं मिलता। ग्रंथ के रचनाकाल के अनुसार ये संवत् १८२५ में वर्त्तमान थे।

ग्रंथ में भगवान् महावीर का पवित्र चरित्र वर्णित है। रचनाकाल सं० १८२५ तथा लिपिकाल सं० १९५१ है।

रचना दोहा, चौपाई और छप्पै छंदों में की गई है। दोहा और चौपाई प्रधान हैं। रचयिता खोज में नवोपलब्ध हैं।

१२३ नवलराय—ये संभवतः 'जलंधर युद्ध' के प्रणेता हैं। ग्रंथांत में 'नवलराय' का प्रयोग है :—

'क्रीया चर्चन जान कै भगत करौ चितलाय।
सो या लीला सुनै और गावै तारपा नवल राज॥'

नवलराज में 'ज' के बदले 'य' होना चाहिए जिससे पूर्वपद के 'चितलाय' के साथ ठीक तुक बैठे।

इनके विषय में और कोई विवरण नहीं मिलता।

ग्रंथ में 'जलंधर और वृंदा' पौराणिक आख्यान का वर्णन है। रचनाकाल का पता नहीं। लिपिकाल सं० १८३५ वि० है।

१२४ नागड़ा—इस रचयिता की नीति विषयक एक छोटी रचना 'नागड़ादास दूहा' प्राप्त हुई है जिसमें बीस सोरठे हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। भाषा राजस्थानी है।

रचयिता का भी कोई वृत्त नहीं मिलता। सोरठों की भाषा और नाम से ये राजस्थानी जान पड़ते हैं।

१२५ नागा अरजन--खोज में इनकी कुछ 'बाणियाँ' विवृत हुई हैं। इनके लिये देखिये 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १। इनका समय तथा विशेष परिचय अप्राप्त है। इन्हें सिद्धों में गिना जाता है।

१२६ नाथ कवि—इस कवि की 'पावस पचीसी' नाम की छोटी किंतु सरस रचना मिली है। इसमें २५ कवित्त हैं जिसमें वर्षा ऋतु का वर्णन राजा, मंत्री, पहलवान, नट, बाजीगर, पंच, पंडित, जोगी, चोर, डाकू, वधिक, कसाई, गज, सिंह, पथिक, गवैया, दूलह, सूम, काम, इंद्र, फिरंगी, कामी, वीर, शिक्के रूपक द्वारा किया गया है। रचनाकाल संवत् १९३७ है।

द्वीपन[७] में दग[३] शंभु के निधि[९] धरती[१] को जान।
जन्ममास ब्रजनाथ को मंगल कर कल्यान ॥

लिपिकाल नहीं दिया है। रचना के हस्तलेख के मुखपत्र पर किसी लोकनाथ चौबे का पेंसिल से शुभाशिष लिखा यह पत्र है जिसमें इन्होंने अपना पता अंग्रेजी में दिया है:—

'कृपाकर मेरे श्रम को विचार कर शीघ्रतर इसे छापिये। और एक कापी मेरे पास भेजिए। भारत मित्र एक पेज में पूरा होगा और संपूर्ण एकीवार छापने में अच्छा होगा नहीं तो इसका मजा जाता रहेगा।'

'लोकनाथ चौबे ऐट जम्मू सीटी
केअर आफ पं० गनेश प्रसाद चौबे
चीफ जज आफ जम्मू'

इससे पता चलता है कि कश्मीर जम्मू से कदाचित् यह पुस्तिका भारत मित्र में छापने के लिये भेजी जानेवाली थी अथवा भेजी गई थी और पत्र सहित लौट आई। यह स्पष्ट नहीं होता कि लोकनाथ चौबे का इस रचना से क्या संबंध था परंतु पत्र से अनुमान किया जा सकता है कि प्रस्तुत रचना उन्हीं की है। जो कुछ भी हो रचयिता के विषय में और कुछ पता नहीं चलता। खोज विवरण (९-२०९) (२६-३२५) में क्रमशः 'भागवत पचीसी' और 'रंगभूमि' के रचयिता नाथ कवि उल्लिखित हैं।

१२७ नानकदास—इनके 'प्रबोध चंद्रोदय' नाटक का उल्लेख पंजाब खोज विवरण में संख्या ७१ पर है, परंतु उसमें उद्धरण न होने से प्रस्तुत खोज विवरण में इसको फिर सम्मिलित कर लिया गया है। उक्त खोज विवरण के अनुसार इसका रचनाकाल संवत् १७४६ है। प्रस्तुत प्रति में लिपिकाल नहीं दिया है, परंतु रचनाकाल का उल्लेख यों है :—

संवत् सत अखादस अवर षष्ट चालीस।
मंघर शुक्ल पंचमी पोथी पूर्ण करीस ॥ १८६ ॥

इसमें रेखांकित 'अखादस' अष्टादस जान पड़ता है जिससे संवत् १८४६ निकलता है। अतः दोनों में एक शताब्दी का अंतर पड़ता है।

प्रस्तुत प्रति से यह भी प्रकट होता है कि इस ग्रंथ को किसी वलिराम ने पूर्ण किया :—

'यह पोथी पूरण करी वलीराम हरिसंत।
ताको भाषा में रच्यो नानकदास विनवंत ॥'

यदि ये बलिराम 'अद्वैत प्रकाश' या 'चार वेद षट् शास्त्र मत' के रचयिता हों तो उनका समय सं० १८८५ है, क्योंकि 'अद्वैत प्रकाश' की रचना सं० १८८५ में हुई, देखिए खोज विवरण (१७–१७)। ग्रंथ की भाषा पश्चिमी (राजस्थानी और पंजाबी) हिंदी है। यह संस्कृत के 'प्रबोध चंद्रोदय नाटक' का अनुवाद है। रचयिता का और कोई परिचय नहीं मिलता।

१२८ नायक—इनके निम्नलिखित दो ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं :—

१–दत्तात्रय सत्संग उपदेश सागर—रचनाकाल अज्ञात, लिपिकाल संवत् १९२२। विषय-दत्तात्रेय और उनके चौबीस गुरुओं की कथा का वर्णन।

२–सर्व सिद्धांत श्री राममोक्ष परिचय—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १९२२। विषय, ब्रह्मज्ञान तथा श्री रामचंद्र के तीन कल्पों के अवतारों का वर्णन। इसमें १७ तरंग हैं। यह दोहे चौपाइयों में है जिसकी विस्तृत टीका की गई है। टीका का नाम 'परमानंद लहरी' है। भाषा व्रजी है जिसमें खड़ी बोली का भी मिश्रण है।

रचयिता ने ग्रंथांत में नामोल्लेख के अतिरिक्त और कोई विवरण नहीं दिया।

१२९ नित्यानंद 'नंद' प्रस्तुत खोज में इस कवि के बीस 'कवित्त सुकवि नित्यानंद के' शीर्षक से प्राप्त हुए हैं। ये कब रचे गए पता नहीं। लिपिकाल भी अज्ञात है। इनमें राधा कृष्ण की वीरता का वर्णन किया गया है। हस्तलेख खर्रे के रूप में है।

रचयिता का कोई विवरण नहीं मिलता। दूसरे कवित्त में इन्होंने सुकवि निधान के पदों की वंदना की है, अतः ये उनके शिष्य जान पड़ते हैं। 'मिश्रबंधु विनोद' में दो निधान (सं० ३२२ और ८३१) तथा दो नित्यानंद (सं० ५७९ और ११५५) उल्लिखित हैं जिनमें एक निधान और एक नित्यानंद ब्राह्मण हैं।

ब्राह्मण नित्यानंद किसी श्यामशरणदास (भवभोगी) के शिष्य संवत् १८०७ के लगभग वर्त्तमान थे, देखिये खोज विवरण (५–४१)। दूसरे नित्यानंद जो संवत् १७५४ के पूर्व वर्तमान थे (देखिए मिश्रबंधु विनोद) ब्राह्मण निधान के शिष्य नहीं हो सकते, क्योंकि ब्राह्मण निधान का समय संवत् १८०८ के लगभग है। अतः हो सकता है कि ये संवत् १६९८ में वर्तमान रहनेवाले निधान के शिष्य रहे हों। यदि यह संभावना ठीक हो तो नित्यानंद 'नंद' दूसरे नित्यानंद से अभिन्न हो सकते हैं। ये खोज विवरण (२६–३३७) (२९–७८) (३२–१५८) पर उल्लिखित नित्यानंद नामक ग्रंथकारों से भिन्न जान पड़ते हैं।

१३० नैनकवि—इनकी तीन इन रचनाओं के विवरण लिए गए है—१-कवित्त अलीशाह मरदान की हालगढ़ खैबर की लड़ाई का, २—कवित्त हजरत अली के माजिजा के, ३-अंगद रावण संवाद। प्रथम रचना अपूर्ण है। इसमें हजरत अली की खैबर की लड़ाई का सजीव और ओजपूर्ण भाषा में वर्णन है। दूसरी में हजरत अली के माजिजा के कवित्त हैं। ये दोनों एक ही हस्तलेख में हैं तथा इनका एक ही विवरण लिया गया है।

तीसरा ग्रंथ भी अपूर्ण है जिसमें नाम तक का उल्लेख नहीं। विषय की दृष्टि से इसका नाम 'अंगद रावण संवाद' रख दिया गया है। इसमें रामायण के आधार पर अंगद रावण संवाद का वर्णन है।

रचनाकाल और लिपिकाल किसी में नहीं हैं। रचना छप्पयों और कवित्तों में की गई है।

रचयिता का नाम रचनाओं के आरंभ में तथा उनकी पुष्पिकाओं में नहीं मिलता, केवल कवित्तों और छप्पयों में ही आया है। अन्य परिचय अज्ञात है। खोज में ये प्रथम बार ही विदित हुए हैं।

१३१ पदुमन (प्रद्युम्न)—प्रस्तुत रचयिता का उल्लेख खोज विवरण (४-१४) पर 'काव्यमंजरी' के रचयिता के रूप में हो चुका है। उक्त विवरण के आधार पर ये दामोदर के पुत्र और संवत् १७३९ के लगभग वर्तमान थे। इनके तीन भाई थे जिनके नाम क्रमशः हरिशंकर, लालमणि और कृष्णमणि थे। जाति के कायस्थ तथा वादप नगर के राजा दलेलसिंह के आश्रित थे।

राजा दलेलसिंह प्रस्तुत खोज विवरण में विवृत 'शिवसागर', 'मुक्ति रत्नाकर' और 'रामरसार्णव' के रचयिता हैं। प्रस्तुत रचयिता की इस बार मिली नवीन रचना भक्ति कल्पतरु द्वारा इनका (राजा दलेल सिंह का) कुछ और विवरण मिला है जिसके अनुसार ये राजा वेणु के वंश में राजा रामसिंह के पुत्र थे। इनकी वंशावली इस प्रकार है:—

राजा वेणु के वंशज बाघदेव

बाघसिंह किसी दूसरे स्थान (पैरवार) वादप नगर की ओर चले आए जहाँ वे करनपुरा के अधिपति हुए। राजा दलेलसिंह की एक पंडित सभा भी थी जिसमें तुलाराम, तुलसी राम और गुनाराम आदि प्रसिद्ध विद्वान् थे।

'भक्ति कल्पतरु' भागवत का संक्षिप्त अनुवाद है। इसमें १५ पलो (पल्लव) हैं। यह संवत् १७३९ में रचा गया। लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं मिलता। हस्तलेख की लिपि अत्यंत भद्दी और दोषपूर्ण है जिसके फलस्वरूप आश्रयदाता का निवासस्थान बादप नगर के स्थान पर बादमनगर पढ़ने में आता है। आश्रयदाता की वंशावली के क्रम में भी अशुद्धि हो सकती है।

१३२ परमदास—इनका 'जैमिनी पुराण' मूल संस्कृत ग्रंथ का अनुवाद है। रचनाकाल संवत् १६४६ और लिपिकाल संवत् १७९३ है।

रचयिता ने अपना थोड़ा सा परिचय दिया है जिसके अनुसार ये बादशाह अकबर के समकालीन थे। इनके पूर्वज गोरखपुर के अंतर्गत बड़ा गाँव में रहते थे। एक समय अकाल पड़ने के कारण उसे छोड़कर ये पश्चिम की ओर सहस्रनाम में आ बसे। इस वंश में एक व्यक्ति हिगहरिमा हुए जो बड़े भक्त थे। उनके पुत्र मेव भी परम वैष्णव हुए।

इनकी जाति कुरवी और कुल जैसवार था। इन्होंने प्रस्तुत अनुवाद धरनीधर पंडित की सहायता से किया जो हाजीपुर में भारद्वाज गोत्रीय नरोत्तम दीक्षित के पौत्र और हरसिंघ नृप के पुत्र थे।

इसकी जो प्रति खोज में मिली है अपूर्ण है। प्राचीन कैथी लिपि में होने के कारण कठिनाई से पढ़ी जाती है। हो सकता है, धरनीधर के वृत्त में कुछ भूल हो।

१३३ परमानंद—इनकी 'दानलीला' का विवरण लिया गया है। इसकी भाषा गुजराती मिश्रित है। रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं।

रचयिता का कोई परिचय नहीं मिलता। ये अष्टछाप वाले सुप्रसिद्ध परमानंद से भिन्न हैं या अभिन्न इसका निश्चय करना कठिन है। रचना में गुजराती भाषा के मेल से यह निश्चय कर सकते हैं कि कदाचित् ये उनसे भिन्न हों।

१३४ पारवती—इनके नाम से कुछ 'वाणियों' का विवरण लिया गया है, देखिए सिद्धों की वाणी का विवरणपत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १। हस्तलेख के अनुसार विशेष प्रकार के साधक का नाम पारवती (पार्वती=पार्वत्य) जान पड़ता है:—

काकदृष्टि बगोध्यानी। बाल अवस्था भवंगम अहारी।
अवधूत सौ बैरागी पारबती। दूजा सब भेषधारी॥

१३५ पृथ्वीनाथ—पृथ्वीनाथ का नाम सिद्धों के नामों के साथ आया है। इनकी कुछ 'वाणियाँ' प्राप्त हुई हैं। इनके लिए देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १।

१३६ साँदू पृथ्वीराज—'अभय विलास' नामक डिंगल काव्य के रचयिता हैं। विवरण पत्र में दिए गए उद्धरणों से इनके विषय में कुछ ज्ञात नहीं होता, परंतु 'राजस्थान में हिंदी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज' नामक पुस्तक के आधार पर ये साँदू शाखा के

चारण थे। इन्होंने प्रस्तुत ग्रंथ जोधपुर के महाराज अभयसिंह (राज्यकाल संवत् १७८१-१८०६) के आश्रय और समय में रचा। इसमें उनके वीरोचित कार्यों और शौर्यपराक्रम का बड़ा सजीव वर्णन है।

१३७ प्रतापकुँवरबाई—'रामपदावली' की ये रचयित्री हैं। पदों में 'दास प्रताप' करके रचयिता का उल्लेख है, परंतु अन्वेषक ने 'प्रताप कुँवरबाई' नाम दिया है।

इसका रचनाकाल संवत् १९२४ है जो 'बारहमासा' (पदों के अंतर्गत बारहमासा भी है) में दिया है। लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता। पदों में रामगुणगान किया गया है।

रचयिता के विषय में और कोई विवरण नहीं मिलता।

१३८ प्रभानाथ—इन्होंने संवत् १८३८ में 'प्रवीण सागर' नामक विशाल ग्रंथ की रचना की। इसकी प्रस्तुत प्रति में लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं है। इसमें ७१ लहर (अध्याय) हैं जिनमें अनेक विषय प्रतिपादित हैं जैसे—नाड़ी परीक्षा, वैद्योपचार, शिकारभेद आदि। बीच बीच में शिव पार्वती और कैलाश की वंदना है। तत्पश्चात् उत्सवों का वर्णन एवं राधाकृष्ण के युगल रूप का विवेचन किया गया है। ग्रंथ में विषय निर्वाह तथा अनेक विषयों में साम्य स्थापन की कोई चेष्टा नहीं है। एक विषय समाप्त हुए बिना ही दूसरा आ जाता है। फिर भी ग्रंथ महत्त्वपूर्ण है।

रचयिता का अन्य वृत्त अज्ञात है।

१३९ प्रह्लाददास पाठक (जन)—इनकी 'हनुमत जस लीला' में हनूमान के यश का वर्णन है। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १८२६ वि० है।

ग्रंथकार ने अपना कोई परिचय नहीं दिया। 'पाठक' शब्द से ये ब्राह्मण विदित होते हैं।

१४० प्राणनाथ (त्रिवेदी)—इनके द्वारा रचित एक ग्रंथ 'कल्कि-चरित्र' पहले खोज में मिल चुका है, देखिए खोज विवरण (३-२९) (२३-३२०)। उक्त ग्रंथ के द्वारा ये जाति के कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे और संवत् १७६५ के लगभग वर्तमान थे।

इस बार इनका 'जैमिनी पुराण' मिला है जिसकी रचना संवत् १७५७ में हुई। लिपिकाल संवत् १९२४ है।

इन्होंने मंगलाचरण में 'पट्टन देवी' का उल्लेख किया है। वर्तमान बस्ती और गोंडा के मध्य में तुलसीपुर स्टेशन के पास एक स्थान है जिसे 'पाटन की देवी का मठ' कहते हैं। यह देवी का मंदिर है, संभव है रचयिता का तात्पर्य इसी देवी से हो।

१४१ प्रियादास—ये 'भक्तमाल' के टीकाकार के रूप में बहुत प्रसिद्ध हैं। पिछले खोज विवरण में इन्हें नाभादास जी का शिष्य लिखा गया है, परंतु यह भूल है। वृंदावन में यह पता चला कि ये गौड़ीय संप्रदाय के थे और वृंदावन के राधारमण मंदिर में रहते

थे। 'भक्तमाल' की टीका के मंगलाचरण में इन्होंने श्री चैतन्य महाप्रभु और अपने गुरु मनोहरदास जी की वंदना की है। अतः इन्हें अब नाभादास जी का शिष्य न मानकर गौड़ीय संप्रदाय का मानना उचित है।

इस बार इनकी 'भागवत सुलोचना टीका' नामक एक और रचना प्राप्त हुई है। इसके तीन मयूखों में भागवत धर्म का ग्रहण और फल कथन किया गया है। प्रस्तुत प्रति खंडित है। रचनाकाल और लिपिकाल अप्राप्त हैं। प्रस्तुत रचयिता का उल्लेख पिछले खोज विवरण (१-५५) (९-३२४) (६-२४७) (२०-१३५) (२६-२७३) में हुआ है।

१४२ प्रियादास—प्रस्तुत रचयिता की एक रचना 'सेवक जू की जन्म बधाई' खोज में प्राप्त हुई है। इसमें राधावल्लभी-संप्रदायानुयायी श्री सेवक जी की जन्म-बधाइयाँ हैं।

इसकी प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं मिलता। रचयिता का भी कोई विश्वसनीय विवरण प्राप्त नहीं। खोज विवरण (९-२३१) (१७-१३६) में उल्लिखित इस नाम के रचयिता से ये अभिन्न हैं। उक्त खोज विवरणों के अनुसार ये राधावल्लभी संप्रदाय के प्रवर्तक आचार्य हित हरिवंश जी के अनुयायी एवं संवत् १९०५ में वर्तमान थे।

१४३—प्रेमदास—प्रेमदास का 'जैमिनी पुराण' आदि और अंत से खंडित है। बीच से भी कुछ पन्ने लुप्त हो गए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता। यह मूल संस्कृत से अनूदित है।

रचयिता का नाम पाँचवें अध्याय की पुष्पिका से 'प्रेमदास' ज्ञात होता है:—

'इति श्री असमेध जग्य महाभारत जैमुनी ससकृत पचमो अधाभाषा प्रमदासकृत'

'प्रमदास' का शुद्ध रूप प्रेमदास माना गया है। अन्य वृत्त नहीं मिलता।

१४४ प्रेमरंग—इनकी रची 'अयोध्याकांड रामायण' छोटी सी रचना है जिसमें अयोध्याकांड की कथा संक्षेप में वर्णित है। इसमें रचनाकाल का तो उल्लेख नहीं है; परंतु लिपिकाल संवत् १८८५ दिया है जो इसकी प्राचीनता प्रकट करता है। भाषा खड़ी बोली है जिसमें अरबी फारसी के शब्दों का भी समावेश है।

रचना लावनी में है। आरंभ में दिए:—'रागणी बरवे जल्द इ छंद लावणी हरिऊम' से यह स्पष्ट है।

रचयिता का नाम स्पष्ट नहीं दिया है। केवल अंत के छंद से 'प्रेमरंग' ज्ञात होता है :—

'मुनिपद परसे अनुसूया ने सियमुख सुना स्वयंबर को।
'प्रेमरंग' प्रभु सुख सों बसे धसे वन घन सर धनुधर को ॥

इनका वृत्त अज्ञात है।

१४५ प्रेमा—इनका 'श्री राधाकृष्ण विवाह विनोद' ४०९५ अनुष्टुप् का बड़ा ग्रंथ है। इसमें २१ अध्याय हैं जिनमें स्कंदपुराण के आधार पर राधा कृष्ण के विवाह का विस्तृत वर्णन है। कथानक छोटा है; परंतु उसे विस्तृत करने के लिये विवाह की प्रत्येक रीति-विधि का अलग-अलग वर्णन किया गया है। भाषा ब्रजी है। दोहा, चौपाई, कवित्त, सवैया और सोरठा छंदों का व्यवहार किया गया है। रचना साधारण है।

रचनाकाल का कोई उल्लेख नहीं है। लिपिकाल संवत् १८०८ दिया हुआ है।

रचयिता राधावल्लभी संप्रदाय के अनुयायी श्री कल्यानदास जी के शिष्य थे। 'प्रेमा' संप्रदायगत नाम प्रतीत होता है।

१४६ फकीरशाह—इनके कुछ पद 'शाह कबीर के शब्द' नाम से प्राप्त हुए हैं जिनमें अध्यात्म के साथ-साथ ज्ञानोपदेश भी है। इनका रचनाकाल ज्ञात नहीं। लिपिकाल संवत् १८६७ है। रचना निरगुनी संतों की शैली में है। भाषा में खड़ी बोली का पुट है। एक झूलना छंद तो खड़ी बोली में ही है। ग्रंथ स्वामी श्री राजाराम जी महंत के कथनानुसार रचयिता निर्गुण संत यारी साहब के शिष्य थे और दिल्ली में रहते थे। प्रस्तुत पदों में भी यारी साहब का नामोल्लेख है:—

'संत फटक आगम नीसानी तामें 'इयारी' बोलता है।'

× × × ×

'भाई 'इआरी' हम तुम पाई गावै 'साह फकीर'

विशेष परिचय ज्ञात नहीं होता। यारी साहब के विषय में देखिए यारी साहब पर टिप्पणी। ये अनुमान से १६वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में वर्त्तमान थे।

१४७ फकीरसिंह और मनिकंठ कवि—फकीर सिंह 'बैताल पचीसी' के रचयिता मनिकंठ कवि के आश्रयदाता थे। इनका और वृत्त अज्ञात है। इनका और मनिकंठ का उल्लेख उक्त ग्रंथ की कथाओं की पुष्पिकाओं में इस प्रकार मिलता है:—

'इति श्री बैताल पचीसी फकीर सिंह कारिते मनिकंठ कवि भाषते त्रैविसतमो कथा समाप्त ॥'

मनिकंठ कवि की उपर्युक्त रचना मूल संस्कृत का हिंदी पद्यानुवाद है। यह अंत से खंडित है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। अनुवाद साधारणतया अच्छा है।

इसकी प्रस्तुत प्रति द्वारा मनिकंठ का उपर्युक्त वृत्त कि ये फकीरसिंह के आश्रित थे—के अतिरिक्त और विवरण नहीं मिलता। परंतु ये प्रस्तुत ग्रंथ के साथ खोज विवरण (२३-२६६) में उल्लिखित हैं। उक्त विवरण के अनुसार ये वर्ण के वैश्य, संवत् १७८२ के लगभग वर्तमान और आजमपुर के निवासी थे तथा सूदन ने अपने 'सुजान चरित' में इनका उल्लेख किया है।

१४८ फरीद जी—'इनके 'पदितनामा' में अलिप्त रहकर भगवद् नाम स्मरण करने का उपदेश है। रचना खड़ी बोली गद्य में है जिसमें अरबी फारसी के शब्द भी व्यवहृत हैं। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८५५ है।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और कोई वृत्त नहीं मिलता। नाम से ये मुसलमान जान पड़ते हैं।

१४९ बद्रीलाल (गुसाईं)—ये 'श्री भगवद्गीता' के टीकाकार हैं। टीका ब्रजभाषा गद्य में है जिसमें खड़ी बोली का भी मिश्रण है। टीका का समय अज्ञात है। हस्तलेख संवत् १९१८ का लिखा हुआ है।

टीकाकार का विशेष परिचय नहीं मिलता।

१५० बलदेव—प्रस्तुत रचयिता की दो रचनाएँ हैं—'स्फुटरचना' और 'अजमति खाँ यश वर्णन'। पहली का वास्तविक नाम ज्ञात नहीं। फुटकल विषयों जैसे, जगत के विषय-विधाता के कौतुक सदृश कार्य, श्री रामचंद्र द्वारा अयोध्या के जीवों का उद्धार, रामभजन, सविता की साहिबी सी कविता हमारी है, वाणी सिद्ध कवि तथा अन्य समस्याओं पर कविता होने के कारण सुविधा की दृष्टि से इसका नाम 'स्फुट रचना' रख दिया गया है। इसमें चार कवित्त, एक दोहा, एक पद, एक शार्दूल विक्रीड़ित और दो सार छंद हैं।

दूसरी रचना में रचयिता ने अपने आश्रयदाता अजमति खाँ के यश का वर्णन किया है।

दोनों रचनाएँ कुछ अन्य रचनाओं के साथ एक हस्तलेख में हैं। इनका रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल प्रथम का संवत् १७८१ है। द्वितीय में लिपिकाल तो नहीं दिया है, परंतु इसके पहले—बलभद्र कृत 'लिखनख' और हरिलाल कृत 'रामजी की वंशावरी' का लिपिकाल संवत् १८७२ है। इसलिए इसका लिपिकाल भी इसी के लगभग होगा।

रचयिता ने अपना नाम केवल कवित्तों में दिया है जिनके द्वारा इनका कोई विशेष विवरण नहीं मिलता। परंतु ग्रंथस्वामी पं० दयाशंकर जी मिश्र के कथनानुसार ये उनके पूर्वज थे। वंशवृक्ष इस प्रकार है :—
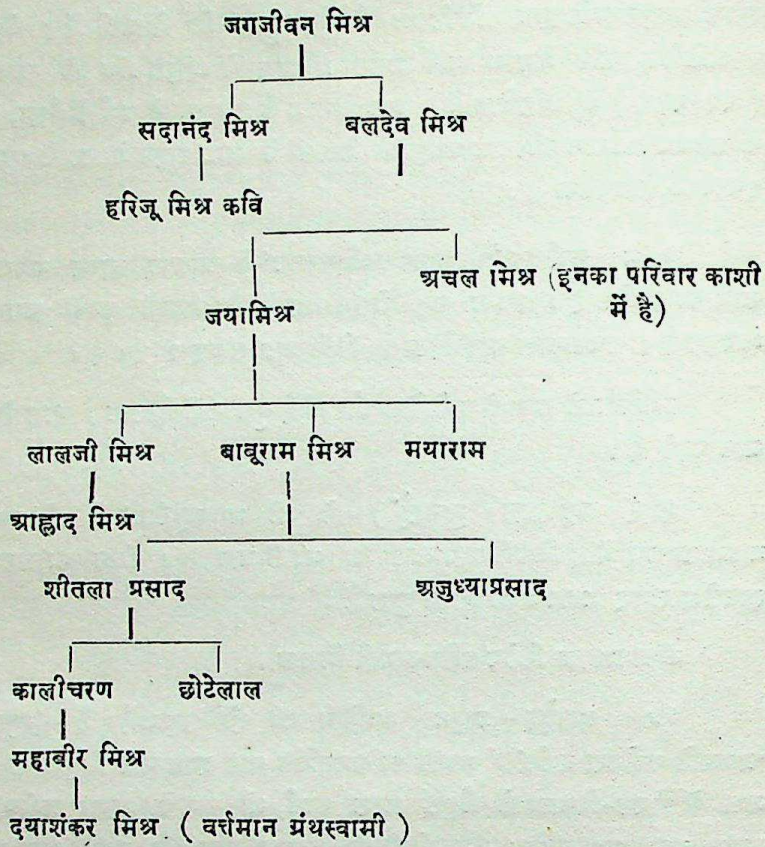
बलदेव मिश्र आजमगढ़ के राजा अजमत खाँ के राजकवि, गुरु और मंत्री थे। अजमत खाँ के पश्चात् उनके पुत्र महावति के भी वे मंत्री रहे। अनुमान से इनका समय अठारहवीं शताब्दी के लगभग ज्ञात होता है; क्योंकि अजमत के बड़े भाई आजम खाँ संक्षिप्त विवरण के अनुसार संवत् १७८६ के लगभग वर्तमान थे, देखिये खोजविवरण (९-११२, २७०, ११)। अतः इनका तथा अजमत खाँ का इस समय में वर्तमान रहना संभव है।

अजमत खाँ के आश्रय में रहने का प्रमाण इनकी अन्य रचना से भी मिलता है जो अलग पन्ने पर लिखी मिली है :—

'नृप अजमति षां वलि कोपि धायो गहे षग वैरी हने
हाकि संग्राम कै वीर वांके बड़े ऐंड वाले लिए
पानी भाले महा मध उन्नत्त पृथ्वी मिलाए घने।

प्रबल सवारि सोहे ध्वजा वज्जि नीसान समध्य जोधा
कृपान कृपारक्ष कारी महा कोहवंते अरंते नगर को दरंते ठनैं
जोग जीतैं भनैं रौदवानी रोषानी मनैं ॥
दिनकर किरनावली सी चली वान की पांति भाजे

परास्त नारी गही दुःषभारी विडारी विदारी वियोग प्रहारी
तजै देह सारी उघारी सुलज्जा छुटी जौति रूठी तनै ॥
कविवर बलदेव भाषै भयो जुद्ध भारी परी हाहाकारी गढ़ी
गाँजि भंजे बड़े वीर वैरी मिलैरी हसै जोगिनी कालिका
स्याल स्याली सुगिद्धै चपै शुद मेदै कहालै गनै ॥

इनके आश्रयदाता के विषय में ग्रंथस्वामी से यह ज्ञात हुआ है:—

अजमत खाँ के बड़े भाई का नाम आजमखाँ और पिता का विक्रम था। विक्रम को तत्कालीन बादशाही (संभवतः शाहजहाँ) ने धोका देकर मुसलमान बना लिया। इनके वंशजों को अंतिम राज्याधिकार रहने तक इसका खेद बना रहा। ये मुसलमान होने पर भी अपने को राजपूत कहते रहे तथा गुरु और पुरोहित का पूर्ववत् संमान करते रहे। ये गौतम कुल (गोत्र) के राजपूत थे। रचयिता के निम्नलिखित दो कवित्तों में इसका संकेत मिलता है :—

'नवो खंड मंडल में मंडित प्रताप रवि दरसै 'चकत्ता' अतिसिंधु अवगाह की।
'बलदेव' दसहू दिसान में निसानन की धमक धूम झूमै गयंदनि अरि के उछाह की।
अजमति गौतमानुज के पयान बल एते बड़े साहिन से ऐन निरवाह की।
जैसे सतरंज में कुपेच परे पादिहू की किस्ती के दिये ते हो सिकस्त पातशाह की॥
तै साहिन को साल गनिमनि को मलनिहार मुलुक को मालिक मुलुक विकरमको।
तेरे ही बसाय बसै देसन में उमराय तेरे ही चलाए चले पंथ सुधरम को।
'बलदेव' तेरी त्रास धसत सवासवास वैरिन को बाढ़यो उर दरद मरम को।
गौतम के कुल को कमल अजमत खान गुन को निधान पुनि सागर सरम को ॥'

आजम खाँ आजमगढ़ के संस्थापक थे। इन्हें शिवाजी से मिल जाने के कारण औरंगजेब ने कन्नौज में कैद कर दिया था।

पंडित बलदेव मिश्र ने इस वंश की अच्छी सेवा की। वे अजमत खाँ के साथ उसके शत्रु से लड़ने जाया करते थे। इसी से युद्ध का आँखों देखा स्वाभाविक वर्णन किया है। जिस लड़ाई में अजमत खाँ मारे गये उसका वर्णन उपर्युक्त प्रथम दंडक छंद में है। ये कवि और वीर होने के साथ-साथ राजनीतिज्ञ भी थे। प्रस्तुत हस्तलेख में इनकी कुछ संस्कृत रचनाएँ हैं जो इनके संस्कृत ज्ञान का पता देती हैं।

१५१ बलवीर—इनका 'शारंगधर वैद्यक' मूल संस्कृत ग्रंथ का अनुवाद है। यह गद्य पद्य दोनों में है। पद्य का प्रयोग आरंभ के केवल दो पत्रों में हुआ है, शेष गद्य है जो अपरिमार्जित खड़ी बोली का है। टीका का रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९०० है।

रचयिता ने अपने नाम का उल्लेख आरंभ में केवल एक चौपाई में किया है:—

'नैनन जलन औसुज शरीरा। निश्चे मीचुकहत 'बलवीरा'।

अन्य परिचय नहीं मिलता। पिछले खोज विवरणों में उल्लिखित इस नाम के रचयिताओं से ये भिन्न हैं।

१५२ बलिराम 'बलि'—प्रस्तुत रचयिता अपने एक ग्रंथ 'अद्वैत प्रकाश' के साथ खोज विवरण (१७–१७) में उल्लिखित है।

उक्त विवरण के अनुसार ये संवत् १८८५ के लगभग वर्तमान थे। इसके अतिरिक्त इनका और कोई वृत्त नहीं मिलता। इनका उपनाम 'बलि' था जो ग्रंथ में जहाँ तहाँ प्रयुक्त हुआ है।

इस बार इनका एक 'बिना नाम का ग्रंथ मिला है जिसका विषय आध्यात्मिक है। उपर्युक्त 'अद्वैत प्रकाश' का विषय भी यही है। अतः हो सकता है कि प्रस्तुत रचना भी वही अथवा उसका ही एक भाग हो। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं।

१५३ बलिहारी—इस रचयिता के कुछ पद 'पदसंग्रह' नाम से मिले हैं। पदों में राधाकृष्ण तथा गोपियों की दान, मान, पनघट, रास और वसंत आदि लीलाओं का सरस और सुंदर वर्णन है।

रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं चलता। अधिकांश पदों की भाषा व्रजी है; परंतु बीच-बीच में कुछ पद जिनकी संख्या १२ है पंजाबी भाषा के भी हैं।

रचयिता कोई वैष्णव थे। अपने नाम का कहीं भी इन्होंने स्पष्ट उल्लेख नहीं किया; किंतु पदों के अंत में 'बलिहारी' शब्द के आने से कहीं इनका नाम 'बलिहारी' सखी न हो। कुछ पद पंजाबी भाषा में होने के कारण अनुमान किया जा सकता है कि ये मूलतः पंजाब के रहने वाले रहे हों। ये उच्चकोटि के कवि थे।

प्रस्तुत खोज विवरण में आए 'बलिराम' उपनाम 'बलि' से ये भिन्न हैं एवं खोज में नवोपलब्ध हैं।

१५४ बाँकीदास आसिया—ये 'धवल पचीसी' और 'मान जसोमंडन' नामक दो रचनाओं के प्रणेता हैं। ये जोधपुर के महाराज मानसिंह (राज्यकाल संवत् १८६०–१९००) के समकालीन और संभवतः उन्हीं के आश्रित थे। उनकी प्रशंसा में इन्होंने 'मानजसोमंडन' की रचना की। विशेष वृत्त नहीं मिलता।

'धवलपचीसी' में बैल की प्रशंसा में २५ दोहे हैं। इसकी प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है। उसमें केवल ९ दोहे हैं। दोनों रचनाएँ राजस्थानी भाषा में हैं।

रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख किसी में नहीं पाया जाता।

१५५ बाघरा—इनकी प्रस्तुत रचना 'बाघरारा दूहा' में वियोगिनी की विरह दशा के ग्यारह दोहे हैं। रचना राजस्थानी भाषा में है। रचनाकाल और लिपिकाल ज्ञात नहीं।

रचयिता के विषय में केवल इतना ही पता चलता है कि ये राजस्थान के रहनेवाले थे।

१५६ वाजीद—इनकी ज्ञानोपदेश विषयक दो रचनाओं 'मुखनामों' और 'गुन कठियारा' के विवरण लिए गए हैं। इनमें रचनाकाल का उल्लेख नहीं है। लिपिकाल संवत् १८५६ दिया है। ये रचनाएँ एक बड़े हस्तलेख में हैं जो अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसके लिये देखिए 'सेवादास' का विवरण।

रचयिता का विशेष वृत्त नहीं मिलता। संभवतः ये खोज विवरण (२-७९) में आए वाजिद (दादू दयाल जी के शिष्य, सं० १६५७ के लगभग वर्तमान) ही हों।

१५७ बालकृष्ण—इनके द्वारा रचित 'रस चंद्रिका' साहित्य शास्त्र विषयक उत्तम ग्रंथ है। इसमें क्रमशः नवरस विवेचन, रस विचार, नायक निर्णय, नायिका विचार, दूती विचार, छंद विधान, दोष निरूपण, गुण, कवि नियम और दंपति विनोद नाम से ग्यारह प्रकाश (अध्याय) हैं। विषय 'प्रकाशों' के नाम से स्वयं स्पष्ट है। रचनाकाल और लिपिकाल प्राप्त नहीं। इसकी रचनाशैली परिमार्जित और पुष्ट है।

रचयिता के पिता का नाम बलभद्र त्रिपाठी और बड़े भाई का नाम काशीनाथ त्रिपाठी था। विशेष विवरण नहीं मिलता। खोज में ये नवोपलब्ध हैं।

१५८ बालगोदाई—इनका नाम सिद्धों के साथ आता है। इनकी कुछ 'वाणियाँ' मिली हैं जिनके लिए देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १। विशेष वृत्त अज्ञात है।

१५९ बावरी साहबा—इनका केवल एक पद 'श्री बावरी साहबा के शब्द' नाम से मिला है। ये निर्गुणपंथी मुसलमान महिला थीं। इनका महत्व इस बात से है कि इन्होंने एक पृथक पंथ ही चलाया। जिसका नाम आगे चलकर 'सत्यनामी पंथ' पड़ा। सत्यनामी पंथ का विशेष प्रचार करनेवाले इन्हीं की शिष्य परंपरा में बुल्लासाहब के शिष्य जगजीवन दास थे। इनकी गुरु शिष्य परंपरा के लिए देखिये 'भीखा साहब' का विवरण। ये दयानंदजी की शिष्या थीं।

इस पंथ का साहित्य विस्तृत है जो आजतक उन्हीं लोगों तक सीमित रहा जो इसके अनुयायी थे। इसकी महत्ता अन्य निर्गुण पंथियों के साहित्य से कम नहीं है। आध्यात्मिक ज्ञान और दार्शनिक विचारावली के साथ-साथ इसकी अधिकांश रचनाओं में कवित्व भी दृष्टिगोचर होता है।

प्रस्तुत रचयित्री का 'शब्द' यहाँ उद्धृत किया जाता है जिससे इस विषय में कुछ अनुमान लगाया जा सकेगा :—

अजपा जाप सकल घट बरतै
जो जानै सो पेषा।
गुर गम जोति अगमघर बासा
जो पाया सो देषा।

मैं बांदी हौं परमतत्तु की
जग जानत किसु (? किछु) भोरी ।
कहत 'बावरी' सुनो हो 'वीरू'
सुरति कमल पर डोरी ॥

बीरू बावरी साहबा के शिष्य थे। इसके अतिरिक्त इनका और कोई परिचय नहीं मिलता। ग्रंथ स्वामी से ज्ञात हुआ है कि ये अकबर बादशाह से पहले वर्तमान थीं।

उपर्युक्त पद एक बड़े हस्तलेख में है जिसमें बीरू साहब, यारी साहब, बुल्ला साहब, गुलाल साहब, भीखा साहब, शाह फकीर और केसोदास की भी बानियाँ संगृहीत हैं।

ये सब संत थे और क्रम से इनकी ही शिष्य परंपरा में हुए। शाह फकीर और केसवदास श्री धारी साहब के शिष्य थे। इनके अतिरिक्त हस्तलेख में नानक, कबीर, मकरंददास (केवट), जन कुवा, सूरदास, रामानंद, अग्रदास, मलूकदास, मीराबाई, तुलसी, धरनीदास तथा कृष्ण जीवन लच्छीराम के भी पद हैं। रामानंद और अग्रदास की रचनाएँ आरंभ में दी हुई हैं।

इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या २ पर भी किया गया है।

१६० बीठू बांकीदास—इनके 'दामोदर हरिदास चरित' अन्य नाम 'ज्ञानावली' में ज्ञानोपदेश का वर्णन है जो एक घटनात्मक कथा के रूप में है। घटना इस प्रकार है :—

'जोधपुर में खोड़पा संतों का स्थल है। वहाँ से दो साधु (गुरु शिष्य) शिव परगने के ऊंडू गाँव में चौमासा करने जाते थे। एक दिन मार्ग में चोर मिले जिनसे उनकी लड़ाई हुई। अंत में उन्होंने चोरों को ज्ञानोपदेश द्वारा शिष्य बना लिया।

ग्रंथ रचना गीत, दोहा, नाराच आदि ६० छंदों में हुई है। भाषा राजस्थानी है। रचनाकाल संवत् १८८३ दिया है जो विवरण पत्र में उद्धृत नहीं है। लिपिकाल ज्ञात नहीं।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और कोई परिचय नहीं मिलता। नाम एवं ग्रंथ की भाषा से ये राजस्थानी ज्ञात होते हैं।

१६१ वीरू साहब—जैसा कि ग्रंथ स्वामी श्री राजारामजी महंत (चिट बड़ागाँव, जिला बलिया) से पता चला है ये निर्गुण मतानुयायी बावरी साहिबा के शिष्य दिल्ली के निवासी तथा जाति के मुसलमान थे। अन्य वृत्त नहीं मिलता। विशेष के लिये देखिए बावरी साहबा और भीखा साहब के विवरण।

प्रस्तुत शोध में यद्यपि इनके केवल दो ही शब्द प्राप्त हुए हैं, तथापि इन्हीं से इनके उच्चकोटि के संत होने का पूरा परिचय मिल जाता है। इनमें निर्गुण मतानुसार आध्यात्मिक ज्ञानोपदेश किया गया है। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८६७ है। इनकी भाषा पूर्वी अवधी है।

रचयिता खोज में नवोपलब्ध हैं। इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या २ पर भी है।

१६२ शाह बुरहान—शाह बुरहान के दो ग्रंथ 'मुनफातुल ईमान' अर्थात् धर्म का लाभ और 'कशयुल वजूद' अर्थात् ब्रह्म निरूपण प्रस्तुत खोज में मिले हैं। ये दोनों सूफी दृष्टिकोण से रचे गए हैं। रचयिता का एक दूसरा ग्रंथ 'सुख सुहेला' नाम का भी है जिसका संपादन और प्रकाशन प्रस्तुत ग्रंथों के स्वामी डा० मुहम्मद हफीज सैयद साहब, इलाहाबाद द्वारा हुआ है। वह ग्रंथ भी 'मुनफातुल ईमान' के साथ लिपिबद्ध है।

ग्रंथों की भाषा यद्यपि हिन्दी है तथापि इनमें भाषा की एक रूपता और परिमार्जन कम पाया जाता है। पारिभाषिक शब्द सीधे फारसी से लिए गए हैं। साहित्यिक दृष्टि से इनका कोई महत्त्व नहीं; परंतु भाषा के इतिहास की दृष्टि से ये महत्वपूर्ण हैं।

रचयिता का जीवन वृत्त तथा अन्य कोई परिचय नहीं मिलता।

१६३ शाह बुरहान उद्दीन जाना—ये पूर्वोक्त रचयिता शाह बुरहान से अभिन्न हैं अथवा नहीं इसका ठीक-ठीक निश्चय नहीं होता। ये भी सूफी मत के हैं। इनका भी जीवन वृत्त अज्ञात ही है।

इनके एक ग्रंथ 'इरशाद नामा शाह बुरहान उद्दीन जाना' का विवरण लिया गया है। ग्रंथ में गुरु शिष्य संवाद के रूप में सूफी मत का प्रतिपादन किया है। इसमें पद्य के अतिरिक्त गद्य भी है, पद्यभाग चौपाइयों में है। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल हिजरी सन् १०२७ है जो संवत् १६७५ के लगभग होता है।

ग्रंथ दखिनी भाषा में (जिसे दक्खिनी उर्दू कहा जाता है) लिखा हुआ है। इनके शब्दों के रूपों में प्रायः ये विशेषताएँ मिलती हैं :—

कुछ के लिए कुज प्रयुक्त हुआ है।
लेकिन ,, ,, लाकिन ,, ,, ,,
और ,, ,, होर ,, ,, ,,
भी ,, ,, बी ,, ,, ,,

क्रिया के रूपों में 'मानिया' 'जानिया' आदि भी मिलते हैं। भाषा के इतिहास की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण है।

१६४ बुलाकी नाथ बाबा—प्रस्तुत खोज में इनके रचे दो ग्रंथों, १—रामायण और २—गीता ज्ञान सागर के विवरण लिए गए हैं। दोनों ग्रंथों की रचना हरिहरपुराण के आधार पर हुई है। हो सकता है, ग्रंथकार ने समस्त हरिहर पुराण का अनुवाद किया हो जिसके प्रस्तुत ग्रंथ अलग अलग अंश हों। प्रथम ग्रंथ की दो प्रतियाँ मिली हैं जिनमें से एक में किष्किंधाकांड, लंकाकांड और उत्तरकांड हैं तथा दूसरी में अयोध्याकांड और बालकांड हैं। प्रथम प्रति में दो संवतों १८०७ और १८३३ का उल्लेख है इनमें से कदाचित् प्रथम रचनाकाल और द्वितीय लिपिकाल है। यह अपूर्ण और अत्यंत जीर्ण शीर्ण

अवस्था में है। दूसरी प्रति भी अपूर्ण है जिसके अंत के पन्ने नष्ट हो गए हैं। इसमें रचनाकाल और लिपिकाल का एक ही संवत् १८४१ दिया है।

दोनों प्रतियों को देखने से पता चलता है कि ये रचयिता की ही लिखी हुई संभवतः मूल प्रतियाँ हैं। इसकी रचना गो० तुलसीदास की रामायण के अनुकरण पर की गई है। भाव, भाषा और शैली भी उसी प्रकार की है। भाषा में अवश्य ही भोजपुरी का भी मिश्रण है। उदाहरणार्थ कुछ उद्धरण दिये जाते हैं :—

सोरठा

शंकर चाप जहाज रघुवर सागर बाहुबल।
बूड़े सकल समाज चढ़े जो प्रथमहि मोहवश॥

रामचरित मानस

× × ×

दोहा

संभु चरण सागर तरणी राम बाह बल थाह।
वीनु पेवे प्रभु पार करी, चढ़े सकल नरनाह॥

—प्रस्तुत रामायण

× × ×

चौपाई

मातहिं पितहिं उऋण भये नीके। गुरु ऋण रहा सोच बड़ जीके॥
सो जनु हमरे माथे काढ़ा। दिन चलि गयेउ व्याज बहुबाढ़ा॥

—रामचरित मानस

लखन कहेंउ जस मुनि कै करनी। को नहीं जानु सुफल जग वरनी॥
पीत्र भग्ती अब सब करी बीते। रही सोच गुरु न जीते॥
सो निज काढ़े गये दिन बाढ़े। बढ़ी वीआज पर रोकेहु गाढ़े॥

—प्रस्तुत ग्रंथ

दूसरा ग्रंथ 'गीता ज्ञानसागर' आदि-अंत से खंडित है। इसके कुल दस पत्रे (संख्या २११ से लेकर संख्या २२० तक के) उपलब्ध हुए हैं। पत्र संख्याओं से स्वयं प्रकट हो जाता है कि यह ग्रंथ कितना विशाल रहा होगा। रचनाकाल का कोई पता नहीं लग सका। यह ग्रंथ रामायण की उपर्युक्त प्रथम प्रति के साथ एक हस्तलेख में है। अतः इसका लिपिकाल भी उसी के अनुसार संवत् १८३३ मानना उचित है। यह अध्यायों में है। उपलब्ध अंश में चार ही अध्याय ५१, ५२, ५३ और ५४ हैं। जिनमें क्रमशः केवट केवटनीं संवाद, पच्छिम के घोड़ों का रामदर्शन के लिए अयोध्या जाना, धरती, वनस्पति और पशु संवाद, उनका रामदर्शन को चलना तथा सिंधु, नृप, पशु, धरती और वनस्पति संवाद आदि विषयों का वर्णन है।

रचयिता के विषय में रामायण की प्रथम प्रति की पुष्पिका द्वारा पता चलता है कि इनके पिता का नाम जोधसिंह और गुरु का नाम जुड़ावन पर्वत था। ये गौतम गोत्र के सेंगर ठाकुर थे। वास स्थान का नाम सुरतानपुर था जो उस समय गाजीपुर के अंतर्गत तथा अब बलिया जिला में है। उस समय सूबा (प्रांत) इलाहाबाद था। ये प्रसिद्ध महात्मा थे जिन्होंने जल शयन और पंचाग्नि का साधन किया था। अपने नाम के साथ इन्होंने 'पयहारी' शब्द भी जोड़ा है।

उपर्युक्त रामायण की प्रति में किष्किंधाकांड के पश्चात् एक पत्र में इनके वैकुंठवास की तिथि दी हुई है जो इस प्रकार है :—

शमत अठारह से गये औ पैतालीस आए।
तादिन तजेउ शरीर कह हरीपुर गए हरषाए॥
परीवा रवी दीन पष शुकुल माश पुश करी जानु।
बुलाकी हरीधाम कह ता दीन कीयो पयान॥

इसके अनुसार वैकुंठवास पौष शुक्ल प्रतिपदा, रविवार, संवत् १८४५ को हुआ।

इन महात्मा की समाधि जिस स्थान पर बनी हुई है उसका नाम बुलाकीदासजी की मठिया है। यह अब एक गाँव है जहाँ बाबा जी के ही वंशज रहते हैं। प्रस्तुत ग्रंथ वहीं प्राप्त हुआ है।

इसमें संदेह नहीं कि बाबाजी सिद्ध महात्मा होने के साथ साथ प्रतिभाशाली कवि भी थे। प्रस्तुत रामायण काव्य की दृष्टि से उत्तम है।

१६५ बुल्ला साहब—ये ग्रंथ स्वामी श्री राजारामजी महंत (चिट बड़ागाँव, बलिया) के कथनानुसार, यारी साहब के शिष्य और गुलाल साहब के गुरु थे। ये भुड़कुड़ा (जिला गाजीपुर) में निवास करते थे। विशेष के लिये देखिए बावरी साहबा और भीखा साहब के विवरण पत्र। पिछले खोज विवरण (२०-२३) में इनके 'शब्द' विवृत हैं। उक्त खोज विवरण के अनुसार ये १८वीं शताब्दी में वर्तमान थे। इनका असली नाम बुलाकी राय था। साधु हो जाने के पश्चात् बुल्ला साहब कहलाए। सत्यनामी पंथ के प्रवर्तक जगजीवनदास इन्हीं के शिष्य थे।

प्रस्तुत शोध में इनकी 'साषी' मिली है जिसमें रचनाकाल का उल्लेख नहीं है। लिपिकाल संवत् १८३८ और १८४० हैं। इसमें निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश किया गया है।

इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या २ पर भी है।

१६६ भगवानदास—इन्होंने जयदेव कृत गीतगोविंद का 'अमृत भाष्य गीत गोविंद' नाम से ब्रजभाषा गद्य में अनुवाद किया। पुष्पिका के लेख 'भगवानदास रामानुजा चीरंजी भाषामृत प्रत्तत्पते' से पता चलता है कि ये रामानुज संप्रदाय के अनुयायी थे।

ग्रंथ में उल्लेख न होने के कारण इनके समय का ज्ञान नहीं होता। दिये हुए उद्धरणों से इनके बारे में और कुछ पता नहीं चलता।

संभवतः खोज विवरण (६९) पर आए भयानकाचार्य के शिष्य भगवानदास यही हों। भयानकाचार्य भी रामानुज संप्रदाय के थे।

१६७ भगवानदास—'प्रेम पदारथ' नामक ग्रंथ के ये निर्माता हैं। रचना में इन्होंने अपना नाम 'भगवान हित रामराय' दिया है। इसमें 'हित' शब्द से यह संदेह होता है कि ये हितानुयायी रहे होंगे।

विवृत हस्तलेख के आरंभ में:—

'श्री राधावल्लभो जयति श्री हित हरिवंश चंद्रो जयति लिखा है।' इससे यह हस्तलेख हित हरिवंशजी के संप्रदायवालों में से किसी का लिखा है।

१६८ भगवानदास—प्रस्तुत रचयिता के 'हरि चरित्र पारायण अमृत कथा' (वृंदावन खंड) नामक एक वृहद् ग्रंथ का विवरण लिया गया है। इसका 'मथुरा खंड' नाम से दूसरा भाग भी है। दोनों भागों (वृंदावन खंड और मथुराखंड) में भागवत दशम स्कंध पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध की कथाओं का वर्णन है। प्रस्तुत भाग में ७२ अध्याय हैं जिनमें कंसजन्म, देवकी वसुदेव विवाह, कृष्णजन्म और व्रज की कृष्ण लीलाएँ वर्णित हैं। अंतिम अध्याय में अक्रूर के साथ मथुरागमन की कथा दी गई है। रचना दोहे, चौपाई और अन्य छंदों में हुई है। चौपाइयों की संख्या २४०० है और अन्य छंदों की ६८।

रचयिता का वृत्त अज्ञात है। इस नाम के कई रचयिता पिछले खोज विवरणों में आए हैं; परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि उनमें से कोई इनसे साम्य रखते हैं या नहीं। पुष्पिका से पता चलता है कि ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति संवत् १९३१ में लिखी गई।

१६९—भगवतीदास—इन्होंने 'बारहमासा' की रचना की जिसमें श्री कृष्ण के प्रवास पर एक गोपिका के विरह का वर्णन है। रचनाकाल, लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और विवरण अप्राप्त है। पिछले खोज विवरणों में आए इस नाम के रचयिताओं से ये भिन्न हैं अथवा अभिन्न यह जानने का कोई सूत्र नहीं मिलता।

१७० भगौतीदास—गरुड़ पुराण के आधार पर इन्होंने 'नासकेत कथा' लिखी है। खोज में ये नवोपलब्ध हैं। रचनाकाल संवत् १६८८ है :—

संवत् सोरह सै भये अठासी। जेठ मास दुतिया पर भासी।
सुकल पछ औ सोमकवारा। मिरग सिरा नक्षत्र कीन्ह उपचारा॥

रचयिता ने अपने विषय में कुछ नहीं लिखा है। आरंभ में इन्होंने अपने नाम के साथ 'नृप' शब्द जोड़ा है जिससे ये राजा जान पड़ते हैं।

१७१ भजनदास (हित)—इनकी 'हित भजनदास की बानी' में राधा कृष्ण के प्रेम विहार का वर्णन है। आरंभ में गुरु चितवनी अलि (चेतनदास, वास्तविक नाम) की वंदना है। पश्चात् श्री हित हरिवंश जी की स्तुति की गई है। अंत में युगलमूर्ति (राधा कृष्ण) का प्रेम विहार वर्णित है। रचना काव्यग्रंथ न होकर धार्मिक अथवा सांप्रदायिक ग्रंथ मात्र है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८७६ है।

रचयिता हितानुयायी थे। गुरू का नाम जैसा कि ऊपर लिखा गया है चेतनदास था। अन्य परिचय नहीं मिलता।

१७२ भरथरी—भरथरी गोपीचंद भरथरी के नाम से समस्त भारत परिचित है। प्रस्तुत शोध में भरथरी के नाम से कुछ 'वाणियाँ' मिली हैं। इनके विषय में कृपया देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १।

१७३ भागवतदास—प्रस्तुत रचयिता के निम्नलिखित दस ग्रंथ इस त्रिवर्षी में विवृत्त हुए हैं। इनमें से कुछ के विवरण पहले लिए जा चुके हैं जिनका उल्लेख यथास्थान किया जायगा :—

१—भागवत चरित्र—इस ग्रंथ में चार व्यूह अथवा खंड हैं और प्रत्येक व्यूह में अट्ठारह-अट्ठारह अध्याय हैं। इसका मूल विषय अवतारों और भक्तों का चरित्रवर्णन है। भक्तों में से अधिकांश पौराणिक हैं, जैसे प्रह्लाद, ध्रुव आदि। शेष ऐतिहासिक हैं, जैसे—शंकराचार्य, रामानुज माधवाचार्य, और विष्णु स्वामी आदि। ये चरित्र परंपरागत अनुश्रुतियों पर आधारित हैं। अतः इनमें ऐतिहासिकता का अभाव है। इसका रचनाकाल संवत् १८६३ वि० और लिपिकाल संवत् १८८० है। रचना अवधी भाषा और दोहा चौपाई छंदों में हुई है। इसका विवरण पहले भी लिया जा चुका है, देखिए खोज (९-२२; २६-५१)। इसकी प्रस्तावना की शैली रामचरित मानस की सी है।

२—हनुमान अष्टक—यह ग्रंथ हनुमान जी के स्तोत्र के रूप में लिखा गया है। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। इसकी भाषा भी अवधी है। छंद दोहा, सवैया हैं।

३—रामायण माहात्म्य—प्रस्तुत रामायण माहात्म्य में श्री रामचंद्र जी की महिमा का वर्णन है। पुष्पिका में संवत् १९११ दिया है जो लिपिकाल का संवत् है।

४—रामायण माहात्म्य—इसमें क्रमशः रामकथा की महिमा, उसके प्रभाव से सुदामा नामक व्यक्ति की मुक्ति, कथा पारायण की विधि तथा फल वर्णित हैं। इसकी रचना सूत और शौनक ऋषि के संवाद के रूप में हुई है।

५—तत्वबोध—इस ग्रंथ का विषय दर्शन है। इसमें ब्रह्म, जीव और जगत् का विचार है। इसमें दोहा और सोरठा वृत्तों का प्रयोगकर केवल ६ पत्रों में दर्शन जैसे गूढ़ एवं जटिल विषय का सरलतापूर्वक निरूपण किया गया है। इस ग्रंथ में

रचयिता ने अपने लिये 'जन भगवत' का भी प्रयोग किया है —'जन भगवत त्येहि मग चलै सहज परमपद होई ॥' रचनाकाल और लिपिकाल के उल्लेख नहीं हैं।

६—रामरसायन—इसका मूल विषय तो पिंगल है; परंतु रचयिता ने इसमें रस, अलंकार आदि अन्य काव्यांगों का भी यथास्थान समावेश किया है। ग्रंथ के अंत में षट्ऋतुओं का वर्णन है। लक्षणों और उदाहरणों के लिये 'रामचरित मानस' के छंद ही उद्धृत किए गए हैं। इसका रचनाकाल संवत् १८६७ है। लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। प्रस्तुत त्रिवर्षी में इसकी दो प्रतियाँ विवृत हुई हैं। इस ग्रंथ का उल्लेख पहले भी हो चुका है, देखिए खोज विवरण (९-२१; २३-४५)।

७—सूर्य पुराण—इसमें पाँच अध्याय हैं जिनका वर्ण्य विषय क्रमशः नीचे दिया जाता है :—१-सूर्य के बारह नाम, महिमा, पुराण की परंपरा, नारद और ब्रह्मा का संवाद, पूजा विधि; २-अवतार वर्णन, ३-सूर्य के व्यूहों का वर्णन, ४-नारद यज्ञ, ५-नाम माहात्म्य। इसमें रचनाकाल तो नहीं, परंतु लिपिकाल सं० १८९३ का उल्लेख है। संभवतः यह रचयिता के समक्ष ही लिखा गया ज्ञात होता है। भाषा अन्य ग्रंथों की अपेक्षा प्रौढ़ है।

८—सच्चिदानंद विहार स्तोत्र—इसका विषय इसके नाम से ही स्पष्ट है। रचनाकाल और लिपिकाल एक ही संवत् १८५५ है। भाषा से ज्ञात होता है कि यह रचयिता की प्रारंभिक रचना होगी।

९—रामरहस्य—इसमें भगवान् राम का यश वर्णित है। रचयिता ने इसे महाकाव्य लिखा है। इस में नीचे दिये छ सर्ग हैं :—१-सीता अवतार वर्णन, २-राम सावित्री जन्म से लेकर दंडकारण्य तक की कथा, ३-राम कलस को जागरन व्रत, इसमें दंडकवन की रहस्य लीला का वर्णन है, ४-साकेत नगर का वर्णन, ५-सप्तग्राम लीला वर्णन, इसमें जाप की विधि और सूर्पणखा लीला तक की कथा है, ६-जज्ञ वर्णन, इसमें महाप्रयाण की कथा वर्णित है। इसकी भाषा अवधी है। यह दोहा, चौपाई, सोरठा और अन्य वृत्तों में लिखा गया है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं। लिपिकाल संवत् १९११ है।

१०—रामकंठाभरण—इसमें १०८ पद और कवित्तों में राम चरित्र का वर्णन है। इसमें सीताराम के विवाह तथा दांपत्य सुख की कथा का ही समावेश है। मुख्य विषय के अतिरिक्त रामभक्ति के भी अनेक पद हैं। पदों में आद्योपांत विषयानुकूल कोई क्रम नहीं। भाषा ब्रज है। रचनाकाल संवत् १८८९ और लिपिकाल संवत् १९२६ है। ग्रंथ साहित्यिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

रचयिता प्रयागनिवासी श्री संप्रदाय के वैष्णव थे। प्राचीन पत्रों (कागजातों) के आधार पर इनकी गुरु परंपरा इस प्रकार है :—

बाबा टहलदास
|
ज्ञानदास
|
रामदास
|
भागवत दास (रचयिता)
|
नारायण दास
|
सुदर्शनदास
|
हरिश्चंद्रदास (वर्तमान)
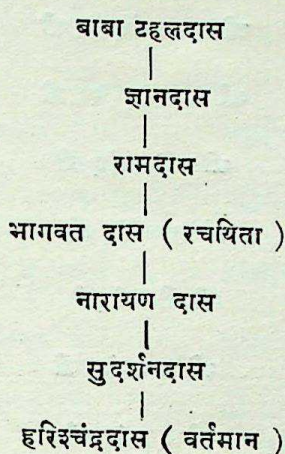
इनके जन्म अथवा मृत्यु का समय अद्यावधि निर्णीत है। इन्होंने 'भागवत चरित' की रचना संवत् १८६३ में मथुरा में आरंभ की जिसका ग्रंथ में उल्लेख है। इसके अतिरिक्त एक पुराने कागज से इनका सं० १८९७ वि० में होना सिद्ध होता है—'मिती पौष सुदी अमावस १५ वार मंगल संवत् १८९७ भूमि ठाकुर क चढ़ाई जिमीदार तिलहापुर के ठाकुर छोटू सिंह दुरगापुर मा महंत भागवतदास जी कौ बीगहा २८ दसखत छोटू सिंह।'

इससे सिद्ध होता है कि ग्रंथकार सं० १८६३ और १८९७ के बीच वर्तमान थे। ये परम साधु एवं सिद्ध महात्मा थे। इनका स्वभाव स्वच्छंद और विचारशील था। ये प्रयाग छोड़कर फतेहपुर जिले में चले गए थे जहाँ खजुहा तहसील के शिलावन गाँव में इन्होंने शिलावन कुटी की स्थापना की तथा यत्रतत्र कई तालाब खुदवाये।

सन् १९०९-११ के खोज विवरण में इनके 'रामरसायन' नामक ग्रंथ का विवरण लिया गया है, परंतु उसके आधार पर कवि का जो जीवनवृत्त दिया है उसका सार संक्षेप यह है—भागवतदास जी भगरौरा (जिला रायबरेली) के रामप्रसाद विप्र के पुत्र थे। वहाँ से प्रयाग आकर टहलदास बाबा की परंपरा में बाबा सीताराम जी के शिष्य हुए। ये सीताराम रामदास या सीतारामदास ही रहे होंगे।

१७४ भीखासाहब—ये अपनी रचना 'शब्दावली' के साथ पिछले खोज विवरण (२०-१८) में उल्लिखित हैं। उसके अनुसार ये सत्यनामी संत गुलाल साहब के शिष्य थे। जन्मस्थान खानपुर बोहना (जिला आजमगढ़) था। जाति के चौबे ब्राह्मण थे। बारह वर्ष की वय में इनके हृदय में रामभक्ति उत्पन्न हुई।

इस बार चिटबड़ा गाँव (बलिया) के महंत श्री राजाराम जी द्वारा इनके विषय में और बातें विदित हुई हैं जिसके अनुसार ये विरक्त होने पर गुरु के साथ भुड़कुड़ा (जिला गाजीपुर) में रहने लगे। पीछे गद्दी के महंत बने। इनकी गुरु परंपरा इस प्रकार है :—

श्री राघवानंद स्वामी
|
श्री रामानंद स्वामी
|
श्री अनंतानंद जी
|
श्री कृष्णानंद जी
|
श्री जोगानंदजी
|
श्री मायानंद जी
|
श्री दयानंद जी
|
श्री बावरी साहबा (स्त्री मुसलमान)
|
बीरू साहब (मुसलमान)
|
यारी साहब (,,)
|
बुला साहब

जगजीवनदास | गुलाल साहब

भीषासाहब
(देखिए दूसरे पृष्ठ पर)

हरलाल साहब
|
गजराज साहब
|
जीवन साहब
|
तेजधारी साहब
|
देवकी नंदन साहब
|
वनमाली साहब
|
वृजमोहन साहब
|
श्री राजारामजी (वर्तमान चिटबड़ागाँव)
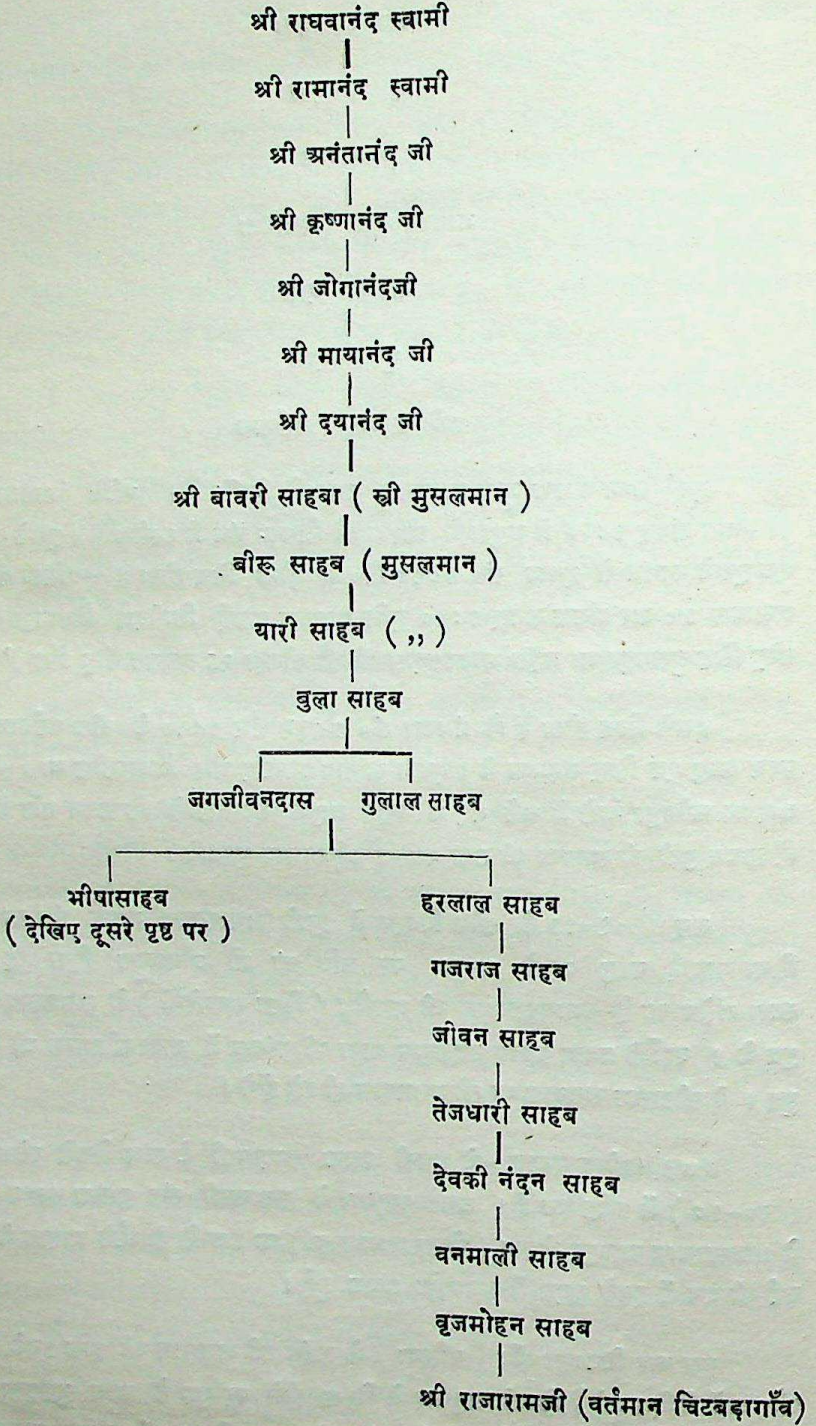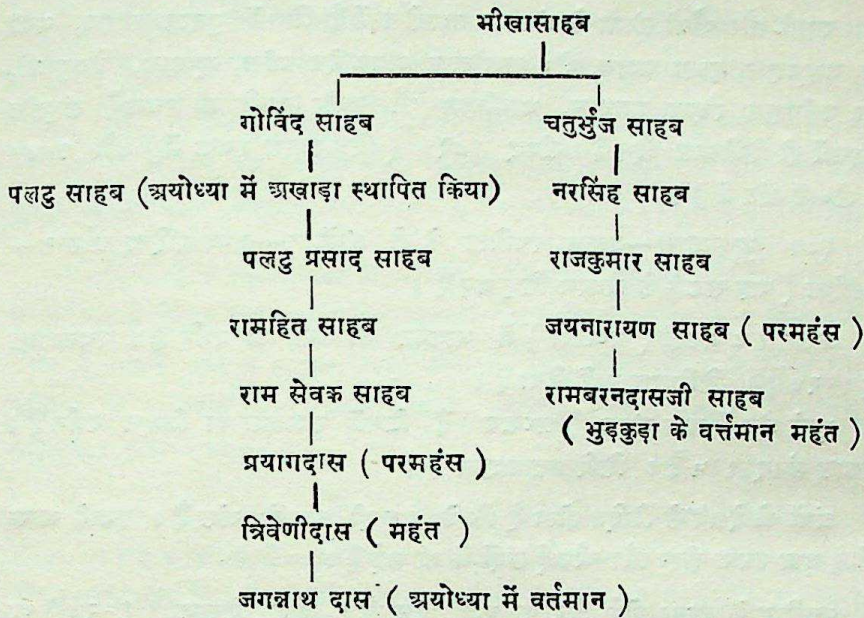
इससे यह पता चलता है कि प्रस्तुत खोज विवरण में आए बावरी साहबा, बीरू साहब, यारी साहब, बुल्ला साहब, गुलाल साहब आदि इन्हीं की गुरु परंपरा में हुए हैं।

प्रस्तुत खोज में इनके निम्नलिखित पाँच ग्रंथ और मिले है :—

१–ककहरा–रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १८३८ और १८४० हैं। विषय—'क' से लेकर 'ह' तक तथा 'अलिफ' से लेकर 'ए' तक के प्रत्येक अक्षर से आरंभ करके ब्रह्म ज्ञानोपदेश किया गया है।

२–नामपहरा—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १८६७। विषय—एक से लेकर दस तक के प्रत्येक अंक से आरंभ करके ज्ञानोपदेश किया गया है।

३–श्री रामकुंडलिया—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १८६७। विषय-सांसारिक माया मोह त्यागकर रामभजन करने का उपदेश।

४–श्री रामजी का सहस्र नाम—रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल संवत् १८३८ और १८४०। विषय-राम के सहस्रनामों का वर्णन।

५–रेखता—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १८६७। इसमें रचयिता ने आत्मकहानी लिखी है। संक्षेप में आत्मकहानी इस प्रकार है:—

'बारह वर्ष बीतने पर हृदय में रामभक्ति उत्पन्न हुई जो बहुत अच्छी लगी। उसके आगे खाना, पीना, घर, द्वार, स्त्री, पुत्र आदि सब नीरस जान पड़ने लगे। लोगों के कहने पर शांति के लिये षट्दर्शन पढ़े। काशी में भी रहा; परंतु सब व्यर्थ।

'अंत में चलते-चलते भुड़कुड़ा स्थान पर आया जहाँ श्री गुलाल साहब के घर पर चित्त शांत हुआ। साथ ही साथ आत्मज्ञान भी प्राप्त हुआ'।

पहली और चौथी संख्या के ग्रंथ एक हस्तलेख में हैं जिसमें गुलाल साहब, यारी साहब, मलूकदास, बुल्ला साहब, गो० तुरसीदास, नानक देव, मीरा, सूरदास, देवमुरारि, अनाथ, गरीबदास, रैदास, अग्रदास, धरनीदास और कबीर आदि की रचनाएँ संगृहीत हैं। इसमें दो लिपिकाल दिए हैं। संवत् १८३८ (विचारमाल रचना में) और १८४० (ह० ले० के अंत में)।

१७५ भुवनदास—प्रस्तुत रचयिता के दो ग्रंथों, १—कृष्ण संहिता और २—राम संहिता (यज्ञ खंड) के विवरण लिए गए हैं।

प्रथम में ८ मंडकों (अध्यायों) में भागवत की कथा का वर्णन है। रचनाकाल संवत् १९२४ है। लिपिकाल नहीं दिया है।

दूसरे ग्रंथ में सात मंडक (अध्याय) हैं जिनमें रामकथा का विस्तृत वर्णन है। रचनाकाल संवत्१९३५ है। लिपिकाल अज्ञात है।

ग्रंथों को देखने से विदित होता है कि ये एक ही ग्रंथ के अंश हैं। इनकी भाषा अवधी है तथा रचना दोहा और चौपाई छंदों में की गई है।

रचयिता ने अपना कोई विवरण नहीं दिया है। खोज विवरण (९-२८) पर आए भुवनदास से ये भिन्न हैं।

१७६ जनभुवाल—इनकी रची हुई 'अर्जुन गीता' खोज विवरण (१७-२७) पर आ चुकी है जिसकी एक प्रति इस बार भी मिली है। इसमें गीता का ही सार वर्णित है। रचनाकाल संवत् १७०० और लिपिकाल संवत् १८९८ वि० हैं। रचना दोहे, चौपाइयों में की गई है।

यह दो अन्य ग्रंथों, १—छप्पै रामायण (गो० तुलसीदास कृत), २—सुदामा चरित्र (हलधर कृत) के साथ एक हस्तलेख में है।

रचयिता का वृत्त इस बार भी अज्ञात ही है।

१७७ भूपराम—इनके 'सूर्य कथा' नामक ग्रंथ में सूर्य भगवान् की महिमा तथा उनके व्रत का फल वर्णित है। प्रसंगानुसार इसमें त्रिपुर, दैत्य, हलधर विप्र, रूप महेश, तथा जैमल विप्र की कथाएँ हैं। कथा का आरंभ उमा-महेश्वर-संवाद से हुआ है। रचनाकाल और लिपिकाल अप्राप्त हैं।

रचयिता के नाम का उल्लेख केवल एक स्थान पर है। कोई और परिचय नहीं मिलता। प्रस्तुत खोज में ये प्रथम बार ही विदित हुए हैं।

१७८ भृगुपति—इनका 'सुदामा चरित' मिला है। रचनाकाल का कहीं उल्लेख नहीं। लिपिकाल संभवतः हिजरी सन् में दिया है जो ११५९ शाल १८ रजव (रज्जब) रोज शुक्र है जिसके अनुसार संवत् १८०३ होता है। ग्रंथ की विशेषता यह है कि इसकी रचना खड़ी बोली में है जिसमें प्रांतीय शब्दों और ध्वनियों का भी समावेश है। यत्र तत्र फारसी के शब्दों का भी प्रयोग मिलता है। इसकी पूर्ण प्रतिलिपि कर दी गई है।

रचयिता ने अपना नाम ग्रंथांत में 'भीर्गपती' लिखा है जिसका शुद्ध रूप भृगुपति समझा गया है जो विवरण पत्र में दे दिया गया है। अन्य वृत्त नहीं मिलता।

१७९ मंडन—इनकी 'रसरत्नावली' की एक प्राचीन पूर्ण प्रति (संवत् १७८८ में लिपिबद्ध) का इस बार विवरण लिया गया है। इसमें रचनाकाल का कोई उल्लेख नहीं। इसका उल्लेख खोज विवरण (२०-१०३) (२३-२६५) (२६-२९२) में हो चुका है।

प्राप्त प्रति से रचयिता का कोई वृत्त नहीं मिलता; परंतु खोज विवरण (२०-१०३) के अनुसार ये जैतपुर (बुंदेलखंड) के निवासी और राजा मंगदसिंह के आश्रित थे। अपने समय के अच्छे कवि थे। पूरा नाम संभवतः मणि मंडन था। ये संवत् १७१६ में वर्तमान थे। इनकी एक रचना 'जनक पचीसी' खोज विवरण (६-७२) में उल्लिखित है।

१८० मकरंद हित—'इनकी 'मकरंद वाणी' में 'पद' तथा 'रतिरण केलि लता' नामक रचनाएँ संमिलित हैं। विशेषता पदों की ही है। कहीं कहीं सवैया आदि भी हैं जो अपवादस्वरूप हैं। इसमें श्री राधाकृष्ण जी के रास विलास तथा हित हरिवंश जी का यश वर्णित है। रचनाकाल संवत् १८१८ और लिपिकाल संवत् १८२५ है।

रचयिता का विशेष जीवनवृत्त नहीं मिलता। रचनाकाल के आधार पर ये संवत् १८१८ में वर्तमान थे।

१८१ मगनिया—इनका 'मगनिया रा दूहा' नामक नीति और धर्मविषयक चौवालीस सोरठों का संग्रह विवृत हुआ है। इनका कोई परिचय नहीं मिलता, परंतु सोरठों की भाषा राजस्थानी होने से ये राजस्थानी जान पड़ते हैं।

सोरठों का रचनाकाल तथा लिपिकाल अज्ञात है।

१८२ मतिराम—इनका उल्लेख विवरण में संख्या १६ पर विस्तृत रूप से हो चुका है अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

१८३ (मन) संतोष—'विषहरन विधि' नामक रचना में अनेक प्रकार के विषों की औषधों का वर्णन है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं है, लिपिकाल संवत् १९२० है।

रचयिता का नाम 'संतोप' है। कहीं कहीं 'संतोष चदेरी' का उल्लेख है।

'संतोष चदेरी वैद तावै।'

'चदेरी' कदाचित् स्थान का नाम है। एक चंदेरी ग्वालियर में है। अन्य विवरण अज्ञात है। खोज विवरण (६-३२४) में उल्लिखित 'विपनाशन' के रचयिता संतोष से ये अभिन्न जान पड़ते हैं। उक्त विवरण में ग्रंथ से उद्धरण नहीं दिये गये हैं, इसलिये पूरा मिलान नहीं हो सका।

१८४ मनिवेद या वेदमनि वेद—प्रस्तुत रचयिता के शृंगार और भक्ति विषयक कवित्तों तथा कुछ पदों का एक संग्रह 'कवित्त' नाम से विवृत हुआ है। इसके रचनाकाल और लिपिकाल अप्राप्त हैं। रचना साहित्यिक है।

रचयिता ने अपने नाम के लिये अधिकतर 'वेदमनि' लिखा है। कहीं कहीं 'मनिवेद' या 'वेद' भी नाम आए हैं।

अन्य परिचय नहीं मिलता। इनका पता प्रथम बार ही लगा है।

१८५ मनिराम—इनके कवित्तों के दो संग्रह 'मनिराम के कवित्त' और 'पातिसाहि कवित्त साहिजहाँ के' नाम से प्रस्तुत खोज में विवृत हुए हैं। प्रथम में दो सौ छह कवित्त हैं और दूसरे में दो सौ चार। रचनाकाल तथा लिपिकाल किसी में नहीं दिए हैं। दोनों के आरंभ के कवित्त एक ही हैं, अतः विदित होता है कि ये मूल संग्रह की दो भिन्न-भिन्न प्रतियाँ हैं। कवित्तों के विषय में उल्लेखनीय बात यह है कि इनके अधिकांश कवित्तों में 'मनीराम' की छाप नहीं है तथा संख्या में क्रम का अभाव है। बहुत ही थोड़े कवित्त ऐसे हैं जिनमें काव्य की प्रौढ़ता पाई जाती है।

कवित्तों का मूल विषय शाहजहाँ और उसके दरबार के राजपुरुषों की प्रशंसा है। इसके अतिरिक्त कुछ कवित्तों का विषय देवी, शिव और कृष्णभक्ति तथा भ्रमर गीत आदि हैं।

शाहजहाँ के विषय के कवित्तों में उसके बसाये दिल्ली और शाहजहाँनाबाद नगरों का भी वर्णन है। शेष में निम्नलिखित राजपुरुषों के वर्णन हैं:—

१—फिरोज खाँ (कवित्त संख्या २, २५, २६)
२—मुदफर हुसैन (क० सं० ११, १७, १८, ३६, ३७, ७०, ७४)
३—मिरजा साहब शेख फुल्लह (क० १२)
४—वहमनियार खाँ (आसफ खाँ के पुत्र क० सं० २४)
५—इतराद खाँ (आसफ खाँ के पुत्र क० सं० ६६)
६—मिरजा मुतलिब (क० सं० ३०, ३१)
७—दारा शिकोह (क० सं० ३२, ५६, ७२, ७१)
८—तरवियत खाँ (क० सं० ३५)
९—निजावत खाँ (क० सं० ६३, ६४)
१०—असालत खाँ (क० सं० ६७)
११—आसफजाह (क० सं० १६३, १६७)
१२—माथुर मुकुंदराय (क० सं० १६८)
१३—जयसिंह (क० सं० ५३, ५४, ५५)
१४—कुँवर अमरसिंह (राजा जयराम के पुत्र क० सं० ३३)
१५—मित्रसेन (क० सं० १३)
१६—सदारंग (क० सं० १४)

ऊपर कवित्तों की संख्याएँ दूसरे संग्रह (पातसाही कवित्त साहिजहाँ) के अनुसार दी गई हैं ।

रचयिता असनी के महापात्र नरहरि के वंशज थे। इनकी वंशावली इस प्रकार है (अन्वेषक ने पता लगाकर यह वंशावली दी है :—
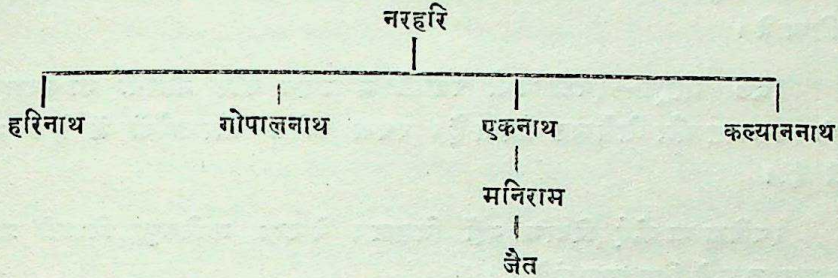
प्रथम संग्रह (मनिराम के कवित) में इनके पुत्र जैत (जेतसिंह महापात्र) का जन्मांग दिया है जिसमें उनका जन्मसंवत् १७०३ का उल्लेख है। अतः इनका समय लगभग यही माना जाना उचित है, देखिए प्रस्तुत खोज विवरण में जैतसिंह महापात्र ।

ये शाहजहाँ के समकालीन और उनके दरबार से संबद्ध थे। प्रस्तुत कवित्तों से स्पष्ट है कि न केवल बादशाह अपितु वजीर, सेनापति तथा अन्य राजन्यवर्ग भी हिंदी कविता के प्रेमी और कवियों के आश्रयदाता थे। खोजविवरण (६-२९०) में 'आनंद मंगल' के रचयिता एक मनिराम का उल्लेख है। पर यह नहीं कहा जा सकता कि वे प्रस्तुत से भिन्न हैं अथवा अभिन्न ।

१८६ मनोहरदास—इनका प्रस्तुत ग्रंथ 'श्री राधिकारमण रससागर' या 'राधा रमणरस सागर' पिछले दो खोज विवरणों (९-१०१) (१२-१०६) में उल्लिखित है। अबतक इनका विवरण अज्ञात था। इस बार इनके संबंध में जो कुछ विदित हुआ वह यों है :—

ये श्री माध्व गौड़ेश्वर संप्रदायानुयायी श्री राधारमण मंदिर वृंदावन में रहते थे। इन्होंने अपनी गुरु परंपरा इस प्रकार दी है :—
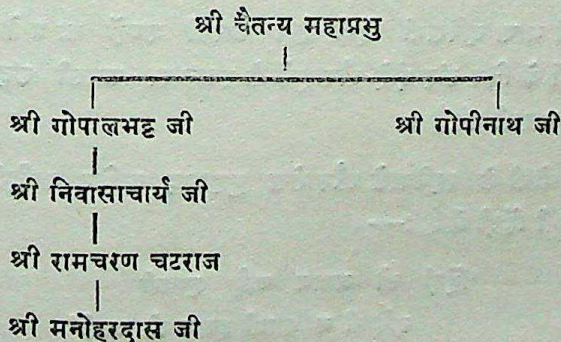
विवरण पत्र में उद्‌धृत पाँचवें छप्पय से विदित होता है कि श्री हरिनाथजी, श्री मथुरादास जी तथा श्री हरिरामजी इनके पूर्वज थे।

वृंदावन के निवासी तथा गौड़ेश्वर संप्रदायानुयायी श्री किशोरदास बाबा द्वारा पता चला कि सुप्रसिद्ध भक्तमाल के टीकाकार श्री प्रियादास जी इन्ही मनोहरदास जी के शिष्य थे।

१८७ मलूक—इनकी 'उधौ पचीसी' में उद्धव और गोपियों का संवाद है। इसके रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। रचना कवित्त और सवैयों में है। भाषा व्रजी है।

रचयिता का कोई विवरण नहीं मिलता। ये कड़ा मानिकपुर निवासी प्रसिद्ध संत मलूकदास से भिन्न ज्ञात होते हैं।

१८८ मलूकदास—'प्रगटज्ञान' के ये रचयिता कड़ा मानिकपुर निवासी प्रसिद्ध मलूकदास हैं। ग्रंथ में विवेक, घटसाधन, विचार, जगतकारन, आत्मदेह, मुक्ति, अनात्म-अनाम, ज्ञान-जोग आदि विषय वर्णित हैं। रचनाकाल और लिपिकाल, अज्ञात हैं। रचना दोहे चौपाइयों में की गई है। भाषा अवधी है। 'कथा प्रगट ग्यान गरंथ संसकीरत में अनभा' से पता चलता है कि ग्रंथ का आधार कोई संस्कृत ग्रंथ है।

१८९ काजी महमूद बहरी—इनका 'मनलगन' ग्रंथ सूफी दर्शन विषयक रचना है। आरंभ में क्रम से ईश्वर वंदना, मुहम्मद साहब की वंदना, सामयिक सम्राट् (बादशाह औरंगजेब) की प्रशंसा, गुरु की वंदना और पुस्तक लिखने के कारण आदि वर्णित हैं। पश्चात् मूल विषय आरंभ होता है जिसका प्रतिपादन कहानी और उपदेश के क्रम से किया गया है। अर्थात्—पहले कहानी के रूप में कोई दृष्टांत दिया गया है तब उसका निष्कर्ष समझाया गया है। रचना हिजरी सन् के अनुसार बारहवीं सदी की है :—

'हे भाई यो बारवीं सदी है।
नेकी को दवा बंदी वदी है॥'

पुस्तक की भाषा दक्खिनी हिंदी है। फारसी शब्दों का प्रयोग स्वतंत्रता पूर्वक हुआ है। सूफियों के प्रिय छंद दोहे-चौपाइयों के स्थान पर फारसी छंद ही लिए गए हैं। रचना शैली भी फारसी की है।

रचयिता गोगी के रहनेवाले और शेख मुहम्मद वाकिर कादिरी के शिष्य थे। ग्रंथ रचना दक्खिनी हिंदी में है :—

'हिंदी तो जवान चाहै हमारी
दखिनी न लागी हमन को भारी'

दखिनी, हिंदी का ही विशेष रूप है जिसको वहाँ के नबाबों तथा राजवर्ग ने अपने ढंग पर पाला पोसा था। इसमें क्रमशः अधिक से अधिक विदेशीपन लाने की चेष्टा की गई।

रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं मिलता, परंतु रचयिता ने औरंगजेब और हिजरी की १२ वीं सदी का उल्लेख किया है, अतः रचना भी उसी समय की है।

१६० महादेव—इनका नाम सिद्धों के साथ आया है तथा इनकी 'वाणियों' के विवरण भी लिए गए हैं, देखिये 'सिद्धों की वाणी का विवरण पत्र और गोरखनाथ संख्या ५९ तथा विवरण अंश में संख्या १।

१६१ माखन—इनका 'श्री नाग पिंगल' छोटा सा ग्रंथ है जिसमें पिंगल विषय का अत्यंत संक्षेप में वर्णन है। इसमें रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है।

प्रस्तुत ग्रंथ सैय्यद कासिम अली प्रधान अध्यापक नार्मल स्कूल छुईखदान स्टेट से प्राप्त हुआ है। इसके भीतर उनका लिखा एक पत्र भी है जिससे रचयिता तथा उनके पिता गोपाल के विषय में कुछ बातें विदित होती हैं। पत्र से ये अंश ज्यों के त्यों उद्धृत किये जाते है :—

'ये दोनों कवि (रचयिता और उनके पिता गोपाल) छत्तीसगढ़ मध्यप्रांत (अब मध्यप्रदेश) के प्रमुख गण्यमान्य धुरंधर कवि हो गये हैं। पं० लोचनप्रसादजी पांडेय ने दिसंबर १४ की हितकारिणी में इन दोनों कवियों की जीवनी दर्शाते हुए उनकी लिखी पुस्तकों पर प्रकाश डाला था। इनकी कई पुस्तकें बड़े बड़े राजाओं ने प्रकाशित करा दी हैं। अब ये दो (श्री नाग पिंगल और विनोद शतक जो सभा में भेजे गये हैं) और मिली हैं जो अभी तक भी प्रकाशित न हो सकीं।

'गोपाल कवि, रतनपुर (बिलासपुर) के रहनेवाले थे। इनके पिता का नाम गंगाराम था और पुत्र का नाम माखन। इन दोनों, पिता पुत्रों ने कविता में कई ग्रंथ रचे। इनका कविता काल संवत् १७५९ व सन् १७०२ दृष्टिगोचर हुआ है। इनके ७ मुख्य मुख्य कविता ग्रंथ इन समेत मिल चुके हैं।

१—भक्त चिंतामणि–२५० पृष्ठ काकेर नरेश ने प्रकाशित करा दी।

२—रामप्रताप–पं० जयलालजी ने मुद्रित करा दी।

३—जैमिनी अश्वमेध–खैरागढ़ नरेश ने प्रकाशित करा दी।

४—खूब तमाशा-प्रकाशित हो गया।

५—सुदामाचरित्र—प्रकाशित नहीं हुआ।

६—छंद विलास—

७—विनोद शतक—

'इनके ग्रंथों में राजसिंह राजा का वर्णन आया है। ये राजसिंह राजा संवत् १७५६ से १७७६ तक शासन करते रहे हैं, छंद विलास से यही पता चलता है। राजसिंह रतनपुरा के राजा थे जो आज बिलासपुर के अन्तर्गत है। और ग्रंथों में रायपुर का प्रकाश दीखता

है। इससे मालूम होता है कि रायपुर का राजवंश रत्नपुरा के घराने का है राजसिंह के कोई संतान (?न) हुई—इससे रायपुर में सम्मिलित हो गया हो, और गोपाल व माखन कवि इनके चाणक थे इससे वह भी रायपुर आ गये हों या ग्रंथ के अंत में रायपुर आ गये हो—जो कुछ भी हो।

'इन ग्रंथों का एक महत्व और भी उल्लेखनीय है कि **माखन कवि ने ग्रंथ रचेपर पितृभक्ति स्त्रेण (?) के कारण उन्हीं के पिता के नाम पर इति ग्रंथ किया गया है।**

'राजा राजसिंह हैहयवंशीय थे और बड़े प्रजाभक्त और विद्यानुरागी तथा विद्वानों का आदर करनेवाले थे।'

ऊपर बड़े अक्षरों वाला अंश विचारणीय है। इस विषय में देखिए प्रस्तुत खोज विवरण में 'गोपाल'।

प्रस्तुत ग्रंथ गोपाल कवि के विनोदशतक, शृंगारशतक, कीर्तिशतक, पुण्यशतक, वीरशतक और कर्मशतक के साथ एक हस्तलेख में है।

रचयिता गोपाल कवि के पुत्र, राजा राजसिंह के आश्रित और रायपुर के रहनेवाले थे। ये आजतक की खोज में मिले इस नाम के अन्य रचयिताओं से भिन्न हैं।

१९२ माखनदास—माखनदास द्वारा रचित 'दोहावली' का विषय ज्ञान, भक्ति और वैराग्य है। आरंभ में गुरु की महिमा है पश्चात् रामनाम का माहात्म्य और अंत में राम के शील तथा भक्तवत्सलता का वर्णन। रचनाकाल प्राप्त नहीं। लिपिकाल संवत् १८६१ है। रचना साधारण है।

रचयिता राममार्गी वैष्णव जान पड़ते हैं। खोज में नवोपलब्ध हैं।

१९३ माणक प्रस्तुत शोध में इस कविकृत 'माणकबोध या आत्मविचार' का विवरण लिया गया है। यह आत्मज्ञान विषयक प्रौढ ग्रंथ है। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १९१५ दिया है। इसमें चार प्रकरण हैं।

इसकी टीका भी की गई है जो रचयिता से भिन्न व्यक्ति द्वारा की गई विदित होती है :—

'यो प्रकर्ण आपकी (आत्मा की संभवतः) विशुद्धि के लिये कीयो है कछु कीर्त्यादि के लिए नहीं कीयो है। ऐसो आपको अभप्राय कवित्त में दिखावै है।'

मूल कवित्त-सवैयों में है और टीका गद्य में। ग्रंथ अपूर्ण है तथा लिपिकर्त्ता के लिपिदोष से अत्यंत अशुद्ध है।

रचयिता तथा टीकाकार में से किसी का भी परिचय नहीं मिलता। खोज विवरण (३८-९७) में आए 'माणक पदावली' के रचयिता भी संभवतः ये ही हैं। 'माणक पदावली' का विषय भी ज्ञान ही है।

१९४ माधौदास—इनका वृत्त उपलब्ध नहीं होता। अन्य खोजविवरणों में आए इस नाम के रचयिताओं से ये भिन्न हैं या अभिन्न, इसका भी पता नहीं चलता।

इनकी प्रस्तुत रचना 'करुणाष्टक' का विषय कृष्णस्तुति है। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। रचना साधारण है।

१९५ माधोदास--ये 'दानलीला' के रचयिता हैं। इनके संबंध में कोई विवरण नहीं मिलता। साथ ही यह भी प्रकट नहीं होता कि अन्य खोजविवरणों में आए इस नाम के रचयिताओं के साथ ये किसी प्रकार का साम्य रखते हैं अथवा नहीं।

प्रस्तुत रचना का विषय नाम से ही स्पष्ट है। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। रचना साधारण है। भाषा राजस्थानी है।

१९६ माधोदास—इनकी 'रथलीला' में जगन्नाथ जी की रथयात्रा का वर्णन है। इसमें रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। रचना साधारण है।

रचयिता का भी कोई परिचय नहीं मिलता। रचना द्वारा ये वल्लभ संप्रदाय के ज्ञात होते हैं।

खोज विवरण (२९-२१६) (३८-९२) में आए माधोदास से ये भिन्न हैं या अभिन्न, इसका कोई निश्चय नहीं होता।

१९७ माधौदास—इनकी 'पदावली' में राम और कृष्ण की भक्ति विषयक फुटकल पद हैं। रचनाकाल अविदित है। लिपिकाल हस्तलेख में लिपिबद्ध अन्य ग्रंथ के आधार पर संवत् १८०७ है। पदों की भाषा व्रजी है। प्रस्तुत पदों से रचयिता के विषय में कुछ ज्ञात नहीं होता। अन्य खोज विवरणों में आए इस नाम के रचयिताओं से इनका साम्य स्थापित करने का कोई सूत्र नहीं मिलता। प्रथमपद से इनका वृंदावन के प्रति अनुराग लक्षित होता है। संभव है ये वहीं रहते रहे हों।

१९८ माधोसिंह (छितिपाल या छितिपालक उपनाम)—इन्होंने संवत् १९१३ में 'मनोजलतिका' नामक ग्रंथ की रचना की। रचना में नखशिख का वर्णन है। इसकी प्रस्तुत प्रति में लिपिकाल नहीं दिया है।

रचयिता ने अपना जो विवरण दिया है उसके अनुसार ये अमेठी के राजा थे और रामनगर में रहते थे। ये बंधुल गोत्री एवं सूरजकुल कछुवाहा ठाकुर थे। खोज विवरण (२३-२५६) में ये 'देवी चरित्र सरोज' के रचयिता के रूप में उल्लिखित हैं। डाक्टर ग्रियर्सन ने इनका सन् १८८३ में जीवित रहना लिखा है।

१९९ मानमुनि—ये 'मान बतीसी' के रचयिता हैं। नाम से ये जैन विदित होते हैं। ये संवत् १७३१ में वर्तमान थे। अन्य परिचय नहीं मिलता। 'कविप्रमोदरस' नामक वैद्यक ग्रंथ के एक रचयिता मानजी मुनि का खोज विवरण (२०-१०१) में उल्लेख है। परंतु यह पता नहीं चलता कि वे प्रस्तुत रचयिता से भिन्न हैं अथवा अभिन्न। दोनों के ग्रंथों का विषय अलग अलग होने से उन्हें एक मानने में अड़चल है। यद्यपि दोनों का समय लगभग एक ही है तथा दोनों ही राजस्थानी विदित होते हैं। मान जी मुनि संवत् १७४६ में वर्तमान थे।

'मानबत्तीसी' संयोग शृंगार विषयक रचना है। यह तीन अध्यायों (उन्मादों) में है। रचनाकाल संवत् १७२१ है। लिपिकाल नहीं दिया है।

२०० मीड़कीपाव—मीड़कीपाव का नाम सिद्धों के साथ आया है। इनकी कुछ 'वाणियाँ' प्राप्त हुई हैं जिनके लिये देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १। समय और विशेष परिचय अज्ञात हैं।

२०१ शाह मीरानजी—'शाहीदतुल तहकीक' नामक इनके ग्रंथ का विषय तसव्वुफ अर्थात् सूफी दर्शन है। इसमें क्रम से ईश्वर वंदना, मुहम्मद साहब की प्रशंसा गुरु या पीर का स्मरण और उपदेश आदि का वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल में से किसी का उल्लेख नहीं है। इसकी भाषा यद्यपि हिंदी है, फिर भी उसमें फारसी के काफी शब्द मिश्रित हैं। हिंदी के अंतर्गत इसे उन रचनाओं में संमिलित करना चाहिए जिनके सहारे उर्दू का विकास हुआ। उर्दू साहित्य की प्रारंभिक रचनाएँ अधिकांश इसी ढंग की हैं। इसकी भाषा में एकरूपता का नितांत अभाव है।

रचयिता का कोई वृत्त नहीं मिलता।

२०२ बारैठ मेंदरामजी—प्रस्तुत खोज में इनकी 'अयोध्या पच्चीसी' और 'मिथिला पच्चीसी' नामक दो रचनाओं का विवरण लिया गया है जिसका एक ही विवरण पत्र है। ये रचनाएँ रसखान के कवित्तों के साथ एक हस्तलेख में हैं। रचनाकाल का उल्लेख नहीं है। लिपिकाल संवत् १७९६ है।

रचयिता के नाम के आगे 'बारैठ' शब्द लगा हुआ है जिससे ये राजपूताने की ओर के रहनेवाले विदित होते हैं। लेकिन इनकी भाषा से इनका कोई पुष्ट प्रमाण नहीं मिलता। विशेष परिचय अज्ञात है।

२०३ मोहनलाल—इनके 'नेमनाथ व्याहला' नामक (जैन) ग्रंथ का प्रस्तुत खोज में विवरण लिया गया है। ग्रंथ में जिनदेव नेमिनाथ और राजमती के विवाह का मनोरंजक वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं है।

रचयिता के विषय में ग्रंथ से कुछ भी विदित नहीं होता।

२०४ मोहन सुंदर—प्रस्तुत त्रिवर्षी में मोहन सुंदर कृत 'फूल बत्तीसी' का विवरण लिया गया है। इस ग्रंथ में वसंत आदि विभिन्न ऋतुओं के बत्तीस दोहे हैं तथा कृष्ण रुक्मिणी संवाद और राधा अंग वर्णन आदि विषय है। रचना राजस्थानी भाषा में है। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है।

रचयिता राजस्थानी भाषा में रचना करने के कारण राजस्थानी विदित होते हैं। विशेष वृत्त नहीं मिलता।

२०५ यारी साहब—इनके प्रस्तुत खोज में तीन ग्रंथ, १—इयारी (यारी) साहब के शब्द, २—रमैनी और ३—राम के ककहरा विवृत हुए हैं। इनके विषय आदि का विवरण क्रमशः यों है :—

१—इयारी (यारी) साहब के शब्द—इसमें निर्गुण भक्ति का वर्णन है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८६७ है।

२—रमैनी—इसमें आत्मज्ञान का वर्णन है। रचनाकाल का तो पता नहीं, लिपिकाल संवत् १८६७ वि० है।

३ राम के ककहरा—इसमें फारसी लिपिमाला के 'अलिफ' से लेकर 'ए' तक के अक्षरों पर कविता करके ज्ञानोपदेश किया गया है। रचनाकाल का कोई उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १८६७ वि० है।

ग्रंथों द्वारा रचयिता की जीवनी का कुछ भी पता नहीं चलता। इनके ये हस्तलेख बलिया के महंत राजाराम जी के यहाँ प्राप्य हैं जिनके कथनानुसार यारी साहब (श्री बीरू साहब के शिष्य) दिल्ली में रहते थे। इनके शिष्य श्री बुल्ला साहब, केशवदास, शाह फकीर और हस्त मुहम्मद शाह थे। ये पहुँचे हुए सिद्ध थे। इनकी रचनाओं से इनके गंभीर चिंतन का पता चलता है। कहते हैं ये शाही घराने के मुसलमान थे। विशेष के लिये देखिए 'बावरी साहबा' का विवरण और विवरण अंश में संख्या २।

२०६ युगलानन्यशरण—प्रस्तुत रचयिता के २३ ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं जिनका क्रमशः विवरण यों है:—

१—अर्थ पंचक—इसमें छः अध्याय (विवेक) हैं जिनमें रामनाम का माहात्म्य, व्याकरण संमत 'राम' शब्द का अर्थ और वेदांत के सिद्धांतों का प्रतिपादन है। रचनाकाल अविदित है, लिपिकाल संवत् १९३७ वि० है।

२—उपदेश नीतिशतक—नीति का आश्रय लेकर सूक्तियों के रूप में उपदेश है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

३—जानकी सनेह हुलास शतक—इसमें सीताराम के प्रत्येक अक्षरों पर ककहरा पद्धति पर अलग अलग दोहे लिखे गए हैं। फिर जानकी जी की महिमा, उनका स्वरूप तथा उनके प्रताप आदि का वर्णन है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९२२ वि० है।

४—नवल अंग प्रकाश—इसमें श्री रामचंद्रजी के नखशिख का वर्णन है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९२२ है।

५—नाम परत्व पंचासिका—इस ग्रंथ में रामभक्ति की महत्ता तथा उपदेश वर्णित है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९२२ है।

६—निंदक विंसतिका—इसमें निंदकों की स्तुति है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९२५ है। इसके दोहे साहित्यिक दृष्टि से बहुत अच्छे हैं।

७—निंदकविनोदाष्टक—इसमें निंदकों की निंदा की गई है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९२५ है।

८—प्रकाशभक्ति रहस्य—इसमें रामभक्ति की महत्ता और कुछ उपदेश हैं। रचनाकाल का कोई उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १९२२ है।

९—प्रश्नोत्तरी प्रकाश-संस्कृत के प्रश्नोत्तरी ग्रंथ का अनुवाद है। इसमें गुरु शिष्य संवाद के रूप में आध्यात्मिक विषय का वर्णन है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९२२ है ।

१०—फारसी झूलना-फारसी वर्णमाला के प्रत्येक अक्षर पर ककहरा पद्धति से झूलना छंदों की रचना कर रामचरित्र वर्णित है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १९२२ दिया है।

११—मणिमाला-इसमें राम नाम माहात्म्य की कथा एवं रामचरित्र वर्णित हैं। रचनाकाल का उल्लेख नहीं है, लिपिकाल संवत् १९२२ दिया है।

१२—मनबोध शतक-मन को संबोधित कर इसमें ज्ञानोपदेश किया गया है। रचनाकाल का कोई उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १९२२ दिया हुआ है।

१३—मोद चौंतीसी-नागरी वर्णमालानुक्रम से ककहरा पद्धति पर राम का यश वर्णित है। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं।

१४—वरन उमंग-इसमें नागरी वर्णमालानुक्रम से सीताकुंड (अयोध्या) की महिमा वर्णित है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं लिपिकाल संवत् १९२१ है।

१५—वरनमाला-अक्षरानुक्रम से रामनाम माहात्म्य का वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल के उल्लेख नहीं हैं।

१६—वरन विचित्र-प्रस्तुत ग्रंथ में अक्षरानुक्रम से रामनाम और रामचरित्र की महिमा वर्णित है। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १९२२ दिया है।

१७—वरन विहार-रामभक्ति का उपदेश है। रचनाकाल नहीं दिया है, परंतु लिपिकाल संवत् १९२१ है।

१८—वरनबोध-प्रस्तुत ग्रंथ में रामभक्ति और उसकी महिमा का वर्णन है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १९२२ है।

१९—वरवा विलास भावना रहस्य-इसमें श्री सीताराम का प्रेम और रहस्य वर्णित है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १८२२ है। काव्य की दृष्टि से ग्रंथ उत्तम है।

२०—वर्णविचार-वर्णमालानुक्रम से प्रत्येक अक्षर पर दोहे चौपाइयों में ज्ञानोपदेश है। रचनाकाल का कोई उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १९२२ दिया हुआ है।

२१—विरति विनोद-अक्षरानुक्रम से दोहों में वैराग्य का उपदेश है। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १९२१ दिया है।

२२—विरति शतक-भीष्म और पांडवों के संवाद रूप में सांसारिक माया मोह त्यागकर भक्ति साधन का उपदेश है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १९२२ है।

२३—संतविनयशतक-भक्तमाल के ढंग पर संतों का माहात्म्य वर्णित है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल सं० १९२२ है।

रचयिता संक्षिप्त विवरण के परिशिष्ट $\left(\frac{\text{ज-प (२)}}{\text{६२}}\right)$ में आए युगलानंद-शरण ज्ञात होते हैं। उसमें इन्हें अयोध्या का महंत कहा गया है तथा संवत् १९०४ से लेकर संवत् १९३५ तक इनके वर्तमान होने का उल्लेख है। 'प्रश्नोत्तरी प्रकाश' की पुष्पिका से ज्ञात होता है कि ये महंत जीवाराम के शिष्य और रामवल्लभ के गुरु थे जिन्होंने प्रायः इनके सब ग्रंथों की प्रतिलिपि की है। इनके अयोध्या प्रभृति स्थानों में कई मठ भी हैं।

२०७ रघुनाथ—प्रस्तुत त्रिवर्षी में इनकी 'देवी जी के छप्पय' नामक रचना मिली है जिसमें देवी की स्तुति की गई है। समस्त रचना छप्पय वृत्तों में है। प्रत्येक छप्पय में 'रघुनाथ' की छाप पाई जाती है। साहित्यिक दृष्टि से रचना सुंदर है। रचना-काल और लिपिकाल दोनों अप्राप्त हैं।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और वृत्त नहीं मिलता। पिछले खोज विवरणों में आए इस नाम के अन्य रचयिताओं से ये भिन्न हैं।

२०८ महाराज रघुराज सिंह—प्रस्तुत खोज में इनके 'रघुराज विलास' नामक ग्रंथ का विवरण लिया गया है। जिस हस्तलेख में यह ग्रंथ है उसमें इनके 'विनय पत्रिका' और 'यदुराज विलास' नामक दो ग्रंथ और संगृहीत हैं जो पिछले खोज विवरणों में आ चुके हैं (००–४६) (००–४९)। इनके अन्य ग्रंथों के लिये देखिए (००–४५) (१–७) (२६–२७१ बी) (३–१७; १८) (४–८२) (९–२३७)।

प्रस्तुत रचना के मंगलाचरण में ही इसके विषय का संकेत है। उसमें राम और कृष्ण दोनों की वंदना की गई है जिससे स्पष्ट हो जाता है कि इसमें रचयिता ने सब अवतारों के चरित्र का समावेश किया है। इसमें 'राम' दाशरथीराम के ही अर्थ में नहीं प्रत्युत् ब्रह्म के भी अर्थ में प्रयुक्त हैं। इसकी रचना पदों में हुई है जिनकी भाषा व्रज है। रचनाकाल अविदित है, लिपिकाल संवत् १९२९ है।

रचयिता संक्षिप्त विवरण के अनुसार रीवाँ नरेश महाराज विश्वनाथ सिंह के पुत्र थे। इनका राज्यकाल संवत् १९११ से १९३७ तक था। जन्मकाल का संवत् १८८० है। रामानुजदास के ये शिष्य थे और स्वामी मुकुंदाचार्य इनके दीक्षा गुरु रहे। इनके दरबार में विद्वान् लोग विशेष आश्रय पाते थे। संगीत विषयक इनकी रचनाओं को मनन करने से ज्ञात होता है कि इन्हें संगीत से भी अनन्य प्रेम था।

२०९ रघुवर—इनकी कृति 'प्रेम प्रमोद' का विवरण लिया गया है जिसमें सखियों द्वारा राधा कृष्ण के प्रेम का वर्णन है। यह साधारण कोटि की रचना है। इसमें अनुप्रास और यमक का अधिक आश्रय लिया गया है। 'सारंग ने सारंग गह्यो सारंग पहुँच्यो आइ' की तरह दृष्टिकूटक कविता विशेष है। निम्नलिखित उद्धरण उदाहरण स्वरूप दिया जाता है :—

'कमलापति के कर वसैं, प्रथम अंक बिलगाय।
हर रिपु वनिता एक करि, हरि ढिग देहु लगाय॥

रचना दोहों में है जिनकी संख्या १०१ है। रचनाकाल संवत् १९२९, फसली सन् १२८० है :—

सन बारह से असी है; संवत देहु बताय।
वोनइस सै वोनतीस में सो लिखि कहेउ बुझाय॥

रचयिता ने अपना कुछ परिचय दिया है जिसके अनुसार ये बरेली जिला के अंतर्गत इथौना परगना के जुगराजपुर ग्राम के निवासी थे। यह ग्राम राजापुर ताल्लुका में बताया गया है। ये कायस्थ जाति के थे। प्रस्तुत विवरण में आए रघुवर सखा से ये भिन्न हैं।

२१० रघुवर सखा—प्रस्तुत खोज में इनके ग्रंथ 'प्रेमधारसागर' की दो प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। ग्रंथ में श्री कृष्ण चरित्र जन्म से लेकर उद्धव संवाद तक का वर्णन संक्षेप में है। रचना पदों में है और काव्य की दृष्टि से सुंदर है। शैली सूरसागर की पद शैली है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता का विशेष वृत्त नहीं मिलता। ये खोजविवरण (२३—३३३) में उल्लिखित रघुवरदास उपनाम 'रघुवर सखा' से अभिन्न ज्ञात होते हैं। उक्त खोज विवरण के अनुसार ये जाति के सुराऊ तथा मिरजापुर स्थान (बहराइच जिला) के निवासी थे। जन्मकाल सन् १८०३ ई० और मृत्युकाल सन् १८८६ ई० है।

२११ रजब जी—इनकी 'फुटकर साखी' और 'कायावेली' के विवरण लिए गए हैं। दोनों रचनाएँ एक ही साथ हैं। इनका विषय निर्गुण ब्रह्म की चरचा है। 'कायावेली' में दिखलाया गया है कि जो ब्रह्मांड में है वही पिंड (शरीर) में है। शरीर के रहस्यों को जानने और अनहद नाद एवं आनंद की अनुभूति के लिये सद्गुरु की परमावश्यकता है आदि। इसमें ब्रजभाषा गद्य का प्राचीन उदाहरण मिलता है। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं, परंतु हस्तलेख प्राचीन जँचता है।

रचयिता दादूदयाल जी के शिष्य थे जिसका पता 'कायावेली' के एक उद्धरण से चलता है—'दादू प्रगट पी मिले।' अतः इनका समय दादू के समय के निकट हो सकता है।

रजब के ग्रंथों के साथ एक ही हस्तलेख में उनके गुरु की बानी भी लिपिबद्ध है। इनके कुछ छप्पय पिछले खोज विवरण में आ चुके हैं, देखिए खोज विवरण (१७-१४२)।

२१२ रतनरंग—प्रस्तुत खोज में इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या ५ पर विस्तृत रूप से हो चुका है। अतः देखिए उक्त अंश। प्रस्तुत खोज में 'छिताई कथा' का विवरण लिया गया है। इस रचना में अलाउद्दीन की देवगिरि विजय की यह कथा वर्णित है :—

'देवगिरि में राजा रामदेव राज्य करता था। उसके समय में दिल्ली से एक चित्रकार वहाँ गया और चार वर्ष तक रहा। जब वह आने लगा तो राजा रामदेव ने अलाउद्दीन के लिये बहुमूल्य भेंट और भीमसेनी कपूर भेजा। जिस समय अलाउद्दीन बैठा हुआ भेंट देख रहा था और कपूर की प्रशंसा कर रहा था उस समय उसके ऊपर देवगिरि की एक दासी हँसी और कहा कि जिस कपूर की तुम भूरि भूरि प्रशंसा कर रहे हो वह हम लोगों के लिये तुच्छ पदार्थ है। चित्रकार ने देवगिरि की राजकुमारी छिताई का भी चित्र दिखाया जिसे

देखते ही अलाउद्दीन मूर्छित हो गया। फिर क्या था, देवगिरि पर चढ़ाई हुई और विजय के रूप में अलाउद्दीन की अभीष्टपूर्ति हुई।

कथा ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। छिताई का उल्लेख बहुत पहले से काव्यों में होता आ रहा है। इसका उल्लेख 'वीरसिंह देवचरित' (केशव कविकृत) और 'पद्मावत' (जायसी कृत) दोनों में है। इसमें रचनाकाल का उल्लेख नहीं, लिपिकाल संवत् १६८२ है। लिपि प्राचीन और दुर्बोध है। भाषा ब्रज है जिसमें प्रौढ़ता और एक रूपता का अभाव है। प्रेमकथा काव्यों की एक धारा सूफीधारा से भिन्न भारतीय पद्धति पर चल रही थी जिसका प्रमाण प्रस्तुत छिताई कथा से भी मिलता है।

रचयिता के जीवन वृत्त के विषय में प्रस्तुत रचना से कुछ विदित नहीं होता। रचनाकाल न होने से समय का भी अनुमान नहीं लगाया जा सकता, परंतु लिपिकाल संवत् १६८२ होने के कारण इनकी प्राचीनता स्पष्ट प्रकट होती है।*

* देखिए पत्रिका में प्रकाशित श्री बटेकृष्ण का लेख।

२१३ रत्नकवि या रतन कुवँरि—इनके 'प्रेम रत्न' का विवरण पहले भी लिया जा चुका है, देखिए खोजविवरण (९-२६७, २३-३५९, २९-२९७)। अंतिम दो खोज विवरणों में रचयिता का नाम रत्नदास माना गया है जो संदेहजनक है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में रचयिता का नाम रतन दिया हैं :—

कुरुक्षेत्र शुभ थान ब्रज वासीह हर कौ मिलन।
लीला रस की खान प्रेम रतन गायो 'रतन'॥

उपर्युक्त अंतिम खोज विवरण में इस ग्रंथ की दो प्रतियों का उल्लेख है जिनमें से दूसरी प्रति की पुष्पिका में रचयिता का नाम 'बीबी रतन कुवँरि' दिया है। अतः रचयिता का वही वास्तविक नाम है। ग्रंथ में कुरुक्षेत्र तीर्थ में सूर्य ग्रहण पर्व पर श्री कृष्ण तथा ब्रजवासियों का मिलन वर्णित है। रचनाकाल संवत् १८४४ है, लिपिकाल का पता नहीं चलता।

रचयित्री काशी की निवासिनी और संवत् १८४३ में वर्तमान थीं।

२१४ रमईराम या रमैआ राम—इनके 'राम रछ्या' का विवरण लिया गया है जिसमें राम माहात्म्य वर्णित है। रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए गए हैं।

रचयिता की जीवनी के संबंध में इस ग्रंथ से कुछ विदित नहीं होता। रामानंद और कबीर के नाम से भी 'रामरछ्या' नामक रचनाएँ मिली हैं, देखिए खोज विवरण (०-७६) (६-१७७) (९ २५०)। परंतु प्रस्तुत 'रामरछ्या' उनसे बिल्कुल भिन्न है।

२१५ रमनदास—प्रस्तुत खोज में इनके 'भक्तमाहात्म्य' का विवरण लिया गया है। ग्रंथ आदि के दो पत्रों और अंत में संख्या ६१ के पश्चात् के पत्रों से खंडित है। विषय इसके नाम से स्पष्ट है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। भाषा अवधी है। रचयिता ने अपने नाम का उल्लेख इस प्रकार किया है :—

'कहु दास रमन प्रचारी मन में अजनी करनी टरतहा।'

अन्य परिचय नहीं मिलता। प्रस्तुत 'भक्त माहात्म्य' जैसे ग्रंथों से पता चलता है कि लगभग एक शताब्दी पूर्व तक भक्तों के गुणगान करने की एक प्रथा सी चलती रही। इसमें संदेह नहीं कि नाभादास जी, ध्रुवदास जी और राघवदास जी इस विषय के मान्य कवि हैं। किंतु अन्य जिन भक्तों और संतों ने इस विषय पर लिखा उनके ग्रंथों में न तो काव्य के ही दर्शन होते हैं और न उनके द्वारा किसी भक्त या संत के विषय में कोई ऐसी महत्व की ही बात प्रकट होती है जो उक्त रचयिताओं के इस विषय के ग्रंथों में न हो।

२१६ रसखान—इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या १२ पर हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

२१७ रसानंद—इनका उल्लेख विवरण में संख्या १७ पर विस्तारपूर्वक हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

२१८ रसिकदास—इनके दो ग्रंथों—१ कुंज कौतुक और २ कृष्ण जन्मोत्सव के विवरण लिए गए हैं। पहला ग्रंथ खोजविवरण (२-९८) (१२-१५४) में आ चुका है जिसके अनुसार रचयिता संवत् १७५१ के लगभग वर्तमान, राधा वल्लभी संप्रदाय के वैष्णव, स्वामी नरहरिदास के शिष्य और वृंदावन निवासी थे।

दूसरी रचना, 'कृष्ण जन्मोत्सव' में कृष्ण के जन्मोत्सव का वर्णन है। इसमें समस्त बाईस दोहे हैं। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। रचयिता का भी कोई वृत्त नहीं दिया है।

२१९ रसिकराइ—इनके श्रृंगार विषयक कुछ कवित्त 'कवित्त रसिकराइ' नाम से विवृत हुए हैं। इनमें कतिपय कवित्त खंडित हैं। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं मिलता। रचना साहित्यिक कोटि की है।

रचयिता का वृत्त भी अप्राप्त है। हरिराइ जी, वल्लभकुल के आचार्य (००-३८), का भी 'रसिकराई' उपनाम था, परंतु यह प्रकट नहीं होता कि प्रस्तुत 'रसिकराइ' ये ही हैं अथवा उनसे भिन्न। रचना द्वारा तो ये भिन्न ही ज्ञात होते हैं। क्योंकि यह विशुद्ध श्रृंगारिक रचना है जिसमें राधाकृष्ण का कोई नामोल्लेख नहीं पाया जाता। हरिराइ जी वैष्णव आचार्य थे और वैष्णवों की श्रृंगारपूर्ण रचनाएँ भक्तिरस युक्त हैं। अतः हरिराइ उपनाम 'रसिकराई' से ये भिन्न हैं।

खोज विवरण (२-३८) (६-२१९) में आए रसिकराय प्रस्तुत रचयिता ही हैं।

२२० रसिक बिहारीलाल—ये गीता भाषानुवाद के रचयिता हैं। यह ग्रंथ खोज विवरण (४—५६) में तुलसीदास के नाम से विवृत हुआ है। उक्त विवरण में 'तुलसीदास' रचयिता होने का आधार केवल पुष्पिका का लेख है :—

'इति श्री मद्भगवद्गीता तुलसीदास विरचितं अष्टादशोध्यायः। श्री कृष्णार्पण मस्तु ॥ ६० ॥'

परंतु प्रस्तुत प्रति में रसिक बिहारी लाल का स्पष्ट उल्लेख ग्रंथांत में दिया है :—

हरि अर्जुन संवाद यह अद्भुत है यह ख्याल।
पुन्नहेत वर्णन कियौ रसिक बिहारी लाल ॥ ९३ ॥

अतः वास्तविक रचयिता रसिक बिहारी लाल ही ज्ञात होते हैं जिन्होंने पुत्र के निमित्त गीता का भाषांतर किया। इनका अन्य वृत्त नहीं मिलता।

२२१ राघोदास उपाध्याय—'रुक्मिणी मंगल' के इस रचयिता का जीवन वृत्त प्राप्त नहीं होता। प्रमाणों के अभाव में यह भी निश्चय नहीं होता कि पिछले खोज विवरण में आए इस नाम के रचयिताओं से ये भिन्न हैं या अभिन्न।

ग्रंथ में कृष्ण रुक्मिणी के विवाह की कथा है। रचनाकाल संवत् १८०० है, लिपिकाल नहीं दिया है। प्रस्तुत प्रति संभवतः मूल प्रति ही है।

२२२ राम कृष्ण—प्रस्तुत शोध में इनका 'लक्ष्मी चरित्र' मिला है जिसमें लक्ष्मी के निवास योग्य गृहों तथा नरनारियों का वर्णन किया गया है। रचनाकाल ज्ञात नहीं, लिपिकाल संवत् १९१२ है।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और परिचय नहीं मिलता। पिछले खोज विवरणों में आए इस नाम के अन्य रचयिताओं से ये भिन्न हैं या अभिन्न इसका भी कोई निश्चय नहीं होता।

२२३ रामचंद्र—ये 'चंद्र चंद्रिका' नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। इनके विषय में कोई और विवरण नहीं मिलता। प्रत्येक अध्याय की पुष्पिका में इस प्रकार लिखा है :—

'इति श्रीमन् साहासाह कुमार श्री बाबू रामचंद्र विरचितायां…'

यह भी हो सकता है कि ये रामचंद्र ग्रंथकर्त्ता न होकर आश्रयदाता हों।

हस्तलेख आदि अंत से खंडित है जिसके कारण रचनाकाल और लिपिकाल के संबंध में कुछ विदित नहीं होता। इसमें एक पुराना चिट्ठा रक्खा है जिसमें संवत् १९०४ लिखा है। अतः प्रस्तुत प्रति इससे प्राचीन ज्ञात होती है।

ग्रंथ में बिहारी सतसई की गद्यपद्यात्मक टीका है। यह अध्यायों में है जिन्हें 'मरीचिकाएँ' कहा गया है। समस्त मरीचिकाओं की संख्या लगभग १५ है।

२२४ रामचंद्र—प्रस्तुत खोज में इनका नाम सिद्धों के साथ आया है। इनकी कुछ वाणियाँ मिली हैं जिनके लिये देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १। विशेष वृत्त अज्ञात है।

२२५ रामचरणदास—पिछले खोज विवरणों में इनके कई ग्रंथों के विवरण लिए जा चुके हैं, देखिए खोज विवरण (३–४४,६८) (४–६३) (६–२११) (९–२४५) (१७–१४३) (२०–१४५) (२३–३३९) (२६–३७७)। ये अयोध्या के महंत थे और संवत् १८४४ में वर्तमान थे।

इस बार इनकी 'झूलना' नामक रचना मिली है जिसका विषय ज्ञान और भक्ति है। इसमें रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। भाषा खड़ी बोली है तथा रचना झूलना छंदों में की गई है।

२२६ रामदास—इनके 'सुदामा की कथा' नामक ग्रंथ का विवरण प्राप्त हुआ है। ग्रंथ का रचनाकाल नहीं दिया है। यह लखनसेनी कृत 'बारहमासा' (देखिए प्रस्तुत खोज विवरण) के साथ एक ही हस्तलेख में है। 'बारहमासा' का लिपिकाल संवत् १७८५ है, अतः इसका लिपिकाल भी यही माना जा सकता है। दोनों की स्याही तथा लिपि भी एक ही है। इसकी भाषा पूर्वी है।

ग्रंथ अपूर्ण है। इसका मूल नाम ज्ञात नहीं हो सका। विषय को देखकर 'सुदामा की कथा' नाम रख दिया गया है। विवरण पत्र में इसकी पूर्ण प्रतिलिपि कर दी गई है।

रचयिता ने अपना थोड़ा सा परिचय निम्नलिखित दोहे में दिया है :—

अब एक अधम महा जड़ उपदेसा सारीदास।
अगर हरी के कुल मह कह बानी 'रामदास ॥'

इससे यह पता चलता है कि ये अगरहरि के कुल में थे। अगरहरि कौन थे? इसका कोई पता नहीं चलता।

पिछले खोज विवरणों में आए अपने नाम के रचयिताओं से ये भिन्न हैं या अभिन्न, कहा नहीं जा सकता।

२२७ रामभरोसादास बाबा—इनके दो ग्रंथ, १—'ब्रह्म विलास' और २—'गीतारतन' के विवरण लिए गए हैं। प्रथम ग्रंथ की दो प्रतियाँ मिली हैं। इसमें कपिलदेव ऋषि द्वारा अपने माता पिता (कर्दम ऋषि और उनकी स्त्री देवहुती) के प्रति कहे गये सांख्य योग का वर्णन है। रचनाकाल खीष्टाब्द में सन् १८६४ ई० है जो संवत् १९२१ होता है। लिपिकाल एक में संवत् १९३६ और दूसरी में संवत् १९३५ है। भीमपुरा (बलिया) से विवृत प्रति में रचनाकाल दो दिए हैं। एक दोहे में, जो संवत् १९२१ होता है और दूसरा पुष्पिका में जो संवत् १९१८ है। पुष्पिका में दिया संवत् इस प्रकार है :—

'श्री संवत् १९१८ सीती भादो कृस्न पक्षे तिथी अष्टमी जन्म ॥ ८ ॥'

संभवतः संवत् १९१८ में ग्रंथरचना आरंभ हुई होगी और संवत् १९२१ में समाप्त।

दूसरे ग्रंथ 'गीतरतन' में राम कृष्ण के भक्ति विषयक पद हैं जो काव्य की दृष्टि से उत्तम हैं। यह ग्रंथ रतनपुरा (बलिया) से विवरण लिए गए 'ब्रह्म विलास' के साथ एक ही हस्तलेख में है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९३६ है।

रचयिता जाति के ब्राह्मण और बलिया के अंतर्गत रतनपुरा के रहनेवाले थे (यह गाँव बी० एन० डब्लू० आर० का स्टेशन है)। इनके गुरु का नाम कृपाराम था। रतनपुरा से कुछ दूर हटकर रतनपुरा कुटी नाम से इनका एक स्थान है जहाँ ये भजन पूजादि करते थे। इनके स्थापित किए राम जानकी और शिव के मंदिर भी यहाँ हैं। पं० ब्रह्मदेव शर्मा आचार्य इस स्थान के महंत हैं जो इन्हीं के कुटुम्बी हैं। महंतजी के कथनानुसार इनकी वंशावली इस प्रकार है :—
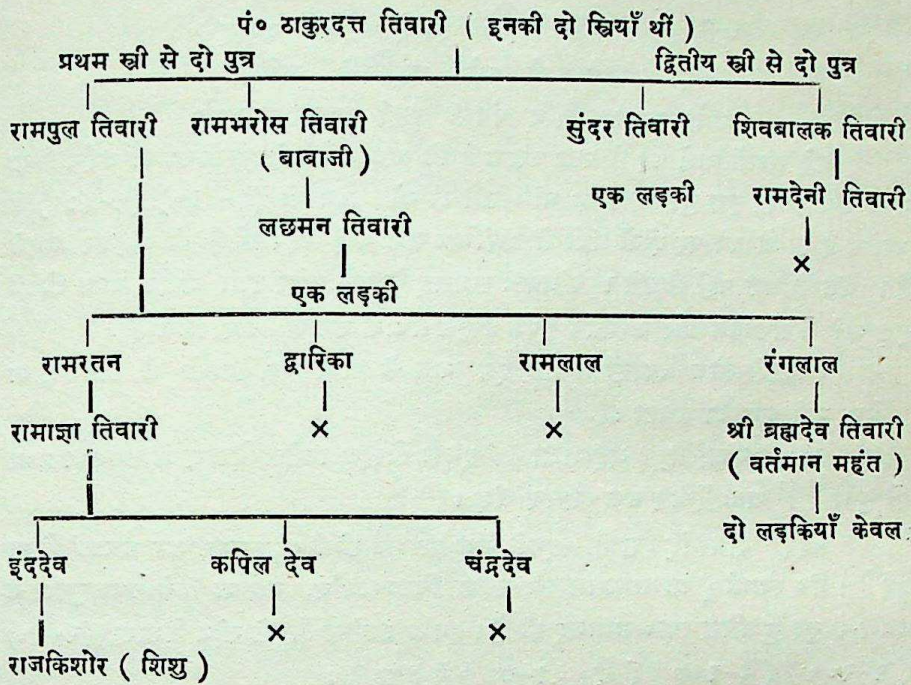
रतनपुरा कुटी पर क्वार के महीने में मेला लगता है। इससे संबंधित तीन स्थान और हैं जिनके नाम भीमपुरा (जिला बलिया), रसड़ी (आजमगढ़) और आदमपुर (आजमगढ़) हैं। महंतजी का कहना है कि रामभरोस दास बाबा लिखे पढ़े नहीं थे। जो कुछ रचना करते थे उसे दूसरों से लिखवा लिया करते थे। ये उच्चकोटि के भक्त हुए हैं। इनका वैकुंठवास संवत् १९३६ के वैशाख में हुआ। यह तिथि रतनपुरा से विवृत प्रति की पुष्पिका में दी हुई है।

२२८ रामरंग—इनकी 'बारह खड़ी' की एक अपूर्ण प्रति मिली है। इसमें ककहरा के ढंग पर अष्टपदियों में रचना की गई है जिनमें ज्ञानोपदेश वर्णित है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल दूसरे ग्रंथों—ज्ञान स्वरोदय (चरणदास कृत) और आध्यात्मबोध (साधुशरण कृत) के आधार पर संवत् १९०९ है। ये ग्रंथ एक ही हस्तलेख में हैं।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और वृत्त नहीं मिलता। ग्रंथ के विषय से अनुमान होता है कि ये कोई रामभक्त रहे होंगे।

२२९ रामराइ—ये 'गुण सागर' नामक कोकशास्त्र विषयक ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ की रचना दोहे चौपाइयों में है। भाषा ब्रजी है। रचनाकाल संवत् १६७८ है। लिपिकाल का उल्लेख नहीं मिलता। ग्रंथ अपने विषय का उत्तम है।

रचयिता आगरा निवासी थे। इनके समय में जहाँगीर राज्य करते थे :—

छत्र धरै अविचल सदा राजसाहि जहाँगीर ॥
काम कौतूहल रस कथा चतुर आगरे चाइ।

कवि ताहर तिहि देश में वरनो चरित बनाइ ॥
संवत् सोलह सै गनै अठहत्तरि अधिकाइ ।
वादि आसाढ़ तिथि पंचमी कही कथा रामराइ ॥

बड़े अक्षरों वाले पद से पता चलता है कि कवि ताहिर ने इस विषय का वर्णन किया था। कवि ताहिर कृत गुणसागर का भी पिछले दो खोज विवरणों (६-३३५) (९-३१६) में उल्लेख है। मिलाने पर दोनों ग्रंथों के आरंभिक अंश थोड़े से पाठभेदों को छोड़कर मिलते हैं। अंत के अंश नहीं मिलते। संभवतः रामराइ ने कवि ताहर द्वारा वर्णित विषय को ही कुछ थोड़े से संशोधन और परिवर्तन पूर्वक प्रस्तुत ग्रंथ के रूप में तैयार किया।

ये पिछले खोज विवरणों में आए इस नाम के अन्य रचयिताओं से भिन्न हैं या अभिन्न, नहीं कहा जा सकता।

२३० रामसिंह (महाराजा)—इनका विस्तृत उल्लेख विवरण में संख्या १८ पर हो चुका है। अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

२३१ रामानंद स्वामी—इनके नाम पर एक छोटी सी रचना 'राम अष्टक' विवृत हुई है। ग्रंथ स्वामी (श्री राजाराम जी, महंत चिटबड़ागाँव, बलिया) के कथनानुसार ये कबीर के गुरु सुप्रसिद्ध स्वा० रामानंद ही हैं। इनका उल्लेख पिछले खोज विवरण (२-६५) (९-२०५) (६-१७७) (दि० ३१-७१) में हुआ है।

रचना में रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८६७ है। विशेष के लिये देखिये बावरी साहबा और भीखा साहब के विवरण। उनकी रचनाओं के साथ प्रस्तुत रचना एक हस्तलेख में है।

२३२ रासमंजरी—इनके रचे 'अष्टकाल' में राधाकृष्ण की अष्टयाम की क्रीड़ाओं का वर्णन है। यह गोस्वामी रूप सनातन के संस्कृत ग्रंथ 'अष्टकाल' का हिंदी में पद्यानुवाद है। मूल ग्रंथ में केवल ग्यारह श्लोक हैं जिनकी यह विस्तृत टीका है। इसमें संदेह नहीं कि टीका की कविता सरल और मधुर है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता ने यद्यपि अपने नाम का कहीं स्पष्ट वर्णन नहीं किया है तथापि निम्नलिखित अवतरणों से इनका नाम 'रास मंजरी' प्रकट होता है।

'भरी हुलास तब प्यारी पांइन। रासमंजरी सेवत चाइन ॥ ११ ॥'

माध्व गौड़ेश्वर संप्रदाय में बहुत से भक्तों ने अपने को 'मंजरी' नाम से संबोधित किया है। ये अपने को श्री राधाकृष्ण की सेवा और सम्मान का भाजन उसी तरह समझते थे जिस तरह श्री राधाजी की ललितादिक अष्टसखियाँ समझी जाती हैं। प्रत्येक ने अपने नाम में 'मंजरी' शब्द प्रयुक्त किया है। इनके वास्तविक मूल नामों का पता लगाना कठिन है। प्रस्तुत रचयिता का भी मूल नाम क्या था, ज्ञात नहीं होता। इन्होंने अपने गुरु का नाम रूप मंजरी लिखा है। यथा:—

'रूपमंजरी' पद कमल तिनको करिके ध्यान।
करि संक्षेपहि बरनियौ प्रथम काल आख्यान ॥'

विशेष वृत्त अनुपलब्ध है।

२३३ रूपसाहि—इनके 'नवरस चतुर्वृत्ति वर्णन' में नवरस और चार वृत्तियों-कैशिकी, भारती, आरभटी और सात्वकी (सात्वती) का वर्णन किया है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं मिलता। लिपिकाल दशरथ रायकृत 'नवीन (नवीनाख्य)' के आधार पर संवत् १८६९ के लगभग है। ये दो ग्रंथ अन्य तीन रचनाओं—१–चित्रकाव्य २–नैतिक श्लोक (संस्कृत) और ३–हरि जू सुकवि द्वारा संपादित 'बिहारी सतसई' के साथ एक हस्तलेख में हैं।

रचयिता के नाम का स्पष्ट उल्लेख कहीं नहीं मिलता। केवल दो जगहों में रूपसाहि का उल्लेख हुआ है। एक तो नवरस के अंत में, यथा:—

एक अनेक अगुन सगुन अरु प्रिथु रूप अनूप।
रूपसाहि जैसे प्रभुहिं सेवत सुमति अनूप॥

और दूसरा चार वृत्तियों के वर्णन वाले एक कवित्त में जो विवरण पत्र में उद्धृत है।

पिछले खोज विवरणों (५–८३) (६–१०५) (२०–१६७) में आए रूपसाही भी ये ही हैं। उक्त विवरणों के अनुसार ये संवत् १८१३ में वर्तमान थे। जाति के कायस्थ थे। पिता का नाम कमलनयन था। बुंदेलखंड के निवासी एवं महाराज हिंदूपति के आश्रय में रहते थे।

संभवतः प्रस्तुत रचना इनके 'रूप विलास' का ही अंश हो। 'रूपविलास' साहित्यिक ग्रंथ है।

२३४ रैदास—इनकी वाणियों का एक संग्रह 'रैदास जी की वाणी' नाम से मिला है। पिछले खोज विवरण (९–२४०) में भी इनकी वाणियाँ विवृत हुई हैं। इनका रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८५५ है। प्रस्तुत वाणियों में १० साखियाँ और ८२ पद हैं।

ये एक बड़े आकार के हस्तलेख में हैं। देखिए सेवादास का विवरण।

रचयिता निर्गुण संत के रूप में प्रसिद्ध हैं। इस बार इनके विषय में कोई नवीन बात विदित नहीं हुई।

२३५ लक्ष्मणदास (रूलिंग चीफ बहादुर)—इनके 'राधा कृष्ण रसतरंगिनी' नामक ग्रंथ का विवरण लिया गया है। इसमें जन्म से लेकर दानलीला तक राधाकृष्ण चरित्र वर्णित है। रचनाकाल संवत् १९१४ है। लिपिकाल ज्ञात नहीं। रचना कवित्त, घनाक्षरी, ठुमरी, दादरा, सोहर, कहरवा आदि चलते रागों में है। काव्य की दृष्टि से यह सरस रचना है।

रचयिता का नाम नृप लछिमनदास है। अन्य वृत्त नहीं मिलता।

ग्रंथस्वामी श्री सैय्यद कासिम अली, प्रधान अध्यापक नार्मलस्कूल, छुई खदान स्टेट, सी० पी० ने एक छोटा सा पत्र ग्रंथ के प्रथम पत्र पर चिपकाया है जिसमें इस प्रकार लिखा हुआ है :—

'श्रीमान् लक्ष्मणदास जी नरेश उच्चकोटि के लेखक, कवि हो गये हैं। आपने सैकड़ों कविता ग्रंथ लिखे हैं। यह रसतरंगिनी सन् १८२४ ई० के लगभग लिखी थी

जिसका पता बड़ी मुश्किल से लगा है। इस राजवंश का परिचय मैंने एक 'पुष्पोहार' कविता ट्रेक्ट में पूर्ण देने का साहस किया है और इतिहास से भी पूर्व सन् प्राप्त हुआ है।

सैय्यद कासिम अली

प्रधान अध्यापक

छुई खदान स्टेट'

पत्र में यह प्रकट नहीं किया गया है कि रचयिता कहाँ के नरेश थे। अनुमानतः छुई खदान स्टेट के ही नरेश रहे होंगे।

२३६ लखनसेनी—इनका कुछ विस्तृत उल्लेख विवरण अंश में संख्या ६ पर हो चुका है अतः देखिए उक्त अंश।

२३७ लल्लू जी लाल—इनकी 'राजनीति' नामक रचना मिली है जो संस्कृत के 'हितोपदेश' का अनुवाद है। यह पिछले खोज विवरणों (६–१७४) (२६-२६६) में उल्लिखित है और मुद्रित भी हो चुकी है। इसकी प्रस्तुत प्रति का प्राचीन होने के कारण विवरण लिया गया है। रचनाकाल संवत् १८५६ है और लिपिकाल संवत् १८७०।

रचयिता खड़ी बोली के प्रथम गद्यलेखकों में होने के नाते प्रसिद्ध हैं। इनके विषय में देखिए अन्य खोज विवरण (६–१७२) (६–१९२)।

२३८ कविलाल—इनके कुछ कवित्त सवैये 'कवित्यरामायन' शीर्षक से विवृत हुए हैं। इनमें जनकपुर के धनुषयज्ञ का वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। ये कवित्त कुछ अन्य रचनाओं के साथ एक ही हस्तलेख में हैं जिसके अंत में प्रस्तुत कवि की 'कवीत्य हनुमान जी जब लंका चलै हैं' नामक रचना भी लिपिबद्ध है। इस रचना के पत्रे अत्यंत जीर्ण शीर्ण हो गए हैं और अक्षर ठीक-ठीक पढ़ने में नहीं आते। अतः उसका दूसरा विवरण नहीं लिया जा सका। आरंभ का कुछ अंश जितना पढ़ा जा सका है, नीचे दिया जाता है :—

स्रवन सुजश सुनि आयेऊ प्रभु भवभंजन भीर।
त्राही त्राही आरत हरन शरन रापु रघुवीर ॥ १ ॥
प्रथम भाल कविलाल धर गुर पद पंकज पंक।
वरनो हनीवंत कै वरशो जात वीर गढ़ लंक ॥ २ ॥

॥ छप्पै ॥

चरन चंड उदीत उदंड षल पंड पंड करी।
अति प्रचंड भुजदंड षंड आषंड दंड धरी।
शुंड मुंड अव वदन भुशंड छजही लंमोदर।
एक दंत सुर शंत कंत आनंत क............... ॥
शेवत तोही कवीलाल भनी अशशीध वरदाएकं।
हनुमत पैज वरनो चहो, वुधी देहु गननाएकं ॥

दोहा

फटीक शीला सुंदर सुभग रहेव छाए जामवान।

शीघ्र शोच मोचन चहो बोलेव क्रीपा नीधान ॥

कविता से पता चलता है कि कविलाल प्रौढ़ कवि थे। हो सकता है, उन्होंने संपूर्ण रामचरित्र लिखा हो जिसके प्रस्तुत कवित्त अंश मात्र हों। इनका वृत्त अज्ञात है।

पिछले खोज विवरणों में इस नाम के कई रचयिता आए हैं, परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि ये उनमें से कोई एक हैं अथवा नहीं।

प्रस्तुत कवित्तों के बीच बीच में दोहे भी हैं। लिपिकर्त्ता ने हस्तलेख अत्यंत अशुद्ध लिखा है। अधिकांश अक्षर और शब्द स्थानीय भाषा और ध्वनि के अनुकूल बदल दिए गए हैं जिससे मात्राओं में बहुत सी गड़बड़ी हो गई है और कितने ही शब्द छूट भी गए हैं।

२३९ लालदास—इनकी 'बारहमासी' का विवरण लिया गया है। इसमें कृष्ण के वियोग में गोपियों के बारह महीनों के विरह का वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

पिछले खोज विवरणों (६-१६०) (२३-२३९) (२६-२६२) में प्रस्तुत रचयिता के नाम से कुछ बारहमासियाँ उल्लिखित हैं, परंतु उनमें से कोई भी इस बारहमासी से नहीं मिलती।

इसमें दो नामों का उल्लेख हुआ है, यथा :—

प्रेमदास' आनंद भजन कर कर गये बारहमासे।
परमपद कहे सुने पाये। बाँस बरेली के 'लालदास' बारहमासी गावै ॥ १२ ॥

हो सकता है कि 'लालदास' अपने को 'प्रेमदास' भी कहते रहे हों।

लालदास बाँस बरेली के रहनेवाले थे। इनका उल्लेख खोज विवरण (१-३२) (९-१६९) में भी हुआ है जिनके अनुसार ये पीछे अयोध्या में रहने लगे थे। इनका समय संवत् १७३२ के लगभग है।

२४० लाल—प्रस्तुत रचयिता कृत 'नेमिनाथ जी का मंगल' या 'नौमंगल' नामक रचना की दो प्रतियों के विवरण प्राप्त हुए हैं। इसमें जैन तीर्थंकर नेमिनाथ और राजमती के विवाह तथा वैराग्य का अत्यंत मार्मिक वर्णन है। रचनाकाल संवत् १७४३ तथा लिपिकाल एक प्रति का संवत् १८६९ एवं दूसरी का संवत् १८८४ है। एक प्रति में रचनाकाल अस्पष्ट है; परंतु दूसरी प्रति में उपर्युक्त संवत् स्पष्टतया दिया हुआ है।

रचयिता सहजादपुर के निवासी जान पड़ते हैं। इन्होंने प्रस्तुत रचना औरंगजेब के राज्यकाल में रची :—

यह गीत मगलनेम का सहजादपुर में गाइया।
नोरंग साहब जी कैबारै लाल मंगल गाइया ॥ ९ ॥

ये रचना द्वारा जैन विदित होते हैं। इनकी प्रस्तुत रचना (पं० २२-५६) में उल्लिखित है, परंतु उसमें उद्धरण नहीं दिए हैं।

२४१ लाल—इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या ६ पर विस्तृत रूप से किया गया है। अतः देखिए उक्त अंश।

२४२ लालचराम या लालच (हलवाई) -- इनके 'हरिचरित्र (दशम स्कंध भागवत)' का उल्लेख पिछले खोज विवरणों (६-१८९) (२३-२३८) (२६-२६१) में हो चुका है। इसके रचनाकाल के विषय में अभी तक कोई निश्चय नहीं हो सका है। आजतक जितनी प्रतियाँ मिली हैं उन सबमें रचनाकाल के संवत् एक दूसरे से भिन्न हैं। इस बार भी इनकी दो प्रतियाँ मिली हैं जिनमें से एक में रचनाकाल संवत् १७२७ और दूसरी में संवत् १५८५ है। लिपिकाल का संवत् प्रथम में १९६८ और द्वितीय में १८६४ है। दोनों प्रतियाँ अपूर्ण हैं। लिपिकाल के संवतों में कोई ऐसा आधार नहीं है जिससे गणना द्वारा उसकी जाँच हो सके।

रचयिता रायबरेली के रहनेवाले थे।

२४३ लालकवि—'सभा विलास या हिय हुलास रागमाला काव्य' इनके द्वारा किया गया एक संग्रह है। इसमें दृष्टांत, नीति, परवाने (कहावतें), अन्योक्ति, नेत्र श्लेष, प्रश्नोत्तर, कूट, कहमुकरी (छेकापन्हुति) तथा राग रागनियों के स्वरूप आदि विषयों पर तुलसी, गिरधरराय, अहमद, वाजीद, रहीम आदि नाना कवियों के दोहों, सोरठों, कुंडलियों, अरिल्लों तथा बरवों में की गई रचनाएँ संगृहीत हैं। इसका वास्तविक नाम 'सभाविलास' है। 'हियहुलास रागमाला काव्य' इसका एक अंश है जिसमें राग रागिनियों के नाम, गुण, आलाप समय, वाद्ययंत्र और स्वरूप आदि का वर्णन है। यह अंश यद्यपि बहुत संक्षिप्त है तथापि है अत्यंत महत्वपूर्ण। संगीत विषय का इसे एक उत्तम ग्रंथ समझना चाहिए। इसकी एक अलग प्रति मिली है जिसकी पूर्ण प्रतिलिपि कर दी गई है। रचनाकाल संवत् १८७० है।

'हिय हुलास रागमाला काव्य' की प्रति में रचनाकाल का संवत् अशुद्ध दिया है जो प्रतिलिपिकार के लिपिप्रमाद से हुआ जान पड़ता है। प्राप्त प्रतियों में दिए रचनाकाल के दोहे नीचे दिए जाते हैं :—

> खं ऋषि वसु चंद्रहिं गगनौ संवत् को परवान।
> माघ शुक्ल नवमी रवौ कियौ ग्रंथ निर्मान॥ ७३॥
>
> —सभाविलास
>
> संख्या वसु चंदरही गनै समत को परमान।
> माघौ शुक्ल नौमी रच्यौ ग्रंथ निरमान॥
>
> —हियहुलास

लिपिकाल किसी प्रति में नहीं दिया है। 'हिय हुलास' के हस्तलेख में दो अन्य रचनाएँ 'प्रतीत परीक्षा' बालकृष्ण कृत और 'बारहमासी' प्रेमदास कृत और लिपिबद्ध हैं।

रचयिता का और कोई विवरण नहीं मिलता। पिछले खोज विवरणों में इस नाम के कई रचयिता आए हैं, परंतु यह निश्चय नहीं होता कि ये उनमें से कोई एक हैं अथवा नहीं।

२४४ लालजी साह या श्री लाल शाह—प्रस्तुत रचयिता ने 'हरिवंश पुराण भाषानुवाद' नाम से हरिवंश महापुराण का दोहे चौपाइयों में अनुवाद किया है। इसका रचना काल संवत् १८४९ है। लिपिकाल ज्ञात नहीं।

रचयिता इलाहाबाद के पश्चिम गंगातट पर बसे सहजादपुर के निवासी लाला सीतल प्रसाद के पुत्र थे। और विवरण नहीं मिलता। श्रीलाल शाह नाम से भी इनका प्रस्तुत ग्रंथ इस विवरण में संख्या २७२ पर आया है।

२४५ लालमनि—इस रचयिता का एक ग्रंथ 'रसालै०' (रसालय) मिला है। इसका विषय नायिका भेद है। रचनाकाल तथा लिपिकाल अज्ञात हैं। विषय की दृष्टि से यह उत्तम ग्रंथ है।

रचयिता का नाम जहाँ तहाँ दोहों और कवित्तों में दिया हुआ है। अन्य वृत्त नहीं मिलता। पिछले खोज विवरणों (६–११) (४–१४) पर भी दो लालमणि आए हैं जो ग्रंथकार नहीं हैं। अतः यह नहीं कहा जा सकता कि उनमें से किसी एक के साथ प्रस्तुत रचयिता साम्य रखते हैं या नहीं।

२४६ लालविनोदी—'बारहमासा द्वादशानुप्रेक्षा' इनकी छोटी किंतु सुंदर और सरस रचना है। इसमें जैनतीर्थंकर नेमिनाथ और उनकी स्त्री राजमती के क्रमशः निवृत्ति और प्रवृत्ति विषयक कथोपकथन बारहमासी के रूप में वर्णित हैं। भगवान् नेमिनाथ वैराग्य का प्रतिपादन करते हैं और राजमती सांसारिक जीवन का। यह घटना कैसे घटी? उसका सारांश इस प्रकार है:—

'जिन भगवान नेमिनाथ विवाह के अवसर पर विरक्त होकर गिरनार पर्वत में तपस्या करने के लिये चले गए। राजमति जिसके साथ विवाह होना निश्चित हुआ था पति को लौटाने के लिये उनके पीछे-पीछे गिरनार पहुँची। उसने पति को समझाने की बहुत चेष्टा की, परंतु असफल रही। अंत में स्वयं भी तपस्या करने के निमित्त भगवान् के ही साथ रहने लगी।

प्रस्तुत रचना एक बृहद् जैन धर्म ग्रंथ के अंतर्गत लिपिबद्ध है। रचयिता का कोई परिचय नहीं मिलता। खोज विवरण (२–७६) (१७–१०६) (पं० २२–५६) (२६–२६०) (दि० ३१–५४) (३२–१३२) में आए लालचंद्र विनोदी के साथ इनका ऐक्य स्थापित करने का कोई प्रमाण नहीं मिलता।

२४७ लालस्वामी (हित)—ये अपने ग्रंथ 'श्री स्वामिनी जी ठाकुरजी सवैय्या' के साथ खोज विवरण (२३–२४५) में उल्लिखित हैं। नाम के साथ 'हित' का प्रयोग होने के कारण ये राधावल्लभी संप्रदायानुयायी जान पड़ते हैं। अधिक परिचय नहीं मिलता।

इस बार इनकी 'मंगल' नाम से एक और रचना मिली है जिसमें रचनाकाल तो दिया है, परंतु वह स्पष्ट नहीं होता, यथा :—

रसनसाइक सक सुत तिथि सोम कहत न आवई।

लिपिकाल एक अन्य ग्रंथ 'नागरीदास की बानी' के आधार पर संवत् १८२५ है। प्रस्तुत ग्रंथ और नागरीदास की बानी एक ही हस्तलेख में हैं।

२४८ लोकमनिदास—ये 'बजरंग चालीसी' नामक एक छोटी सी रचना के रचयिता हैं। विषय इसके नाम से ही स्पष्ट है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता का नाम ग्रंथांत में दिया है :—

शर्नंन परेउ दआ करि हेरो। दाश लोकमनि चेरो तेरो॥

इसके अतिरिक्त अन्य परिचय अप्राप्त है।

२४९ वंशमनि या वंशराज—प्रस्तुत खोज में ये 'रसचंद्रिका' नामक ग्रंथ के रचयिता के रूप में विवृत हुए हैं। बिहारी के दोहों पर इनके द्वारा कवित्त सवैया रचे गए हैं तथा उनको नायिकाभेद के क्रम से लगाया गया है। ग्रंथ में बारह अध्याय हैं। ग्रंथ के अंत में 'नृप स्तुति वर्णन' वाला अंश अपूर्ण है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता ने अपना वृत्त दिया है जिसके अनुसार इनका नाम वंशमनि है, परंतु रचना में यत्र तत्र 'वंशराज' भी प्रयुक्त हुआ है। इनके पिता का नाम बुलाकी शर्मा तथा पितामह का नाम लोकमनि था। ये तीन भाई थे जिनके नाम दिए हुए हैं, परंतु स्याही के उखड़ जाने के कारण ठीक ठीक पढ़ने में नहीं आते। ये पाराशर गोत्रीय त्रिपाठी ब्राह्मण थे। त्रिपाठी का उल्लेख प्रत्येक अध्याय की पुष्पिका में हुआ है। इन्होंने अपने ग्राम का नाम वीरभानुपुर दिया है जिसे चयनपुर के निकट बतलाया है। आश्रयदाता का नाम रघुनंदन लिखा है जो श्रीवास्तव कायस्थ और अपने पिता साहि मल्लिनाथ के तृतीय सबसे छोटे पुत्र थे।

रचयिता ने अपना तथा अपने आश्रयदाता का वृत्त आरंभ में संस्कृत के दो श्लोकों एवं हिंदी के दोहों में दिया है। ऐसा ज्ञात होता है कि उत्तरार्द्ध के दो दोहों में आश्रय-दाता का परिचय रहा होगा, परंतु ये दोहे ग्रंथ पर नवीन जिल्द बँध जाने के कारण जिल्द के नीचे दब गए हैं। जिल्द को किसी प्रकार अलग भी किया गया फिर भी कागज का कुछ अंश उखड़कर अक्षरों के ऊपर रह गया। अतएव अक्षर नहीं पढ़े जा सकते। इनके आरंभ का केवल एक चरण पढ़ा जा सका है जो इस प्रकार है :—

'गया गयाधर के निकट पहरा नाम के ग्राम।
कानगोहते ... ... ॥

इससे यह विदित होता है कि संभवतः आश्रयदाता गया के निकट पहरा नामक ग्राम के रहनेवाले तथा कानूनगो का पेशा करनेवाले थे।

प्रस्तुत ग्रंथ में रचनाकाल न रहने के कारण इनके समय का कोई पता नहीं लगता।

२५० वजदी—'पंछीनामा' के ये रचयिता प्रथम बार ही विदित हुए हैं। ग्रंथ में नाना प्रकार के पक्षियों को संबोधित कर कही गई भव्य और सुंदर उक्तियाँ हैं। रचना उपदेशात्मक और सूफी मत से संबंधित है :—

एक स्थान पर एक के बाद दूसरे पक्षी एकत्र होते हैं और सब विचार करते हैं कि हम लोगों को अपना राजा चुन लेना चाहिए। हुदहुद पक्षी बतलाता है कि राजा होने योग्य सीमुर्ग है जो अमुक स्थान पर रहता है। हुदहुद के साथ एक पक्षी उसकी खोज में निकलता है और अभीष्ट स्थान पर पहुँचता है। यदि इस रूपक को खोला जाय तो सारी कथा का आशय होगा कि हुदहुद गुरु या पीर दूसरे पक्षी मुरशिद को परमात्मा रूपी सीमुर्ग से साक्षात् कराने के लिये ले जाता है।

मूल विषय के साथ-साथ बीच-बीच में बहुत सी हिकायतें या कथाएँ भी आती हैं जैसे, इलियास, खिज्र, महमूद या सुलेमान की कथाएँ। इन कथाओं में कुछ ऐतिहासिक, कुछ पौराणिक और कुछ कल्पित हैं।

'पंछीनामा' का मूल ग्रंथ फारसी में है जिसका नाम 'मुतकुलतैर' है और जो शेख फजीउद्दीन अत्तार नामक सूफी की प्रसिद्ध रचना है। इसका वजदी ने दखिनी भाषा में अनुवाद किया है:—

'सिकंदर दाखिनी जबान में लेके आऊँ।
ता रहे दुनिया मने मेरा भी नांव॥'

इसका नाम पंछीनामा या पंछीवाचा है:—

'नाम मैं इसका 'पंछीवाचा' रखा।
यादगारे खल्के आलम को दिया॥'

इसकी भाषा में कहीं कहीं हिंदी रूपों की झलक है। उर्दू का प्रभाव अधिक है। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं है।

रचयिता के जीवनवृत्त के विषय में प्रस्तुत ग्रंथ से कुछ ज्ञात नहीं होता। इन्होंने केवल यही लिखा है कि बदखशाँ का रत्न (अर्थात् मूल फारसी ग्रंथ की रचना) को मैंने दखिन आकर बेंचा है। इसका बदला मैं यही चाहता हूँ कि सब लोग इसे प्रेम से पढ़ें और मुझे दुआएँ दें जिससे ईश्वर के यहाँ मेरा अपराध क्षमा हो जाय। इससे ज्ञात होता है कि ये दखिन में ही रहे होंगे। रचनाकाल अज्ञात होने के कारण इनके समय की भी कोई जानकारी नहीं होती।

२५१ वटुनाथ या वटुकनाथ—प्रस्तुत रचयिता के 'शनिचरित्र' और 'आनंदरस बल्ली' नामक दो ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं। प्रथम में विक्रमादित्य की कथा द्वारा शनिग्रह के शुभाशुभ फल तथा उसके माहात्म्य का वर्णन किया गया है। दूसरे में पिंगल विषय का प्रतिपादन है। रचनाकाल का उल्लेख किसी में नहीं मिलता, लिपिकाल संवत् १८७५ है। 'आनंद रस बल्ली' में गद्य रचना के प्रकार की ओर भी निर्देश किया गया है। उसकी पूर्णता, अपूर्णता तथा गुणदोष बतलाकर पिंगल के अनुसार तीन भेद (चूर्णक, उत्कलिक, वृत्तिगंध) दर्शाए हैं, यथा :—

तीन भेद हैं गद्य के पिंगल मत अनुसार।
चूर्णक अकालिकाहु पुनि व्रत गंध निरधारी।
विमल मधुर अक्षर सहत चरनहीन सविलास।
चूर्णक सो पिंगल मतै रचि कछु अल्प समास ॥ ३० ॥

द्दढ़ अक्षर जामैं परत होत न अल्प समास।
तासौ उत्कलिका कहत कवि पंडित सविलास ॥ ३१ ॥

होत व्रत के एक ही देश वद्ध जो आइ।
वृत्तिगंध तासौं कहै गद्यभेद कौं पाइ ॥ ३२ ॥

इस दृष्टि से यह ग्रंथ महत्वपूर्ण है। इसमें चार अध्याय (स्तवक) हैं।

रचयिता ने इस ग्रंथ में अपने लिये दो नामों—वटुनाथ और वटुकनाथ का प्रयोग किया है। अपना वंशवृत्त भी इसमें दिया है जो इस प्रकार है :—
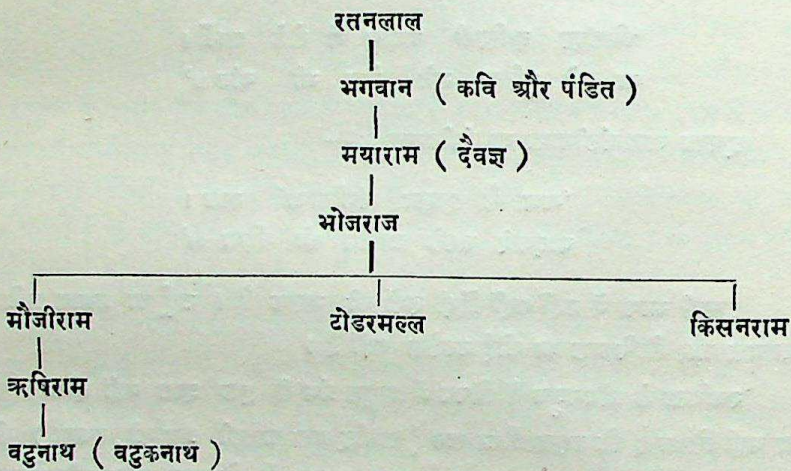
इसके अतिरिक्त इनका और कोई परिचय नहीं मिलता। शनि चरित्र में 'नौ' कारक चिह्न का प्रयोग हुआ है जो पश्चिमी राजस्थानी या गुजराती है :—

गोकुलेश वटुनाथ नहिं करत दयानौ भंगु।

देखिए बड़े अक्षरों वाले शब्द में 'नौ'। इससे ये राजस्थान या गुजरात की ओर के रहनेवाले जान पड़ते हैं। प्रस्तुत दोनों रचनाएँ एक ही हस्तलेख में हैं।

२५२ विरंच गोसाई जन (विरंज या विरंचराम)—विवरण अंश में इनका उल्लेख विस्तृत रूप से किया गया है, अतः देखिए उक्त अंश में संख्या ३।

२५३ विश्वेश्वरदास—प्रस्तुत रचयिता का 'काशीखंड कथा' नाम से एक ग्रंथ मिला है जो स्कंद पुराणांतर्गत काशीखंड कथा का भाषानुवाद है। इसकी प्रस्तुत प्रति अपूर्ण होने के कारण रचनाकाल और लिपिकाल का पता न चल सका। रचनाकाल दिया

तो है, परंतु उसका आरंभ का अंश खंडित हो जाने के कारण कोई संवत् नहीं निकल सकता :—

'रहे सत उपर चालीस, माहो क्रइन अष्टमी बुधवार रजनीस'

रचयिता महाराष्ट्र ब्राह्मण थे। पिता का नाम नारायण और पितामह का शंकर था। इनके पिता के गोविंद नाम के एक भाई थे जिनका माधव नामक एक पुत्र था।

ये तीन पीढ़ियों से काशी में ही रहते थे। खोज में ये प्रथम बार ही मिले हैं।

२५४ विष्णुदास—ये 'भाषा वाल्मीकि रामायण' के रचयिता हैं। इनका नाम ग्रंथ के अठारहवें सर्ग के अंत में आया है :—

'विस्नदास कवि कीयौ वषाना।
पढ़त सुनत गंगा कौ न्हान॥'

प्रस्तुत प्रति के खंडित हो जाने के कारण विशेष कुछ ज्ञात नहीं होता। पिछले खोज विवरण में इस नाम के कई रचयिता हैं, परंतु यह पता नहीं चलता कि उनमें से कोई प्रस्तुत रचयिता के साथ साम्य रखते हैं या नहीं।

ग्रंथ का रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८०७ के पूर्व इस आधार पर माना गया है कि हस्तलेख के आरंभ के चार पत्रों पर विजयादशमी की पूजा का विवरण दिया है जिसमें यह संवत् उल्लिखित है। विवरण इस प्रकार है:—

'जा जात्रा रामचंद्रे जलनिधि तरने······विजयदशमी मिति कुआर सुदि १० संवत् १८०७।'

इसी प्रकार क्रमशः संवत् १८३० तक की पूजा का उल्लेख है जो ग्रंथस्वामी के यहाँ संपन्न हुई होगी।

अनुवाद दोहा चौपाइयों में किया गया है। भाषा ब्रजी है। साहित्यिक दृष्टि से ग्रंथ साधारण कोटि का है।

२५५ विसराव या विसरावदास (विश्रामदास)—इनके दो ग्रंथ 'श्रीरामनामा' और 'राम हितावली' प्रस्तुत खोज में विवृत हुए हैं। दोनों एक हस्तलेख में हैं। रचनाकाल किसी में नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १९५८ है। प्रस्तुत हस्तलेख संवत् १९१५ में लिखे गए एक अन्य प्रति से नकल किया गया है। इससे यह पता चलता है कि इन ग्रंथों की रचना संवत् १९१५ के पूर्व हुई। प्रथम रचना कवित्तों में है और दूसरी सवैयों में। प्रत्येक कवित्त सवैया के चौथे चरण में क्रमशः 'इहै विसराव मन राम नाम सुमिरहु नाहीं तौ विरथ दीन जात है तोहार हो' और 'राम बिना हित दूसर नाहीं' पद आते हैं।

रचयिता ने 'राम हितावली' में यत्र तत्र कुछ अपने विषय में भी उल्लेख किया है जिसके अनुसार ये बलिया जिला में जाम ग्राम के निवासी थे। ये जाति के सेंगर ठाकुर थे तथा इनके गुरु का नाम 'नीतनंद' (संभवतः नित्यानंद) था।

'कहै वीसराव जे जामु के सेंगर रामवीना हीत दूसर नाहीं' ॥ २३ ॥

× × × ×

नीतनंद गुरु बीसराव के राम वीना हीत दूसर नाहीं ॥ ३२ ॥

रामहितावली

× × × ×

जाम ग्राम में लोगों से तथा इनके वंशज अछूतानंद सिंह और विश्वनाथ सिंह द्वारा इनका वंशवृक्ष इस प्रकार विदित हुआ है :—
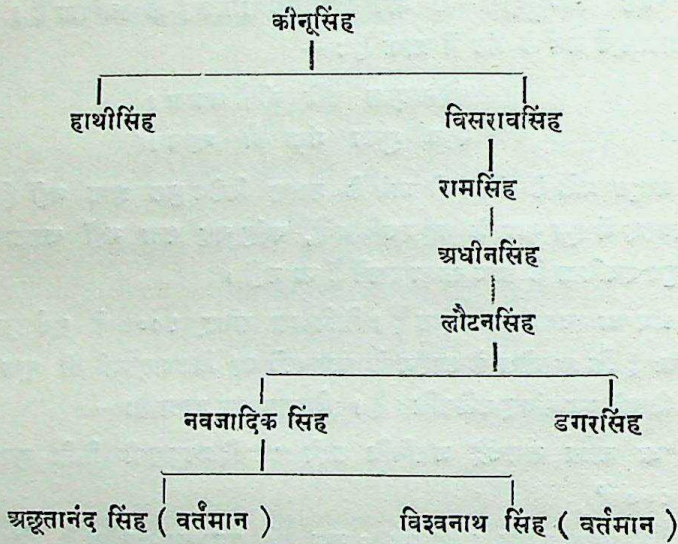
कुछ लोगों का कहना है कि विसरावदास बाबा साधु भेष में रहते थे तथा अविवाहित थे।

ग्रंथों की भाषा में भोजपुरी का मिश्रण पाया जाता है। इनका रचा एक ग्रंथ 'विश्रामसागर' भी कहा जाता है।

श्री प्रसिद्ध नारायण सिंह जी (बलिया के एक साहित्यिक) कृत 'बलिया के कवि और लेखक' नामक पुस्तक में इनके गुरु का नाम बुलाकीदास दिया है।

२५६ वृंद कवि—इनका उल्लेख खोज विवरण (००-१२१) (२-६, ४२) (९-२३०) (२३-४४६) (२६-५०४) (दि० ३१-१६) में हो चुका है जिनके अनुसार ये संवत् १७४३ के लगभग वर्तमान, मेड़ता (जोधपुर) निवासी और कृष्णगढ़ नरेश महाराजा सावंतसिंह (नागरीदास) के पिता महाराज राजसिंह के गुरु थे। संवत् १७६१ में बादशाह औरंगजेब की फौज के साथ ये ढाका तक गए थे। ये सेवक जाति के ब्राह्मण थे। इनके वंशज कवि जयलाल कृष्णगढ़ में वर्तमान हैं, देखिए खोज विवरण (२-७३)।

इस बार इनके निम्नलिखित तीन ग्रंथ और मिले हैं :—

१-पति मिलन—रचनाकाल और लिपिकाल ज्ञात नहीं। विषय-शृंगार।

२–पवन पच्चीसी—रचनाकाल और लिपिकाल अप्राप्त हैं। विषय–षट्ऋतु वर्णन।

३–यमक सतसई—रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। विषय-विविध भेदों उपभेदों सहित यमकालंकार का वर्णन। यह महत्वपूर्ण रचना है।

२४७ वृंदावनदास—इनका उल्लेख पिछले खोज विवरणों में हो चुका है, देखिए खोज विवरण (६–२५०) (९-३३१) (१२–१९६) (३२–२३२)। ये हित हरिवंश जी के अनुयायी, राधावल्लभ संप्रदाय के वैष्णव तथा चाचा हित वृंदावनदास के नाम से प्रसिद्ध थे। संवत् १८०३ के लगभग वर्तमान, वृंदावन में निवास करते थे। प्रस्तुत खोज में इनकी निम्नलिखित नौ रचनाएँ और प्राप्त हुई हैं:—

१–आभास प्रथम पदको तथा पद—रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात, विषय, वृंदावन की शोभा और कुंज में राधा कृष्ण के श्रृंगार का वर्णन तथा हित हरिवंशजी की वंदना। रचना गद्य में है जिसमें रचयिता का कोई उल्लेख नहीं; परंतु आगे वृंदावन दास जी के पद दिए होने से यह भी उन्हीं से संबंधित मान ली गई है। पदों में 'रूपहित' का उल्लेख मिलता है जो रचयिता के गुरु थे।

२–कलि प्रतापबेलि—रचनाकाल संवत् १८६४ है, लिपिकाल दिया नहीं। विषय, कलियुग की बुराइयों का वर्णन तथा कृष्ण भक्ति का उपदेश। प्रस्तुत रचना से इनका श्री रूपहित (रूपलाल) का शिष्य होना प्रकट होता है।

३–नीति कुंडलिया—रचनाकाल संवत् १८१०; लिपिकाल अज्ञात। विषय-कृष्ण भक्ति। इसमें कहावतों का भी प्रयोग किया गया है, जैसे:—

१–भयौ नगारौ कूच कौ घोरन बाँधे जीन।
२–नाव कूदि बंदरा मरै टूक जोगना खाय।
३–घरी घरी के रूठने पहर मनावत जात।

रचनाकाल का पद खंडित है। यह ग्रंथ का अंतिम दोहा है जिसमें छंद संख्या २००८ (२०८ ?) दी हुई है। संभवतः संख्या में भूल है, क्योंकि समस्त ग्रंथ के अनुष्टुप् छंदों की संख्या केवल २२८ ही है।

४-विमुख उद्धारन वेलि—रचनाकाल संवत् १८२३, लिपिकाल अज्ञात। विषय, रोचक कथा के ढंग पर है :—

'एक स्त्री सांसारिकता में अत्यंत लिप्त थी जिसे एक साधु ने उपदेश द्वारा भक्ति मार्ग पर अग्रसर किया। स्त्री और साधु का बड़ा वाद विवाद उठा जिसमें स्त्री ने लौकिक पक्ष का समर्थन कर वैराग्य और साधुता को पाखंड बतलाया। परंतु अंत में स्त्री परास्त हुई और उसने भक्ति मार्ग ग्रहण किया।

रचयिता ने अपने पूर्ववर्त्ती कुछ भक्तों के नाम दिए हैं। चिरपरिचित और विख्यात भक्तों को छोड़कर शेष के नाम इस प्रकार हैं:—

नरहरियानंद, जैमल, हरीदास (स्वामी हरिदास से भिन्न राधावल्लभी), केशव काश्मीरी, श्री भट्ट, कृष्णदास, गिरधारी, परमानंद।

५-मन प्रबोध वेलि—रचनाकाल संवत् १८१३, लिपिकाल अज्ञात। विषय, कृष्णभक्ति और गुरु महिमा का वर्णन।

६-मन चितावनि वेलि—रचनाकाल संवत् १८२०, लिपिकाल अज्ञात। विषय, चेतावनी और उपदेश। प्रस्तुत रचना 'मनप्रबोध' और 'विमुख उद्धारन वेलि' के साथ एक हस्तलेख में है।

७-हित रूपस्वामिनी अष्टक—रचनाकाल, लिपिकाल अप्राप्त। विषय, श्री राधिका जी की स्तुति। इस रचना के साथ कृष्णदास हित और कमल नैन हित के भी एक-एक पद हैं।

८-पदसंग्रह—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय, फूलडोल (चैत्र में), फूल रचना (जेष्ठ में), चंदन रचना, उशीर मंदिर, जल बिहार और नौका बिहार आदि का वर्णन। समस्त ८५ पद हैं।

९-कृपा अभिलाष वेलि—रचनाकाल संवत् १८१२ है। अन्वेषक ने ग्रंथ में दिए काल को हिजरी सन् मानकर संवत् १७६२ दिया है जो भूल है। संवत् का दोहा इस प्रकार है :—

ग्यारह सै गति जानि ऊपर वर्ष 'सुबारहो'।
वांछित कृपा बखान श्री राधा ··· ··· ··· ॥ ११० ॥

इसमें 'ग्यारह' शब्द लिपिकर्ता के लिपिदोष के कारण 'ठारह' का परिवर्तित रूप स्पष्ट जान पड़ता है। रचयिता के लिखने के ढंग से भी प्रकट होता है कि यह 'ठारह' ही है। देखिए अन्य रचनाएँ। अतः रचनाकाल संवत् १८१२ ही ठीक जान पड़ता है। लिपिकाल नहीं दिया है। विषय, भक्ति। रचना सोरठों में की गई है जिनकी संख्या ११२ है।

उपर्युक्त 'मन चितावनी वेलि' दो अन्य रचनाओं 'मनप्रबोध' और 'विमुख उद्धारन वेलि' के साथ एक हस्तलेख में है।

प्रस्तुत रचनाओं से रूपहित (रूपलाल हित) रचयिता के गुरु ज्ञात हुए हैं।

२५८ वैष्णवदास (रसजानि)—वैष्णवदास और रसजानि कृत एक अपूर्ण ग्रंथ 'गीत गोविंद (भाषा)' के विवरण लिए गए हैं। यह संस्कृत के प्रख्यात गीत गोविंद का हिंदी में अनुवाद है। अनुवाद दोहा, कवित्त, सवैया और अष्टपदियों में किया गया है जो अत्यंत सरल बन पड़ा है। रचनाकाल संवत् १८१४ है। लिपिकाल प्राप्त नहीं।

रचयिता का पुष्पिका द्वारा 'रसजानि' नाम भी प्रकट होता है। ये गौड़ीय संप्रदायानुयायी थे। गुरु का नाम हरिजीवन था। प्रस्तुत ग्रंथ के साथ ये पिछले खोज विवरण (९-३२४) में उल्लिखित हैं तथा खोज विवरण (१-५४) (५-८८) (६-२४७) में इनके कुछ अन्य ग्रंथ विवृत हुए हैं। उक्त विवरणों में इन्हें प्रियादास जी का पुत्र कहा गया

है जो प्रामाणिक नहीं जँचता। प्रस्तुत ग्रंथ में प्रियादास जी का उल्लेख किया है परंतु उससे यह प्रकट नहीं होता कि वे इनके पिता थे। संभवतः ये इनके गुरु के गुरु रहे होंगे।

२५६ व्यासजी—प्रस्तुत खोज में इनकी निम्नलिखित चार रचनाएँ प्राप्त हुई हैं:—

१–व्यासवानी—रचनाकाल अप्राप्त। लिपिकाल संवत् १६६३ या १८६३। दूसरे संवत् के लिये संभावना प्रकट की गई है। विवरण पत्र में न तो संवत् का ही उल्लेख है और न पुष्पिका का। अतः लिपिकाल का आधार कोई अन्य ग्रंथ है जो इस रचना के साथ एक हस्तलेख में है।

इसमें युगलमूर्ति की वंदना, गुरु, साधु स्तुति, साधु विरह, यमुनास्तुति, नाम कीर्तन, वृंदावनस्तुति, मधुपुरी स्तुति, श्री किशोर और किशोरी जी की स्तुति आदि अनेक विषयों पर पद रचनाएँ हैं। यह विशाल रचना है। काव्य की दृष्टि उच्चकोटि की है।

२–रस के पद—रचनाकाल और लिपिकाल अप्राप्त। विषय, श्री कृष्ण लीला वर्णन। रचना अपूर्ण है।

३–पद संग्रह—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय, ज्ञान, वैराग्य और भक्ति। यह भी अपूर्ण रचना है।

४–फुटकर दोहे—रचनाकाल लिपिकाल अप्राप्त। विषय, ज्ञान, वैराग्य, वृंदावन की महिमा और राधा कृष्ण की भक्ति का वर्णन। इसमें समस्त ८६ दोहे हैं।

प्रथम को छोड़ शेष रचनाएँ एक ही हस्तलेख में हैं।

रचयिता काफी प्रसिद्ध हैं, परंतु इनके संबंध में अभी वाद विवाद चला ही आ रहा है। कोई इन्हें माध्वगौड़ेश्वरानुयायी और कोई हितानुयायी बतलाते हैं।

इनके प्राप्त ग्रंथों में 'व्यासबानी' खोज विवरण (६–११८) (९–३३२) (१७–२०४) में, 'रस के पद' खोज विवरण (६-११८) (९-३३२) तथा 'दोहे' (पं० २२-११४) पर विवृत हो चुके हैं।

२६० ब्रजराज पंडित—इनके द्वारा रचित 'दानलीला' की दो प्रतियों के विवरण लिए गए हैं। विषय, नाम से ही स्पष्ट है। रचनाकाल किसी प्रति में नहीं दिया है। लिपिकाल पहली प्रति का संवत् १६११ और दूसरी का संवत् १६३९ है। यद्यपि दोनों प्रतियाँ पूर्ण हैं तथापि दूसरी में आरंभ का दोहा अधिक है।

ग्रंथ द्वारा रचयिता का कोई विवरण नहीं मिलता। खोज विवरण (९–१९५) में बनारस निवासी एक ब्रजराज का उल्लेख है जो मालवीय शुक्ल ब्राह्मण, मथुरानाथ के पिता और संवत् १८१२ के लगभग वर्तमान थे। परंतु उनकी किसी रचना का उल्लेख न होने के कारण यह नहीं कहा जा सकता कि ये प्रस्तुत रचयिता से अभिन्न हैं।

२६१ ब्रजवासीदास—प्रस्तुत खोज में इनके 'ब्रज विलास' नामक ग्रंथ की एक प्रति मिली है। इसका विवरण पहले कई बार लिया जा चुका है, देखिए खोज विवरण (२-८) (६–१४१) (९–३६) (२०–२२) (२३–६६, ७०)। परंतु इनमें दिए रचनाकाल में अंतर पाया जाता है। खोज विवरण (९–३६) में रचनाकाल संवत् १९०९

तथा खोज विवरण (२३–७०) में संवत् १८०८ है। आश्चर्य यह कि दोनों विवरणों में रचनाकाल का दोहा एक ही है। प्रस्तुत प्रति में भी ठीक यही दोहा है। इसके अनुसार रचनाकाल संवत् १८२७ होता है। दोहा इस प्रकार है :—

संवत् शुभ पुरान सत जानो। तापर और नछत्रन आनौ॥
माघ सुमास पच्छ उजियारा। तिथी पंचमी सुभग शशि वारा॥

'नछत्रन' शब्द बहुवचन में जिसकी संख्या २७ (नक्षत्र २७ हैं) होती है।

इसके अनुसार रचनाकाल संवत् १८२७ स्पष्ट लक्षित होता है जो शुद्ध जान पड़ता है।

२६२ शिवदयाल—इन्होंने वल्लभ संप्रदाय के आचार्य श्री गोपाललालजी की काशी यात्रा का 'श्री गोपाल जी काशी पधारे सो प्रकार' नाम से विस्तृत वर्णन किया है। पुष्पिका से जान पड़ता है कि इसकी रचना संवत् १८७९ में हुई। लिपिकाल भी यही है।

जैसा कि पुष्पिका के लेख से प्रकट होता है, प्रस्तुत रचयिता जाति के माली थे और काशी के दुर्गाकुंड स्थान पर रहते थे। पुष्पिका का लेख इस प्रकार है :—

'मिती वैशाख वदी ५ संवत् १८७९ साल दुर्गाकुंड के बाग में दसकत सिउ दयाल माली हमारे बाग को श्रीमती सामाबेटी जी के चरनारविंद पेड़िया की कोटिन कोटि दंडवत जो बडेन के श्रीमुख से सुनीहती सो लिखो है। ग्वालदास साह को पुर्जा आयौ सो जहाँ की जोगता हती तहाँ लिखो है। इति श्री समाप्तं शुभमस्तु॥'

इस लेख से यह भी प्रकट होता है कि विवरण लेखक ने जैसा कुछ बड़ों के मुख से सुना उसी प्रकार लिखा। इन्होंने किसी सामाबेटी का भी उल्लेख किया है जो वल्लभ कुल की स्यामा बेटी ज्ञात होती है।

२६३ शिवनारायण स्वामी—ये शिवनारायणी पंथ के प्रवर्तक और उच्चकोटि के संत थे। इस बार बलिया जिला के अंतर्गत ससना ग्राम निवासी ठा० रामशंकर सिंह जी (स्वामी जी के वंशज) के द्वारा इनका विस्तृत वृत मिला है जो इस प्रकार है :—

'श्री स्वामी शिवनारायण जी का जन्म चंदवार में हुआ था। घर से विरक्त होने पर ये पंद्रह मील उत्तर एक जंगल में चले गए। पीछे कुटुंबी जन भी उनका वियोग न सह सकने के कारण उनके पास चले गए। इसपर स्वामी जी ने उन्हें जंगल काटकर गाँव बसाने की आज्ञा दी। अतः जंगल काटकर गाँव बसाया गया जिसका नाम स्वामी जी की आज्ञानुसार ससना रक्खा गया। इस ग्राम में जितने नरवनी राजपूत हैं वे सब स्वामीजी के ही वंशज हैं। स्वामी जी यहाँ विरक्त भेष में ही रहते थे। जंगल में एक बरगद के पेड़ के नीचे गुफा बनाकर योगसाधना में लीन रहते थे। यह स्थान अब भी चिह्नस्वरूप एक खेत के किनारे छोड़ दिया गया है जिसके पूर्व में कुछ बाँस के पेड़ भी हैं। यहाँ से लगभग एक सौ गज की दूरी पर उत्तर पश्चिम कोने में स्वामी जी ने एक आम का बाग पांच बीघा रकबे पर लगाया था। अब भी लगभग बीस पचीस पेड़ बाग में वर्तमान हैं

जो अदालती कागजों में 'बाग शिवनारायण जी साहब' के नाम से लिखा हुआ है। मृत्यु के पश्चात् स्वामीजी की समाधि इसी ग्राम में बना दी गई। इस समय यह समाधिस्थान प्रधान गद्दी ससना धाम के नाम से सर्वत्र प्रसिद्ध किया जा रहा है। यहाँ स्वामी जी के हाथ के लिखे हुए ग्रंथ भी थे, परंतु कुछ वर्ष हुए वे चोरी चले गए। गाँव के एक घर में उनकी खड़ाऊँ अभी तक विद्यमान हैं जिनकी घरवाले नित्यप्रति पूजा करते हैं।

उनके गुरु का नाम दुखहरण था जो ब्राह्मण थे तथा ससना से लगभग एक फर्लांग की दूरी पर बहादुरपुर के निवासी थे। इन्होंने भी एक बाग लगाया था जिसमें अब एक महुवा का वृक्ष शेष है। बहादुरपुर में इनका एक कच्चा मंदिर बना दिया गया है।

स्वामी शिवनारायण जी का 'गुरु अन्यास' ग्रंथ बहुत प्रसिद्ध है जिसमें इन्होंने अपना वृत्त इस प्रकार दिया है :—

जन्मभूमि है कनउज देसा। क्रमवसी ते वंग परवेसा॥
गाजीपुर सरकार कहावै। सुबे परआग अमल में पावै॥
से आसथान चंद्रवार कहावै। सीवनारायन जन्म ताँहाँ पावै॥

कनउज (कन्नौज फर्रुखाबाद) को जन्मभूमि कहने से संभवतः यह तात्पर्य है कि उनके पुरखे वहाँ से चंद्रवार (अब बलिया जिला तथा उस समय गाजीपुर में) आए होंगे। उनका जन्म वास्तव में चंद्रवार (अब चंदवार) में ही हुआ था। चंद्रवार उस समय सूबा प्रयाग के अंतर्गत गाजीपुर सरकार के जहुराबाद परगना में था।

स्वामी जी के गुरु का नाम 'दुखहरन' था जिसका उल्लेख 'गुरु अन्यास' के अतिरिक्त उनकी 'रूपसरी' नामक रचना में भी है :—

'दुखहरन नाम से गुरु कहावै।
बड़े भाग से दरसन पावै॥'

गुरु अन्यास

× × × ×

'दुखहरण गुरु पाये।
दुखहरण के पावते गती मुक्ती होये जाये'॥

रूपसरी

× × × ×

गुरु अन्यास के अनुसार ये संवत् १७९१ तक वर्तमान थे। उस समय महम्मद शाह दिल्ली का बादशाह था :—

संमत सत्रह से ऐकानवे होई। ऐगारह सै सन पैतालिस सोई॥
अगहन मास पछ अजीआरा। तीरथ तीरोदसी सुकर संवारा॥
तेही दिन नूिम एक कथा पुनीता। गुरु अन्यास कथा समहीता॥
साह महमद दीली सुलताना। कासी क्षेत्र आगरे है थाना॥

इस बार खोज में स्वामी जी के ग्यारह ग्रंथ मिले हैं जो निम्नलिखित प्रकार से हैं:—

१—गुरु अन्यास—दो प्रतियाँ मिली हैं। रचनाकाल संवत् १७९१; लिपिकाल दोनों का अज्ञात है। विषय—ज्ञानोपदेश। यह उत्तम रचना है।

२—टीका—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय, शंकासमाधान द्वारा ज्ञानोपदेश वर्णन। यह किसी दूसरे की रचना ज्ञात होती है।

३—वानी—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय-ज्ञानोपदेश।

४—रूपसरी—रचनाकाल लिपिकाल अप्राप्त। विषय-संत, गुरु तथा संतदेश (ब्रह्म) का दार्शनिक विवेचन। यह उत्तम रचना है।

५—लव—रचनाकाल लिपिकाल अप्राप्त। विषय-'संत' और 'शब्द' से लौ लगाने का उपदेश।

६—विना नाम का ग्रंथ—रचनाकाल लिपिकाल अप्राप्त। विषय—ज्ञानोपदेश। यह अपूर्ण है।

७—शब्द ग्रंथ संत महिमा—रचनाकाल अज्ञात। विषय-संत की महिमा का वर्णन।

८—शब्दावली—रचनाकाल अज्ञात। लिपिकाल संवत् १९३८। विषय—अध्यात्म। इसकी रचना पदों में की गई है। रचना उत्तम है।

९—संत वोजन—रचनाकाल लिपिकाल अप्राप्त। विषय—संत के गुण और उनके नाम, असंत के दुर्गुण और उनके नाम, पच्चीस प्रकृति और पाँच तत्त्व तथा उनके प्रसार आदि का वर्णन। यह किसी शिष्य वर्ग की रचना ज्ञात होती है।

१०—संताखरी—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय—सांसारिक सुख दुख और संत महिमा का विवेचन।

११—हुकुम नामा—रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात। विषय संत नाम का स्मरण करते हुए सत्कर्म करने का उपदेश। यह शिष्य वर्ग की रचना ज्ञात होती है।

स्वामी शिवनारायण जी का उल्लेख पिछले खोज विवरणों में भी हो चुका है, देखिए (९-२९४) (२६-४४८) (३५-९३)।

२६४ शिवराम—प्रस्तुत खोज में इनके रचे कुछ कवित्तों के 'कवित्त' नाम से विवरण लिए गए हैं। जिस हस्तलेख से इन 'कवित्तों' के विवरण लिए गए हैं उसमें गुसाईं चंदलाल जी कृत 'भागवत सार पचीसी', श्री सुखदेवजी कृत 'अध्यात्म प्रकाश', अकबर और वीरबल के परिहास, जहांगीर, शाहजहाँ और औरंगजेब के संबंध की कहानियां, कुछ फुटकल दोहे एवं कवित्त भी लिपिबद्ध हैं। कवित्तों में श्री कृष्ण चरित्र जन्म से लेकर पूतना बध तक संक्षेप में वर्णित है। इनकी संख्याओं को देखने से ज्ञात होता है कि बहुत से कवित्त छूटे हुए हैं। कवित्त संख्या दो के पश्चात् छप्पय संख्या चार आ जाता है

तथा ११वें कवित्त के बाद १३वाँ कवित्त है। इसी तरह अन्यत्र भी है। किंतु कथा का तार मिला हुआ है। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं। साहित्यिक दृष्टि से रचना सुंदर है।

रचयिता के जीवनी के संबंध में कुछ विदित नहीं होता। रचनाकाल न होने के कारण इनका समय भी नहीं मालूम किया जा सकता।

२६५ शिवबक्स राय—इनकी 'पवन परिछ्या' का विवरण लिया गया है जिसका विषय राम कथा का संक्षेप में वर्णन करना है। इसमें यत्रतत्र कहावतें भी लिखी गई हैं जिनका राम कथा से कोई संबंध नहीं है। रचना का क्रम इस प्रकार है, पहले कहावत, फिर दोहा, तदनंतर सवैया या कवित्त। दोहा, कवित्त और सवैयों में राम कथा का वर्णन है। रचयिता ने रचना करने का जो कारण दिया है वह इस प्रकार है :—

नवरस विश्व प्रसिद्ध हैं तामें हाँस सुहान।
सबकी रुचि सुचि राम गुन तासो हास वपान॥ ४॥
विश्व विदित मसले सवै सवै वरन के नाम।
निज मुष दोहा कवित कहि आदि अंत गुन राम॥ ५॥

इससे प्रकट होता है कि हास्यरस की दृष्टि से प्रस्तुत रचना की गई है। साथ-साथ सभी प्रचलित कहावतें (मसलों) तथा वर्णों का भी नाम गिनाने का प्रयास किया गया है। रचनाकाल संवत् १८९२ है। लिपिकाल भी यही है।

प्रस्तुत ग्रंथ की पुष्पिका से पता चलता है कि रचयिता जाति के खत्री तथा गरियलपुर के रहने वाले थे। गरियलपुर कहाँ और किस जिले में है पता नहीं। रचनाकाल के अनुसार ये संवत् १८९२ में वर्तमान थे।

२६६ शिवाराम स्वामी—इनकी 'भक्ति जयमाल' नामक रचना खोज विवरण (९–२९६) में विवृत हो चुकी है। इसमें नाना भक्तों तथा चौबीस अवतारों की कथाएँ देकर रामभक्ति एवं उसकी महिमा का वर्णन किया गया है। इसमें १०९ अध्याय हैं जिनका सविस्तृत उल्लेख विवरणपत्र में किया गया है। ग्रंथ में ग्रंथकार ने रामचरितमानस की शैली अपनायी है। कुछ चौपाइयों के पश्चात् एक दोहा दिया गया है। कहीं-कहीं छंद और संस्कृत के श्लोक भी दिए गये हैं। ग्रंथ काव्य की दृष्टि से उत्तम है। भाषा का भी अच्छा गुणगान किया गया है, यथाः—

'भाषा अर्थ संस्कृत वानी। भाषा भनीत अमीय सम जानी॥'

× × × ×

'भाषा भगीती देषी जो डरई। सो मतिहीन नरक मह परई॥'

यह ठेठ अवधी में लिखा गया है।

खेद है ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति कैथी लिपि में लिखी होने के कारण बहुत अशुद्ध है। कहीं-कहीं अक्षर भी उड़ा दिए गए हैं। यह आदि अंत में खंडित है। आरंभ में एक पत्र नहीं है और अंत में ३३६ संख्या के पश्चात् के पन्ने नष्ट हो गए हैं। यही कारण है कि इसका लिपिकाल अविदित है। रचनाकाल संवत् १७८७ है।

ग्रंथ से तो ग्रंथकार का परिचय ज्ञात नहीं होता, परंतु ग्रंथकार के विषय में जा अन्यत्र से सूचनाएँ मिली हैं वे दी जाती हैं। श्रीयुत प्रसिद्ध नारायण जी ने 'बलिया के कवि और लेखक' नाम से एक पुस्तक लिखी है। जिसमें बलिया के समस्त प्राचीन कवियों और लेखकों का जीवन वृत्त दिया है। इसमें प्रस्तुत ग्रंथकार के विषय में लिखा है :—

'आप बलिया के ज्ञात कवियों में सबसे प्राचीन हैं। जाति के कायस्थ थे और कारों नामक ग्राम में पैदा हुए थे। आज से दो सौ वर्ष पूर्व आपने 'भक्ति जयमाल' नामक एक वृहद् ग्रंथ की रचना की थी। इसमें कुल १०६ अध्याय हैं।

× × × ×

'शिवराम जी के जन्मकाल का ठीक-ठीक पता नहीं चलता; किंतु 'भक्ति जयमाल' के आदि में आपने लिखा है :—

'संमत सतरह सौ सतासी। माघ मास तेरस शुभरासी ॥'

× × × ×

'तेहि दिन कथा जन्म कवि कीन्हा। मास पक्ष तिथि दिन कहि दीना' ॥

'इस प्रकार यदि हम मान लें कि शिवाराम जी ने लगभग ५० वर्ष की अवस्था में ग्रंथारंभ किया होगा, जैसा कि कारों के वृद्ध पुरुषों के कहने से जान पड़ता है; तो उनका जन्मकाल संवत् १७३७ के आसपास मानना पड़ेगा। निम्नलिखित दोहे से जान पड़ता है कि आपने 'भक्ति जयमाल' को पूरे सोलह वर्षों में समाप्त किया था :—

'हर दग व्योम अष्टादशी, संवत् संख्या दीन।
आश्विन शुक्ला पंचमी, कथा समापत कीन ॥'

× × × ×

'शिवाराम जी के विषय में बहुत सी किंवदंतियां कही जाती हैं जिनके लिखने के लिये यहाँ स्थान नहीं है। आप श्री वैष्णव संप्रदाय के महात्मा थे। संस्कृत के भी भारी विद्वान थे जो आपके रचित संस्कृत के श्लोकों से जान पड़ता है। प्रसिद्ध औघड़ बाबा कीनाराम आपके चेले थे। ये महात्मा भी पहले श्री वैष्णव थे। बाद को अपने गुरु के श्राप के कारण इन्होंने औघड़ मत धारण किया।'

२६७ शेख महमूद चिश्ती—इनके द्वारा रचित 'गंजुल इसरार' के विवरण लिए गए हैं। 'गंजुल इसरार' का अर्थ रहस्य की निधि है और यह सूफी मत की रचना है। इसके आरंभ में परमात्मा की प्रशंसा है तत्पश्चात् सृष्टि की कथा, शैतान और मुहम्मद

की उत्पत्ति का वर्णन है। अंत में मुमुक्षु के लिये शरीयत, तरीकत आदि उपायों का विस्तार के साथ वर्णन किया गया है। इसके रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता का जीवन वृत्त अनुपलब्ध है। रचनाकाल के लिये रचयिता ने दिन, महीना और समय तक दिया है, पर सन् संवत् का कोई उल्लेख नहीं। अतः इनका समय जानने के लिये भी कोई सूत्र नहीं।

२६८ श्री कृष्ण चर्चरीक—प्रस्तुत खोज में इनके 'तिमिर प्रदीप' का विवरण लिया गया है। यह ज्योतिष विषयक ग्रंथ है। इसमें संस्कृत के बाराह मिहिरकृत सूर्य सिद्धांत का अनुकरण करके एवं द्वादश राशियों को आधारभूत मानकर विभिन्न प्रकार से उनका फल वर्णित है। ग्रंथ के अंतिम भाग में प्रश्नों का समाधान करने की प्रक्रिया का वर्णन अपूर्व है। इसका रचनाकाल यह है—

'विक्रम रवि नृप राजा गत वसु[८] ग्रह[९] रिषि[७] शशि[१] काल ॥'

रचयिता का ग्रंथ से कोई परिचय नहीं मिलता। रचनाकाल के अनुसार ये सं० १७९८ में वर्तमान थे।

२६९ श्री कृष्णदास—इनकी एक रचना 'श्री कृष्णदास जू को मंगल' नाम से विवृत हुई है। इसमें श्री स्वामी हरिदास जी का गुणगान, राधा कृष्ण का विहार और श्री विहारिनदास और श्री नागरीदास जी का यश वर्णन किया गया है। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं। रचना द्वारा संप्रदायगत कुछ विशेषताओं का भी थोड़ा आभास मिलता है।

रचयिता टट्टी संप्रदाय के अनुयायी तथा नागरीदास जी के शिष्य थे। इन्होंने विहारिन दास जी की अधिक प्रशंसा की है। अन्य वृत्त नहीं मिलता। खोज में ये प्रथम बार ही ज्ञात हुए हैं।

२७० श्रीधर मुरलीधर—इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या ७ पर हो चुका है। अतः देखिए उक्त अंश।

२७१ श्री भट्ट जी—ये निंबार्क संप्रदाय के आचार्य थे। इनके शिष्य हरिव्यास जी स्वामी परशुराम जी के गुरु थे। इनका उल्लेख 'जुगलसत' के रचयिता के रूप में खोज विवरण (००-३६, ७५) (६-२३७) में हुआ है। उनमें इन्हें श्री परशुराम जी का गुरु कहा गया है जो भूल है। परशुरामजी वास्तव में जैसा कि ऊपर कहा गया है श्री हरिव्यास जी के शिष्य थे, देखिए खोज विवरण (३५-७४)। इस बार इनकी 'आदिवाणी जुगल सत सिद्धांत' नामक रचना मिली है। इसकी प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है। इसमें सिद्धांत सुखपद, ब्रजलीला सुख, सेवा सुख, सहजसुख, सुरत सुख और उछाह (उत्साह) सुख आदि विषयों पर पद रचे गए हैं जो उच्चकोटि के बन पड़े हैं। रचनाकाल लिपिकाल नहीं दिए हैं। 'जुगलसत आदिवाणी' की रचना पृथक-पृथक होकर एक में मिली है।

वृंदावन में कहते हैं कि श्री भट्ट जी अलाउद्दीन के समय में वर्त्तमान थे।

२७२ श्रीलाल रघुवंशवल्लभ—ये 'मनसंबोध' नामक विशाल ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ की रचना दोहा और सोरठों में हुई है तथा इसमें दश प्रकाश हैं। विषय राम चरित वर्णन करना है। साथसाथ संलग्न विषयों की वेदांतानुसार पांडित्यपूर्ण व्याख्या की गई है। रचनाकाल संवत् १९१२ है, लिपिकाल का उल्लेख नहीं।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और वृत्त नहीं मिलता।

२७३ श्रीलाल शाह—ये तथा प्रस्तुत विवरण के संख्या २४४ पर आए 'लाल जी शाह' एक ही व्यक्ति हैं। अतः इनके संबंध में देखिए उक्त संख्या की टिप्पणी। इनके 'हरिवंश' की प्रस्तुत प्रति अपूर्ण तथा अत्यंत जीर्ण शीर्ण अवस्था में पाई गई है जिसका लि० का० सं० १८८२ है। रचनाकाल अज्ञात है।

२७४ संतदास—इनकी एक रचना 'सुमिरन को अंग' नाम से इस बार विवृत हुई है। इसमें राम नाम की महिमा, सुमिरन की विधि तथा फल का वर्णन है। रचना दोहों में है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। इसकी प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है।

ग्रंथ द्वारा रचयिता का कोई विवरण नहीं मिलता। ये निर्गुण पंथानुयायी कोई संत जान पड़ते हैं। संभवतः खोज विवरण (६-२८१) (२३-३७५) पर आए संतदास ये ही हैं।

प्रथमोक्त विवरण में उल्लिखित संतदास का दूसरा नाम शिवदास तथा उपनाम हजारीदास दिया है एवं उन्हें कबीरपंथी साधु बतलाया गया है।

२७५ सदालाल—प्रस्तुत रचयिता की 'जंग' नामक छोटी सी रचना विवृत हुई है। इसका विषय रामभक्ति है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। इसकी भाषा पंजाबी है। 'कहँवा' आदि शब्द प्रयुक्त हुए हैं जो पूर्वी के हैं, परंतु ऐसे शब्द बहुत कम, नहीं के बराबर हैं। रचना पदों में है।

रचयिता का कोई वृत्त नहीं मिलता। रचना की भाषा के आधार पर इनके पंजाब निवासी होने की संभावना है।

२७६ सरदार कवि—प्रस्तुत रचयिता पिछले कई खोज विवरणों में उल्लिखित हैं, देखिए खोज विवरण (३-९२, १६४) (४-५६,५७, ७६, ८६) (६-२८३) (२०-१७४)। इनके अनुसार ये सं० १९०३ के लगभग वर्त्तमान, ललितपुर (झाँसी) निवासी और काशी नरेश ईश्वरी प्रसाद नारायण सिंह के आश्रित थे। पिता का नाम हरिजन था।

इस बार इनकी 'मानस रहस्य' नामक रचना मिली है। जिसमें गो० तुलसीदास कृत रामायण की चौपाइयों में पिंगल और अलंकार आदि काव्य के अंगों का विवेचन है तथा कठिन स्थलों के भाव और अर्थ प्रकट किए गए हैं। रचनाकाल संवत् १९०४ और लिपिकाल संवत् १९२१ है।

२७७ सरस्वती (कवींद्राचार्य)—इनका 'जोगवाशिष्ट सार' ग्रंथ पिछले खोज विवरणों में आ चुका है, देखिए (६-२७६) (पं० २२-५३) (२०-७९) (२९-१९१)। तीसरे खोज विवरण में इसका दूसरा नाम 'ज्ञानसार' भी दिया है। यह संस्कृत के 'योग वाशिष्ट' का संक्षिप्त अनुवाद है। प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल का दोहा अपूर्ण है, परंतु पिछली प्रतियों के आधार पर यह संवत् १७१४ है। लिपिकाल संवत् १८४० दिया है।

रचयिता संन्यासी थे और गोदावरी के तटपर रहते थे। पीछे बनारस में आकर निवास करने लगे। ये आश्वलायन शाखा के ऋग्वेदी ब्राह्मण थे।

२७८ सर्वसुखदास—प्रस्तुत रचयिता की दो रचनाएँ, १—कवित्तादि और २—सेवक वानी की टीका नाम की मिली हैं। दूसरी रचना खोजविवरण (९-३८५) पर उल्लिखित है।

कवित्तों का विषय भक्ति है। इनमें रचनाकाल का उल्लेख नहीं मिलता। लिपिकाल संवत् १८८० है। ये 'सेवक वानी' के साथ एक ही हस्तलेख में हैं।

रचयिता अपनी रचनाओं के अनुसार राधा वल्लभी जान पड़ते हैं। इन्होंने चतुर्भुज स्वामी (राधा वल्लभी) के 'द्वादस जस' रचना का उल्लेख किया है। जो खोज विवरण (६-१४८ ए) पर विवृत है। अन्य विवरण अप्राप्त है।

२७९ सहजराम—इनकी 'हिरण्य कश्यपवध' नामक रचना का विवरण लिया गया है जिसमें प्रह्लाद की कथा और हिरण्य कश्यप वध वर्णित है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८८३ है। पुष्पिका से पता चलता है कि प्रस्तुत रचना 'रघुवंशदीपक' नामक ग्रंथ का एक अंश (चौथा सर्ग) है।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और कोई विवरण नहीं मिलता। परंतु खोज विवरण (१२-१६३) (२३-३६७) पर विवृत रघुवंश दीपक के रचयिता यही हैं। प्रस्तुत ग्रंथ जैसा कि ऊपर कहा गया है, 'रघुवंश दीपक' का एक सर्ग है। 'रघुवंश दीपक' की रचना संवत् १७८९ में हुई थी, अतः रचयिता इसके लगभग वर्त्तमान थे। उक्त विवरण के अनुसार ये जाति के वैश्य थे।

२८० सहदेव प्रस्तुत खोज में मिले 'शालिहोत्र' के रचयिता के विषय में अन्वेषक ने सहदेव की संभावना की है; परंतु यह प्रकट नहीं किया कि ऐसा किस आधार पर माना है। विवरण में उद्धृत अंश से ऐसा कहीं नहीं प्रकट होता। अस्तु ग्रंथ का विषय इसके नाम से ही स्पष्ट है। यह नकुलकृत संस्कृत शालिहोत्र का अनुवाद है। रचनाकाल और लिपिकाल अप्राप्त हैं।

यदि प्रस्तुत रचयिता सहदेव हैं तो ये खोज विवरण (६-३२३) और (३५-९०) में उल्लिखित क्रमशः 'गज प्रकाश' और 'संगुनावली' के रचयिता सहदेव से संभवतः अभिन्न हैं।

२८१ सांईझूला—इनकी 'रुक्मिणी हरण' नामक छोटी सी रचना का विवरण लिया गया है। ग्रंथ में रुक्मिणी हरण वर्णित है। इसकी प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है। रचना-काल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

रचयिता के विषय में प्रस्तुत रचना द्वारा कुछ ज्ञात नही होता; परंतु 'राजस्थान में हिंदी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज (प्रथम भाग)' के पृ० १७७ में इनका नाम सायाँझूला दिया है। उसमें इनके विषय में इस प्रकार लिखा है:—

'ये झूलाखाँप के चारण ईडर नरेश महाराज कल्याण सिंह के आश्रित थे। इनका रचनाकाल संवत् १६४० के लगभग है। इन्होंने 'नागदमण' नाम का एक छोटा सा ग्रंथ डिंगल भाषा में बनाया जिसमें वीर और वात्सल्य रस का अच्छा स्फुरण हुआ है।'

२८२ साधु शरण 'साधु' या 'रामसाधु'—ये 'अध्यात्मबोध' नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ में इन्होंने अपना उल्लेख 'साधु' तथा 'रामसाधु' नामों से भी किया है; परंतु अधिक जगह 'साधुशरण' प्रयुक्त होने के कारण यही असली नाम प्रतीत होता है। ये सुखदेव जी के सुप्रसिद्ध शिष्य स्वामी चरणदास जी की शिष्य परंपरा में हुए हैं। ग्रंथ के अंत में इन्होंने अपनी परंपरा इस प्रकार दी है जो स्पष्ट नहीं है:—

सुखदेव
|
चरणदास
|
आतमाराम
|
लछीदास
|
साधुशरण

फिर भी, यह स्पष्ट है कि ये स्वामी चरणदास जी की शिष्य परंपरा में लछीदास जी के शिष्य थे। 'अध्यात्मबोध' के बीच-बीच में कुछ कवित्त सवैये लछीदास जी के भी आए हैं। ग्रंथ गुरु शिष्य संवाद के रूप में लिखा गया है। इसमें छः दर्शनों में अधिक प्रचलित वेदांत दर्शन की प्रशंसा की गई है जिसके अनुसार आध्यात्मिक विषय का प्रतिपादन किया गया है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं है। लिपिकाल एक अन्य ग्रंथ के आधार पर, जो इसी के साथ एक हस्तलेख में है, संवत् १८०६ है।

२८३ सिद्ध गरीब—इनकी कुछ 'वाणियाँ' खोज में प्राप्त हुई हैं जिनके लिये देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १। इनका समय तथा अन्य वृत्त के विषय में कुछ ज्ञात नहीं।

२८४ सिद्ध मालीपाव—इनका नाम सिद्धों के साथ आया है। प्रस्तुत शोध में इनकी कुछ 'वाणियाँ' मिली हैं जिनका विवरण 'सिद्धों की वाणी' के विवरण पत्र में है, देखिए उक्त विवरण संख्या ५६ और विवरण अंश में संख्या १। इनका समय तथा अन्य वृत्त अप्राप्य है।

२८५ सिद्ध हड़ताली—इनको भी सिद्ध कहा गया है। प्रस्तुत शोध में इनकी कुछ वाणियाँ मिली हैं जिनके लिये देखिये 'सिद्धों की वाणी' संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १। समय तथा विशेष परिचय अभी तक अज्ञात है।

२८६ सीतलदास—इनका रचा 'विवेक सार' वेदांत विषय का ग्रंथ है और गुरु शिष्य संवाद के रूप में लिखा गया है। रचनाकाल संवत् १६०३ तथा लिपिकाल संवत् १९०८ है। विषय की दृष्टि से ग्रंथ उत्तम है।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और कोई वृत्त नहीं मिलता। इनका पता खोज में प्रथम बार ही लगा है।

२८७—सुंदरदास—ये अपने दो ग्रंथों—'सुंदर विलास' तथा 'ज्ञान समुद्र' द्वारा काफी प्रसिद्ध हैं। ये दादू जी के शिष्य थे। इनका जन्म काल संवत् १६५३ एवं मृत्युकाल संवत् १७४६ माना जाता है, देखिए खोज विवरण (२–२५) (६–२४२) (१२–१८४) (१७–१८५) (२६–४१०) (पं० २२–१०७) (दि० ३१–८६)। इनके पिता का नाम शाह परमानंद था। जाति के खंडेलवाल वैश्य तथा घौसा (जयपुर) के निवासी थे।

इस बार इनकी 'तरक चिंतावनी' नामक रचना और मिली है। इसका विषय ज्ञानोपदेश है। रचनाकाल लिपिकाल अप्राप्त हैं।

२८८ सुंदरलाल या सुंदरसखि—प्रस्तुत रचयिता के निम्नलिखित तीन ग्रंथ इस बार खोज में विवृत हुए हैं। ये तीनों एक ही हस्तलेख में हैं।

१–सिद्धांत आदि फुटकर विषय वर्णन—रचनाकाल संवत् १६१७; लिपिकाल संवत् १९२५। विषय—सिद्धांत, दास लक्षण, राधिका रानी जस प्रताप, व्रज माहात्म्य, वृंदावन शतक, गिरिराज माहात्म्य, श्री जमुनाजी का व्रज में आगमन आदि विषय वर्णित हैं।

२–निकुंज रसमाधुरी-रचनाकाल लिपिकाल नहीं दिए हैं। विषय—राधा कृष्ण की भक्ति और उनकी लीलाओं का वर्णन। इसके 'माधुरी' नाम से तीन भाग हैं जिनमें से प्रत्येक के उपविभाग भी किए गए हैं। ग्रंथ उत्तम है।

३–सनेह मंजरी–रचनाकाल संवत् १९१६ तथा लिपिकाल संवत् १९२५ के लगभग। विषय–राधा कृष्ण भक्ति तथा पति से निष्कपट प्रेम करने का उपदेश वर्णन।

हस्तलेख में ये ग्रंथ इस क्रम से हैं :—सबसे पहले 'सनेह मंजरी तब 'निकुंज रस माधुरी' और फिर 'सिधांत आदि फुटकर विषय'। लिपिकर्ता ने नकल करने में बार-बार स्याही बदली है। अंतिम रचना (सिद्धांत आदि फुटकर विषय) की पुष्पिका दूसरी स्याही और दूसरी कलम से लिखी गई है। इसमें केवल ग्रंथकार द्वारा एक जमुनादास बाबा को प्रस्तुत ग्रंथ भेंट करने का उल्लेख है। अतः इसे पुष्पिका का लेख भी नहीं कह सकते। ग्रंथांत में एक दोहा इस प्रकार है :—

सत संगिन को दिवस रह्यो सुखद सत्संग।
यह निकुंज रस माधुरी गाई छकि रस रंग ॥ ६६ ॥

इससे पता चलता है कि प्रस्तुत रचना (सिद्धांत आदि फुटकर विषय) निकुंज रस माधुरी का एक अंश है। परंतु भिन्न स्याही और भिन्न कलम से लिखित होने से एवं विषयों में कोई साम्य न होने के कारण दोनों के अलग-अलग विवरण ले लिए गए हैं।

रचयिता ने अपना जो परिचय दिया है उसके अनुसार ये निंबार्क संप्रदाय के अनुयायी थे। पिता का नाम सुखलाल था। जाति के कायस्थ तथा जयपुर के रहनेवाले थे। कुछ दिन वोंलिकागढ़ में भी रहे। जुगलकिशोर की सेवा ये सखिभाव से करते थे। इनका संग एक रोड़ूराम पुजारी से रहता था जो स्वयं भी जुगलकिशोर की सेवा सखिभाव से करते थे। ये उन्हें गुरु की तरह मानते थे। इनके दो अन्य व्यक्तियों, फैजसिंह चौहान और बलदेव सिंह कछुवाहा से भी परिचय था। प्रथम व्यक्ति इन्हें पुत्र तुल्य मानते थे तथा चतुरदास कृत एकादश स्कंध भागवत—देखिए खोज विवरण (००–७१; १–११० ६–१४९)—की कथा सुनाया करते थे।

पिछले खोज विवरणों (००–१२५, १२८) (३५–८७) में भी प्रस्तुत रचयिता का उल्लेख हुआ है।

२८९ सुकलहंस—इनकी कुछ 'बाणियों' के विवरण लिए गए हैं जिनके लिये देखिये 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र और गोरखनाथ (संख्या ५९) तथा विवरण अंश में संख्या १।

इनका उल्लेख सिद्धों के साथ हुआ है। विशेष वृत्त अज्ञात है।

२९० सुखदान—प्रस्तुत खोज में इनका बिना नाम का एक ग्रंथ प्राप्त हुआ है। पुष्पिका के आधार पर इसका नाम 'अलंकार ग्रंथ' रख दिया गया है। इसमें केवल अर्थालंकारों का वर्णन है। शब्दालंकार छोड़ दिए गए हैं। विषय के निरूपण में किसी प्रकार का क्रम एवं वर्गीकरण नहीं पाया जाता। अलंकारों के लक्षण दोहों में दिए गए हैं और उनके उदाहरणों के लिये दुर्मिल, सवैया, त्रोटक, मदिरा प्रभृति छंदों का प्रयोग किया गया है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। विषय की दृष्टि से रचना उत्तम है।

ग्रंथ से रचयिता का विस्तृत विवरण तो नहीं मिलता पर आरंभ में उल्लिखित 'श्री राधा वल्लभो जयति' तथा मंगलाचरण से निश्चय होता है कि ये राधावल्लभी संप्रदायानुयायी रहे होंगे। अलंकारों के लक्षणों का विषय भी राधा ही है। अपने नाम का स्पष्ट उल्लेख इन्होंने कहीं नहीं किया। दोहों और सवैयों में यत्रतत्र 'सुखदान' शब्द का प्रयोग मिलता है जो छाप के रूप में इन्हीं का नाम ज्ञात होता है। यद्यपि इनका समय ज्ञात नहीं है तथापि ये अनुमान से अठारहवीं शताब्दी के जान पड़ते हैं।

२९१ सुखदेव मिश्र—इनका 'रस रत्नाकर' इस त्रिवर्षी में विवृत हुआ है। इसमें नायिकाभेद और नवरसों का वर्णन है। रचनाकाल प्राप्त नहीं, लिपिकाल संवत् १८९२ है।

इसकी प्रस्तुत प्रति का प्रथम पत्र लुप्त हो गया है। ग्रंथ यद्यपि छोटा है तथापि इसमें विषय के सभी अंग संक्षेप में अच्छी तरह समझाए गए हैं। यह मतिराम कृत 'छंदसार संग्रह' नामक ग्रंथ के साथ एक हस्तलेख में है।

रचयिता दौलतपुर निवासी प्रसिद्ध सुखदेव मिश्र हैं जो पिछले खोज विवरणों में आ चुके हैं, देखिए खोज विवरण (५-९७) (६-२४०) (१७-१८३) (२०-१८७) (२३-४१२) (दि० ३१-८०) (९-३६०) (२६-४६५) (३-१२३)। उक्त विवरणों के आधार पर ये संवत् १७२८ के लगभग वर्तमान थे।

२९२ सुखलाल मिश्र—इनकी एक छोटी सी रचना 'श्री कृष्ण स्तोत्र' के विवरण लिए गए हैं। इसमें श्री कृष्ण की स्तुति, सवैया और दोहा वृत्तों में की गई है। रचनाकाल प्राप्त नहीं, लिपिकाल सं० १९७६ है।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और परिचय नहीं मिलता। पिछले खोज विवरणों में आए इस नाम के रचयिताओं के साथ इनका साम्य स्थापित करने के लिये कोई आधार नहीं मिलता।

२९३ सूरति मिश्र—प्रस्तुत त्रिवर्षी में इनके निम्नलिखित दो ग्रंथ प्राप्त हुए हैं:—

१-प्रबोध चंद्रोदय नाटक या ग्रंथ-यह संस्कृत के प्रबोध चंद्रोदय नाटक का अनुवाद है। इसमें कीर्त्तिवर्मा नामक एक राजा की कथा वर्णित है जो बड़ा विषयी था। गोपाल नामक मंत्री ने उसको सुमार्ग पर लाने का एक उपाय सोचा। उसने एक नट को प्रबोध चंद्रोदय नाटक—जिसमें मोह विवेक की लड़ाई का वर्णन है खेलने के लिये तैयार किया। राजा को जब यह नाटक दिखलाया गया तो वह अत्यंत चमत्कृत हुआ और विषय वासना त्याग कर हरिस्मरण की ओर लगा। फलतः अंत में उसकी मुक्ति हुई। यही कथा का सार है जो आध्यात्मिक रूपक को लिए हुए है। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८८६ है। रचना व्रजभाषा में हुई है।

२-छंदसार-यह पिंगल विषयक ग्रंथ है। इसमें मात्रा, वर्ण और गण तथा लघु गुरु भेद पर विचार किया गया है। रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। प्रस्तुत प्रति पत्राकार रूप में है। पुष्पिका के पश्चात् लिपिकार ने 'गणागण विचार' लिखा है जो कविप्रिया का अंश है।

रचयिता का नाम प्रथम ग्रंथ के अंत में तथा दूसरे ग्रंथ में यत्रतत्र छंदों में प्रयुक्त हुआ है। दूसरे ग्रंथ की पुष्पिका में तो सूरत मिश्र का स्पष्ट उल्लेख है। यद्यपि प्रस्तुत ग्रंथों द्वारा इनका कोई वृत्त नहीं मिलता तथापि ये पिछले खोज विवरणों में उल्लिखित सुप्रसिद्ध सूरति मिश्र से भिन्न नहीं जान पड़ते, देखिये खोज विवरण (१-८६) (२-९६) (३-१०४) (६-२४३) (९-३१४) (२०-१९०) (२३-४१६) (२६-४७४; ३२-२१३)। इन विवरणों के आधार पर ये संवत् १७६८ के लगभग वर्तमान जाति के कान्यकुब्ज ब्राह्मण, पिता का नाम सिंघमनि, गुरु का नाम गंगेस (? गंगेस), आगरा निवासी तथा नसरुल्ला खाँ और दिल्ली के बादशाह मुहम्मद शाह के आश्रित थे।

२६४ सूरदास -इस महाकवि के निम्नलिखित नौ ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं :—

१–भ्रमरगीत–यह सूरसागर का ही एक अंश है [जिसमें उद्धव गोपियों के संवाद का एक मार्मिक वर्णन है। हस्तलेख के पन्ने सिलसिलेवार नहीं हैं। प्रारंभ में भ्रमरगीत के ६७ पन्ने हैं, पश्चात् सूरसागर क्रमानुसार प्रारंभ होकर २४४ पन्नों तक लिखा गया है फिर भ्रमरगीत का शेषांश है। इससे ज्ञात होता है कि एक बार हस्तलेख के पन्ने सिलाई से उखड़ गए थे और जब दुबारा उन्हें सिला गया तो असावधानी के कारण यह गड़बड़ी हो गई।

भ्रमरगीत के आरंभ के ६७ पन्नों में भी संख्या ३, ४, ५ के पन्ने लुप्त हो गए हैं; किंतु जो पद उनमें थे वे सूरसागर के आगे पाँच पन्नों में अलग से लिख दिए गए हैं। इन पदों में सात से लेकर छब्बीस तक संख्याएँ पड़ी हैं जो इन्हें भ्रमरगीत का अंश होने की पहिचान करवाती हैं।

अंत में 'अथ कुविजा गेह प्रवेश' में एक पद देकर ग्रंथ समाप्त हो जाता है जिसकी पुष्पिका इस प्रकार है :—

'इति श्री भागवते दशमस्कंधे अष्टचत्वारिंशोध्यायः॥ ४८ ॥ मिति जेष्ठ कृष्णा २ रविवासरे संवत् १८११ ॥ पुस्तक लिष्यो ब्राह्मण चत्रभुज अक्षयगढ़ मध्ये ॥ लिखायते लालाजी वंशीधर जी दाऊ जी सहाय ॥'

भ्रमरगीत के प्रस्तुत अंश में समस्त १२० पन्ने तथा ५५१ पद हैं। इनमें एक पद ऐसा है जो 'परशुराम सागर या रामसागर' में उसके रचयिता (परशुराम) की छाप सहित है (देखिए परशुराम सागर या रामसागर' जो सभा के लिए प्राप्त कर लिया गया है)।

दोनों पद निम्नलिखित प्रकार से हैं :—

ऊधो सुनि माधौ को नातौ।
ज्यों पतंग की चटक दिन द्वै ब्रज मोहि पै माहिन रातो।

—सूरकृत।

मधुकर सुन मोहन को नातौ।
ब्रज मोहिं बिनु मोहन रातौ॥

—परशुरामकृत

इन पदों में भावसाम्य के साथ-साथ शब्दसाम्य देखकर आश्चर्य होता है।

हस्तलेख का लिपिकाल सं० १९११ है; रचनाकाल नहीं दिया है।

२–सांझीलीला–इसमें राधाकृष्ण के विहार संबंधी पदों का संकलन है। रचनाकाल और लिपिकाल का इसमें उल्लेख नहीं है।

३–सूरसागर–इसकी चार प्रतियाँ मिली हैं। पहली दो प्रतियों में जन्म से लेकर मथुरा गमन तक की कृष्ण लीलाओं का वर्णन है, यह प्रति अपूर्ण है। इसमें ३ से

९८ तक पत्रे हैं तथा पदों की संख्या ६३२ है। लिपि सुंदर और शब्दों के रूप शुद्ध हैं। दूसरी प्रति में ग्यारह स्कंध हैं। पश्चात् बौद्ध अवतार की कथा का पद भी पूरा है। यह भी अपूर्ण प्रति है। पत्र संख्या ९१ के पश्चात् का अंश लुप्त हो गया है। रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अप्राप्त हैं। तीसरी और चौथी प्रतियाँ पूर्ण हैं। परंतु रचनाकाल इनमें से किसी में नहीं दिया है। तीसरी का लिपिकाल १९१७ और चौथी का संवत् १८८० है। पिछले खोज विवरणों में यह ग्रंथ विवृत हो चुका है, देखिए खोज विवरण (१-२३) (६-२४४) (१२-१८१) (१७-१८६) (२३-४१६) (२३-४१७) (३२-२१२) (२९-३१९)।

४-सूरसागर (नवम स्कंध)-भागवत के नवम स्कंध में रामायण की कथा है उसी का पदों और दोहों में अनुवाद किया गया है। ग्रंथ खंडित है। इसके आरंभ के २४ पत्रे लुप्त हैं। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८८१ है।

५-सूरसागर (दशम स्कंध, एकादश स्कंध, द्वादश स्कंध)-ग्रंथ के आरंभ के ३९७ पत्रे लुप्त हो गए हैं, अतः दशम, एकादश और द्वादश स्कंध ही रह गए हैं। दशम स्कंध के भी आरंभ के कुछ पन्ने नहीं हैं। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल सं० १९०२ है। पिछली खोज में भी यह विवृत हो चुका है; देखिए खोज विवरण (२९-३१९ ई० एफ० जी०)।

६-सूरसागर (दशम स्कंध तथा विष्णुपद)-इसके आरंभ का केवल एक पत्र खंडित है। समस्त हस्तलेख दो भागों में है। पहले भाग में दशम स्कंध पूर्वार्द्ध की लीलाओं का वर्णन है तथा दूसरे भाग में विष्णुपद हैं जिसमें अनेक लीलाओं के चुने हुए पद संगृहीत हैं। रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। पिछली खोज में भी यह विवृत हो चुका है, देखिए खोज विवरण (२३-४१६ डी)।

७-सूरसागर (दशम स्कंध)-इसकी दो प्रतियाँ मिली है। प्रथम में कुल १७३८ पद हैं। यह बहुत संक्षिप्त मालूम होता है। अध्याय के अध्याय छोड़ दिए गए हैं, जैसे—८६ वें अध्याय के बाद ९० अध्याय देकर ग्रन्थ समाप्त किया गया है। रचनाकाल ज्ञात नहीं, लिपिकाल सं० १९४३ है। द्वितीय प्रति में भी रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल सं० १८५४ है।

८-सूरसागर (दशम स्कंध पूर्वार्द्ध)-इसकी दो प्रतियाँ मिली हैं। रचनाकाल किसी में नहीं दिया है। प्रथम प्रति का लिपिकाल सं० १९२६ और द्वितीय का अज्ञात है। इसके आदि, अंत और मध्य के कई पत्रे लुप्त हैं।

९-सूरसागर (प्रथम से नवम स्कंध तक)-इसमें केवल नौ स्कंध हैं। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल सं० १९०९ है।

ये समस्त रचनाएँ सूरसागर के ही अंश हैं।

रचयिता के विषय में प्रस्तुत ग्रंथों से कोई नवीन बात नहीं विदित होती।

२९५ सूरदास—ये सुप्रसिद्ध कवि सूरदास से भिन्न हैं। इनकी 'घूँवरा के पद' नामक रचना विवृत हुई है। राधा के पैरों के घूँघर सत्यभामा को दिखाने के लिये श्रीकृष्ण लाए थे। कवि ने उसी घटना का इन पदों में वर्णन किया है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। पदों की भाषा ग्रामीण ढंग की राजस्थानी है। इस दृष्टि से रचयिता राजस्थानी विदित होते हैं। अन्य वृत्त अप्राप्त है।

२९६ सेणी—सेणी कृत 'सेणी रा दूहा' इस खोज में नवीन प्राप्त हुआ है। इसमें कुछ श्रृंगार के और कुछ प्रास्ताविक के दोहे संगृहीत हैं। दोहों की भाषा राजस्थानी है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता राजस्थानी में रचना करने के कारण, राजस्थानी विदित होते हैं। इसके अतिरिक्त इनका और कोई परिचय नहीं मिलता।

२९७ सेनापति—इनके कुछ कवित्त 'कवित्त' शीर्षक से प्रस्तुत खोज में विवृत हुए हैं। इनका विषय श्रृंगार है। हस्तलेख अपूर्ण मिला है। केवल १५ पत्रे उपलब्ध हुए हैं। प्रथम पत्र की संख्या बीस है तथा अंत के पत्र की छत्तीस। बीच के दो पत्रे २१वें और २२ वें संख्या के नहीं हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता हिंदी साहित्य के प्रमुख कवियों में से हैं। ये अनूप शहर के रहनेवाले कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। पिता का नाम गंगाधर, पितामह का नाम परशुराम और गुरु का नाम हीरामणि दीक्षित था। पिछले कई खोज विवरणों में इनका उल्लेख हो चुका है, देखिये खोज विवरण (४–५१) (६–२३१) (९–२८७) (१२–१७१) (२०–१७६) (२३–३७९) (२६–४३३) (३२–१९६)। इनके आधार पर इनका जन्मकाल संवत् १६८४ तथा कविताकाल संवत् १७०६ माना गया है।

२९८ सेवक या सेवकराम—इनका विस्तृत उल्लेख विवरण में संख्या १९ पर हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

२९९ सेवादास—इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या १४ पर हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

३०० सेवाराम—इनके 'मल्लिनाथ चरित्र' का विवरण लिया गया है। यह भट्टारक सकलकीर्ति के संस्कृत ग्रंथ की भाषा में गद्य टीका है। इसका विषय इसके नाम से ही स्पष्ट है। इसका रचनाकाल संवत् १८५० और लिपिकाल संवत् १८७९ है। भाषा में राजस्थानी और व्रजी के साथ साथ खड़ी बोली का रूप भी मिलता है।

रचयिता ने अपने पिता का नाम मायाचंद लिखा है और गोत्र पाटनी बतलाया है। ये पहले द्यौसा ग्राम के निवासी थे, पर बाद में डीग (रियासत भरतपुर) में रहने लगे। उस समय भरतपुर में महाराज रणजीत सिंह राज्य करते थे। इनको रामसुख, प्रभाती मल्ल, जोधराज और दीपचंद गोधी नामक चार व्यक्तियों ने इस ग्रंथ के भाषांतर करने के लिये प्रेरित किया। ग्रंथ द्वारा ये जैन विदित होते हैं।

३०१ सेवासिंह—प्रस्तुत खोज में 'नलचरित्र या नैषध' नामक ग्रंथ मिला है जिसके ये रचयिता हैं। ग्रंथ पुराणों के आधार पर रचा गया है। इसमें कथा का आरंभ वृहस्पति ऋषि और धर्मराज युधिष्ठिर के संवाद के रूप में होता है। इसकी भाषा व्रजी है तथा इसमें दोहा, चौपाई, छप्पय, कवित्त सवैया, तोमर कुंडलिया, भुजंग प्रयात तथा त्रिभंगी प्रभृति वृत्त प्रयुक्त हुए हैं। ग्रंथ के आरंभ और अंत के कुछ पन्ने जीर्णावस्था में हैं। बहुत से स्थानों पर स्याही उखड़ जाने के कारण अक्षर नष्ट हो गए हैं। इसके लिखने में लिपिकार ने बहुत अशुद्धियाँ की हैं, कहीं अक्षर छोड़ दिए हैं एवं कहीं शब्दों के रूप ही विकृत कर दिए हैं। 'स' के लिए प्रायः 'श' का ही प्रयोग है। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल सं० १९३३ है। इसका उल्लेख पिछले एक खोज विवरण में भी हुआ है, देखिए खोज विवरण (२६-४३६)।

इस बार इनका विशेष वृत्त ज्ञात हुआ है जिसके अनुसार इनका वंशवृक्ष इस प्रकार है :—
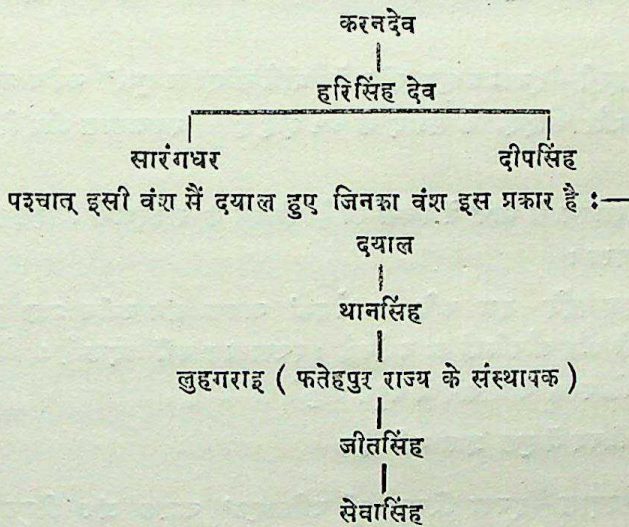
लुहगराइ ने फतेहपुर राज्य की स्थापना की। इसलिये संभव है कि रचयिता, सेवासिंह का निवासस्थान फतेहपुर राज्य ही रहा हो। फतेहपुर राजपूताने की एक रियासत है। इसके अतिरिक्त रचयिता का अन्य वृत्त अज्ञात है। इनकी प्रस्तुत रचना काव्य की दृष्टि से अच्छी है। पुष्पिका में इसका नाम नलचरित्र लिखा मिलता है। आरंभ में 'इति' के आगे 'नै' अक्षर आया है। जिससे 'नैषध' का ज्ञान होता है। आगे के अक्षरों (ष ध) की स्याही उखड़ गई है।

३०२ सैना—प्रस्तुत खोज में सैना के 'कबीर रैदास संवाद' का विवरण लिया गया है। इसमें कबीर और रैदास के संवाद का वर्णन है। प्रस्तुत रचना एक बड़े आकार

के हस्तलेख में है जो बड़ा महत्वपूर्ण है। इस विषय में देखिए 'सेवादास'। रचनाकाल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १८५६ है।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त अन्य विवरण अज्ञात है। रचना के अंत में 'सैना' नाम दिया है। अनुमानतः ये प्रसिद्ध सैना भक्त ही जान पड़ते हैं।

३०३ सैयद अमीन—ये 'रिसाला मजजूबुल सालकीन' के रचयिता हैं। ग्रंथ सूफी मत का है। इसमें यह दिखलाया है कि सभी धर्म परमात्मा की प्राप्ति के मार्ग हैं और उनमें नाम के अतिरिक्त और कोई वास्तविक भेद नहीं है। इसकी भाषा हिन्दी का दखिनी रूप है जिसमें फारसी और अरबी शब्दों तथा मुहावरों का बहुतायत से प्रयोग है। रचनाकाल सन् १२३६ हिजरी है, लिपिकाल नहीं दिया है।

रचयिता शाह-अरिफ-गंज बक्स के शिष्य थे और चिश्ती फकीरों की परंपरा से संबंधित थे। इनके कथन के आधार पर इनका खानदान अदहमिया, गिरोह अबदुल वाहिद बिन जैद, मजहब सूफिया और संप्रदाय दीद था। ये हिजरी सन् १२३६ में वर्त्तमान थे।

३०४ सोहणी—इनका प्रस्तुत खोज में 'वींझै सोणी रा दूहा' नवीन प्राप्त हुआ है। इसमें 'वींझाँ' और 'सोहणी' के संवाद के ७५ दोहे हैं। रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं।

रचयिता ने राजस्थानी भाषा में रचना की है जिससे वे राजस्थानी विदित होते हैं। अन्य वृत्त नहीं मिलता।

३०५ स्याम कवि—इस कवि का 'वैद्यक' नामक ग्रंथ नवीन प्राप्त हुआ है। इसमें रोगों के लक्षणों और औषधियों का वर्णन है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १८१९ है। लिपिकार ने लिखने में बहुत अशुद्धियाँ की हैं।

रचयिता के विषय में कुछ ज्ञात नहीं है।

३०६ स्यामदास—इनका 'विष्णुस्वामी चरितामृत' नामक ग्रंथ विवृत हुआ है जिसमें श्री विष्णु स्वामी (जिनके नाम से विष्णुस्वामी संप्रदाय प्रसिद्ध है) का चरित्र वर्णित है। पुस्तक में आठ अध्याय हैं। साहित्यिक दृष्टि से तो ग्रंथ महत्वपूर्ण नहीं है, पर जीवन चरित की दृष्टि से उपादेय है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता के विषय में ग्रंथ द्वारा कुछ विदित नहीं होता।

३०७ स्वरूपदास—इनकी कृति 'पांडव यशेंदु चंद्रिका' पिछली खोज में भी मिल चुकी है, देखिए खोज विवरण (२३-४२३) और (२६-४७६)। इसकी एक प्रति का विवरण इस त्रिवर्षी में भी लिया गया है। इसमें महाभारत की कथाओं का सोलह मयूखों (अध्यायों) में संक्षिप्त वर्णन है। रचनाकाल सं० १८९२ और लिपिकाल सं० १९२६ है। इसकी भाषा कवि के कथनानुसार पिंगल, डिंगल और संस्कृत का

मिश्रित रूप है। परंतु डिंगल के शब्दों (नामों) का ही प्रयोग है, क्रियापदों (आख्यातों) का नहीं। प्रस्तुत प्रति की लिपि सदोष है।

रचयिता का इस समय भी कोई वृत्त नहीं मिला। पिछले खोज विवरणों में इनका उपनाम 'रसाल' दिया है।

३०८ हंसराज (जैन)—ये 'ज्ञान द्विपचासिका' नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ अपूर्ण और खंडित है। केवल संख्या २, ४, ५, ७ के ही पत्रे उपलब्ध हैं। इसका विषय तो ज्ञानोपदेश है; परंतु साहित्यिक दृष्टि से भी यह महत्वपूर्ण है। रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं।

रचयिता का नाम हंसराज है जो प्रत्येक कवित्त में प्रयुक्त हुआ है। इन्होंने ग्रंथ में यत्रतत्र जिन भगवान् का उल्लेख किया है जिससे पता चलता है कि ये जैन थे। इनके गुरु का नाम वर्द्धमान सूरि था। अन्य परिचय नहीं मिलता। ग्रंथ के अंत का कवित्त जिसमें इन्होंने अपना वृत्त दिया है विवरण पत्र में उद्धृत है।

३०९ हंसराज—इस त्रिवर्षी में इनके 'बारह मासा' का विवरण लिया गया है। इसमें श्री कृष्ण के प्रवास के अवसर पर गोपियों के बारह महीनों के विरह का वर्णन है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

यह ग्रंथ जिस हस्तलेख में है उसमें अन्य रचनाएँ भी हैं। इसी में आगे चलकर एक हंसराज सिंघ के चार भजन दिए गए हैं। इनके आरंभ में लिखा है—'भजन बनावल हंसराज शीघ चंदेल दुवारी कै।'

इसमें आए 'हंसराज शीघ चंदेल' प्रस्तुत रचयिता ही जान पड़ते हैं। बारहमासे और भजनों की रचनाशैली तथा उनकी भाषा से भी इसकी पुष्टि होती है। अतः इस आधार पर ये जाति के चंदेल तथा दुवारी नामक स्थान के रहनेवाले थे। यह स्थान कहाँ है? कुछ पता नहीं चलता। ये पिछले खोज विवरण (००-१२५) (६-४५) पर आये हंसराज बख्शी से भिन्न हैं। विवरण की टिप्पणी के स्तंभ में इनके भजन भी दे दिए गए हैं।

३१० हजरत हयातबेग—इनके 'ज्ञान स्वरोदय' में योग का वर्णन है। इसकी प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है। आरंभ के अट्ठारह पत्रे नष्ट हो गए हैं। लिपिकर्ता ने प्रत्येक पत्र का आधा अंश लिखा है। भाषा कुछ पंजाबीपन लिये हुए है। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल सं० १८७७ वि० दिया है।

रचयिता के नाम के अतिरिक्त और कोई परिचय नहीं मिलता। ग्रंथांत में इन्होंने एक दोहा इस प्रकार लिखा है:—

पीर गुरु की दया सूं लीनो तत्त सरोधर जाए।
हजरत हयात बेग नु कहत है तत्त सरोधर गीयान ॥ २४० ॥

'हजरत हयात बेग नु' के 'नु' में पंजाबी ध्वनि निकलती है। अतः रचयिता पंजाब की ओर का रहने वाला विदित होता है।

३११ हणवंत—इनकी कुछ 'वाणियाँ' सिद्धों की वाणियों के साथ विवृत हुई हैं। इनके लिये देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९ और विवरण अंश में संख्या १। इनका समय तथा विशेष परिचय अज्ञात है।

३१२ हरि जू सुकवि—इन सुकवि द्वारा संपादित 'सप्त सतिका (विहारी सतसई)' का इस बार विवरण लिया गया है। ग्रंथ के संपादन का कारण इन्होंने निम्न लिखित बतलाया है :—

सकल वितिक्रमै होइ अर्थ अति गौर।
रामदत्त के हुकुम ते करी सकल एक ठौर ॥ १ ॥
जदपि अहै सौभागिनी मुक्ताहल मैं देषि।
गुहे ठौर के ठौर तें लरि में होत विसेषि ॥ २ ॥
धर्यो अनुक्रम ग्रंथ को नायकादि अनुसार।
सहर जौनपुर में बसैं हरजु सुकवि विचार ॥ ३ ॥
जड़ जन दुपन ढुढ़ि है तजि फल फूल सुवास।
ज्यौं सूकर रमनिय वन चहत मलान कुबास ॥ ४ ॥

इससे विदित होता है कि बिहारी के दोहों का क्रम खंडित हो जाने के कारण संपादक ने किसी रामदत्त (संभवतः आश्रयदाता) की आज्ञा से उसका फिर से क्रम लगाकर संपादन किया। रचनाकाल अज्ञात है; लिपिकाल संभवतः संवत् १८७९ है। इसका दोहा इस प्रकार है :—

भक्ति[९] लोक[७] वसु[८] ससि[१] द्वित संवत् प्रम प्रकास।
कार्त्तिक शुक्ल दुतिय गुरुवासर सर सकल सुवास ॥

यह लिपिकाल का ही संवत् ज्ञात होता है क्योंकि प्रस्तुत ग्रंथ दशरथ कृत 'नवीनाख्य तथा 'नवरस' और 'चित्रकाव्य' आदि ग्रंथों के साथ एक ही हस्तलेख में है। 'नवीनाख्य' और 'चित्रकाव्य' का लिपिकाल सं० १८६९ दिया है। अतः प्रस्तुत ग्रंथ का यह संवत् लि० का० ही है। संपादक ने यत्रतत्र नायक नायिकाओं के लक्षण भी दिए हैं जो उन्हीं के रचित ज्ञात होते हैं। ये जौनपुर के रहने वाले थे और संभवतः किसी रामदत्त के आश्रय में रहते थे। इनका एक 'अमरकोष भाषा' नामक ग्रंथ पिछली खोज में मिला है, देखिए खोज विवरण (९-११२)। इसके आधार पर इनका समय १७९१ वि० या १८वीं सदी है।

३१३ हरि कवि—इनके 'भाषाभूषण की टीका' का इस खोज में विवरण लिया गया है। ग्रंथ में महाराजा जसवंत सिंह के भाषाभूषण नामक ग्रंथ की एक अच्छी टीका है। इसमें अलंकारों को स्पष्ट करने के लिये मतिराम और बिहारी के ग्रंथों से भी उद्धरण लिए गए हैं। आरंभ और अंत के पत्रे खंडित हो जाने के कारण रचनाकाल और लिपिकाल के विषय में कुछ पता नहीं चलता।

रचयिता ने कुछ अपना भी वृत्त दिया है जिसके अनुसार ये त्रिपाठी ब्राह्मण थे। पिता का नाम रामधन त्रिपाठी था जो शालिग्रामी सरजू और गंगा के संगम पर स्थित सारन जिला के अंतर्गत गोआ परगना में चैनपुर ग्राम के निवासी थे। ये (रचयिता) इसे छोड़ मारवाड़ में जा बसे :—

सालग्रामी सरजू की मिली गंग सों धार,
अंतराल मौ देश है सो सारनि सरकार ॥ ६५ ॥
परगन्ना गोआ तहाँ लसै चैनपुर ग्राम,
तहाँ त्रिपाठी रामधन वास कियो अभिराम ॥ ६६ ॥
ताके सुत 'हरि कवि' कियौ मारवाड़ में वास,
भाषा भूषण ग्रंथ की टीका करी प्रकाश ॥ ६७ ॥
पूरो हित श्री नंद को मुनि शांडिल्य महान
मैं हौं तिनके गोत में मोह ··· ··· ··· ॥

ये खोज में नवीन मिले हैं।

३१४ हरिकृष्ण आभा—इनके दो ग्रंथों 'ज्ञान बोधामृत' और 'ज्ञानबोध प्रकाश' के विवरण प्राप्त हुए हैं जिनका विषयादि निम्नलिखित प्रकार से है :—

१-ज्ञानबोधामृत-इसमें संसार के मायामोह से दूर रहकर हरि भजन करने का उपदेश है। इसकी भाषा ब्रजी और खड़ी बोली मिश्रित है। रचनाकाल संवत् १८७९ है, लिपिकाल ज्ञात नहीं।

२-ज्ञानबोध प्रकाश-इसमें ग्रंथकार ने जीव की हीनावस्था दिखाते हुए दया धर्म और उपकार में मन लगाना तथा साधु, विप्र और अभ्यागतों की सेवा सत्कार करने का उपदेश किया है। इसमें रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। दोनों रचनाएँ एक ही हस्तलेख में हैं। विवरण पत्र में इनकी पूर्ण प्रतिलिपियाँ कर दी गई हैं।

रचयिता ने ये रचनाएँ बसवाड़ा नगर में की। इससे पता चलता है कि ये वहाँ के निवासी रहे होंगे। थानापत श्री संतोष दास का ग्रंथ में स्तुति पूर्ण वर्णन किया गया है जिससे विदित होता है कि वे इनके गुरु रहे होंगे। इससे अधिक इनके बारे में कुछ पता नहीं चलता। खोज में ये नवीन मिले हैं।

३१५ हरिचरणदास—ये 'रामायणसार' के रचयिता हैं। ग्रंथ में कवित्त दोहादि १३६ छंदों में रामचरित का संक्षेप में वर्णन है। रचना व्रजभाषा में है। रचनाकाल संवत् १८३२ और लिपिकाल संवत् १८७८ हैं।

अन्वेषक के कथनानुसार रचयिता कृष्णगढ़ के निवासी थे और संवत् १८३२ के लगभग वर्तमान थे। इनकी अन्य रचनाओं का पिछले खोज विवरणों में भी उल्लेख हुआ है, देखिए खोज विवरण (४-५८) (९-१०८) (४-४) (१७-७१) (२०-५६) (पं० २२-३६) (६-२५५)।

३१६ हरिचरणदास सुरति शुभचिंतक चाकर—हरिनारायण सुरति और शुभचिंतक चाकर कृत 'विहारी सतसई (सटीक)' इस त्रिवर्षी में विवृत हुई है। इसमें विहारी सतसई के सात दोहों की व्रजभाषा गद्य में टीका की गई है। प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है। रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अप्राप्य हैं।

नामों को देखने से तो विदित होता है कि प्रस्तुत रचना तीन रचयिताओं के सम्मिलित प्रयत्न का फल है। हरिचरणदास के रामायणसार नामक ग्रंथ का विवरण इसी त्रिवर्षी में लिया गया है। सूरति, सूरति मिश्र हैं जिन्होंने 'अमरचंद्रिका' नाम से बिहारी सतसई की टीका की है। शुभचिंतक चाकर का परिचय अज्ञात है।

जहाँ तक संभावना जान पड़ती है किसी व्यक्ति ने इन कवियों द्वारा बिहारी के सात दोहों पर की गई टीकाओं का प्रस्तुत रूप में संपादन किया है।

३१७ हरिदास स्वामी—इन सुप्रसिद्ध महात्मा के कुछ पद 'श्री स्वामी हरिदास जू की बानी' नाम से प्राप्त हुए हैं। ये पद अधिकतर राधा कृष्ण की विहार लीला संबंधी हैं। आरंभ में १८ पद सिद्धांत के तदुपश्चात् एक पद भेंट का और ११० पद शृंगार रस के हैं। इस प्रकार कुल पदों की संख्या १२९ है। इनकी भाषा व्रजी है जिसमें सदका सतरंज मौज (लहर) सोहवत (असर) प्रभृति शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता टट्टी संप्रदाय के प्रवर्त्तक सुप्रसिद्ध स्वामी हरिदास हैं जिनका पिछले खोज विवरणों में उल्लेख हो चुका है, देखिए खोज विवरण (००-३७, २९, ६७) (१-१२) (६-२२५) (२-५७) (२३-२०, ८८) (पं० २२-१६) (५-६७) (९-१०९वी) (२३-१५५) (१२-७२) (३२-७८)।

३१८ हरिदास निरंजनी—इनका उल्लेख विवरण अंश में संख्या १५ पर हो चुका है, अतः देखिए उक्त विवरण अंश।

३१९ हरिनाथ (महापात्र)—इनके कुछ कवित्तों के विवरण 'हरिनाथ महापात्र के कवित्त' शीर्षक से लिए गए हैं। इनमें जहाँगीर की प्रशस्ति वर्णित है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल जैतसिंह महापात्र की रचनाओं के आधार पर जो प्रस्तुत रचना के

साथ एक ही हस्तलेख में है, संवत् १७६२ के लगभग है, देखिए जैतसिंह महापात्र का विवरण पत्र।

रचयिता सुप्रसिद्ध नरहरि महापात्र के पुत्र थे। इनका वंशवृक्ष इस प्रकार है :—
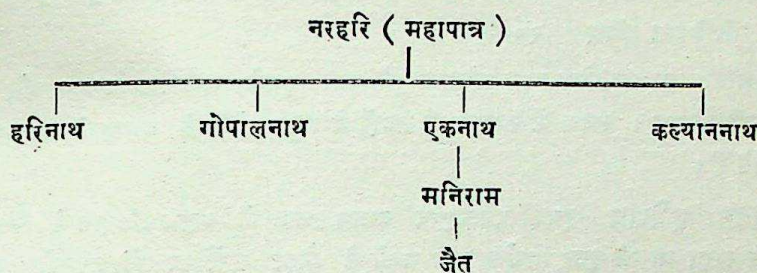
प्रस्तुत हस्तलेख में नरहरि, हरिनाथ, मनिराम और जैत के कवित्तों का संग्रह है। हरिनाथ (रचयिता) के जीवनकाल के संबंध में कोई पता नहीं चलता, परंतु जहाँगीर की प्रशंसा करने के कारण ये उसके समसामयिक जान पड़ते हैं। खोज में इनका प्रथम बार ही पता लगा है।

३२०—हरिनामदास—इनकी निम्नलिखित तीन रचनाएँ एक ही हस्तलेख में प्राप्त हुई हैं :—

१-गोसइआ के धआन की कीताब-रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात। विषय—परमात्मा के स्वरूप का वर्णन। इसमें हिंदू और मुसलमानों के दार्शनिक विचारों का समन्वय है। रचना अधिकतर गद्य में है। बीच बीच में तथा अंत में कहीं-कहीं वाक्यों में अंत्यानुप्रास मिलाए गये हैं, परंतु उन्हें पद्य नहीं कह सकते। उनमें मात्राओं और वर्णों का कोई नियम नहीं है। गद्य की भाषा विचित्र है। फिर भी खड़ी बोली की ओर अधिक झुकी है।

२-ग्रंथ आतमबोध-रचनाकाल लिपिकाल अप्राप्त। विषय—निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश।

३-पद-रचनाकाल और लिपिकाल में से किसी का पता नहीं। विषय—निर्गुण भक्ति संबंधी ज्ञान का प्रतिपादन। रचना का नाम नहीं दिया है। पदों की अधिक संख्या होने के कारण 'पद' ही नाम रख दिया है।

रचयिता का नाम 'दास हरिनाम' है जो प्रत्येक पद और भजन के अंत में प्रयुक्त हुआ है। इनका अन्य परिचय नहीं मिलता इन्होंने एक पद में पलटूदास, दूलहनदास और भीखासाहब आदि संतों का उल्लेख किया है। इससे ये इनके पश्चात् के जान पड़ते हैं। कहीं-कहीं रामानंद का भी गुरु के रूप में गुणगान किया गया है। अतः हो सकता है कि ये कबीर पंथी रहे हों। अन्य वृत्त नहीं मिलता।

३२१ हरिराय पुरी— हरिरायपुरी 'जोगरत्न' नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। ग्रंथ में चौदह अध्याय हैं जिनमें रहस्यात्मक ढंग से ज्ञानोपदेश करते हुए योग के सिद्धांतों का वर्णन है। आध्यात्मिक विषयों के रहस्यात्मक ढंग से कहने की जो परिपाटी चल पड़ी थी वह प्रस्तुत ग्रंथ में भी दृष्टिगोचर होती है। विषय की दृष्टि से ग्रंथ उत्तम है। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १९२० दिया है।

रचयिता का आरंभिक नाम श्रीलाल पुरी था। इसके अतिरिक्त इनका और कोई परिचय नहीं मिलता। रचना में राजस्थानी शब्दों के प्रयुक्त होने के कारण ये राजस्थानी विदित होते हैं।

३२२ हरिराय—इनकी 'नित्यकृत्य' नामक रचना में वल्लभ संप्रदाय के सिद्धांतों के अनुसार ठाकुर जी की पूजा, अर्चना तथा भक्तों के नित्य कर्मों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

रचयिता का प्रस्तुत ग्रंथ द्वारा कोई विवरण नहीं मिलता। परंतु श्री वल्लभाचार्य के वंश में श्री कल्याणलाल जी के पुत्र से ये अभिन्न जान पड़ते हैं, देखिये खोज विवरण (३८-५६)। ये सिंहाड़ नाथद्वारा (मेवाड़) में श्री गोकुलनाथ जी के मंदिर के अधिकारी थे। इनका उपनाम 'रसिकप्रीतम' था। पिछले खोज विवरणों में इनके कई ग्रंथ आए हैं, देखिए खोज विवरण (००-३८) (६-११५) (२३-१६०) (३२-३४) (३५-३८) (३८-५९)।

३२३ हालीपाव—प्रस्तुत शोध में इनका नाम सिद्धों के साथ आया है। इनकी कुछ 'वाणियाँ' मिली हैं जिनके लिये देखिए 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५६ और विवरण अंश में संख्या १। इनका समय तथा विशेष परिचय अप्राप्त है।

३२४ हिरदैराम—इनकी 'धर्मचरित्र' नामक रचना में धर्मराज युधिष्ठिर के आतिथ्य सत्कार का वर्णन किया गया है। यह साधारण कोटि की रचना है। रचनाकाल का उल्लेख नहीं पाया जाता। लिपिकाल संवत् १८३७ है।

रचयिता ने अपना नाम केवल ग्रंथांत में दिया है। अतिरिक्त वृत्त नहीं मिलता। पिछले खोज विवरण (१२-७५) पर आए 'बलि चरित्र' के रचयिता हृदयराम से ये अभिन्न जान पड़ते हैं। दोनों ग्रंथों में रचयिता के नामोल्लेख करने का ढंग एक सा ही है। इसके अतिरिक्त ग्रंथों के नामों में 'चरित्र' शब्द के साम्य से भी कुछ ऐसा ही प्रकट होता है।

———

द्वितीय परिशिष्ट

रचनाकारों की कृतियों के उद्धरण

द्वितीय परिशिष्ट

रचनाकारों की कृतियों के उद्धरण

संख्या १. वाणियाँ, रचयिता—अजैपाल। संख्या ५९ के विवरण पत्र में इनकी वाणियाँ दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या २. धनाजी की परिचयी, राकां बांका की परिचयी, सेउ समद की परिचयी, रचयिता—अनंतदास, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—१०$\frac{१}{२}$ × ५$\frac{३}{४}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३५, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८५६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरी-प्रचारिणी सभा, बनारस।

आदि—अथ धना जी की प्रचई लिपते।

चौपई

गुर गोविंद की आग्यां पाऊं। दास धनां की कथा सुनाऊं॥
हरि की कृपा हरि गुन गाऊं। जथा सक्ति हूँ बरनि सुनाऊं॥
धना कै धीरज मन मांही। हरि सूं हेत और सूं नांही॥
रांम रांम कहि हिरदै राषै। मिथ्या वचन कदे नहीं भाषै॥ २॥

मध्य—॥ रांका बांका जी की परिचई लिपते॥

चौपई

साधवा इक देवं निरंजन भगति मोहि आंपहू।
हिरदै वांणी मूष सू भाषहू॥
राका बांका निरमल साध। ऐसो भगत कौई एका आध॥ १॥
प्रथम पांडरपुर मैं कियौ निवास। भक्ति हेत भयौ प्रकास॥
कुल कौ किसब करै चितलाई। तामैं जीव हंस्या कही न जाई॥

अंत—॥ सेउ समन जी की प्रचई॥

साधू आया अगमतै कीया पहौम परिगुन।
ठोर ठोर बूझत फिरै समन का घर कून॥ १॥
आय द्वारै ठाढे भये तब त्रिया कीनी सैन।
जब समन मुष मोडि कै देष्यां अपनै नैन॥ २॥

समन उठि सेनिह करि दरसन का फल लेह ।
मुष छिपाया नां वणैं सनमुष होइ सुष देह ॥ ३ ॥

× × ×

पुर पाटण मैं नीपज्या दोन्यूं हरि का संत ।
सेउ समन कथा वरणी 'दास अनंत' ॥ ६० ॥

॥ इति सेउ समन की प्रची सपूरण ॥

विषय—धना, रांका बांका तथा सेउ समन नामक भक्तों की वार्ताएँ ।

संख्या ३ क. प्रबोध चंद्रोदय नाटक, रचयिता—अनाथ, कागज देशी, पत्र—५०, आकार—१०½ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२५, परिमाण (अनुष्टुप्)—११७२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७२६ वि० (संभवतः), लिपिकाल—सं० १९०५ वि० = सन् १८४८ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत श्री रामचरितर भगत, स्थान व पोस्ट, मनिअर (मठिया), जिला—बलिया ।

आदि—ॐ महा पुरुषोत्मा‌ये नमः श्री लीषते प्रबोधचंद्रोदै नाटके सख सारे उपदेश ।

दोहा

गंग जमून गोदावरी सींधु सरस्वती सार ।
तिरथ सबये अनाथ जहां गोविंद जस विस्तार ॥ १ ॥

श्री गुरु सुप मंगल करन आनंद तहाँ वशेत ।
किरत्ति श्री हरीदेव की सुद भर सदा कहेत ॥ २ ॥

भक्ति जुक्ति वरनन करों श्री गुरु प्रम उदार ।
जीन्ह की कृपा कटाछ तें गोपद यह शंसार ॥ ३ ॥

अंत—संपरदा रामानुज रामानंद प्रसिद्ध ।
द्वादस ताके सुत भए सब विधि सब प्रसिद्ध ॥ ४३ ॥

द्वादस रवि से प्रगट है नासे जग अँधियार ।
पष्यानंद सुषनंद पुनि दास पष्ट मतसार ॥ ४४ ॥

तिनमें बड़े बिसाल मत नाम अनंता नंद ।
कीस्नदास तिन्ह के भए पैहारि निरद्वंद ॥ ४५ ॥

अग्रकील तिन्ह के भए महा अग्र मतिधीर ।
तिन्ह के जंगी जी भए बड़ो वीवेकी धीर ॥ ४६ ॥

तिन्ह के तुलसीदास जु तिन्ह के दास मुरारी ।
प्रगट पावोरा जगत में मेटि जिन्ह जगरार ॥ ४७ ॥

तीन्ह में अवरो भए घने सरस एक ते एक।
रहन गहन सांचो मनो पंडित परम विवेक ॥ ४८ ॥

हरीदास मौनी भए तिन्ह मो परम उदार।
कीनेदास अनाथ को गही कर जग निस्तार ॥ ४९ ॥

पेलत अंतर भेद में अंतरहि को ध्यान।
सीता पति के कृपा ते किए वो ग्रंथ परवान ॥

× × ×

संवत सत्रह सै गए षटत विस निरधार।
आस्वन मास रचना रची सारासार वीचार ॥ ५५ ॥

इति श्री प्रबोध चंद्रोदे नाटक सर्व सार उपदेस अनाथ दालेन विरचिते निरवित मोह विवेक भग्न वरौ वरननोनाम चतुरविसो अध्याय ॥६४॥ संवत् १९०५ मी० भादो वदी ॥४॥

विषय—संस्कृत के प्रबोध चंद्रोदय नाटक का हिंदी में पद्यानुवाद।

रचनाकाल—सम्वत सत्रह सै गए षटतविस नीरधार।
आस्वन मास रचना रची सारा सार विचार ॥ ५५ ॥

विशेष ज्ञातव्य—रचनाकाल का दोहा अस्पष्ट है, किंतु अनुमान से यह संवत् १७२६ है। ग्रंथ का 'प्रबोध चंद्रोदय नाटक' के अतिरिक्त 'सर्वसार उपदेश' नाम भी है। ऐसा इसलिये किया गया है कि इसमें 'प्रबोध चंद्रोदय नाटक' की केवल छाया ली गई है। उसके अतिरिक्त इसमें योगवासिष्ठ, गीता, महाभारत, शाक्तसिद्धांत और अष्टावक्र वेदांत आदि ग्रंथों का भी सार लिया गया है। यह चौबीस अध्यायों में है।

रचयिता अपनी संप्रदा को रामानुज बतलाते हैं, और अपनी गुरु परंपरा रामानंद से आरंभ करते हैं। आजकल रामानंदियों के विशिष्ट आचार्य अपनी संप्रदा 'रामानुज' न कहकर 'श्री संप्रदा' (सीता जी से आरंभ किया हुआ) कहते हैं। उनके मत के विरोध में नाभादास जी आदि संतों के उल्लेखों के अतिरिक्त प्रस्तुत उल्लेख और मिला है। अस्तु, रचयिता की गुरु प्रणाली इस प्रकार है :—

रामानुज
|
रामानंद
|
अनंतानंद
|
कृष्णदास पैहारी
|
अग्रकील
|

जंगीजी

|

तुलसीदास

|

दासमुरारि

|

हरिदास मौनी

|

अनाथदास

रचयिता अंतरवेद के रहनेवाले थे।

संख्या ३ ख. सर्वसार उपदेश, रचयिता—अनाथ, निवासस्थान, प्रयाग, कागज—देशी, पत्र—५७, आकार—५३/४ × ११३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४९६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७२६ वि०, लिपिकाल—सं० १७२६ वि०, प्राप्तिस्थान—हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ अथ श्री सर्वसार उपदेश प्रारंभ॥ दोहा॥

गंग जमुन गोदावरी सिंध सरस्वती सार।
तीरथ सवै अनाथ जह अच्युत जस बिस्तार॥ १॥

... ...

पुरुष आदि सरवज्ञ अज पूरन रूप अनंत।
अस्ति भाति प्रिय नित्य प्रभु नंद वेद गावंत॥ ५९॥
निर विशेष व्यापक अमल साक्षी सर्व असंग।
सर्व रूप सब तैं परै सब विधि सर्व अभंग॥ ६०॥
त्रिगुन नियंता ईस विभु चिद्घन सदा निवृत्ति।
ताके ईक्षत मात्र ही बल पायो जु प्रकिर्त्ति॥ ६१॥
पुरुष प्रकृत के जोग तैं उदै भयो मन भूप।
तन संकल्प विकल्प जिहि उठि दोय शक्ति अनूप॥ ६२॥

अंत—संप्रदाय रामानुजी रामानंद प्रसिद्ध—
तिनके द्वादस शिष्य भए सवै विधि सिद्ध॥ ४३॥
द्वादस रवि से प्रगट जग नासन जग अँधियार,
नंद षष्ट सुष कंद पुनि दास षष्ट मति सार।
तिनमें बड़े बिसाल मति नाम अनंता नंद,
कृष्णदास तिनके भये पै अहार निरद्वंद॥
अग्र कील तिनके भए महा अग्र मति वीर,
तिनके जंगी जू भए बड़े विवेकी धीर॥

तिनके तुलसीदास जू तिनके दास मुरारि,
प्रगट पमारौ जगत में मेटी जिन जगरारि।
तिनके शिष्य भए घनें सरस एक तें एक,
रहनि गहनि साँचे मते पंडित परम विवेक।
हरीदास मौनी भए तिनमें महा उदार,
कीन्यो दास अनाथ कौं गहि कर जग निस्तार।
संवतु सत्रह सै अधिक षष्ट बीस निरधार,
अश्वन मास सरचना रची सार असार विचार॥
कृष्ण पक्ष रुचि मार्ग सिर एकादसी बुधवार।
पोथी लिपि पूरन भई रमा रवन आधार॥ ५७॥

इति श्री सर्वसार उपदेश शिष्य आंसका निरवृति कौ नाम चतुर विसो विश्राम: २४ सर्वसार ग्रंथ संपूरन समाप्तम्।

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'सर्वसार उपदेश' है। इसमें भक्ति, ज्ञान, और वैराग्य का विस्तारपूर्वक वर्णन है। यह संस्कृत के योगवाशिष्ठ, अष्टावक्रगीता, महाभारत, श्रुति तथा स्मृतियों का सार लेकर लिखा गया है। विशेषतः 'प्रबोध चंद्रोदय नाटक' से सहायता ली गई है। यह गुरु शिष्य संवाद रूप में है। भाषा इसकी व्रज है और दोहा छंद में समस्त रचना हुई है।

रचनाकाल—संवतु सत्रह सै अधिक षष्ट बीस निरधार।
अश्वनमास सरचना रची सार असार विचार॥ ५७॥

संख्या ४. मानतुंग मानवती चउपई, रचयिता—उभयसोम, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—१० × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२५, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल—सं० १७२० वि०, लिपिकाल—सं० १७५९ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी।

आदि—॥ दोहा ॥ श्री वीतरागाय नमः॥

प्रणमुं माता सरसुती प्रणमुं सदगुरु पाइ।
मूरष धी पंडित करइ जस जग मइ कहवाइ॥ १॥
कथा सरस नइ कवि वयण केलवीया बहु मीठ।
साकर दाष अमीप की मइजो अधिका दीठ॥ २॥
धरम अनेक प्रकार वइ साच समो नहि कोइ,
वोलण हारो साचरो विरलो कोइ कहोइ॥ ३॥
मानवती कउ कहयेउ समझू दउ अवसाण,
मानतुंग आगलि मिथ्या जहेव उरहीयउ याण॥ ४॥

कहूँ कथा हिव तेहनी जिम हुई ते जग माहि,
सावधान थई सांभ लऊ सुरता मन धरि चाहि ॥ ५ ॥

ढाल चउपई

माला गिरवइ मालव देस वीजा देसांउच प्रदेश तीरथ तोयघणा तिहां घांन सन्लं कार घणा जिहांदन ॥ १ ॥

अंत—राजा सांभलि साधु मुषइ वली ।।
यामी विस सक उचित मन रली ।
देपी महिमा सांच तणी सही । हूँ ती ते हवी मुनि वर ए कही ।
एक ही मुनिवर साच वाणी ही यइ आणी जे करइ ।
संसार नाते सुष यामी सयल भव सायर जिरइ ॥ १ ॥

कर जो मीनइ राजा इम कहइ । आंधउं मारग तम्ह वी सद्गु लहई ।
वाहर ब्रज जे श्रावक ना कह्या । ते मुझ दीजइ मइमनि सरहह्या ॥ २ ॥

मनि दीयो ईसुहि नहि नइ सदा पाल इषांतियुं ॥
तेमानवती सुगुरु पासइ । व्रतलिय वहु भांति सूं ॥ १२ ॥

अनुक्रम वचइ व्रतपाली भला । पुहुमा मन मोरो मिटइ तोरो करमणो ॥
इम जाणि प्राणि साच वोलो वात एह वो मरमनो ॥ ४ ॥

संवत सतरह वीस इधु सोम सुन्दर प्रसारइ ।
अभय सोमइणि परि कहइ ।

एस रसकहि नइ कथा दापी भेद मति मंदिर लहरा इति श्रीमान तुंगमानवती चउपइ संपूर्ण ॥ संवत् १७५९ वर्षे पोष वदि-१० दिने सोमवासरे लिखितं पं० रूपहर्षेण लिपितं श्रीनवहर मध्ये । श्री रस्तु शुभं भूयात् ।

विषय—यह जैन धर्म विषयक रचना है । इसमें मानतुंग मानवती की कथा वर्णित है जिसमें मानवती ने सद्गुरु पाकर श्रावकाचार विहित आठों कर्मों का भली भाँति आचरण किया था ।

संख्या ५. आत्म विचार वैराग या ज्ञान (वहोतरी), रचयिता—अमृतलाल, स्थान—रतनपुरी, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—९×४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८८, पूर्ण, रूप—सुंदर, गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९०७ वि०, लिपिकाल—संवत् १९२६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी ।

आदि—॥ ६० ॥ वीतरागाय नमः अथ ज्ञान वहुतरी लिष्यते दोहा ॥ प्रणाम श्री अमात्मा धर सतगुर को ध्यान कछुक आत्मावोध को करुं वहुतरी ज्ञान ॥ १ ॥

पृथम बोले दुलभ मनुष जन्म पायकर फेर आलस,
प्रमाद माही दिन गमावे सो महा मूर्ष जाणवो ॥ १ ॥
धर्म की सर्व समग्री पायकर फेर आपनी आत्मारो
साधन नहीं कर सो महा ॥ २ ॥
पुन्य रूप पूँजी तो साथ ल्यायो नहीं,
और सुषीयो होन वास्तै घनी हाय हाय करे।
घनी तृस्ना बधावै सो महा० ॥ ३ ॥
कोइ पुन्य राउ दासु जीवने ग्याननी प्रापती भई।
लोभ सत्रु ते सुषदाइ जाणों फेर संतोष नहीं राषे सो ॥ ४ ॥

अंत—दीपक सबकुं उद्योत करे पिण आपने नीचे सदा अंधकार रहने वेदे प्रकाश होवे नहीं त्युं अग्यानी जीव दूजा ने तो आछो उपदेश देवे पिण आप कुमार्ग चाले आपणो अग्यान रूप अंधकार दूर करीने ग्यान रूप सूर्य प्रगट नही करे पिन है चेतन सर्व कर्म को अंत करी ने केवल ग्यान रूप सूर्य रो उद्योत आत्मा के विषे प्रगट करेणतिवारे श्री मोष नगर पहुचेगा जौ अनंत सुष विलसेगा जन्म जरामरण दुष दूर होयगा ॥ ७२ ॥ दोहा ॥ बोल वहतररा कीया जिन आगम अनुसार सुने सुनाये सुरदवे जे पावे भवपार ॥ १ अरजी ॥ ग्यान बहुतरी नाम है किनी भविउपगार अमृत लाल करे मुक प्रभु पार उतार ॥ २ ॥ मे अणादि अति ही दुषी मरियो देष संसार जाते नाथ सरणोग्रही अब मोय वेगोतार ॥ ३ ॥ संवत उन्नीसे सात के वद दसमी फागुणमास रतनपुरी में ए रची निज आत्म प्रगास ॥ ४ ॥

इति आत्मविचार वैराग रूप ग्यान वहोत्तरी वालावबोध संपूर्ण मिति आषाढ़ वदि संवत् १९२६ ऋषि सलामत राय लिषी कृतं तुलसीराम पठनार्थ ॥

विषय—जैन आगमों के अनुसार मोक्षज्ञान (मोष नगर) का प्रतिपादन किया है।

रचनाकाल—संवत उन्नीसे सात के वद दसमी फागुण मास।
रतनपुरी में ये रची निज आत्म प्रगास ॥

संख्या ६. शालिहोत्र, रचयिता—अश्वपति रिषीसुर, कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—१२×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—११५२, खंडित रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६३ वि०, सन् १८०६ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवपूजन प्रसाद जी रईस और जमीदार, ग्राम—मिश्र जी की मठिया, पोस्ट—वैरिया, जिला—बलिया।

आदि—सिधि श्री गणेशाय नमः श्री सरसुत्यै नमः श्री परम गुरुवे नमः अथ सालहोत्र की पोथी लिष्यते ॥

दोहा

चंचल चपल चौगुनो वहु भोजन वहु रोष।
रोही तुरियाहि पांच गुन रोही तिरियहि दोप॥
सीतल पतल अमीर सुलघु भोजन नहि रोष।
एहि तिरियहि पांच गुन रोही तुरियहि दोप॥

॥ अथ घोरे के चार वरन तिनके न्यारे-न्यारे विभेद कहिजतु है।

अथ विप्र वरन घोरो दूसरो छत्री तीसरो वैस्य चौथो सूद्र......

अंत— ॥ अथ वात भूलौ कौ उपचार॥

मिरचै लाल हींग नौन घीव सो बोत देइ तौ पेसाब करै अथ और उपचार दूध टका तीन भर ३। केसर मासे छह भर ६ और पेट दीजै तौ नीको होई अथ वोषद नो सादर मिरचे लहसुन के रस सौं वांट कै तव वात दीजै तौ पेसाव डार देइ नीकौ होई हरतार तब कियो पेसाभर १ विसु पैसा दोइ भर २ गुर पैसा भर सैंदुर पैसा दोइ भर २ सुहाग फूलै कै पैसा भर १ १ पापरी बैरू पैसा दोइ भर २ चना कौ चूना सेर पाव ऽ। सैंधो नोन टका भर १ आदे के रस सौ गोली वाधै वैरी की गुटिली प्रवान तव पेट दीजै एक गोली सकारे एक अधपै तौ सर्व रोग जाई अथ वात भूलै को उपचार घीव सेर पाव ऽ। भटा सेर पाव ऽ। ए दोउ वस्तै पेट दीजै तौ वात डार देई।

इति साल होत्र अस्वपति रषीसुर कृत संपुरन समापता संवत् १८६३ श्री रामजी।

विषय—घोड़े के लक्षण तथा उसकी बीमारियों के उपचार वर्णन किए गए हैं।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है। संख्या ४ के पश्चात् पाँच पत्रे लुप्त हैं। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८६३ दिया है। पुष्पिका में रचयिता का नाम 'अस्वपति रिपीसुर' दिया है। इससे कुछ ऐसा पता चलता है कि यह नाम प्रस्तुत हिंदी रचनाकार का न होकर मूल संस्कृत ग्रंथ के रचयिता का है। प्रस्तुत रचना उक्त संस्कृत रचना का रूपांतर है, ऐसा विदित होता है। फिर भी ठीक-ठीक निश्चय न होने के कारण यही रचयिता का नाम मान लिया है। ग्रंथ ब्रजभाषा गद्य में है।

संख्या ७. जयसिंह प्रकाश, रचयिता—आत्माराम, कागज—मिल का, पत्र—३४१, आकार—१२३/४×८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४७६, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल—संवत्—१७७१ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी।

आदि—श्री गणेशाय नमः।

ॐ

वचन अरथ ज्यों मिलि रहे, वचन अरथ निति आप
पारवती परमेश्वरैं; वंदौं जगमा वाप॥ १॥

पाइ हुकुम जयसिंह को जुहै सवाई नाम
भाषा रघु में करत हौं सुकवि आत्मा राम ॥ २ ॥
सूरज ते लै स्याँ तके वंसु वरनि हों तास
नमुं धरयो या ग्रंथ कौ, तौ जैसिंह प्रकाश ॥ ३ ॥
किते वंसु रवि ते भयो, कित मेरी मति छुद्र
जिन पूरा लै मोह ते, दुस्तर तिरत समुद्र ॥ ४ ॥
सूरख मैं कवि जस चहौ, व्है हौं जग उपहाँस
वावन वांह पसारिबो, ज्यों बड़े जोग फल आस ॥ ५ ॥

अंत—करिनी छंद ।

मुष्य प्रजनि कौ संग्रह कीन । मंत्रिन राज वधू को दीन
नृप की धरम सहचरी आहि । गरभ रह्यो फिरि भाषै ताहि ॥ ५४ ॥
राज सोकतें ताते आस । जिनसो गरभ तपत मो आस
कनक कुंभ भरि शीतल तोय । किय अभिषेक जुड़ान्यो सोइ ॥ ५५॥

सोरठा ।

जो वह प्रजनि समान । पुत्र हौंस राषैं हियें ।
तासु भूति के काज । रानी गरभ धरयो तबै ।
महि ज्यों बीज समेत । बैठी सिंहासना लसै
सिषें राज विधि लेति । मूल वृहद मंत्री सहित
फिरि भाषत हैं तासु । रीति यहै कोविद सकल
अगिनि वरन सम जासु । फैलि रह्यो वसुधा हुकुम ॥ ५६ ॥

इति श्री मन्महाराजाधिराज सवाई जैसिंह जी निदेसात आत्माराम कृतौ जैसिंह प्रकासे राज्ञी राज्याभिषेको नाम इकोन विंशतिकोल्लास ॥ २१ ॥ शुभमस्तु लेखक पाठकयोः

सत्रह[१७] सै यकहत्तरा[७१] दसराहौ गुरुवार ।
राम कियो उज्जेनि मैं कै रघुवंश विचार ॥

विषय—महाकवि कालिदास के 'रघुवंश' का भाषा में छंदोबद्ध अनुवाद (२१ उल्लासों में) किया गया है।

रचनाकाल—सत्रह[१७] सै यकहत्तरा[७१] दसरा हौ गुरुवार ।
राम कियो उज्जैनि मैं कै रघुवंश विचार ॥

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ के रचयिता आत्माराम जयपुर के महाराज सवाई जयसिंह के आश्रय में रहते थे। उन्हीं के नाम पर इस ग्रंथ की रचना हुई है। कालिदास के सुप्रसिद्ध काव्य रघुवंश का यह अनुवाद है। अनुवाद बहुत सुंदर हुआ है। रचनाकाल

संवत् १७७१ है। यह पुष्पिका के पश्चात् दिया हुआ है, अतः प्रस्तुत प्रति मूल प्रति विदित होती है। इसकी भाषा ब्रज है जिसमें कुछ कुछ शब्द राजस्थानी के भी प्रयुक्त हुए हैं।

संख्या ८. स्वातिग सुभ लछिन, रचयिता—आत्माराम, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—५.५×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०६ वि०, प्राप्तिस्थान—हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।

आदि—श्री गुरुभ्यो नमः ॥ अथ पोथी स्वातिग सुभ लक्षिन लिषते क्रित आत्माराम सुभं भवत ॥

दोन्यु कर के थाल मैं रष्यो नाली पर शीश ॥
भेट धर्यो सुषदेव की पूज्या वीसवा वीस ॥ १

... ...

गुरु के दरस बोहत फल पावै,
जो पै सतगुरु दरस दिषावै। २२
गुरू दरसन तिहुँ ताप नशावै।
गुरु दरसन तन तपति बुझावै ॥
गुरु दरसन शीतलता प्रगटै।
गुरु दरसन भर्म बेड़ी कटै। २३

अंत—राजिस तामसि स्वातिगी तिर गुण समझि विचारि ॥
स्वातिग मैं मन थिर करो आत्म तत नीहारि ॥ ९७
ब्रह्मज्ञानी सब तें अधिक ऊँची समझ अगाध ॥
विना हुवै ब्रह्म दरस कै सभै वाक विष वाद ॥ ९८
ब्रह्म दरसी जो पैं भयो कीयौ न ब्रह्म सुष भोग ॥
वै नर विषई हुंहिगे तन मन वाढ़ै रोग ॥ ९९
ब्रह्म भोगी निहचल दिसा भयो न ब्रह्म कै रूप ॥
दिष्ट विंहूना नैन यूं नीर विहूना कूप ॥ १००

इति श्री पोथी स्वातिग सुभ लक्षिन समासं संवतु १८०९ वृषे श्रावण वदी शनवासरे लिषते जसू ॥

श्रीराम

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'स्वातिग सुभ लक्षिन' है। स्वातिग शब्द सात्विक का अपभ्रंश है। अस्तु, इस ग्रंथ में आचारमय सात्विक जीवन का निरूपण किया गया है। आरंभ में गुरु की महिमा का वर्णन है। इसमें लिखा है कि शिष्य का विकास और

उसको सिद्धि लाभ गुरु की कृपा से ही संभव है। गुरु की महिमा के पश्चात्, शील, सदाचार तथा कुछ हठयोग की साधनाओं के वर्णन हैं।

'स्वातिग सुभ लक्षिन' के रचयिता आत्माराम 'ज्ञानस्वरोदय' के रचयिता स्वामी चरणदास के शिष्य थे, अतएव इनकी रचना में संतों की विचारधारा का पूरा प्रभाव है।

विशेष ज्ञातव्य—चरणदास जी की गुरु शिष्य परंपरा जो अन्वेषक को प्राप्त हुई है इस प्रकार है :—स्वा० सुखदेव जी > चरणदास > आत्माराम > लछिदास > साधुशरण। प्रस्तुत ग्रंथ का रचनाकाल नहीं मिलता; परंतु अनुमानतः यह १८वीं शताब्दी के अंतिम चरण की है। इनके गुरू स्वामी चरणदास का रचनाकाल भी लगभग यही है। लिपिकाल संवत् १८०६ है।

संख्या ६. रास पंचाध्यायी, रचयिता—आनंद कवि, कागज—देशी, पत्र—४७, आकार—४.८×९.६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०५७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३५ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ पंचाध्यायी लिष्यते ॥

राजोवाच ॥ दोहा ॥

मैं विनती तुमसौ करौ सुनौ रीषीन के राज ॥
तुम मोसो करिकै कृपा कहौ रास कौ काज ॥
परब्रह्म श्री कृष्ण जू कीन्हौ रास विलास ॥
गोपिन कौ सुषदैव कौ कीन्हौ मनहि हुलास ॥

चौपई

कारण कवन सरद रितु माही ॥
कीन्हौ रास कान्ह व्रज माही ॥
गोपिन सो उन किन सनेहा ॥
पारब्रह्म कौ चाहियै ना नेहा ॥
यह संदेह मिटावहु नीके ॥
तुम हो गुरु सदा सबही के ॥
व्रज की कथा कहौ तुम नीकी ॥
बाढ़ी प्रीति हमारे हिय की ॥

अंत— ॥ दोहा ॥

हरि के रास विलास की कथा महा सुखदाय।
सोई सुनेगो यह कथा जापर विस्न सहाय ॥

पंच अध्याइ की कथा संपूरण भई जान।
श्री शुकदेव ने नृप सों कही आनंद कहत वषान ॥ ६५
आनंद वन काशी पुरी ठारहे सौ पैंतीस।
तामै कथा बनाय के हरिह निवाये सीस ॥ ६६

इति श्री भागवते महा ... ...

विषय—इसमें भागवत के अंतर्गत वर्णित रासलीला का वर्णन है। प्रस्तुत ग्रंथ में भी भागवत के अनुसार ही पाँच अध्याय हैं। उनमें क्रम से वंशीनाद, गोपियों का आगमन, कृष्ण का रास करना, अंतर्धान होना, गोपियों का विरह तथा उनका कृष्ण को ढूँढ़ना और अंत में रास क्रीड़ा का विस्तारपूर्वक वर्णन है। ग्रंथ की भाषा ब्रजी है और यह दोहा चौपाइयों में रचा गया है।

संख्या १० क. जमुना जस, रचयिता—आनंदघन, निवास स्थान—वृंदावन, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—८·४×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसपल म्यूजियम, इलाहाबाद।

आदि—॥ श्री यमुनायै नमः ॥

॥ अथ यमुना जस लिष्यते ॥ चौपाई ॥

जमुना कौ जस वरन्यो चाहौं। अति अगाध कैसे अवगाहौं ॥
जमुना कहै रसवती पानी। होति मधुर रसनिधि की रानी ॥
जाकैं तीर रसिक रस रंगी। वसत लसत गोपाल त्रिभंगी ॥
जमुना कौ जस कहत न आवै। नित विहार रस पारस पावै ॥
जो रस अगम अगोचर महा। सो याकें तट प्रगटित अहा ॥
या यमुना की भाग निकाई। मति अति रीझि विचारि विकाई ॥
महा रसवती राधापति। पूरन प्रेम तरंगिनी ततकी ॥
श्री जुत अंगराग की धारा। जमुना रूप अनूप अपारा ॥

अंत— जमुना कौ मंगल जस गायौ—
रसना निज सवाद फल पायौ
जमुना जस जैसें मन भायौ,
जमुना ही अपढार कहायौ
जमुना रस जस ऐसैं कह्यौ
बानी निज परमारथ लह्यौ

जमुना जस कौं जियरा तरस्यौ
जमुना कृपा सुरस उर सरस्यौ
तब कछु जमुना पर महि परस्यौ
बानी हूँ आनंदघन बरस्यौ

॥ दोहा ॥

जमुना जस बरन्यौ बिसद निरबधि रस कौ मूल ।
जुगल केलि अनुकूल है बसिबौ जमुना कूल ॥

इति श्री जमुना जस संपूर्ण

विषय—प्रस्तुत 'जमुनाजस' का विषय इसके नाम से स्पष्ट है। इसमें यमुना जी की महिमा वर्णन की गई है।

यह चौपाई छंद और ब्रजभाषा में लिखा गया है। ब्रजभाषा के श्रेष्ठ कवि आनंदघन की कृति होने के कारण महत्वपूर्ण है।

संख्या १० ख. आनंदघन के कविच, रचयिता—आनंदघन (वृंदावन), कागज—हाथका, पत्र—६७, आकार—८·२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४३२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसपल म्यूजियम, इलाहाबाद।

आदि—श्री राधा वल्लभो जयति। अथ आनंदघन के कवित्त लिष्यते ॥

॥ सवैया ॥

रूप निधान सुजान सषी जबते इन नैनन नैकु निहारे ॥
दीठि थकी अनुराग छकी मति लाज के साज समाज बिसारे ॥
एक अचंभौ भयौ घन आनंद हैं नित ही पल पाट उघारे ॥
टारे टरैं नहीं तारे कहूँ सुलगे मन मोहन मोह के तारे ॥ १ ॥
आँषि ही मेरी पै चेरी भई लषि फेरीं फिरैं न सुजान की घेरी ॥
रूप छकी तितही बिथकी अब ऐसी अनेरी पत्याति न नेरी ॥
प्रान लै साथ परी पर हाथ बिकानि की कानि पै कानि वषेरी ॥
पाइनि पारि लई घनआनंद चाइनि बावरी प्रीति की फेरी ॥

अंत—

कवित्त

देह सौं सनेह सो तौ ह्वैहै षेह
षिन ही मैं नाते सब हांते परि रहैगी नहीं रे नाम
फूलै भ्रम भूलै कित भूलै मोह फंदनि तू,
तनकौ सम्हारै किनि प्रानिनि के संमी स्याम

जागत हूँ सोवै पोवै समै सौ रतन वौरे,

पाइ घन आनंद तवै अचेत काम धाम

आमैं औधि औसर उसासह उसरि जैहै,

धरेई रहेंगे धन धाम धंधे धूम धाम।

सवैया

संग लगे फिरौहौं अलगौ रहौं,

मोहु वै गैल लगावत क्यों नहीं॥

नीरस रीचनि ही सरसौं रसार रति

प्रीति पगावत क्यों नहीं॥

ढीलौ परचौ तुमते घनआनंद

हौ गुन रासि बगावत क्यों नहीं॥

जागत सोवत से हौ कहावहो

सोवत मोहि जगावत क्यों नहीं॥

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ में व्रजभाषा के श्रेष्ठ कवि आनंदघन के कवित्त सवैया संगृहीत हैं। इनकी संख्या ४४६ है और इनमें राधाकृष्ण का प्रेम वर्णित है।

संख्या ११. आनंदघन चोवीस स्तवन (जिन चौवीसी), रचयिता—आनंदघन मुनि, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—८×७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—२००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महावीरसिंह गहलौत।

आदि—रागमारू करन परीक्षा करण कुमार चल्यो ए देशी। (ऋषभदेव स्तवन)

ऋषभ जिनेसर प्रीतम माहरो और न चाऊँ रे कंत।

रीझ्यो साहिब संग न परि हरै, भाँगइ प्रीति सगाई रे

जगमाँ सहू करै, प्रीति सहि अनन्त॥ १॥ (ऋ०)

सगाई न कोई, प्रीति सगाई रे निरुपाधिक कही

सो माधिकधन खोई॥ २॥ (ऋ०)

अंत— महावीर स्तवन

बीर पणूं ते आतम ठाणै; जाण्यूं तुम चीवाणै रे।

ध्यान विनाणै सकति प्रमाणै निज ध्रुव पद पहिचाणै रे॥ ६॥ बी०॥

आलंबन साधन जे त्यागे, पर परिणति ने भामें रे।

अक्षय दर्शन ज्ञान विरागें, आनंदघन प्रभु जागे रे॥ ७॥ बी०॥

इति श्री महावीर स्तवन सू॥ २४॥

इति श्री आनंदघन कृत जिन चौबीसी संपूर्णम्॥ श्री॥

विषय—आनंदघन ने चौबीस जिनों की स्तुतियाँ ढालों में पृथक २ रची है। इसी को 'आनंदघन' चौबीसी भी कहते हैं।

संख्या १२. कविच संग्रह, रचयिता—आलम और शेख, कागज—हाथ का, पत्र—५५, आकार—८·८ X ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८वीं शताब्दी। प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद।

आदि—·····लपटैं है लटकत ऐहैं सुपद सुनैहै बैजु बतिया अमोल हैं।
'आलम' सुकवि मेरे ललन चलन सीषैं,
बलन की बाँह ब्रज गलिन में डोलि हैं।
सो दिन सु दिन दिन ता दिन गनौंगी माई—
जादिन कन्हैया मोपै मैया करि बोलिहैं ॥ ४ ॥

× × × ×

समुद को पारु हैं सुभूमि हू को भारू पै
प्रीति को न पारवार कौन विधि कीजियै ॥
'सेष' कहै देषे अनदेष्योई करत केहू
अंक भर भेटे हूँ वियोग रस भीजियै।
मेरे कहे वारी तू निहारि ज्यु विहारी तन,
हेरे जौ हहतु हेत येतौ कति कीजियै ॥
जाकी वास वेधे मन फूल देष्यो
चाहे जन हेरे ते कुसुम जानि केहूँ कर लीजियै ॥

अंत—चंद्र सुधा कर धार द्रवै जग मज्जत कालिमा टारि गई है ॥
जोति की ओट सहेट चली अभिसारिक के अभिलाष नई है ॥
सीस चढ्यो रजनी सब चैतन की थिर पावनि छांह भई है ॥
जोन्ह छपा दुरि आवन को तन सोजि मनाकर लाई लई है ॥३७१॥

× × × ×

औधिटरी निरषै सोउ रीतिय कुंज गली भई भारी
कवि आलम·· ··· ··· ··· ··· ॥ ३७६ ॥

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ का आद्यान्त प्राप्त न होने के कारण इसके नाम का पता नहीं चल सका है। कवित्तों में समस्त रचना होने के कारण इसका नाम 'कवित्त संग्रह' रख दिया है। इसमें आलम और शेष, जो आलम की स्त्री थीं, रचनाएँ संगृहीत हैं।

ग्रंथ का विषय श्रृंगार है। 'नवोढ़ा', 'संकेत' 'नायिका की दूती' और सुखांत आदि प्रसंगों के अतिरिक्त कुछ अन्य फुटकल विषयों का भी समावेश है। जैसे :—

१-ब्रजनारी विरह, २-गोपी विरह, ३-वायु, ४-जमुना, ५-दीनता, ६-शिव और ७-श्री राम।

प्राप्त कवित्तों की संख्या ३८६ है। इनमें चार रेखते हैं जिनसे लोग प्रायः परिचित हैं। इसमें २८६ कवित्त आलम के, ४५ शेख के और ४४ छाप रहित हैं, जो छाप रहित हैं वे भी आलम के और कुछ शेख के होंगे। कवित्तों की भाषा ब्रजी है। रचना में रीति कालीन प्रवृत्ति का पूरा आभास मिलता है।

संख्या १३. पदसंग्रह, रचयिता—इंद्रदत्त, कागज—देशी, पत्र—२०, आकार—९·३ × ६·३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसिपल म्यूजियम, इलाहाबाद।

आदि—जो पै करुनानिधान करुना चितवनि है।
मोहू सम दीन को दरद दारुन जनि है॥
जौ गरीब को नेवाजते गरिवी अनि है।
करुनामय कबहु काहु कहाँ ए गुन गनि है॥
वेद विदित विरूद जौ गोपाल जी अकनि है।
इंद्रदत्त हूँ ते पतित पावन किए वनि है॥

अंत—वृज के विरही लोग वेचारे॥
विन गोपाल लागे ग्रह डोलत अधिक छीन मन हारे।
नंद जसोदा मारग जोहत नित उठ साँझ सकारे॥
वाल ग्वाल जे वृज जातहिं है सब घोष दुखारे।
सूरदास प्रभु विन तुम देखे जैसे रैन विन तारे॥

विषय—कृष्ण चरित्र।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रंथ जीर्ण और खंडित है। इसके दो पन्ने नागरी लिपि में और शेष कैथी लिपि में लिखे गए हैं। इसमें कुछ पद इन्द्रदत्त के हैं और शेष तथा अधिकांश सूरदास के हैं।

संख्या १४ क. रसचंद्रिका (विहारी सतसई पर टीका), रचयिता—नवाब इसवी खां, कागज—देशी, पत्र—१०५, आकार—९½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४८, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य और पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १८०९ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० शुभनारायण तिवारी, सिहाकुंड, डा०—हलदी, जि०—बलिया।

(हस्तलेख सभा के लिए प्राप्त हो गया)।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ अथ रस चंद्रिका लिष्यते॥

॥ दोहा मूल ॥

अपने अपने मत लगे वाद मचावत सोर।
ज्यौं त्यौं सबही सेइयौ एकै नंद किसोर ॥ १ ॥

॥ टीका ॥ इस जगैं वाद का अर्थ वृथा के लिए हैं। हेतार्थ दोहा का यह है। कि अपने अपने मत का झगरा करना वृथा है। क्यौंकि जिनने सेया तिननैं मानौं नंदकिशोर ही कौं सेया है। क्यौंकि ब्रह्मा शिव शक्तादिक सब बिश्नु ही हैं तौ जिननैं जिसकों पूजा मानों बिष्णु कौं ही पूजा। प्रमानालंकार ॥ तिसका लक्षन ॥ जहाँ बेद स्मृति पुरानादिकनि करि अर्थ पाइयै ॥ तौ इहाँ सबहि कौं एक नंद नंदन सेइयौ पुरानोक्ति है। क्यौंकि लिषन हैं कि सब देवता गाई नंद नंदन हैं। और जो कहियै पर संष्यालंकार है तौ ताको लक्षन यह है ॥

अंत— ॥ दोहा ॥

किय प्रसंग नरवर नृपति छत्रसिंह सुवभान ॥
पढ़त विहारी सतसया सब•••करत प्रमान ॥ १ ॥
कविनि किये टीका प्रगट अर्थ•••काहू कीन ॥
अपनी कविता के लग्रैं और कठिन•••••••• ॥ २ ॥
कछू रहैं संदेह नहिं ऐसौ टीका होइ ॥
कवि वचन का पद अरथ समझि लेइ सब कोइ ॥ ३ ॥
•••वि सबके हित कौ सुगम••••••विलास ॥
•••देत ईसवी षां कियौ रस चंद्रिका प्रकास ॥ ४ ॥
नंद•••न वसु भूमि गुनि कीजै वरष बिचार ॥
रस चंद्रिका प्रकास किय नभ पून्यौं गुरवार ॥ ५ ॥

इति श्री नवाव ईसवीषां विरचिता विहारी सतसैया टीका रस चंद्रिका नाम समाप्ता ॥ शुभमस्तु ॥ सिद्धिरस्तु ॥

विषय—विहारी सतसई के दोहों को अकारादि क्रम से रखकर उनका अर्थ किया गया है तथा प्रत्येक दोहे का अलंकार भी वर्णन किया गया है।

रचनाकाल का दोहा

नंद[९]•••न वसु[८] भूमि[१] गुनि कीजै वरष बिचार ॥
रस चंद्रिका प्रकाश किय नभ पून्यौं गुरवार ॥ ५ ॥

नंद और वसु के बीच में यदि 'गगन' शब्द हो तो रचनाकाल सं० १८०९ होगा और यदि 'बान' हो तो सं० १८५९ होगा।

टिप्पणी—प्रस्तुत प्रति का लेख शुद्ध है। संभव है, यह रचयिता के ही हाथ की लिखी हुई हो ; परंतु यह अपूर्ण है। संख्या एक सौ चार के पश्चात् अड़तीस पत्रे नष्ट हो

गए हैं। अंत का पत्र विद्यमान है। रचनाकाल में एक शब्द के अक्षर मिट गए हैं; परंतु उसका अंत का अक्षर 'न' वर्तमान है। इससे यह शब्द या तो 'गगन' हो सकता है अथवा 'बान'। किंतु संभावना 'गगन' शब्द की ही अधिक होती है। मिटे हुए अक्षरों की जगह पर उनके जो चिह्न दिखाई देते हैं उनसे 'गगन' शब्द ही ठीक जँचता है। इस दृष्टि से रचनाकाल संवत् १८०९ वि० होता है। इसकी पुष्टि रचयिता के आश्रयदाता छत्रसिंह के समय से भी होती है। रचयिता का नाम नवाब ईसवी खाँ है। इन्होंने प्रस्तुत ग्रंथ में नरवर (ग्वालियर) नरेश छत्रसिंह का उल्लेख किया है। ये राजा छत्रसिंह महाराजा रामसिंह के पिता थे (देखिए संक्षिप्त विवरण)। महाराज रामसिंह सं० १८३९ के लगभग वर्तमान थे। अतः रचनाकाल जैसा कि ऊपर लिखा गया है, संवत् १८०९ हो सकता है। इसी संवत् में नवाब ईसबी खाँ के महाराज छत्रसिंह के आश्रय में रहने की संभावना हो सकती है।

संख्या १४ ख. रसचंद्रिका, रचयिता—ईसवीखां कृत, स्थान—नरवर, कागज—देशी, पत्र—३९९, आकार—८¼×६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५५८६, पूर्ण, रूप—सुंदर, गद्य पद्य, मिश्रित, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल संवत् १८०९ वि०, लिपिकाल—१९७६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, (रत्नाकर संग्रह से) ना० प्र० सभा, काशी।

आदि—ॐ। श्री गणेशायनमः॥ अथ बिहारी सतसई पर ईसवी खाँ कृत रस चंद्रिका टीका लिष्यते।

मू० दो० मेरी भव बाधा हरो, राधा नागरि सोइ।
जा तन की झांई परे श्याम हरित दुति होइ॥ १॥

टीका—भव संसार सो कहै बाधा पीड़ा सो कहै हेत यह है कि तिसको राधानागरि हौ। नागर को अर्थ प्रवीन है सो राधा कैसी हैं कि तिन तन की झाँई परै से श्याम की दुति डहडही होती है हेत यह है कि विन देखे मुरझाई रहते हैं और देखे डह डहे होत है। अथवा यों कहैं कि राधा को वरन पीत हैं और श्याम को वरन लीला है तो दोनों मिले श्याम हरित हो जाय है हेत मोहित हो जाय है। अलंकार समर्थनीय को समर्थन करे तो या भव बाधा हरन की समर्थता यह है कि जिनकी झांई परे ते श्याम डह डहे होई है। दुतीय अर्थ में अलंकार विषम तिसका लक्षण और इस कारण रंग और काज और ही रंग सौ यहाँ गौर ते श्याम रंग होत है।

किय प्रसंग नरवर नृपति, छत्रसिंह सुवमान।
पढ़त बिहारी सतसया सब जग करन प्रमान। १
तव सवको हित कों सुगम भाषा वचन विलास
उदित ईस्वी खां कियो, रस चंद्रिका प्रकास। ४

नन्द[९] गगन[०] वसु[८] भूमि[१] गुनि कीजै वरस विचार
रस चन्द्रिका प्रकासकिय, मधु (शुचि) पुन्यो गुरुवार । ५

अंत—अलंकार उपमा तिलका लक्षण—जहां वेद सुमृति पुरानादि कनि करि अर्थ पाइये सबही को एक नंद नंदन सेइवो पुरानोक्ति है जो पर संख्यालंकार है तौ ताको लक्षण यह कि एक थल को सेवन वरजि एक थल नंदनंदन को सेवन ठहरायो या में और देवन की अवग्या होइ है जाते पर संख्यालंकार नहीं राख्यो ॥ इति ॥

पंडित गनेश बिहारी मिश्र की पुस्तक से बाबू जगन्नाथ रत्नाकर बी० ए० की आज्ञानुसार पंडित माताप्रसाद मिश्र निरिआ ग्राम निवासी ने लिखा ॥ स्थान लखनऊ मिती वैसाख शुक्ल ५ नी रविवार संवत् १६७६ वैक्रमीय ।

विषय—महाकवि बिहारी के प्रसिद्ध ग्रंथ बिहारी सतसई पर टीका की गई है जिसमें अलंकारों का भी वर्णन किया गया है ।

रचनाकाल—१८०९ वि० ।

संख्या १५. कक्कावली या ककावचीसी, रचयिता—उदय (संभवतः), स्थान—उदेपुर, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—५'३×३'१ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७२५ वि०, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह गहलौत, जोधपुर ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ कक्कावली लीष्यते ।

ककोन किरीपा करो करम करे ते चूर ।
किरिया बिना रे जीवड़ा सीव नगरी हे दूर ॥ १ ॥
षषा कर मजव करो षिमा करो मन मांह ।
षाते करो सेवा सदा जिण वर देव उघाह ॥ २ ॥
गगा गरब न कीजिये गरब किया जस होता ।
गरब कीया थी गुण गलै गरब मत करौ अयांण ॥३॥
घघा घर घरणी तजो, घर घर राखो कार ।
कुटुंब बहु स्वारथ लगै जमसेती विवहार ॥ ४ ॥
ङङा विरत करो सदा, विरत धरो मन मांह ।
विरत विनोद प्राणीया दुरगुन जैसी साह ॥ ५ ॥

अंत—हा हा हित बंधो सदा, खट जीवन हीतका ।
हित थकी हित उपजे, आखे सहु संसार ॥ ३२
अखर बत्तीसी एक ही, संबोधन अधकार ।
दूहा अर्थ विचार सी यांमे भवनो पार ॥ ३३
सतरे से पंच विसमें, संवत कीयो वखांण ।
उदेपुर उदय कीयो, मुनि महिमा हित जांण ॥ ३४

इति श्री कका वत्तीसी समाप्त ॥ श्री ॥

विषय—३२ दोहों में नीति विषयक ऊपदेश किया गया है। वर्णमाला के प्रत्येक अक्षर को लेकर दोहे रचे गए हैं।

वर्णमाला का रूप :—

क ष ग घ ङ च छ ज झ ञ।

ट ठ ड ढ ण त थ द ध न।

प फ ब भ म य र ल व स ष ह ॥ ३२ ॥

संख्या १६. उदैराज दोहावली, रचयिता—उदैराज, कागज—देशी, पत्र—४२, आकार—४×२½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२४, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर, जोधपुर।

आदि—(मध्य से)—

अव रीझ रा दूहा—

रींझ न जोवे सूर कधु, जात रूप कुल कार।
रींझ बूझ में अन्तरो, परग्यो हाथ हजार ॥ ७ ॥
रींझ बूझ में अंतरउ, बंध दसूण पुच्छ।
कोड़ कबड़ी सम गिणै, प्राण गिणै कटि तुच्छ ॥ ८ ॥

अंत—दोहा—चैत वदी चित मांगाई; नचणे नावे नीरड़ी।
वरस बरावर जाइ, कां विल निसि वासर घड़ी ॥ २०४ ॥

विषय—दोहों में संयोग वियोग एवं नख शिख विषयक वर्णन।

संख्या १७. उदैराज बावनी, रचयिता—उदैदास, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—६½×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल संवत्—१६७६ वैसाख पूर्णिमा, लिपिकाल—संवत् १७७३ वि०, प्राप्तिस्थान—महावीरसिंह गहलोत ने यह विवरण दिया है, पूरा पता नहीं दिया है।

आदि—श्री रघुपतये नमः उदयदास बावनी लिखयतं।

आकेराम नमो अकल अवतार अपरंवर
गहन गुहिर गंभीर प्रणव अक्खर परमेसर।
चिहण देव, त्रिकाल त्रिण अक्खर त्रेधामय,
पंचभूत परमोष्टि पंच इंद्रिय पराजय ॥
धुर मंत्रयंत्रं अधिकार धर विध साधक भाषन्त सहि,
भटसार पय पै गुरु भगति उदय पुत्र ओंकार कहि ॥१॥
नमुं प्रथम नवकार जपूं मुख जाप निरंतर,

आनंदी आनंद दीपण सुभ वचन संभारूं।
चरण शरण उवज्झाय करूं प्रणाम तदन्तर ॥
आनंदी आनंद दीपण सुभ वचन संभारूं।
धरमवंत श्रीमान चरण तेरा चित धारूं ॥
उदय सिंघ नाम नृप उचरूं केहिधरु खेरूं करूं।
उदयराज इसी विच आत्मा नाम नित्य लेउ घरूं ॥ २ ॥

अंत—रस मुनि पट ससी समै करी बावनी पूरि,
वैसाख पूर्णिमा वसन्त रीत राइ सनूरि।
बंबेई आविया काम दतन रिण मोड़े,
लखाणी लुंडिये तेपि घमांया घोड़े।
उदैराज तेथ गुण बावनी संपूरण कीधी तरै,
चहुवांण राण नृप सोन गिरि बसां बास जगनाथ गै ॥ ५८ ॥
कहै जिके बावनी लहै सिद्धि रिद्धि नये निधि,
सुणे जिके बावनी तिया परकास करि बधि।
लिखै जिके बावनी तिकै सुख संपति यामै,
भणैं जिके बावनी तके अनभ्या ग्रहि नामै।
इ कोई कवित्त कहैं हुवै तिको मनिष पंडित लहौ,
उदेराज संपूरण मुख करि, तिको अनेक बाता कहै ॥ ५९ ॥

इति श्री उदैराज कृत बावनी संपूर्णम्—संवत् १७७३ वर्षे मिति आषाढ़े बदि १ बुवे उपाध्याय साही पानी वाचनार्थ।

विषय—ईश्वर स्तुति, नीति और धर्म्मोपदेश आदि विषय वर्णन। कुल मिलाकर ५९ कवित्त हैं। ७ कवित्त मंगलाचरण (ईश्वर स्तुति) आदि के हैं।

संख्या १८. भक्त गीतामृत, रचयिता—उमराव या जन उमराव, कागज—देशी, पत्र—६२, आकार—९½×५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३१७, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९०५ वि०, लिपिकाल—संवत् १९१४ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—श्री गणेशायनमः लिख्यते भक्त गीता मृत ॥ चौपाई ॥
प्रनत काम तरू सदा सहायक। चरन कमल वंदौं गन नायक
चार भुजा मोदक लिये हाथा। सोहत मकुट मनोहर माथा
सदा चलत इंदुल असवारी। गत विलोक रहै पौन पछारी
चार भुजा यह नाथ तुम्हारी। देत अर्थ कामादिक चारी।
विनतव कृपा नाथ कवि कोऊ। शकत न वरन विमल मति वोउ ॥

× × ×

पौष्य अमावस सुभ घरी परी सौमारी पर्व
वानै व्योमं अरू रंध्र[१] महि[१] संवत सुषद अपर्व

× × ×

अंत—अथ आरती

भक्त गीत अमृत जिय जानी । आरति करहु करम मन वानी ॥
जै हनुमान दास अरु तुलसी । गिद्धराज सिवरी मति हुलसी ॥
रामदास श्रीधर निंवादित । रुक्मांगद प्रभु अरहु धरी वित ॥
विल्व मंगल अंवरीष उजागर । जै प्रहलाद भक्त गुन सागर ॥
कृष्णदास जै विप्र अजामिल । निहकंचन मोरध्वज सामिल ॥
साषि गोपाल जैति कामध्वज । जै तिभुवन जयमल भक्ती सज ॥
सदावृती अरु नंद दास जय । गुहा सुदामा जैति ज्ञान मय ॥
ममा भनेज ग्वाल वंशी कहि । रंतदेव ससिहांस सुमति लहि ॥
जैसिव सुत विप दई जो वहि । षङ्ग सैन कामथ गुन गहि ।
जै रतिवंस और रत्नावति । जैतिधना धन वाल्मीक मति ॥
जै अलर्क अरुदास त्रिलोचन । जै सुभक्त लाषा दुष मोचन ॥
जै पुर सोत्तम वासी राजा । सित पिल्ला वाई मति साजा ॥
जै मुरारि अरु हंस प्रसंगा । स्वेतद्वीप निवाशी रंगा ॥
इहि विधि भक्त न केर आरतीहि । जो मन क्रम सहित भारती ।
हृदय सोक अरु रोग भगावै । जन उमराव विमल मति पावै ॥

·· संवत् १६१४ साल वैसाषे मासे शुक्ले पक्षे पंचम्यां भौमवासरे ताद्दीने ।
·· संपूर्ण सुभमस्तु श्रीरस्तु लिखितं संभू गिरेण पैरागढ़ नग्र निवाशः छः

विषय—ग्रंथ में निम्नलिखित भक्तों का चरित्र वर्णित है :—

तुलसी, जटायु, शवरी, रामदास, श्रीधरस्वामी, श्री निंवादित्य, अंबरीष, प्रह्लाद, कृष्णदास, अजामिल, निहकंचन, मोरध्वज, साषीगोपाल, कामध्वज, भुवनचौहान, राजा जैमल, गुहाराम, सुदामा, मामाभनेज, ग्वालवंशी, रंतिदेव, चंद्रहासराजा, पंगसेन कायस्थ, रंतवंतवाई, रत्नावतीवाई ।

रचनाकाल—पौष्य अमावस सुभ घरी, परी सौमारी पर्व ।
वान व्योम अरु रंध महि संवत् सुषद अपर्व ॥

संख्या १६. वाणियाँ, रचयिता—कणेरीपाव ।

संख्या ५९ के विवरण पत्र में इनकी बानियाँ दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र ।

संख्या २० क. आषाढ़ भूत चौपाई, रचयिता—कनकसोम, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—९½×४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२८,

पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३८ वि०, लिपिकाल—सं० १७८२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी।

आदि—॥ श्री मदभीष्ट देवतार्थै नमः ॥

सकल ऋद्धि समृद्धि कर त्रिभुवन तिलक समान।
प्रणमू पास जिणेसूर निरूपम ज्ञान निधान। १
गोयम आदेगण धरइ जे प्रणमी नितमेव।
सानिधिकारी सारदा ते प्रणमूं श्रुत देव। २
माणिक सागर सुरू गुरुनितणई चरणे नासुं सीस।
सुरू गुरू ते सहि मानिला प्रणासुं विसवा वीस। ३
सदगुरू नासु पसावथी सोवइ सरस संबंध।
वचन विलास विलास विशेष थी प्रगट थाइ प्रबंध। ४
माया पिंडि तले जिके ते कहीयेनि ग्रंथ।
जिन मारग सूधो धरी साधइ सिवपुर पंथ। ५
लंपट सरस अहारना जे थाइ अणगार।
चारित्र वां सीनइति के मांकइ घर व्यवहार। ६

× × × ×

संवत् सोलह सइ अठतीसइ। दिन विजय दशमी सुज गीसइ।
कहइ कनक सोम सुविचारी। श्री सव संघनइ सुष कारी॥

अंत—पामइ सव केवल नाणए। भाव तणे अहि नाण करइ महिमा सुखरराय।
तव वेस लेइ ऋषिराया। ए इणि परि भावना भावी जइ।
तपकरी दान बलिदीजइ श्री जिन सासन आगार।

ए सुनिवरथया उदार। १०।

संवत् सोलह सइ अठतीसइदिन विजइ दशमी सुजगोसइ।
कहइ कनक सोम सुविचारी श्री सव संघनइ सुषकारी। ११

इति श्री आषाढ़ भूत चउपई समाप्तं॥ संवत १७८२ वर्षे अश्वनमासे। कृस्नपक्षे १ प्रति पदातिथौं चंद्रवारे लिखतं वंशी ऋषि। सुवित हंसा ऋषि हेतवे महम्मद शाह राज्ये इंद्र प्रस्थ नगरे शुभं भवतु। दोहा।

जगत जनायो जिह सकल सोहरि जानो नांहि।
ज्यों आषिन सब देषियत आंषिन देषी जाहि॥ १॥ श्रीः ६ :

विषय—आषाढ़ भूत नाम के किसी जैन महापुरुष का चरित्र वर्णित है।

रचनाकाल—संवत् सोलह सइ अठतीसइ। दिन विजय दशमी सुजगीसई।
कहइ कनकसोम सुविचारी। श्री सव संघ नइ सुषकारी॥ ११॥

संख्या २० ख. आषाढ़ भूत चरित्र, रचयिता—कनकसोम, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—११×४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८७, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३८ वि०, लिपिकाल—सं० १८३१ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—॥ ६० ॥ श्री गुरुभ्यो नमः ॥ आदि सिद्धं भवकार गुरु चरेने कंजनमोवंद कनो अधकार कहो जी सतगुरु ते सुतो १।

राजगरी नगरी अपार बलराजा भोग वै जिस पर षंदक कुमार
रत्रं कूष को उपना २ माता पिता अधार सुनते वैन सुकमाल के
सुष अनेक प्रकार जोवनवस्ता पामीओं एक दिन थिवरय धार
ससो सरन उस नगर में परषदा होई नर नारि पंद कि आयो दरस कौ
सुन वानी मन जाग मानुष जन्म फिर २ नहीं जैसे टं
माणो की आग धन जोवन सब अथिर है ५

अंत—चउ घातीक कर्म तिवारी केवल थया सुविचारी रूप पंच कुमर प्रति बोधे
ते पणि चउ कर्म्मनि सोधइ ७२ पामइ सबके बलनाराग ए भावतरगा
अहिनाराग करैमहि सुर राया तउंवेसलेइ ऋषि राया। ७३।
ऋषि राया लेई वैस बैटा भवने प्रति बोध वा उपदेश आसे
लोक सापे कर्म्म मैल निज सोधवा ७४
अनुकर्म करी विहारा चरित पालु मुंके सिंधा आषाढ़ा भूत चरित्र
गावा मणुयं भव सकला पावा ७५
इणि पर भावना भावीजइ तप करा कपासो जै
जिसासिण नौसिण गारा मुनिवर या उद्धारा ७६
संवत सोलह सय अठतीसो देव विजेस्वाभुजगी सइ कहि
कनक सोम विचारी सव संधने सुष कारी। ७७

इति श्री आषाढ़ भूत चरित्र संपूर्णम् संवत् १८३१ लिषतं मिदगुण देवी दासेन आतमअर्थेन सुभं भवत श्रीमस्तु।

विषय—आषाढ़ भूत नाम के किसी जैन महापुरुष का चरित्र वर्णित है।

संख्या २१ क. कबीरदास जी की वाणी, रचयिता—कबीर, कागज—देशी, पत्र—७४, आकार—१०½×५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—७८००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८५५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस।

आदि—सकल संत महापुरषायन्म ॥ श्री श्री वावा जी श्री कबीर साहिब जी को कृत लिषते ॥

॥ श्री गुरुदेव कौ अंग ॥

कबीर सतगुर संवांन को सगा सोधी संवी न दाति ।
हरजी संवांन को हितू हरिजन सवी न जाति ॥ १ ॥
कबीर जाति हमारी आत्मा प्राणं हमारा नांव ।
अलष हमारा इष्ट है गिगन हमारा गांव ॥ २ ॥

अंत—॥ अथ पद कबीर जी का अरथ सहित टीका लिषंते ॥

॥ राग गौड़ी ॥

दुलहनी गावहु मंगलचार । हमवरि आए हो राम भरतार ॥ टेक ॥
तनरत करि मैं मनरत करिहूँ पंच तत बाराती
रामदेव मोरे पाहुने आए मैं जोबन में माती ॥ १ ॥
सरीर सरोवर वेदी करिहूँ ब्रह्मावेद उचारा ।
रामदेव संगि भावरि लेहू धनि धनि भाग हमारा ॥
सुर तेतिसूं कौतिग आए मुनि यर सहस अठ्यासी ।
कहै कबीर हम व्याहि चले हैं पुरुष एक अविनासी ॥३॥

अर्थं—दुलहनी आत्मां । घर घट । १ । भरतार प्रमेस्वर ॥ टेक ॥
तनमन परमेसुर सुरत कीया ॥ पंच तत तिनकी तासीर
प्रमेसुर सूं लीन ॥ बराती बने जोबन । प्रेममदमत्त ॥ १ ॥
सरीर सरोवर वेदी करिहूँ प्रमेस्वर सुं वणाव सोई वेदी ।
ब्रह्मां वांनी । भावरि फेरा । प्रमेसूरसू बिलास सोइ भावरि ॥ २ ॥ सुर देवता
तेतीस । पांच इंद्री पंचीस प्रकृति तीन गुन ए तेतीस ।
मुनियर सहंस अठ्यासी । नौ नाड़ी बहत्र कोठा । सप्तधात ए
अठ्यासी मुनी । आत्म प्रमात्म सूं संजोग सोई ब्याह ।
संसार सूं नृवासीक । हुय चले ॥ ३ पद ॥

× × × ×

इति श्री कबीर साहिब जी को पद अरथां सहत संपूर्णं ॥ पद ॥ १२१ ॥ राम ॥९॥ संवत् ॥ १८५५ ॥ की मीती म्हा माशे सुकल पष्यौ तिथ्यौ नांम ११ ॥ बार सनीसर बार लिषतं च ग्राम षारड्यामधे ॥ लिषंत च साधू मुकनदास स्वांमी जी श्री ७॥ दरसणदास जी का सिष्य ॥ स्वामी जी श्री ॥७॥ अमरदास जी का पोता सिष्य ॥ स्वामी जी श्री ७॥ सेवादास जी का पोड़ पोता सिष्य ॥ वांचै विचारे जांकूं रांम राम नमस्कार ॥ पोथी बाबा जी की कृपा सूं लिखी छै पोथी मुकुनदास हस्ते पठनारथ ॥

विषय—निरगुन सिद्धांतानुसार दार्शनिक विवेचन तथा ज्ञानोपदेश । वाणियों में निम्नलिखित रचनाएँ सम्मिलित हैं :—

१–साखी ... ... पत्र १७७ से १९८ तक।
२–रमैंणी ... ... पत्र १९८ से २०४ तक।
३–पद ... ... पत्र २०४ से २४९ तक।
४–रेखता ... ... पत्र २४९ से २५० तक।
५–पद कबीर जी का अरथ सहित ... पत्र २९९ से ३२८ तक।

इनके अतिरिक्त निम्नलिखित ग्रंथ और है जो हस्तलेख में आगे दिया है:—
६–कबीर जी की रमैनी जन्म बोध, पत्र ५६२–५६८ तक।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचनाएँ बड़े आकार के एक हस्तलेख में हैं। उक्त हस्तलेख में गोरखनाथ, जलंधरनाथ आदि अनेक सिद्धों और निरगुन पंथी संतों की बानियाँ संगृहीत हैं। उसमें आये समस्त रचयिताओं के नाम सेवादास की 'साखी' वाले विवरण पत्र में दिए गये हैं। हस्तलेख में कबीर के १२१ पदों पर और गोरखनाथ के ५८ पदों पर टीकाएँ दी हुई हैं। इसके आरंभ में रचयिताओं और उनकी रचनाओं की एक वृहत् सूची दी गई है।

संख्या २१ ख. नामदेव की लीला, रचयिता कबीर, स्थान-काशी, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—५¾ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८३५ वि॰ के लगभग प्राप्तिस्थान—पं॰ दीपचंद जी, ग्राम—नोनेरा, डा॰—पहाड़ी, रियासत—भरतपुर।

आदि—अथ नामदेव की लीला लिषते॥

नामदेव सुलतान बादला। देषौ वै छीपी तेरा हर विठला॥ टेक॥
वे हिंदु गुमरावै दीन। कलमाना ही कुफराना कीन।
पातशाह मैं क्यौं बेदीन। सुमरौ साहब अपना दीन।
कारी कपला व्यायी गाय। हतैं मुलां बिलमला पाय।
आन मुराही वाही छुरी। हर का घोरा पाषर परी।
नामदेव गाय पी लावे मोही। नातर गरदन मारू तोही।
पातसाह ऐसी क्यों होय। मूवा मुरदा जीलावै कोय।
अपना काजी मूला बुलाय। जै कोई मुरदा देय जीलाय।
दूध पिलावै तू देहरा फिरावै। काहे न मूरदा गाय जीलावै।
मेरा कीया कछु नहीं होय। करता है सो औरहि कोय।
तू पातसाह मैं जात कमीण। हिंदु तुरक का एक ही दीन।
कैतु पगरी दै कै दिन मैं आव। कलमा भरकै गाय जिलाय।
अगरी दैऊ न कलमा भरू। जाते जीव का लोभ न करू।
जब कोपै असुर कौ राव। मातौ हस्ती दियौ झुकाय।
कुंजर करै सुंड की चोट। नामदेव उचरौ हरकी वोट।

सुन दौरी नामा की माय । कर मींडे मन में पछताय ।
अरी नामा नाम समझाय । विन आइ तेरा जीवरा जाय ।
तव बोली नाम की माय । राम छांड़ पुत्ता कहो पुदाय ।
हुँ तेरा पुत्ता तु मेरी माय । संकट परैपर कहुँ नहि पुदाय ।
नामदेव पर कोपौ सुलतान । रथ षीचे देषै ससमान ।
पातसाह सुँ साह बोले बोल । नामा समर सोनौ तोल ।
डंड देहु तो दो जग पडु । दिन छाड दुनिया कथ मरू ।
येक पहर में जीवै गाय । नाही तौ नामा जीव सुजाय ।
सात घड़ी तौ वीती सुनी । अजहु न आये त्रभवनधनी ।
तल धरती ऊपर आकास । नामदेव छाड़ी जीवकी आस ।
मेरा मूया न थोड़ा होइ । पाछे राम न कहसी कोय ।
गंग जमन जै उलटी वहै । नामदेव हरहर कहता रहै ।
राम तनाना जावा जला । सेवग भाई स्वामी आइला ।
नामदेव भगत करी लौ लाय । उठी बछा चोषौ गाय ।
गाय जीलाई वाजे बाजै । पातसा महल कू भजै ।
भज पातसाह महलन कुजाय । महलन भीतर लागी लाय ।
भाजै बीबी करै सलाम । तै क्यौं काफर कीयौ हैरान ।
सांचा नामदेव तुम्हारा राम । हिंदु तुरक झपै वेकाम ।
पातसाह तव पकड़े पाव । वकसौ नामदेव तुमारीगाय ।
नामदेव पातसाह झगड़ौ पड़ौ । हितकदास कवीर कहौ ।

इति श्री नामदेव जी कौ झगड़ौ संपूरन ॥ श्री सरदा जी सहाय ।

पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—एक कपिला गाय के लिये बादशाह और नामदेव में झगड़ा बढ़ गया। बादशाह ने नामदेव से कहा कि या तो गाय को जिलाओ या मरने के लिये तैयार हो जाओ। हिंदू धर्म की निंदा करते हुए नामदेव को मुसलमान धर्म स्वीकार करने के लिये भी कहा। नामदेव ने अपनी धार्मिक दृढ़ता दिखलाते हुए मरी हुई गाय के विषय में बादशाह को समझाया कि अब गाय जीवित नहीं हो सकती। किंतु बादशाह ने एक नहीं मानी। अंत में विवाद दोनों ओर से बढ़ गया। नीमा ने भगवान् का स्मरण किया। गाय जीवित हुई। बादशाह डरकर महल की ओर भागा। वहाँ बेगमों ने उनके कार्य की बड़ी निंदा की। पश्चात् नीमा का सम्मान किया गया और बादशाह ने क्षमा याचना की।

टिप्पणी—अंत के पद 'हितकदास कबीर कहौ' से ही ग्रंथकार का नाम 'कबीर' ज्ञात हुआ। रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं। किंतु इस ग्रंथ के आगे एक ही हस्तलेख में 'जालंधर जुद्ध', 'धर्म चरित्र' और 'ध्रू चरित्र' नामक तीन छोटे-छोटे आख्यान

और लिपिबद्ध हैं। 'जालंधर जुद्ध' में लिपिकाल सं० १८३५ वि० है। अतः प्रस्तुत ग्रंथ का भी लिपिकाल यही होना चाहिए। लिपिकर्त्ता ने लिखने में बहुत अशुद्धियाँ की हैं।

संख्या २१ ग. ग्रंथ भवतारन, रचयिता—कबीर, कागज—देशी, पत्र—२०, आकार—७३/४ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१८ वि० = सन् १८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी, दाता—पंडित रामविनय शर्मा, स्थान व डा०—सरायमीर, जिला—आजमगढ़।

आदि—सतनाम ॥ सत सुक्रित आदि अदली अजर अचिंत पुरुष करुनामै कबीर सुरति जोग संताय न धनी धर्मदास मुक्तामनि नाम चूरामनि नाम सुदरसन नामाकुल पतिनाम ॥

प्रमोध गुरवाला पीर कवल नाम अमोल नाम सुरति सनेही साहेब की दया सो लिष्यते ग्रंथ भवतारन ॥

॥ धर्मदास वचन ॥

धर्मदास कहै कर जोरी। सत गुर सुनु विनती इक मोरी ॥
भव वारीध कौन विधि छुटै। जम बंधन कवने विधि टूटै ॥
भव दरियाव······रन पारा। तामहि अटके सभ संसारा ॥
सो दरियाव कोने विधि थाही। परम पुरुष के हम कैसे पाही ॥
करो भक्ति की जोग एह कमाउ। देहुदान की तीर्थ एह नहाऊ ॥
करो जोग की एह इंद्री साधो। वाहेर फिरो की एह मनको बाधो ॥

अंत— परम पुरुष अधर पर अमी है एक अंक।
अव महि एह निरअंक है धर्मनि होउ निसंक ॥
उतपति परलै वीज गति वीजै आवै जाइ।
गुपुत प्रगट जो हती सो सभ दिया लषाइ ॥
निह अछर अछर है अछर की परगास।
अछर ते जीव उपजै सुनो संत धर्मदास ॥
मनते माया उपजी माया तिरगुन रूप।
पांच तत के मैइली मे वेधे सकल सरूप ॥
माया ब्रह्म जीव तत रज सत, तम तिरदेव।
इन्ह सभही को छाडिकै करै निअछर सोम ॥
जो चाहो एह सोइ मिलै मानो मोर यह विचार।
यही भेद जाने बिना कोइ ना उतरे पार ॥
जगमे भरमै नही यह मेटे संसय सूल न होय।
हंसा हीरा अमर होय तब पला न पकरै कोय ॥

कहै कबीर धर्मदास से तब उतरै भवपार ।
हमरी प्रतीति करते रहो सकल परिवार बिसारि ॥
अंसवंश परिवार जे ते नहोय गोविंद गुन सिष जो एह गाए ।
जो चाहै निअछर जो सम भाय । मुकुति अंक सोइ लिषा जाइ ॥

इति श्री ग्रंथ भवतारन संपूर्ण ॥ वैसाष मासे कृष्णपछे परिवादिन ब्रेसपति का संपूर्ण भया । लिषा संतोषदास कबीर वाग के सहर लखनऊ साकिन मषमूल गंज ॥ छितवापुर का नाका ॥ संबत् १९१८ ॥

विषय—कबीर का धर्मदास को संसार सागर पार होने के संबंध में ज्ञानोपदेश करना ।

संख्या २१ घ. सुखसागर, रचयिता—कबीर, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—८¾ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी कैथी मिश्रित, लिपिकाल—संवत् १८१२ वि० के लगभग=सन् १७५५ ई०, प्राप्तिस्थान—काशी नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी। दाता—श्री गुरू बालक प्रसाद जी, ग्राम—गोंठा खास, डा०—दोहरीघाट, जिला—आजमगढ़ ।

आदि—लीषते ग्रंथ सुषसागर ॥

कहै कबीर सुनो ध्रमदासा । अगम भेद कहो परगासा ॥
सुष सागर की कथा सुनावो । परम पुरस को नाम बतावो ॥
जाकी गती मती काहु न पाइ । ताकी जुगती तुमसो कहो बुझाई ॥
अपरमपार पार ते पारा । सुषसागर सबही ते न्यारा ॥
सबके परे ताहे असथाना । मूलसार ते भए नीज ग्याना ॥
अगम कथा अकह की बानी । ध्रमदास लेहु जो मानी ॥
गती अग्रीगती ते है न्यारी । कोट भान रोम उजीआरी ॥
कोट चंद्र अम्रीत तेहि माही । ताकी गती कोउ जानत नाही ॥
बडे बडे रीषी मुनी भैएउ । वाका षोज न काहु पैएउ ॥
सुष सागर नीजु नाम परगासा । हंसा करे सुषसागर बासा ॥
सो हंसा कहीए मती धीरा । सुष सागर नीज कहै कबीरा ॥
पुरन पुरस ताहा नीज ध्याना । ताकर भेद न काहु जाना ॥
सबके ऊपर रहै रे भाइ । नीह अछर ते नाम कहाई ॥

अंत—केते वेद करै उचारा । पार न पावै अपरम पारा ।
केते ब्रह्मा ध्यान लगावै । नाही प्रीथी मे नाम धरावै ॥
और कहा लगी करो वषाना । वोर पार सबही सुष जाना ॥
ध्रमदास कहन के नाही । समुझत वनै समुझो मनमाही ॥

सुष सागर सदा सुष होई । महा पुरुस बैठे ताहा सोइ ॥
ग्रंथ ग्यान वानी ताहा नाही । लषै लषावै उन्हकी छाही ॥
अलष अपार लषै केही भाती । अलष लषै अलष की जाती ॥
हंस हंसीनी करै वीलासा । सदा पुरुष के रहै पासा ॥
षोडस सुरुज हंस एक सोभा । ताहा हंसीनी का मन लोभा ॥
सुरुज चारी हंसीनी को रूपा । महासेत अरु बहुत अनूपा ॥
केते हंस पुरुष सुष देषै । लेषा नहीं अलेष अलेषे ॥
हंसन कह हंसीनी देषै । हंस नजरी भरी उन्हको पेषै ॥
धमदास सोइ नीजु जाना । संतै संत है एह ग्याना ॥
वानी चौदह हम अब भाषी । एही जुगुती नीज न्यारी राषी ॥
भेद भाव सबहीन मे कहेउ । होए अभेद मुल मे रहेउ ॥

दोहरा

भए अभेदी भेद तजी राह सार ठहराइ ।
आपा मेटै सोभी नीह अछर मीली जाए ॥

इती ग्रथ सुषसागर कबीर साहेब कहा से संपुरन ॥

विषय—परब्रह्म के स्वरूप का तथा कबीर के संसार में आने के हेतु का वर्णन किया गया है ।

टिप्पणी—हस्तलेख में प्रस्तुत ग्रंथ के अतिरिक्त निम्नलिखित रचनाएँ और हैं :—

१—एकादशी माहात्म्य—सूरजदास कृत
२—कबीर संक्राचार्य की गोष्ठी—कबीर
३—संतोषबोध—कबीर

संख्या २१ ङ. कबीर और संकराचार्य की गोष्ठी, रचयिता—कबीर, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—८३/४×६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिली हुई, लिपिकाल—सं० १८१२ के लगभग = सन् १७५५ ई०, प्राप्तिस्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी। दाता—श्री गुरु बालकप्रसाद जी, ग्राम—गोंठा खास, डा०—दोहरीघाट, जिला—आजमगढ़ ।

आदि—लीषते सत कबीर औ संक्राचार्ज क गोस्टी ॥

॥ संक्राचार्ज मुनीवाच ॥

संक्राचार्जन पूछही वानी । हे स्वामी मोहे कहो बषानी ॥
ब्रह्मरूप कहीए समुझाई । केही वीधीमाश्रा संग कहाई ॥
जीव के माहे ब्रह्म की मरहीश्रा । सो सामी तुम सो कहीश्रा ॥

॥ कबीर उवाच ॥

ब्रह्म एक सुध चेतन्य होई। माञ्रा ञ्चेत ब्रह्म संग सोइ ॥
जैसे ब्रीछ ब्रीछ सो छाया। वैसे रहै ब्रह्मसंग माञ्रा ॥
सलीता माह ब्रीछ जस छाही। वैसे ब्रह्म जीव के माही ॥
माञ्रा वोट ब्रह्म नाही दरसै। जीञ्र चेत केही वीधी प्रसै ॥
माञ्रा परे ब्रह्म ही जानी। ञौर न कोइ दूसर मानी ॥
एक ञकेला ब्रह्म ञपारा। माञ्रा रहै ताहे पगधारा ॥

॥ संक्राचार्ज उवाच ॥

ए स्वामी एक बुझौं तोही। जो समुझाए कहो ञब मोही ॥
केतीक सक्त ब्रह्म तै मएउ। केतीक माञ्रा तै नीरमैएउ ॥
तीन के नाम नीनार बपानो। भीन भीन भैए ताते जानो ॥

ञंत—ञंतहकरनः चीत मन पानी को चरूपः ञहंकार ञगीन को सरूपः बुध प्रीथी को सरूपः एह चतुरथ ञंतहकरन कहीएः सव्दञकास को सरूपः सपरस वाको सरूपः रूपतेज को सरूपः सव्द सपरस (स्पर्श): रूप रसगंधः ए तनमात्रा कहीएः ञकास की इद्री स्रवनः वाए की इन्द्री तचाः तेज की इद्री चछुः जीभ्या पानी को इद्रीः नासा प्रथी को इद्रीः ए पंच ग्यान इद्रीय कहीएः वचन ञकास की इद्रीयः हाथ वाए की इद्रीः पाव तेज की इद्रीः उपस्त ञव की इद्रीः गुदा प्रीथी की इद्रीः एह पंच कर्म इद्रीया कहीः

× × ×

॥ ए ञस्थुल मात्रा कहीए ॥

ञस्त ब्रह्म को सरुप : मास वाए को सरुपः
नौ तत को रहट घट जीव कहीएः
कीट भ्रींग की नाइः इहसौ माया वह्म कौ नीरनौः
पींड ब्रहमंड को वीचारः पद सुछमः कबीर साहेब संक्राचारज को चेताएः

इती कबीर साहेव ञौ संक्राचर्ज की गुस्ट संपूरन समापतः
विषय—कबीर का शंक्राचार्य को तत्व ज्ञान का उपदेश करना।

टिप्पणी—रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल प्रस्तुत ग्रंथ के साथ एक ही हस्तलेख में लिपिबद्ध 'संतोषबोध' के लिपिकाल के आधार पर संवत् १८१२ है। रचयिता का नाम 'कबीर' दिया है। रचना में कबीर शंकराचार्य को तत्वज्ञान का उपदेश करते हैं। यदि ये शंकराचार्य सुप्रसिद्ध अद्वैतवादी शंकराचार्य हैं तो इस रचना का कबीर कृत होने में संदेह है। इस दशा में किसी कबीर पंथी ने ही इसको रचा होगा, ऐसा जान पड़ता है। इसकी रचना गद्य पद्य दोनों में है। अधिक भाग गद्य में है।

संख्या २१ च. संतोष बोध, रचयिता—कबीर, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—८$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१४, पूर्ण,

रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिश्रित, लिपिकाल—सं० १८१२ वि०= सन् १७५५ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा वाराणसी, दाता—श्री गुरूबालक प्रसाद जी, ग्राम—गोंठा खास, पोस्ट—दोहरीघाट, जिला—आजमगढ़।

आदि—संत नाम लीषते ग्रंथ संतोषबोध ॥

धर्मदास सुनो शब्द ब्याङ्हारा। निस वासर के करो बीचारा ॥
लाल तुरी जो जग परवाना। मुसकि जोजन उह ठीकाना ॥
हेरे तुरे जोजन दुई जाई। जरद जोजन तिनि पहुचाई ॥
हंस जोजन चारि पहुचाई। आपन आपन मईजलि कमाई ॥
पाच तुरे रथ एक असवारा। तामीतर मन जिव विस्तारा ॥
जिव परा है मन के हाथा। नाच नचावै राखै साथा ॥

शाषि

अष्ट पंपुरिका कमल है ता भितर जिव को वास।
ता उपर मानको आसन नष शिष तन के पास ॥
सूर मिलावै चंद के चंद मिलावै सूर।
यह निज भेद बतावै ताहि मिले गुरु पूर ॥
जाहि पवन पर चंद चलै ताहि न ग्रसै काल।
जो एह भेद विचारि है सोइ जवहारिलाल ॥

अंत—बिना सब्द है घर अधीआरा। छन छन काल करै अहारा ॥
सब्द सुरती निरषी एक धारा। मुषते वचन भआ कछु सारा ॥
आगम तस मथुर (?) सरीरा। निरति नाम में संत कबीरा ॥
निरतीपुनी सब्द की आसा। सुरती नाम आहे धर्मदासा ॥
सुरति रमी रति वाधे एकनेहा। पावै नाम हसा को देहा ॥
कथै ग्यान जो भाटक सारा। लोग नामने मुढ़ गवारा ॥
धर्मदास तुम करहु विचारा। हम तुम कीन्ह सकल संसारा ॥
मथुरा बैठी जो शब्द सुनाई। धर्मदास गहो चितलाई ॥

इति ग्रंथ संतोषबोध संपुरन स्मापती सन वारासै बनैइस की सल मीती वैसाष सुदी संतै को संपुरन भाई दिन मंगल ॥ १२ ॥ लीषो जुडवनदास बैरागी कोर जी बैठे लीषा ग्रंथ संतोषबोध तीलकदास को ग्रंथ संपुरन भए तिनपहर दिन रहो तब संपुर्न भाया १८१२ ॥ संपुरन भाया मगल के दिन ॥ १८१२ ॥

विषय—जीव विषयक ज्ञान का वर्णन किया गया है।

संख्या २१ छ. ज्ञान प्रगास या भ्रमदास बोध, रचयिता—कबीर, स्थान—काशी, कागज—देशी, पत्र—६९, आकार—६½ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण

(अनुष्टुप्)—८१६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—कैथी, लिपिकाल—सं० १८७९ वि०=सन् १८२२ ई०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत गुरूबालक प्रसाद जी, ग्राम—गोंठा खास, डा०—दोहरीघाट, जिला—आजमगढ़।

आदि—सतनाम कबीर साहेब का दाञा ॥ धनी ध्रमदास का दाञा ॥ साहेब ज्ञानदास का दञा ॥ साहेब लालदास का दञा ॥ साहेब मसुदनदास का दञा। साहेब वीरबलदास का दञा ॥ साहेब पुसीहालदास का दञा ॥ साहेब लषनदास का दञा ॥ साहेब गुलाबदास का दञा ॥ सकल संत महंत हंस का दञा ॥ सभ साधुन का दञा ॥ ऐही बंदे की बंदगी सभको ॥ ग्यानी धानी को ली०।

ग्रंथ ग्यान प्रगास ॥

सगुरु सत सत नाम। सत पुरुष संत सुपधाम ॥
सत सुक्रीत सतलोक नेवासी। दुषनासन अवीचल सुपरासी ॥
अमी नाम सो सत कहाए। अकह अलीस सो आपु रहाए ॥
अवीगती अषै अमान सरूपा। अकह अपोल अडोल अनूपा ॥
अजर अजायनी सो नीहस्वादी। नीहकामी नीरमोह अनादी ॥
नीहक्रोधी नीरलोभ नीहसंका। गुनातीत नीरवैर नीहलंका ॥
जम दारुन भंजन प्रभु सोई। आपुही तात मातु नहीं कोई ॥
नाही तीन्ह पाच ततु तनधारा। रहे अमान नूक नपारा ॥
हौ ताकह नीसुदीन सीर नाऊ। गुप्त प्रगट ताको गुन गाऊ ॥
वोनके ढीग से तम चली आए। जीव नीसतारे उन्हीं पठाए ॥
सो हंसा नही जात बीगोई। ... ...
सतगुर शब्द गहै जो हंसा। मेरै जनम मरन जम तंसा ॥

अंत—ध्रमदास गहु चरन सरोजा। जुग कर जोरी ठाठ भै सोझा ॥
बैठे पुनी अग्या प्रभु पाई। बेमुष जीवन्ही को बात जनाई ॥
हौ प्रभु अस वीरतंत भौ ताही। पान प्रवाना लीन्हेसी नाही ॥
मै भाषेउ प्रभु क्रसठी दाना। उन्ही दुरमती बुझेसीं कछु आना ॥

॥ कबीरोवाच ॥

हो ध्रमनी जौ लीऐसीनपाना। परी ही काल मुष स्व प्रवाना ॥
पेत से कोइ टरै जो भाई। सो जीव नीस्चै जमु घरी पाई ॥
होए जमुचोर काल कै अंसा। ध्रमराय तेही करीही बीधंसा ॥

× × × ×

पाँचौ चोर प्रबल घट माहा। मनराजा पाचहु कै नाहा ॥
सतगुर धान मनही धरी बांधहु। पाँच चार कह दीढ होइ साधहु ॥

॥ छंद ॥

धरीमनही बाधहु पांच साधहु सारततु गुर ग्यान ते।
एह देस है जमराज को तरी होए वीदेही ध्यान ते॥
सत नाम अकह अमान हीअ धरी करहु सेवा संतको।
नीज ध्यान सतगुर रूप अस्थीत ग्यान लहै सो कंत को॥

॥ दोहरा ॥

गुर मुष स्व प्रतीति करी हरष सोग विसराए।
दआ छेमा सत सील गही तव अमरलोक को जाए॥

॥ सोरठा ॥

वरनेउ ग्यान प्रगास ध्रमदास संमोध मत।
कहै कबीर सोहंदास जेही ममस्व प्रतीत हीए॥

इति श्री ग्यान प्रगास ग्रंथ ध्रमदास बोध॥ संपुरन भयते॥ सतगुर के चरनारबींद नमस्तुते॥ दसषत जमुनादास के हाथ कै सकल हंसन पर दआकीन। ध्रमबोध मैं तव लीपी दीन्ह॥ ग्रंथ उतारल भगतुदास जगह गोंठा प्रगने घोसी तपे आजमगढ़ समत १८७९ मी० कुआर सुदी वरीज सोमार के॥ सतनाम कबीर साहेब की दआ से भआ॥

विषय—कबीरदास का ध्रमदास को निर्गुण ज्ञान का उपदेश करना।

संख्या २१ ज. सुखनिदान, रचयिता—कबीर, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—१०×४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००, अपूर्ण, रूप—जीर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी।

आदि—श्री अथ कबीर जी कृत सुष नीधान मधे की वाते॥ दोहा॥ हद हती जब आप मे: सकल हतो ता माहि, ज्यौ तरवर के पेड़ मे: डारपात फल छाहि। १ डारपात सब पेड मे: पेड बीज के माहि: आप आपको रगि चले कोई मीलत वीज को नाहि। २

जब करता आये हते बीज अछिया माहि; ताहि लखै कोइ संतजना सब संसै मिटि जाहि॥ ३

॥ रमैनी ॥

प्रथमही करता मुप अमृत बानी: जाही रची सकल रजधानी
सुख निधान सुख सिंधु उजागर: करुनामय कृपाल गुन आगर
पंच तत्व तीनौ गुन जापै: पूरन ब्रह्म बोलता आपै
आप अखंडीत उम्र सरीर: सोहं सोहं सत कबीर
२ आपही तत्व ... ...

अंत—मैं गायत्री मैं भसवंती मैं गंगा जमुना मैं सरसती
ये तीनि लोक वसि करि के मोहो, तुम तीनौ सीस छत्र मै सोही

मैं हीरा रतन मैं सोना मोती, उडगन सकल हमारी जोती
ये वाक वादिनी सारदामाइ, मै तीनहु को सदा सहाई
मैं जो करो सो निश्चै होइ, हम सो बली अवर नहीं कोई।
जेह ने वाजौ होइना कीजे, जेहे संघारो मैं··

इसके पुस्तक खंडित है ···

विषय—कबीर और धर्मदास का संवाद और धर्मदास द्वारा किसी भंडारे का वर्णन।

संख्या २१ झ. स्वरोदय, रचयिता—कबीर, स्थान—काशी, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—६×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—कैथी मिश्रित नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स० काशी।

आदि—सतनाव प्रकास पुरस महापुरस की दया। कबीर साहीब की दया गुसाई धरमदासजी की दया। सब संत की दया। गुसाई भाउदास जी की दया। लिषते सरोधो कबीर साहीब को।

भाषा रव भोमे गा। सुरवार सुर दीन वाही के गुस धंग।
साख कारी जौतीध कीसन पष वसेष तासीध
सकलकारी जसु कलष वसेषता। बुधा शुकर।
वीसपत। सोमवार सुखाव नाड़ी वसवता।
सब कारीज सुकल पष वसेषत। संफराता को वोरो।
मेष सीध। धन। गुल। कुभ मीथन ये षट संकर ते।
उद सुरज सुभासुभ। मेती सकराते सुरज की है सो सुरजे चहिए

अंत—येह काल जंजाला। सहज सुनेय सुरजे समनी
क्या कारजमराया जसी रहणी जसी करणी सांच साच मिलाय
साच साई का दरसन पाया आवा गवन नसाया
नीरगुन स्वामी अगम अगोचर दासरे काहु कीन आया।
तन मन अरप मिले भई साधो।
तइ भीषट।

मंत्र हीनगज देव ततसखः ये तो सरोध
कबीर साहीब को संपुरण सठे सही।

विषय—स्वरोदय का विषय, नासिका द्वारा स्वास प्रश्वास के आवागमन के अनुसार भविष्य तथा शुभाशुभ फल वर्णन।

संख्या २२ क. शालिहोत्र, रचयिता—करताराम 'करता', कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—१०½×६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७६,

अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी कैथी मिश्रित, लिपिकाल—सं० १९०९ वि०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर चंद्रभान सिंह जी, स्थान व डा०—रतसंड, जि०—बलिया।

आदि—असुर सुरासुर अंम्रति पावा। वाजी जान भानु मन भावा॥
उत्तीम वाहन वाजी वीचारी। रवी कह दीयो जगत हितकारी॥
पुनी कमला बोली करजोरी। नाथ सुनहु वीनती एक मोरी॥
जगमह वाहन वाजी अनेका। उतीम मधीम अधम अनेका॥
उतीम अस्व आपु मुख भाषो। उन मध्य आदी मह राषो॥

॥ दोहा॥

दीन बंधु आरत हरन बीनै करौ कर जोरी।
वीसतर सहित बषानिए कैसे उतम घोर॥

॥ चौपाई॥

प्रीया प्रीती सो हरी अनुरागे। घोर बखान करन तब लागे॥
मोरे सदन वाजी कर वासा। जाहाँ घोर ताहाँ मोर नेवासा॥
सामी मंद समर के कादर। बाजी बांधी के करै नीरादर॥
ताहाँ न मोर घोर कै बेरा। संपती हीन दीन कै डेरा॥
लछमी धर्म कर्म सुष ताके। लछनवंत वाजी घर जाके॥
सब सुलछन दोप वीहीना। बसै जासु घर एको दीना॥

अंत—

॥ तोमर छंद॥

इसर क्रीपा जब करै। तब कुर कुरी कह हरै॥
बर बाजी के एह ब्याधी। जब सैन्य पात असाधी॥
एह कहो सारंग पानी। कमला की रुची पहिचानी॥
एही बदत सहीत वीवेक। तेही होत बुधी अनेक॥
गुन दोष है को कहै। तब भूप को मन लहै॥
बुसो करहै जेही गेह। स्रीव सही सहीत सनेह॥

॥ हरी गीता छंद॥

कातीक चतुर्दसी सकुल पछ परतेछ भृगुवासर।
भोताहाग्राम बैरीधाम मे एक जगा कढ़ि रवि फल॥
सालीहोत्र पवीत्र घोर चरीत देव वानी कहा।
सीरमानीरायेइजाए का सुष पाए कवी 'करता' कहा॥

॥ दोहा॥

रीभबवक्र सो नागइ नंद जुत करी सम्य (समय) जानी।
आसाद सीसीत सुभ पंचमी सनी को वासर मानी॥

सालहोत्र भाषा समास सुभ मस्तु ॥ समत १६०६ साल मी० कातीक वदी १० रोज सनीचर जो प्रतीदेषा सो लीषा ॥

विषय—घोड़े के गुणदोष तथा रंग रूप आदि का विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—हस्तलेख आरंभिक दो पत्रों के नष्ट हो जाने से खंडित है। रचनाकाल का उल्लेख तो है पर वह अस्पष्ट है। इसका दोहा इस प्रकार है :—

री भव वक्र (वक्त्र) सो नागइ नंद जुत करी सम्य (समय ?) जानी।
असाढ़ सी सीत सुभ पंचमी सनी को वासर मानो ॥

लिपिकाल संवत् १९०९ है। ग्रंथकार ने अपने नाम का स्पष्ट उल्लेख कहीं नहीं किया है। कविता में जहाँ तहाँ 'करता' या 'करता राम' आने से वही उसका नाम मान लिया है। एक स्थल पर तो 'कबी दिज करताराम' भी आया है जो इस प्रकार है :—

अंग परीछा दोष गुन रंग सभै गुन ग्राम।
कहो सबै बीलगाइ कै 'कबी दिज करताराम' ॥

इससे प्रकट होता है कि करताराम ब्राह्मण थे।

संख्या २२ ख. शालिहोत्र, रचयिता—करताराम द्विज, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—६३/४ × ३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५१, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १८५४ वि०, सन् १७९७ ई०, प्राप्तिस्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—॥ श्री गनेसायनमः शालिहोत्र लिषते ॥

॥ सवैया ॥

सिद्धि शदा नीकटे प्रगटे निघटे नीतहि दुष दारीद दंदन।
दुर्मतिमोह महातम के रवि बुधि प्रकासक आनंद कंदन ॥
मंगल मूल रहैं अनुकूल सो सुल हरे हर गौरी के नंदन।
'करता' कवि जो करु ध्यान हिये त गनेस के पाव कलेश नीकंदम ॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

रदन एक सुभ सदन है सोभित वदन गअंद।
गहन मोह तम दहन उर प्रगटत पूरन चंद ॥

॥ दोहा ॥

द्वादस भवरी वाजी के रहत अंग अस्थान।
गुन ऐगुन को बुझिए मानि ग्रंथ परिमान ॥
भाल शीश मुष कंठ पर हीदे नाभि के देश।
भारि भवरी दोष की गुनो जानीए वेश ॥

॥ चौपाई ॥

अगीला जाँव गाठी पर भौरी। पुट उपार दोष अति औरी।
भवरि चरन पाछीले जानो। वेदावत महा भै मानो॥
दुम के मुलनीत में होवै। ऐसा घोर संप्रदा पोवै॥
भौरी घोर पीठी पर होई। आसन वेध विहाईब शोई॥
शीर पर भौरि सीगी कहावै। शंपति शामि प्रान दहावै॥
ऐसे वाजि देषि परी हरव। तुरीत देस सेवा हर करव॥

॥ दोहा ॥

भवरी घहुँ विलोकिए सुंदर जो वल पुर।
अत्रीगी महा नीषिध है करव देस से दूर॥

॥ सोरठा ॥

नीसा वीलोके मंद वासर देषे विमलता।
बाघ वरन दुप दंद चतुर पारषि ··· ··· ॥

—अपूर्ण

विषय—श्री लक्ष्मी और विष्णु भगवान् के संवाद के रूप में अश्व के भेद तथा शुभाशुभ लक्षण वर्णन किए गए हैं।

॥ रचना काल का दोहा ॥

वेद[४] वान[५] वसु[८] भू[१] सहित है सुभ संमत साच।
कातिक वदि बुध छठी केशन वाह शैपाच॥

संख्या २३. कल्याण पुजारी जी की बानी, रचयिता—कल्याण पुजारी, स्थान—वृंदावन, कागज—देशी, पत्र—१२७, आकार—५.८ × ४.८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०६८, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपिनागरी, रचनाकाल—१७वीं शताब्दी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद।

आदि— श्री राधावल्लभो जयति॥ श्री हरिवंश चंद्रोजयति॥

॥ अथ श्री कल्याण पुजारी जी की बानी लिष्यते॥

कवित्त

जकि (जाके) सिर ऊपर श्री व्यासनंद से धनी,
ताहि न प्रवाह (परवाह) कछू काहू और ठौर की।
चलत सुपथ साधु लक्षन ते नाजियत,
बानी मुप कहत रसिक सिर मौर की॥

श्रवन सुनत नैन देषत है रूप मन,
ध्यावत सरूप सोभा सिंधु मैं झकोर की ॥
सदाई 'कल्यान' रस फूले फिरैं प्रेमी जन,
गुननु गंभीर धीर मिटी सब रौरनी ॥ १ ॥

॥ मलार ॥

देषिरी यह पावस रितु आई ॥
नाचत मोर कोकिला गावति बाजति प्रेम बधाई ॥
स्याम घटा अति सरसनेह निधि विज्वलता छबि छाई ॥
हरषि हरषि वरषत पिउप्यारी छतिया 'कली' ······ " १११

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'कल्याण पुजारी जी की वानी' है। इसके अंतर्गत कल्यान जी के कवित्त और पद संगृहीत हैं। इनके अतिरिक्त कुछ फुटकल संक्षिप्त रचनाएँ भी हैं, जैसे :--

१-जस रसिक जीवन
२-हित जी को मंगल

ग्रंथ का विषय दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। एक के अंतर्गत संप्रदाय के आचार्य श्री हितहरिवंश जी, वनचंदजी, कृष्णचंदजी, गोपीनाथ जी, मोहनचंद्रजी तथा सुंदरवर जी की प्रशंसा है, दूसरे के अंतर्गत राधाकृष्ण के मान, रूप, रति आदि केलि क्रीड़ाओं का वर्णन है। कल्यान जी राधावल्लभी संप्रदाय के अनुयायी थे, अतः इनकी रचना उक्त संप्रदाय के सिद्धान्तों से प्रभावित है।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रंथ के कर्त्ता कल्याणपुजारी राधावल्लभी संप्रदाय के अनुयायी और आचार्य श्री सुंदरवर जी के शिष्य थे। ग्रंथ में कल्याणजी ने सुंदरवरजी को अपना गुरु होने का निर्देश किया है। श्री सुंदरवर जी हित हरिवंश जी के पौत्र और श्री वनचंदजी के सबसे बड़े पुत्र थे। इनका जन्मकाल संवत् १६०९ वि० बतलाया जाता है (देखिए राधावल्लभ भक्तमाल)। राधावल्लभ भक्तमाल में कल्याण जी को श्री वनचंदजी का शिष्य लिखा गया है जो ठीक नहीं है। कल्याणजी राधावल्लभजी के अनन्य भक्त तथा वृंदावन सेवी थे। ये राधावल्लभ मंदिर के पुजारी थे। इनका रचनाकाल १७वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध मानना चाहिए। प्रस्तुत वानी की रचना सरस और सुंदर है। इसमें हित हरिवंशजी की प्रशंसा में रचे गए पदों की संख्या पर्याप्त है। इसके अतिरिक्त रचना संप्रदाय के सिद्धांतों तथा भावनाओं से रंजित है।

संख्या २४. सूरज प्रकाश, रचयिता—कवि या करणीदास, कागज—देशी, पत्र—९३, आकार—६ x १४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६५१०,

रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १७८७ कार्तिक, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ओं नमः

अथ रामरामेश्वर महाराजाधिराज श्री छत्रपति पृथ्वीपति रघुवंश सिंह ताज महाराज श्री अभयसिंह जी रो रूपक 'सूरजप्रकाश' कवि या करणीदान विजेरा मोत रोकहियो लिष्यते ।

प्रथम गाथा—श्रीपति भगति सहाय रिध सिध सुकर नयो सकरं सुत ।
सुर अभिचाणं समाजं, श्रेष्ठ बुधि दीजिये गणेस्वर ॥

छप्पय—सोभवती संजति सोल श्रृंगार सकूती ;
हंसगति हालती हंस आरोह हकूती ॥
अधर दुती आक्रती जत्र वजवती जुगती ॥
रूपवती रजति भाल झूलती मुक्ती ॥
विमलती वेद रघुवचंती, अणंदति हरति अमती ।
अभपति गुण गावण उकति सरस्वती दीजे सुमति ॥

अंत— छप्पय

कलपवृच्छ सुभकरण सूरि हाता, रीझवार ।
नाहसाल उखाणो सूवं काया राग चारां गहर ।
पूरब हो गुणी महाकविता मन मोहे ।
राजा अनिराइयां सीस गज अंकुश सोहे ॥
प्रगट सी दसे दिस अपरा तिको अवर धर अवर लिय ।
'सूण प्रकाश' अभनाह रो जप सूण प्रकाश जिय ॥ ३ ॥

(रचनाकाल)—सत्र[१७] से संवत सत्यासिये[८७] विजै दसमी सनिजीत ।
वदि कातिक गुण वरणिये, दशमी बार अदीत ।

× × ×

(दोहा)—ध्रुव सुमेर अंवर धरा, सुरिज चंद प्रकास ।
महाराजा अभयाण रो, रीधुहता जुग रास ॥

इति श्री महाराजाधिराज महाराजे राजेश्वर श्री श्री अभैसिंघ जी रो ग्रंथ नाम सूरज प्रकास कविया करणीदान रो कहियो संपूर्णम ।

विषय—१–राजा अभैसिंह के पूर्वजों और उनका विस्तृत वर्णन है।

२–राज दरबारी कवि के सब दोष वर्णित हैं।

३–कवि ने अपनी आत्मप्रशंसा भी की है।

४–भोजन सामग्री का, दावत का और पकवानों का विस्तृत वर्णन है।

५–कवि षट् भाषा ज्ञानी है। पिंगल आदि साहित्यिक बातों का भी ब्योरा मोटा ग्रंथ 'सूरज प्रकाश' से निकाल कर अलग बन सकता है।

६–षट् भाषाओं में 'नागभाषा' को गिना है।

७–संगीत और नृत्य शास्त्र का विस्तृत विवेचन है।

८–ऐतिहासिक बातें अधिकतर प्रमाणिक नहीं हैं।

टिप्पणी—इस पुस्तक की दूसरी प्रति के संबंध में इस प्रकार लिखा है :—दूसरी प्रति अपूर्ण है। देशी पत्रा—२७ (२६–४२ तक तथा १८१–२०० तक)।

पंक्ति—२३, आकार—८½×८.२ परिमाण (अनुष्टुप्)—८१०, रूप—प्राचीन मध्यम दशा। इसमें मुंज के ७वें पुत्र से जयचंद राज वर्णन तक और अजयसिंहजी के युद्ध विजय से उनकी राज्य समाप्ति तक का विवरण है। आदि अंत प्रस्तुत विवरण पत्र के अनुसार है। समाप्ति का अंश यों है :—

'संवत् १८७७ रा कार्तिक सुद १४ चतुर्दशी रविवासरे लिखतं इदं पुस्तकं श्री जोधपुर मध्ये'।

संख्या २५. कवित्त काशीराम, रचयिता—काशीराम, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—७×४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७८७ वि० (लगभग), प्राप्तिस्थान—पंडित अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', सदावर्ती, आजमगढ़, जि०—आजमगढ़।

आदि—कवित्त काशीराम॥

देषा देषी भई छूट सुकुच तबतैं गई मिटी कुल कान कैसो घूँघट को करवो।
लागी टकटकी मिटी और धग धगी गति मति सभयकी ऐसो नेह कोउ धरवो।
चित्रका से दोउ जन ठाढ़े रहे काशीराम नाहिन परवाह भावों लाष लोक लरवो।
वांसरी वजैवो नट नागर को भूल गयो भूल गयो नागरि को गागर को भरिवो॥ १॥

बूंदी होत नीलमणि वरन सकै कौन धौं चूनी छप जात नीठ नीठ दीठ जौ परैं।
मुक्त परवाल होत लाल होत जावक सो हीरा होत भगनी छबि कैं धरैं।
लैत दैत नवन है घटि है हमारो मोल आपनी अनौषी ताहि तेरोई गुनी करैं।
पोटो हेम कुंदन सो होत कवि काशीराम वाके कर पर ते रुपैया होत मुहरैं॥ २॥

मंदहू चलत इंद्रवधू कैसे वरण प्यारी के चरण चारु नौनहूते नरमै ।
सहिज लिलाई बरणी न जाइ काशीराम चुई सी परत अवताकी मत भरमै ।
पुंडी ठकुराइन की नायन जौ गहित करि ईंगर को रंग चढ आयो दरबर मै ।
दयो है कि देनो है विचारै सोचै वार वार वावरी सी हूय रहीं महावरी लै कर मै ॥ ३ ॥

केकी जब कूकैं तब सूकैं प्रान काशीराम हरी हरी भूमै देष सोच सरसत है ।
भाकसी भयो है भौन सहौं दुष कौन कौन देत क्षत्र लौंन जब पौन परसत हैं ।
वियत नरेश तुम्ह छाये परदेश इहाँ विपत हमारी युं विधाता दरसत है ।
वेग सुध लेहु ना तो छूट जैहै देह अब कोप्यो है अदेह अवर मेह वरसत है ॥ ४ ॥

प्यारी जो न पाऊं आज प्रेमकाज हूँ सो काज मोहि फेर परयो हरि कैसे जी जीइतु है ।
चिरईन मिली आइ कोऊ न सिंघान पाइ, डौरून प्याल जाइ कैसे पीजयतु है ।
मानवे मणायइवे कों दौरवे कों धाइवे को याही दुष काशीराम देह छीजयतु है ।
आंव तज आँवरे सो चापा चाहैं आँव रस वैद हूँ कै चावर कहू पीछ पीजयतु है ॥ ५ ॥

॥ दोहरा ॥

लष गुरजन विच कमल सों सीस छुहायो स्याम ।
हर सनमुख कर आरती हीए लगाई वाम ॥ ६ ॥
भोरही भीर अहीरण की जमुना जल तीर भई अति भारी ।
काशी कहैं परवीन महानंद नंदन श्रीवृषभान की राजदुलारी ।
उनै तसलीम करी जु दुहूँ चष चार भये तौ किनू न निहारी ।
लाल गहे इत पाग की पेच उतै विंदुरी उन भाल सवारी ॥ ६ ॥

आइ रुत पावस पवन पुरवाई तैसी काशीनाथ,
तैसीयै तडित लागी लपकन ।
उन आए बादर विहंग उठे चहू उर (? ओर),
कुंजन अधयारी लागी लपकन ।
भली झहनात ठौर ठौर मोर मोर सुन,
विरह अगन जर छाती लागी तपकन ।
हेर हार हरित निहार पंथ चार जाम पीय के,
वियोग नैन रैनी लागी टपकन ॥ ७ ॥

सुरत सार की बनाई है विरंच पच कंचन जडत चिंतामन जे जराव की ।
रानी कमला की पिय आगम की कहिनहार सुरसर सपी सुष देनी प्रभुपाइ की ।
वेद मैं बषानी तिहूँ लोकन की पटरानी चहू चक जानी सेनापति के सहाइ की ।
देव दुष दंडन भरथ सिर मंडन ए दोउ अघ पंडन परावों रघुराइ की ॥ ८ ॥
सील भरी षरी करी अयाने कहैं मैं आंपै घरी घरी घरही मैं घूँघट संभाल है ।

गोकुल मैं वसि कुल कामनी कहाइ ससि,
सूर तै छिपाइ मुष नीचोही निहार लै।
कहैं 'कवि काशीराम' सीता इंदुमती
कैसो सती पार्वती कैसो पतिवृत पारिलै।
जौंलौ तेरी दीठि न परत नंदलाल तौलों,
गरवेली ग्वालिनि गँवारि गाल मारि लै॥ ९॥

संपूर्ण प्रतिलिपि

विषय--श्रृंगार रस के कवित्तों का संग्रह।

टिप्पणी—कुल कवित्तों की संख्या ९ है। पाँचवें कवित्त के पश्चात् एक दोहा भी हैं। ये सब दो पत्रों में हैं। जो एक ही जगह पर न होकर दूर दूर लिखे हुए हैं। इससे प्रकट होता है कि हस्तलेख एक बार अस्त व्यस्त दशा में हो गया था और उसकी सिलाई टूट गई थी। दुबारा सिलते समय पत्रों को व्यवस्थित रूप में लगाने का प्रयत्न नहीं किया गया। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। परंतु प्रस्तुत कवित्त वलीकृत 'अद्वैत प्रकाश' के साथ एक हस्तलेख में हैं। 'अद्वैत प्रकाश' का लिपिकाल संवत् १७८७ वि० है, अतः इनका भी लिपिकाल यही माना जाना उचित है।

संख्या २६. उषा चरित्र, रचयिता—जनकिशोर, स्थान—रामगढ़, कागज—देशी, पत्र—३९, आकार—६·३ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—७५१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७६४ आश्विन शुक्ल १० गुरुवार, लिपिकाल—चैत्र वदी ५ शुक्रवार, संवत् १८१९ वि०, प्राप्तिस्थान—श्रीविहारी जी का मंदिर महाजनी टोला, इलाहाबाद।

आदि—श्री महागणपते नमः॥ अथ उषा चरित्र जन किसोर कृत लिख्यते॥

॥ दोहा॥

नमो नमो सब जगत गुर, सुंदर सब सुष सार॥
जीवनि दास किसोर की, श्री बलदेव कुमार॥ १॥

× × ×

॥ अरिल॥

पहौकर मथुरा विचि सुदेस सुगम है।
सब सुषवास विलास रामगढ़ नाम है॥
कमलापति वाराह विराजत है तहाँ।
परिहां चरणि सरणि चव वरण करत आनंद महा॥

दोहा

कुल पारीक किसोर जन नग्र रामगढ़ बास॥
राधावर के आसरै हरि भक्तन कौ दास॥ ७॥

संवत सत्रह सै वरिष साठि उपरै च्यारि (१७६४ वि०)
सुकल दसै आसोज की गुरुबासर सुषकारि
उषा अर अनुरुद्ध कौ वरन्यौ सुजस विवाह
द्वारावती घर घर सकल वह्यौ विधि भयो उछाह

अंत— सवैया

सिरी को संहिता पढ़ाई ही 'किसोर किन,
गनिका न गंगा जल कबहू अन्हाई जू ॥
अजामेल विप्र अति पापनि को अधिकरी,
नाव के प्रताप पापीनिहू गति पाई जू ॥
गरल लगाइ आई पूतना पयौ धरनि,
प्रभु को अरपि पति देवता कहाई जू ॥
नरक निवारन दलिद्र दुष टारन,
अनेक अधजन है कृष्ण की बड़ाई जू ॥

इति श्री उषा अनुरुद्ध चरित्र संपूरण शुभं । संवत् १८१९ मिती चैत्र वदी ५ शुक्रवार लिखितं महाआत्मा नैणसुष सवाई जैंपुर मध्ये राज्ये श्री सवाई माधव सिंह जी ॥

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ में उषा और अनिरुद्ध की कथा का वर्णन है। वाणासुर शंकर भगवान् की तपस्या से सहस्र भुजाएँ और अनंत शक्ति का वरदान प्राप्त करके अपनी राजधानी शोणितपुर में आता है। कालांतर पर उसके यहाँ उषा का जन्म होता है। उषा पार्वती की सेवा में अपना शैशव काल व्यतीत करती है। जब युवती होती है तो पार्वती जी उसे यह वरदान देती हैं कि जिसे तुम स्वप्न में देखकर मुग्ध होगी वही तुम्हारा वर होगा। घर आकर उषा अलग प्रासाद में रहने लगती है। स्वप्न में अनिरुद्ध को देखकर वह आसक्त होती है। उसकी सखी चित्रलेखा आसुरी शक्ति से अनिरुद्ध को उषा के पास ले आती है। दोनों का गंधर्व विवाह होता है और आनंदपूर्वक रहने लगते हैं। वाणासुर पता चलने पर अनिरुद्ध को बंदी बनाता है। यादवों की चढ़ाई होती है। कृष्ण के विरुद्ध शंकर बाणासुर की सहायता करते हैं; परंतु अंत में वाणासुर पराजित होता है और उषा के साथ अनिरुद्ध का विवाह होता है।

टिप्पणी—ग्रंथ की लिपि दोषपूर्ण है।

संख्या २७. रुक्मिणी विवाह, रचयिता—किसन, कागज—देशी, पत्र—१५, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) १५, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश जोधपुर, जोधपुर।

आदि— (राग सोरठी)

पहली प्रणवूं देव गणेश सुर तेतीसा रथी,
सरस्वती स्वामिनी तुम पाई लागूँ देहि माता वर भारथी

वर देहि माता भारथी सुर सारथी सुंडाल
प्रणऊं तो नगरी द्वारिका श्री नगर तट गोपाल
बारह जोजन कनक सै गढ च्यारि पोलि प्रकार
कनक मंदिर मालिया कनक में गोख विहार ॥

आदि—(पत्र ६ से)—रुक्मिणी विवाह लो। (इकताली राग सोरठी; जाती तालो)

बिहभ देस कुंदनपुर नगरी,
भीषम नृपति तहँ'''सगरी ॥ टेक ॥
पंच पुत्र जाकै कन्या हो रुक्मनी
तीनी लोक तरुनी सिरहरनी ॥

अंत—रुक्मिनी ब्याह कथ्यो ज्यन क्रिस्ने सीखै सुनैरु गावै।
''''''अरु काम मुकती फल च्यारि पदारथ पावै॥
भगती देत अवतार विमल जस भूतल लीला धारी।
गिरिवर धर राधा बल्लभ परजाड़ौ (?) जाओ जन बलिहारी ॥ ८७ ॥
आभोग संपूर्ण ॥

इति श्री रुकमिनी ब्याह संपूरण समाप्त। शुभ मस्तु श्रीरस्तु। संबत वर्ष भा (फा) गुण वदि इतिवार पीडका (प्रतिपद) लिखत बाई श्री रतनावती जी नरबर में ॥

विषय—श्री कृष्ण और रुक्मिणी विवाह वर्णन।

संख्या २८. क्रिसनिया रा दूहा, रचयिता—क्रिसनिया, कागज—पीला पतला पत्र—१, आकार—८×५.७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर।

आदि—हाथी चौहदै हेकं लष गलियां कूकर लेधै।
वडफ्या तसौ विवेक करेन षीजै किसनिया ॥ १२ ॥

× × ×

कोई नर केरे नार हटवाडै भेला हुआ।
सुपना ज्यू संसार खटो विशांणो किसनीया ॥ १३ ॥

अंत—हाटा मांहि हजार, मन में लू केता मिलों।
जीयण वेला जुहार, कोई क आपै क्रिसनीयां ॥ १७ ॥

इति क्रिसनिया रा दूहा संपूर्णं।
विषय—नीति विषयक सोरठों का संग्रह।

संख्या २९. युक्ति तरंगिणी, रचयिता—कुलपति मिश्र, कागज—देशी, पत्र—७७, आकार—१०×७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७३३, पूर्ण,

रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७४३ वि०, लिपिकाल—सं० १९०७ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, 'रत्नाकर संग्रह', नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

आदि— ऊँ

श्री गणेशाय नमः। अथ युक्ति तरंगिणी लिख्यते। दोहा

गोरी राधा सुमिरियै जाकैं मोहन मित्त
कियौ राग रंगि श्याम कौं वीर वधू रंगि चित्त। १
प्रिया अंक धरि बंक मुष व्याल माल ससि भाल,
विघन हरौ अनुराग वपु सिव गौरी को लाल। २
चर थावर जगु जिन रच्यौ निजगुन तीन मिलाय,
जो चाहत बानी सरसु परसि भवानी पाय। ३

× × ×

कुलपति जुगति तरंगिनी रची मिलै सबसांज,
नवरस भूषन भाव सब सोधि लेहु कविराज। ३२
सहृदय करिहयाँ भावना तब कहियौ गुन दोष,
पाप कुटिलता होत है सहृदयता सौं मोष। ३३
इहाँ प्रथम वरनन कियौ राधा हरि को ध्यान,
बहुरि नायका भेद फिरी रति वर्नंनु पहिचानि। ३४

अंत—उदासीन ज्ञानी रसिक निज भगतन के हेत,
कीनी जुगति तरंगिनी कुलपति प्रेम निकेत। ७०२
गुण[3] रु वेद[4] रिषि-७ ससि-१ वरषर सांवनि सुदि की तीज,
कीनी जुगति तरंगिनी तन मन हरि रस भीज। ७०३
जय जय देवकि तनय हरि जय जय नंद किसोर,
जय जय राधा रवन इत चितवो दग की कोर। ७०४

इति श्री मिश्र कुलपति विरचितायां युगति तरंगिनी संपूर्ण समाप्ति मगमस्त॥ लिषितं कवि ईश्वर वंशीधर भट्टे चिरंजीव पंडित पन्नालाल पठनार्थं मिदं। शुभमस्तु।

इसके नीचे दूसरी रोशनाई से लिखा है।

इति श्री कुलपति मिश्र विरचिताया जुगति तरंगिनी संपूर्ण समाप्तं लिखितं चत्रभुज औलाद (पोता) कुलपति जी की मिती आषाढ़ बदी ८ एतवार संवत् १९०७ सा० संवत् १९०६, रचनाकाल—सं० १७४३ वि०।

विषय—नखशिख और नायिकाभेद तथा रसों का वर्णन।

रचनाकाल

गुणरु[3] वेद[4] रिषि[7] ससि[1] वरष सांवनि सुदि की तीज।
कीनी जुगति तरंगिनी तन मन हरि रस भीज ॥ ७०३ ॥

टिप्पणी इस ग्रंथ की विशेषता यह है कि इसको कुलपति मिश्र के पौत्र चतुरभुज (चत्रभुज) ने लिखा था।

संख्या ३० क. अर्जुन गीता या राम रतन गीता, रचयिता—कुशलसिंह, कागज—देशी, पत्र—२६, आकार—५.१×१२.४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—६८३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री पं० राजाराम, पंडित का पुरवा, डा०—अटूामपुर, इलाहाबाद।

आदि—श्रीगणेशायनमः ॥ श्री रामरतन गीता ॥ लिष्यते ॥

श्री गुरु विष्णु के चरन मनाउ। जेहि प्रसाद गोविंद गुन गाउ ॥
श्री विष्णु अर्जुन रश वानी। गुरु प्रसाद कछु कहौं बपानी ॥
अर्जुन कृष्ण भये इक ठई। ऐक समै श्री जदुराई ॥
धूप दीप लै आरति कीन्हा। चरण धोइ चरणोदक लीन्हा ॥
हाथ जोरि अर्जुन भए ठाढ़े। प्रेम प्रीति हृदय मह बाढे ॥
ऐक संदेह अहे मन मोरे। कहत अहो दुनौ कर जोरे ॥
श्री कृष्ण बोले विहँसाई। अर्जुन मोहि कहौ समुझाई ॥

दोहा

तीन लोक के ठाकुर दीन बंधु नंदलाल ॥
विनती करौं अधीन मै भोषहु वचन रसाल ॥

अंत— अन जानत कीन्ह अपकारी
त्राहि त्राहि कै करै पुकारी,
साधु के चरन मन मों राषै,
प्रगट होए सुष कबहु न भाषै ॥
तब ही तै मन भएउ हुलासा,
साधु के चरन कीन्ह मन आसा ॥
एही भाव राषो चित लाई,
तव दाया कछु कीन्ह गुसाई ॥
तब कछु ग्यान ह्रिदै मह आवा,
राम रतन गीता प्रभु गावा ॥
धनदारा सुत बंधौ आही,
धंधा कै जानेउ मन माही ॥

ऐहि विधि गुरु दया जब कीएउ,
ससै छुटि निर्मल तन भएऊ ॥

दोहा

गुरु दयाल भए मोपर छुटी गए सब भ्रम,
रामनाम चित लाईकै अबर न जानेऊ भरम ।
इति श्री रामरतन गीता संपूरनं श्री

विषय—मोक्ष किस प्रकार मिलता है और कर्म करने से मनुष्य कौन कौन गति को प्राप्त करता है, यही विषय श्री कृष्ण और अर्जुन के संवाद के रूप में वर्णन किया गया है।

संख्या ३० ख. अर्जुन गीता या रामरतन गीता, रचयिता—कुशलसिंह, कागज—देशी, पत्र—४८, आकार—६½×६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६२४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९६ वि०=सन् १८३९ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० चन्द्रभानसिंह जी, स्थान और डा०—रतसंड, जि०—बलिया, वर्तमान पता—मैनेजर भारती प्रेस, बलिया।

आदि—श्री गनेस साये नमहः श्री पोथी अरजुन गीता ॥ श्री कथा आरंभः ॥

॥ दोहा ॥

श्री गुरु वीस्न के चरन मनावो । जेही प्रसाद गोविंद गुन गावों ॥
श्री कृष्ण अरजुन रस वानी । गुर प्रसाद कछु कहो वपानी ॥
एक समै स्री जादव राई । आरजुन सहीत भै एक ठाई ॥
धूप दीप लै आरती कीना । चरनोदक लैमाथे दीन्हा ॥
हाथ जोरी आरजुन भै ठाढ़ा । कछु शंका मन सह जो बाढ़ा ॥

॥ दोहा ॥

तीन लोक के दाता दीन बंधु नंदलाल ।
वीनती करो अधीन होइ भाष्यो वचन रसाल ॥

चौपाई

शंशै एक है चीत मोरे । कहत अहेउ दुनो कर जोरे ॥
स्री क्रीस्न जी कहेउ वीहसाई । आरजुन सुनहु मन चितलाई ॥

अंत—राम रतन गीता प्रभु भाषा । परम तंतु के आरजुन राषा ॥
श्रीमुख गीता पूरन भैऊ । आरजुन के संशै सब गैऊ ॥
श्री कृस्न आरजुन गुसीकीन्हा । एक ठाव सब कहवे लीन्हा ॥
भाषा कुशल शीघ तेही नामा । क्रीपा गुरुदेव अवर श्रीरामा ॥
श्रीमुष गीता अम्रीत बानी । गुर प्रशाद भाषा रसजानी ॥
बुधि अव ज्ञान गुरु मोही दीन्हा । उत्तीम अर्थ जो लीपे लीन्हा ॥

नाम भेद गुरु मुष ते पावा । दाग्रा कीन्ह ग्यान मोही ग्रावा ॥
दोशरे कीन्ह शाधु की सेवा । तीन्ह प्रशाद पाए मै मेवा ॥
देषो बुझी जौन्ही दै मोही । रामरतन गीता ते ग्रान न ग्रांही ॥
काग्रा माग्रा ग्रीथा मै जाना । तव पुनीत पाएऊ संकर ध्याना ॥
देषेउ जग कोई थोर ताही । मीथा कै जानो चीत माही ॥
धन्य दारा सुत बंधु जो ग्राही । धंधा के जानेउं चीत माही ॥
ग्रनजानत कीन्ह ग्रपकारा । त्राही त्राही के कीन्ह पुकारा ॥
जब जीव ऐह जग मै उदाशा । त्रधा वरन मन पुजी ग्राशा ॥
प्रगट होई मुष कबहु न भाषा । हरी की दाग्रा पुजी ग्रबीलाषा ॥
एही भाती राषा चीत लाई । जब कछु ग्यान हृदै मो ग्राई ॥
एही बीधी गुरदेग्राल मोही कैउ । संसै छुटी नृमल तन भैउ ॥

॥ दोहा ॥

गुर देग्राल मै मोकह छुटी गए सब भर्म ।
राम नाम चीत लागे ग्रवर न जानेऊ कर्म ॥

इति स्री रामरतन गीता समापतः जो प्रती देष्या शो लीष्या मम दोष न दीयते ॥ समत १८९६ वेइन १२४६ शाल ॥

विषय—मोक्ष किस प्रकार मिलता है और कर्म करने से मनुष्य कौन कौन गति को प्राप्त करता है, यही विषय श्री कृष्ण और अर्जुन के संवाद के रूप में वर्णन किया गया है ।

संख्या ३१ क. धमारि, रचयिता—कृष्णदास, कागज—बाँसी, पत्र—२५, आकार—७ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३५०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, बनारस ।

आदि—श्री राधावल्लभो जयति । श्री हरिवंश चन्द्रोजयति । अथ धमारि लिख्यते ।

देखहु श्री वृंदावन मोहन अति अभिराम
आयौ मधु रितु सेवतु महि हरषि घन स्याम । १
आन विविध संवारी तरु संपति व्रजनाथ
वीथी सकल बिलोकहु प्रांन प्रिया के साथ । २
पहिलें असित पलास नि पुनिकलिक······रुनाति
मानहु धूमित बिष······रानल किमपि जराति । ३
जि···कित सत वर गनि के कुसुम···विगसात
मानहु दिसि दिसि जत जुव जस उमगनि माल । ४

अंत—पद होरा । राग परज ।

खेलैं री रंग भीनी होरी । व्यास सुवन की सुंदर जोरी ।
नीलांवर अंचल उर मोरैं झलमली किरनि किनारी कोरैं

मनु वदन विधु मंडल जोरै । निरषि रहैं पिय नयन चकोर । १
भरि लीनी सौंधे पिचकारी । घात गहन मिस अनंत निहारी ।
तितही नेकु निहुरि हरि निरख्यो । फिरि मुठि कैं सुंदरि मुख छिरक्यौ ।२
मोहन मुठी गुलाल की हारी । मनौं अपने अनुराग सिंगारी
सनमुख आवत भूलि सांवरौ । मंडरावत मुष फूल भांवरौ । ३
नाचत कुँवर बजावत मुरली । झुणु णु णु नूपुरधुन सुरली
रिझन रिझन रिझवार परस्पर । कृष्ण हित रहत भुजन भर । ४
॥ पद २ ॥

विषय—श्री कृष्ण की धमारि लीला का वर्णन ।

संख्या ३१ ख. सिद्धांत के पद, रचयिता—कृष्णदास हित, स्थान—वृंदावन, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—९ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद ।

आदि—॥ राग सारंग ॥

मन तुरंग चंचल अति भारी ।
ता सम तूल चलत नहि कोऊ चहुँ दिसि फिरत शब्द करि तारी ॥
श्री भागवत रीति मारग शुक गुन गति सुष कहिवे तें न्यारी ॥
फेरो प्रथम सहज की डोरी जौ चाहौ कीयौं असवारी ॥
तसकर पाँच निकट तहां निवसत तिमिर अज्ञान प्रवल अधियारी ॥
अति अमोल तातैं याके हित जतन जुगत राषौ रपवारी ॥
गुर कौ वचन दुवागौ आगैं साच मेष नहि जात उपारी ॥
उत्तम ठांउ साधु की संगति इहि विधि राषौ सुरति पछारी ॥
नित्याचार षुरहरौ कीजै दया भूल तन परम सुषारी ॥
सुमिरन सार करो निसि वासर छमा कायजा हौ हुसियारी ॥
धरि जनि प्रीति तंग कसि कथै ग्यान कटी लै दै करियारी ॥
श्री कृष्णदास संतोष सहित हित चढ़ि न परैं जौ हरि हितकारी ॥

अंत—प्रभु जू करैं सु सेवक मानैं ॥

अपमानौं ई लाभ हानि तकि मन मैं गुन अरु दोष न आनैं ॥
सुत दारा गृह धन वधन सब अपनो करि नहिं जानैं ॥
जो हित करत राधिका वल्लभ ताहि कहा पहिचानैं ॥
कबहूँ न करि हिय सोच पोच तजि जाके हाथ विकानैं ॥
श्री कृष्णदास हित धरि विवेक चित निसि दिन जसहि वखानैं ॥
इति सिद्धान्त के पद संपूर्ण

विषय—राधा कृष्ण की भक्ति वर्णन।

टिप्पणी—प्रस्तुत 'सिद्धांत के पद' के रचयिता कृष्णदास राधावल्लभी संप्रदाय के अनुयायी थे। खोज में मिले इस नाम के कवियों से ये सर्वथा भिन्न विदित होते हैं। श्री हित हरिवंश जी की 'चौरासी' में इनकी रचित फलस्तुति बराबर दी जाती है। इनके समय का पता न लग सका। रचनाकाल लिपिकाल भी अज्ञात हैं।

संख्या ३२. कृष्णलीलामृत लहरी (संग्रह), रचयिता—कृष्णप्रसाद भट्ट (संग्रहकार), कागज—आधुनिक, पत्र—६६, आकार—१९¾ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३२०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी। प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—अथ ग्रंथ प्रारंभ॥

अथ कृष्ण जन्मोत्सव लीला लं० १॥

श्री गणेशाय नमः॥ १॥ अथ द्विजकुल दीपक गुर्ज्जर भट्ट श्री चिंतामणि तस्यात्मज कृष्ण प्रसाद कृत संग्रह श्री कृष्ण लीलामृत लहरी ग्रंथ प्रारंभः॥

॥ तत्र ग्रंथ प्रयोजन॥ तत्र प्रथम गनपति वंदना॥

॥ दीन दयाल कवि॥

॥ कवित्त॥

विनसे विघन वृंद द्वंद पद वदंतही मान अरविंद जे मलिंद परसत हैं।
ध्यावति मुनिंद गुन गावत कविंद जासु पावत पराग अनुराग सरसत है।
भागैं दुरभाग अंगराग देखें दीनदयाल वदन प्रताप पापपुंज धरसत है।
ज्यौं ज्यौं पिताकी सुत वक्रतुंद झांकी परै त्यौं त्यौं कविता की झुंड वाकी दरसत हैं॥ १॥

× × ×

॥ दोहा॥

आदि गौड द्विज कुल कमल माधववंस अवतंश।
गोस्वामी हरि भगत वर या विधिजगत प्रसंश॥ १०॥
गुरु गोसाँईं गौडिया राधा रमणी ख्यात।
श्री राधा गोविंद जू जासु नाम विख्यात॥ ११॥
इनहीं के सतसंग लहि परम कृपा की पोष।
गुर्ज्जर कृष्ण प्रसाद को भयो कवित्त को सौष॥ १२॥
वहु कवि की कवितान कौं हम जु एकठी कीन।
तब राधा गोविंद जू यह अनुसासन दीन्ह॥ १३॥
संग्रह एक रचहु परम श्री हरि के गुन ग्राम।
सिरी कृष्ण लीला अमृत लहरी राषहु नाम॥ १४॥

सुंदर संग्रह विरचिये कृष्णदास बड़ भाग।
जाके पढ़े सुने बढै हरिपद में अनुराग ॥ १५ ॥
यही प्रयोजन पाइकें आग्याधारी सीस।
सिरी कृष्ण लीला अमृत विरच्यौ विस्वावीस ॥ १६ ॥

॥ इति ग्रंथ प्रयोजनम् ॥

अंत — ॥ सवैया ॥

सूर को प्रेम कहा कहियै तन मैं धन मै मनहूँ न दयो है।
वीर वचा विरच्यौ वल वंडन हीँ इत मैं उतमै चितयो है।
फौज फकोरी कै ह्यंडन मोरि कै राचि अनूपम चेप भयो है।
फोरि अमीरन मंडल की मरि सूरज मंडन फोरि गयो है ॥ २६ ॥

॥ दोहा ॥

जैसे पूरो सूरिबाँ सर साझै सहि ······ —अपूर्ण

विषय—श्री कृष्ण लीला का वर्णन।

इसमें १२ तरंग हैं जिनके नाम नीचे दिये जाते हैं :—

१—प्रथम तरंग—कृष्ण जन्मोत्सव, वंशावली, पालना, छठी, दसूठन लीला, अन्नप्रासन लीला; कर्णबेध, बाललीला, राधा जन्मोत्सव, बंसावली, राधा पालना, वावन जन्मोत्सव।

२—द्वितीय तरंग—सांझी फूल वीनन, दसहरा, सरदलीला, रामलीला वंसीलीला।

३—त्रितीय तरंग—धन तेरस, रूप चतुर्दशी, दिवाली, अन्नकूट, भाईदूज, गोपाष्टमी लीला, प्रबोधनी लीला, चीरहरन लीला।

४—चतुर्थ तरंग—हेमंत सिसिर लीला, दानलीला, मानलीला।

५—पंचम् तरंग—बसंत लीला, होली, फूल डोल, लीलाएँ।

६—षष्टम् तरंग—रामजन्मोत्सव, राम बाल लीला, रामकुमार लीला।

७—सप्तम् तरंग—अक्षै तृतीया, ग्रीषमलीला, नृसिंह जन्मोत्सव, जलकेलि लीलाएँ।

८—अष्टम् तरंग—रथयात्रा लीला, पावसलीला, झूलन लीला, पवित्रालीला, रासीलीला।

९—नवम् तरंग—वियोग श्रृंगार लीला, संयोग श्रृंगार लीला।

१०—दशम् तरंग—सौंदर्यलीला।

११—एकादश तरंग—स्फुट लीला।

१२—द्वादश तरंग—निर्वेद लीला।

इस संग्रह में निम्नलिखित कवियों की रचनाएँ हैं :—

१—दीनदयाल कवि	२—गोविंद	३—नायक
४—नाथ	५—देव	६—दयानिधि
७—रसखानि	८—रहीम	९—निजकवि (गोसांई)
१०—उदार कवि	११—लाल कवि	१२—सूरत कवि
१३—ग्वाल कवि	१४—केशव	१५—नागरीदास
१६—रसिकलाल	१७—निपट	१८—बलदेव
१९—पदमाकर	२०—हनुमान कवि	२१—कवि तोष
२२—गिरधारी कवि	२३—प्रेमसुख	२४—कवि सहाय
२५—नेककवि	२६—मोहन कवि	२७—वृजराज कवि
२८—गिरधर कवि	२९—रघुनाथ	३०—घनस्याम
३१—कासीराम	३२—देवीदास	३३—जुगति
३४—भूपन	३५—परसाद	३६—विनायक
३७—जुवराज	३८—सरदार	३९—नागर
४०—आनंदघन	४१—जैसुख जु	४२—कालिदास
४३—सनेही	४४—आनंद कवि	४५—तुलसीदास (गोस्वामी जी)
४६—सुंदर	४७—भूधर	४८—स्याम
४९—रसिक विहारी		

टिप्पणी—संग्रह खर्राकार है। प्रत्येक पत्र अलग-अलग हैं। यह अपूर्ण है। इसमें समस्त १२ तरंगें हैं; परंतु १, ४, ७, ११ और १२वें तरंगों का पता नहीं लगता। लिपिकार ने कहीं-कहीं पत्र के एक ही ओर लिखा है और कहीं-कहीं दोनों ओर। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं। रचयिता का नाम कृष्णप्रसाद भट्ट है। आरंभ के अंश से प्रकट होता है कि इनके पिता का नाम चिंतामणि था। ये गुजरात के भट्ट ब्राह्मण थे। माध्व गौड़ेश्वर संप्रदायानुयायी गोस्वामी श्री राधा गोविंदजी इनके गुरु थे जिनके सत्संग से इन्हें कवित्तों की ओर रुचि हुई। इन्होंने बहुत से कवियों के कवित्त सवैया इकट्ठे किए और श्री राधा गोविंदजी के आदेशानुसार प्रस्तुत संग्रह तैयार किया। संग्रह का नाम कहीं-कहीं तरंगों की पुष्पिकाओं में 'श्री कृष्णलीला सिंधु' भी लिखा मिलता है। साहित्यिक दृष्टि से ग्रंथ उपयोगी है। यद्यपि रचयिता का समय ज्ञात नहीं है तथापि रचनाशैली से वह बहुत प्राचीन नहीं जान पड़ता।

संख्या ३३. पदावली, रचयिता—केवलराम वृंदावन जीवन, कागज—देशी, पत्र—१८१, आकार—८.३ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) २०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०७२,

पूर्ण (प्रायः), रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री बालकृष्णदास जी, चौखंभा, बनारस ।

आदि—पत्र ११ से उद्धृत—

॥ रामकली ॥ सत संगत गोपाल सरन ।
धर्म सरूप अभै के दाता हरि रंग राता दुष हरन ॥
तिनके मध पदारथ स्वारथ आरत प्रेमी दुतर तरन ॥
बचन विलास वाद नहि भाषै हीयें राषें विसु धरन ॥
ध्रु प्रहलाद प्रतग्या पूरन हरि की भग्त करौ कोई वरन ॥
केवलराम वृंदावन जीवन ब्रजवाला मन कृष्ण चरन ॥

अंत—॥ धनासिरी ॥ बधाई ॥

जसोदा गोपाल पालनै झुलावै ॥
प्रेम कलोलनि सों नंद रानी आँनद लाड़ लड़ावै ॥
किलकत कँवल नैन सुंदर घन हँसि हसि कंठ लगावै ॥
जाको ध्यान धरत ब्रह्मादिक वाकौं गोद खिलावै ॥
वारत प्रान करत न्योछावर हरषि हरषि गुन गावै ॥
केवल राम वृंदावन जीवन हित विन मन में न आवै ॥

केवलराम वृंदावन जीवन के पद

(१) राग रामकली

ऐसो औसर बहुर न होय ।
हरि कथा नित श्रवन करिलै वृथा जनम न खोय ॥
चेतरे मति मंद मूरख मोह नींद न सोय ॥
गाय निसि दिन गोविंद के गुन राखि हिरदें पोय ॥
कृष्ण प्रान सनेहिया सों हितू नाहिन कोय ॥
केवल राम वृंदावन जीवन सरन साँच समोय ॥

(२) राग पंचम

सरस रस रंग भीने नवल रसिक हरि प्रात ही जात इतरात सोहैं ।
प्रेम प्रतिम के अैन हित हुलस जागे रैंन चैंन चित निरषि दुति मैंन मोहैं ॥
मंद मृदु हसनि छवि लसन मुख माधुरी ललित कच कुटिल दृग वंक मोहैं ॥
मदन गोपाल अवलोकि धीरज धरै कहोरी सजनी ऐसी बालको है ।
चक्रत चितंवत चित्र करत चंचल चषन बिसरि गति विवस बावरी होहैं ॥
सोभा को सदन सुष वदन की जोति लषि होत हैं कोट रवि ससि लजोंहैं ॥
लपट उदगार कंचन वसन प्रेम सिंगार तन मन लगों हैं ॥
केवलराम वृंदावन जीवन छकी सव सपी छवि रूप जो हैं ॥

(३) रागषट

गोपाल लाल व्रजराज कन्हैया हरि मेरो मन लीनौ री ॥
सुंदरवर गिरधरन साँवरो नव नागर रंग भीनोरी ॥
मोर मुकुट जगमग छवि जोहत मुष उजियारौ प्यारो री ॥
कुंडल कान्त घुघरवारी अलकैं कमल दल नैन दुलारो री ॥
भावन पुनि वसन चक चौंधी उर वैजन्ती माला री ॥
गोकुल चंद चकोर केर दग भइ हैं बावरी बाला री ॥
विसरत नाहि विसारी मूरत संग सुधारस पीयेरी ॥
केवलराम वृंदावन जीवन रीझ चटपटी हीये री ॥

(४) राग विभाक्ष

नंद को किशोर प्रात देषि री कन्हैया ॥
अति छवि गोपाल लाल धेन को दुहइया ॥
सोभित सुरंग पाग सुंदर मुषारविंद ।
वाँकी भोहैं चंचल दग वंसी को वजैया ॥
केवलराम वृंदावन जीवन झुकि झुकि रहीं स्याम पलकें ॥
कृष्ण - चंद्र दूलह की राधिका दुलाहिया ॥

(५) राग विभास

घनन घनन घन नूपुर वाजत निर्तत लाल ललित ललना संग ॥
ताल मृदंग बांसुरी सुलपगत ताता थेई थेई सुगंध ॥
गावत विभास रास मंडल में रीझ भीज रस गौर स्याम अंग ॥
केवल राम वृंदावन जीवन बंसीवट तट वरषत प्रेम रंग ॥

(६) राग देव गंधार

सषी लषि सुंदर श्री नंदलाल ।
मुकुट की लटकि चटकि कुंडल की टटकी उर वनमाल ॥
चंदन षौर अलक घुंघरारी चंचल नैन विसाल ॥
मृदु मुसकानि माधुरी मोहन नागर रूप रसाल ॥
भृकुटी वंक चपल चितवन चित चेटक मदन गोपाल ॥
केवलराम वृंदावन जीवन जन हित दीन दयाल ॥

(७) राग देवगंधार ॥

सषी हम आजु सुदिन करि जान्यो ।
निरखे नंद किसोर भोर ही नैननि अति सुष मान्यौ ॥
अति कमनीय कमल दल लोचन सुंदरता रस सान्यौ ॥
केवलराम वृंदावन जीवन जग जीवन उर आन्यौ ॥

(८) राग देवगंधार

कहौ कोऊ प्रेम लपेटी बात ॥
कान्हर बाल विनोद भावते सुनि सुनि हियो सिरात ॥
गोकुल चंद रसिक नंद नंदन स्याम सलोने गात ॥
निरषि हरी रंग भीने वागे सबै सषी ललचात ॥
शोभा सिंधु किशोर मनोहर जगमग छवि परभात ॥
केवल राम वृंदावन जीवन गोकुल चंद पियारो ॥

(९) राग देव गंधार

व्रज में पाए प्रान अधार ॥
माँपन माँग देव जिव अपनौ सुनिहे ग्वाल गवाँर ॥
सुंदर स्याम कमल दल लोचन खेलत नंद द्वार ॥
केवल राम वृंदावन जीवन प्रीतम कृष्ण मुरार ॥

(१०) देवगंधार

हेरत नंद दुलारौ हित सों ॥
मन मोहन रंग भीने वागें आन मिलत जित तित सों ॥
सुंदर छवि सोभा कौं सोंभा रूप माधुरी चित सों ॥
बाजत ही कहुँ सुनी वाँसुरी प्रेम वढ़त है उतसों ॥
ये व्रजवाल गोपाल दुहाई षात लला की नित सों ॥
केवल राम विंदावन जीवन वात वाहरी विन सों ॥

(११) देव गंधार

हरि छवि हेरत नैन सिराने ।
चित्र लिखी सी करी साँवरे मोतन तव मुसकाने ॥
गहें कुंज की डार मनोहर रंग भीने अलसाने ॥
सुंदर घन घेरे दामिन सी राधेवर मन माने ॥
हित की कहिय न जात बातरी नंद नंदन ललचाने ॥
केवलराम वृंदावन जीवन विन ही मोल विकाने ॥

(१२) देव गंधार

नागर नैन चकोरन चंद ।
सोभा जगमगात सुंदर वर गिरधारी गोविंद ॥
गोकुल गाँव प्रगट लीला व्रज भावन जसुदानंद ॥
केवल राम वृंदावन जीवन राधे अति आनंद ॥

(१३) देवगंधार

हसत दोउ कुंज महल तें निकसे ॥
प्रेम प्रमोद मोद रस मंडित नवल कमल से विकसे ॥
कलवानी सुपसानी हित चित कुंजत हें ज्यों पिक से ॥
भूषन वसन विचित्र मनोहर लषे कछुक-कौतिक से ॥
कुँवरि किसोर रस रंजित छवि छाजत रहे छकिसे ॥
रंग भरे अवलोकन मोहन मदन मुरछ रहे जकसे ॥
ललितादिक द्रग रूप सुधाभर निरषि निरषि हिय हुलसे ॥
केवल राम वृंदावन जीवन वन विनोद सों विलसे ॥

(१४) विलावल

जसुदा मैया लेत वलैया ।
भोर भयो जागो मन मोहन सुंदर गोहन धेनु दुहइया ॥
नाचत ग्वाल वाल अँगना में आरत गोपी लाल कन्हैया ॥
टेरत सखा साँवरे हसि हसि बोलत हैं संकर्षण भैया ॥
मुष देषें सुष सागर नागर हेरत घर में रांभत गैया ॥
केवल राम वृंदावन जीवन कुंज कुंज रस षेल षिलैया ॥

(१५) विलावल

राधावल्लभ प्रान हमारे ॥
श्री व्रजनाथ अनाथन को धन कवल नैंन नैंनन के तारे ॥
ऊधो कहा कहत हो कहिए मन तें मोहन होत न न्यारे ॥
सुधि आए दुष जात ललन की गोकुल चंद जसोदा वारे ॥
संष चक्र गदा पद्म विराजत नंद किशोर नाम उजियारे ॥
केवलराम वृंदावन जीवन सब काहू के काज सुधारे ॥

(१६) विलावल

हरि विन रह्यो न जाइ ठगीरी नागर नंद सांवरे री माई ॥
मोहन मदन मनोहरि मूरति चित्त चुरायो कुंवर कन्हाई ॥
निरषत शोभा अंग अंग की ये नेना मेरे रहे री लुभाई ॥
मान गुमान कहाँ रह्यो सजनी हँसि चितए हरिहौं मुसकाई ॥
उपजो प्रेम नेम जब कैसो अंतरगति मेरे प्रीति बढ़ाई ॥
रसिक बिहारी नवल कुंज में आपुन रीझ रीझ हौं रिझाई ॥
बाजत वंशी वट जमुना तट कहा करों तबतें सुनि आई ॥
केवलराम वृंदावन जीवन वलिहारी लै लगनि लगाई ॥

विषय—प्रस्तुत 'पदावली' का मुख्य विषय तो राधा-कृष्ण से संबंध रखता है; परंतु साथ ही इसके अतिरिक्त बहुत से पद राम, हनुमान, गंगा, ज्ञान, तितिक्षा तथा उपदेश के भी हैं।

टिप्पणी—प्रस्तुत पदावली के रचयिता केवलराम वृंदावन जीवन कोई पंजाबी भक्त विदित होते हैं। 'पदावली' में व्रजभाषा के अतिरिक्त पंजाबी में भी पद रचना की गई है। इनके इष्टदेव तो राधाकृष्ण ही हैं; परंतु कुछ पद राम, हनुमान, गंगा आदि के विषय में भी हैं, जिससे इनकी धार्मिक सहिष्णुता तथा उदारता का परिचय मिलता है। साहित्यिक दृष्टि से वृंदावन जी की कविता प्रौढ़ तथा सरस है। प्रस्तुत पोथी की लिपि न तो शुद्ध ही है और न सुंदर ही। परंतु इसकी एक विशेषता यह है कि पदों का क्रम विषयानुसार न होकर 'रागों' के अनुसार है।

संख्या ३४. जंबू के रेषते, रचयिता—केशव, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—७½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७१२ वि०, लिपिकाल—सं० १७६५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—॥ श्री पार्श्व प्रणम्य ॥ श्री जिन बीर कौं ध्यायौं ऋषि जंबू गुणगावौं जंबू दीप भरत जानौ पुर राजगृह बषानौ। १ जह लोक वसै सुखीया दीसैन कोइ दुखीया निजधर्म कर्म राजै सब भोग विधि विराजै। २ नर नारि जंह प्रवीना नितुराग रंगभीना रस केलि कालु वीतै नहि वदन पीत भीतै। ३ तह सेवक वर भूपा मनोकाम देव रूपा रिपु राशि वसि जु कीनी पद सेवै भयलीनी। ४ तह सेवि ऋषभनामा सुखसागर को धामा धारणी तासु नारी अति सुंदरि सुखकारी। ५

दोहा

तसु ऋषि चवि सुरग लोकते जंबू सुपन प्रमान
जंबू कुमरु सु अवतर्यो पूरव पुण्य प्रधान। ६
सतरा सै वरहोतरै गोइंद वाल मंझारि।
पोह वदी दसमी दिने कीनी कथा विचारि॥

अंत—गहवास वर्ष सोला प्रभु वस्यो सुखकलोला दस दोष वर्ष रंगे पध्यो अंग साध संगे। ९१
धरिभाव तणु सुत पीया सब कर्म भारषपीया भयो केवल उजियारा प्रग वेद वर्ष सारा। ९२
सब लोक तिथि वपानै गति आगति जिय जानै निज प्रभू वै पदु दीनो पद मुक्ति आप लीनो। ९३
है एसो जु भिपारी सो वरै सिद्धि नारी मुनि जंबू जसु गावै मन पूछत फलु पावै। ९४

गणि हंस राज ज्ञाता भयो सकल जग विख्याता तसु केशव शिष भाषै गुरु चरण शरण राषै । ९५

दोहा

सतरा सै वरहोत्तरे गोइंदवाल मंझारि पोह वदी दसमी दिने कीनी कथा विचारि । ९६ जंबू के रेषते संपूर्णं संवत् १७६५ अश्वन मासे कृष्ण पक्षे तिथौ दशिमी दिनं लिषतं जगता ऋषि पठनार्थ वीरा ऋषि शुभं ।

विषय—जंबू कुमार को बाल्यावस्था में ही वैराग्य उत्पन्न हुआ। उनकी माता ने ब्याह करने के लिये बाध्य किया तदनंतर माता की आज्ञानुसार वे कुछ दिन तक गृहस्थाश्रम में रहकर पुनः विरक्त हो गए। संक्षेपतः यही कथा इसमें कही गई है।

रचनाकाल—सतरा सै वरहोतरै गोइंदवाल मंझारि। पोह वदी दसमी दिने कीनी कथा विचारि ॥

संख्या ३५. रासा श्री केसवदास जी का, रचयिता—केशवदास, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१३½×९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६७ वि०, प्राप्तिस्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, दाता—महंत श्री राजाराम जी, स्थान और डाकघर—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया।

आदि—रासा श्री केशवदास जी का

सब्द रामरसा रासा

निर्गुन नाम देषै कोउ आतम ग्यानी।
त्रीकुटी संगम मनीदीसै झीलीमीली जोती नीसानी ॥
जाके वीनी पोजत फीरै गन गंधर्व मुनी ग्यानी ।।
सोई अविगति पाइया मेटि आवा जानी ॥
रवी ससि दोउ सम भए द्वादस उलटि सयानी।
नीझर झरला दसो दीसा वरषै अमृत बानी ॥
कोउ सीधा आनंद साराभरीआ चारीउ उपानी।
गरजत गगन अनंत गती अनहद नाना वानी ॥ ४

रामराग परज

पीया थारे रूप लोभानी हो।
प्रेमठ मोरी मन हरो बिनु दाम बिकानी हो।
दीपक ग्यान पतंग सो मिली जोती समानी हो ॥ २ ॥
सेंधु भरा जल पुरना सुप सीप समानी हो ।
स्वाती बुंद से हेतु है उरध लगानी हो ॥ ३ ॥

व्यापक पूरन दसव दीसा परगट पहिचानी हो।
'केसो' इयारी गुरु मीलै आतम रहिमानी हो ॥ ४ ॥
पीया थारे रूप लोभानी हो ॥

विषय—निर्गुन भक्ति तथा आध्यात्मिक ज्ञान का वर्णन किया गया है।

संख्या ३६. भागवत, रचयिता—केसवदास, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—९३/४ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—११२, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—... ... ...

इभेंद्र कुंभस्थल खंडनाय। वृदेश वृंदावन भंडनाय। हंसाय कंसा सुरमर्दनाय नमोस्तु० ॥ ८ ॥

× × ×

गुर गणपति ने सारदा ब्रह्मा वेद व्यास।
नारद शुक शौनक नमूं कहे एन 'केशवदास' ॥ १० ॥
पछे परीक्षरायने कर जोडी करू जुहार।
जे मु सुक संवाद थ्यौ अखिल भुवन उपकार ॥ ११ ॥
व्यास पुत्रवली वंदीए जे मुनिवर गुरू महा जांण।
वेदसार जेणे वधू पावन एह पुरांण ॥ १२ ॥
संसारी पड़ता सहु अवलोकी अंध कूप।
दया करी दीवो करो श्री 'भागवत स्वरूप' ॥ १३ ॥

अंत—बहु आख्यान बार स्कंध। हरि अवतरण सकस समंध ॥
अनेक राजा अविनी तणा। हरि गुण मिनत जे गुण घणा ॥ ४१ ॥
श्रृष्टि तरणी उत्पति ने नाश। पालण माया तणो प्रकाश ॥
जीव मुक्त जे तत्व चोवीस। प्रकृति पुरुष पुरुषोत्तम ईस ॥ ४२ ॥
अद्भुत जे अवतार चरित्र। प्रेमे कहीया परम पवित्र ॥
कर्म ज्ञाननो कह्यो विचार। भक्ति योग संयोग तिसार ॥ ४३ ॥

× × ×

कर जोडी स्तुति कीधी घणी। स्वयं स्वयं भूपाणी सुणी ॥
अवधारित में आगें एह। असुर भार अविनी ने जेह ॥ ९० ॥
बलोदेव स्वस्थान किंसहु। कथन एकठुं तम्हने कहु ॥
गोकुल माहे गोपी गोवाल। नरनारी अथ नान्ह बाल ॥ ९१ ॥
परिषद सहित प्रगट ज्यो तम्हो। आदी से अबूंछं अ—

—अपूर्ण

विषय—भागवत की कथा का वर्णन।

टिप्पणी—ग्रंथ का प्रथम पत्र और सातवें पत्र के पश्चात् का अंश त्रुटित है। रचनाकाल और लिपिकाल भी अज्ञात हैं। ग्रंथ की भाषा पश्चिमी राजस्थानी है।

संख्या ३७. पद, रचयिता—कोविद, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—१०½ × ६¾ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—५१; अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि-नागरी, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—श्री रामो जयति ॥

सिंधु भैरवी

लाल की छबि लाखि सखि भूली ॥
देह गेह विसरो पसरो भले नेह मोटति जिमि शूली ॥
कंपित गात बात नहि निसरत वदन स्वेद कनिका भलि खूली।
कोविद चाहिय वचन अमी अंग संग सजीवन मूलि मुदमुली० २। १।
लाल के लोचन दुख मोचन।
वदत वेद यह भेद अद्भुते मोहि दुखदेत मरो यह शोचन ॥ १ ॥
बावरी कहि पावरी कीनी मोहि सगरी वगरी के जन पोचन।
कोविद राजकुमार विचारहि उचित करहिं लावहिं शिर रोचन। २। २।

अंत—हमारी दग लाल की दग लगी :
रयन अयन नहि त्रयन लगे विन लषिये अचर जन पगी।
कोविद नरनारी उनकर जोइ सोइ ममा जग सरासगी। २। १३ ॥
अली मैं लाल की रस रसी।
मधुर मनोहर मूरति उनकर रयन अयन मन वसी ॥ १०
लोक शोक निज मोक रोक विन मुद विनोद करवसी।
कोविद कवि छवि छकि जकि तकि वकि प्रिय प्रिय जगमुषमसी ॥२।२।१४॥
नयणोरी अरुण क्यो किया वे शोणा।
अणरितु फाग मचाइ चातुर मति ताणी जाणी होणा ॥ १ ॥
रूपकि छपावत छवि कवि कोविद हो पेषी षष कोणा ॥ २ । १ । १५ ॥

—अपूर्ण

विषय—राम और सीता के शृंगार तथा क्रीड़ा विहार विषयक पद।

टिप्पणी—ग्रंथ अपूर्ण है। केवल ३ पत्रे प्राप्त हुए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। रचयिता का नाम कोविद है। परिचय इनका अज्ञात है, पर नाम प्रत्येक पद में आया है। एक कोविद का उल्लेख खोज विवरण (६-६२, २६-२४) में भी है,

पर यह नहीं प्रकट होता कि वे प्रस्तुत रचयिता ही हैं। वे ओड़छा नरेश महाराज उदोत सिंह और महाराज पृथ्वीसिंह के आश्रित थे तथा संवत् १७७७ के लगभग वर्तमान थे।

संख्या ३८. कंठमाल या विशुनपद कृपाराम जी, रचयिता—कृपाराम, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—७¾ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा बनारस, दाता—श्री सरल चौबे, स्थान और डाकघर—सहतवार, जिला—बलिया।

आदि—वीशनपद क्रीपाराम जी ॥

वंदो जो हरी भगती पीआरे।
ऐह ब्रह्मांड मध्य के जे शभ जहाँ तहाँ मुनीन उचारे ॥ १ ॥
भु अरु भुवलोक शर यह जन तपलोक गनाएव।
शीव अरु वीसन लोक के उपर श्री गौव लोक वताएव ॥ २ ॥ वंदो ॥
तल अरु अतल शुतल के नीचे वीतल तलातल जानेव।
कहो रसातल सेजनाग जहा शोइ पताल वषानेव ॥ ३ ॥ वंदो ॥
जंपुदीप पलछ शालमल कुर अरू क्रोच गनाएव।
पुश कहै कुस करता पीछे लोका लोक शोहाएव ॥ ४ ॥ वंदो ॥
इलावरत रामकं हीरन्य मै पुरशी पुरीशी पुनीत।
केतमाल भा दुष भरप हरी भारत पंड पुनीत ॥ ५ ॥ वंदो ॥
ब्रह्म वीस्न शीव लींग पदुम अशकंध पुरान वीचीत्रं।
वावन मीन वराह अगीनी अती कुरुम प्रम पवीत्रं ॥ ६ ॥ वंदो ॥
नारद गरुड़ ब्रह्म वैवरत कशयते है एह नीको।
मारकंड ब्रहमंड भागवत अशटादश शीर टीको ॥ ७ ॥ वंदो ॥
नवलछ जल में जीव वषानो दश लछ पंछीगात।
दश अरु एक क्रीट क्रीम कहीए तीस पशुन की जात ॥ ८ ॥ वंदो ॥

× × ×

एतना में जो भगत भए है अब होइ हैं अरु आगे।
'रामक्रीपा' मन मधुकर होए कै चरन कमल रश पागे ॥ १० ॥ वंदो ॥

दौशर कंठमाल

वीनती शभ भगतन्ह शो कीजै।
अवध चंद्र नीप राव लाडीलो ताशु भगती मोही दीजै ॥ १ ॥
शंकर कपील देव नारद वीधी शनकादीक मनुभुप।
भीपम वली प्रहलाद जनक शुक द्वादश अम शरूप ॥ २ ॥ वीनती ॥
जामवंत हनीवंत वभीषण शवरी षग सुग्रीव।
श्री उधो अंकुर सुदामा वीदुर पंडु शुप शीव ॥ ३ ॥ वीनती ॥

अंमुरीषी चीत्रकेतु परीचीत चंद्रहाश गजरूप ।
कोउपंग कुंता पंचाली रुपमा गीत ध्रुव भुप ॥ ४ ॥ वीनती ॥
वीश शेनी उरग्गारी व्याश मुनी शुरथ शुधन्वा दोउ ।
राम उपरोहित अव पुंडरीपेश्वर नील तमुर धुज शाए ॥ ५ ॥ वीनती ॥
शंप्रदा एहचारी शीरोमनी रामानुज ही वषानो ।
माधो चारज वीशुन शामी नीम्बादीत जेहि जानो ॥ ६ ॥ वीनती ॥
नीत्यानंद क्रीशुन चैतन्य प्रभु जगत वीदीत अवतार ।
चीत शुषमाधो लोकनाथ है द्रशभा प्रम उदार ॥ ७ ॥ वीनती ॥
रामानंद कवीर अनंता धाता अवरो एदाश ।
लालाचारज पीपा शैना पवहारी हरीआश ॥ ८ ॥ वीनती ॥
आचारज शंकर अरु देवा वील मंगल जै देव ।
कील अगर अरु वीशुन पुरी ग्यान देव हरी शेव ॥ ९ ॥ वीनती ॥
नामदेव अव वलभ्हा चारज जै मंगल करमावाइ ।
ऐशे अगाधी अरु भुअन तीलोचन वारमुषी मनभाई ॥ १० ॥ वीनती ॥
शुकानंद शुरशुरानंद मुनी माधोदास प्रवीन ।
वीठलेश रघुनाथ गोगाइ शुरदाश चीत दीन्ह ॥ ११ ॥ वीनती ॥
प्रमानंद अवजाशुशामी क्रीशुनदास हरीराम ।
गोपाल अव भत्र रूप शनातन जीवनरायन नाम ॥ १२ ॥ वीनती ॥
रघुवंश गोशाइ के हरीदास । रामदाश नरशीलया शमी मीरा तुलसीदास ।
रशीक मुरारी उदार गजाधर गोवीद केवल राम ॥ १३ ॥ वीनती ॥
शाधुन के महीमा प्रभु नीजमुष दुरवाशा प्रतीभाषु ।
नाभा मत ले राम कृपा एह कंठमाल रूचीराषु ॥
वीनती सब भगतन्ह शै कीजै ॥ १४ ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—सृष्टि वर्णन के पश्चात् हरि भक्तों की महिमा का वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। जैसा कि रचना के अंत में दिया है, यह नाभादास के भक्तमाल के अनुकरण पर रची गई है :—

शाधुन के महिमा प्रभु नीज मुष दुरवाशा प्रती भाषु ।
नाभा मत लै 'रामक्रीपा' एह कंठमाल रुची राषु ॥

इस रचना के साथ एक ही हस्तलेख में कुछ अन्य रचनाएँ भी हैं। इसी संबंध में देखिए 'स्तोत्र' का विवरण पत्र ।

संख्या ३९, खड़िया खेमा का परिहा, रचयिता—खड़िया खेमा, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—$9\frac{1}{2} \times 4$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर ।

आदि—(परिहा लिख्यते)

सुंदर सोल श्रृंगार सन, उभी मिंदर बार ।
नयन भलका साटरा, बाहै बारोवार ॥ १ ॥
बाहँ बारोबार किसु वखाणिये; जोवन छूटा वाण विधूटा जाणिये ॥
लंगर भंगर लाई अपूण नाखिया, कर चांह दे गयंद पपाला चखिया ॥ २ ॥

अंत—काठै कालिज कोद, कटाराकत्तियां,
अंभतणी अणुहार कि आंख्यां रमीयां ॥
कुइंण होली जेम भकोली गोरडी,
गावै खडियो खेम सनेही गोरडी ॥ ९६ ॥

॥ परिहा ॥ संपूर्ण ॥

विषय—स्त्री श्रृंगार वर्णन ।

संख्या ४०. अभैसिंघ का कवित्त, रचयिता—खड़िया वख्ता, कागज—देशी, पत्र—३१, आकार—१०$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर ।

आदि— श्री नाथायनमः

आदि सगति ईसरी, मंगलकारी चिन्तामणि ।
कामधेनु पौरसौ तुंही पारस शिवभामणि ।
धण कण साहणसाह पूत परिवार बढ़ाली ।
देवी देस विदेस राजद्वारे रखवाली,
आंणद रूप आंणद में सबही काम सुधारणी
रीझावूं गुणेश राजा अभौ तो प्रताप जुगताणी ॥ १ ॥
जुग जणणी जोगणी राम उघा पर बेची
भाज दैत चालक्यै नाम जिण चालक नेची ॥
भालै थल उजलौ जठै हरीया गहरा तर ।
चालक जो गढ़त है रचे देवी अधोकर ॥
तिहुँ लोक जात आवै तठै बाजा छतीस बजावही ।
रीझवूं राज राजेसवर पावुं खग पावही ॥ २ ॥

अंत—आउ सकल रीझिया श्रोण कीधा तर प्याला ।
रुद्र ज्यारे रीझिया उवर पहरी रुंडमाला ॥
रिख नारद रीझिया जिकां रहस रस थाया ।
सुर अच्छर रीझिया माहा सूर वर पाया ॥
सामलाग्री धरी धारू को अमल चराचर उपरा ।
जीव जे अभा दूजा जसां माहाबाह अजमालरा ॥ १६५ ॥

जिते सेरू धरतरी भालं दुनी आँख दरसे।
जितैं सात मैहराण इन्ह घट हरें बटसै ॥
जिते पवन धर हेरे इतें अटकुली डूंगरी चौरासी सिद्ध इतै
जिते नवनाथ अखतरां परमेस भगत जिवटै प्रगट

जोग माया संकट जितै ॥

ऊच रूंड वीतित रै अभा तुज राज रहज्यो तितै ।। १६६ ।।

इति श्री महाराजा अभैसिंह जी रा कवित्त संपूर्णम् ॥ श्री रस्तु शुभ मस्तु ॥
विषय—महाराज अभैसिंह का यश वर्णन। डिंगल भाषा की रचना है।

संख्या ४१. खींवड़ा रा दूहा, रचयिता—खीवड़ा, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—६×९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८४३ वि०—फागण वदि २२, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर।

आदि—अथ खविंडा रा दूहा लिख्यते।
जाती श्री जगन्नाथ, दासत्या करबा देवरे।
अधविच पाड़ी बाढ, खोली मिलियो खींवड़ो ॥ १ ॥
आयो आधीरात, आभरण केरे असतातिखो।
मोवस बावन वात, ते खेल बियो खीवड़ो ॥ २ ॥

अंत—

सोरठा

बड़ा वावड़ी तणाह, निगुण नीलो थयो।
खविड़ा खलहल नाह, सार सयो सूको नहीं ॥ १४ ॥
पेणी तरण परवाह जऊ हैट अमी झटे।
जाणत हे जहा यह, लोही आवत लोयणे ॥ १५ ॥

इति श्री खंविड़ा रा दुहा संपूरण—लिखंत भा वाघमल गढ़ जालोर मध्ये संवत् १८४३ रा फागण वदि १२।

विषय—नीति के दोहे।

संख्या ४२. चिंतामणि, रचयिता—खेमजी, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—$१०\frac{१}{२}×५\frac{३}{४}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३५, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस।

आदि— ॥ अथ पेमजी की चितावणी ॥

॥ दोहा ॥

काहू पूरब पूनि करि तैं पाई नर देह।

कै महरवांन होइ मोजदी जनम सुफल करि लेह ॥ १ ॥
दस महीनां ग्रभ वास मैं तूं लीज रह्यौ मुष मूदि ।
जहाँ तात मात की गम नहीं वहां राषन हाराकूंन ॥ २ ॥
नष सष सु जब नांए करि प्रभु आराधौं मुक्ती ठौर ।
निप जी मैं साक्षीघणां धणी भए तब वौर ॥ ३ ॥

॥ दोहा ॥

अंत—अब हाथ परत गयौ प्राणीयां तन मै बीती एह ।
घरी आय ग्रीस्म सब जालि बालि करि पेह ॥ ४६ ॥
इत काया मैं दुष पड़े वहां संकट परे पीरान ।
'पेम' कहै सुणैं ज्यौ सब भजिल्यौ केवलराम ॥ ४७ ॥
इति पेम जी की चितावसंपूर्ण ॥ ग्रंथ ॥ ५ ॥

विषय—ज्ञानोपदेश वर्णंन ।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना एक बड़े आकार के हस्तलेख में है । इसके लिये देखिए सेवादास (निरगुन मार्गी) की बानी का विवरण पत्र ।

संख्या ४३. लीलासागर, रचयिता—गंगादत्त, कागज—देशी, पत्र—५३२, आकार—१२×१०२/१ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—७७८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८८६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ।

आदि—ओं ॥ स्वस्ती श्री गणेशाय नमः ॥ श्री कृष्णाय नमः । कवित्त
सेवन करत मुनि देवन के काज सरे पावत न भेव बीच आवत न मन के
सुरसरि आय निधि हरत सकल पाप प्रवल प्रताप ताप मेटत सबन के
धारन धरनि जगें पावन सुधारन हे धरा में उधारन धरत अधमन के
साधा के वरन मन साधा के सुमिर जग वाधा के हरन पग
राधा के रमन के । १

अथ नगर वर्णंन दोहा
व्यासदेव के नगर जिह हैं विलासपुरि ख्यात ।
वसन सत रुद्रातीर में लसत दीपहूँसात । २

कवित्त

चरचा रहति जहाँ वेदन के भेदन की अरचा सदैव देव जगरमगर हैं
सरम के सिंधु भले करम अनेक करें धरम धरन हार बगर वगर हैं
गुननि गंभीर धीर वीरन की भीर वसें गंगादत्त सुकवि बखानत अगर हैं
सकल विलास को निवास त्रास दुष्टन को नगर बिलासपुर सोभित नगर हैं ।३।

अंत—जहं पुरान सुनि ये सुषदाई । सुनि के सिगरे पाप निसाई
विसन लोक सुनि के नर पावे । कृष्ण चरित को हिय में गावे ॥१३॥

इति श्री मन्महाराज कुमारी राणी हिरदे श्री सरमौरी रचिते गंगादत्त विरंचिते लीला सागरे पुराण महातम बर्ननं नाम पंच पंचास मोस्तरंग ५५ ॥ इति श्री लीलासागर पुराण संपूर्ण शुभ मंगलं लेपकानां च पाठकानां च मंगलं । मंगलं सर्वलोकानां भूमि भूपाल मंगलं । १ श्री संवत् १८८९ जेष्ठ प्रविष्टे । २७ हस्तनिक्षत्र ॥ श्री राणी सर मौरी पठनार्थं ॥

दोहा

जेष्ठ मास को सुकल पछ तिथि सुद शर्मा जान
ता दिन शुभ कल्यान हे वार गुरु सुभ मान । १
व्यास रिषन की पुरी में नदी सतलुजा तीर,
लिखत भया हरदेउ दिज महामंदमति धीर चंपावति के तीरम ।

विषय—सारा ग्रंथ कृष्ण और नारद के संवाद के रूप में है। नारद ने प्रश्न किया है और कृष्ण ने उसका उत्तर दिया है । प्रायः सभी कथाएँ महाभारत के अनुसार हैं। पूरा ग्रंथ दो भागों में है । पूर्वार्ध में ५३ तरंग (अध्याय) और उत्तरार्ध में ५५ तरंग हैं:—

पूर्वार्द्ध संपूरणम्

संख्या ४४. कर्मविपाक, रचयिता—गंगाराम (कायस्थ), स्थान—पटना गजेन्द्र निवासी, कागज—देशी, पत्र—३३, आकार—$९\frac{3}{4} \times ६\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—९५३, अपूर्ण, रूप - प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १७३९ वि०=सन् १६८२ ई०, लिपिकाल—संवत् १८७१ वि० = सन् १८१४ ई०, प्राप्तिस्थान —आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ।

आदि—रामजी सहाय, दुर्गाजी सहाय, श्री हनुमान जी सहाय श्री पोथी कर्म विपाका ॥

विघुन विनासन श्री गनेसा । वर्मा रुद्र वीस्यौ सेसा ॥
सिधि बुध दात अहो भवानी । वंदौ मातु पिता गुरु ग्यानी ॥

तैंतिस कोटि देवन्ह सिर नावों । कविजन पंडित सो मत पावों ॥
इस्ट मित्र बिनवो सब केही । वानी सुरस मेरावहु मोही ॥

॥ दोहा ॥

कर्म विपाक कथा जें भ्रिगराषी (? भृगु ऋषि) कहि समुझाइ ।
संसक्रित केहु बूझि न परई । तेहि निति भाष छंद उचरई ॥

॥ चौपाई ॥

संवत सतरह सै वोनताला । जेठ बदि त्रियोदसि बुध वाला ॥
गंगाराम कुल कायथ क्रना । संसक्रित सों भाषा वर्ना ॥
रामानंद सुत पटना वासी । भुऊपति अवर गजेंद्र नेवासी ॥
ससक्रित केहू बूझि न परई । तेहि निति भाष छंद उचरई ॥

॥ दोहा ॥

जैसन कर्म करै नर सो तैसन फलपाव ।
कर्म विपाक ग्रंथमत गंगाराम गुनगाव ॥

अंत— ॥ चौपाई ॥

रोस करहु जनि हम कह देषी ।
मोरे करम अधरम बिसेषी ॥
दआ करहु तुम उतरहु परा ।
मोहि अस पापी नहिं संसारा ॥
अवर अलंभ नहि कछु मोही ।
वुडि मरौं तौ लजा तोही ॥
केहि विधि स्वामी उतरव पारा ।
बहुरि न आवों येहि संसारा ॥

॥ दोहा ॥

अथवा जन्म देहु जौं मिलै भगित भगवान ।
गंगाराम गुन गावै मन वच कर्म धरि ध्यान ।
भ्रिगमुनि भरथ सों भाषा । करम वे पाक [?] संपूरन राषा ॥

इति श्री करम वेपाक भाषा क्रीत गंगाराम कै संपुरन भवेत ॥
समत अठारह[१८] सै अधि येकहतरि[७१] जिय जानि ।
मार्ग क्रिस्न तिथि त्रैयोदसी लिपेय गरंथ मन मानि ॥
कासी कै नैरितु दिसा जोजन अरध परमान ।
जकरावाद वरग्राम है लोहता तालुक जान ॥ १ ॥

विषय—संस्कृत के कर्मविपाक ग्रंथ का हिंदी में पद्यानुवाद । इसमें कर्मों के फलों का वर्णन किया गया है ।

रचनाकाल

संवत् सतरह सै बोनताला । जेठ वदि त्रियोदसि बुधवाला ॥

टिप्पणी—ग्रंथ के बीच के ७ पत्रे—संख्या १९, २०, २१, २२, २३, २५ और २७ लुप्त हैं।

संख्या ४५ क. फुटकर कवित्त, रचयिता—गंगाराम तिवारी (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—३ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत देवीदत्त शुक्ल, 'सरस्वती' संपादक, प्रयाग ।

आदि—६वें पत्र से उद्धृतः—

······न अदिन के ॥ जह सुर सकल सुरेश इंद्र चंद्र ऐसे वंदन करन हार पल छिन छिन के ॥ ४ ॥

हाथ में त्रिशूल शत्रु पुंज निर्मूल कर
सोहै शुभ चक्रवर कष्ट के हरन पैं ।
कुमति मिटावैं पुनि सुमति बढ़ावैं मन गंगाराम,
ल्यावैं ऐसै संपति करन पैं ॥
पुनि जह भक्तन पर्यौ है कष्ट जाय तह तुरत हर्यौ है ।
एक शब्द हुँकरन पैं ।
सोक सिंधु हारन त्रिलोक के उबारन,
औ तारन स्वकीय जन भैरव चरन पैं ॥ ६ ॥
वर अभिधान जग विदित प्रकासमान,
विक्रम समान जस जाको भासमान है ।
'गंगाराम' जाकी पुनि चंद्रमा की चाँदनी,
मानो महिं मंडन में कीरति वितान है ॥
सूरज समान परिपूरन प्रताप वर,
विमल बुलंद जाको विदित कहा न है ॥
संपति समाज द्विजराज महाराज मानौ नाम,
पुरुषोत्तम निदान भगवान् है ॥ ७ ॥
वरही वर पछ कृत रतन जटित चारु मौलि धरे मुकुट मनहर वृ······
१२वें पत्र से ऊद्धृतः—

······ककुभ बीच सीचवे को प्राण जग कुमुद समान पैं ॥
कैंधों साधु संत मन रंजवे की मूरति है कैंधों भय भंजवे को
फूरति जहान पै ॥

कहत कवि गंगाराम कीरति विशाल ऐसी,
सोही महाराजा डालचंद अभिधान पैं ॥
कैधों कलि कलमष कदंब ही के काटिबे की,
पुन्य की पताका भासमान असमान पै ॥ १३ ॥

शुभ गुण मूल पुनि कीरति सुतूल साषा,
कोमल बिमल वै न पत्र सम लेषियत् ॥
अमल अनंत ज्ञान सुमन समान ज्ञान,
तापै सुभ कर्म धर्म फलहि विशेषियत् ॥
गंगाराम कवि कलि कल्पतरू ऐसो नर सोई,
महाराज जू पैं सौंतुष निरेपियत् ॥
नागर उजागर कृपाल सिंधु सागर सुबेनी,
राम पठित सु कल्पतरु देषियत् ॥ १४ ॥

कैधों सीस सिंधु अरु उदधि उछाह रूप तापै भूपवृंद

सब जाके मुहताज है ॥

फैज बक्स सक्स है अनेक पर तामै हुक्म हिंमत सरूप एक······महाराज। गंगाराम कवि कहैं कीरति कहां लौं कहौं करुना कदंब कैं······

प्राप्तांश पूर्ण रूपेण उद्धृत

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ के केवल दो पत्रे प्राप्त हुए हैं। इनमें डालचंद महाराज की प्रशंसा में लिखे हुए कवित्त हैं।

टिप्पणी—ग्रंथ का अधिकांश नष्ट हो गया है। रचयिता का वृत्त अज्ञात है। इनके आश्रयदाता डालचंद संभवतः मुरशिदाबाद निवासी और राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिंद' के प्रपितामह थे।

संख्या ४५ ख, बारहमासा, रचयिता—गंगाराम तिवारी (स्थान—प्रयाग), कागज-देशी, पत्र—२, आकार—४'४×६'२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५, अपूर्ण रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत पं० देवीदत्त जी शुक्ल 'सरस्वती' संपादक, प्रयाग।

आदि—पत्र २ से उद्धृत :—

कामदेव जग जीत्यो सुनत तुरंत।
चंद चूर ह्वै जुगुनू फिरत थकंत ॥ २० ॥
ढूढत हैं प्रियतम पद कुंज अनूप ॥
तेजवंत छिपत न हैं जुगुनू रूप ॥ २१ ॥

क्यों सकाति कातिक करि रिपु लै मोल ॥
गाढ़हि गाउ उजाडहिं जाडहिं कोल ॥ २२ ॥
सुनाते काति कातिक मै दान विचार ॥
करत बहार दिये हैं जलत कतार ॥ २३ ॥
है विकाति कातिक मैं चीज अनेक ॥
दिया फेर मत लीजो यही विवेक ॥ २४ ॥
झक झकाति कातिक में वन सों रैन ॥
दीपक तारे सोहैं देखौ चैन ॥ २५ ॥
धक धकाति कातिक में नारी देह ॥
जीतै चहति जुवारी पीतम नेह ॥ २६ ॥

अंत—सब सुख साथ दिवारी धर निज नाथ।
संग रंग रच्यौ जुवारी दोनों हाथ ॥ २७ ॥
आपुस में पिम प्यारी परम उदार ॥
खेलैं जुवा जुवारी जीतन हार ॥ २८ ॥
होत दिवारी कारी सारी रात ॥
मंजुल मति उजियारी सरस सुहात ॥ २९ ॥

× × ×

गंगाराम तिवारी कवि कुल चंद ॥
विरच्यौ बारहमासा बरवा छंद ॥

विषय—प्रस्तुत 'बारहमासा' का विषय शृंगार रस है। प्राप्तांश में भादों से लेकर फागुन मास तक की दशा का वर्णन है। कुल २७ बरवै प्राप्त हुए हैं।

टिप्पणी—पूर्व ग्रंथ 'फुटकर कवित्त' और प्रस्तुत 'बारहमासा' के रचयिता गंगाराम एक ही व्यक्ति जान पड़ते हैं। प्रस्तुत रचना अपूर्ण है। केवल संख्या २, ३ के दो पत्रे प्राप्त हुए हैं। कवि का परिचय केवल इतना ही मिला है कि ये तिवारी ब्राह्मण थे और अच्छे कवि (कविचंद) थे। ग्रंथ स्वामी से विदित हुआ है कि ये प्रयाग के रहनेवाले थे इनको हुए अधिक समय नहीं हुआ तथा अब भी प्रयाग के बड़े बूढ़े इनके संबंध में जानते हैं।

संख्या ४६. नेमनाथ रीधमाल, रचयिता—गजानंद, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—८·७ × २·५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) - ३८, परिमाण—(अनुष्टुप्)—११, पूर्ण, रूप—प्राचीन (जीर्ण), पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महावीरसिंह गहलौत, पुस्तक प्रकाश जोधपुर।

आदि—पीय नेम पधारौ हो।
कै साहिब रंग धरे ॥ रा······ल (? राजमती) इम वीनवैहो।
कै आवौ राज घरे ॥ पीय विण न सुहावै हो।

कै पल एक बरस समो ॥ दिन हो हिलौ जाएँ हो ॥
कै कलियुग कोहि गयो ॥ १ ॥
निस नींद न आवे हो, कै नयना नेह धर्यौ ।
सुख सेज न लावै हो, जाणौ द्रुव पर्यौ ॥
अनवान न लाने हो, पीय बिण जहर जिसौ ।
गहियो तन दहियो हो, कै सहणी न जाय तिसौ ॥ २ ॥
अंग फूलनी माला हो, कै काला आगि जिसी ।
मोती मणि माला हो, कै काला नाग तिसी ॥
पीय विण सिर सैं थोहो, कै लागे करवति सौ ।
पीय विण पग नेह डहो, कै वेडी वधनं सौ ॥ ३ ॥

अंत—श्री नेम जिणराहौ, राहुल (? राजुल) राज सती ।
पाम्या शिव मंदिर हो, सुंदर रंग रती ॥
गजानंद इम वीनवै हो, सुण ज्यो सहु समणा ।
श्री गुण जिने गावो हो, पावे सुख घणा ॥ ११ ॥

इति नेमनाथ धमाल संपूर्णम् ॥

विषय—जिन भगवान् नेमनाथ के विरक्त हो जाने पर उनकी पत्नी राजमती का विरह वर्णन ।

टिप्पणी—ग्रंथांत में इसी भाव का मीरा का भी एक पद दिया है ।

संख्या ४७ क, कालिका अष्टक, रचयिता—गणेशकवि, कागज-देशी, पत्र—१, आकार—१०½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत् महेश्वरी प्रसाद वर्मा, ग्राम—लखनौर, डा०—रामपुर, जि०—आजमगढ़ ।

आदि—

श्री गणेशाय नमः

तेरोई सुजसभयो काम तरु जाचिन को तेरोई सुजस लोक लोकन
मैं छायो है ।
तेरोई सुजस अहि जू हहरमाल कीन्हो तेरोई,
सुजस एक दन्त दंत पायो है ।
तेरोई सुजस भो कलम विरंचि जू को,
तेरोई सुजस वेदन में आयो है ।
गायो सूर बृंदन "गनेश" महि मंडल मै तेरोई,
सुजस महाकाली ठहरायो है ॥ १ ॥

कौंल पद चंपकली, अँगुली कदलि जाल चक्र से,
नितंब कटि केहरि सूठारयौ है।
रोम लता नाभी सर पीवन सुठार भुज,
शंख कंठ पीठी चारु ठोठी दुति गारयौ है।
विवांधर दन्त जीमि अमल कपोल नाशा,
नैन शुभ भोहै वंक श्रोन कूप बारयौ है।
ललित ललाट लाल गुहै सूर इंद्रवधु वार,
सटकारे महाकालिका निहारयौ है ॥ २ ॥

तामरश विद्रुम बंधूक सेज पासे पासे,
नूतन रसाल पत्रहू ते आतवेश है।
रजोगुण मूल से अतूलराग तूल से है।
विंव अनुराग छवि शोहत शुभेश है।
भनत गनेश जया किंशुक कुसुम ढारयौ भीमरश,
मानिक सू केसरि निवेश है।
नासिका विविध दीप मालिका उतारै,
महा कालिका चरन भक्ति पालिका हमेशहै ॥ ३ ॥

कंचन कलित नग जटित विरंचित्रा,
अमित गनेश मति वरनै फनेश की।
रुचिर सिंहासन वों आसन अनंत,
काली गावत महंत संत लेत सुधि देश की।
"भनत गनेश" सूर उर मै चपत ठाढे गाढे गेरूनु,
जलपि प्रभुता सुभेश।
इंदीवर नैनी महा शुपद की दैनी,
आजु ढारती चमर वधु अमर नरेश की ॥ ४ ॥

सूरगतिहार शे नक्षत्र लघु चोपदार छमासे,
सूधाकर प्रभाकर विहारी री।
शेश अधिकारी जाहि पंडित विमल वुद्धि,
पंढित शकल गुण मंडित सुधारी री।
"भनत गनेश" महाप्रभुता तिहारि जानि,
देपतार उदार ते वै करत कहारी री।
वेधा त्रिपुरारी महाकाली जू मुरारी चिरदेषि,
बलिहारी जात नजरि तिहारी री ॥ ५ ॥

वदन कराल भाल भृकुटी विशाल भौंहै,
नैन अनियारे नार कज्जल लशत है।

रसाभा दसन वस रसना भयानक को,
विकट कृपान कपटि दनुज हशत है।
भनत गनेश कंठ भूषित मनुज माला अमर,
प्रतापि भेश शिद्धिन वसत है।
रूप रूप जालिका विशालिका कहात है,
महाकालिका स्वरूप महाकाल के ग्रसत है ॥ ६ ॥

मारयौ चंड मुंडै जोन अतुल प्रचंडै वीर,
रक्तबीज तारयौ धीर होत प्रलापकाल में।
शैन महिषासुर निशुंभ मषारिषासुर,
को सिंभु मधुकैटभ संघारयौ एकै काल मै।
भनत गनेश धुम्र लोचनै विदारयो छन,
देवन दुलारे पारे संकट के जाल मै।
दनुज कुचालिन के काठि परनाली,
सिरहाली पहुँचायो महाकालिहर भाल मै ॥ ७ ॥

गावत पुरान वेद ध्यावत महेश ब्रह्म,
पावत न भेद मंद वरनै गनेश को।
आवत मुरारि फिरि जात उरगारि तहाँ नावत,
सुरारिशिर गरनै फनेश को।
जावत अमर उपजावत अनेग भक्ति,
भावत मुनीश सिद्धि उद्वित दिनेश को।
लावत अमल फूल विमल अतूल सोहै,
विस्यो महाकालिका चढ़ावत धनेश को ॥ ८ ॥

—पूर्णप्रतिलिपि

विषय—आठ कवितों में काली की महिमा का वर्णन किया गया है।

संख्या ४७ ख. जनक वंश वर्णन, रचयिता—गणेश कवि, कागज—देशी, पत्र-२, आकार—१०½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत् महेश्वर प्रसाद वर्मा, ग्राम—लखनौर, डा०—रामपुर, जिला—आजमगढ़।

आदि— ॥ श्री गणेशाय नमः ॥

॥ दोहा ॥

महाराज श्री ईश्वरीनारायण धरमग्य।
जनक वंस वर्नन करो कह्यौ वचन यह प्रग्य।

आयसुपाय महिंद्र को बालमीक मत जानि ।
जनक बंश वरनन करत सुकवि गनेश प्रमानि ॥ २ ॥
मुनि वशिष्ठ के कहत अस रामवंस विख्यात ।
पानि जोरि बोले वचन जनक नृपति अवदात ॥ ३ ॥
परंपरा करि प्रभु कह्यौ मो कुल को विस्तार ।
सो सुनि मुनि वरनत भए निमि को वंस उदार ॥ ४ ॥
कहिवे लायक उचित जो जानहुँ हे मतिमान ।
परंपरा विधि जानि अस कुल को करहु बषान ॥ ५ ॥

॥ छप्पै ॥

तिहुँलोकन में विदित होत भे नृप सुकर्मकर ।
निमि सुनाम सरवज्ञ सर्व बलवान मध्यकर ।
निमि के भे उतपन्न पथम महिपाल जनकअस ॥
भूप जनक ते भए पुत्र उतपन्न उदावसु ।
धरमग्य उदावसु पुत्रवर नंदि वर्धं कीन्हों प्रगट ।
पुनि नंदि वर्ध महिपालवर सुत सुकेतु कीन्हो सुभट ॥ ६ ॥

॥ अपरंच ॥

नृप सुकेतु सरवज्ञ देवरातहि उपजयो ।
देवरात राजर्षि विहद्रथ को प्रगटायो ।
महावीर उतपन्न कीन सुत धीर विहद्रथ ।
महावीर के भए सुधृत धृतवान तेजगथ ।
महिपाल सुधृति के होत भे धृष्ठकेतु धर्मग्य मुनि ।
तेहि धृष्ठकेतु राजर्षि के प्रगट भ हर पुनि ॥ ७ ॥
तेहि कीन्हौ पुत्र मरू कीयो प्रतिंधक ।
तेहि कीन्हौ धरमग्य कीर्तिरथ पुत्र अनिंदक ॥
कीन्हो सुत उत्पन्न कीर्तिरथ देव-मीढतक ।
देवमीढ के विवुध विवुध के भए महीध्रक ।
सुतकीन्ह महीध्रक भूपवर कीर्तिरात बलवान अति ।
तेहि कीर्तिरात राजर्षि के महारोम उतपति नृपति ॥ ८ ॥
महारोम सुत कह्यौ स्वर्णरोमाधर मिष्ठी ।
स्वर्नं रोमा राजर्षि कीन ह्रस्वरोम बलिष्ठी ।
ह्रस्वरोमा धर्मज्ञ कीन वियसुत वर नृपध्वज ।
है जेठो तेहिमध्य जनक लघु बंधु कुसध्वज ।

सुत जेठ जानिकै जनक को राजभार नृप सौंपि दिश्र।
सोइ जनकराज वर जानकी रामचंद्र को ब्याहि दिश्र॥ ९॥
॥ इति जनक वंस वर्णन समाप्त॥

—पूर्णप्रतिलिपि

विषय—महाराज जनक के वंश का वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—कवि का नाम गणेश है। ये काशिराज श्री ईश्वरी नारायणसिंह और श्री उदितनारायण सिंह के आश्रित थे। संक्षिप्त विवरण में भी इनका उल्लेख है। प्रस्तुत रचना इन्होंने महाराज ईश्वरीनारायण सिंह के आदेश पर की। इस बार इनकी चार रचनाएँ—१-जनकवंश वर्णन, २-कालिकाष्टक, ३-रामचंद्र वंश वर्णन और ४-त्रिवेणी जी के कवित्त नाम से और मिली हैं।

सख्या ४७ ग. त्रिवेणी जू के कवित्त या पंचाशिका, रचयिता—गणेशकवि, कागज - देशी, पत्र—८, आकार—१०½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५७, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत महेश्वर प्रसाद वर्मा, ग्राम—लखनौर, डा०—रामपुर, जि०—आजमगढ़।

आदि— श्री गणेशाय नमः

अथ त्रिवेणी जू के कवित्त लिख्यते॥

॥ दोहा॥

प्राग गए अस्नान को कासिराज करिहित।
उदित विदित प्रमुदित कह्यौ कीजै सुचित कवित्त॥ १॥
कवि 'गणेश' पंचासिका वर्न्यो करि उतसाह।
श्री ईस्वरी प्रसाद जुत नारायण के चाह॥ २॥
॥ कवित्त जात्रानुमान॥
संगम नहान को बिहान आनुमान तेरो,
मान मेरो कहिबो प्रमान करि चेरोहो।
एक दिन वासी ते उदासी कीं भाषै कोऊ जनप संघाति हौं
पुकारि करि टेरो हो।
पायोना अराम जानि सामते विचारि याते,
जात और धाम को प्रनाम करि हेरो हो।
बूडि जैहौं वारि के अथाह मैं कहत पाय,
वेनी के प्रवाह में निवाह नहि मेरो हो॥ १॥

अंत—करो मन भायो संग रंग वनितान हूँ के,
लागे ते तरंग अंग पायजे उडात हैं।

तमना करो रे जप सपना करोएरे,
कीजियो अनंग रंग याते अधिकात हैं।
'भनत गनेस' जगतारन प्रभाव देष्यौ वीस विसैहै,
करि महेस सरसात हैं।
समको तुलत और तमको विलात पाय,
जगको उजारी लोक हमको देषात हैं ॥ ४२ ॥
भागिन को भागि दै अभागिन को भागि करै।
मागी दै मुकुति भागीरथी विहरति है।
पापिन के पाप को अमाष आप हरै,
साकतीनि ताप हरै अछै पद को सरति है।
ब्रह्मपद दुर्लभ अदुलभ करत जाति जीवन को,
जन्म ते अजन्म को करति है।
ते सब निहारे गुन से सबन गाइ सकै,
केशव के सीस वसि केसव करति है ॥ ४३ ॥
पापी एक छोड्यो है सरीर जन्हुजाके तीर ह्वैहौं,
ना प्रतापी महि मंडल मै जायकै।
ह्वैहौ ना महेस औ सुरेस लोक आछी विधिवार,
वार काहे को पठावै सरसाय कै।
'भनत गनेस' मुनि ह्वै हौं ना मुनीसराज,
तो सन पुकारे बात कहत बनाय कै।
सेगरे विहायलोक मुकुति सुहाई देत,
तेरे तीर रैहों माय आछे सुष पायकै ॥ ४४ ॥

—अपूर्ण

विषय—त्रिवेणी का वर्णन। कवि ने यात्रा, संगम, अक्षयवट, यमुना, सरस्वती और गंगा जी का अलग-अलग बड़ा विशद और भव्य वर्णन किया है।

संख्या—४७ घ, रामचंद्र वंश वर्णन और झांकी वर्णन, रचयिता—गणेश कवि, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—१०½ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—८८, पूर्ण रूप—प्राचीन, पद्य लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत महेश्वर प्रसाद वर्मा, ग्राम—लखनौर, डा०—रामपुर, जिला—आजमगढ़।

आदि—श्रीगणेशायनमः ॥ रामचंद्र वंसवर्णन ॥

ब्रह्म के सनालक जु कंज सो भयौ है ब्रह्म ब्रह्म के
मरीच ताके कस्यप के भान भो।
भानु के महीप मनु मनुके इक्ष्वाकु ताके कुक्ष के विकुक्ष औ विकुक्ष हू के वान भो।

वान महाराज के भयो है अनरन्य भूप ताके
प्रथू प्रथू के त्रिसंकु जस मान भो।
ताके धुंधुमार भो कुमार जब ताखता के मदूस,
विधाता मानधाता गुनमान भो ॥ १ ॥

मान धाता भूप के सुसंधि ध्रुवसंधि जाके,
ताके भो भरथ पंड भरत सोहायो है।
भरत पूत असितौ सगर जाके असमंज ताके,
अंसुमान गायो है।
अंसुमान भूप के दलीप अवनीप भए
तिनके भगीरथ ककुस्थ उपजायो है।
सुवन प्रतापी भूप तापी रघुदायी,
भयौ पुन्य पथ थापी जापी दूसरो न गायो है ॥ २ ॥

अंत—उदितनरायन उदार अवनी के बीच लैकै,
अवतार भूमि भार हरि लीन्हौ है।
गाइ कविता कि आई तुलसी गोसाई जोन,
तौन समुदाई प्रभुताई कै अदिनो है।
भनत गनेश हु ते त्रेता के विलास जे ते,
के प्रकास सब त्रास हरि लीन्हौ है।
रामचंद्र चरित नवाचौ करिवे को कछू,
सांचौ रामनगर नगर करि दीन्हो है ॥ १० ॥

गायो वालमीक नीलकंठ जौन ठीक ठीक,
नीक नीक नाटक भै बात जतो कीन्हौ है।
गायो कागराज पक्षिराज सो सोहायो जोन,
जागवली गायो भरद्वाज सो अहानौ है।
भनत गनेश कलिकाल के उबारन,
को कारन विचारि उप चारन सो चीन्हो है।
महाराज उदित नरायन यौ महाराज,
रामचंद्र चरित प्रकास करि दीन्हो है ॥ ११ ॥

इति श्रीराम — ॥ समाप्त ॥ श्रीराम ॥

विषय—रामचंद्र जी के वंश का वर्णन किया गया है। इसके पश्चात् रामचंद्र जी की झांकी का वर्णन भी है।

संख्या ४८. भक्तन के नाममाला अथवा भक्त बछावली, रचयिता—गरीबदास, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण

(अनुष्टुप्)—५४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८३८ वि० और १८४० वि० के अंतर्गत, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजाराम जी, स्थान और डा०—चिटबड़ा गाँव, जि०—बलिया।

(हस्तलेख सभा के लिये प्राप्त कर लिया गया है।)

आदि— ॥ भगतन्ह कै नाममाला ॥

सतगुरु चरन सरोजवंदी सीर सादर सहीत मनावो।
संतनाम अभिराम कलपतरु गाइ अभैपद पावो ॥
जीन्ह संतन्ह पदरज मंजुल सीर राषै तीलक बनाइ।
चारी पदारथ करतल ताके वेद उपनीषद गाइ ॥
संत अनंत अंत जानै को को कथी पारही पावै।
मती अनुमान नाम की महीमा प्रेम सहीत नीती गावै ॥
भौसागर तरवे की सरधा जीन्ह दुर वीमल सोहाने।
संतनाम अभीराम अभैमत पद कैवल्य समाने ॥
ताते सुनेहु सुगम ऐह मारग देषेउ हृदय वीचारी।
सकल संत के चरन सरन तट आरत प्रनत पुकारी ॥
सुमन सुगंध नाम संतन्ह को रची रची हार बनाओ।
मो मन होन चहत वैरागी रुची सो तेही पहीरावो।
सीव सनकादी सनंदन नारद पुरन ब्रह्म पुराना।
अवीनासी अवीगती की महिमा नीज मुष भनीती वषाना ॥

अंत—पद नीर्वान अमान बावरी वीरु भक्त ब्रह्म ग्यानी।
इआर महंमद परम ततु नीज आपुही मे पहीचानी ॥
वुलादास वीलास ग्यान रस चाखी भए उन मतं।
गगन गुफा उनमुनी धुनी नीमल परम जोती भगवतं।
केसोदास हुलास मानही अपुरन प्रेम पीउपन।
त्रीपुनी तीलक ततसरि तापी अगम गम्य परीपुरन ॥
जन गुलाल गुर ग्यान गम्य धुनि सब्द अनाहद पागे।
अवीगती अलष जोती रस लंपट उदै ग्यान वैरागे ॥
परम दआल प्रन उपकारी धर्म धुरंधर जोगी।
तुरीआ पद वीग्यान जगत् गुरु प्रेम अंमीअ रस भोगी ॥
संत अनंत नाम की महीमा को कही पारही पावै।
सकल संत के चरन कमल रज "जन गरीब" सीर नावै ॥
अंचल रोपी उभै कर जोरे प्रनत पालना कीजै।
सतगुरु चरन कमल की सरधा "जन गरीब" जो दीजै ॥
इतिश्री भक्त गरीबदास जी के भक्तवछावली संपुरन समाप्त ॥

विषय—प्राचीन तथा अर्वाचीन कुछ भक्तों का गुणगान किया गया है।

संख्या ४६. कथामृत, रचयिता—गिरधरदास (गोपालचंद), स्थान—बनारस (चौखंभा), कागज—आधुनिक, पत्र—११९, आकार—११½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)-११, परिमाण (अनुष्टुप्)—४००९, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९११ वि०=सन् १८५४ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस।

आदि— श्री गोपीजन वल्लभो विजयते ॥

॥ मच्छ कथा ॥

॥ दोहा ॥

सुंदर सुखद सरोज से वल्लभ जू के पाँय।
सुमिरत सुभ सरसाहिं सब सोक मोह भ्रम जाँय ॥ १ ॥
नंदन प्रभु श्री नंद के करन सकल आनंद।
सुमिरत गोकुल चंद पद दूर दुरैं दुख दंद ॥ २ ॥
सुमिरि मीन भगवान के पीन करम सुख मूल।
चारु कथा कथिबे चहत दूरि करनि भवशूल ॥ ३ ॥

॥ चौपाई ॥

कृत जुग आदि भयो बल धाम। दानव अधम संख यह नाम।
महामेरु सम उन्नत काया। जानै सकल भाँति की माया ॥

॥ कच्छप कथा ॥ कवित्त ॥

भवसिंधु सिंधु जीव मंदर महान गिरि कर्म वासुकी तहाँ लसै द्विजित दच्छ है।
ताको मुख पाय पुन्य पुच्छ अति सुच्छम है वासना दुविध दैत्य देवता प्रतच्छ है।
सुधा सुखकाज है समाज दोऊ जुथज को 'गिरधरदास' तहाँ निज-निज लच्छ है।
बूडत उधारन कों शैलवर धारन कों लच्छन ललाम नाम कच्छप को कच्छ है ॥ २।

अंत— ॥ राम कथामृत ॥

॥ तोमर छंद ॥

पहुँचे तपोवन जाइ। निवसे तहाँ रघुराइ।
पुनि ताडिका कहँ प्रात। निरखी भयंकर गात ॥
मुनिराज आयसु पाइ। धनुतानि कै रघुराइ ॥
हरते भए तिय प्रान। रघुनाथ धर्म निधान ॥ ८४ ॥
तव तुष्ट विप्र प्रवीन। सब अस्त्र रामहिं दीन ॥
तेहि सैल से रघुनंद। जिमि सारदी निसि चंद ॥ ८५ ॥

॥ दोहा ॥

यह रामायन सागरहि वरन्यो बुंद समान।
रामकृपा पूरन भयो रामचंद गुन गान ॥ ९९६ ॥
फूल के नाते भिल्लिनिहिं निजपद दियो निवास।
को रघुवर सो और जग जनहित गिरधरदास ॥ ९९७ ॥
रावन खल पावन कियो दियो अभयपद दान ॥
कोऊ भांति सनमुख भयो यह मन आनि सयान ॥ ९९८ ॥
गुन आरामैं दुख कटै मन आरामैं लेत।
हरिपुर आरामैं लहत रामैं कहत निकेत ॥ ९९९ ॥
रघुवंसी सिरमौर तजि भजहिं जानि हित और।
ते नर खर कूकर सरिस निंध कुठौर कुतौर ॥ १००० ॥

॥ सोरठा ॥

कियो दसानन नास जिन छिन मैं निज भक्त हित।
पूजत गिरधर दास तिनके चरन सरोज हित ॥ १००१ ॥

इति श्री गिरिधरदास विरचितं रामकथामृतं समाप्तम् शुभमस्तु ॥ संवत् १९११ मार्गशीर्ष कृष्णाष्टमी ॥ ८ ॥ रविवासरे ॥

श्री बाबू गोपालचंद की आज्ञानुसार रामकटोरा के निकट बाग में मुन्नालाल पाठक ने पाषाण यंत्र से मुद्रित किया। लि० कन्हैयालाल खत्री।

विषय—मच्छ, कच्छप, नृसिंह, वामन और राम की कथाओं का वर्णन किया गया है।

मच्छ कथा का रचनाकाल

रितु६ नभ० ग्रह९ शशि१ संवत दशमी भादव मास।
मंगल कर मंगल दिन पूरन भो इतिहास ॥ ५० ॥

॥ नृसिंह कथा रचनाकाल ॥

माधव को प्रिय मास है माधव उज्जल पच्छ।
चौदश दिन भाषा करी कृष्ण कथा यह स्वच्छ ॥ १०३ ॥

वामन कथा रचनाकाल

सास्त्र६ सून्य० ग्रह९ चंद१ संवत कार्तिक पच्छ सित।
द्वादसि दिन सानंद करी कथा निस्तरन हित।

टिप्पणी—ग्रंथ से ऐसा ज्ञात होता है कि उसमें दस अवतारों की कथाओं का वर्णन रहा होगा। प्रस्तुत प्रति में मच्छ, कच्छ, नृसिंह, वामन और राम की कथाओं का वर्णन है। कच्छप कथा के अंत के पत्रे नहीं है, अतः वह अपूर्ण है। सभी कथाएँ छपी हुई हैं। छापा प्राचीन लेथों का है। ये जहाँ जहाँ छपी हैं, उनका विवरण इस प्रकार है:—

१—मच्छ कथामृत-रचनाकाल संवत् १९०६ तथा लिपिकाल संवत् १९११ वि०। बाबू श्री गोपालचंद की आज्ञानुसार यंत्रालय मो फांद हिंद पांडे की हउली में मुन्शी हरवंशलाल वो हनुमान प्रसाद ने छापी दसखत कन्हैयालाल ता० २६ अप्रैल, सन् १८५४ इसवीय श्री हरिः॥

२—नृसिंह कथा—लिपिकाल संवत् १९११ वि०। श्री बाबू गोपालचंद्र की आज्ञानुसार पाषाण यंत्र में मुद्रित भई। श्री कृष्णायनमः॥ लि० कन्हैयालाल॥

३—वामन कथा-रचनाकाल सं० १९०६ वि०; लिपिकाल संवत् १९११ वि०। श्री गोपालचंद जी की आज्ञानुसार रामकटोरा के निकट बाग में मुन्नालाल पाठक ने पाषाण यंत्र से मुद्रित किया। इस कथामृत में आगे भूल से चार सै सैंतीस का अंक दो बेर लिख गया है इसलिये पीछे पाँच सै बयासी का अंक घटाय दिया। अब बराबर जानना।

॥ दोहा ॥

विरच्यो गिरिधर दास जू लिख्यो कन्हैयालाल।
छाप्यो मुन्नालाल ने रामकटोरा हाल ॥ १ ॥

४—रामकथा—लिपिकाल १९११ वि०। श्री बाबू गोपालचंद की आज्ञानुसार रामकटोरा के निकट बाग में मुन्नालाल पाठक ने पाषाण यंत्र से मुद्रित किया। लिखा कन्हैयालाल खत्री॥

कच्छप कथा अपूर्ण है इसलिये उसके छपने का विवरण अप्राप्त है। रचयिता गिरधरदास है जिनका वास्तविक नाम गोपालचंद था तथा जो भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र के पिता थे। उपर्युक्त छापे के विवरणों से पता चलता है कि ये संवत् १९११ में विद्यमान थे। व० क० का विवरण पत्र भी द्रष्टव्य है।

संख्या ५० क. कवित्त हनोमानजी के, रचयिता—गुरुदत्त, कागज—देशी, पत्र-१, आकार—८×६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६७, परिमाण (अनुष्टुप्)—८३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—दयाशंकर जी मिश्र, मोहल्ला—गुरुटोला आजमगढ़, जि० आजमगढ़।

आदि—श्री गणेशायनमः कवित्त॥ हनोमानजी की॥ अविवेक मारिवे कों अरिगर्व गारिवें कों संक सोच हारिवें कों सुर अतिवंत है।

अघ पुंज जारिवे कों मोह मद मारिवे कों,
जमफंद फारिवे कों महावलिवंत हैं।

त्रीजग सुधारिवे कों अधम उधारिवे कों,
आरत उबारिवे कों महिमा अनंत है।
दीह दुष दारिवे को संकट संघारिवे कों,
वीपति वीदारिवे कों वीर हनिवंत है ॥ १ ॥

करम सुभासुभ के बीच ही में षीचंत है,
नीच मन मेरो यह नेकु न वीचारे हैं।
डोलत है चंग सम त्रीस्ना के तरंगनी में,
अँगना के रंग ते न पलक पसारे हैं।
कान की न सुधि रही तान के तरंगनि तें,
छवो रस वस परे रसना वीचारे हैं।
अजनी कुमार को सुमार करि सकै नाथ,
जगत में जेते सभ औगुन हमारे हैं ॥ २ ॥

आगे जाम नासिका कों संगत सुगंधन्हं को नैन,
निसि दीन रूप सुंदर नीहारे हैं।
आसा के उपाध तें न वुधिय अस थीर होत,
मर के झकोर जौं फीरत मतवारे हैं।
देह सपरस तें सनेह वरवस गह्यो रह्यौ नहि,
चेत चित चिंता करि हारे हैं।
'गुरुदत्ता' महावीर पीर के हरनहार,
मेरे तौ सरन एक चरन तीहारे हैं ॥ ३ ॥

जोग जप तप जग्य नेमव्रत पुन्य जेते कीए नहिं,
पगु गंग मग में न धारे है।
तीरथ नहाए न गोवींद गुन गाए,
नहिं गुरु पितु मात पद पंकज पपारे हैं।
कीन्हं संग संत के न दान दीन्हें लीन्हें,
जस औगुन करोर घोर करत न हारे हैं।
'गुरुदत्ता' अजनि के सुअन समीर नंद,
रावरे चरन दुष हरन हमारे हैं ॥ ४ ॥
रुद्र अंस वंस कपि भुषन सरोज कुल,
दुत रघुवीर के समीर के दुलारे हैं।
चारि फल दायक सहायक सरनागत के,
राम रघुनायक के प्रान सम प्यारे हैं।
हांक सुनि दीनता की देव सरवस आय परे,
परवस पर संपन्ह उवारे हैं।

'गुरुदत्त' बजरंगी बीना कौन संगी होत,
पीर के हरन वीर चरन तीहारे हैं ॥ ५ ॥

चिंतत चरन चिंता रहै न बीपति हुँ की दया,
द्रीस्ठ जाकी जग मंगल करन है।
दारिद हरन मंजु महिमा अपार जाकी,
सेवन सुपद सर्व आनंद भरन है।
कीजिए गोहार दीन जन की पुकार,
सुनि अंजनि कुमार दुप दीरघ दरन है।
औढर ढरन आस पुरन करन कीस,
मुरति विकट कोटि संकट हरन है ॥ ६ ॥

वेरि काटीवे की पल आध कीन देरी होय,
वीर हनिवंत मोद मंगल मचाइए।
कारा ग्रीह मंध्यते निकारि नीज मंदिर में,
नंदन समीर के सु संपति सचाइए।
रंचता की अंक मेटि संकते निसंकि करि विभौ की,
वीभूत वीस्व वीच वीरचाइए।
अंजनी कुमार वीना सुनै को पुकार मेरी आरत,
हलोरत कों आपद के आँच ते बचाइए ॥ ७ ॥

पुराक्रीत पाय के हलोरति हलोरत है,
तोरत है संचित समीर की डहर में।
वीपै बारिनिधि के मरोरनि मरोरत है,
कीय मान प्रवल पहार की उदर में।
औगुन अपारनि तें अघ अंधकारनि तें,
झोरत झकोर झंझकार की झहर में।
महाबीर राषिए जहाजरूपी जीवनाते बोहत है,
कुमति कुपंथ की कहर में ॥ ८ ॥

मधुर वीसाल तें बीसाल तन करि कुदौ,
दुत रघुवंश बली वारीध बीसाल को।
काढत कुलांच कांच कहि गए कंछप के,
गहि गए गाढे मेरु मंडल पताल को।
'गुरुदत्त' आसमान भासमान मढिगए,
बढ़िगए बर्मलोक लोक सुरपाल को।

सेस गए सरकि दरकि गये दीमाज,
लौं देषत कराल काल कपि के उछाल को ॥ ९ ॥
वायु ते प्रबल वायु नंदन चपलि चलौ,
हलौ तल बीतल तलातल अनेत लौं।
प्रलैकाल घन से घमंड घोर रव रूप,
देषत करोर भोर रवि के उगंत लौं।
'गुरुदत्त' कवि चाहै लंक लीलवे को,
कपि षोलवे कों चाहै नभ मंडल प्रचंड लौं।
लंकइस थहरि हहरि उठे लंक लोक,
कहरि कहरि उठे दानव दीगंत लौं ॥ १० ॥

पावक बिलोकि वीर वांको हनिवंत,
वली निवुकी निसंक लंक बंक गढ चढिगौं।
प्रलै घोर घन से कठोर धुनि गरजत,
तरजत मंदर समान तन बढ़िगौं।
दावानल ज्वार जोर बढि कै गगन लगौ,
डगौ दिसि कुंजर कमठ काच कढ़िगौं।
लुम लटपट की लपेट नभ मंडए जौं,
अरुन अखंडल सरासन में मढ़िगौं ॥ ११ ॥

वाढे लुम लहर कहर ज्यौं अगिन ज्वाल,
हेरत ही नीस्चर नगर उठे हाय हाय।
कोउ त्यागि त्यागि धाय वन भागि भागि,
चले आगि आगि आरत पुकार करैं आय आय।
कोउ ऊवि डुवि डुवि मरे सागर में,
लोटत लहर में जरत कोउ जाय जाय।
रानी राकसन की वीकल वीललानी,
फीरैं कोउ पानी पानी पानी कैं कुंआ में गीरैं धाय धाय ॥१२॥

कोउ कहैं वानर न हैरे देवतन धरे,
राम को पठावो वीरवल क्यौ वरनि जाए।
जोउ गात झारैं हमै कहत बबारैं कौन,
कोउ भौन भीतर भभरि गरि भहराए।
काल ते कठिन रूप कवि के नीरषि कोउ,
प्राण लै निकरि चलै कंदरनि में पराए।
कोउ हाय हाय करि धाए धाए धुनि धुनि,
सीस धरनि गीरत तात मात गन गोहराए ॥ १३ ॥

पावक प्रचंड पौन प्रेरित प्रबल देषि हहराए,
शीघ्र लंक लाइ सम लहराए।
चटकि चटकि टुटि फुटत कनक कोट पुंछ,
पटकनि मनो प्रलै घन अहराए।
जरि कै गीरत छुटि छुटि नग मंदिर तें,
टुटि टुटि परत रतन थंभ थहराए।
'गुरुदत्त' धुमनिरधुम छवि छहराए,
हहराए पावक झकोर झर झहराए ॥ १४ ॥

कोउ लहरत गिरैं कंचन अटारीन्ह ते,
कोउ कहरत फीरैं नारी ब्रीद बीललाए।
कोउ मीर छीठि छीठि पिटि पिटि सीर कहैं,
संकट हरन वेगि संकर करौ सहाए।
कोउ बाल वालक विभव गेह नेह तजि,
भाजि चदै आंच के लगत अंग अकुलाए।
कोऊ सौंज ढोए ढोए वाहर करत कोउ,
रोय रोय रावन के पावन परत आए ॥ १५ ॥

मोम से पिघल परैं कंचन सहर औ लहर के,
झहर ते अकास अवनीरुधाए।
अंधाधुध अंधकारन ते रोके आसमान,
भान मंडल अपंडित छटा छपाए।
जरत असंष अस्व गज के पुकारन ते लहर,
अपारन ते पारन कहु समुझाए।
उध्धत अंदोर सोर सुनि कै सबन फुटै
'गुरुदत्त' घोर धुनि धुअलोक लौं सुनाए ॥ १६ ॥

देषत कनक नग्र कौतुक विबुध ब्रीद,
वरषत सुमन स्वर्ग मंडल सुजस गाए।
धन्य धन्य धुनि रहै धुर लौं धरा के,
छाए धरनी धरन तै न करनी बरनि जाए।
जारि कै निमिष में नगर घर घर सोधि,
कुदि परौ वीर नीर निधि में तुरित जाए।
पुंछ को बुझाये कैसी आके,
पद सीर नाए सागर उतरि गहे राम के चरन आए ॥ १७ ॥
जहाँ अति पावक प्रचंड जौं अपंड,
धार लहरै अपार चहुवोर करि घेरे हैं।

जहाँ बाघ सिंघ को समुहनरदत फीरैं,
दुसीर दुरह दुरदन के दरेरे हैं।
जहाँ मेरु मंडल अपंडदल दैतन्ह के,
काल सम कोटिन्ह कुलिस ते करेरे हैं।
'गुरुदत्त' नंदन समीर के सपंछ ह्यौ प्रतछ,
तहा राषन को दंच्छ पद तेरे हैं ॥ १८ ॥

जहाँ जल हीन दीन मीन से मरत षरे,
वीषते वीकल परे सकै न उबरिकैं।
जहाँ घोर घाम तें जरत अंग जल बीना,
कंज से भुकरि गिरैं मुलतें उखरि कें।
जहाँ उसे तछक के रछकन ए करन कल से,
पुंछकन कोउ बात पुछत पुकरि कैं।
रहत पौन नंद तेरे पद प्रान राषन कौं,
राषे आन अंम्रीत सरोअर से भरि कैं ॥ १६ ॥

जहाँ जात पातन में पुछत बात कोउ,
दीरघ दरीद्र महा मंदीर वसतु है।
आदर न रह्यौ जहाँ जाको रंक राजनि में,
देषत कुसाज लोक लाजन हँसतु है।
जहाँ दीन छीन अति आरत अधिन फिरैं,
हीन धन जहाँ द्वार द्वार दरसतु है।
'गुरुदत्त' महावीर वज्र तन धारी तहाँ तेरे पद,
कंज फल प्रदुम लसतु है ॥ २० ॥

जहा कोउ संगीत सहाय वाय माय घने वेरे दुष्ट दुरजन और चुंगल चवाइ है।
जहाँ जोर जकरे जजीरन्ह तें भारी पीर थीर परदेस मे न देस दुषदाइ है।
हीत सों मीलत बात बोलत अनहित जहाँ जाँचन तें ग्रास आस राषत पराइ है।
'गुरुदत्त' महावीर पीर के हरन तहाँ तेरे पद चींतेन सरव सुपदाइ है ॥२१॥

जहाँ लेस दुष को न खल को प्रवेस तहाँ देषत कलेस देस दुष्ट दुरजन के।
जहाँ पुंज प्रेम को अप्रेम प्रगटत जहां धन को सुमेर तहाँ ढेर नीरधन के।
जहाँ जस कीरति अकिरति अजस जहां व्यापत न बीथा तहाँ ब्याध बरषन के।
'गुरुदत्त' तहां कीस नाएक सपंछ ह्वै वीपछता न राषै पछ प्रन के ॥२२॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—हनुमान जी की स्तुति की गई है।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना खर्राकार है। इसकी पूर्ण प्रतिलिपि कर दी गई है। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं। रचयिता का नाम के अतिरिक्त और वृत्त नहीं मिलता।

संख्या ५० ख. कविच श्री वीधाचल देवी जी को, रचयिता—गुरुदत्त, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—८ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पंडित दयाशंकर मिश्र, मोहल्ला—गुरुटोला, जिला—आजमगढ़।

आदि—श्री गणेशायनमः कबीत ॥ श्री वीधाचल देवीजी को ॥

इंद्रादीक देवन के ब्रींद नीत सेवौ जहाँ अनिमादि सिधिरहे चेरी सी कहाए कै।
कला को समुह झलकत झला झल रही कोटि रवि चंद ते दुचंत छविछाए कै।
दानी अभिमत को नीसानी त्रिभुअन की है वानी वरनत सदा जाको जस गाए कै।
काहे को फिरत मुढ़ दीन ह्वै दूनी के बीच वीधाचल देवी को दरस देषजाए कै ॥१॥

धाए कै करेगो कहा जाय कै जगत में रे गायकै करेगो गुन कहा सुरनर की।
सुनै को दीगंत मे न दुजो दुष दीनन को बुझै को वीथा को वीनां कन्या भूमिधर की।
रूप की है रासनी प्रकासनी चराचर की नासनी है दुष की उसासनी अमर की।
रानी संभुजु की ठकुरानी त्री जगत की है वींध की भवानी सोइदानी अभै वर सी ॥२॥

जाकी आदी मुरती को ध्यावै विस्नु विधि संभु जाके वल पालन करत है जगत को।
जाके पद चींतामनि चींतन करत नेकु चिंता न रहत छन भीतर भगत को।
पाननी सुजस की उषाटनी अजस की सो ठाठनी है संप्रति की काटनी वीपत की।
स्रीष्टी की प्रकासनी निवासनी हीदै की वुधी, रासनी सो वासनी है वींध परवतकी ॥३॥

विधिकर कंज से सवारे हैं सुभग सीला स्वर्न भद्र मंडीत अमंडीत प्रभासनी।
हेमगिरिहूँते उच्च उदित उदोत जोत मनि मै कनी को मंजु मंदीर सुखासनी।
मुल अगुनत् की महत् महिमा की महा सुंदर वदन सोहै मंजु म्रीदु हासनी।
कोटीन कलाधर कला की है प्रकासनी सो विंध गिरि उपर वीराजे वीधवासनी ॥४॥
उदै अस्त गिरि लौं अपंडित प्रताप होत दाप होत मंडीत भुअन दस सार मे॥

संपति कुबेर सो सुमेर सो अचल होत,
बल होत पारथ जौं भारत अपार में।
ग्यानी सुर गुरु से करन समदानी होत,
घानी सो वीदित वुधि गन के बीचार में।
'गुरुदत्त' कवि वीधवासनी भवानी जु के,
पद वरदानी दरसत दरवार में ॥ ५ ॥

जाके रोम रोम कोटि कोटि ब्रह्मंड बने,
मुल महिमा की सुलधर की धरनि है।

सुष की फरनि सोच हिय की हरनि,
असरनि की सरनि वारी आनंद भरनि है।
प्रलै उतपत की है वोही आदि कारन सो,
मंगल करनि अंब अवढर ढरनि है।
'गुरुदत्त' दाया की द्रवनि महामाया सोइ,
वींध गीरी देवी दीह दुष की दरनी है ॥ ६ ॥

केते कोटि ब्रहमंड मंडल अषंड जाके प्रभुता,
प्रचंड ते प्रकासीत अवनि है।
केतो कोटि प्रलै उतपत सो जगत की है,
चीता की हरनि जाकी चारु चितवनि है।
केते कोटि ब्रभा औ वीस्न संभु सुरदेव,
पावत न भेव अंब आपद दविन है।
रूप की समुद्र राजे रुद्र की रवनि महा,
माया विध गिर की सो दाया की द्रवनि है ॥ ७ ॥

कीन्हे जीन्ह ब्रभ को चेतन्य चहु जुग में,
त्रीगुन तीहुपुर में जाकी रही छाए कैं।
जाके गुन गन को समुह अपरमपार,
वार वार विधि वेद वानी कही गाए कै।
रचना रची है रंग रंग में अनेक अंग,
अंग में रही है रूप कोटिन बनाए कै ॥
रामी आदि ब्रंभ की प्रगट है भवानी सोइ,
विधि गिरि उपर वसी है अब आए कै ॥ ८ ॥

जेते हैं जगत में जहा लौं दीन जनता को,
दुष को हरन'''कोन'''जो और देव रे।
सारदादि सेस ए...और गनेस गन गावत है,
रैन दिन पावन''''भेव रे।
सुनि के पुकार वार वार''रन के करत गोहार को,
'गुरुदत्त' वांछित भरनि वसुधा की सोई,
विंधाचल देवी को चरन अव सेव रे ॥ ९ ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—विंध्यवासिनी देवी की स्तुति की गई है।

टिप्पणी—रचना खरांकार है।

संख्या ५० ग. कवित्त, रचयिता—गुरुदत्त, कागज—देशी, पत्र—१ (खर्रांकार), आकार—८ फीट के लगभग × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७९, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० दयाशंकर मिश्र, मोहल्ला—गुरूटोला आजमगढ़, जिला—आजमगढ़।

आदि— ... ...

वाह गुरु धुनि सोर सुनि सेना अरिन की दरीन समाने तुंग तुरुक तीलंगी के।
नावक लगे ते अरि जावक से रंगी जाहि डगि जाहि पलक मैं सलक फीरंगी के।
संका रूप सामजौ परावन पलंका परे डरे सब डंका सुनि सींघदल जंगी के॥ ४॥

जाके पेसपाने को पयान सुनि वैरी गन भाजीबे की फौज तें नीकाली सी लिए रहैं।
अटक असाम कै अमिरन के भीर सब सुनि कै समर संकचाली सी हीए रहैं।
बलक बोषारा वो सीतारा लागि सींघन की गुरुदत्त कीरती उजाली सी कीए रहैं।
षालसा अकाली जौं करालदल काली के निरषि अवदाली सपताली सी दीए रहैं॥ ५॥

देषत ही झाई सी झलक स्याम छुंडनि के वीर रंड षंडनि के आतुर बेहाल के।
टोपी सिर फेकि फेकि फौजैं सब टापुन की चढ़ि कै जहाज मग हेरत ही माल के।
भाजे अरि सुनत अवाजैं अरदरानि के त्रासनि के मारे तन छुटैं अरिपाल के।
घालक मलेछन के सालक है सत्रुन के पालक हैं प्रन के ए बालक अकाल के॥ ६॥

कई बार द्वादस वरष लौं घमंडकरि ब्रंभ रिषि होन को अषंडतप धारे हैं।
कौसीक वीचारे और स्त्रीष्ट करि हारे पै न कबहुँ वसीष्ठ ब्रंभ रिषि के पुकारे हैं।
सौ तौ कलिकाल मैं सुगत बोतार जो प्रभान करि केस के नीसान सीर धारे हैं।
श्रीगुर गोवींद के सरन में बरोबर ह्वै ब्रंभ होत वर्न अबरन न वीचारे हैं॥ ७॥

जोग जप तप जग्य नेम व्रत पुन्य जेते पावै पद ब्रंभ को न कर्मनि घटाए ते।
ससन अनेक देवतन के उपासन तें पावत न पार पौन उपर चढ़ाए तें।
ममि अमादि औ निषेद स्त्रुति वेदन तें षदन मिटै है कोटि तीरथ अन्हाएतें।
आगम निगम जाहि अगम बषानै सो सुगम भयो वाह गुरू नाम गुन गाएतें॥ ८॥

जैसे दीप दीप के परसदीप समहोत भ्रींगी कीट तदवत सरूप लवलाए तें।
जैसे और कुप सर सलिता सलिल जेते गंग सम होत गंग जल में समाएं तें।
जैसे और तरु में सुगंध मजया से होत मलय सुगंधनि के गंध लपटाए तें।
तैसे होत श्री गुर गोबींद के सरन आए नाम इ वाह गुरु नाम गुन गाए तें॥ ९॥

जैसे जल रंग में परत रंग सम लौह हेम होते पारस तें परस कराए तें।
जैसे ब्रंभ रंग के तरंगनि में रंगी जात प्रेम के उमंगनि में अंग उमगाए तें।
जैसे आप आप में मीलत आप चीन्हत हीं संत सतगुरु ग्यान गुढ़नि लषाए तें।
तैसे होत श्री गुरु गोवींद के सरन आए नामइ वाह गुरु नाम गुन गाए तें॥१०॥
रहतीन हींदुन की दसीदह दीसनि में सहतीन भार महिषदल के झोक में।

अटक के पार सम कटक मलेछन को सींव दल जालीम जौं डारत न रोक में।
पंथ के चढ़त जाके बढ़त वीवेक आगे पात्रे पर ब्रभ को समाने गुरलोक में।
जप के पढत जय ऊपर दोहाइ मुष वाह गुरु कहत बड़ाई ब्रभ लोक में ॥११॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—सिखों के अकालीदल और गुरु गोविंद सिंह की बड़ाई की गई है।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना खर्राकार है। इन्हीं खर्रों में 'कवित्त हनोमानजी' और 'कबीत वीधाचल देवी जी के' भी लिखे गए हैं। नित्यानंद नामक सुकवि के भी 'कवित्त' इन्हीं के साथ हैं।

संख्या ५१. सन्निपात चंद्रिका, रचयिता—गुरुप्रसाद नारायण (आजमगढ़), कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—१०$\frac{1}{2}$×७$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—६५३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९१२ वि०, लिपिकाल—सं० १९१२ के लगभग, प्राप्तिस्थान—सेठ शिवप्रसाद साहु, गोलवारा, मोहल्ला—सदावर्ती आजमगढ़, जिला—आजमगढ़।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ सन्निपात चंद्रिका लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

स्वोस्ती श्री गुरुदेव पद करों प्रनाम धरि शीश।
जनहित क्षिति धरि रूप दस संत सो सतगुर ईस ॥

॥ दोहा ॥

गन नायक वरनो सदा बहुरि धनंतर देव।
स्वरसती चरन मनाय कहि सन्निपात के भेव ॥

॥ सोरठा ॥

करों वंदना ध्यान श्री सतगुर के चरण जुग।
भव भै हरन मन हान सो मूरति मो उर वसो ॥

॥ दोहा ॥

सन्निपात त्रय दस अहै कहों ताहि के नाम।
लक्षन ताकी औषधी सुनो सकल गुनधाम ॥

अथ प्रथम स्यनि दास

॥ दोहा ॥

गरम रूप मीठो भषै जर पावत वढि आइ।
अति चिकनाई पाइके सन्निपात उपजाइ ॥

अंत— ॥ अष्टपदी ॥

हरजू सिंघ के वंसनाथ सिंघ नाम जो पायो।
गुरुदयाल मै तासुतनै कन्हू सिंघ जायो ॥

तीनही को सुत जुगत श्रेष्ठ गुन भयो निधाना ।
गुर प्रसाद लघुनाम गुरु नारायन जाना ॥
गुर नान्हक को सिष्य नाम आनंद जो पायो ।
विद्या दीन्हो मोहि पंडित शिव वच पढ़ायो ॥
तीनही के परसाद करी कविता मैं भाषी ।
नाम चंद्रिका सन्निपात यहि को लिपि राषी ॥

॥ दोहा ॥

स्वोस्ति श्री गुरदेव पद वसै सदा मन मोर ।
भ्रमै भवर ह्वै प्राग के चरन रेनु की ओर ॥
मागत यह वरदान के गुर के चरन मनाइ ।
जवले रबि ससि नभ वसै तवले सुजस सुहाइ ॥

॥ अथ सम्बत वरणन ॥ क्षप्पै ॥

प्रथमहि गणपति दसन बहुरि ग्रह द्वादस दीजै ।
सम्बत विक्रमसाह मास कुम्मार कहीजै ॥
सुक्क पक्ष शशि बार तिथ्य सासमी जनाई ।
गुरु दया आनंद करी पुरसा सुषदाई ॥
सिष्य पुत्र के हेत कही कबि सुनै इसे चित देइ मन ।
जै जै जै श्री गुरुदेव जू मै असरन तुमरी सरन ॥

इति श्री गुरदयाल सिंघ आत्मज कन्हूसिंघ तत आत्मज गुरुप्रसाद नारायन विरचिते सन्निपात चंद्रिका संग्रह संपूर्ण ।

विषय—आयुर्वेद विषय वर्णन ।

॥ रचनाकाल ॥

प्रथमहि गनपति दसन[1] बहुरि ग्रह[9] द्वादस[12] दीजै ।
सम्वत् विक्रमसाह मास कुम्मार (? कुआर) कहीजै ॥
सुक्क पक्ष शसि वार तिथ्य सासमी जनाइ ।
गुरु दया आनंद करी पुरन सुखदाई ॥

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना के साथ 'दया विलास' रचना भी लिपिबद्ध है ।

संख्या ५२ क. रामजी के सहनाम, रचयिता—गुलाब साहब (भुड़कुड़ा, गाजीपुर), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति—(प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८३८ और १८४० के लगभग, प्राप्तिस्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस । दाता—महंत श्री राजाराम जी, ग्राम और डाकघर—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया ।

आदि—श्री रामजी कै सहनाम लिष्यते। श्री रामजी के नाम को करो ब्याखाम संतन्ह के चरन रेनु सीसधरी गुरू गोवींद जी की दया ते नाम।

राम रमेश्वर रमीताराम रघुवंसमनी रघुवीर रमायेनं
क्रीस्त केसवं करुणानीधानं करुनामयं कंशवधनं
क्रीपानीधानं करतारं कवलनैनं क्रीतार्थं ग्यान दीपं
गुरु लध्यु जं गीरबरधारियं गोपालं गुरुगोवींदं नारायनं
नारोत्मं नरक नेवारनं नित्यानंदनं नरहरे निर्मनं निराकारं
निर्भयं निर्गुनं नंदनंदनं नामरूपं चक्रपानियं चत्रभुजं
छत्रधारीयं योती स्वरूपं जगवंदनं जनार्जनं जगता
धारनं जगतारनं जसोदा नंदनं तनुरुपं त्रिगुन रहीतं
तारंग नामोदरं दीन दआलं द्रुग विजयं दुषहरनं
दरशनं ध्यानरूपं धरमधारियं धुरंधरं परमेश्वरं
पुरुष पुरानं रामानंदं अपार ब्रह्मं
प्रीतिपूर्णं परमात्मं परपीरहरनं फल रूपं
फलप्राप्तं वीस्नविसंभरं ब्रह्मरूपं ब्रह्मज्ञानं
वीमलं विनाकालं वेग्यानं विधात्यं
वनमालियं व्यकूठपते वसीधरं
भक्तवछलं भगवानं भैहरनं भैभंजनं भागवतं
मनरूपं मधुसूदनं माधवं मनोरथपूर्णं
मनव्यापियं मंगलं मुरारीग्रं लोकपालनं
लज्याधारनं सर्वंग्यानं श्रीपते सुभयं सुग्यानं
हरीनामं हरीरूपं हरणं अनंतनामं अनंतरूपं
असंभवं आजोद्बीयं इस्वरं रामनामं सर्वग्यानं।

॥ रामसाषी ॥

येक नाम सर्व ग्यान है जुन अनंत को जान।
कहैं गुलाल जो जय करै सो जाय मिलै भगवान॥

विषय—श्री रामजी के एक सौ नामों का वर्णन किया है।

टिप्पणी—इस रचना का लिपिकाल 'भीखासाहब' कृत 'रामजी का सहस्रनाम' के आधार पर संवत् १८३८ और १८४० के लगभग है।

संख्या ५२ ख. शब्द, रचयिता—गुलाल साहब, स्थान—भुड़कुड़ा, गाजीपुर, कागज—देशी, पत्र—१३, आकार—६ × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—११७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३८ और १८४० के बीच, प्राप्तिस्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी। दाता—महंत श्री राजाराम जी, स्थान और डाकघर—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया।

आदि—　　॥ रामराग हिंडोलना चतुरमासा ॥

हिंडोलना आसा प्रभु पद लाइ ।
इह जग नीर्फल जाइ ॥
कर्म धरम बनी नाव जगत चढी धावइ ।
अवघट घाट कुपाट पार नाही आवही ॥
मास असार अघोर उपजो जन्म सो वनीआइआ ।
चीत चंचल भयो दामीनी छीनुक छीनुक छपाइआ ॥
छत्री स्नातेज जो पवन बरषत जहाँ तहाँ झरिलाइआ ॥
कामादि मोर जो बोलु पल पल तेज सो घहराइआ ॥ १ ॥
सहज सुरती जपु होइ ग्यान सोइ पावइ ।
छन जीव अनुराग तौ प्रेम लगावइ ॥
साँस सावन भरौ चहुँदीसी नवो द्वारे धाइआ ।
सो करो करींपी प्रीती प्रभु सो जाइ गुर सरनाइआ ॥
इहमन बीचारो भर्मटारो दुंद सकल बहाइआ ।
प्रेम पुरन ग्यान उपजो सुरती नाता समाइआ ॥ २ ॥

अंत—　　॥ राग बारहमासा ॥

बारहमासा बारह जौं ठहराइ । जनम सुफल तव भाइ ॥
मास असाढ़ जो आइआ तब जीअ आसा लाइ ।
चरनन्ह परचीत लागेउ इतउत नाहीन जाइ ॥
पुरुआ ते पवन झकोर उठत बादल दहुँदीसी धाइआ ।
गरजी गगन अनंत धुनी छवी नाम सो लपटाइआ ॥
सावन सासन मानइ गही गही रोकत जाइ ।
पीआ कै देसन पाएउ कैसे कै मन ठहराइ ॥
सुनी मैं झनकार झन झन मोती रीमी झीमी लइआ ।
धनी भाग बीरहीनी तासु जीवन जसु प्रभु घर आइया ॥ २ ॥
भादौ भरम न आवइ ग्यान कै सुमति लाइ ।
चहुँदीसी चमकत चीत चाक्रीत होइ जाइ ॥
सुघुम सेज सवारी बहु बीधी अगम रंग लाइआ ।
प्रेम सो पवढाइ प्रभु कहँ भाव अंकम लाइअ लाइआ ॥ ३ ॥
कुआर कामना पुरन समै सोहावन भाई ।
कही जल थाह अथाह कही नीर्मल वरनी न जाइ ॥
ब्रह्म पूर प्रगास दहु दीसी उदीत चंद सोहाइआ ।
स्याम संग जो रंग लागो मगन माधो भाइआ ॥

× × ×

कहै गुलाल अपार स्वामी गुर क्रीपा घर आइआ ।
धन्य जीवन भगत को जीन्ह परम पद इह पाइआ ॥ १२ ॥
परमपद इह पाइआ तव सहज घर ठहराइआ ।
भवो अवीचल अभै ग्यानी समुंद लहरी समाइआ ॥ १२॥

विषय—आध्यात्मिक ज्ञान का वर्णन किया गया है ।

टिप्पणी—इनका लिपिकाल भीखासाहब कृत 'राम सहसनाम' के आधार पर सं० १८३८ और सं० १८४० के लगभग है ।

संख्या ५३. अध्यात्म रामायण, रचयिता—गुलाबसिंह, कागज—देशी, पत्र—१५, आकार—८३/४ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३१, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी ।

आदि—ऊँ श्री गणेशायनमः ॥ श्री महादेवोवाच ॥ चौपाई ॥

अथ राजा दसरथ वर जोई । सत्य पराक्रम श्री पति सोई
अजोध्या पती वीर यक आहि ।
बिश्रुति सब लोकन के मांहि । १
निः संतान दुःख तिन भारा ।
वशिष्ट समीप गयौ यक वारा
मुनि शार्दूल वंद पद मंजुल,
परसन (प्रश्न) करी नृप वर कर अंजुल । २
सव लक्षण लषित संतानि।
केहि विधि होवै हे मुनि भानि
पुत्रहीन राज सब जे तो ।
केवल ये दुख कारण ते तो । ३
वशिष्ट कियो पुनि वैन उचारा ।
हो वैं गो नृप वर सुत चारा
मानो लोक पाल तनु धारे ।
हो वैं गे बल बुद्धि उदारे । ४

अंत— कवि उवाच सवैया

जिनके गुण गावत है सनकादिक औ मुष मै चतुरानन गावे ।
गुण गावत नारद वीन लये शिवपारवती प्रति नीत सुनावे ।
सु उचारत शेश हजार मुषं नहिं अंतुकवी जग भीतरु पावे
कवि सिंघ गुलाब सुता रघुनन्दन पुन्य कथा सुनि पाप मिटावे । ७५

जिनके युग भ्रात वसे नंद गाउ सु एक भले नित संग सहाई
जिन राज विभूत तजी छिन मै तन भीतरु वै मुनि रीति बनाई
जिनकी अति गोप कथा जग मै शिव औ रिष मंडल लोक जनाई ।
कवि सिंघ गुलाब सुता रघुनन्दन औध कथा जनु भाष सु नाई । ७६

इति श्री मदध्यातम रामायणौ उमामहेश्वर संवादे अयोध्याकांड नवमोऽध्यायः ।९ अयोध्याकांड समाप्तम् शुभमस्तु श्री संवत् १६१३ शाके १७७८ ।

विषय—महादेव पार्वती के संवाद के रूप में पुत्रोत्पत्ति के संबंध में दशरथ वशिष्ट जी के पास जाकर प्रश्न करते हैं और वशिष्ट जी उत्तर देते हुए पुत्रोत्पत्ति का प्रकार समझाते हैं ।

टिप्पणी—भाषा मुहावरेदार है, पर हस्तलिपि सदोष है । लिपिकाल संवत् १९१३ वि० (शकाब्द १७७८) है ।

संख्या ५४ क. अलंकार ग्रंथ, रचयिता—गुविंद, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—७ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७५, खंडित (अंत के एक दो पत्रे खंडित), रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद ।

आदि— ॥ अथ अलंकार भेद लिष्यते ॥

उपमा ॥ कवित्त ॥

मत्त जे मतंग कैसी मंद मंद चलै चाल,
पद अरविंद से सुछंद सुकुमार हैं ॥
केहरि सी षीन कटि पीन कुच कंचन
कुंभ से लसत कंठ कंबु सो सुठार है ॥
धनुष सी बाँकी भौंह बनी हैं 'गुबिंद' दृग
मृग से चपल मुष चंद ऐसो चाह है ॥
रसिक बिहारी एक प्यारी मैं निहारी
जाके अंगनि की सुषमा की उपमा अपार है ॥

× × ×

॥ तदगुनि का सवैया ॥

बेल कौ हार दियौ गुहि मालिनि प्यारी
कै हाथ गुलाब दिपानौं ॥
लायौ हिये तब चपे कौ ह्वै गयौ
मंद हसी तब कुंद कौ जान्यौ ॥
नैननि को प्रतिबिम्ब परे गुलसोसन की दुति है गई मान्यौ ॥
ऐसो कहू पलट्यौ अंग में रंग देषत ही मन मेरो बिकानौ ॥

अंत— ॥ कारक दीपक ॥ कवित्त

छोलि कटि काछिनी मै नाभि सर न्हाइ एरी,
त्रिवली तरंगनि मैं अति सरसाईए ॥
रोमावलि रूप तर नैंक विरमाइ एरी,
राची उर केसरि के रंगनि रंगाइए ॥
बाँकी वनमाल सौं लपटि उरझाइ एरी,
अंग की त्रिभंगि पर वारि वारि जाइए ॥

संदेह ॥

केसौदास सकल सुवास को निवास
यह केधौं अरविंद ही मैं कुंद मकरंद कौ ॥

विषय—प्रस्तुत 'अलंकार ग्रंथ' 'कवित्त सार संग्रह' के ही क्रम में एक ही हस्तलेख में लिपिबद्ध है। ग्रंथ में अलंकारों का निरूपण किया गया है। इस निरूपण में कोई क्रम नहीं है। उदाहरण मात्र दिए गए हैं, लक्षण नहीं। इन उदाहरणों में अधिकांश तो गुविंद कवि के हैं तथा कुछ केशवदास आदि अन्य कवियों के भी हैं।

संख्या ५४ ख. कविच सार संग्रह, संग्रह कर्ता-गुबिंद कवि, कागज—देशी, पत्र—२१, आकार—७×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद।

आदि—अथ कवित्त सार संग्रह लिष्यते। प्रथम रितु वसंत।

कवित्त

पल्लव नवल नव सुमन सुवास नव
नवल पराग श्री गुविंद वरसंत है।
नवल समीर नव भौंरनि की भीर
नव कोकिलादि कीर कुलाहल सरसंत है ॥
नव नव जोवन सुहाग भाग अनुराग
दंपति नवल नेह नवल लसंत है ॥
नवल सकल साज नवल सषी समाज,
नवल निकुंज आज नवल वसंत है। १
पल्लव अधर अरू सुमन विकास हास,
झरत पराग वर वारिज वदन मैं ॥
भ्रमत भ्रमर नैन कुच फल पिक बैन
स्वास सुख दैंन जानी त्रिविध पवन मैं ॥

रूप गुन जोबन सुहाग भाग अनुराग,
नाना मौर मंजरी गुविंद प्रीति वन मैं ॥
कीनौं बस कंत हुलसंत विलसंत आली
सहज वसंती सलिसंत तेरे तन मैं ॥

अंत—रूप तिहुँ लोक कौ अकेली तैं अनूप पायौ,
गायौ जन पंडित अठारहु पुरान मैं ॥
राम के निहोरैं घाम सीत हूँ मैं आवै जिनि,
कहै 'कासी राम' और कहाँ कहौं जानि मैं ॥
तेरो मुष देषत घनेरौ उतपात होत,
मेरौ कह्यो मानि सोर परैगो जिहान मैं ॥
सारथी समेत सूर मूरछि गिरैगौ आली,
भटकत फिरैगौ रथ षाली आसमान मैं ॥

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'कवित्तसार संग्रह' है। इसमें विविध कवियों की ऋतु वर्णन विषयक रचनाएँ हैं। कवित्त वसंत ऋतु के वर्णन से प्रारंभ होते हैं और हेमंत पर समाप्त होते हैं। ऋतुओं के साथ साथ उनके विहारों का भी वर्णन है, जैसे—वर्षा का हिंडोला तथा शरद का रास।

जिन कवियों की रचनाएँ प्रस्तुत संग्रह में आई हैं उनके नाम ये हैं :—

१—गोविंद या गुबिंद
२—देव
३—कालिदास
४—केशवदास
५—ठाकुर
६—भवानी
७—घासीराम

उपर्युक्त कवियों में गुविंद भवानी तथा घासीराम नवीन हैं।

टिप्पणी—प्रस्तुत संग्रह में गुविंद की रचना अपेक्षाकृत अधिक है इसलिये उसी को संग्रहकर्त्ता माना है। प्रस्तुत संग्रह जिस हस्तलेख में है उसमें अलंकार ग्रंथ और 'प्रेमबत्तीसी' भी लिपिबद्ध हैं।

संख्या ५५ क. चौरासी वैष्णवों की वार्त्ता, रचयिता—गोकुलनाथ, स्थान—गोकुल, कागज—हाथ का, पत्र—८०, आकार—६½×५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—११२०, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री मुरारीलाल जी केडिया, मुहल्ला नंदनसाहु, बनारस।

आदि—सो तातें परमानंद स्वामी ने विरह के पद गायो

॥ विहागरो ॥

व्रज के विरही लोग विचारे ।
विना गोपाल ठगे से ठाढ़े अति दुर्लभ तन हारे ॥ १ ॥
मात जसोदा पंथ निहारे निरखति सांझ सवारे ॥
जो कोई कांन कांन कहि बोले अखियन बहत पनारे ॥ २ ॥
इह मथुरा काजर की रेखा जे निकरे ते कारे ॥
परमानंद स्वामी बिनु ऐसे जैसे चंद बिनु तारे ॥ ३ ॥

अंत—पत्र ८०, कृष्ण की वार्ता का अंशः—

यह पद गाय कें कृष्णदास ने श्री गुसांई जी सो विनती करी जो महाराज मेरो अपराध क्षमा करिये । तब श्री गुसांई जी ने कह्यो तुम्हारो अपराध श्रीनाथजी क्षमा करेंगे । सो श्री गुसाईं जी के वचन से श्रीनाथ जी कृष्णदास को अपराध क्षमा कीयो ।

विषय—वार्ता की प्रस्तुत पोथी में परमानंद की वार्ता है उसके पश्चात् वनयात्रा का वर्णन है । तत्पश्चात् कुंभनदास और कृष्णदास की वार्ताएँ हैं । पोथी अपूर्ण है ।

टिप्पणी—प्रस्तुत 'वार्ता' व्रजभाषा गद्य का उदाहरण है । यह अपूर्ण है और इसमें गुसाईं जी की लिखी 'वनयात्रा' भी सम्मिलित है । इसके प्रस्तुत हस्तलेख की लिपि सुंदर है ।

संख्या ५५ ख. चौरासी वैष्णव की वार्ता, रचयिता—गोकुलनाथ (स्थान—गोकुल), कागज—देशी, पत्र—७६ से १७६ तक, आकार—७×५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८००, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य (व्रजभाषा), लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाबा गोपालदास जी, चैतन्यरोड, बनारस ।

आदि—७६वें पत्र से उद्धृत :—

बहुत उत्साह भयो । तब स्त्री ने कही जो मैं तुम्हारे साथ दर्शन को आऊँगी ॥ तब माहो जो पटेल ने कही जो हों तो अकेलो ही पावन चल्यो जाऊँगो तातें तू कैसें आवेगी तब स्त्री नें कही जो में पावन चली आऊंगी । मेरे कछू लरिका तो नांही रोवत ॥ तव माहो जी ने कही जो आपन दोऊ जने जांही तो घर कौन के भरोसे छोड़े ॥ तब स्त्री ने कही जो मेरे कछू घर सों प्रयोजन नहीं ॥ तातें में तुम्हारे संग सर्वथा आऊँगी ।

अंत—१७६ वें पत्र से : —

मति श्री गुसांई जी नें समझी होइ जो कोठारी ने बीनती करवाई होइगी ॥ पाछें कोठारी ने श्री गुसांई जी सों वीनती करी जो राज मो कों तुम्हारे चरणारविंद विना काहू और बात की अपेक्षा नाही । ओर राज नें यह वचन कह्यो जो आगे इनकी यह दिशा रहेगी नाहीं सो काहे...... ।

विषय—चौरासी वैष्णवों की वार्ता हिन्दी साहित्य की प्रसिद्ध पुस्तक है । इसमें वल्लभाचार्य की सेवा में उपस्थित रहनेवाले चौरासी पुष्टिमार्गी भक्तों का वर्णन है ।

टिप्पणी—यह पुस्तक गो० गोकुलनाथ जी कृत बताई जाती है। इसका प्रस्तुत हस्तलेख जीर्ण शीर्ण और अत्यंत शोचनीय दशा में है। इसमें आरंभ के ७५ पत्रे नहीं हैं। अंतिम पत्र की संख्या १७६ है। लिपि इसकी सुंदर है।

संख्या ५५ ग. चौरासी वैष्णवों की वार्ता, रचयिता—गोकुलनाथ (स्थान-गोकुल), कागज—देशी, पत्र—कुल १०३ (४ पत्र से ४३, ४५ से ६१, १४७ से ४१३ खंडित हैं।) आकार—११ × ८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०३७, खंडित रूप—प्राचीन तथा छिन्न भिन्न, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री० बा० बालकृष्ण दास जी, चौखम्बा, बनारस।

आदि—२४वें पत्र से उद्धृत :—

तब तुलसा ने या वैष्णव सों कहो जो उठो स्नान करि कें महाप्रसाद लेउ। तब वा वैष्णव ने कही जो मैं तो अपने घर जाइकौ स्नान करुंगो ताको कारन यह जो॥ महा प्रसाद की नाही करी॥ और ज्ञाति व्योहार के लीएँ लीयो नाहीं॥ सो तुलसा अपने मन में समझ गई॥ तातें वहुत आग्रह हू नाहीं कियो॥ यह गौड़ ब्राह्मण हतो और लीला में श्री ललिता जी की सषी हे। तहाँ सौर भाईन को नाम हें। इनके अंग ते इतर गुलाब की सुगंध आवती सो तुरसा के वश तो श्री मथुरानाथ जी हते॥ ताते वह वैष्णव श्री ललिता जी की सषी हे और तुरसा चंपकलता की सषी हे॥ तातें महा प्रसाद न लीयो॥ जो श्री ललिता जी की आज्ञा बिना कैसे लऊँ॥ सो वह वैष्णव अपने घर उठि गयो॥ तब तुलसा के मन में बहुत खेद भयो जो मेरे घर ते वैष्णव भुषो गयो॥

अंत—३४९ वें पत्र से उद्धृत :—

सूरदास जी की वार्ता से

सो सारस्वत ब्राह्मण है। सूरदास जी दिली से या ओर सीही गाम हे जहाँ परीक्षत के बेटा जन्मे सो जन्मत ही नेत्र मांई ताकौं आंधरो कहियै सूर न कहियै सो या प्रकार सो सूरदास जी प्रगटे सो माता पिता बहुत वाति न करें जो नेत्र विना को पुत्र कहा। सो सुरदास जी बरस छह के भए तवपि ताको एक जिजमान ने दोई मोहर दीनी। ईन के घर में कछू खान पान न हतो। सो पिता दोई मोहर एक कपड़ा के टूक में बांधि के एक गवाजा में धरयो सो मोहर मुसा ऊपर छांति में ले गयो तव माता पिता दोऊ छाती कूटी बहुत रोवन लागे। घर में कछू है नहीं अब कैसी करें।

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ प्रसिद्ध ८४ वैष्णवों की वार्ता है। पुस्तक पूरी नहीं मिली। प्राप्तांश में निम्नलिखित वार्त्ताएँ मिलती हैं :—१-तुलसी २-पद्मनाभ ३-रघुनाथदास ४-सेठ पुरुषोत्तमदास पुत्र तथा पुत्री सहित ५-रामदास ६-गदाधरदास ७-माधोदास ८-हरिवंश पाठक ९-गोविंददास १०-आभा क्षत्राणि ११-गज्जन १२-नरायणदास १३-एक क्षत्राणी १४-सूरदास।

उपर्युक्त वार्ताओं में सूरदास की वार्ता ध्यान देने योग्य है। ८४ वार्ता में एक बात विशेष यह है कि जिन भक्तों का वर्णन हुआ उनके—कृष्ण के अमुक सखा अथवा अमुक सषी करके कल्पित नाम दिए गए हैं।

टिप्पणी—इस ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति का लेख दोषपूर्ण है। भाषा की दृष्टि से भी कुछ प्रयोग चिंत्य हैं, जैसे :—१-तव आचार्य महाप्रभु कहे, २-अकाज (प्रांतीय प्रयोग)। विदित होता है कि इसके लिपिकर्त्ता पूर्वी प्रदेश के हैं। पुस्तक आदि, अंत और मध्य से खंडित और अव्यवस्थित है। सूरदास जी का वृत्तांत उल्लेखनीय है जिसकी संक्षिप्त रूप रेखा नीचे दी जाती है :—

'जन्मस्थान, सीही; सारस्वत ब्राह्मण, जन्मांध, छः वर्ष की अवस्था में घर से निकले, १६ वर्ष के हुए तो प्रतिष्ठा होने लगी और गऊघाट पर रहे। उस समय महाप्रभु वल्लभाचार्य ने इन्हें अपना लिया।'

वार्त्ता के अनुसार सूरदास के पद फारसी लिपि में अकबर ने लिखवाए थे। संभव है, कभी भाग्यवश वह प्रति मिल जाय।

संख्या ५५ घ. चौरासी वैष्णवों की वार्ता, रचयिता—गोकुलनाथ, कागज—देशी, पत्र—२७२, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८५६, खंडित, रूप—सुंदर, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८४९ वि०, प्राप्ति-स्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी।

आदि—जो श्री आचार्यजी पधारे हैं। तब कृष्णदास ने कही। आज्ञा नाही कृष्नदास जब सीधा ले चले तब दामोदर दास पाछें पाछें चले घोड़ा पर पढ़वाइ दिये तब श्री आचार्य जी नें कृस्नदास को दूरी से देखे। पाछे ते दामोदरदास कों देखे जब दामोदरदास दंडौत किए तब श्री आचार्य जी कृस्नदास सों पूंछे जो तें या सों क्यों कही ॥ तब दामोदर दास कहे जो महाराज ईन कछुवाही कह्यों हो याके पाछे पाछे आयो हो। तब श्री आचार्य जी दामोदरदास सों कही जो पत्र लाउ तब विनती किये जो पत्र को कहा काम हैं पाछें पत्र मंगायो तब श्री आचार्य जी नें पत्र वाच्यो पत्र को अभिप्राय दामोदर दास सों कहे। तब श्री आचार्य जी को अपने घर पधराई लाए।

अंत—तब अच्युत दास ने श्री आचार्य जी की पादुका जी के मंदिर को द्वार खोल्यो तब देखें तो श्री आचार्य आपु बेठे कहत हे। तब उठि के दंडोत प्रणाम कियो। तब श्री महाप्रभु कहा यह तुम मन में कछु संदेह मति करहु यह हमारी लीला है। अच्युत-दास एसे भगवदी कृपापात्र हुते ॥ इति श्री आचार्य जी के से······तथा श्री गुसांई जी के सेवक तथा श्री आचार्य जी की तथा श्री गुसांई जी की वार्ता समाप्ता सुभमस्तु ॥ श्लोक ॥ चिंता संतान हंतारो यत्पदां वुजरेण—

रचीयानां तान्निजाचार्यान्प्रणमामि मुहुर्मुहुः ॥ संवत् १८४९ कातीमास कृष्णपक्ष पंचमीय शुभ वासरे संपूर्णं ॥ ६ ॥

विषय—वल्लभ सम्प्रदाय के अनुयायी गृहस्थ और विरक्त भक्तों की वार्ताओं का संग्रह। इसमें निम्नलिखित भक्तों का उल्लेख है:—१-कृष्णदास २-पद्मनाभदास ३-कन्नोजिया तुलसी की वार्ता ४-रघुनाथदास ५-लक्ष्मणभट्ट, ६-सेठ पुरुषोत्तमदास ७-उनकी बेटी रुक्मणी की वार्ता ८-रामदास सारस्वत ९-वेणीदास १०-माधोदास ११-अंमांक्षत्राणी कड़ावाली १२-गज्जनधावनाक्षत्री १३-महावन की क्षत्राणी १४-जयदासस्रूर क्षत्री १५-देवाकपूर क्षत्री १६-दिनकरदास मकुंददास १७-प्रभुदास राजघाट आगरेवाले १८-पुरुषोत्तमदास सेरगढ़ वाले १९-तिपुरदास कायथ, २०-पूर्णमल अंबालेवाले २१-जादवेंद्रदास २२-गुसाईं दास सारस्वत २३-माधवभट्ट २४-गोपालदास २५-पद्मरावत २६-जोशी जगन्नाथ की माता २७-महीधर २८-राणाव्यास २९-रामदास सावोरा गुजराती ३०-ईसुरदुबे ३१-एक राजपूतनी ३२-वासुदेवदास ३३-बाबा वेणू और कृष्णदास घर घरिया ३४-जगतानंद ब्राह्मण थानेसर के ३५-एक सूनार की वार्ता ३६-नारायणदास ठठेर ३७-एक वैरागी ने शालिग्राम पूजो ताकी वार्ता ३८-भगवान दास भितरिया ३९-दामोदरदास कायस्थ की वार्ता ४०-सिंहनद की विधवा क्षत्राणी की वार्ता ४१-कविराज ब्राह्मण की वार्ता ४२-गडू स्वामी की वार्ता, जनार्दनदास गोपालदास ४३-श्री गुसाईं जी की वार्ता ४४-आन्योर को एक व्रजवासी अपने बेटा को व्याह कियो ताकी बार्ता ४५-अच्युतदास ब्राह्मण ४६-कन्हैयाल क्षत्री ४७-नारायणदास अंबाले वाले ४८-पाथो गुजरी की वार्ता ४९-स्वामी कुंभनदास ५०-अलीखांन पठान ५१-रूप पुरा के गोपालदास ५३-हरिदास खवास ५४-आचार्य के अयोध्या पधारने की वार्ता ५५-भाईला कोठारी के भतीजा ५६-माणिकचंद ५७-मुरारिदास ५८-संतदास, चोपड़ा ५९-सुंदरदास माहजी ६०-जनार्दनदास चोपड़ा ६१-परमानंद दे स्वामी ६२-चाचाहृ वंशजी की वार्ता ६३-वासुदेव दास छवड़ा ६४-नागजी भट्ट ६५-माधवदास भटनागर कायथ ६६-कायथ सिंहाराय के बाप बेटा तिनकी वार्ता ६७-श्री गुसाईं जी की वार्ता के साथ कुछ और वार्ताएँ हैं जो एक दूसरे के अंतर्गत हो गई हैं।

संख्या ५६. रास पंचाध्यायी, रचयिता—गोपाल (जनगोपाल), कागज—देशी, पत्र—२०, आकार—११×५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४६५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७५५ वि०=सन् १६९८ ई०, लिपिकाल—१८८१ वि०, प्राप्तिस्थान—पंडित श्रीधर मिश्र जी ज्योतिषी, मोहल्ला—सदावर्ती आजमगढ़, जिला—आजमगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः। अथ रास पंचाध्याई लिष्यते॥

॥ छप्पै ॥

श्रीराधा चरणारविंद आनंद मोदवर।
नव पल्लव दल मंजु ललित जावक जुत सुंदर॥

नष प्रसून जनु कुंद चंद सम रूप पयूषै ।
मनि नूपुर जगमगहि फेलि रहै विविध मयूषै ॥
अभिराम सकल छबि धाम मनु काम वाम वंचत रहत ।
दुषदंद फंद दंदन सकल सुनंद नंदन बंदन करत ॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

ठकुरायन श्री राधिका ठाकुर नंद किशोर ।
कृपा कटाछ दुहुन की सरसित जन की ओर ॥ २ ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

इहि विधि सुनि नृपराज मनि हरि अद्भुत रसरंग ।
निसा रची षटमास की मिलि गोपिन के संग ॥ ४ ॥

॥ गीतिका छंद ॥

इहि भाँति रासविलास विलसत रसिक सुंदर स्याम ।
वंदि चरन सरोज गोपी चली धामनि धाम ॥
जोग जज्ञ अनेक व्रत तप दान तीरथ श्रास ।
लहै फल पल येक मैं नर श्रवन सुनि हरिदास ॥
कटै संकट सकल निहचै त्रिविध पातक अंग ।
भगति जुत भगवान की जो सुनैरुधि रसरंग ॥
करै जय जय धुनि सकल सुर मुनि भरे सब अहलाद ।
सुधासिंधु समान भूतल भूप सुक संवाद ॥
मदन मोहन माधुरी छबि निरषि लोचन कोर ।
कलपरू 'गोपाल जन कौं' सदी जुगल किशोर ॥ १४ ॥

दोहा

सुमति भई हरि भगति तें बरनी कथा रसाल ।
चारि पदारथ दाहिने रसिक राय गोपाल ॥ १५ ॥
संवत सत्रह सैं समैं पचपन भादव मास ।
आठौ बुध गोपाल जन वरन्यो रास विलास ॥ १६ ॥

इति श्री मद्गोपाल विरचत्तायाँ रहस्य चूड़ामणि विलास विलासितायाँ गोपीजन गोपाल विनोद वर्ननं नाम पंचमोध्याय: ॥ ५ ॥ संवत् १८८१ ॥

विषय—गोपियों के साथ श्री कृष्ण की रासलीला का वर्णन ।

रचनाकाल

संवत सत्रह सैं समैं पचपन भादब मास ।
आठौ बुध गोपाल जन वरन्यो रास विलास ॥

संख्या ५७ क. कर्म शतक, रचयिता—गोपालदास, स्थान—रायपुर (मध्यप्रांत) कागज—आधुनिक, पत्र—७, आकार—८½×६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, बनारस ।

आदि—अथ कर्मशतक ॥

जै जै सकल लोक चिंतामनि शंष चक्र कर धारी ।
धरनी धरन हरन बहु शंकट हरिभक्तन हितकारी ॥
करता करम धरम के सब दिन पाप पुण्य परगासा ।
सकल भूत मय सकल कला करि करते षूब तमासा ॥ १ ॥
मनसा सकति त्रिगुन तें तृभुवन सुर नर श्रप उपजाए ।
सुमति कुमति तें जीव जड़न कों नाहक नरक पठाए ॥
जिन जैसा गुन ग्रहै अलष तेहि तैसहिं देव अवासा ।
आप तमास गिरि तै साहेव लषते षूव तमासा ॥ २ ॥
सबको साहेब एक है रचना किये अनेक ।
जकरे करम जंजीर सों जीव न उबरे एक ॥ ३ ॥

॥ छप्पै ॥

कर्ममूल करतार पार पावै नहि कोई ।
ब्रह्म विष्णु शिव शक्ति आदि गति लहै न सोई ।
रचना सकल चरित्र लोक लोकन उपजावै ।
सुर नर मुनिहूँ न सदा नाच बहु अमित नचावैं ।
आगम समस्त सुविचार हित चितहुँ सुमति सुधर्म कों ॥ ४ ॥

× × ×

चौबोला

पासवान अपमारग सिगरे कलिहिं नृपति के भारे ।
करत प्रपंच रहत निसिवासर राह सुमति के मारे ॥
परधन परनारी पर निंदा सब पर नर करि आसा ।
साहेब के दरबार तिनहुँ का ह्वैगा षूब तमासा ॥ ५७ ॥

× × ×

छप्पै

फैलि रहे चहुँ ओर प्रबल कलि नृपति चमू पति ।
जोरि जंग जालिम समस्त मंड्यो हजबल अति ।
राति दिना दव देत लेत सब लूटि षजानो ।
जप तप संजम नेम धर्म के मारे थानो ।
थरहरति संत संकनि अमित सुपुन्दहि करत अपार हैं ।
सुनि करत साज सुकृत समर सुदम नगारे द्वार हैं ॥ ६० ॥

दोहा

जोधा सुकृत राज के धाए सब समरथ्थ ।
षंडहि पाप प्रचंड कों धनुक वान धरि हथ्थ ॥ ६१ ॥

इति श्री हैहयकुल कमल प्रकाश भास्कर प्रताप राजाराजसिंह चूड़ामणि चाणक गोपाल विरचितायां कर्म शतक समाप्तं शुभमस्तु ।

विषय—कर्म की प्रधानता तथा कलिगुग के प्रभाव से मनुष्य के कर्मों में काम, क्रोध, लोभ, मोह का जो समावेश हो गया है उसका वर्णन किया गया है ।

टिप्पणी—ग्रंथ के रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं । रचयिता का नाम गोपाल दास है जो रायपुर (मध्यप्रांत) के हैहयवंशी राजा राजसिंह के चाणक थे । इस बार विवृत इनके ग्रंथों में एक बात यह देखने में आई है कि इन्होंने चौबोलों के अंत में अधिकतर 'देखा खूब तमाशा' या 'खूब तमाशा' पद का प्रयोग किया है । ये पद खड़ी बोली के हैं । और संभवतः समस्यापूर्ति के लिए ये रचयिता को दिए गये थे । इनसे प्रकट होता है कि रचयिता के समय में खड़ी बोली में भी समस्यापूर्ति का प्रचलन हो गया था । प्रस्तुत 'शतक' में कवित्त सवैया, चौबोला, छप्पय और दोहा छंदों में रचना हुई है जिनकी संख्या ६१ है । विशेष के लिये देखिए माखन कृत 'श्री नाग पिंगल' एवं प्रस्तुत रचयिता कृत विनोद शतक ।

संख्या ५७ ख. कीर्ति सतक, रचयिता—गोपालदास, स्थान—रायपुर (मध्यप्रदेश) कागज—आधुनिक, पत्र—१०, आकार—८३/४ × ६५/८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी,—प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, बनारस ।

आदि—अथकीर्ति सतक ॥

सवैया

पूरन जोत प्रताप जगे जग नाग रसातल भूतल भारी ।
रूप अनंत कलामय मंडित आप अखंडित वेद विचारी ।

अंस असेषन के परवेष प्रकास गोपाल विलास विहारी।
कीरति सूरज मंडल मंडि सुधाधर मंडन की उजियारी ॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

नारायन की जोति निज जगत जीव प्रतिपाल।
अति विस्तार कीरति कला कहत वरनि गोपाल ॥ २ ॥

॥ चौबोला ॥

ऐसे जोति अखंडित मंडित वरनि विचार विचारे।
ब्रह्मा वेद निषेद भेद करि विष्णु रुद्र अवतारे ॥
कीरति प्रगट प्रकास हेत करि हृदै वेद परगासा।
पूरन अंस महासव ठाने जितने षूब तमासा ॥ ३ ॥
कीरति अजर अमर नारायन लोक लोक प्रतिराजै।
वरने वेद पुराने जोतषन अमल अमल छवि छाजै।
असभय जगत विलास हेत रचि आपु निरंतर वासा।
सकल अंस परिपूरन भीतर जाहिर षूब तमासा ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

है कीरति अति दिव्यता करि जानै जो कोई।
जुग जुगतिन के हेत कौ वरनत हैं कवि लोइ ॥ ५ ॥

अंत—

॥ कवित्त ॥

जाहिर जहान पर कीरति अमल राजै
राजै राजधानी रजताई कै गुमान है।
कै कै करतूत भोगी मेदिनी करत भोग
कामना के कामन को कलपनिधान है।
कहत गोपाल पैज प्रान प्रतिपाल
करै स्वारथ को हेत परमारथ कौ दान है।
अमित प्रजाननि कों अवनि प्रकासवान
उतपति भोगी सोई भूपति प्रमान है ॥

इतिश्री हैहय कुल कमल प्रकास भास्कर प्रताप राजसिंह चूड़ामनि गोपालदास विरचितायां कीर्ति सतक समाप्त शुभमस्तु ॥

विषय—

ब्रह्मा, विष्णु, महेश की कीर्ति का तथा कीर्ति योग्य कार्यों का वर्णन।

टिप्पणी—विशेष के लिये देखिए माखनकृत 'श्रीनागपिंगल' और गोपाल कृत 'विनोद शतक'।

संख्या ५७ ग. पुन्यसतक, रचयिता—गोपालदास चानक, स्थान—रायपुर (मध्य प्रदेश), कागज—आधुनिक, पत्र—५, आकार—८½ × ६¾ इंच, पंक्ति प्रतिपृष्ठ—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—८५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, बनारस।

आदि—

अथ पुन्यसतक ॥

॥ त्रिभंगी छंद ॥

जै जै गन नायक मंगलदायक प्रभुलायक दारिद दरनं।
जै जै वर वानि त्रिभुवन जानि सब सुषदानी तुव सरनं।
जै सुंदर वदनं सब सुप सदनं अरिमद छपनं अघहरनं।
हैहयकुल राजा रामनिवाजा जै जै कीरति उच्चरनं ॥ १ ॥

॥ छप्पै ॥

पूरन पुरुष पुरान पुन्य त्रिभुवन मे मंडन।
अजर अमर अकलंक महापापन के पंडन।
जोग जज्ञ जपतप समस्त जाके श्रुतिगावै।
परायन जप होम रूप नारायन पावै।
गोपाल भनत जिहि चरित नित सुनि मंगल जग जाहिने।
षलदल कलेस दल मलन कौं सुधर्म प्रवल जिहि दाहिने ॥ २ ॥

॥ चौबोला ॥

पुन्य प्रबल जिहि होत दाहिनो ताहिन तक्कै कोई।
तीन लोक पर अमन चलावै जो चाहै सो सोई
दिन दिन बढै घटै नहि कवहूँ जो दिलमें कोई रष्यै।
पूवी करै षलक में अच्छा पूव तमासा लष्यै ॥ ३ ॥

अंत—

जे नर महा विपय रस भूले मन मन फूले डोलैं।
भावन भगत प्रेम के द्रोही कथा न मुष से बोलैं।

महा कठोर काठ पाहन तें स्वारथ भोग विलासा ।
निहचे नरक वास तिनहीं का ऐसा षूव तमासा ॥ २६ ॥
वाढै धर्म राज रजधानी राजनीति मतभारी ।
कीरतिदान कृपाण पैज पन सुष संपति अधिकारी ।
आनंदमोद विनोद दिनहि दिन सकल वृद्धि कै छाजा ॥
सकल प्रतापवान महि मंडन राजसिंह श्रीराजा ॥ २७ ॥

इतिश्री हैहय कुल कमल प्रकास भास्कर प्रताप राजा राजसिंह चूड़ामनि चानक गोपालदास विरचितायां पुन्य सतक समाप्तं शुभ मस्तु ॥

विषय—

राजाओं को प्रजा पर न्याय पूर्वक राज्य करने का उपदेश किया गया है ।

टिप्पणी—प्रस्तुत शतक में २७ छंद हैं । विशेष के लिये देखिए, 'विनोद शतक' और माखनकृत 'श्रीनागपिंगल' ।

संख्या—५७ घ, विनोद सतक रचयिता—गोपाल दास चानक, पत्र—१०, आकार—८½ × ६¾ इंच, पंक्ति प्रतिपृष्ठ—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी,—प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी ।

आदि—

श्री गणेशायनमः ॥ श्री सरस्वत्यै नमः ॥
श्री गुरूभ्यो नमः ॥ लिष्यते विनोद सतक ॥

॥ तृभंगी छंद ॥

जैगणु नायक मंगल दायक आनंद लायक शुभकरनं ।
मंडित मनि जालं मुकुट विशालं वंदन भालं ससि धरनं ।
कर कठिन कुठारं विघन विदारं, अपरम पारं अघहरनं ।
जै सुंदर वदनं आपद हरनं तव चरनं असरन सरनं ॥ १ ॥

॥ चौबोला ॥

जुगल किसोर विनोद सरस रस वरनत विविध विहारै ।
पूरन प्रेम प्रीति निसि वासर रचे सषी सुकमारै ।
मान विरह संजोग सुरति तै सुंदरि सदा विलासा ।
बारह मास छ रितु नव कुंजन उपजै षूव तमासा ॥ २ ॥

अंत—

बहु विरोध बहु-क्रोध लोभ बहु कबहुँ न किज्जिय ।

बहु विषाद बहु वाद स्वाद बहु चित्त न दिज्जिय ।
बहु अधर्म बहु धर्म बहुँत कबहूँ नहि कारिय ।
बहु अनर्थ बहु अर्थ हेत सत्या नहिं हारिय ।
गोपाल कहत कछु मंत्र मति सुवहु विचित्र संसार पर ।
बहु गर्ब सर्व दुष मूल है सुअति अधिक उतपात नर । ५३ ।

इतिश्री हैहय कुल कमल प्रकास भास्कर प्रताप राजा राजसिंह चूड़ामणि चानक गोपालदास विरचितायां विनोद सतक समाप्त ॥

शुभं भवतु

विषय—

राधाकृष्ण का कुंज विहार तथा बारहमासा वर्णन ।

टिप्पणी—इनके प्रस्तुत रचनाओं—श्रृंगार शतक, कीर्ति शतक, पुण्य शतक, विनोद शतक, वीरशतक और कर्मशतक—के रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं । रचयिता हैहय वंशी राजा राजसिंह (रायपुर, मध्यप्रदेश) के चाणक थे । इनके पुत्र का नाम माखन था जो 'श्रीनागपिंगल' के रचयिता थे । दोनों पिता पुत्र उपर्युक्त राजा के ही आश्रय में रहते थे । प्रस्तुत रचनाओं को 'शतक' लिखा गया है, पर किसी में भी सौ छंद नहीं पाए जाते । काव्य की दृष्टि से वे सभी रचनाएँ अच्छी हैं । इनमें दोहा चौबोला, सवैया, कवित्त और छप्पय छंदों में रचनाएँ की गई हैं । चौबोलों के अंत में 'देखा खूब तमास' या 'खूब तमाशा देखा' खड़ी बोली के पद प्रयुक्त हुए हैं । हो सकता है, इनपर समस्या पूर्ति की गई हो । इससे यह प्रकट होता है कि उस समय खड़ी बोली में समस्या पूर्ति का प्रचलन हो गया था यद्यपि प्रस्तुत रचयिता ने ब्रजभाषा में इनकी पूर्ति की ।

संख्या ५७ ङ. वीर सतक, रचयिता—गोपालदास (रायपुर मध्यप्रांत), कागज—आधुनिक, पत्र—५, आकार—८½×६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—९७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी ।

आदि—श्री गणेशायनमः । अथ वीर सतक ।

जै रघुवीर भीर भय भंजन धनुक वान कर धारी ।
सीतावर सुंदर वर श्रीवर मंगल वर सुषकारी ।
सकल धर्म बर भूमि भूपवर समर सुभट वर सोहैं ।
कलपलता वरदान मानवर त्रिभुवन वर मन मोहैं ॥ १ ॥
वरनत वीर सतक वरदायक समरवीर रस बानी ।
सब सुष बढ़े सदा सुभरन के पानी चढ़े कृपानी ।

वीरभूमि भूपाल भोगियत वली विरज छबि छाजै ।
राजसिंह वीराधि वीर नृप सदाराज श्री राजै ॥ २ ॥

जेते वीर भए वसुधामैं तिन कीरति है छायो ।
करि करतूति अभय रजतातैं अपने साक चलायो ।
वानो विरद लाज ते भूतल वाढ़े सुजस विलासा ।
सूरजमंडल वेधि वीर सब देखे षूब तमासा ॥ ३ ॥

॥ दोहा ॥

राजस तामस सातकहिं त्रिविध वीर सब धर्मं ।
धरे धरनि संसार हैं आप आपने कर्मं ॥ ४ ॥

अंत—स्वामी भगतभाव गुन वंदन विप्र भगत हितकारी ।
दान धर्मं वृत्त दाया करिके भक्ति सदा सुविचारी ।
सुद्ध हृदय अति सुद्ध चाहिये सत सीलहिं की आसा ।
चारिहुं वरन राह चल जानै देषै षूब तमासा ॥ ३७ ॥

॥ दोहा ॥

इहि विधि चारो वरन के वरने वीर समाज ।
चानक कवि गोपाल किय राजसिंह नृपराज ॥ ३८ ॥

इति श्री हैहयकुल कमल प्रकास भास्कर प्रताप राजाराजसिंह चूड़ामनि चानक गोपाल विरचितायां वीर सतक समाप्त शुभं भवतु ॥

विषय—वीरों का सात्विक, राजस और तामस के अनुसार भेद मानकर छः प्रकार के वीरों, यथा:—

सत्यवीर, दानवीर, दयावीर, उत्साह वीर, संग्राम वीर और विद्यावीरों का वर्णन किया गया है ।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना में सात्विक, राजस और तामस के अनुसार छः प्रकार के वीरों का वर्णन है :—

सत्यवीर[1] सत्यादिक कहिये दानवीर[2] व्रतधारी ।
दयावीर[3] जीवन पै द्रव उत्साह वीर[4] सुपकारी ॥
समर सूर संग्रामवीर[5] कहि विद्यावीर[6] बषाने ।
ए षटवीर और पुनि कहिए आडंबर करि जाने ॥ ११ ॥

इन छः वीरों के भी उपर्युक्त गुणों के अनुसार उपभेद माने गए हैं । विशेष के लिये देखिए, 'विनोदशतक' और माखनकृत 'श्रीनागपिंगल' के विवरण पत्रों की टिप्पणियाँ ।

संख्या ५७ च. सिंगार सतक, रचयिता—गोपालदास चानक, स्थान—रायपुर (मध्यप्रांत), कागज—आधुनिक, पत्र—६, आकार—८½×६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस।

आदि— ॥ सिंगार सतक ॥

॥ प्लवंगम छंद ॥

जय प्रभु सुंदर स्याम महा अभिराम हैं।
काम विलास विमोहित गोकुल वाम हैं।
नैन निरूप निहारि हिये हरषाइए।
आनंद मोद विनोद भरे गुन गाइए ॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

रसिकराय गोपाल हैं नव रस के रस लेत।
छति रूपक श्रृंगार तें वृजबालनि सुप देत ॥ २ ॥

॥ पद्मिनीलक्षण ॥ यथा ॥

फुंदन सरीर नव कुंकुम को उवटन कैंधौं
रूप पोयी काढी सौंनिक मदनु है।
सुमन सुगंध अंग चाह को अहार जनु
मंद मुप हांस कुंद कलिका रदनु है।
साँची कै सीढारी वृषभानु की दुलारी प्यारी पूरण मयंक सम राजत वदनु है।
ऐसी मन भावती को भावते गोपाल लाल देपौ किन जाय वृषभानु को सदनु है ॥३॥

॥ अथ चित्रिनी लक्षन ॥

आजु हौं गई वृषभानु जू के भवन माँझ देषन के हौंस चढि औचक अटारी मैं।
कैधौ हैं पठाई कोक कारिका कों काम नाहि निपट पहिचानी ताहि देव की कुमारी मैं।
सुषमा बषानवे कों एक मुप रसना है तरुनी जितेक से लै सर्व वारिडारी है।
चित्रित तिहारों रूप रमन विचित्रता सों चित्रनीं सो मोहि चाहि राधे चित्र सारी मैं ॥४॥

अंत— ॥ रौद्ररस कवित्त ॥

फारि डारे पंभ कों फरांक दै दनुज उर
गारिडारे बलिदेव संकट विचारियो।
जारिडारे सगर के साठिहूँ हजार सुत
तारिडारे नृगु सें असेष निरधारियो।
मारिडारै ऐंड करि आए जे दनुज वली
कुवलयदतारे हूँ को पेजतैं संघारियो।

जैसे रंग भूमि माह मल्लन दरेरि मारे
दावादार दारि दै दरेरि किन मारियो ॥ ३३ ॥

॥ दोहा ॥

जुगल किसोर विलास रस वरनत कवि गोपाल।
हरषे सदा विनोद सुनि राजसिंह भुवपाल ॥ ३४ ॥

इति श्री हैहय कुल कमल प्रकाश भास्कर प्रताप राजा राजसिंह चूड़ामणि चानक गोपालदास विरचितायाँ श्रृंगार शतक समाप्तं शुभं भवत ॥

विषय--नायिका भेद और रसों का संक्षेप में वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना में नायिका भेद का वर्णन अत्यंत संक्षिप्त है। केवल वीर, अद्भुत, भयानक और रौद्र रसों का वर्णन हुआ है, वह भी बहुत संक्षेप में। विशेष के लिये 'विनोद शतक' और माखन कृत 'श्रीनाग पिंगल' की टिप्पणियाँ द्रष्टव्य हैं।

संख्या ५८. वाणियाँ, रचयिता—गोपीचंद। इनके लिये कृपया देखिए, 'गोरखनाथ और सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या ५९।

संख्या ५९. सिद्धों की वाणी, रचयिता—गोरखनाथ, भरथरी, चिरपट, गोपीचंद, जलंधरी आदि। कागज—देशी, पत्र—४९, आकार—$10\frac{1}{2} \times 5\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६७५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपि-काल—१८५५, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस। (हस्तलेख, सं० ८७३)

आदि—स्वामी जी श्री श्री श्री श्री श्रीगोरखनाथ जी कौ कृत लिष्यते। अथ ॥ ग्रंथ गोरषबोध ॥ गोरषोवाच ॥

स्वांमी जी तुम्हें गुरू गुसांई। अम्हेज सिष सबद एक बूझिवा। दया करि कहिवा मनहु न करिवा रोसं आरंभी चेला कैसें रहै। सतगुर होइ सपूछ्या कहैं ॥ १ ॥

॥ श्री मछिंद्रोवाच ॥

अवधू रहिबा तौ हाटैं बाटैं रूष वृष की छाया।
तजिवा तौ कांम क्रोध लोभ मोह संसार की माया ॥
आपसूं गोष्टि अनंत विचार। पंडित निंदा अल्पअहार।
आरंभी चेला यहि विधि रहै। गौर्ष सुणौं मंछिंद्र कहै ॥

× × ×

॥ अथ पद ॥ राग आसावरी ॥

मारौ मारौ श्रपणी नृमल जल पैठी ।
त्रिभुवन डस तां गोरषनाथ दीठी ॥ टेक ॥

मारिल्यौ श्रपनी जगाइल्यौ भूरा । जिन मारी श्रपणी ताकौ कहा करै जौंरा ॥१॥
श्रपणी कहै मैं अमला मलीया । ब्रह्मा विष्ण महादेव छलीया ॥२॥

× × ×

बांधौ बाधौ बछड़ा पीवौ षीरं । कलि अजरांवर होइ सरीरं ॥ टेक ॥
बारह बछड़ा सोल्है गाई । धेनि दुहावत रैनि विहाई ॥
अधराधरे धेनि कचरन षाई । पाँच ग्वालिया कूं मारण ध्याई ॥ २ ॥
आकास की धेनि त्रिभवन के राया । सींगन पूछ वाकै पुर नहीं काया ॥३॥
इन सुरही का दूध ज मीठा । पीवै गोरषनाथ गगन बईठा ॥४॥२॥

॥ अर्थ ॥

बाणी बछा मन पवन की कला ॥ टेक ॥ धेन मनसा ॥ १ ॥
अधरा ब्रह्म रस । कटरा करम पंच भू १ धेनि मनसा गगन ब्रह्म ॥ ३ ॥

× × ×

॥ अथ भरथरी जी की सबदी ॥

अहंकारे प्रथमी षीणी पहोपे षीणां भुंरा ।
सति सति भाषंतरा जोगी भरथरी पिंडका वैरी जुंरा ॥ १ ॥

दुषीया रोवंत सुषीया हसंत केला करंत कांमणी ।
सूरा जूझंत मुड़ भाजंत सति सति भाषंत राजा भथरी ॥ २ ॥

दुषी राजा दुषी प्रजा दुषी वांभण वाणीया ।
सुषी राजा भरथरी ज्यन गुर का सबद पिछांणीयां ॥ ३ ॥

॥ अथ चिरपट जी की सबदी ॥

कायातरवर माकड़ चित । डालै पातै भरमै नित ॥
कलपै झिलपै दहं दिस जाइ । तिस कारण कोई सिध न थाइ ॥ १ ॥

ढीलक छोटी मन भंग फिरै । धरि धरि नैन पसारा करै ॥
षाया झरै न वाचा फुरै । ता कारणि भूंदू झरि झरि मरै ॥ २ ॥

मन चंचल पवनां चंचल । चंचल बाई धारा ।
या घरिमधि तीनूं चंचल क्यूं राषिवा झरता पिंड का द्वारा ॥ ३ ॥

× × ×

॥ गोपीचंद जी की सबदी ॥

राजा तजि लै पूता पाट तजिलै तजिलै हस्ती घोड़ा।
सति सति भाषतं माता मैंणावती रे पूता कलि मैं जीवन थोड़ा ॥ १ ॥

राजा के घर रांणी होती माता हमारै होती भाई जी।
सत षणै चौबारे बैठंती माता यहू ग्यांन कहाँ तै ल्याई जी ॥ २ ॥

गुरू हमारै गोरष बोलीए चरपट है गुर भाई जी।
एक सबद हमकूं गुरु गोरषनाथ दीया सो वो लष्या
मैंणांवती माई जी ॥ ३ ॥
मन चलंता पवन चले पवन चलंता विंद।
विंद चलंतां कंध पड़ै यूं भाषै गोपीचंद ॥१९॥

× × ×

॥ अथ जलंधरी पावजी की सबदी ॥

सुनि मंडल मैं मनका बासा। जहां प्रम जोति प्रकासा॥
आपै पूछै आपै कहै। सतगुर मिलैतै प्रमपद लहै॥
एक अचंभा ऐसा हुआ। गागर मांहि उलास्या कूवा॥
वोछी नेज पहूचै नांही। लोक पाया सायरि मरि जांही ॥ २ ॥

× × ×

॥ पृथ्वीनाथजी की सबदी ॥

हंस चढ्या साइर तिरूं सिंघ चढ्या बन मांहि।
हस्ती पाषर मेल्हि कै मन सूं झूझैण जांहि ॥ १ ॥
सोउं तौ हाथि न आवई जागूं तौ भागा जाइ।
मनही सेतो झूझना बाघ हूवा जगपाइ ॥ २ ॥

× × ×

मन मुद्रा सुरति सिका सतगुर सबदां वेध्यां कांन।
जोगी का घर कठिन है पृथीनाथ कहै बैकुंठ आसांन ॥ ४ ॥

× × ×

॥ चौरंगी नाथजी की सबदी ॥

मूल सींचो रे अवधू मूल सींचौ ज्यूं तरवर मेल्हंत डालं।
अम्हे चौरंगी मूल सींचीया अनभै उतर्या पारं ॥ १ ॥
माली लो भल माली लो सींचै सहज कियारी।
उन मन कला एक पहौपनि पाया आवागवन निवारी ॥ २ ॥

मारिबा तौ मनमस्त मारिबा लूटिबा पवन भंडारं ।
साधिबा तौ पंचतत साधिबा सेयवा तौ निरंजन निराकारं ॥ ३ ॥

× × ×

॥ कणेरीपावजी की सबदी ॥

सगौ नहीं संसार चित नही आवै बैरी ।
निरभै होइ निसंक हरष मैं हस्यौ कणेरी ॥ १ ॥
हस्यौ कणेरी हरष मैं हस्यौ कणेरी ॥ १ ॥
हस्यौ कणेरी हरष मैं एक लहै आरन ।
जुए विछोही जो मरद मदन विछोह्या मन ॥ २ ॥
मनवा मेरा बीज बिजोवै पवना बाडिलगावै ।
चेतन रावल पहरै बैठा मृघा पेत न षावै ॥ ३ ॥

× × ×

॥ हालीपावजी की सबदी ॥

अजपा जपौ रे अवधु अजपा जपौ पूजो निरंजन थांन ।
गगन मंडल मैं जोति लषाई देषि धरेवा ध्यानं ॥ १ ॥
ल्यौकी आंषि चेतन की पांषि । दिबि रहै दिष्टि सुनि कूं भांषि ॥
अगम अगोचर तहाँ गुरुकुल है ।
एतत देषि सिधहालीपाव कहै ।

× × ×

॥ मीडकीपावजी की सबदी ॥

पिंड चलंतां सबको देषै प्राण चलंत अकेला ।
प्रांन चलंता जे नर देषै तास गुरू मैं चेला ॥ १ ॥
कहा बसै गुरु कहा बसै चेला । कूण सपेत्र कैसैं मेला ।
ऐसा ग्यान कथौ रे भाई । गुर सिष की कूंणवो लषाई ॥ २ ॥

× × ×

॥ हणवंतजी की सबदी ॥

वक्ता आगै श्रोता होइबा धींग देषि मसकीनं ।
सिध कै आगै साधिक होइबा यूं सति सति भाषंत हणवन्तबीरं ॥ १ ॥
बेद पढे पढि पंडित मूवा पढि गुणि भाट नगारी ।
राज करंता राजा मूवा रूप देषि देषि नारी ॥ २ ॥

× × ×

॥ नागाअरजन की सबदी ॥

दारू तैं दाष उतपनी दाष कथी नही जाई।
दाष दारू जब परचा भया दाष मैं दारू समाई ॥ १ ॥

पूरब उतपत्ति पछिम निरंतर उपपति परलै काया।
अभिअंतरि पिंड छांडि प्रांन भरपूरि रहै।
सिध संकेत "नागाअरजन" कहै ॥ २ ॥

आपा मेटिला सतगुर थापिला।
न करिबा जोग जुगति का हेला।
उनमन डोरी जब पैंचीला।
तब सहज जोति का मेला ॥ ३ ॥

॥ सिध हरतालीजी की सबदी ॥

जोगी सो जो जुगति जांणै आपा थांभि रहावै।
वाहै जोतैं काटै क्यारी पांणी षुषन गिरावै ॥ १ ॥

जोगी सो जो चौर कूं रापै ससि की भिष्या होइ समांगै।
गगनमंडल मैं रोपै षंभ, नाद बिंद बाईस थंभ ॥ २ ॥

× × ×

॥ सिध गरीबजी की सबदी ॥

काया नगरी में मन रावल। अहनिस सीझै तहां नृमल चावल ॥
चावल सीझि पकाई डीव। सति सति भाषंत "सिधगरीब" ॥ १ ॥

× × ×

॥ धूधलीमलजी की सबदी ॥

॥ चौरासी पटण मूधा मारथा ता समइया की कथा ॥

॥ आइस जी आवौ ॥

बाबा आवत जात बहूत जुग बीता कछु न चढ़ीया हाथं।
अब का आवण सूफल फलीया पाया निरंजन सिध का साथं ॥ १ ॥

॥ आइस जावौ ॥

बाबा बैठा उठी उठा बैठी बैठि उठि जगदीठा।
घरि घरि रावल भिष्या मांगै अमी महारस मिठा ॥ ३ ॥ आइसजी बैठो ॥

बाबा जिन रठ गाया तिन सघ पायातजि पेचर बुधि मति बोलै।
जैसा कमावै तैसा पावै। सति सति भाषै धूधली सोलै ॥१४।१५॥

॥ रामचंद्र जी की सबदी ॥

अगनि कुंड समोनारी घृत कुंड समोनरा ।
जंघ जोडि प्रसंगांनांम क्यूं तौ मन निहचलरे लषमणां ॥१॥१६॥

॥ बाल गुदाई जी की सबदी ॥

जास माता सीलवंती पिता अस्तन भाषते ।
तास पुत्र भए जोगेस्वर पुनिरपि जन्म न विंदते ॥ १ ॥
चहूँ दिस जोगी सदा मलंग पेलै बर कांमनि कै संग ।
हसै पेलै राषै भाव राषै काया गढ़ का राव ॥ २ ॥
अधिक तत ते गुरु बोलीए समतत गुर भाई ।
हीन तत्त ते चेला बोलिए सति सति भाषै बालदाई ॥ १३ ॥

॥ घोड़ा चौली जी की सबदी ॥

श्री गोरखनाथ पंथ का भेव । अनंत सिधां मिलि पायो भेव ।
पाया भेव भई प्रतीत । अनंत सिधां मैं गोरख अतीत ॥ १ ॥
रविल तेजे चालै राही । उलटी लहर समंद समांही ।
पंच तत का जाँनैं भेव । तेतौ रावल प्रतषि देव ॥ २ ॥

× × ×

अंचित पुरांणां गगन गरस । बोलै "घोड़ा चोली" मछिंद का दास ।
अचिंतं पुरै हाक्यौ न आवै । तब "घोड़ा चोली" कहा तू पावै ॥ १४ ॥

॥ अजैपाल जी की सबदी ॥

मूंड मूंडे भेष बितुंडे नां बूझी सतगुर की बाँनी ।
सुनि सुनि करि भूले पसवा आपा सुध न जाणी ॥ १ ॥
नाभि सुनि तैं पवनां उठ्या प्रम सुनि मैं पैसा ।
तिहि सुनि तैं पिंड ब्रह्मड उपज्या ते सुनि है कैसा ॥ २ ॥

× × ×

जुरा मरन काल सर व्यापै काम बसंत सरीरं ।
लषमण कहै हौं बाबा 'अजैपाल' तुम कूंण आरंभ थीरं ॥ १७ ॥

× × ×

॥ चौंणकनाथ जी की सबदी ॥

काकड़ी करमठ कीजै रे अवधू बाइचलै असरालं ।
सूनैं देवल चौर पैंढैगा चेतो रे चेतनहारं ॥ १ ॥
सिंध साधक मेरै बाइसूं विंद गगन मैं फेरे ।
मन का बाकल चुणि चुणि पोलैं सीढी उपरि मन क्यूं डोलै ॥ १ ॥

× × ×

॥ देवलनाथ जी की सबदी ॥

"देवल" भए दिसंतरी सब जग मेल्ह्या जोई।
नादी मेदी बहौ मिलै प्रभेदी मिलै न कोई ॥ १ ॥

॥ महादेव जी की सबदी ॥

गगन मन बाँकि लै त्रिविध दुष काटि लै थापि लै वाला पंचभूत।
हरिरस पाकि लै जनम भै भागि लै भाषंत सति "सिव" अवधूतं ॥ १ ॥

× × ×

॥ पारबती जी की सबदी ॥

जल मल भरीया तल। अगनिन बलै नाभि कैतल।
अगनि न बलै न प्रगटै किरन। ता कारनि "पारवती" जगत्र का मरनं ॥ १ ॥

+ + +

॥ सिधमाली पाव जी की सबदी ॥

"सिधमाली पाव लो" सिध माली पावलो सहजैं सीचत क्यारी।
उनमनि कला एक पहौपनि पाया जोगिंद्र आवागमन निवारी ॥ १ ॥

+ + +

चंद सूर दोई फूला फूली रचिलै पवनां मांल संजोई।
गगन सिषर बैठौ चौसरि गूथै बिरला बूझंत कोई ॥५॥२४॥

॥ सुकलहंस जी की सबदी ॥

देवल देषंता पंडिता देवल षड़ हउसी।
राजा देषंतां रिणवासं गुरु चेलै प्रतषिवाद होसी ॥
पुत्र न मांनसी माइ बापं ॥ १ ॥

+ + +

विमल विचार गिर कंदलि पैसिवा "सुकुलहंस" भाषंतते इंसं।
चीया चेतन दोउ समकर मेलिबा उडन जाइसी प्रमहंसं ॥५॥२४॥

॥ दत्तात्रेय जी की सबदी ॥

षिमा जायं सील सेवा पंच इंद्री हूतासनं।
उनमनिमंडप निरबांन देव सदा जीवत भावना भेव ॥
लोलीन पूजा मन पहूप सति सति भाषत श्री दत्तादेव अवधूत ॥ १ ॥

× × ×

॥ इति सिधू की सबदी संपूर्णं ॥

॥ अथस्यध्यूं का पद लिष्यते ॥

बाघनिलो रे बाघनिलो बाघनि है बटपाड़ी लो ।
हेत करै घट भीतरि पैसे सोषि लेवै नौ नाड़ी लो ॥ टेक ॥
जिंद भीसोषे विंद भी सोषे सोषे सुंदरि पाया लो ।

\+ + +

ते नर जोनि कदे नही आवै सति सति भाषै 'हणवंतवीर' लो ॥२॥११॥

\+ + +

गहीयौ बाला सति सबद सुषधारा गगन मंडल चढ़ि प्रीत्म
प्रसौ रूप वरन तै न्यारा ॥ टेक ॥
धरता कूं करता मति मांनौ सति कौ सबद चिताऊँ ।
अब लग मरम लह्यौ नही मेरौ गुजबीज कहि जाऊँ ॥ १ ॥

\+ + +

इंछ्या वोऊ आदि लूं माया यूं सतिभाषै सतवंती ॥६॥१॥८॥

\+ + +

असमानो तयो वृंधं सममानो तयस्यावयं ।
अरचंत॰पूजते बिप्रः दुग्धा गउ रोगछितं ॥ १ ॥

इति सिधूं की बानी संपूर्ण ॥ सरव संष्या ॥ गोरखनाथ जी का ग्रंथ ॥ २४ ॥ पद ॥ ६० ॥ राग ॥ १ ॥ सब्दी ॥ २६ ॥ ग्रंथ ॥ २ ॥ पद स्यध्या का ॥ ९ ॥ सरबवाणी की जोड़ी ॥ २०५० ॥ सवत् ॥ १८५५ ॥ की मीति माह मासे सुकल पषे तिथ्यौ नाम ॥ २ ॥ बार बुधवार कै दिन सुभंभवेत ॥ लिषतं षारछ्या मध्ये लिषतं साध मुकनदास स्वामी जी श्री १०८ अमरदास जी कौ पोता सिष श्री स्वामी जी श्री १०८ श्री दरसणदास जी कौ सिष बांचै विचारै तिनकू राम राम न्मसकार ॥

विषय—संसार को निस्सार बताकर योग द्वारा मुक्ति लाभ करने का उपदेश किया गया है ।

इसमें पत्र संख्या २५१ से पत्र संख्या २९९ तक निम्नलिखित सिद्धों की वाणियाँ तथा सबदियाँ हैं :—

१ गोरखनाथ जी
२ भरथरी जी
३ चिरपट जी
४ गोपीचंद जी
५ जलंधरी पाव
६ पृथ्वीनाथ जी
७ चौरंगीनाथ जी
८ कणेरीपाव जी

९ हालीपाव जी
१० मीडकीपाव जी
११ हणवंत जी
१२ नागाअरजन जी
१३ सिधहरताली जी
१४ सिधगरीब जी
१५ धूधलीमल जी
१६ रामचंद्र जी
१७ बालगुदाई जी
१८ घोड़ा चोली जी
१९ अजैपाल जी
२० चौरंकनाथ जी
२१ देवलनाथ जी
२२ महादेव जी
२३ पारबती जी
२४ सिधमाली पाव जी
२५ सुकलहंस जी
२६ दत्तात्रे जी

टिप्पणी—प्रस्तुत रचनाएँ एक बड़े आकार के हस्तलेख में हैं। उसमें प्रस्तुत सिद्धों की रचनाओं के अतिरिक्त निरगुनी संतों की भी रचनाएँ हैं। विशेष के लिये देखिए, प्रस्तुत खोजविवरण में 'सेवादास' पर टिप्पणी।

संख्या ६० क. गोविंद प्रभु की बानी, रचयिता—गोविंद प्रभु, गोकुल, कागज—मशीन का, पत्र—३०, आकार—११ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२५, परिमाण (अनुष्टुप्)—९८, अपूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७वीं शताब्दी, प्राप्तिस्थान—श्री बालकृष्णदास जी, चौखंभा, बनारस।

आदि— राग विभास

तू आज देखिरी मन मोहन वीर विराजैं।
मदन मोहन पीय मणि मंदिर तें बैठे बनि कसि आप छाजे।
लटपटी पाग उर माल मरगजी लटपटात मधुप मधु काजैं।
गोविंद प्रभु के जु सिथिल अरुण द्रग देखियत कोटि मदन लाजैं।

अंत—मदन मोहन वन देखत अरवारो रंग।
सुलप संच गति भेद वरुहा नित्त करे कोकिला कुहु।
तानतरंग ॥ रें कोकिल कुहूँ कुहूँ तांन तरंग ॥

उघटत शब्द पपीहा पीऊ पीऊ कहै मधु वृत गुंज
माल सरस उपंग। गोविंद प्रभु रीझे सकल सभा सहित ज·······।

विषय—वैष्णव कवियों का प्रधान विषय कृष्णलीला का वर्णन रहा है। प्रस्तुत पदसंग्रह में निम्न विषयों के पद हैं :—

१—दानलीला २—मानलीला
३—गोचारन ४—रूपवर्णन

टिप्पणी—गोविंद प्रभु अष्टछाप के कवि माने जाते हैं। परंतु इनके प्राप्त पदों में सरसता और सजीवता का अभाव है तथा उच्चकोटि की कवित्व शक्ति का परिचय नहीं देते। पोथी की लिपि भी अत्यंत दोषपूर्ण है।

संख्या ६० ख. पदावली, रचयिता—गोविंद स्वामी (व्रज), कागज—देशी, पत्र—४६, आकार—७.५ × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५६०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री बालकृष्णदास जी, चौखंबा, बनारस।

आदि—श्री गोपीवल्लभाय नमः। देव गंधार तेताला।
मानरी मानरी ॥ मोहन द्वारे ठाढ़े ॥
तेरी तो प्रकृत आँनि पिय की पीर न जानें ॥
बातें तो बोहोत ढकानें त्यों त्यों आ गरे कपाट दिए गाठे ॥ १ ॥
बरखा रैंनि कारी तो सो तोहि लगत भारी ॥
ऐसे ललन पर तन मन धन वारि फेरि दीजें मान गाढ़ें ॥
सूनत वचन प्यारी कंठ लगी गिरधारी ॥
गोविंद प्रभु को हृदो प्रेम जल सों बुझावों आए विरहानल डाढे ॥

अंत—विराजत स्यांम मनोहर प्यारो ॥
प्रभु तिहूँ लोक उजियारो ॥
सरस बसंत समें वन सोभा श्री ब्रजराज विराजें ॥
सुर नर मुनि सब कौतिक भूलें देषि मदन कुल लाजें ॥
रंग सुरंग कुसुम नाना रंग सोभा कहत न आवें ॥
नवल किशोर और नवल किशोरी राग रागिनी गावें ॥
चोवा चंदन अगर कुमकुमा उड़त गुलाल अबीर ॥
छिरकत केशरि नव वंशीवट कालींदी के तीर ॥
ताल मृदंग उपंग मुरज डफ ढोल भेरि सेहनाई ॥
अद्भुत चरित्र रच्यो वृज भुपन शोभा वरनी न जाई ॥

विषय—राधाकृष्ण की लीला संबंधी पद हैं। मुख्य विषय बाललीला, रूप, मानलीला आदि हैं।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत पोथी में गोविंद प्रभु के २५१ पदों का संग्रह है। पर ग्रंथ में काव्य तथा संगीत का उचित सामंजस्य नहीं हुआ है।

संख्या—६० ग. गोविंद स्वामी के २५२ कीर्तन, रचयिता—गोविंद स्वामी, कागज-मोटापीला, पत्र—प्रथम और अंतिम, परिमाण (अनुष्टुप्)—७ खंडित, रूप—जीर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महाबीर सिंह "गहलोत", जोधपुर

आदि—॥ ॐनमः ॥ श्री गणेशायनमः ॥ अथ गोविंद स्वामी के कीर्त्तन लिष्यतेः ॥
जागो कृष्ण जसोदा जू बोले यह ओसर कोउ सोवे हो।
गावत गुन गोपाल ग्वालिनी हरखित दह्यौं बिलोंवे हो ॥ १ ॥
गो दोहन धुनि पूर रह्यो ब्रज गोपी दीप संजोवे हो।
सुरऽभी हूँ के बछरुवा जागे अबमुख मारग जोंवे हो ॥ २ ॥
बेंन मधुर धुनि महूर वर वाजे ग्वाल गहें कर लेटी हो।
अपनी गाय सब ग्वाल दुहत हें तिहारी गाय अकेली हो ॥ ३ ॥
जागें कृष्ण जगत् की जीवन अरुन बेंन मुख सोहें हो।
गोविंद प्रभु दुहत हें धोरी गोप वधू मन मोहें हो ॥ ४ ॥

राग विभास

एक रसना कहा कहूं सखीरी ललन की प्रति अमोली।
हसन खेलन चितवन जु छबीली अमृत बचन मृदु बोली ॥ १ ॥
अति रस भरे मदन मोहन पिय अपनें कर खोलत वर चोली।
गोविंद प्रभु की हो बहुत कहा कहों जेजे वातें कहीं मोसों अपनों हूहों खोली ॥ २ ॥

अंत—अवही तें ढोठा चितचोर आगे कहा...(१ क) रोगें
नेंकु बड़े से किने हो,
हुं वलि जाऊं त्रिभुवन जुवतिन के मन हरोगे।
दीसत के तुमने हे से उदर में,
सप्तदीप खंड रोंम जिसुमति कों।
दिखाए सोई सांची अनु सरोगें गोविंद,
प्रभु के जुनेंन नवेंन रस सूं चत मेरे जान मन मथ सोंलरोगें ॥२५२॥

विषय—कीर्तन के पद।

संख्या—६१. श्रीराधामुख षोडशी, रचयिता—गोविंद सुकवि, कागज—आधुनिक, पत्र—१, आकार—१३¾ × ८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३३, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४, खंडित, रूप—जीर्ण-शीर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० परसुराम चतुर्वेदी, एम० ए० एल० एल० बी०, स्थान व पोस्ट—बलिया, जि० बलिया।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ श्रीराधामुख षोडशी ग्रंथ ।

॥ मंगलाचरन कवित्त ॥

कोऊ तो सराहे सदा गिरिजा गनेश पुनि,
कोऊ तो सराहे सदा नंद जू को नंद कों ।
कोऊ तो सराहे सदा शारदा स्वयंभू पुनि,
कोऊ तो सराहें सदा शंभु सुरचंद कों ॥
कोऊ तो सराहे सदा बौध व्यास वामन को,
कोऊ तो सराहे रामचंद सुखकंद कों ।
"गोविंद सुकवि" पर हम तो सराहे सदा,
आनंद के कंद एक राधा मुखचंद कों ॥ १ ॥

॥ मुखवर्णन कवित्त ॥

कोऊ तो कहत छबि···र में सरोज भयो,
सुखमा सुभग ताकी नीकी निराधार है ।
कोऊ तो कहत···रसी अमोल ताकी,
आभा अभिराम अति शोहे सुखकार है ॥
कोऊ तो कहत चंद अवनी में उदेभयो,
एसें मुख उपमा कों कहत अपार है ।
गोविंद सुकवि पर मेरे मन जान पर्यो,
कनकलता में फूल लाग्यो आवदार है ॥ २ ॥

॥ पुनः यथा कवित्त ॥

कोऊ कहे कलानिधि अंबर ते आये वाके,
विमल विशाल महा सोपति ही ओज[1] है ।
कोऊ कहे कमनीय आरसी अमोल गोल,
नीकी निरमल महा राजत ही रोज है ॥
एसें अनुवाद करि राधा तेरे आनन की,
उपमा उचारे केते जाकी जेसी मोज है ।
गोबिंद पें भेजे जान तेरे तन तालन में,
विकस्यो विशाल महा सुंदर सरोज है ॥ ३ ॥
राधिका रसीली तेरे आनन की आभा लखि,
जल में डुबात गात देखो जलजात है ।
मुकुर मसक[2] जात मान तजि मनही ते,
जानत जगत सोइ वात विख्यात है ॥

१—तेज, कांती, २—फट··,

गोविंद सुकवि कहे तजिकें गुलाब आव[1],
कंपत रहत काप दिन अरू रात है।
चंद शरमाई भयो मन में मलीन ताको,
दाग देह मांहि देखो आज लौं दिखात है ॥ ४ ॥

पुनः यथा कवित्त

जाकी छबि पास मंजु मुकुर मलीन लागे,
एसी अभिराम आभा विमल विचारियें।
जाको लखि रमनीय फबिले गुलाब फूल,
लागत है फीके ताकों क्यों करि निवारियें ॥
गोविंद सुकवि एसे राधा तुम वदन की,
कहो कौन रीते आस्य[2] उपमा उचारिये।
सुखमा समूह भयो अवनी उदय तापें,
कोटिक कमल और चंद्रमा को वारियें ॥ ५ ॥
ओपे अनुराग वाग गहिरे गुलाबन की,
पुनीत प्रसून प्रभा उत्तम अमंद हे।
केंधों रस राजन के उचित अमोल गोल,
मंजुल मुकुर छबि छाजे सुखकंद हे ॥
केंधों रूप सागर में पुनीत प्रकाशमान,
कोमल कलित आछे ओपत अर्विंदहै।
केंधो कवि गोविंद ये राजत ललित महा,
प्यारी के वदन केधो सुधापर चंद हे ॥ ६ ॥

'पुनः यथा कवित्त अधिक तदरूपकालंकार'

चंद में कलंक तेरो मुख निकलंक सदा,
विमल विलोकि वाढे हिय में हुलास हे।
दिन में मलीन और घटे वढे चंद पुनि,
तेरे मुख चंद जू को अखंड आभास हे।
षोडश कला है चंद तेरे मुखचंद जू की,
रदन ललित कला वतीश विकाश है।
गोविंद सुकवि यातें चंद तें अधिक प्यारी,
तेरो मुख चंद सदा पूरन प्रकाश हे ॥ ७ ॥

॥ पुनः यथा कवित्त अभेद समरूपकालंकार ॥

राजे रद छदन[3] में पुनीत पीयुष[4] पुनि पोषन,

१—कांती। २—मुख। ३—ओठ। ४—अमृत।

की शक्ति धरि वचन वदन में।
सुंदर सुरंग नैन राजत कुरंग जैसे,
चंद्रिका·····धोहे महा······में।
उडु सें अधिक नख विमल वरिष्ठ महामुनि के,
हरत मन ललित लसन में।
गोविंद सुकवि कहे कीजे कहा फोर,
आली सुधापर चंद अरु राधा के वदन में ॥ ८ ॥

॥ पुनः यथा कवित्त ॥

सुधा को छिनाई राधे आपने अधर धारी चंद्रिका छिनाई दीनी देखो······दिकों।
षोडश कला को काटि वत्तीस वनाय रद[1] वाकों लखि हीरा हिय पावत प्रमाद कों।
पोषन की शक्ति लई धरी हे वचन मांहि एसें सब चंद जू की मूसी[2] मरियाद को।
गोविंद सुकवि तवें वयु में विशाद पाई चंद ले कलंक नभ फिरे फरियाद कों ॥ ९ ॥

॥ पुनः यथा कवित ॥

सुधा को छिनाई धरे अपने अधर बीच,
ताकी मधुराई लखि मिश्री भई मंद हे।
षोडश कला कों कभी रूदन ललित कला,
वतीश वनाई वैठी मंजू मसनद है।
पोषरू की शक्ति पुनि विमल वचन धरी,
लीनी सब संपत्ति यों राधे रचि फंद हे।
गोविंद सुकवि तवे कालिया कलंकधरी,
विचरत व्योम फरियाद हित चंद हे ॥ १० ॥

पुनः यथा कवित

पूरन प्रताप···औषधि को ईश छेकें मंजू···
धरि व्योम चढ़ि आयो हे।
यातें उर संतोष न भयो तप सागर में,
जाई अवगति अंग पानीय बनायो हे।
तऊ मन वंछित की सिधि नहि पायो,
तब उर में उमंग धरि सुधा धरि ल्यायो हे।
गोविंद यों चंद कोटि फंद करि हार्यो,
तऊ प्यारी मुख चंद जू की समता न पायो हे ॥ ११ ॥

१—दांत, २—ऐंठ लेना।

॥ पुनः यथा कवित्त ॥

मंजुल मुकर सो तो सबकी ग्रहत छबि,
　　　　तदपि तनक नांहि तनु मांहि भाये हे ।
कमल करत तप सर में सदाय रही,
　　　　तदपि न पाय प्रभा किंचित सो काये हे ।
बारधि में बूडि बूडि पानिप चढ़ाई वपु,
　　　　चढ़े नभ सान[1] तऊ शोभा माहि लाये हे ।
गोविंद अनेक एसें फंद करिहारे पर,
　　　　तेरे मुख उपमा की योग्यता न पावे हे ॥ १२ ॥

॥ पुनः यथा कवित्त मुक्त प्रकेशी अलंकार ॥

\+ \+ \+

—अपूर्ण

विषय—श्री राधा जी के मुख का वर्णन किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—काव्य उत्तम है । कठिन शब्दों के अर्थ भी दिए गए हैं । ग्रंथ की संपूर्ण प्रति लिपि कर दी गई है ।

संख्या ६२. नासकेत पुराण, रचयिता—घनस्याम, स्थान—आजमगढ़, कागज—देशी, पत्र—५३, आकार—९½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—९५४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१९१५ वि० = सन् १८५८ ई०, प्राप्तिस्थान—सेठ शिवप्रसाद साहु गोलवारा, सदावर्ती, आजमगढ़, जिला—आजमगढ़ ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ नासकेत पुराण भाषा लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

श्री गुरु चरण प्रणाम करि रामानुज पदशीश ।
वरणत नूतन ग्रंथ यह करहु कृपा जगदीश ॥

॥ चौपाई ॥

व्यास सिष्य अति परम सुजाना । वैस्यंपायन सब जग जाना ॥
जनमेजय सन कहा बुझाई । सूत पुरानिक सो सब गाई ॥
सोइ संवाद कहो अति पावन । नासकेत कर चरित सुहावन ॥
एक समै जनमेजय राजा । गंगातट तप तेज विराजा ॥
करि अस्नान दीन्ह बहुदाना । अन्न वसन मनि भूषण नाना ॥
प्रायाश्चित सुद्धि के कारण । किय दिक्षा जिमि होय निवारन ॥

१—नभ आकाशरू

विप्र रिषिन कर जुरे समाजा । तव कर जोरि प्रश्ण किय राजा ॥
वेद शास्त्र सब जानहु स्वामी । व्यास सिष्य प्रभु अंतर जामी ॥

॥ दोहा ॥

कहहु कथा अति दिव्य प्रभु जेहि सुनि पाप नसाय ।
प्रायश्चित नेवारनो नाहिन अवर उपाय ।।

अंत— ॥ छंद ॥

बाढे विविध विधि धर्म तेहि जो श्रवण कर मन लाइकै ।
यह नासकेत पुराण नृप हम कहा वहु विधि गाइकै ॥
यह सुनत पाप नसाहि पुनि बैकुंठ वस सो जाइकै ।
'घनस्याम' भाषा करि कहै हरिभक्त आयसु पाइकै ॥

॥ सोरठा ॥

रामपदारथ लाल गोलवार आजमगढ़ी ।
तेहि अज्ञा अनुसार घनस्याम रचना किए ॥

॥ दोहा ॥

ओनइस सै पंद्रह कहै संवत कार्तिक मास ।
कुज गणपति तिथि जानिये पक्ष सोम परकास ।।

इति श्री ब्रह्मांड पुराणे नासकेतोपाख्याने घनस्याम रामानुजदास कृते अष्टदशमोध्याय १८ ॥ दसषत शिउदीन गुसांइ साकीन आजमगढ़ महल्ले आसिफगंज सुक्रवार सुभम् श्रीः ।

विषय—नासिकेत ऋषि द्वारा चौरासी नरकों की कथा का वर्णन ।

रचनाकाल

ओनइस सै पंद्रह कहै संवत कार्तिक मास ।
कुज गणपति तिथि जानिये पक्ष सोम परकास ॥

संख्या ६३. घोड़ाचोली, रचयिता—घोड़ाचोली, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—९$\frac{3}{4}$ × ४$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—११८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—सेठ शिवप्रसाद साहु गोलवारा, मोहल्ला, सदावर्ती; आजमगढ़, जिला—आजमगढ़ ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ घोड़ा चोलि ॥

पारा टांक २ हरताल टांक २ गंधक टांक २ वचटांक २ विसटांक २ धिकुवारि रसटांक ४ टंकनखार टां २ सुंठी टां २ मिर्चं टां २ पिपलि टां २ काली जीरि टांक २ हर्रे टा २ वहेडा

टां २ आमला टां २ निवकि मी टां २ चूकटां २ वाय विडंग टां २ दारूहलदी टां २ अकलकरा टां २ पिपला मूल टां २ लवगं टां २ कूटटां २ ककरा सीगी टां २ मालकांगुनी टां २ निर्विसी टा २ अजवाइनी टा २ पुरासानि अजवाइनी टां २ नौंसादर टां २ मुसवर टां २ समुद्रफल टां २ ए सर्व बराबरि करि कपड़छान करना ये सबके बराबरि अजेपाल सुद्धकरि मीगी लेना पुनः सर्व एकत्र षरलना भंगरा रस सु षरलना दिन २१ पुनः गोली मुंग प्रमान अथवा मृच प्रमान अर्चितं नित्य सर्व रोग नासनं 'घोरा चोली सिध कालापानि' नमोस्तुते श्री गोरषनाथ पादुकां नमोस्तुते सिधदाता गणेश ।

अंत—सेत तिलका तेल टां १ गोली सुं मुष मर्दन करे जाहा पश्यति सर्व संगति भवतु पव देवदारु इठ अजमा हिंग अकलकरु गोदुग्ध टां १ प्रमाण दिन २१ श्वेत कुष्ट जाइ पिप्पली मिरिच रक्त पित्ती जाइ पथ्य चना की रोटी अकलकरा छइ त्रिफला त्रिकुटा संग त्रिदोष जाई अजमा कृष्ण जीरक टं १ वटी १ रक्तवायु जाइ वा रक्तक रसेन अंजन नेत्र परास मूल रसे वा कदली रसेन वा पवार रसेन अंजन नेत्र पलास मूल रसे वा कदली रसेन वा पवार रसेनवा गोतक्रेण दिन २१ फिरंगरोग जोई पथ्य चना की रोटी चूक अजमा मिरिच टं २ अजा दुग्धेन पक्वे विधाय तांबूलेन समं दिन २१ जलंधर जाइ त्रिफला दारू हरिद्रा संग दिन २१ फिरंग बात जाई श्रीपली मधु सहितं वा अरंड तैलेन प्रसूतिवायुः जाइ गो मूत्रेण वा मधुवा रसेन हर्षः जाई कंकोल रसेन वा गुदा लेपः त्रिफला समं दिन ७ पिशाचादि नासनं मिश्री सहित पित्तज्वर नासनं मिरिच सहितं वा एला वा कालागुरु समं वा वाबती समं वा चना धारी समं वा चावर जल समं वा धना वाइति ज्वर शांति कनक रसे नश्यति निर्गुंडी रसेन वा अजमा समं वा पिप्पली समं वा नव पत्र निर्गुंडीरस समं स्त्री ज्वर नासनं अरंड मूल सूंठी मस्तक लेपः पीडा नश्यति गोमय रसेन जल प्रेमह णयति पथ्य मठा मिरिच कृष्णभंटा समं रक्त प्रवाह नश्यति ॥

विषय—एक औषधि का अलग अलग २ अनुपान के साथ अनेक रोगों पर प्रयोग करने का वर्णन किया गया है ।

टिप्पणी—रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं । एक स्थान पर 'घोरा चोली सिध काला पानी नमोस्तुते श्री गोरषनाथ पादुकां नमोस्तुते' लिखा हुआ मिलता है । इससे जान पड़ता है कि रचयिता का नाम घोड़ाचोली अथवा कालापानी है । हो सकता है कि ग्रंथकार घोड़ाचोली अन्य नाम कालापानी हो और उनके किसी शिष्य ने इसको लिपिबद्ध किया हो । इससे ग्रंथ में दिए हुए उपर्युक्त लेख की संगति मिल जाती है ।

संख्या—६४. अमल को कविता, रचयिता - चंडीदान, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—११ × ७½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

गीत अमल रो साणोर—

प्रगट अनलतरंग अंगार तसबीर मालिम परख।
थरक सिणगार रसवीर थावे है रममन
तारो सदा रंजिया हरक,
अमल थारो अरक गरक आवै ॥ १ ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

सजवी सो मजलस री, गजवी राखण गल्ल।
सदा पियारो सांवलो, यो अहि केण अमल्ल ॥ ४ ॥
दारण जमी देखिया, अनमी तोद अपल्ल।
अमी सरीखो अमलियां, यो अहिकेण अमल्ला ॥ ५ ॥

विषय—अमल (अफीम) की दशा का वर्णन किया है। गीत साणेर १० और दोहे ५ का संग्रह है।

संख्या—६५. शृंगार सागर, रचयिता—चंद्रदास, पत्र—६३, आकार ७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—८५३, पूर्ण, रूप—सुन्दर, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८०५ वि०, लिपिकाल—१९०९ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, रत्नाकर संग्रह से, ना० प्र० स० काशी

आदि—

श्रीगणेशायनमः जै महराज की चंददास कृत शृंगार सागर लिष्यते।

॥ दोहा ॥

वरन विनायक विमल जस करन उदौ उरज्ञान।
दाएक सकल शो सिधवर गणंनांगुणषान ॥ १ ॥

॥ कवित्त ॥

बुध विरंच शोसि धरमा जपयोग महेसन मो गणनाऐक।
छब आनन चंद्र सरोज सुधा ससि शोभाल कपाल प्रदाऐक।
ग्रहज्ञान न भानन तेज कला प्रवला अघना सन दोषनसाऐक।
कृतदान गिरारस रास अभै शोरचौ रचना पद कृस्न सहाऐक ॥ १ ॥

अनेक पुरान निधान कीऐ रच भक्त विनोद विहारन मै
रघुवीर कथा यदुनाऐक की अघ घाएक दोष प्रहारन मै

गुन सातिक सत्य सुधा करनी वरनी बहु भांति विचारन मै
जनचंद रचै मनसा वच सो निजु संतते पद तारन मै ॥ २ ॥

अंत—

दस[१०] अष्ट[८] सत व्रत बर्ष रची नव सुभनीत विवेक विचारो ।
श्रावण मास कला ससि की दुतिया सुभसंजम धर्म सुधारो ।
ग्राम शोहंस पुरी वसिके एहु पूरन दिव्य पुरान सवारो ।
चंद तजे रस भाव सबै रच जोग शो द्वारहि ग्रंन विशारे ॥२५॥

॥ सोरठा ॥

लीला ललित विवेकु जामै सुषद अनेकु रस,
चंद साधहित मेकु भजन भक्त संजम कथा ॥२७॥
वासर पंच प्रसिद्ध भई सिध पावन कथा,
यहु रस सागर वुध चंददास क्रत जान जो ॥२८॥

इतिश्री सिंगार सागर विरचितायां सुभग सुषद सारं
क्रस्न लीला विहारं हरन तन विकारं दायकं पुनध्यानं ।
इतीहास क्रीडा वरननं नाम द्वादसमो ध्यान ॥१२॥

चंददास क्रतभाषा ।। इदं पुस्तकं लिख्यतं वासदेव नाम ब्राह्मणे अस्थान हंस ध्वज कोठराम आश्वन मासे कृस्न पक्षे पंचम्यां गुरु वासरे संवत् १९०९ ।

विषय—कृष्ण स्वरूप का वर्णन किया गया है । ग्रंथ में द्वादस अध्याय हैं ।

रचनाकाल

दस अष्ट सत व्रत वर्ष रची नव सुभनीत विवेक विचारो।
श्रावण मास कला ससि की दुतिया सुभ संजम धर्म सुधारो॥

संख्या—६६. चिंतामणि पद्धति, रचना—चिंतामणि, कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—११३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—८८२, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७८८ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य्य-भाषा पुस्तकालय (रत्नाकर संग्रह), काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः

श्री चिंतामनि चित के भवनिधि भवनु बनाइ।
प्रनत प्रनत प्रनवत सदा हैं चिंतामनि पाई॥ १॥
प्रनत गजानन तुव चरन शिव सुत सुजस अनंत।
वसु[८] आठौ[८] मुनि[७] मेदिनी[१] भृगु दिनु माघवसंत॥ २॥
सिद्धि चर्क साग सौ मुनि धुनि वंग प्रकास।
स्वल्प बुद्धि जा वैद कौं ता प्रति वचन विलास॥ ३॥
कर अगुष्ट तो मूल है जाहुँत साकार।
महु दुष सुष जीव को पंडित करौहु बीचार॥ ४॥
आदि पित पुनि मध्य कफ अंत सो पवन प्रधान।
त्रिविध नला लक्षण कहौ जानहु वैद सुजान॥ ५॥

अंत—

॥ चूर्णं भूषकर॥

सोठि लोध तसुरी हींग मुजिलेव तज पत्रजजायपत्री
पीपरि कवलगटा देवदारू अगर रूमी मस्तकी केसरि
काली जीर समलेव भुकुनू करै पाई॥ १२॥
उपर तात पानी पियै वातसीत पाड मिलाइ पाइ
वलकरै पुष्टि करै धातु पुष्टि करै॥ २०॥
दूसर अजमोदा वाइ विरंग सेधव देवदारू
पीपरि सोठि पिपरामूठ सोवा मिरिच विधारा
समलेव वुकुन करब...

× × ×

—अपूर्ण

विषय—

आयुर्वेद विषय का वर्णन।

रचनाकाल

प्रनत गजानन तुव चरन शिवसुत सुजसु अनंत।
वसु[८] आठौ[८] मुनि[७] मेदिनी[१] भृगुदिनु माघ वसंत॥ २॥

टिप्पणी—ग्रंथ की प्रत्येक अध्याय की पुष्पिका से पता चलता है कि रचयिता का नाम चिंतामनि मिश्र और उनके इस ग्रंथ का नाम 'चिंतामणिपद्धति है:—

"इति श्री रीषीराम मिश्र आत्मज श्री चिंतामनि पध्यतौ प्रथम आलोक:॥" चिंतामनि मिश्र के पिता का नाम रीषिराम मिश्र था। ग्रंथ की भाषा पूर्वी हिंदी है जो कहीं कहीं खड़ी बोली का रूप लिये हुए है।

संख्या—६७. रासमंडल, रचयिता—चिंतामणि, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—४.२×८.७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—कार्तिक कृष्ण १ बुध, १८२५ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री बिहारी जी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद

आदि—

॥ श्री गणेशायनमः॥

॥ चिंतामणि कृत रास मंडल लिष्यते॥

॥ झूलनाछंद॥

आपु बहु गोपिका जुगल के मध्य
बहु रूप संगीत की गति प्रवीनो।
विकच व्रंदा विपिन बीच बहु वेलि
अरु जोन्ह छीरोद छबि पुंज लीनो।
मधुर गंधरब गन मुरज धुनि करी
अपसरन कल गान करि ताल दीनो।
मध्य श्री राधिका संग माधव मधुर
रास मंडल रसिकराय कीनो॥ १॥

फुल्ल नव मल्लिका मालती कुमद
मकरंद हर मंद गति अनिल आयो ।
सरद विधु चंद्रिका विसद जमुना
पुलिन गनन सुरजान गन सतनि छायो ।

कियो गंधरब अपसरनि मिलि गान अरु ताल वीना मुरज मृदु बजायो ॥
सकल सुषमानि को एक आवास हरि रास रसरास सज्जिय सुहायो ॥
वजत सुर दुंदुभी मुरज वीना प्रणव तार आदिक विविध मधुर वाजे ॥
निकट नभ विमाननि उघट संगीत की देव वनितानि कल गान साजे ॥
प्रथम गोपी बहुरि कान्ह गोपी बहुरि कान्ह यों जुगल छबि पुंज छाजे ॥
विरचि मंडल नचत नंद नंदन सहित सुंदरी श्रंद सुंदर विराजे ॥

अंत—

विविधि रंगनि वसन अंगना रतन तन
रतन गन रुचिर रुचि भरि विसेषे ।
धन मनि सबै श्री नाथ सुंदरिन के
सुंदर विलास सुर तियनि देषे ।
मंद मुसक्यानि मुष चंद छबि षानि
कल वानि ललनानि अति ललित लेषे ।
लालु रिझायो सब निकुंज पंजरनि
जनु मंजु मुनियानि के पुंज पेषे ॥ ३० ॥

॥ छप्पय ॥

यह विधि सुललित केलि करिय सब सरद सुभग विधि ॥
करिय नरनि पर कृपा कलुष हरि किरि कृति कृपा निधि ॥
फलित भयौ प्राचीन सुकवि जन पुन्य कलप तरु ॥
रस अधिपति पति चरित लह्यौ मुनि श्रवण सुधाकरू ॥
कातिक राका अंतहरि हठि पठई निज निलय तिय ॥
वै लखैं सदाँ उनको निकट गोपन को पन नैकु किय ॥ ३१ ॥

इतिश्री सुकवि चिंतामणि विरचिते "रासमंडलं" ॥ समाप्तं ॥ भागवत को लिखितं तेज लाल वाजपेयी स्व पठनार्थं । संवत् १८२५ कार्तिक कृष्ण १ बुध ॥

विषय—

प्रस्तुत 'रासमंडल' में श्रीमद् भागवत के आधार पर झूलना छंदों में कृष्ण और गोपियों की रासक्रीड़ा का वर्णन । यह छोटा ग्रंथ है जिसमें झूलनों की संख्या ३० है । अंत में एक छप्पय है ।

टिप्पणी—'रासमंडल' की रचना चिंतामणि द्वारा हुई बतलाई गई है। लिपिकार के कथन के अतिरिक्त इसका अन्य कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं होता। रचयिता ने छंदों में अपनी छाप नहीं दी। इसके अतिरिक्त ग्रंथ में प्रस्तावना नहीं है। इस प्रकार रचयिता का कोई भी परिचय प्राप्त नहीं होता। रचना काव्य की दृष्टि से उत्तम है।

संख्या ६८. वाणियाँ, रचयिता—चिरपट। इनके विषय में जनश्रुति के अतिरिक्त और कुछ ज्ञात नहीं होता। विशेष के लिए कृपया देखिये 'गोरखनाथ और सिद्धों की वाणी' का विवरणपत्र संख्या ५९।

संख्या ६९ क. कक्का पैतीसी, रचयिता—चेतन (स्थान बंग), कागज—देशी, पत्र—१९, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७० वि०, सन् १८२० ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ कक्का पैंतीसी राग में ॥

॥ रागनी देवगंधारः ॥

कर लीजै सुभ काम जगत में ॥ क० ॥
इह मन चंचल फंद में डारे थिर होय लीजै नाम ॥ जगत में ॥ क० ॥
तन सुं जीव निकल जब जावै कोई न पूछै चाम।
सब स्वारथ के कुटुब है तेरे तुं परमारथ थाम ॥ ज० ॥ २ ॥ क० ॥
वस्तु अमोलिक नाम कहावैं तिनको न लागै दाम।
समझ बूझ अपने मन लीजै तो रहे तेरो माम (? नाम) ॥ज०॥३॥क०॥
लष चौरासी गत कीयच्यारो नहि पाये बिसराम।
चेतन चेतो सुद्ध मन अपने पावै अविचल धाम।
ज० ॥ ३ ॥ क० ॥ ते पदं ॥

राग भैरो

षाली आवै षाली जावै षाली जीव अकेला है।
पर संगत के माई भाई स्वारथ का सब मेला है ॥ १ ॥ षा० ॥

अंत—

राग इमन कल्यान

श्री जिनराज के सतरह सिषर सरसबने श्री महाराज के स० ॥ १ ॥ श्री० ॥
जाकेर चर्न अद्भुत सोहे अजी गुन निधान करत ग्यान,

धरत ध्यान सुर विमोहै विसाज विवध ब्याल,
देषे छबि आज के स० ॥ १ ॥ श्री० ॥
तीन भुवन जिन मंदिर छाजै आजी कलस सजत महारजत,
घंट बजत नाद जग जत भागड़दी भागड़दी भागड़दी दुंदुभी अवाज के
स० ॥ २ ॥ श्री० ॥

मध्यलोक बहु बिंब सुहावे अजी दरस करत करम हरत,
विघन टरत फिरन परत जगत जाल भव संभाल पंचम गत काज के
स० ॥ ३ ॥ श्री० ॥

देव लोक सम चौमुष धारे आजी प्रतिमा प्यार जगमेसार
हृदयधार गुन अपार पार्श्वदेव करत सेव चेतन सुध साज के ॥ ४ ॥स०॥श्री॥

॥ इति पदं ॥

इति सतरह सिपर संपूर्ण । समप्ता । शुभमस्तु । मीती चैत वदि ९ मंगलवार संवत् १८७० का लीषतं सीताराम मथेन लीषायतं बाबू धरमचंद जी ॥ लषी पटना मध्ये ॥ ॥ श्री ॥

विषय—'क' से लेकर 'क्ष' तक के प्रत्येक अक्षर पर रागरागिनियों में पदरचना कर ज्ञानोपदेश किया गया है ।

'ह' के पश्चात् 'लं' अक्षर भी मानकर पैंतीस अक्षरों पर पदरचना की गई है ।

टिप्पणी—हस्तलेख की लिपि स्वच्छ और सुवाच्य है ।

संख्या—६९ ख. चैत्य बंदन, रचयिता - चेतन (स्थान—बंग), कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—६×४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्) १०७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७० = सन् १८१० ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ चैत्य बंदन लिखते
आदि जिनेश्वर परम गुरु अरजी सुन लीजे,
हम आए तुम पास अ प्रभु दरसन दीजै ।
नाभि कुल उज्जल मरुदेवी जाया, वृषभ लंछन विराजमान ।

धनुष पाँच से काया लख चौरासी पूरव थितें ए तुम हो सब गुनवान ।
ऋद्धि विजय उवभायनो चेतन धारें ध्यान ॥ १ ॥ इति ॥ १ ॥ पुनः

अंत—

छठा स्वयं प्रभु जिनराज सप्तम रिषभानन देवा।
अनंत वीर्य जिन आठ सदा करो नर सेवा।
नव में सूर प्रभु जिन देव दसम विशाल जिनंदा।
वज्रधर जिनवर इग्यार मुझ मेटो भव फंदा।
चंद्रानन जिन बार मोए तेरमो चंद्रबाहु भगवान।
भुयंग देव जिन चौदया साहिब गुन के षांन।
पदरम ईश्वर जगनाथ नेमी सोळम पूजो।
सतरे वीरसेन जिनराज आजमन वंछित पाया।
चंद्रयस उगणीसयो ध्याइये ए अजित वीर्य जिनवीस।
त्रिकाल बदो भाव सुं विघन हरो जगदीस ॥ ३ ॥

॥ इति संपूर्ण ॥

श्री सुबाहु विहरमान आज मुझ दरशन दीजै।
तुम वीतराग अरिहंत सेवक पर किरपा कीजै।
नगर अज्योध्याबास निसढराय कुल चंदा।
जनमें श्री भगवान उदरें मात भूनंदा ॥
पद लंछन कपीये ए तिया किं पुरसा नार।
चेतनतासुध होयके वंदे वारंवार ॥ १ ॥

इति सुभमस्तुः

विषय—चौबीस जिन तीर्थंकरों की मूर्तियों की वंदना की गई है।

टिप्पणी—रचयिता का नाम 'चेतन' है। इनके विषय में कृपया देखिए, आगे 'लघुपिंगल' का विवरण पत्र। रचनाकाल अज्ञात है। रचयिता के 'पदों (ककापैंतीसी)' में, जो एकही हस्तलेख में प्रस्तुत रचना के आगे लिखे गए हैं—संवत् १८७० वि० लिपिकाल दिया है। अतः प्रस्तुत रचना का लिपिकाल भी यही होना चाहिए।

संख्या ६६ ग. लघु पिंगल भाषा, रचयिता—चेतन, स्थान—बंग (जन्मस्थान), कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—६×४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८४७ वि०= १७९० ई०, लिपिकाल—१८७० वि०=सन् १८२० ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः ॥ अथ लघुपिंगल भाषा लिखते ॥

॥ दोहा ॥

चरन कमल गुरुदेव के बंदो सीस निवाय।
लघु पिंगल भाषा करूँ सारद देहु बताय ॥ १ ॥
छायाविन नहिं करि सकें पिंगल छंद अपार।
रूपदीप चिंतामणि ए पिंगल मनधार ॥ २ ॥
चेतन लघु पिंगल कहै सुनियो वचन प्रमान।
कवित्त छंद कइ जात के जानें चतुर सुजांन ॥ ३ ॥
लघु दीरघ गण अगण है अष्यर मत्त समांन।
चेतन बरनें ग्यान सु लघु पिंगल गुन षान ॥ ४ ॥

॥ अथ लघुदीरघ बरनं ॥

॥ दोहा ॥

बरन बार है अंक के लघु दीरघ है सोय।
तीन अंक लघु जानियै अधर अंक गुरु होय ॥ ५ ॥
केवल पिछों छोटै लघु काक कुअंक पहिचान।
संजोगी के प्रथम गुरु नवें अंक गुरु जांन ॥ ६ ॥

॥ अथ गण वर्णनं ॥

॥ दोहा ॥

मगण नगण दो मित्र है भगण यगण दो दास।
रगण सगण रिपु जानियै तगण जगण उदास ॥ ७ ॥
गुरू तीन कीजै मगण नगण तीन लघु होय।
आदि गुरू है भगण को यगण आदि लघु सोय ॥ ८ ॥
मध्य गुरू इह जगण है रगण मध्य लघु जांन।
अंत गुरू है सगण मैं तगण अंत लघु आंन ॥ ९ ॥

अंत—

॥ अथ सुमुष छंद ॥

॥ दोहा ॥

दोय लघु सगण तीन है चरन मत्त दस चार।
रुद्र अंक कलि एक में सुमुषी छंद सुभार ॥ १०८ ॥

॥ छंद ॥

जुगर जोर करों बिनती इह लघु पिंगल की गिनती।
सब तुक पंडित सुद्ध करो अब गुन में गुन आप धरो ॥ १०९ ॥

॥ दोहा ॥

रूप दीप चींतामणि इह पिंगल को देष।
भाषा लघु पिंगल रची कीन्हा सुगम विशेष ॥ ११० ॥
छंद ब्यालीस जात के लघु पिंगल सों जांन।
भयो गुणे कंठे करे उपजें बुद्धि निधान ॥ १११ ॥

\+ + +

ऋद्धि विजय वाचक गुरु वहु आगम के जांन।
तस सिष लघु चेतन भयै जनमें वंग सुथान ॥ ११४ ॥
दिष्या ले यात्रा कियै फिर आए निज देस।
संगत बायै साधु की मेटे सकल कलेस ॥ ११५ ॥
चंद[१] सिद्ध[८] बेदा[४] मुनी[७] मास पोस गुण षान।
स्वेत बीज गुरू वार को पूरे ग्रंथ सुजांन ॥ ११६ ॥
लघु पिंगल पूरो भयो चतुर सुनो दे कान।
चेतन या सुध कीजियै तौ पावै सिव थान ॥ ११७ ॥

इति श्री लघु पिंगल भाषा संपूर्ण ॥ समाप्ता ॥ शुभमस्तु ॥

विषय—पिंगल विषय वर्णन किया गया है। लघु दीर्घ अक्षर तथा गण वर्णन के पश्चात् निम्नलिखित ४२ छंदों का वर्णन किया गया है :—

१–सारंगी छंद, २–तरूलनयन छंद, ३–दोधक छंद, ४–भुजंग प्रिया, ५–कामिनी मोहनी, ६–तोटक, ७–मैनावती, ८–मोतीदान, ९–नाराच, १०–प्रमाणिक, ११–नाराच १२–मल्लिका, १३–अर्द्ध भुजंगी संखनारी, १४–दोहा, १५–सोरठा, १६–चौपइ, १७–अडिल, १८–तोमर, १९–मधुभार, २०–अनुकूला, २१–चित्रपदा, २२–पवंगनाम, २३–रसावली, २४–पाधरी, २५–दुवैया, २६–शंकर, २७–त्रिभंगी, २८–द्रिढपटा, २९–मरहटा छंद, ३०–लीलावती, ३१–पोमावती, ३२–गीता, ३३–पैडी, ३४–कुंडलिया, ३५–रंगिका, ३६–धनाक्षरी, ३७–दूमला (? द्रुमल), ३८–मत्तगयंद, ३९–कइरवा, ४०–झूलना, ४१–छप्पय, ४२–सुमुख।

रचनाकाल

चंद[१] सिद्ध[८] वेदा[४] मुनी[७] मास पोस गुनषान।
स्वेत बीज गुरू बार को पूरे ग्रंथ सुजान॥ ११६॥

टिप्पणी— रचनाकाल संवत् १८४७ है। प्रस्तुत रचना रचयिता की अन्य दो रचनाओं के साथ एक हस्तलेख में है। रचनाओं के नाम, १—चैत्यवंदन और २—पद (कक्का पैंतीसी राग में) हैं। लिपिकाल केवल पदों में दिया है। अतः अन्य रचनाओं का भी यही लिपिकाल हुआ। रचयिता का नाम चेतन है। ये जैनी थे। इनके गुरु का नाम ऋद्धि विजय वाचक था। इनका जन्म वंग (संभवतः बंगाल) में हुआ। गुरु से दीक्षा लेकर इन्होंने यात्रा की और फिर अपने देश को वापस आए। 'पदों (कक्का पैंतीसी राग में) के अंत में एक दूसरा संवत् १८०५ वि० दिया है जो रचयिता का जन्मकाल विदित होता है:—

राग राम·गिरी

क्षमाधार कर बाल लीजै धर्म को रष ढाल रे।
मोह नृप सुं जुद्ध करके करम अरि को टाल रे॥ १ ॥ क्ष० ॥
मन वचन काया बस राप अपने छुटे भव को जाल रे।

× × ×

इक[१] अष्ट[८] चतुर चित पंच[५] धरियै विक्रम के इहसाल रे॥ ३ ॥
अति माह उज्जल चंद जनमें बुद्ध चेतन लाल रे।
सुध पैंतीस अक्षर ग्यान के है भयो गुणे मंगल मला रे॥ ४ ॥

प्रस्तुत ग्रंथ में विषय वर्णन बहुत संक्षेप में हुआ है।

संख्या—७०. वाणियाँ, रचयिता—चौणंक नाथ। इनके लिये कृपया देखिए, 'सिद्धों की वाणी' का विवरण पत्र संख्या--५९।

संख्या—७१. वाणियाँ, रचयिता—चौरंगीनाथ। संख्या—५९ के विवरणपत्र में इनकी वाणियाँ दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरणपत्र।

संख्या—७२. हरिभक्ति विलाश (उत्तर खंड), रचयिता—जन छबील, कागज—देशी, पत्र—८५, आकार—१२$\frac{3}{4}$×५$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्) २१३७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०९ वि०=सन् १७५२ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः

जयन्ति गनपति गवरि तनय गज मुष भुजवर चारी।
लंबोदर रद अयुग शिर चंद बुद्धि निधिवारी॥ १॥
जयति राम रघुकुल तिलक सेवक सुर कुलपाल।
पूरण जनमन कामना वारिधि कृपा विशाल॥ २॥
बंदौ गुरू गिरिजा गिरा शंतत शज्जन शंग।
कहो भक्त भगवंत यस कारन कलिमल भंग॥ ३॥
नहि चतुराई ज्ञान गुण कवि विवेक मुहि नांहि।
उर उपजत अभिलाष मम विनय करौ तुम पांहि॥ ४॥
कृपा करहु मति देहु मोहि अछर अरथ अनूप।
भाषा विधि वरनन करों अगुण शगुण हरिरूप॥ ५॥
उत्तम उत्तरखंड यह भाषा भक्ति विलाश।
"जन छबील" बरणत सुनत शव सुखदानि सुपास॥ ६॥

अंत—

संध्या समय सुरन्ह जयगाई,
चले भवन निजु दुंद बजाई।
श्री नृसिंह भय अंतर ध्याना,
कीन्ह प्रगट 'नरसिंह पुराना'।
यह प्रभु चरित कीर मुनि गावा,
सुनत परिछीत अति सुषपावा।
जे यह चरित सुनहि अरू गावहि,
तिनके अघ नासहि सब पावहि॥
विघन अनेक विशेष विलाही।
नरहरि नाम उचार कराही॥

॥ दोहा ॥

अथ समुद्र अवगार तिहि नौका नरहरि नाम।
हरि स्मरण पेडचसदा सत संगति विश्राम॥

॥ सोरठा ॥

मानहु पहुचे पार संत संग जग सुख अरुचि।
जन छबील निरवार निगम कियो मग मोक्ष कह॥२८॥

इतिश्री हरिभक्त विलाशे उत्तरखंडे भाषा सप्तदशोध्याय ॥१७॥ संपूर्णं ॥ अषूछर पद अर्ष मात्रा हीनेपु पर भवेतु तत् सर्वं छमितां देवं कस्यवैनिः चले मनं ॥ जो देष्यो सो लिष्ये में भूल्यो निजु अज्ञान । पढहु विचारहु छमहु मुहि कविता परम सुजान । ललित काव्य कवि केहरी माया भक्ति विलास । पढतःसुनत आवत दृढ़ रामचरण विस्वास ॥ संपूरण सुभमस्तु रिद्धिरस्तु ॥ श्री संवत् १८१९ मीति शावन सुदी अष्टमी ८ ॥ बुधवासरे ॥ श्रीकृष्ण...

विषय—भागवत पुराण की कथाओं का संक्षेप में वर्णन किया गया है। इसमें १७ अध्याय हैं जिनका उल्लेख नीचे है:—

१	अध्याय	ऋषभ अवतार वर्णन	पत्र ३१७ से ३२० तक
२	,,	भरत राज्य की कथा	,, ३२० – ३२५ ,,
३	,,	,,	,, ३२५ – ३२९ ,,
४	,,	,,	,, ३२९ – ३३३ ,,
५	,,	अजामिल कथा	,, ३३३ – ३३८ ,,
६	,,	,,	,, ३३८ – ३४४ ,,
७	,,	एकादशी माहात्म्य (चोलनृपति कथा वर्णन)	,, ३४४ – ३४९ ,,
८	,,	जयविजय की कथा (एकादशी कथा)	,, ३४९ – ३५४ ,,
९	,,	,,	,, ३५४ – ३५९ ,,
१०	,,	,,	,, ३५९ – ३६३ ,,
११	,,	कृष्णार्जुन संवाद एकादशी कथा के विषय पर	,, ३६३ – ३६९ ,,
१२	,,	जय विजय श्राप वर्णन	,, ३६९ – ३७४ ,,
१३	,,	प्रह्लाद चरित्र तथा हिरण्यकशिपु कथा	,, ३७४ – ३८० ,,
१४	,,	,,	,, ३८० – ३८५ ,,
१५	,,	,,	,, ३८५ – ३९० ,,
१६	,,	नृसिंह अवतार वर्णन हिरण्यकशिपु वध	,, ३९० – ३९६ ,,
१७	,,	प्रह्लाद तथा देवताओं द्वारा नृसिंह भगवान् की स्तुति वर्णन	,, ३९६ – ४०१ ,,

टिप्पणी– ग्रंथ दो खंडों में है—'पूर्व खंड' और 'उत्तर खंड'। इसका प्रस्तुत हस्तलेख 'उत्तरखंड' का है जिसकी पत्र संख्या ३१७ से आरंभ होती है और ४०१ में समाप्त। अतः इसमें समस्त ८५ पत्रे हैं। रचनाकाल अज्ञात है, लिपिकाल संवत् १८१९ दिया है। इस खंड से रचयिता के संबंध में कुछ विदित नहीं होता। शायद पूर्व खंड में उन्होंने अपना पूरा वृत्त दिया होगा।

संख्या—७३. जगजीवन दास की वानी, रचयिता—जगजीवन दास, कागज—देशी, पत्रा—११, आकार—१०½×५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३५, परिमाण अनुष्टुप्—७२२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि-नागरी, लिपिकाल—१८५५ वि०, प्राप्तिस्थान आर्य्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

॥ अथ जगजीवण दास जी की वाणी लिष्यते ॥

॥ अथ चिंतावणी जोग ग्रंथ ॥

आपनिरंजन संत सब कृपाकरि दीयारंग।
गुर कृपा तें पाइए चिंतामनि का अंग ॥ १ ॥
चिंतामनि चौथीदसा लषै सु पावै सुष।
जाइ धँसे वा सिंध मैं बले न दरसै दुष ॥
पूँजी तौ प्रेमेश्वर तणी तू मति षरचै बीर।
दरगह लेषा मांगिसी कून रंक को मीर ॥ २ ॥

अंत—

॥ साषी ॥

गाजे पढ़ि जे सुमरीए लाजे उनमांन ध्यान।
जगजीवन हरि सुमरीए कबहुन बकीए आंन ॥ २ ॥
आन बक्यां अंतर परै उपजै सोग संताप।
जग जीवन हरि भजन बिन सबद सबद मैं पाप ॥ २ ॥ ग्र० ॥ २ ॥

पद—॥ ५९ ॥

॥ इति श्री जगजीवनदास जी की बांनी संपूरण ॥

॥ दोहा ॥

प्रथम नामदे दुतीय जन रैदास।
त्रेतीय पीपा प्रगटै चतुस्थ जग जीवन भास ॥

संवत् १८५५ की मीती फागुण माशे ॥ कृसन पक्षे तिथ्यौ नाम ॥ ७ ॥ वार बुधवार कै दिन सुभंभवेतु लिषंतंच गांव पारख्या मध्ये लिपंत च साध मुकनदास सांमी जी श्री १०८ दरसणदास जी कौ शष (? शिष्य) बांचै विचारै तिनकूं रांम रांम नमसकार श्री निरंजनायंन्मः

विषय—

निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश वर्णन ॥

प्रस्तुत बानियों में निम्नलिखित रचनाएँ सम्मिलित हैं:—

१—चिंतावणी जोग ग्रंथ पत्र ३५५ से ३५६ तक
२—प्रेमनामौ जोग ग्रंथ पत्र ३५६ से ३५७ तक
३—पद पत्र ३५७ से ३६५ तक

टिप्पणी—प्रस्तुत रचनाएँ बड़े आकार के हस्तलेख में हैं जिसमें अनेक सिद्धों और संतों की रचनाएँ लिपिबद्ध हैं, कृपया देखिए प्रस्तुत खोज विवरण में सेवादास । हस्तलेख सभा में है ।

संख्या ७४. मोहमर्द राजा की कथा, कागज—देशी, पत्र—३, आकार १०½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) ३५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, का० ना० प्र० सभा, बनारस

आदि—

॥ अथ ग्रंथ मोह मरद राजा की कथा ॥
॥ चौपई ॥
गुरु गोविंद की अग्या पांऊं,
संत समागम ग्रनि सुनाऊं ।
सुनौ एक महापुरांनां,
नारद विष्ण भयौ बषांनां ॥ १ ॥
बैकूंठ लौग विष्ण को बासा,
आए तहां सकल हरिदासा ।
सनक सनंदन आए ईसा,
इंद्र आदि देव तेतीसा ॥ २ ॥
गंगा आदि तीरथ सब आए,
बड़े मुनेश्र और सब आए ।
प्रण ह्वै ह्वै कथत है ग्यांना,
सबही करै विष्ण कौ ध्यांना ।

अंत—

राजा नारद आग्या पाया ।
ब्यास नृप कूं बरनि सुनाया ॥

जो मानवी सीषै अरु गावै।
नाराइन कै अंति मन भावै ॥ ११३ ॥
गुर गोबिंद की आज्ञा पाई।
संत समागम बरनि सुनाई ॥
मोह मरद हर जी की गाथा।
निति पिति गावै "जन जगनाथा" ॥ ११४ ॥
॥ इती मोह मरद राजा की कथा संपूर्ण ग्रं० ४ ॥

विषय—

मोहमर्द राजा की कथा का वर्णन

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना बड़े हस्तलेख में है जिसमें अनेक सिद्ध और संतों की रचनाएँ भी लिपिबद्ध हैं। हस्तलेख महत्वपूर्ण है और सभा में विद्यमान है।

संख्या—७५. पद संग्रह, रचयिता—जगराम, कागज—देशी, पत्र—१८४, आकार ६ × ५.८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०२४, खंडित, रूप—प्राचीन और अव्यवस्थित, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसिपल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

ॐ नम सिद्ध। अथ जगरामकृत पद्य लिख्यते ॥ दोहरा ॥

श्री जिनवर के नाम की महिमा अमित अपार।
धरि प्रतीति जे जपत है सुफल करत अवतार ॥ १ ॥

कवित्त

इंद्र धरिनेंद्र षेचरेंद्र और नरिंद्र वृंद तेरे गुन गाइ गाइ पाइन परतु है।
तिनहूँ के पातिग अनेक भय संतत सो तूहू
जिन राज एक लव में हरतु है ॥
और पसु नर सुर ध्यावै नाथ तोहि
उर तिनेहूँ के काज मन वांछित सरतु है।
अैसो जांनि प्रीति सांनि जीय मै आनंद,
आनि "जगराम" राम तेरौ हीय में धरतु है ॥ २ ॥

मध्य—

लगी साडी प्रीति तुसाडे नाल।
तुजनूं महरि कछू नहीं आवही मैंडा दिल बेहाल।

रखि असौनू पास पास प्रभु भंजि विरह जंजाल ।
जग साहिब तुझनूं जग अखदा करि मैंडी प्रतिपाल ॥ २ ॥

अंत—

मेरी बार क्युं ढील करी जी ॥
सूली तैं सिंघासन कीनौ सेठ सुदरसन विपत हरी जी ॥
सीता सती अगनि मैं पैठी पावक नीर करी सगरी सगरी जी ॥
वारिषेण पै षडग चलायौ फूल माल कीनी सुधरी जी ॥
धन्ना वापी गिरयौ निकाल्यौ ता घरि रिद्धि अनेक भरी जी ॥
सांप कियौ फूलनि की माला सोमा पर तुम दया धरी जी ॥
द्यांनत मैं कछु चाहत नांही करि वैराग दसा हमरी जी ॥
इति चौतुकिये पद संपूर्ण ॥

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ में मंगलाचरण के दोहों के पश्चात् कुछ कवित्त हैं फिर पद दिए हैं। इसका विषय भगवान् जिन देव की भक्ति है। ये ग्रंथ जैनधर्म विषयक हैं।

टिप्पणी—प्रस्तुत 'पदों' द्वारा रचयिता के संबंध में कुछ विदित नहीं होता। हाँ, विषय प्रतिपादन से स्पष्ट होता है कि वह जैन धर्मानुयायी था। उसका समय भी अज्ञात है। प्रस्तुत पद-संग्रह काव्य की दृष्टि से उत्तम है। इसकी भाषा व्रज है। यत्र तत्र पंजाबी के भी कुछ पद हैं।

संख्या—७६, पद संग्रह, रचयिता—जनप्रसाद, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री लक्ष्मीनारायण जी अग्रवाल, सोराँव, जि०—इलाहाबाद

आदि—

भरि भौ भंजन राम हरी।
क्रिपा सिंधु अब सुनौ निहोरा मारौ मोर अरी।
कर विलाप अनुराग देव सनि रोदत वदत मरी।
को कृपाल तुम बिनु रघुनंदन को भौ पार करी।
"जनपरसाद" सियाराम नाम की मन में जिकिर परी ॥
तरन कुल मंडन रघुराई।
जे सरनागति भये निरंतर तिनकी वनि आई।
तारे पतित अनेकन जग में जे गे सरनाई।
तेते भये लीन हरि माही अपने मुपगाई।
सुमिरो राम निरंतर मन में दुबिधा मिटि जाई ॥

अंत—

हरे व मन सुन्दर छबि दरसाय ॥
बाढी प्रीति बहुत उर अन्तर उमगि उमगि अधिकाय ।
कहा कहौं कछु कहि नहि आवै मन मेरा अकुलाय ।
'दास परसाद' छकी छवि प्रभु की रही प्रीति उरछाय ॥ ७ ॥

विषय—प्रस्तुत 'पद संग्रह' में रामभक्ति के पद हैं, जिनमें राम का पूर्व चरित वर्णित है ।

विशेष ज्ञातव्य—

प्रस्तुत 'पद संग्रह' के रचयिता का नाम 'जन प्रसाद' है । कहीं कहीं 'जन' के स्थान पर 'दास' करके 'दास प्रसाद' नाम भी आया है । रचना सरस है । रचनाकाल लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं ।

संख्या ७७. श्री मद्भागवत गीता की टीका, रचयिता—जयराम, कागज—देशी, पत्र—५१ आकार—७ × १२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९६४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री तुलसीदास जी का बड़ा स्थान, दारागंज, प्रयाग

आदि—

श्रीमते रामानुजाय: नमः
तत्पादांभोरुहं वंदे येन सर्वमिदं ततं ॥
ब्रह्मादि स्तंभ पर्यंतं यत्कृपा परिपालितं ॥ १ ॥

चौपाई

गुण अनंत कल्यान कहाई । सब विभूति निर वधिक सवाई ॥
सब सुख पूर्ण निरंतर पाई । दिव्य रूप नित यौवन सोई ॥
अतिशय ज्ञान शक्ति बल सोई । तेज वीर्य धृति सब अति सोई ॥

× × ×

भीषम रक्षित निज बल पेखी ।
सेवा पांडव प्रबल सुजानी ॥
रक्षित भीम हृदै अनुमानी ।
लखि दुर्योधन हृदय गलानी ।

यत्र योगेश्वर कृष्ण यत्र पार्थो धनुर्धरः ।
तत्र श्रीर्विजयो भूति ध्रुवानितिमतिर्मम ॥
योगेश्वर श्री कृष्ण जह पार्थ धनुद्धर होइ ।
तहाँ विभूति विजै सदा निश्चै जानहु सोइ ॥ ७८ ॥

इति श्री रामानुज भाष्यानुसार जयराम रामानुजदास विरचित दोह गीतार्थं अष्टादशोध्याय श्री कृष्णार्पण मस्तु ॥ श्री राम ।

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ में श्रीमद्‌भागवत गीता का भाषा में पद्य बद्ध अनुवाद है । यह अनुवाद श्री रामानुजाचार्य के श्री भाष्य के अनुसार किया गया है ।

अनुवाद के छंद दोहा चौपाई हैं और भाषा ब्रज है ।

संख्या ७८. हितोपदेश कथा, रचयिता—जयसिंह दास। कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—९३/४×६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४६८, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७८२ वि० = सन् १७२५ ई०, प्राप्ति-स्थान—आर्य- भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः
॥ लिष्यते हितोपदेश के कथा ॥

॥ छप्पै ॥

जैगिरि नंदिनि नंद चरण जग वंदित जाके ।
कबहूँ विघन नहिं होहिं नाम सुमिरे मनताके ।
लंबोदर एक दंत नाम उप विराजै ।
लसत शीश सिंदूर फरस अंकुश छबि छाजै ।
जैसिंह दास वंदन करत हरत रहत भक्त कहँ सुर खुरू ।
सकल सिद्ध दायक सदा जब गणेश कवि जन गुरू ॥ ७ ॥

॥ घनाक्षरी ॥

वेदन की माता गुणदाता ज्ञान दाता,
तुव वंदत विधाता मोद माला अहलादनी ।
महिमा अपार जाके पावत न पार कोई,
जगत अंधार आदि उदित अनादिनी ।
गावै सहसानन है रसना सहस जाके,

बंदन चरण जै सिंह हंस वाहिनी के प्रगट सरूप तीय यो लोक हिति वादिनी ॥ २ ॥

संवत सत्र हसै जो वयासी । माघ शुक्ल द्वादशी प्रकाशी ॥
वार बृहस्पत पुष्य नक्षत्र । ग्रंथ अरंभ कियो कवि तत्र ॥
सारंग गढ़ अति अडियल कोट । है जहँ सकल साज के मोट ॥
तहँ उद्योत साहि देपाना । साहेब विक्रम भोज समान ॥
देवकनंद तासु के मंत्री । राजनीत चातुर सरजंत्री ॥
तहाँ वसैं कवि "जैसिंह दास । जा...कछुछंद परगास ॥
तिन कवि सों राष्यौ अति प्रीती । पढ़त रहत संत नृप नीती ॥
तिन कवि सों यह कह्यो विचारी । कथा एक विरचौ अनुहारी ॥

॥ दोहा ॥

जौन पढ़त अति मति बढ़ै मन को होइ प्रवेश ।
करौ छंद परबंध सों कथा हितोप सुदेश ॥ ४ ॥
दीन्हो कवि कों सासना वावू देवकी नंद ।
वाक वाग नीके सुमिरि वरनत छंद प्रबंध ॥ ५ ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

एक मास नर कों करौं मृग सुकर दुइ मास ।
इनको संचय करि भाषहि धन्यौ धनुक गुन ग्रास ॥ १५४ ॥

॥ सवैया ॥

षान लगे धनुके गुन को तव टूटत कौ सु हिए मै षोभी ।
आइ मिलौ सुषवास को मास तज्यौ मृग सुकर मानुष छोभी ।
देषहु तो महिमा यह लोभ की दाँतनिषोस पन्यौ है असोभी ।
जै सिंघदास कहै परहांस ज्यों प्रान तज्यौ ऐसो जंबुक लोभी ॥ १५५ ॥

॥ दोहा ॥

पावै और षवावहीं है धन के गति दोय ।
पाइ षवावै जो नही ताकै मुष मै सोय ॥ १५६ ॥

॥ हिरण्यक वाच ॥

सुनौ मित्र तुम बड़े सयाने । जो तुम उत्तिम भाव बषाने ॥
सिंघ पुरुष उत जोग विचारै । संचित अर्थ करै तिहिवारे

—अपूर्ण

विषय—

संस्कृत ग्रंथ हितोपदेश का अनुवाद किया गया है।

रचनाकाल

संवत् सत्रह सै जो बयासी। माघ शुक्ल द्वादशी प्रकाशी।
वार बृहस्पत पुष्य नक्षत्र। ग्रंथ अरंभ कियो कवि तत्र।

संख्या ७९. बाणियाँ, रचयिता—जलंधरी पाव। संख्या—५९ के विवरण पत्र में इनकी बाणियाँ दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या ८०. युक्ति रामायण, रचयिता—जानकी प्रसाद, कागज—देशी, पत्र—४७, आकार—५.४ X १३.५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) ८, परिमाण (अनुष्टुप)—६४०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य। लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्युनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

श्री गणेशायनमः
॥ घनाक्षरी ॥

गनपति रूप ह्वै कै गनपति सेविन को नाथ,
ह्वै कै दिन को दिनेस व्रतधर को।
रूप ह्वै कै सकति सकति व्रज धारिन कों,
हर अनुसारिन सँवारि रूप हर को।
जाकी जहाँ प्रीति फल देत तहाँ ताही रीति,
"जानकी प्रसाद" नहि लावत गहर को॥
नाम जाको पूरन करत मन काम,
वंदीयत पर धाम नित राम रघुवर को॥ १॥

वसंत तिलक छंद

ब्रह्मादि देव गन छोंडि समै विचारे।
सौंप्यौ सियै अनल दंडक मध्यभारे॥
तासों हियो मम सुराघव रीति जो है।
सांडिल्य वंस यह प्रीति प्रतीति सोहै॥ २॥

अंत—

॥ वानी छंद ॥
कोउ अंधकादि छबि पूरन छायो।

घन पंच वक्र संग युद्धहि ठायो ॥
कोउ स्वातिरिक्ष छबि पूरित सोहे ।
अनुगौन चित्र कहि को अवरी हैं ॥१०३॥
कोउ नारदादि सम सोभ बढ़ावैं ।
रसरोस कोक गति षंडन ढावै ॥
कोउ अंबु रासि तन पा छबि द्वारे ।
अति मोद पूरि करि सारस धारे ॥१०४॥

॥ मनहंस छंद ॥

कोउ चंद मंडल से लसे सस धारहीं ।
कोउ काम से सर जोर संवर मारहीं ।
वृष राज से कोउ नीलकंठ अराधियो ।
कोउ मेघनाद समान कौंसिक वांधियो ॥१०५॥

विषय—

"युक्ति रामायण" अपूर्ण ग्रंथ है। इसमें जन्म से लेकर लंका युद्ध तथा अवध प्रत्यावर्तन की कथा है। इस ग्रंथ के अध्याय 'प्रतिहारों' के नाम से दिए हैं। ग्रंथ में अनुमानतः ७ प्रतीहार हैं। ६ पूर्ण उपलब्ध होते हैं और सातवाँ अपूर्ण।

ग्रंथ का 'युक्ति रामायण' नाम है जिसकी सार्थकता का पता नहीं लगता। रचयिता ने छंदों के बदलने में विशेष रुचि दिखाई है।

दंडकारण्य के जीवन में हेमंत ऋतु का वर्णन है जो वाल्मीकि रामायण के हेमंत वर्णन से बहुत कुछ मिलता है।

संख्या ८१. नेमनाथ राजमती मंगल, रचयिता—जिनदास, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—१० × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)-२६४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७०९ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स० बनारस।

आदि—

॥ [० ॥ अथ राजिल मंगल लिष्यते प्रथम राग बंगाली ।

दोहा

गोयन गणधर पै नमो सुगुरु नाम सो सीस ।
नेमिनाथ राजे मती नाम ज्यों निसदीस ॥ १ ॥
समुद्र बिजै के लाभ ले जादव वंस दयाल ।
तोरण आये नेमि जी पाए मोहन लाल ॥ २ ॥

सोला सहस मिल फगुवा खेले कालिंदी तट न्हाए ।
मुष विकस्यो सतभामा जी देखे अनचित व्याह मनाए ॥ ३ ॥
नेमनाथ कुमार जी ऐसे व्याहन आए अंचली ॥ ४ ॥

अंत—

हम दोनों संयम पालें । शिवपुर का पंथ निहालें ।
बन वसती मैं राष्यो । तैं बूझत फेरया पाछ्यो ॥ ७७ ॥
तूं गुरु समान हे मेरी । मैं पग की रज हौं तेरी ।
तू आंप तरी मुंझ तारया । पर भव का काज रचाया ॥ ७८ ॥
उग्र तपी तपी या हूवे । राज मती रह नेम ।
जिनको गज सविस्तरयो सुनीयो उत्राभेन ॥ ७९ ॥
हुवे दोनों केवल ज्ञानी । ब्रह्मचारी शिवपुर गामी जो निर्मल शील
अराधे शिवपुर का मारग साधइ ॥ ८० ॥
जाइ हुवा मुक्ति मिलावा जहाँ करे नही आवा जावा ।
जाइ अचल सुहागण लेइ जिसरी सकेर नहीं कोई ॥ ८१ ॥
जो राजल मंगल गावइ मन वंछित ही फल पावै ।
जिणदास कहै करि जोड़ी मैं अजाण हों मति थोड़ी ॥ ८२ ॥
तुम्ह ज्ञान अनंत अपारा ते कहिव सकों विस्तारा ।
त्रिहुकाले संजम कीजइ नर भव को लाहा लीजइ ॥ ८३ ॥

इति श्री नेमनाथ राजमंती मंगल संपूर्ण समाप्तं । संवत् १८०९ वर्षे मासे मार्गिशिर मासे कृष्ण पक्षे शुभं तिथौ त्रयोदश्यां तरूण दिने लिषतं रामजीर्पिसय पठनार्थं वनूड नगर मध्ये ।

विषय—नेमिनाथ और राजमती के विवाह का वर्णन है । बड़े यत्न से राजमती का विवाह नेमिनाथ के साथ होता है; परंतु नेमिनाथ को वैराग्य उत्पन्न हो जाता है और विवाह के अवसर पर वन को प्रस्थान कर देता है । राजमती भी उनका अनुगमन करती है ।

संख्या—८२. सुरतांतलीला, रचयिता · जीवन धन, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—७·७ × ५·२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)— २०४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८४० वि०, प्राप्तिस्थान—श्री बिहारीजी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद ।

आदि—

श्रीलक्ष्मीनारायणभ्यां नमः ॥ अथ सुरतांस्त लीला लिष्यते ॥

चौपाई

निसि जागे आरस रस भीने ॥ प्रात उठे नवरंग नवीने ॥ १ ॥
मरगजे वसन हार कुमिलानें ॥ केलि रंग सुष छबि सरसानें ॥ २ ॥
अरसानी प्यारी सुष दैंनी ॥ सिथलकुसुम कल विगलित बैनी ॥ ३ ॥

कवित्त

अति ही सुठौंनौ मृदु सुंदर सलौनौं सषी
कहाँ लौं बषानौं छवि दंपति रसाल की ॥
भृकुटी मटक पट पीरे की चटक चारु मुकट
लटक आछी लटकनि लाल की ॥
कुंडल कपोलनि कलोलनि सलोल छबि
दलमल निकाम दुति हाल बनमाल की ॥
भाइन भरी है मन भावन छबीली
ऊठि बनी मेरी आंषिन में आवनि गुपाल की ॥५८॥

अंत—

॥ सोरठा ॥

करि अंचल गहि छोर हरषि असीसै देति सषि ॥
मन भावन चितचोर हुलसौ विलसौ सुष सदा ॥१५२॥

॥ दोहा ॥

लाड भरे भागनि भरे रंग भरे चितचोर ॥
"जीवनधन" नव लाडिले दंपति अवचल जोरि ॥१५३॥

इतिश्री जीवनधन कृत सुरतांत लीला संपूर्ण ।

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ का नाम "सुरतांत लीला" है। इसमें राधा और कृष्ण का दाम्पत्य विलास वर्णित है। आरंभ में दंपति के रत्योपरान्त जागने का वर्णन है। तद्पश्चात् क्रम से स्नान, शृंगार, रूप वर्णन, भोजन, कुंज क्रीड़ा, गृह प्रत्यागमन और अंत में रात्रिशयन आदि आते हैं।

इसमें रचयिता ने दोहे, चौपाई, कवित्त, सवैया विशेषतः रोला छंद प्रयुक्त किए हैं। इसकी भाषा व्रज है।

टिप्पणी—रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८४० वि० इस आधार पर है कि यह संवत् 'सुदामाचरित्र' नामक रचना में दिया है जो प्रस्तुत रचना के साथ एक ही हस्तलेख में है।

संख्या ८३ क. भक्तिप्रबोध, रचयिता—जुगतानंद, कागज—देशी, पत्र—१६१, आकार—७.८×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८९८, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८२४, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम इलाहाबाद।

आदि—

श्री कृष्णाय नमः

श्री सुषदेवाय नमः ॥ श्री चरनदासाय नमः ॥
श्री चरनदास जी का दास गुसाईं जगतानंद जी कृत भक्त प्रबोध ग्रंथ बहुअंग ॥

प्रथम सतगुरु महिमा वरनते ॥ दोहा ॥
दीन जानि बिनती सुनौं धर्म गुरु सुषदेव।
दास मानि संसै हरौ प्रकट करो सब भेव ॥ १ ॥
श्री गुरु चरन ही दास जी पुनि पुनि करूं प्रनाम।
तुम क्रिपा सब सिद्ध हो अरथ मोक्ष धर्म काम ॥ २ ॥
वंदों श्री भगवंत कूं वंदू हरि के दास।
अनभै वानी क्रिपा करि जन हिय करौ प्रकास ॥ ३ ॥
निरगुन सरगुन भेद जो सांष्य और वैराग।
जग अनित्य आतम जु सति कहौ होय अनुराग ॥ ४ ॥

अंत—

कुडलिया

अठारह १८ सै चौवीस २४ को संवत महा उदार।
कातिग सुद पंचमी वार दीन ही वार ॥
वार दीन ही वार हिये अभलाषा कीनी।
गुरु हरजन गुन कथन कथन प्रभु सुरति जु दीनी ॥
भक्ति ज्ञान वैराग को लछन सहत उचार।
जुगता भक्ति प्रबोध ग्रंथ अठाई मैरु अठार ॥

विषय—जुगतानंद ने कृष्ण, शुकदेव तथा अपने गुरु चरणदास की प्रार्थना के पश्चात् निम्नलिखित विषयों का वर्णन किया है :—

१—गुरु महिमा, २—साधु महिमा, ३—मन, ४—जगनिवृत्ति, ५—वैराग्य, ६—नाममाहात्म्य, ७—अजपा, ८—कृष्णचरित्र, ९—शुकदेव स्तुति और १०—बारहमासा।

रचना दोहे, चौपाई, पद, कवित्त और कुंडलिया आदि छंदों में है।

॥ रचनाकाल ॥

अठारह[१८] सै चौवीस[२४] को संवत महा उदार।
कातिग सुद पंचमी वार दीन ही वार ॥

टिप्पणी—रचयिता स्वामी चरणदास जी के शिष्य थे। ये एक ओर तो राधाकृष्ण का गान करते हैं और दूसरी ओर 'अजपा' और 'सतगुरु' का गुणगान।

संख्या ८३ ख. भगवद्गीता माला, रचयिता—जुगुतानंद, कागज—बांसी, पत्र—१५७, आकार—५ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४७३, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५९ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी ना० प्र० स० बनारस।

आदि—

श्री कृष्णाय नमः ॥ ॐ श्री त्रिभुवन चंदाय नमः ॥ श्री गणेशाय नमः अथ श्री भगवत गीता माला मंत्र लिख्यते

॥ दोहा ॥

ध्रित राष्ट्र उवाच ॥

धर्मक्षेत्र कुरक्षेत्र मैं मिले जुध के साज
संजय मो सुत पांडवन कीने कैसे काज। १

संजय उवाच

पांडव सैंना वृह लषि दुर जोधन ढिंग आइ
निज आचरज द्रौन सौं बोले ऐसे भाइ। २
पांडव सैंना अति बड़ी आचारज तू देषि
ध्रष्ट द्युमन तुव सिष्य मैं व्यूह रचौ जु बसेषि। ३
सूर धनुस धारी बड़े अर्जुन भीम समान
द्रोपद महारथ और पुनि हैं विराट जुजुधान
ध्रष्टकेत अरू कासिपति चेकतांन बलवंत
कुंत भोज अरु सैब पुन पुरजित शत्रु निकंत। ५

अंत--

परंपरो जो ब्रह्म है अर्जुन तू चितराषि
आत्मवस्त विचारिनी दिष्ट लहौ मैं भाषि। १
इन्द्री मन बुद्धि प्रान जो जुद्ध करन भगवान
अर्जुन सौं कहते भये गीता मध्यि वषांन। २

मन भषरा गुन रस प्रभु सील नीर विस्तार
जो नर धारै हृदै मैं सो होय सिद्ध भौ पार । ३
केल क्रीड़ा कृस्न जु करत रहे विस्तार
श्रीमत भागौत स्कंध मैं दसम मांहि विचार । ४
सहस हजार चौकड़ी व्रष तपस्या कीन
महातम श्रवन सुन फल प्रापिता चीन । ५

सोरठा

भजि जानकी नाथ प्रम जनन भक्ता श्रेष्ठ:
मननिग्रह सुन काथ भक्ति जनन सदा सुषी । ६
इति पंचमुषी रतन सागरो संपूर्ण समाप्तं

विषय—आरंभ में भगवत्‌गीता का अनुवाद तथा ९९ पृष्ठ पर राम अष्टक, १०१ पृष्ठ पर हनुमान जैत, १०५ पृष्ठ पर विष्णु पंजर स्तोत्र, १२० पृष्ठ पर नाम सहंस वृतिभाषा आदि वर्णित है फिर चतुश्लोकी गीता, चतुर्विंशति गायत्री, पंचमुषी रतन सागर लिखकर ग्रंथ समाप्त किया गया है ।

संख्या ८४. जेठुवा रा सोरठा, रचयिता—जेठुवा, कागज—देशी, पत्र—२१, आकार—७½ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक, प्रकाश जोधपुर ।

आदि—

जेठुआ तणी जगीस, सुख हुती मेलस नहीं ।
बाला मिलो जबीस जोड़ी तो सूं जेठुआ ॥ १ ॥
लागो लोचन नाह, अणी आला अलता तणां ।
सरसु सेर थपाह, जड़िया तो सूं जेठुआ ॥ २ ॥

अंत—

तिलग ते तीमाल, बेधक सूं बांता नहीं ।
खड्बला दयाल, मंस्वा किरन परिमेहउत ॥ १३ ॥

इति जेठुआरा दूहा

विषय—नीति के १३ दोहे (सोरठी) ।

संख्या ८५ क. मुअज्जम शाह के कवित्त, रचयिता—महापात्र जैतसिंह, असनी (फतेहपुर), कागज—देशी, पत्र—४१, आकार—७'२ × १३'८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—

१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—९००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—संग्रहालय, हिंदी साहित्य संमेलन, इलाहाबाद

आदि—

श्री सरस्वत्यै नमः श्री गणाधिपतये नमः ॥

माजम साहिब दिसि दछिन की साधिबे को,
बाधि समसेर साजि चढ़ो संग सेन को।
कहै 'जैतसिंह' पर पुरनि पुकार परी,
पायन पराने उर पावत न चैन को।
एकै मुरि दुरि झुरि गिरिनि के दरि बीच,
एकै पेसकसी साजु साजतु है दैन को॥
एदिल सो लिया मालु वे दिण न करयौ हाल,
सोलापुर ओलल ओ बीजापुर लेन को॥ १॥

अंत—

तोसो कहो तकि तेरे हितै तरू नापो तने दिन के कुल हेगो।
जामि हे जात न जोबन को जव आइ जरा जगि जोर गहेगो।
वोलत सीष हमारी की सुधि भए पछितेले सो बोल चहोगे।
माननि मान कनाए न मानति मान अमान धरोइ रहोगे॥ २१९॥

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ में जैसा उद्धरणों से स्पष्ट है जैत कवि की तीन प्रकार की रचनाओं का संग्रह है—भक्ति, शृंगार और प्रशंसा। अंतिम विषय की रचना परिमाण में अपेक्षाकृत अधिक है। अतः यह एक प्रशस्ति काव्य है। रचयिता की प्रशंसा के प्रधान लक्ष्य औरंगजेब के पुत्र मुअज्जमशाह हैं। इसीलिए ग्रंथ का नाम 'मुअज्जमशाह के कवित्त' रखा है। मुअज्जमशाह के अतिरिक्त कुछ अन्य व्यक्तियों का भी उल्लेख है जिनमें राजा जयसिंह राघोराय और छत्रसाल मुख्य हैं।

ग्रंथ में कवित्त सवैया और कुछ दोहे हैं। यद्यपि अधिकांश रचनाओं में कवि की छाप है तोभी ऐसे कवित्त या सवैयों की कमी नहीं है जो छाप रहित हैं।

मुअज्जम शाह के संबंध में कवि ने उनके अनेक युद्धों का वर्णन किया है। इनमें कहीं कहीं वीरगाथा कालीन छप्पय वाली शैली का प्रयोग किया है। जहाँ दानदाक्षिण्य आखेट, वर्षगाँठ अथवा राजभोग का वर्णन है वहां शैली स्वाभाविक है।

संख्या ८५ ख. साहिजादे माजम के कविच, कागज—देशी, पत्र—२६, आकार—९ × ६ इञ्च, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ -२५, परिमाण (अनुष्टुप्)—८११, पूर्ण, रूप—सुंदर, लिपि—

नागरी, लि० का०—१७४२ वि० प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री सरस्वत्यै नमः। श्री गणाधिपतये नमः
माजम साहिब दिसि दाछिन की साधिये को
बाँधि समसेर साजि चढ़ो संग सेन को
कहे जेत सिंह पर पूरनि पुकारि परी पायन
पराने अरि पावत न चेन को
एकें मुरि दुरि कुरि गिरिन के दरि बीच
एके पेस कसी साजु साजत हैं देन को
ए दिल सों लियो मालु ये दिल न कह्यो
हालु सोलापुर ओल लियो मालुवे दिलन को। १

अंत—

स्रुतिनि बषानी गुन गानी सनमानी
प्रभु जगत की रानी बरदानी हेगंननि के।
जे हे वे अज्ञानी अभिमानी मोह गलतानी
तिनको कृपानी सी सुजानी हे पननि के।
सेवा जिन ठानी अनुमानी जो स्तुति बानी
तिनको दयानी दानी मानी हे मननि के।
भीतल निवारी देति जीतल जीवन ज्याइ
हीतल सीतल करे सीतला जननि के ॥१५९॥
कढ्यो सेल गहि साहि आलम समथ्य
साहि पथ्य से सुभट ठट्ट हरे भरी भर कों।
धोंसा की धुकार धसकत धराधर धरे
धीरधरा धीस को धरकि तेज दर कों।
ब्रह्मंड मंडल में दंड दे अदंड बचे
पंडनि के मंडरीक मिलें तजि वरको।
छीर निधि छलकि उछलि छींटें छिति
छाइ मानो तमहीन तारागन टूटे तरको ॥१५९॥
प्रबल प्रचंड मारतंड ते उदंड तेज
चढ्यो वीर वंड साहि आलम महाबले।
धोरे मुख होत धराधीसनि के धाकहीते
धुव धाम धूरि सों धुरेटेसुर कोकले।

दिव्व दल चले दले दिगज दिगंतनि में
दौरे दर वर के दरेरे दरियाहले
फनी फन फटे फुंकरत यों स्रोनित फुहीं
रंग ज्यों जावक फुहारन उनधे चले ॥१६०॥

विषय—मोजम शाह (शाह आलम) के किसी युद्ध का वर्णन है।

संख्या ८५ ग. माजम प्रभाव अलंकार, रचयिता—जेतसिंह, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—९×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३६, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल—१७२७ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—

श्री गणेशाय नमः

चलित सुंड दीरघ भसुंड उदंड दंड जिमि।
अति प्रचंड मंडित सो गंड षंडत मंडल तिमि।
ललित पूर सिंदूर धूर जिमि सूर प्रात हुअ।
एक दंत मयमंत संत वंचित जो कंत हुअ।
गत ईस सीस रजनीस धर ईस भुअन दारिद् दरन ?·
वर बुदिद देत मति सुद्ध अति सौ सदद बुद्धि कारन हरन।१॥

× × ×

मगर माजमा वाद है दछिन दिसह अनूप।
तामे नर ऐसे वसे सबे सरस से भूप। ३

+ × ×

तिनती अधिक कृपा करी मोहि मिरासी मानि।
नर हरि को पनतीहहे जेतसिंह कवि जानि। १२

अंत—

अथ व्याघात अलंकार

व्याघात लछन राज करज भयो उपायजो।
तेहीं उपाय सोइ काज और भाय कों होतु है ॥ १६४ ॥

जथा

मदन जर्‌यो जेहि दिष्ठि मृग नेनी की दिष्ठि सोइ
जीवतु काम इह अचरज मन आवई ।
जेहि दिस्टि के उपाय ते मेनका दग्ध काजु भावे
तेही दिष्ठि ते जिए का काज लेत है ।

अथ संसृष्ठि अलंकार

अलंकार जहाँ जाने जाने जाहिं ।
अलंकार संसृष्टि सो कवि की जो मनमाहि ॥ १६६ ॥

यथा

मति मो में सो में किये इह अपार मति सिंध ।
तते सुकवि सँवारिये अलंकार विंध ।

इति श्री जेतसिंह विरचितं माजम प्रभाव अलंकार ग्रंथ ।

विषय—अलंकार का विषय प्रतिपादित किया गया है । कवि ने अपने आश्रयदाता की वंशावली भी वर्णन की है ।

रचनाकाल

संवत सत्रह से जहाँ सताइस गति लेषि ।
अगहन सुदि षष्टी गुरो ग्रंथ रच्यो अनुरेषि ॥ १५ ॥

संख्या—८५ घ. प्रबोध चंद्रोदय नाटक भाषानुवाद, रचयिता—जेतसिंह, कागज—देशी, पत्र—२८, आकार—९ X ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३८, परिमाण अनुष्टुप्—१४६२, पूर्ण, रूप—सुंदर, लिपि—नागरी, रचनाकाल और लिपिकाल—१७६२ वि, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि

श्री गणेशाय नमः ॥

सुंड सों मुंडगहि तुंड में इंदु तकि चंरि करि चम्मरपिच्छाह पेले ।
मुंडावर माल वहु हाल उत्ताल गहि करतहि डिमि डिमिक डमरूहकेले ।
गंगवर अंग के संग निरषि हेरंग सोभ्रिटिकिय द्विजराहेले ।
वंभ विज्जंन द्वरहत आरंभ कवि संभु की गोद हेरंव पेले ॥१॥
अज्ञानिन के ज्ञान कों करत सुनत हीं बोध ।
नाटक चंद्रोदय प्रबोध भाषा करी सु सोध ॥२

परम पुरुष जोति आनंद मैं निरमल भजुमन मेरे जो कहत सगुअंग मैं।
ताके बिन जाने माने छिति तिअपतेज,
आगियोन तत्व लोक के विचार कहें जग में।
जे से मारतंड की मरीचिका मध्यान मध्य,
पय पूरित जानि मृगधावे तकिमग में।
पढ़ें कहा होत वहे पंडित जो न जान,
तत्व सुव भोगी भोग अमत जेंव हेलग में ॥३

अंत—

हरषि पुरूष दियो आसिषहं एसे कहि,
मेघ अति वरषि अवनि पोषें आइके।
राजा राजु करे छिति मंडल को सुष,'
निरूपद्रवनिकरि दिसि विदिसिन पांइके।
तत्व के प्रकास ते तमोगन भो दूरि सो,
प्रसाद के तिहारे इह जानि कहौ चाइके।
संसार सागर मधि विषेमाया परपंच ह्वे
निसंक मइजननीके तरो जाइके ॥६५१॥

इति श्री प्रबोध चंद्रोदय नाटकस्य तस्य भाषा करिष्य महापात्र जेतसिंहस्य षष्टमों अंकः ॥ लिषितं स्वहस्त ज्येष्ट वदि षष्टी गुरौ संवत् १७६२॥ पुस्तक संपूर्ण सुभमस्तु।

विषय—

संस्कृत के 'प्रबोध चंद्रोदय नाटक' का भाषानुवाद ६ अंकों में है। इसमें विवेक, वैराग्य, श्रद्धा आदि एक ओर और काम, मोह, अहंकार आदि दूसरी ओर नियत करके आध्यात्मिक रूपक की रचना की गई है।

इस रूपक का अभिप्राय वेदांत की शिक्षा देना है।

रचनाकाल संवत् १७६२

टिप्पणी—ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति की पुष्पिका से विदित है कि यह मूल प्रति है। अतः इसका लिपिकाल और रचनाकाल एक ही संवत् १७६२ है। इस दृष्टि से यह प्रति महत्वपूर्ण है।

संख्या—८६. तमाल मद्यभंग मांसानानिषेध, रचयिता—ज्ञानदास, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—४'१ × ५'५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—९०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८७८ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री तुलसीदास जी का बड़ा, दारागंज, इलाहाबाद।

आदि—

रमतीत राम । स्तुति ॥

रामनिरंजन परम गुरू संत सबै सिर मौर ८
ज्ञानदास वंदन करै सीस नाइ कर जोर ॥१
संस्कृत अश्लोक है ब्रह्मांड पुराण के मद्धि ।
ता अध्याय की भाषा टीका करौं प्रसिद्ध ॥२
ब्रह्मा जू वरनन कर्यौ नारद मुनि सों जोय ।
सो भाषा कर कहत हूँ जेहि समझै सब कोइ ॥३

श्री ब्रह्मोवाच ॥ श्लोक ॥

प्राप्तै कलिजुगे थोरे सर्वं वर्णाश्रमे तरा ।
तमालं भक्ति ते येन स गछेन्नरकार्णवे ॥१

। टीका दोहा ।

महा घोर कलि युग विषे वरणाश्रम पुनि और ।
ते तमाल भक्षन करै ते पावे नरक अघोर ॥ २
मधपान रत जे पुरूष ताको शिव नहि होइ ॥
ते मानुष धर्महीन है नरक महि पर सोइ । ७७ ।

इति श्री ब्रह्मांड पुराणे ब्रह्म नारद संवादे तमाल मध भाँग मांसानां निषेधः समाप्तः ॥ संवतु १८७८ मिति सावन सुदी ३ मंगल ॥ राम राम राम राम ।

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम "तमाल मध भाँग मांसानां निषेध" है। इसके नाम से विषय का पता चल जाता है। जो कुछ आश्चर्यजनक बात है वह यह है कि यह निषेद पुराण सम्मत कहा गया है। अर्थात्, यह ग्रंथ ब्रह्मांड पुराण से लेकर लिखा गया है। ग्रंथ दोहा, छंदों में है तथा ब्रजभाषा में लिखा गया है।

संख्या ८७. मामूल अतिब्बा, रचयिता—टीपू सुलतान (दक्षिण भारत का सुलतान), कागज—देशी, पत्र—२१, आकार—६.३ × ८.५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—४६२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१९०७ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद।

आदि—

ॐ श्री गणेशायनमः ॥ अथ मामूल अतिब्बा लिख्यते तिब्बमतात् ॥

फारसी खाना नान मैंदे गिजायकबी भाषा हिंदी रोटी मैदा की	नफा भोजन पुष्टि	जरह गिरानी जिगर व शंग गुर्दह व दर्द सिकम्म कुनद	मुरलैत
नान पुख्क भाषा रोटी मोटी	पुल् गवारा व सुबक जल्दी पच जाय व हल्की है	बूढ़े आदमी कू बीमारि करै है	चुपर लेनी घी सै दूध के संग' 'पानी तो नुकसान न करैगी

अंत—

हिंदी जवां वरताउ वैद्यन का इषठ्ठा किया हुआ टीपू सुल्तान का मिला हूआ उपर चार जद बल्के के पहली मैं नामपाने का पीने के दूसरी मैं फायदा तीसरी मैं नुकसान चौथी में उतार लिखा है।

इति सर्व वैद्य कृतं टीपू सुल्तान संग्रह कृतं मामूल अतिब्बा नाम संपूर्णम् संवत् १९०७ आश्विन शुक्ल १२ दश्यां लिखित मिदं मिश्र पूर्णवल्लभेन स्वार्य आहार मध्ये गंगा तटे।

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'मामूल तिब्बा' है। मूल ग्रंथ फारसी में है जिसको टीपू सुलतान ने संगृहीत किया था। प्रस्तुत पोथी में मूल ग्रंथ के साथ हिंदी का अनुवाद भी दिया गया है।

'मामूल तिब्बा' का विषय वैद्यक है। इसमें चार खाने दिए गए हैं। पहले में खाने पीने की चीजों का नाम है। दूसरे में उनका गुण वर्णित है। तीसरे में उनका विकार और चौथे में निदान दिया गया है। यह ग्रंथ साधारण उपयोग के लिये लाभदायक है।

संख्या ८८. टोडरानंद वैद्यक, रचयिता—अनुमानतः टोडरानंद, कागज—देशी, पत्र—११, आकार—८½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०४, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१७३७ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, एम० ए०, 'साहित्यरत्न', ब्रह्मनाल, बनारस।

आदि—

यै शाव अषद कर कुट कं धरै तव हीग कह कटोरे मो डाली कै आगीण चढाई देइ लाठी के हुरा सो घोटना जब हीग भुनी जाइ तब ओषद मह डारि कै छानी लेइ कपरासो पुराक मास ४ गरम पानी से दीजे तो भुष लागै वायु हरै पेट झरत होइ तौ पाई पानी न पीवै घरी २ पेट कब्जु होइ तौ राती कौ पाइ सोवती बेला पानी जेतना पीवै झाडा पुली के होइ सीत वाऐ हरै २ अथ झोल बीधी। गोघृत तोला १६ आक क्षीर तोला ४ मीरीची काली तोला १ आक पत्र रस तोला २ हुर हुर पत्र रस २ ऐह औषद आनी कै रापै।

अंत—

दुशरी वीधी

भेला कर तेल नीकारी कै लोहे के वासन महकरी कै तव उसर मह गाडी रापै महीना भरी तव उषारी लेइ अर्जत वरन पर लगावै चंगा होइ दिम ६३ अथ शाक वीधी वाडभिरंग तोला १ चीता तोला १ कुरैश्रा कै छाल तोला भकटै अजरी की छाल तोला १ छीत वनाजारी की छा तोला १ धतुरा का वीज तोला १० अरुशा का पत मासे ६ बीरीआ तोला १ इति श्री वेदक टोडरानंद संपुरन समाप्तं समत १७३७ ।

यह पोथी पंडित महादेवदत्त जी का है ।

विषय—वैद्यक ग्रंथ है । कुछ रोगों पर अनुभूत औषधियों के नुसखों का संग्रह है ।

संख्या—८९. महाभारथ कथा कर्न आरजुनी (कर्णार्जुन युद्ध), रचयिता—ठाकुर कवि, कागज—देशी, पत्र—४२, आकार—७½ × ४¾ इञ्च, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)-४२०पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य , लिपि—नागरी और कैथी मिश्रित, लिपिकाल—१७९६ वि०=सन् १७३९ ई०, प्राप्तिस्थान-काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस दाता—ठा० रामदत्त सिंह, ग्राम—लछीरामपुर, डाकघर—रानी की सराय, जि० आजमगढ़

आदि—

राम सहाइ सदा रहै
श्री गनेस आए नमह
ली: महाभार्थ कथा
करन आरजुनी,

गनपती प्रनवौ चीत दै चरना । कथा प्रवीत्र जासु हीत वरना ।
पुनि प्रनवौ जालप कर जोरी । वीमल भग्ती देहु वीनती मोरी ॥
सारद मारतइ सपन देषाना । गौरी पुत्र जेनु परवत पाना ।
मै ठाकुर पुछत हौ तोही । भारथ कथा सुनावहु मोही ॥

॥ दोहा ॥

सारद माता गनपती दुइ मीली कीन्ह पसाव ।
"ठाकुर" बुधी पुनीत अती भारथ कथा सुनाव ।

तव धरी लागी ए कपट कीन्हा । रावन सहित जन्म तेइ लीन्हा ।
खेल एक पुरसन्ही पेलावा । पाछे महारथी माटी मेरावा ।
आनी भुइ गुनव ऐ वादल । भुइ पर बारह डण्ड मह्नापल ।
उतर देस है प्रग हंकारी । कोठीक प्रगना लीन्ह करारी ॥

॥ दोहा ॥

राज भेद कर राउत ठाकुर आन जुझार ।
गावो करन क पौरुष महाभार्थ कथा रसार ॥

अमर कोक अनेग जे अर्था । जाकारन पींगल औ भर्था ॥
सुनीए सुग्रीत वेद पुराना । ताकी आदी 'ठाकुर' भल जाना ॥
सीधनाइ के अछर है पाँचा । चौतीस अछर के कहरा वाँचा ॥
कवी के अछर सभ सीषा । काढी घरी हथवटी लीषा ॥
सुध पढत असुध न जाना । लघु द्रीघ मइ कीछु न वषाना ॥
भारथ कथा केरी सुरसाइ । वाढै धर्म पाप छै जाई ॥

× × ×

अंत —

॥ दोहा ॥

तुहु पुनीत हम पापी बोलही पाचौ भाइ ।
बहुत सोच भा मन मह लेपत लेषी न जाइ ॥

राए दुदीस्टील अंकमलावा । सहदेव लकुर धरा गइ पावा ॥
आर्जुन कहै संग भइ जरी हौ । भीम कहै मइ का जी करीहौ ॥
राए दुदीस्टील ले अस कहही । बंधौ कर्न हमारे अहही ।
अन डाढी भुइ षोजहु जाइ । जहा न मनु सेजा होइ भाइ ॥
देषी वीचारी सकल तहा हरी । कतहु न वसुधा हइ वीनु जरी ॥

॥ दोहा ॥

करूना करही पंडव कवनी गती हम कीन्ह ।
भीम पसारी हथौरी करन कै सज गती कीन्ह ।

भीम हथौरी वीर सवाआ । करन दगध ले तहा दीआ ।
क्रीइन जाना क्रोध भा भींवा । बधव समुझी न मारइ जीवा ॥
क्रीइन के मन मह संका परी । तहा सइ वीचली गए तब हरी ।

सुभमस्तु सीधरस्तु

इतीश्री महाभारथ कथा कर्न अर्जुनी समपुर्नजो देषा सो लीषा मम दोषो न दीअते समत १७९६ समै नाम माघ वदी तेरसी वार बुधवार के उतारल थानी मोकाम धवरहरा जे पंडित ज वाचही तेन्ह के वीनतीऔ ॥

॥ दोहा ॥

जो देपेउ सो लीपेउ मै मतीमंद गँवार ।
अछर मात्रा टुट बढा वाचव पंडीतराज सुधार ॥

विषय —

कृष्णार्जुनयुद्ध का वर्णन किया गया है ।

टिप्पणी—रचयिता ने अपने संबंध में कुछ लिखा तो है, पर वह अस्पष्ट है:—

तव धरी लागी ए कपट कीन्हा। रावन सहीत जन्म तेइ लीन्हा।
पेल एक पुरसन्ही पेलावा। पाछे महारथी माटी मेरावा॥
आनी भुइ गुनव ऐ वादल। भुइ पर बारह डंड महापल॥
उतर देस है प्रग हंकारी। कोठीक प्रगना लीन्ह करारी॥

दोहा

राउ भेद कर राउत ठाकुर आन जुझार।
गावौ करनक पौरुष महाभार्थ कथासार॥

अमर कोक अनेग जे अर्था। जा कारन पींगल औ भर्था॥
सुनीए सुम्रीत वेद पुराना। ताकी आदी ठाकुर भल जाना॥
सीधनाइ के अछर है पाँचा। चौतीस अछर के कहरा वाँचा
कवी के अछर सभ सीषा। काढी षरी हाथ वटी लीषा॥
सुध पढत असुध न जाना। लघु द्रीघ मइ कीछु न वषाना॥
भारथ कथा केरी सुरसाई। वाढे धर्म पाप छै जाइ॥

उपर्युक्त उद्धरण से कुछ ऐसा पता चलता है कि ये किसी राव (राजा) के भेदिया और सरदार (रावत) थे तथा संभवतः प्रयाग (प्रग, उतर देस) के शासक थे। इन्होंने अमर, कोक, पिंगल और भारथ को अच्छी तरह से तो पढ़ा ही साथही वेद, पुराण एवं स्मृति ग्रंथों की आदि भी अच्छी तरह जानते थे। 'सीधनाइ' (ऊँ न म सि धं) के पाँच अछर, चौतीस अक्षरों का ककहरा (कहरा) और कवि के अक्षर (शुभ और अशुभ अक्षर एवं गणागण) इन्होंने सीखे एवं उन्हें हाथ से भी (? पाटी पर) लिखा। जो कुछ सीखा, पढ़ा और लिखा वह सब शुद्ध-शुद्ध। लघु दीरघ के विषय में तो कुछ कहना ही नहीं है आदि। इन बातों से ये उच्च स्तर के लिखे पढ़े सुसंस्कृत विद्वान जान पड़ते हैं। संभवतः यही असनी के प्राचीन ठाकुर हैं जो अपने फुटकल कविताओं के लिये प्रसिद्ध हैं। प्रस्तुत ग्रंथ का लिपिकाल संवत् १७९६ वि० है। अतः ये इस संवत् के पहले हुए। यदि यह अनुमान ठीक है तो ग्रंथरूप में उनकी यह रचना पहले पहल प्राप्त हुई है और इस दृष्टि से यह महत्वपूर्ण है। ये भगवती और गणेश के उपासक थे। प्रस्तुत रचना इन्होंने भगवती शारदा की प्रेरणा से की जिनका इन्हें स्वप्न हुआ था:—

सारद मारतहू सपन देषावा। गौरीपुत्र जनु परवत पावा॥
मै ठाकुर पूछत हौ तोही। भारथ कथा सुनावहु मोही॥

दोहा

सारद माता गन पती दुइ मीली कीन्ह पसाव।
ठाकुर बुधी पुनीत अती भारथ कथा सुनाव॥

संख्या ९० क. शब्द सदगुरु के, रचयिता—ठाकुर या ठाकुरदास (गौसपुर, डा० निजामाबाद, आजमगढ़), कागज—देशी, पत्र—११, आकार—८¾ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३१, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस। ग्रंथदाता—पंडित जगन्नाथ मिश्र, ग्राम—गौसपुर, डा०—निजामाबाद, जि०—आजमगढ़

आदि—

पदमन के वहटका लागी।
छोराउत अमी सुधारस निर्मल षात उठै अनुरागी।
सो रस त्यागि विषै मे पागे स्वान रूप मन जागी ॥ २ ॥
मारत लातन दातन काटत तवहु न गर्दभ भागी।
स्वान कटउ अलि करत विविधि विधि दुइ देत एक धागी ॥ ३ ॥
ऐसी मोह जनीत दुष दारुण छुटत नाथ तव जागी।
"ठाकुरदास" चर्णरज सेवत शार शब्द उर लागी ॥ ४ ॥
माधो घर की राह निवेरो।
पाँच पचीश तीस चवतीश को वांधि करो हिय डेरो।
आठ अव तीनि दोष दल मर्दों उर पक्षी उर घेरो ॥ १ ॥
दशौं द्वार को इसही वान्धो मया स्वप्न भ्रम तोरो।
कुमति पशार वांधि तन मन से नग्न दोहाइ फेरो ॥ २ ॥
एह अशाध्य दुख प्रभु जौ काटौं आपन खुशी पशेरो ॥ ३ ॥
ज्ञान रूण हिय माह विराजौ जन की विनै शवारौ।
'ठाकुरदाश' दया सतगुर की ज होउ प्रछै पद चेरो ॥ ४ ॥

अंत—

नहीं आकाश है नहीं पाताल है नहीं मृत्यु लोक की कार शाजी।
नहीं जमराज है नहीं धर्मराज है नहीं पाप नहीं पुन्य ताजी।
चंद्र अरु सूर्ज तारंगणा पवन जल नहीं हैं हींदुआ तुरुक पाजी।
नहीं वह हद है नही अनहद है नही वोह जगमगी जोति साजी।
भूत वेयताल नही काल सयतान नहीं जग्त परिपंच नही कोउ काजी।
रूप अखंड है लहर आनंद है अगम की पंथ है सत्य साजी।
दास ठाकुर शोइ देश मे पेशनीज जागता पुरुष से शकल शाजी ॥ १ ॥ ८ ॥

\+ × +

प्रकृति तत्व मे मेलिए तत्व पृथक करि देषि।
मन वुधि चित के सोधिए वुक्षि नयन भेषि।

उलटि पलटि निरषत रहै बुझै मन ठहराय।
हरि हा हो ठाकुर गाएव नगर में घर करै तिनि सुंन्य के पाए ॥१०॥
सब्द सूरति शे शोहिये वानी विमल विराग।
सोद्धि बुद्धि मन दृढ़ दीये सत संघति गति जाग।
विरह भक्ति हृदये धोवै तन की दाग।
हरिहा ठाकुर विमल भक्ति मोती भूरै हंस होए···

—अपूर्ण

विषय—भक्ति, ज्ञान और वैराग्य संबंधी पदों का संग्रह।

टिप्पणी—ग्रंथ के आदि, मध्य और अंत के बहुत से पत्रे नहीं हैं। रचनाकाल और लिपिकाल भी अज्ञात हैं। रचयिता का नाम के अतिरिक्त और परिचय नहीं मिलता। ग्रंथ स्वामी से पता चला कि ये उनके पुरखे थे और लगभग १००।१५० वर्ष पहले वर्तमान थे। ये सनातन धर्म में आस्था रखते थे, पर साथ ही निर्गुणी संतों जैसे विचार भी रखते थे। दोनों विचारधाराओं को लेकर इन्होंने पदरचनाएँ की हैं।

संख्या ६० ख. ज्ञा० गी० (ज्ञानगीता), रचयिता—ठाकुरदास, कागज—देशी, पत्र--२८, आकार—१२$\frac{3}{4}$×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)--८, परिमाण (अनुष्टुप्)--५३२, खंडित, रूप--प्राचीन, पद्य, लिपि--नागरी, प्राप्तिस्थान--काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस। ग्रंथदाता--पंडित जगन्नाथ मिश्र, ग्राम--गौसपुर, डा०--निजामाबाद, जिला--आजमगढ़

आदि--

श्रीमते रामानुजाय नमः

वन्दौ श्री गुरु कमल पद जेहि शेये भ्रमनाश।
तेहि चरनन को रेनु काटै जम कौ फाश ॥ १ ॥

शकल सुमंगल मूल एह शकल अमंगल नाश।
सकल जीव कह मोक्ष प्रद शेवत जासु अनाश ॥ २ ॥

जेहि सेवत सुर सिद्धि नर विष्णु आदि त्रयदेव।
मछ आदि अवतार शद शोपद अछै अभेव ॥ ३ ॥

नीर सरगुन वेद मत शकल पछ को मूल।
जेहि शेये हरि चिन्हिया मीटी पाप मैशूल ॥ ४ ॥

\+ \+ \+

विनै प्रीति कर जोरि करि कहीय उमा मृदु बएन।
कहहु राम गुन रूप निधि खुलै होय दुइ नयन ॥ १६ ॥

सुनि बोले सीव विहसि उर शुनहु उमा चीत लाए।
रघुपति चरन सरोज रज करन लगे समुझाए ॥ १७ ॥

अंत--

मार्ग द्वार एक एंडी राखै। दूसर मूल द्वार धै राखै॥
एहि विधि आशन सिद्धि लगावै।
उलटि पवन ब्रह्मांड चढावै॥
गुरु से बुझि वान्धि उखेरा। त्रिकुटी संगम नावै डेरा।
विज मंत्र लेइ शास चढावै। इंगला पिंगला माह समावै।
पहिलै ''श रेचक नामा। चौविश नाम पुरक भरिकामा।
छतिश कुंभक माह जपावै। एहि विधि कुछु दिन प्रेम बढावै।
आवत जात राह परिजाई। तव फेरि दुगुना देइ वढाई।
सतोगुन अनकृत स्वल्प अहारा। मारै निंद्रा नाम अद्वारा॥
त्रिकुटी पवन वस्य करि रापै। वीज मंत्र तेहि उपर भाखै।
नवव नाटिका वंद करि बोलै। दशै द्वार केवारा खोलै।
झिलिमिलि जोति करै उजिआरा। देखहु दहुँदिशि जोति पशारा।
पाच तत्व तहा देखन आवै। मन बुद्धि शोद्धि चित उरलावै।
पहिलै प्रीथ्वी तत्व दरसावै। पित स्वरूप शकल भर्मावै।
तेहि वीचे अति नेह न लावै। ताके उपर जल दरशावै॥
सेत रूप विच झलक न आवै। ताके उपर तेज दरसावै।
अरुन रेषि कछु देर न लावै। तापर पवन रूप दरसावै।
अरति रंग विच प्रिति न लावै। ता उपर आकाश दरशावै॥

—अपूर्ण

विषय--एक रूपक कथा द्वारा आध्यात्मिक विषय का वर्णन है। कथा इस प्रकार है :--

काशी रूपी काया में मनसराज ब्राह्मण अपनी बुद्धि रूपी स्त्री के साथ रहता था। वह विश्वनाथ (आत्मा) का बड़ा भक्त था। उसकी भक्ति की परीक्षा करने के लिये भगवान् एक दिन अघोरी साधु के रूप में उसके पास आकर अपनी तपस्या की सिद्धि के निमित्त उसका मांस माँगने लगे। साधु ने कहा, 'तू बड़ा भक्त है। मुझे तपस्या की सिद्धि तब प्राप्त हो सकती है जब मैं तुम जैसे भक्त का मांस खाऊँ। अतः हे भक्त! तुम मुझे अपना मांस दो।' ब्राह्मण ने पहले तो अपने से उत्तम भक्त की खोज की, किंतु इसमें जब सफलता नहीं मिली तो स्वयं ही स्त्री पुत्रों के साथ साधु की इच्छा पूर्ति के निमित्त तैयार हो गया। साधु जो स्वयं भगवान् ही थे बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने ब्राह्मण से वरदान माँगने

के लिये कहा। ब्राह्मण ने भगवान् से अपने यहाँ पुत्र रूप में जन्म लेने का वरदान माँगा। भगवान् ने तथास्तु कहकर ब्राह्मण के घर जन्म लिया। आगे चलकर मनसराज पुत्र द्वारा बैकुंठ लाभ करता है। कुछ दिन पश्चात् पुत्र का अपनी माता (बुद्धि) के साथ वार्तालाप होता है जिसमें बुद्धि को ज्ञान लाभ होता है। अंत में बुद्धि पुत्र से योग विषयक ज्ञान भी प्राप्त करती है। इसके बाद ग्रंथ खंडित है।

संख्या ६१. तुरसीदास की वाणियाँ, रचयिता—तुरसीदास (गुसाईं), कागज—देशी, पत्र—१७१, आकार—१०½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३५, परिमाण (अनुष्टुप्)—८२२९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल – सं० १८५६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि--

अथ गुसाईं जी श्री तुरसीदास जी कौ कृत लिष्यते।

॥ अथ प्रथम ब्रह्मनाम स्तुति ॥

वोऊँ प्रम जोति प्रकासस्य प्रब्रह्म परापरं।

परानंद प्रमादि पुरुष प्रमात्मा प्रमेस्वरं ॥ १ ॥

प्रमततं प्रम तेजं प्रमसांत सरूपकं।

प्रमपद समांन सरब सिधि अजरौ अमर अनूपकं। २ ॥

प्रम नृगुन निराकारं निरक्षरो निरामयं।

निरविकारं निराधारं निरविग्रहो निरामयं। ३ ॥

× × ×

॥ अथ गुर कृपा विधान ॥

तुरसी परथम गुर कृपा सु दुतीए सत संगम जांन।

त्रितीए पूरव अंकूर मिलि उदै भयौ यह ग्यांन ॥ १ ॥

तुरसी ग्यांन प्रभति हरि की भक्ति अष्टांग जोग अरु त्याग।

गुर गमि ग्यांन मजूसिका षुली हमारे भाग ॥ २ ॥

अंत—

स्थानं स्थिरं कृत्वा अलपं भोजनमाचरेत।

अल्पनिद्रां अलपतुयं प्रथमे जोगस्यलक्षनं ॥ १८ ॥

निराकारं निराधारं दालिद्रं दुषभंजनं।

सदाशांत सर्व रुपं तुरसीदास तस बंदनं ॥ १९ ।

इति श्री गुसांई जी श्री तुरसीदास जी कौ कृत संपूर्ण ॥ कृत की शंष्या ॥ साषी ॥ ४२०३ ॥ परिकरन ॥ २०० ॥ ग्रंथ ॥ ४ ॥ पद ॥ ४६१ ॥ राग ॥ २९ ॥ श्लोक १८ ॥ संबत् ॥ १८५६ ॥ की मिती जेष्ठ माशे कृष्ण पक्षे तिथ्यौनांम ॥ ११ ॥ बार बृशपतवार

कै दिन सुभं भवेत ॥ लिषतं च ग्राम पारव्या मध्ये लिषतं श्री बाबा जी श्री श्री हरिदास जी का साधां श्री स्वांमी जी श्री सेवादास जी तिसशष श्री स्वांमी जी श्री अमरदास जी महा बिरकत ता०प्रसाध श्री श्री स्वामी जी श्री दरसण दास जी ता प्रसादे सिष मुकनदास पठनारथं ॥

कृपा तैं पूसतग लिष्यौ छै सु अपन हस्ते ॥
बांचे विचारै जाकूं रांम रांम न्मसकारं ॥

विषय—

निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश वर्णन। प्रस्तुत बानियों में निम्नलिखित रचनाएँ सम्मिलित हैं:—

१—साखी

२—ग्रंथ चौग्रक्षरी

१—करनीसार जोगग्रंथ।	पत्र—३६५ से
२—साध सुलक्षन जोगग्रंथ।	,, ५३६ तक
३—तत्वगुन भेद जोग ग्रंथ।	

३—पद

ये ग्रंथ बृहद् हस्तलेख में हैं जिसके लिये सेवादास पर लिखी गई टिप्पणी देखनी चाहिए।

संख्या ६२. भ्रमर गीत, रचयिता—तेजसिंह, कागज—देशी, पत्र-१५, आकार—४·६ × ४·३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री० पं० महेशप्रसाद मिश्र, गाँव—लिदहाबरा, डा०—प्रटरामपुर, जि०—इलाहाबाद

आदि—......

सो कुविजा वस ह्वौ गई देषि कै,
काली को नाथ्यौ नैंडारि कै गोंद है।
तो कों पठाए ते आऐ इहा तुम,
ठाढे भयो हो महीना...लोवें है।
काहू को राज भऐ तुम भूले हो वावरे,
रावरे सों नहिं भोंदे है।
ऊधो जू साचु उहै उपषान है,
काका की भैंसी भतीजे कों तोंदें है ॥

× × ×

चोर सो आइ सुनावत चाह भए घृज माँह बड़े दुषदाई ॥
कान्ह बने कुविजा पति है पति राषै की बात कहै न सुहाई ॥
आदि न जानत हो तप की तुम जोग की ह्याँ चरचा है चलाई ॥
ऊधोजी काहे कोषात फिरौ घर मे नाही सूजी भगौती दोहाई ॥

अंत—

चाहत वै जोग हम भरी है वियोग
विसरायो वह भोग जामे दधि दूध महियो ॥
आपु करै राज लागै तनको लाज इहाँ जपतप,
साज हमही सों कहै गहियो ॥
तुम हो सुजान देष जात जैसो ठान,
तैसो कहियो निदान हूँ सकुचमति रहियो ।
छोड़ी वृजवाम कीन्हो कुबिजा को काम,
ऊधो ऐसो घनस्याम सो प्रनाम जाइ कहियो ॥
केलि करी हरिजू बहु भाँति सों,
दान लियो हम सों दधि दूधो ॥
प्रीति की रीति विसारि कै 'तेज'
संदेस पठावत वेद विरूधो ॥
प्राण पियारे को छोडि कै काह,
कियो तप है हम पूछती सूधो ॥
जोग सिषावन आवत हो,
वृज वासन के घर घालन ऊधो । ३४ ॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में गोपी उद्धव संवाद के रूप में गोपियों का विरह वर्णित है ।

टिप्पणी—ग्रंथ व्रजभाषा में है और इसमें कवित्त, सवैया छंद प्रयुक्त हैं । काव्य की दृष्टि से सुंदर और सरस रचना है ।

संख्या ६३. राजनीति चंद्रिका, रचयिता—त्रिलोकसिंह, कागज—देशी, पत्र—१९, आकार—५$\frac{3}{4}$ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६६, पूर्ण, रूप—जीर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०५ वि०=१८४८ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, बनारस

आदि—

॥ श्री गनेस जू ॥
॥ अथ लिख्यते राजनीति चंद्रिका ॥
॥ दोहा ॥
श्री गनपति विनऊँ सदा और सुसुंती माइ ।
दीजै "सिंह त्रलोक" को उतिम ग्रंथ बनाइ ॥ १ ॥

× × ×

२ दोहे अपाठ्य हैं ।

हित उपदेसौ मित्र सौ रुचि मो सुनै नरेस ।
होई जहां अनूकूल फिरि संपति करै प्रवेस ॥ ३ ॥
सुभ उपदेशे करै नहीं कौन काम वह मित्र ।
कौन काम वह प्रभु कहौ कहित न सुनै दै चित्त ॥ ४ ॥
बड़े ठौर पहुँचे कहा फल कर मन अनुसार ।
वासुक कंठ महेस के करत समीर प्रहार ॥ ५ ॥
उपवन रचना कौन पुनि ज्यौं माली सब काल ।
असो अनुभौ होइ जो राज करै चिर काल ॥ ६ ॥

× × ×

वेद अंग तत्वज्ञ जब हौंम सुकर्म समाज ।
मन वच आसिप वंत जो वरनौ प्रोहित राज ॥ ८ ॥

अंत—

राजनीति को ग्रंथ सुनि कछू कछू मति होइ ।
दोहा 'सिंघ त्रलोक' ये करे दोइ सै दोइ ॥ २०३ ॥
होत चंद्रिका को उदै रिपु कल कोक सकोक ।
लोचन मित्र चकोर ज्यौं प्रमुदित 'सिंघ त्रलोक' ॥ २०४ ॥

॥ छंद ॥

भ्रमै अबोध अंधकार इंद्र के विलास मैं ।
बिलोक लोक सभा मिभ्र जास के प्रकास मैं ।
कही 'त्रलोक सिंघ' सो पढ़ो गुनो अनंदिका ।
अनेक हेत कै उदोत "राजनीति चंद्रिका ॥ २०५ ॥

संपूर्ण सुभमस्तु वैसाष मासे सुभे शुक्ल पछे अष्टम्यां बुधवासरे संवत् १९०५ ॥

विषय—

राजनीति वर्णन, राजपुरोहित लक्षण, नृप लक्षण, राजा के लिए त्याज्य और विहित कर्म ।

संख्या ९४. वाणियाँ, रचयिता—दत्तात्रेय, संख्या ५९ के विवरण पत्र में इनकी वाणियाँ दी हुई हैं, अतः उक्त विवरणपत्र द्रष्टव्य ।

संख्या ९५. कवित्त दयादेव के, रचयिता—दयादेव, कागज—देशी (खुरदरा पीला कागज), पत्र—१, आकार—५×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२, परिमाण (अनुष्टुप्)—७, अपूर्ण, रूप—जीर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८१३ के लगभग, प्राप्तिस्थान—महाबीर सिंह गहलोत, जोधपुर

आदि--

श्री हरि ॥ कवित्त दयादेव के ॥

आछे ए अवास आछे कमला विलास,
आछी सौंधे नीकी वास मिली मधुकर गान सौं।
रूप के निधान आपुकार सुजान,
आए कहा दयादेव मिलि बिधि विधान सो।
तन को सिगार करि मन को अधार की
जो ये तेरो मान ही सौं मान्यो......
मेरी मान करि मान सो ॥ १ ॥

+ + +

आयो है वसंत जहाँ संत ऊ संचित होत,
निहंचित तेई दयादेव जेई जोरी है।
तातें तजि मोन लालन ते करि गौंन आली,
सूधी करि भौंहे जोते नाहक मरोरी है।
मानि कह्यो मेरो मेरी मान को नवासरए,
मान तजि मिल जे कहा कछु भोरी है।
मान बिनु कीने मनु मानतु न मानति तो,
मान करिवे को और रितु थोरी है ॥ २ ॥

अंत--

अति अनमन अनबने सोच सने,
स्याम ठाढे रहे तू कहे तो पाइ पारिये।
मेहरी के मनु एसो होइ क्यों,
दैय्या त्यौं त्यौं एठी जाति ज्यौं ज्यौं समुझाइये।
कहे 'दयादेव' देखि जाने अनजाने रोस,
कीनो सुतो कीनो अव रस की विचारिये।
रोस हू मैं रसु है जो है ढरहु तातें,
रोस ही रसीली आली रसुक कहि ठारिये ॥ ७ ॥

+ + +

विषय--विप्रलंभ शृंगार के ७ कवित्त।

संख्या ९६. भाषामहिमन (शिवमहिम्र), रचयिता—दयाल कवि, कागज देशी, पत्र—१०, आकार—८३/४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२००, पूर्ण, रूप—प्राचीन (जीर्णशीर्ण), पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान--आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी ना० प्र० सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः

सेवा संकर की करै·····हित मनुलाइ ।
रीझि रिझावत है······न के गुन गाइ ॥ १ ॥
संकर संकर······सेवक सिद्धि सहाय ।
करत कृपा·····मैं कलमल दुःख पराय ॥ २ ॥
+ + +
चहत कियौं कविदीन है "महिमन भाषा" वेस ।
करौ सिद्धि वरनै लगौ करिकै कृपा महेस ॥ ६ ॥
"नरपति सिंह सुजान" ने आयस दीन्ह्यो मोहि ।
"रचिभाषा महिमन" करौ सैव सराहै तोहि ॥ ७ ॥
नरपति सिंह सुजान पै करौ कृपा जगदीस ।
करौ चक्कवै जगत को······यह दीस ॥ ८ ॥

अंत—

पूजा पाठ पद्धति पटल न करन पावैं,
जपतप व्रत नेम नाही निवहत घर ।
माया भ्रम जाल मै भरमावै पर देश देश,
वासर वितावै व्रथा तीर्थं ना करावै तर ।
भनत दयाल कैयो वेर मै पुकार्यौ नाथ,
कैसे हौ उदार जो अनाथ पैं कृपिनतर ।
संकट हरण असरण की सरण याते,
दारिद वृंद को विदारौ हे वरदवर ॥ ११ ॥
वरद विचारि वालपन तै सरण आयौ,
वांछित मनोरथ के सेवाफूल पाइहौं ।
सुरसरि तीर नीर संजम संभारि प्रात,
ध्यान धरिधाम बैठि निसुदिन ध्याइहौं ।
विद्या को विलास वाणी विमल विनोद छोंडि,
काँहू धरा धीसन पैं धोपे हूँ न धाइहौं ।
सुकवि "दयाल" पैं दयाल होत काहै नहिं,
तों सों हैन दाता दास औरे को कहाइहौं ॥ १२ ॥

विषय—

संस्कृत रचना महिम्नस्तोत्र का अनुवाद ।

संख्या ६७. अवगत उल्लास, रचयिता—दयाल नेमि, कागज—देशी, पत्र—१०२,

आकार—५·४×८·६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३९०, अपूर्ण (अंत का केवल एक पत्र खंडित), रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री बिहारीजी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद

आदि—

ॐ श्री गणेशाय नमः ॥ दोहा ॥

ॐ आत्म कौं परिणाम करि आत्म कहौं प्रकास।
याकों नाम प्रसिद्ध है अवगत को उल्लास ॥ १ ॥
नाम रूप मृग जल सबै काकौं करौं प्रणाम ॥
मेरी मुझको वंदना सोहं आत्म राम ॥

कवित्त

नाम रूप मृग जल सब कौन कौं प्रणाम करौं,
अहै निज सार आप आप कौं प्रणाम है।
अपुनपौ अपार निरधार कछु नामैं करौं,
षटचार थकत येसैं चिदघन राम हैं।
बुद्धि तैं विहीन मूढ लपटे योगादिक भ्रम,
कहै निगम प्रगट तहाँ यतन को न काम है।
आदि अंत मध्य वस्तु जिउं की तिउं सब समान,
येसैं अनेमी घाल सुतै सिद्धि धाम है ॥ १ ॥

अंत—

अवगत अर्थ फल जानीयै फल अर्थ आत्मा जान।
'उल्लास' अर्थ सुप्रकास करि यनंत विधि बिज्ञान।
आत्म प्रकास या ग्रंथ कौ जो समुझै सज्ञान।
तिन मानौ या जगत में कीनो अंम्रत पान।
अमृत पान करि अमर ह्वै मुक्त हो…………

—अपूर्ण

विषय—'अवगत उल्लास' के अन्य नाम 'आत्म प्रकास' और 'सर्वसार संग्रह' भी है। इस ग्रंथ का विषय वेदांत है। आरंभ में कवि ने स्वयं अपनी (आत्मरूप में) वंदना की है तत्पश्चात् पंच देवताओं की प्रार्थना है। पंच देवताओं की प्रार्थना केवल परम्परा के पालनार्थ की गई है। इस ग्रंथ में ९ प्रयोग या अध्याय हैं जो नीचे दिए जाते हैं :—

१—वस्तु निर्देश और मंगलाचार।
२—षट्दर्शन प्रदीपिका—इसमें छओं दर्शनों के मत का उल्लेख है।

३—निरुपाधि, सउपाधि, एक अनेक, अध्यारोप, अपवाद आदि का निरूपण।
४—संकल्प विलास—इसमें मन का निरूपण है।
५—भक्ति आलोचना।
६—जीवन मुक्ति का स्वरूप वर्णन।
७—सर्वात्मस्वरूप वर्णन।
८—माया त्रिविधा। इसमें माया के सत, रज, तम तीनों रूपों का निरूपण किया है।
९—वैराग्य।

इन नौ अध्यायों के पश्चात् रचयिता ने साधक की शुभेच्छा, विचार और अभ्यास आदि सात भूमियों का वर्णन करके अंत में आत्मानंद स्वरूप का नव रस मय वर्णन किया है।

टिप्पणी—ग्रंथ में कवित्त तथा दोहा छंदों का विशेष रूप से प्रयोग हुआ है। इसके अन्य नाम 'आत्मप्रकाश' और सर्वसार संग्रह भी हैं। इसकी भाषा व्रज है पर इसमें कहीं-कहीं खड़ी बोली भी प्रयुक्त हुई है, जैसे:—

नही काहू की ह्वै रहती है।
सबहूँ कौ अंतर दहती है।

× × ×

कृष्णादिक सों छल करती है।
यह काहू सों नहीं डरती है॥ (माया)

—पत्र संख्या, ५९

विषय की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण है। कविता भी ललित है।

संख्या—९८. प्रेम वतीसी, रचयिता—दयालाल, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—७×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

अथ उद्धव गोपी संवाद प्रेम बतीसी लिष्यते ॥ कवित्त ॥
जाछिन तें जीवन मूर संग लै कै कूर
नाम अकरूर गयौ करम कूर कै।
ताछिन तें गोपी जिन नेह धुजा रोपी,
तिन देह सुधि लोपी विरह जरूर कै।
तरस हिये में रहै पिय के दरस काज,
करै सपरस आप मदन अरूर कै।
पूर करैं दुषन हिय चूर कैं सुपन तिय,
मूरकैं सुजिय वोलें कछू गरूर कै॥ १॥

स्याम के हिये में इत रहै तलाबेली अति,
मेरी जे महेली ते अकेली मेली हाय क्यौं।
उन बिन मैं हू सूनौ अरू उन्हैं दुष दुनौं,
कैसै ह्वै है बोलऊनौ यहै सोच माय क्यौं॥
बेग कहिआयौ अैबौ वनत अभी न जैवो,
कछु तौ संदेस दैवौ नही दुष जाय क्यौं।
सुधि न रहाय क्यौं हूँ कुछू न सुहाय क्यौ हूँ,
प्यारिन कौं छोडि दुष लयौ इहाँ आय क्यौं॥ २॥

अंत—

उद्धव विचार व्रज भूमि जानी सार गुल्म लता हौनौ भर
आस हरि सौं जनाइ है।
गोपिन सो मान हार हिय मधि राखि प्यार,
आपही सौं करी निराकार की मनाई है।
व्रज वनितानि कौ प्रेम कौ न वार पार,
बुधि अनुसार कछु मैं हू नै गनाई है।
मति सरसाई मन भाई 'दया' हिय आई,
गुरुन दिखाई रीति मरतें यौं वनाई है॥३२॥

इतिश्री उद्धव गोपी संवाद प्रेम वतीसी दयालाल कृत संपूर्णं

विषय—

ग्रंथ में ३२ कवित हैं जिनमें गोपी उद्धव संवाद के रूप में भ्रमरगीत वर्णित है।

संख्या—६६. खुम्मानरासो, रचयिता—दलपति राम, कागज—देशी, पृष्ठ—६१२, आकार—$९\frac{३}{४} \times ७\frac{१}{२}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—७६५०, खंडित, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—

श्री गणेशायनमः

गाहा

ॐ ऐं मंत्र अपारं। सारद प्रणमामि माय सुप्रसन्न। सिद्ध ऋद्ध बुद्धि सिरं। पूरे वर बेद पढि पुन्नं॥ १॥ वरवेद पुच्छ कहरुच्छा॥ वीणा सुर वह कमल कर विमला॥ हरणं सी इंस रूढा॥ विज्जावैजंतिया माला॥ २॥

दोहा

कमल वदन कमलासना। कवि उर मुष के वास।
बसैं सदा वागेश्वरी विध विध करैं विलास॥३॥

विद्या बुद्धि विवेक वर वायक दायक चित्त ।
अरचैं जे आई तुनैं चरण लगावैं चित्त ॥ ४ ॥
सेवक सूंसानिधि करो । महिर करो महामाय ।
त्रिपुरा छोरू ताहरो सानिध करो सहाय । ५ ॥
आइ द्यो अक्षर अचल, अधिकी बुद्धि उकत्ति ।
'दल पत' सूं कीजे दया सेवक जाणि शकत्ति ॥६॥

अंत—

सींधुर गह बर शावतादीधा दाशी दाश ।
परिधल देपहिरावणि अधि पति बेहूँ उलाश ॥ ७० ॥
पदमणि परणें आविया उदिया पुर अधिपत्त ।
पइणें महिल पधारिया हिकमत हिंदूपत्त ॥ ७१ ॥
हिंदूपति हरणाषि सूं रचोराजइराण ।
सुंदर कमध महिलां शिरें मुकलिणि स्व वंजाण ॥ ७२ ॥
कुहकें कोयलजेम ॥ हंस गवण मुष मुलकती प्रीतम घण वहुप्रेम ॥ ७३ ॥
राणों इक दिन राजसी सहलें चढ्या शिकार ।
गंग त्रिवेणी गोमती अनइ विजें अपार ॥ ७४ ॥
नदी बंधाऊँ नाम कुर तौ हूँ सहि हिंदवाण ॥ ७५ ॥
तुरत गजधर तेड़िया दीधात्यां शिर पाव । तीन नदी वां—

—अपूर्ण

विषय—ग्रंथ के प्रत्येक खंड की कथा का वर्णन संक्षेप में इस प्रकार है :—

प्रथम खंड (पत्र १-६५ तक)

शारदा, गणेश और गुरु की वंदना, चित्रकोट (चित्तौड़) का वर्णन, तथा सूर्यवंशी राजाओं की वंशावली के अनंतर वाप्पारावल की कथा का वर्णन है। कथा यों है:— चित्रकोट रघुवंशियो की राजधानी थी। उनमें से गहिलो नाम का एक पुरुष गांजणगढ़ आया। उसके वंश में श्री पंजर हुआ जिसके समय में गढ़ मुसलमानों के हाथ में चला गया। श्री पंजर की रानी किसी तरह प्राण बचाकर मेवाड़ भागी और वहाँ किसी नागेल (नागल) द्विज के यहाँ रहने लगी। उसने वाप्पारावल को जन्म दिया। वाप्पारावल जब आठ वर्ष का हुआ तो वह वन में गाय चराने के निमित्त जाने लगा। वन में उसे हारीत ऋषि के दर्शन हुए। ऋषि की कृपा से उसको शिव जी का आशीर्वाद प्राप्त हुआ कि वह चितौड़ का राजा होगा। ऋषि ने उसको एक लिंग की उपासना करने का भी उपदेश दिया। इन्हीं घटनाओं के क्रम में उसको देवी के भी दर्शन हुए जिसने प्रसन्न होकर सदा उसकी सहायता करने का वचन दिया। आशाओं के साथ साथ बाप्पा का तेज और उत्साह बढ़ा। उसने चित्रकोट के राजा चित्रसेन के यहाँ प्रतिदिन एक लाख मुद्रा वेतन पर चाकरी

कर ली। थोड़े दिन पश्चात् उसे द्रोणगिरि के एक दानव को मारने की आज्ञा हुई जिसने चित्रसेन के एक राज्य के एक भाग की प्रजा को खाकर समूल नष्ट कर दिया था। वाप्पा ने देवी की सहायता से दानव को मार दिया और गांजणगढ़ को मुसलमान बादशाह (सुलतान साह सलेम) के हाथ से छीन लिया। जब लौटकर आया तो चित्रसेन को मारकर चित्रकोट (चित्तौड़) पर भी अधिकार कर लिया। उसने दानव और चित्रसेन की पुत्रियों से विवाह किया और सुखपूर्वक राज्य करने लगा। इस समय वाप्पा की अवस्था सोलह वर्ष की थी ? संवत् ४९१ में वह चित्तौड़ की गद्दी पर बैठा। संवत् का उल्लेख इस प्रकार है :—

संवत च्यार एकाणुवे एक लिंग अंबाव।
बर दोधो वापा बढें सगत कियो सुपचात ॥ २८ ॥
× × ×
शुक्ल पक्ष वैशाख सुध पंचमी पुष्य नषत।
श्री गुरुवासर चित्रगढ़ वेठो वप्प तपत ॥ ३१ ॥

वाप्पा के बावन पुत्र हुए। उनके तरुण हो जाने पर उसने अश्वमेध यज्ञ किया।

इस खंड की पुष्पिका इस प्रकार है :—

इति श्री दौलत विजय विरचिते वापारो अधिकार संपूर्ण ॥ श्री रघुवंशान्वने वाप्पा तें खुमाण विचें आठ पेढी थई हिवें खुमाण रावल रो अधिकार कहे छें ॥ १ ॥ प्रथम खंड ॥

(द्वितीय खंड पत्र ६६-११० तक)

वाप्पा रावल की ७वीं पीढ़ी (संभवत:) में राजा करण राजा हुआ। उसका पुत्र खुमाण हुआ। करण के पास पुरपट्टन से एक गजधर (?) आया। वह वास्तुशास्त्र का जानने वाला था। करण ने उसको एक महल बनवाने की आज्ञा दी जिसके अनुसार उसने महल बनाकर तैयार किया। महल के एक खंड में उसने दिल्ली का चित्र बनाया जिसमें पाँच पद्मिनी स्त्रियों को भी अंकित किया गया था। खुमान इन स्त्रियों पर मोहित हो गया। उसको गजधर से पता चला कि वे दिल्ली के तोमरराजा की पुत्रियाँ हैं। अंततोगत्वा खुमाण का विवाह उनसे हो गया। दूसरा खंड समाप्त हो जाता है जिसकी पुष्पिका इस प्रकार है :—

इति श्री चित्रकोटाधिपति श्री रघुवंशे वापा षुमांण चरित्रे रति सुंदरी अभी ग्रह करण चित्रकारिका चरित्र रमणराज कुवांरी पाणी गृहण पंच सहेली चित्रगढ मिलण दौलत विजय रचिते द्वितीय षंड संपूर्णम् ॥ २ ॥

तृतीयखंड (पत्र ११०-२३० तक)

इसमें खुमान की रति क्रीड़ाओं और नलवरगढ़ की राजपुत्री तिलोत्मा के साथ विवाह करने का वर्णन है। नायिकाभेद, बारहमासा, षट्ऋतु और संगीत आदि का विशद वर्णन किया गया है। इस खंड की पुष्पिका यों है :—

इति श्री रघुवंशे चित्रकोटाधिपती बापारावल पट्टालंकार रावल करण तनुज पुमांण चरित्रे दंपति संवाद पंच सहेली आपेटक अधिकार नलवरगढ गमन लाषा गृहे तिलोत्तमा आगमण धीगा गवरी पुनर पीटेटन मृत संजीवन एकत मिलन सामान्य बनिसाष्टनायका भाव नवरस विलास त्रितियोषंड संपूर्णम् ॥ ३ ॥

चतुर्थखंड (पत्र २३०—४०८ तक)

इसमें खुमान का महमद गजनी के साथ घोर युद्ध का वर्णन है। युद्ध में खुमान को विजयश्री मिली। पश्चात् करण रावल ने पुमान को गद्दी पर बिठाया और स्वयं काशी वास करने लगा। करण ने ९१ वर्ष २० दिन राज्य किया। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री सूर्यवंशे वापारावल पट्टालंकार करण पुमाण चरित्रे संदेसा मोचन पुनः प्रीयतेडण चित्रगढ आगमन गजनीपति महमद पातशाह चित्रगढ आगमनं सामंत जुद्ध वरणं सामंत नायका जुद्ध वरणं पातशाह ग्रहें मोचन कांनड़देक सामोद रति सुंदरी देवल दे इत्यादिक चारित्रेयं दौलतविजय विरचिते नवरस विलास ग्रंथस्य चतुर्थंषंढ संपूर्णं ॥ ४ ॥

पंचमखंड (पत्र ४०८—४५१ तक)

आलणसी चितौड़ का राजा हुआ। उसका गुजरात के राजा जयसिंह से युद्ध हुआ। जिसमें आलणसी को विजय प्राप्त हुई। जयसिंह ने उससे अपनी पुत्री का विवाह कर जान बचायी। पश्चात् आगे के रावलों की वंशावली दी है जिसमें समर सिंह का उल्लेख है। उसने दिल्ली पति पृथ्वीराज को अपनी पुत्री विवाही। पृथ्वीराज ने संयोगिता (जयचंद की पुत्री) के साथ बलपूर्वक विवाह किया। महम्मद गोरी ने पृथ्वीराज पर आक्रमण किया और संयोगिता को माँगा। इस पर लड़ाई छिड़ गई। समरसिंह पृथ्वीराज की ओर से लड़ा और वीरतापूर्वक मारा गया। इसी प्रसंग में पृथ्वीराजराशा (पत्र ४२५) का भी उल्लेख है। यहाँ से चित्तौड़गढ़ के रावलों (गहलोतों) की पदवी राणा हुई। भीम चित्तौड़ का रावल हुआ उसका छोटा भाई भारथ था। इनके पिता का नाम सूरजमल्ल था। भारत दिल्ली दरबार में चला गया। भीम को पुत्री के अतिरिक्त और कोई संतान न थी। अतः उसने अपने जामाता को चितौड़ का उत्तराधिकारी बनाया। परंतु भीम की मृत्यु हो जाने के पश्चात् राजविद्रोह हुआ और भारत (भीम के छोटे भाई) को बुलाया गया। अंत में राहप (?) को राजगद्दी मिली और वह प्रथम राणा हुआ। इस खंड की पुष्पिका निम्नलिखित है:—

इतिश्री चित्रकोटाधिपति सूर्यान्वये वापारावल पट्टालंकार करण करण पुमांण संतांने राणा राहप अधिकारें यं दौलत विजय विरचिते आलणसी रावल समरसिंह रावल अधिकारे पंचम खंड सम्पूर्णम् ॥ ५ ॥

षष्टम खंड (पत्र ४५१—५१६ तक)

इसमें रतनसेन पद्मिनी की कथा दी हुई है। अलाउद्दीन पद्मिनी के लिये चित्तौड़ पर चढ़ाई करता है जिसमें वह हार जाता है। पुष्पिका निम्नलिखित है:—

इतिश्री चित्रकोटाधिपति बापा खुमाणारघने राणा रतनसेन पद्मणी गोरा बादल संबंध किंचित पूर्वोक्तं किंचीत ग्रंथाधिकारेण पं० दोलत विजय विरचितो यं (षष्टा)--धिकार संपूर्णम् ॥

सप्तम खंड (पत्र ५१६—५६८ तक)

इस खंड में हम्मीर और अलाउद्दीन तथा राणा सांगा और बाबर की लड़ाइयों का वर्णन है । पुष्पिका इस प्रकार है:—

इतिश्री वी दलपती विरचितोयं बापा षुमाण वंसा नृवने षंड सप्तमो समाप्तं ॥

अष्टम खंड अपूर्ण (पत्र ५६८—६१२ तक)

यह खंड अपूर्ण है । इसमें संख्या ५६८ से ६१२ तक के ही पत्रे हैं । जितना अंश उपलब्ध है उसमें विक्रमसिंह, वनवीरसिंह, उदयसिंह, प्रताप सिंह अमर सिंह करणेश, जगत सिंह और राजसिंह तक के राणाओं का वर्णन है । राणा उदय सिंह और राणाप्रताप सिंह का वर्णन कुछ विस्तार से है ।

संख्या १०० क. मुक्तिरत्नाकर, रचयिता—दलेल सिंह (राजा), कागज—देशी, पत्र—१६३, आकार—$१४\frac{३}{४} \times ५\frac{३}{४}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्) १६७१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५५ वि=सन्—१६९८ ई०, प्राप्तिस्थान-आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः पोथी मुक्त रतनाकर कृत दलेल सीह के ।

। दोहा ।

गुर गणेस गिरिजा गिरा गंग जनक गौरीस ।
ग्रह नायक गोविंद जन प्रनवौं महि धरि सीस ॥

चौपाई

बंदौ गन नायक अभिरामा, त्रिजगत पुज्य सुमंगल धामा ॥
तन सिंदुर वर्ण छबि कैसे, जनु अनुराग देह धरि वैसे ॥

× × ×

आसिन मास सकल चलि गयेऊ । विजय जोग दशमी जब भयेऊ ॥
शुक्ल पक्ष शुभ मंगलवारा । मंगल उदधि कथा अनुसारा ॥
अति रहस्य यह कथा अनूपा । मम मति अल्प निरत भव कूपा ॥

× × ×

सम्वत सत्रह सै पंचावन । गुर पग सुमिरि कीन्ह गुण गावन ।
बंदौ पितु पग मन वच कर्मा, जो मोरे ऐह तन के वर्मा ॥

दोहा

रामसिंह नृप जनक मम करणपूर के राव।
तिन्ह के षोडस भाग मोहि, आहि बुद्धि व्यवसाय ॥

अंत—

ऐह क्रिस्न तुलसी के चरित जो पढिहि सुनाइ है।
सोइ सर्व मंगल रूप सर्वद सर्वदा सुष पाइ है ॥
काष्ट चंदन मूल मितका लेपि चरनोदक धरै।
जमदूत जम तेहि देषि भागहि सकल अघ सहजहि टरै।
मंजरी दल कुसुम लै पूजिहि पुरारि मुरारि ते।
तरू रोपि पालन करहिं लालन दरस परसन फल जिते।
अभिषेक पूजा जप प्रदछिन कवच नुति जितने कहे।
करि प्रेम सर्द्धा सुनिहि जे इन्ह सभन्ह के फल तिन्ह लहै।
इतहि सुष आनंद निधि मे वोह दिन प्रति पाइ है ॥
अंत में भगवंत ढिग गोलोक धामहि जाइ है।
सभ पापहर सभधर्मकर सभकाम प्रद सुषदानि है।
दलसिंह भाषित रत्न चौदह सकल मंगल षानि है।

॥ दोहा ॥

रत्न चतुर्दश मुष्य ए सुनेउ साधु बुध पांहि।
को जाने कितने भने मुक्ति महोदधि मांहि।
एह पुस्तक मंगल मई संपूरन करिलीन्ह।
सिंह दलेल महीप सो शिवहिं समर्पन कीन्ह ॥

इति श्री वृंदावन चंद्र गोविंद चरनारविंद परिचये प्रवीन संजन मनोराज हंसावली विहार मंजुल तरे मुक्ति रत्नाकरे श्री दलसिंह विरंचिते तुलसी चरित्र वर्णननोनाम चतुर्दश रत्न प्रकाशः समाप्तम् ॥ १४ ॥ समाप्तो मुक्तिरत्नाकरः पोथी गोविंद प्रसाद चौधुरी जीव के वसीदे डुमराव प्रगने भोजपुर ॥

विषय—

इस ग्रंथ में निम्नलिखित कथा का वर्णन है :—

"नारायण ऋषि वद्रिकाश्रम में कठिन तपस्या करने लगे। इन्द्र ने समझा कि स्वर्ग का राज्य पाने के निमित्त ऋषि तपस्या कर रहे हैं। अतः उनका तप खंडन करने के लिये उसने कामदेव और रंभा को अनेक अप्सराओं के साथ भेजा; परंतु उनके द्वारा ऋषि का तप खंडित न हो सका। वे हार मानकर ऋषि के चरणों में गिर पड़े। ऋषि ने सबको क्षमा किया तथा इंद्र को संदेश दिया कि स्वर्ग के राज्य से उनकी तपस्या का कोई संबंध

नहीं है। अपने तपोबल से उन्होंने उर्वशी (अप्सरा) को उत्पन्न किया और उसे इंद्र को दे दिया।

कामदेव और रंभा उर्वशी को लेकर इंद्र के पास गए और उनसे सब बातें कह सुनाई। इंद्र लज्जित होकर चुप हो गया। उस समय नारद मुनी इंद्र के ही पास बैठे थे। उनके हृदय में, नारायण ऋषि के उक्त तपोबल की बात सुनकर अत्यंत श्रद्धा उत्पन्न हुई। वे कुतूहल के साथ अपनी बीणा में हरिकीर्तन करते हुए नारायण ऋषि के स्थान को चल पड़े और बद्रिकाश्रम में जाकर उनके दर्शन किए। ऋषि के शिष्टाचार तथा संभाषण से वे और भी प्रसन्न हुए। पश्चात् नारद ने हरिचर्चा सुनने की इच्छा प्रकट की। नारायण ऋषि ने सहर्ष हरिकथा का वर्णन किया।

कथा का प्रधान विषय गोलोक और राधाकृष्ण एवं उनके अवतार लेने के हेतु का वर्णन करना है। साथ साथ बद्रिकाश्रम, शतशृंग, व्यंकटाद्रि (जो गोलोक में माना गया है), गंगा चरित्र, तुलसीचरित्र, कैलाश और अवधपुरी (जिसको गोलोक में माना है) का भी वर्णन हुआ है।

ग्रंथ में चौदह रत्न प्रकाश (अध्याय) हैं जिनका विवरण नीचे दिया जाता है :—

१—प्रथम	रत्न प्रकाश	बद्रिकाश्रम वर्णन	पत्र १ से १४ तक
२—द्वितीय	,,	कैलाश वर्णन	पत्र १४ से २१ तक
३—तृतीय	,,	शतशृंग वर्णन	पत्र २१ से ३३ तक
४—चतुर्थ	,,	अवधपुरी वर्णन	पत्र ३३ से ४८ तक
५—पंचम	,,	व्यंकटाद्रि वर्णन	पत्र ४८ से ५७ तक
६—षष्टम्	,,	गोलोक वर्णन	पत्र ५७ से ६६ तक
७—सप्तम्	,,	,,	पत्र ६६ से ८२ तक
८—अष्टम्	,,	,,	पत्र ८२ से ९६ तक
९—नवम	,,	गंगाजन्म कथा वर्णन	पत्र ९६ से १०५ तक
१०—दशम्	,,	गंगाचरित्र वर्णन	पत्र १०५ से १११ तक
११—एकादश	,,	,,	पत्र १११ से १२६ तक
१२—द्वादश	,,	तुलसी चरित्र वर्णन	पत्र १२६ से १३६ तक
१३—त्रयोदश	,,	,,	पत्र १३६ से १५४ तक
१४—चतुर्दश	,,	,,	पत्र १५४

रचनाकाल—

संवत् सत्रह सै पंचावन, गुर पग सुमिरि कीन्ह गुण गावन ॥

संख्या १०० ख. मुक्ति रत्नाकर, रचयिता—दलेलसिंह (राजा), कागज—देशी, पत्र—२६, आकार—१२३/४×५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२ (कहीं कहीं ग्यारह), परिमाण (अनुष्टुप्)—९३६, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—

सं० १७५५ वि०=१६९८ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः श्री गुरभ्य नमः ॥
गुरु गनेस गिरिजा गिरा गंग जनक गौरीस ।
ग्रह नाएक गोविंद जन प्रनवौ महि धरि सीस ॥

वंदौ गन नाएक अभिरामा । त्रिजगत पुज्य सुमंगल धामा ॥
तन सिंदुर वरन छबि कैसे । जनु अनुराग देह धरि वैसे ॥

दोहा

सिपावद्ध अहिराजते फनपति मनि छबि लीन्ह ।
मनहु अषंड, प्रदीप ते सुरन आरती कीन्ह ॥
वदन गजेंद्र रदन कि सोभा । निकसे मनहु सत्य की गोभा ॥
लोचन तिनि सुभ्र ससि रेखा । छवि मदिह गवाक्ष सम देखा ॥

+ + +

असनि मास सकल चलि गयऊ । विजै जोग दसमि जब भयउ ॥
सुक्ल पक्ष सुभ मंगलवारा । मगल उदधि कथा अनुसारा ॥
अति रहस्य यह कथा अनूपा । मम मति अल्प निरत भवकूपा ॥
पावन चरित जानि मन भावै । करि हो जिनि माछि मधु लावै ॥
संमत सत्रह सै पंचावन । गुरु पद सुमिरि कीन्ह गुन गावन ॥
वंदौ पितु पद मन वच कर्मा । जो मोरे यह तन की ब्रह्मा ॥

दोहा

राम सिंघ नृप जणक सम (? मम) करनपुरा के राव ।
तीन्ह के खोडस भाग्य मोहि श्री हृदि बुद्धि वौसाव ॥

मध्य —

दोहा

मुक्ति महोदधि में भयो तीजी रत्न अमोल ।
सुमीरत दुख दारीद कहै रहै मुक्ति को बोल ॥

इति श्री दोहा वनचंद गोविंद चरनारविंद परिचै प्रविन सज्जन मनोराज हंसावली विहार मंजुल तरे मुक्ति रत्नाकरे श्री दलेल सींघ विरचिते सतसृंग वर्ननो नाम त्रितिय रत्न प्रकार ॥ ३ ॥

अंत—

> कहु जल जत्र अटारीन माही,
> नीचे से उचे चढ़ि जाही।
> परहि अग्र ते धार अभंगा,
> मानो संभू सीस ते गंगा।
> जल के चीन्ह ध्यान ते देषा,
> जव मंदर मह वासुखि रेखा।
> कहु मरकत मनि महल विराजै,
> तासु जोति सर्वोपरि छाजै।
> अमित वितान वरनी नहि जाही।
> गज मुकुता डोल तत माही।
> अति निर्मल जनु अवृत खंडा,
> मानहु मुक्ति विहंग के अंगा।
> सजल सुढार बढ़े छबिभारी,

—अपूर्ण

विषय—

श्री कृष्ण चरित्र और गोलोक का वर्णन किया गया है।

अध्यायों का विवरण :—

१—रत्नप्रकास-वदरिकाश्रम वर्णन	पत्र १ से ९ तक
२—रत्नप्रकाश-कैलास वर्णन	पत्र ९ से १४ तक
३—रत्नप्रकाश-सत्संग वर्णन	पत्र १४ से २३ तक
४—रत्नप्रकाश-अपूर्ण	

रचनाकाल—

आसनि मास सकल चलि गयउ। विजै जोग दसनि जव भयउ।
सुक्ल पक्ष सुभ मंगलवारा। मंगल उदधि कथा अनुसारा॥

+ + +

संमत सत्रह सै पंचावन। गुरपद सुमिर किन्ह गुन गावन॥

संख्या १०० ग. रामरसार्णव, रचयिता—दलेल सिंह, कागज—देशी, पत्र—३००, आकार—१५½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०९३१, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५० (१६९३ ई०), लिपिकाल—सं० १२४६ फसली, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी ना० प्र० सभा, काशी

आदि—

॥ श्री गणेशायनमः ॥

॥ कृत दलेल सिंह राम रसार्न्नव लिख्यते ॥

दोहा

गुरु द्विज गनपति रामरविहर गौरी हरिदास ।
चरन कमल रजसीस धरि कहन चहौं इतिहास ॥ १ ॥
हरि चरनोदक ब्रह्म मैं हरिहर तन के खानि ।
नाम दरस जल मुक्ति दा जगत जननि मृदुवानि ॥ २ ॥
गंगादिक तीरथ सकल ब्रह्मादिक सुरवृंद ।
वेद आदि विद्या सवै नारद आदि मुनिंद ॥ ३ ॥
पर उपकारी जिते नृप पृथु आदिक रतनीति ।
करौं दंडवत सवनि कहं सविनै शभ वसप्रीति ॥ ४ ॥
वरषा हरि गुन हलिक कवि शालि सु ग्रंथ अपार ।
उछ प्रीति लै कहत हौं निज मति के अनुसार ॥ ५ ॥
वुध गुरुजन सज्जन चरन वंदि कहौं कर जोरि ।
जगमंगल गुन वरनि के चाहौं इन मति मोरि ॥ ६ ॥
करौं जथामत हरि कथा राम रसार्णव नाम ।
छमि अघ आषर सोधिवो जानिदास विनुदाम ॥ ७ ॥

× × ×

यम[५] हर मुख[५] दिन[७] शुक्र हग[१]संमत संख्या दीन्ह ।
मास अग्रहन दुजि शित कथा अरंभन कीन्ह ॥ १३ ॥
रामसिंघ नृप के त नय राम भक्त के दास ।
करनपूर पति मगध तजि कियौ रामगढ़ वास ॥ १४ ॥

तहं यह चरित अरंभन कीन्हा । हरिजन चरन रेनु सिर लीन्हा ॥
प्रणवो शंकर पदजल जाता । जो जग्ग विदित ज्ञान के दाता ॥
ज्ञान विना शुभ कर्म्म न होई । जतन अनेक करै किन कोई ॥

चौपाई

तिलक हेतु चंदन तिन दीन्हा । धरि मुनि वेष गवन वन कीन्हा ॥
नृपगन सकल रहे ठगि ऐसे । अमृत घटे असुर गन जैसे ॥
पूछहि सकल परसपर धाई । समुझि न परे भयेउ का भाई ।
सुनि अश्लोक अर्थ लहि ज्ञाना । रहे जवन पर पथ में सयाना ॥
तिन्ह तिन्ह कहेउ प्रेम की फाँसी । आधा कटक भये सन्यासी ॥
एकहि बार चले चहुँ ओरे । नव विहंग तिमि पिंजर तोरे ॥

जेहि के दिसि जौने दिसि भैऊ । जो जित रहे सो तित ते गैऊ ॥
तसु उपमा भाषहि हम कैसे । शुक के जन्म होत जग जैसे ॥
आधा कटक गये चलि कासी । दुवो भाँति जेहि मंगल रासी ॥
सुनेऊ कुंवर निज पितु के करनी । निज अभाग तिन्ह बहुबिधि बरनी ॥
पितु के वचन सीस धरि लीन्हा । नीति निधान राज तेहि दीन्हा ॥

इत नृप नंदन नाम सुवाहु,
दीन्हेउ तिलक कीन्ह नर नाहु ।
आसिष दीन्ह चूम्बि मुष माथा,
भव अलर्क नंदन नर नाथा ।
आपु सुवाहु बंधु मिलि गैऊ,
गंग जमुन के पटतर भयेउ ।
वंदि मातु पद पंकज जाई,
अति दुष्कर तप किहु दुहु भाई ।

अविचल भऐउ विस्न पग प्रीति । जुग जुग रहहि जासु जस गीती ।
एह चरित्र सब सुत वषानी । सौनक सुनत महा सुख मानी ।

दोहा

हरि[४] आउध हरके वदन[५] सागर[७] गन पति दंत[१] ।
तिथि राका वैसाख कै उमडेउ सिंधु अनंत ॥

श्री दलेल सिंघ विरचिते रामरसार्नवे त्रय पंचासत तरंग प्रकासः ॥ ५३ ॥

छंद

भौ तरंग तिर्पन भगति दर्पन सुचित सुनिहि जे गाई है ।
तेहि सकल मंगल सर्व संपति लहिहि जत मन भाई है ।
मुक्ति चौविधि भक्ति नौ विधि भुक्ति सौ विधि पाई है ।
दुख दुरपि दुर्मति दुग्रन दुर्जस कबहि निकट न आई है ॥
जत धर्म गत तप कृतु ब्रतादिक सकल तीरथ फल जीते ।
सुनत गुनत वषानि सभ फल लहिहि गृह बैठे तिते ।
करि ध्यान ग्यान विधान हरि पग प्रेम अविचल पाय कै ।
इत भरिहि निर्मल जस अवनि भरि अंत हरिपुर जाय कै ।
रहिहि सानिधि छवि निहारत हरप उदधि अन्हाय कै ।
करि भोग सुर दुर्लभ सकल ध्रुव सरिस नगर वसाई कै ॥
जो चोप करि दुई चारि चौपाइ पढिहि परिहास ते ।
तेहि सपनहुं अघ दरस नहि इत वचिहि उत जम त्रास ते ॥
राम रसनिधि भयेउ पूरन संत गुर प्रसाद ते ।
कहि हरख निर्भर वरष जुग चलि गएउ अति अह्लाद ते ॥

यह करि सपूरन किहु सीवार्पन काम मन बच जाहि के।
स्तुति सेतु प्रभु विन हेतु इत उत सुखद नृप दल साहि के॥
१७५४ इति श्री संत चरनार विंदु मधुप्रत॥

विषय—

आरंभ में दशावतार वर्णन फिर रामचरित्र वर्णन तदनंतर हरिश्चंद्र चरित्र, सहस्र नाम, मारकंडेय चरित्र, मायादर्शन, गाधिचरित्र और अंतिम ५३ वें तरंग प्रकाश में पुनः दशावतार चरित्र वर्णित है। रामचरित्र में कांडों का भी क्रम रखा गया है।

तरंग प्रकाशों का विवरण निम्नलिखित है:—

मंगलाचरण

१—तरंग प्रकाश, कथारंभ			पत्र १ से १० तक
२—	,,	मत्स्यावतार	पत्र ११ से ११ तक
३—	,,	कमठावतार	पत्र ११ से २८ तक
४—	,,	वाराहावतार	पत्र २८ से ३६ तक
५, ६—	,,	नृसिंहावतार	पत्र ३६ से ५२ तक
७—	,,	विराट रूप	पत्र ५२ से ६० तक
८—	,,	वामन	पत्र ६० से ६५ तक
९—	,,	परशुराम चरित्र	पत्र ६५ से ७२ तक

बालकांड

१०—	,,	राम हृदै वर्णन	पत्र १ से ७ तक
११—	,,	धनुभँग	पत्र ७ से १९ तक
१२—	,,	बालचरित्र	पत्र १९ से २७ तक

अयोध्याकांड

१३, १४	,,	रामवनगमन	पत्र १ से १४ तक
१५—	,,	भरतागमन	पत्र १४ से २४ तक

आरण्यकांड

१६—	,,	खरदूषणवध	पत्र १ से ८ तक
१७—	,,	जटायु उद्धार	पत्र ८ से १४ तक

किष्कंधाकांड

१८—	,,	बालिबध	पत्र १ से ८ तक
१९—	,,	हनुमान जलनिधि लंघन	पत्र ८ से १८ तक

सुंदरकांड

२०—	,,	रघुवर प्रस्थान	पत्र १ से १२ तक

लंकाकांड

२१—	,,	अंगद लंकागमन	पत्र १ से १० तक
२२—	,,	हनुमत्प्रतिज्ञा	पत्र १० से १८ तक
२३—	,,	इंद्रजीत वध	पत्र १८ से २६ तक
२४—	,,	रावणवध	पत्र २६ से ३३ तक
२५—	,,	पुनर्भारद्वाज दर्शन	पत्र ३३ से ४३ तक

उत्तरकांड

२६—	,,	अगस्तराम संवाद	पत्र १ से १३ तक
२७—	,,	काल पुरुष मंत्रण	पत्र १३ से २१ तक
२८—	,,	रामराज्य वर्णन	पत्र २१ से ३२ तक

[२९ से ४८ तक लुप्त हैं]

४९—	,,	सहस्र नाम गुण वर्णन	पत्र १०
५०—	,,	गंगा आगमन	पत्र १० से ११ तक
५१—	,,	माया दरसन	पत्र ११ से २५ तक
५२—	,,	गाधि चरित्र	पत्र २५ से ३७ तक
५३—	,,	दशावतार कथा	पत्र ३७ से ५५ तक

विशेषज्ञातव्य—पुस्तक में दशावतार तथा रामचरित्र का वर्णन है। इसमें अक्षयवटमिश्र का एक नोट लगा हुआ है जिसमें लिखा है कि करणपुर के राजा हेमंत सिंह उनके पुत्र रामसिंह उनके पुत्र दलेल सिंह थे जिनकी यह रचना है। करण पुरा को छोड़कर ये लोग रामगढ़ में रहने लगे। 'रामरसार्णव' में रामगढ़ और 'शिवसागर' में शिवगढ़ लिखा है। ये लोग दोनों के मालिक थे अथवा एक ही गढ़ के वे दोनों नाम हों। अब भी करनपुर मगह में है रामगढ़ में क्षत्रिय लोग निवास करते हैं। राजा दलेल सिंह कवि और ग्रंथकार थे। ग्रंथ अवधी भाषा में है।

संख्या १०० घ. रामरसार्णव, रचयिता—दलेलसिंह, कागज—देशी, पत्र—४२४, आकार—११३/४ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०८१२, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—कैथी मिश्रित नागरी, रचनाकाल—१७५० वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः

दोहा

गुरु दिज गनपति रामरवि हर गौरी हरिदास।
चरन कमल रज सीस धरि कहन चहौं इतिहास ॥ १ ॥

हरि चरनोदक ब्रह्म मैं हरि हर तन के पानि।
नाम दरस जल मुक्ति दा जगत जननि मृदु वानि ॥ २ ॥
गंगादिक तीरथ सकल ब्रह्मादिक सुर वृंद।
वेद आदि विद्या सबै नारद आदि मुनिंद ॥ ३ ॥
बरषा हरि गुण हलिक कवि सालि सुग्रंथ अपार।
उछविर्त्ति लै कहत हौं निजमति के अनुसार ॥ ४ ॥

\+ + +

तम[0] हर मुख[5] दिन[7] सुक्र द्रिग[1] संवत संख्या दीन्ह।
मास अगहन दूजि सित कथा अरंभन कीन्ह ॥
रामसिंह नृप के तनय राम भगत के दास।
करनपूर पति मगध तजि कियो रामगढ़ वास ॥
तहं यह कथा अरंभन कीन्हा। हरिजन चरण रेणु सिर लीन्हा ॥

अंत—

दोहा

सिव भाषित अरु राम गुन संमित वेद पुरान।
सकल धर्म सिरताज पुनि ताहि करै को आन ॥ ९३१ ॥

छंद

यह राम चरित्र पवित्र चित्रित संत सुनि सुष पाइहै।
तसु चरन कंज पराग परसत जगत के अघ जाइहै।
दलसिंघ भाषित भवन में लिषि परिहि पल छिन गाइहै।
तही रामनाम प्रभाव अबिचल भगति मंगल छाइ है ॥ ९३२ ॥

दोहा

अध्यातम पूरन भयो ऊप्या (?) चौसठि जान।
चतुस्सहससत वेविइत है अरलोक प्रमान ॥ ९३३ ॥
परगट त्रिंस तरंग मौ सुनहु संत चित चाहि।
रामायन पूरन भयो भाषित श्री दल साहि ॥ ९३४ ॥

इति श्री सन्त चरनारविंद मधुव्रत श्री दलेलसिंह विरचिते रामरसार्णवे त्रसीत तरंग प्रकास ॥ ३० ॥

विषय—

आरंभ में कथा का आरंभ और उसके उद्‌गम का इतिहास और मंगलाचरण वर्णित हैं। पश्चात् रामकथा की ओर अग्रसर होकर पहिले मीनावतार, कमठरूप, वाराहावतार, दो अध्यायों में नृसिंह अवतार कथा, विराटरूप वर्णन, वामनावतार आदि कथाएँ देकर तब

राम कथा का कांड बद्ध वर्णन है। संपूर्ण ग्रंथ ३० तरंग प्रकाशों (अध्यायों) में है। तरंग प्रकाशों का उल्लेख निम्नलिखित है :—

१—तरंग प्रकाश कथारंभ	पत्र १ से ९ तक
२—,, मीनावतार वर्णन	पत्र १६ से ४० तक
३—,, कमठरूप वर्णन	पत्र ४० से ४९ तक
४—,, यज्ञवाराह चरित्र	पत्र ५० से ६१ तक
५—,, नृसिंह चरित्र	पत्र ६२ से ७४ तक
६—,, नृसिंह चरित्र	पत्र ७५ से ८९ तक
७—,, विराट रूप दर्शन	पत्र ९० से ९९ तक
८—,, वामन चरित्र	पत्र १०० से १११ तक
९—,, परशुराम चरित्र	पत्र ११२ से १२२ तक
१०—,, रामचरित्र कथने रामहृदय वर्णन	पत्र १२३ से १४४ तक
११—,, धनुभंग	पत्र १४५ से १५८ तक
१२—,, सीताराम वास वर्णन	पत्र १५९ से १७२ तक
१३—,, राम वन गमन	पत्र १७३ से १८९ तक
१४—,, राम वन गमन	पत्र १९० से २०० तक
१५—,, भरतागम	पत्र २०१ से २१४ तक
१६—,, परदूषण वध	पत्र २१५ से २२५ तक
१७—,, जटायूद्धार वर्णन (आरण्यकांड समाप्त)	पत्र २२६ से २४४ तक
१८—,, बालिवध	पत्र २४५ से २६० तक
१९—,, हनुमान जलधि लंघन	पत्र २६१ से २९० तक
२०—,, रघुवर प्रस्थान	पत्र २९१ से २९६ तक
२१—,, अंगद लंका गमन	पत्र २९७ से ३२० तक
२२—,, हनुमत्प्रतिज्ञा	पत्र ३११ से ३२४ तक
२३—,, इंद्रजीत वध	पत्र ३२५ से ३३८ तक
२४—,, रावण वध	पत्र ३३९ से ३५४ तक
२५—,, पुनर्भारद्वाज दर्शन (लंकाकांड समाप्त)	पत्र ३५५ से ३७५ तक
२६—,, अगस्त राम संवाद	पत्र ३७६ से ३८९ तक
२७—,, काल पुरुष मंत्रन	पत्र ३९० से ३९९ तक
२८—,, रघुवर कुस संवाद	पत्र ४०० से ४१४ तक
२९—,, राजनीति वर्णन	पत्र ४१५ से ... तक
३०—,, देवस्तुति	पत्र ... से ... तक

संख्या १०० ङ. रामरसार्णव, रचयिता—दलेलसिंह, कागज—देशी, पत्र—१२५, आकार—९$\frac{1}{2}$ × ६$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३२०,

खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी। दाता—श्रीयुत कुलदीप नारायण 'ऋड़प', स्थान व डा०—लिलकर, जिला—बलिया।

आदि—

× × ×

......जिमि नष्ट होहि हरि पाये॥

॥ चौपाई॥

जानेउं क्रीपा विस्न ते पाये। मरन काल जिन्हि तोहि मीलाए।
म्रीही गेह गोदोहन जबलो। निवसहु नाथ क्रीपा करि तौलो।
मोहि ढिग मन अस्थिर तव देवही। सो प्रभु पुन्य बडन्ह के लेखहि।
होए उचित मोहि औसर एही। कहहु क्रीपाल ज्ञान द्रिग जोही।
हहि मूमुर्ष चहिय जतकाजा। कहहु दया करि सो मुनिराजा।
को भजनीय स्रवन केहि करही। केहि प्रभु जपहि ध्यान केहि धरहि।
सो समुझाय कहहु मोहि नाथा। करुना भवन ज्ञान पति पाथा।
कहहि सूत रिषिराज समाजा। इमि पूछेउ सुकदेवहि राजा॥
धुनि गंभीर बोले सुषदेउ। धन्य भूप तुम समनहि केऊ॥

× × ×

ताते भूप भागवत सुनहू। एहि औसर अब दुतिय न गुनहू।

अंत—

यह राम रसनिधि काम तरु अभिराम धामद राम के।
जहाँ रामरत्न अमोल अगणित काम गवि जन काम के।
प्रभु प्रेम जल पूरन सदा इत सुखद हित परिनाम के।
जित प्रगट भव हरि जस निसाकर हरन तम कलिधाम के॥
श्री नेवास नेवास जामे सकल मंगल आलयं।
विधि मन विहंग अपार मंजित तिन्हहि आनंद के चयं।
जहाँ भक्ति चिंतामनि विराजत मुक्ति पारस पानिये।
हरिभक्त मीन अनेक जलधर साधु सुर मुनि जानिये।
कर्म गंजन धर्म रंजन भर्म भंजन समदिये।
कलिमल...सन मति प्रगासन अघनिवासन नर्मदं।
दुरित दुर्मद दुष दुरासा दुष्ट तिमिर प्रभाकरं।
दलसिंघ भनित चरित्र चीत्र पवीत्र मीत्र सुषकरं।
एह सुनि सुणाइहि हरषि गाइहि करिहि चरचा चाहिके।
तमु...तिहि कलिमल दहिहि दुष सब लहिहि प्रभु दलसाहिके।

जसु ध्यान सुमिरन दरस परसन सुष सनातन दायकं।
सो भक्ति अविचल धरिहि सब सुष भारहि अग जग नायकं ।

दोहा

षष्ट अधिक चालीस भयो उर्मिग्यान'''।
कृष्णचंद निरषत वढो लेहु सत संग॥

इति श्री संत चरनारब्रींद मधूव्रत श्री दलेलसींघ विरचिते राम रसारनवे दसम चरित्र वरननो नाम षष्ट चत्वारी सत तरंग प्रकास ॥४६॥ इति दसम चरित्र समाप्त

विषय—भागवत दसमस्कंध का संक्षिप्त भाषानुवाद है। प्रधान विषय रामचरित्र वर्णन है।

संख्या १०० च. शिवसागर, रचयिता—दलेलसिंह (राजा), कागज—देशी, पत्र—४२३, आकार—१२३/४×५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०२९८, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५७ वि०, लिपिकाल—सं० १८१६ वि०=सन् १७५९ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री गणेशायनमः। श्री सरस्वतेनमः।

अथ स्लोक

वर्नानामार्थ संघानां रसानां क्षंदशामपि।
मंगलानं च कर्त्तारौ वंदे वानो विनायकौ।

॥ अथ दोहा ॥

गुर पग पदुम पराग लै सिर धरि वारंवार।
कृपा उदधि नर रूप जो विष्णु शंभु करतार ॥ १ ॥

चौपाई

सकल सुमंगल दाता सोई। जेहि विनु ज्ञान लहै नहि कोई।
परम पवित्र चरित्र चित्रअति। करन चहौ प्रभु देहु विमल मती।
प्रनवो गनपति के पग दोऊ। सिवनंदन सिवदायक वोऊ॥

× × ×

दोहा

मुष्य ब्रह्मवैवर्त लै कथा अरंभन कीन्ह।
अति समृत इतिहांस के चूनि चूनि मत लीन्ह ॥ ९ ॥
मुनि हरमुख दिन चंद लौ संवत संष्या दीन्ह।
अक्षै तीजि गुरुवार मै चरित भाषिवे लीन्ह ॥ १० ॥

× × ×

हिमति सिंघ सुमति सिरताजा। देस करनपुरा के राजा।
रामसिंघ तिन्ह कह सुत भयेऊ। दान कृपान धर्म जस लैऊ॥
तासु तनै हम सब गुन थोरा। नाम दलेलसिंघ भै मोरा॥
सिवगढ़ माह वसे सुष पाई। तेहि थल मह यह कथा बनाई॥

अंत—

मूल पेय तांमूल फल भक्ष जहां लौं आहि।
सिव समर्पि भोजन करै कहै नृपति दल साहि॥११९०॥
सिवसागर सिवदान दीखी कीन्ह जिन्ह कर्म।
मिली आइ अति हरषते जल अगाध जसु धर्म॥११९१॥

इति श्री सर्व मंगल मंदिर चरनारविंद वंदनानंदित श्री दलेल सिंह विरचिते शिव-सागरे सारदा चरित्र वर्नंनो नाम त्रेतिसतिर्थ संगमः॥ ३३॥

दोहा

महि मुनिसागर सिंधु सुत भौ संवत जवष्यान।
पुस्तक लिपि पूरन किए सिव सागर सिवदानि॥११९२॥

संवत्॥ १८१६॥ मार्ग सुदि १३ रविवासरे सुभघरी......

पुस्तक लिषा वा गंगा विष्णु वर्णवार किर्पाराम सुत शाकिं सुभ स्थान घोसिआ॥ दसषत भवानीप्रसाद कास्थ गौरदयाल दास सुत साकि विह्रहर॥ पोथी सिवसागर सम्र संपुण॥

विषय—

ब्रह्म वैवर्त पुराण के आधार पर देवदेवी प्रादुर्भाव, सृष्टिनिरूपण, नारद, प्रकृति, गंगा, तुलसी, सावित्री, गणपति, तथा गोलोक और श्री कृष्ण चरित का वर्णन किया गया है। ग्रंथ में तेंतीस अध्याय (तीर्थ संगम) हैं।

रचनाकाल—

मुनि[७]हर मुष[५] दिन[७] चंद[१] लौ संवत संख्या दीन्ह।
अक्षै तीजि गुरुवार मै चरित भाषिवे लीन्ह॥ १०॥

संख्या १०० छ. शिवसागर, रचयिता—राजा दलेलसिंह (करनपुरा), कागज—देशी, पत्र—२६८, आकार—१५·७×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्) ९६४८, पूर्ण, रूप—जीर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—अक्षय तृतीया, गुरुवार संवत् १७५७ वि०, लिपिकाल—चैत्रसुदी १३ संवत् १८४८ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० देवीदत्त शुक्ल, 'सरस्वती' संपादक प्रयाग

आदि—

श्री मते रामानुजाय नमः

श्री सरस्वते नमः अथ श्लोक वर्नानामर्थ संघानां रसानां छंद सामपि । मंगलानांच कर्त्तारौ वंदे वाणी विनायकौ ॥

अथ दोहा

गुरु पग पदुम पराग लै सिर धरि वारंवार ।
कृपा उदधि नर रूप जो विष्णु संभु अवतार ॥

चौपाई

सकल सुमंगल दाता सोई । जेहि विन ज्ञान लहै नहि कोई ॥
सब मिलि करहु सहाय हमारी । होइ कथा जग मंगलकारी ॥
मुष्य ब्रह्म वैवर्त लै कथा अरंभन कीन ।
श्रुति सिमृत इतिहास के चूनि चूनि मत लीन्ह ॥
(१७५७ संवत) मुनि[७]हरमुष[५]दिन[७]चंद[१]लौ संवत संष्या दीन्ह ।
अक्षै तीजि गुरुवा मै चरित भापवे लीन्ह ॥

कथा पुनीत विष्णु सिव केरा ।
सकल धर्म साधन जसु चेरा ॥

हिमति सिंघ सुमति सिरताजा । देस करन पूरा के राजा ॥
राम सिंघ तिन कह सुत भएऊ । दान कृपान धर्म जस लैऊ ॥
तासु तनै हम सभ गुन थोरा । नाम दलेल सिंघ भै मोरा ॥
सि (? सिवसागर) अमाह वसे सुष पाई । तेहि थल मह यह कथा बनाई ।
सिव के चरित सिवद सित धामा । रापेउ सिवसागर तसु नामा ॥

दोहा

अंत—

लहु लहु तनु मुहु मुहु अधर पुहु पुहु हसत गोपाल ।
मुहु मुहु त्रण तोरहि जननि वरणहि भाग्य विसाल ॥ ६४३ ॥

\+ ÷ +

इति श्री सर्व मंगल मंदिर सज्जन चरनार विंद वंदना नंदित श्री दलेल सिंघ विरचिते सिव सागरे सारदा चरित्र वर्णनो नाम त्रितिस तिर्थ संगमः ३३.

दोहा

महि[१] मुनि[७] सागर[७]सिंधु[७]सत भौ सावत जब ष्यात ।
पुस्तक लिपि पूरन किए सिवसागर सिदास ॥

संवत १८४८ चैत्र सुदी १३ सनि वासरे सुभघरी पुस्तक लिषते प्रह्लाद सुकुज...सुभ स्थान भवानी पुर ॥

विषय—

'शिवसागर' का मूलाधार जैसा, ग्रंथकार ने स्वीकार किया है ब्रह्मवैवर्त पुराण है। इसके अतिरिक्त उसकी रचना के निमित्त अन्य पुराणों, श्रुतियों एवं स्मृतियों से भी सहायता ली गई है। 'शिवसागर' का मूल विषय ब्रह्म का वर्णन, सृष्टि की उत्पत्ति, कर्म विचार, अवतार और कृष्ण आदि हैं। साथ ही ग्रंथ के नामानुसार उसमें शिव की कथा का भी विस्तारपूर्वक समावेश है यद्यपि उसके अधिकांश का संबंध भगवान् कृष्ण के चरित्र से ही है।

संख्या १०० ज. शिवसागर, रचयिता—दलेलसिंह राजा (शिवगढ़), कागज—देशी, पत्र—३०४, आकार—१४ × ६.२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—९८२३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५७=सन् १७०० ई० (आरंभकाल), सं० १७६३=सन् १७०६ ई० (समाप्तिकाल), लिपिकाल—१८८७ वि०, फसली सन् १२४७ ई०, सन् १८३९, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः गुरूभ्योनमः

दोहा

गुरु पद पदुम पराग लै शिरधर बारंबार।
कृपा उदधि नर रूप जो विस्न शंभु करतार ॥

चौपाई

सकल सुमंगल दाता ओई। जिन्ह विन ग्यान लहै नहि कोई ॥
परम पवित्र चरित्र चित्र अति। करण चहों प्रभु देहु विमल मति ॥
प्रणवो गनपति के पग दोऊ। शिवनंदन शिवदायक ओऊ ॥
मंगल उदधि विघीनी के हरता। संतत भगत मनोरथ भरता ॥
ग्यानी प्रवर ग्यान के दायक। ग्यान गम्य गुणनिधि गननायक ॥
गजमुष एक रदन छवि पाई। मुष चुंमन सरसरि जनि आई ॥

॥ दोहा ॥

भाल लाल सिंधुर भरे दीरघ सूंड सोहाये।
रवि नंदनि प्रगटी मनो रवि मंडल में आये ॥

॥ दोहा ॥

मुष्य ब्रह्म वैवर्त लै कथा अरंभन कीन्ह।
स्रुति सिम्रिति इतिहास के चूनि-चूनि मति लीन्ह ॥

मुनि[७] हरमुष[५] दिन[७] चंद[१] लै संवत संख्या दीन्ह ।
अछै तीज गुरवार मै चरित भाषिवे लीन्ह ॥

× × ×

चौपाई

हेमतसिघ सुमति सिरताजा । देस करनपुरा के राजा ॥
रामसिंघ तिन्हकर सुत भयेऊ । दान कृपान धर्म जस लयेऊ ॥
तासुत भै हम सब गुन थोरा । नाम दलेल सिंघ भौ मोरा ॥
सिवगढ़ मांह बसे सुष पाई । तेहि थल मे यह कथा बनाई ॥
शिव के चरित शिवद शिवधामा । राषेउ शिव सागर तसुनामा ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

लयय ताम्बूल फल भछ जहाँ लौ आंहि ।
शिव समर्पि भोजन करै कहै नृपति दलसाहि ॥
शिवसागर शिवदा नदी रदी कीन्ह जिन्ह कर्म ॥
मिलि आये अति हर्ष ते जल अगाध जसु धर्म ॥

इति श्री सर्व मंगल मंदिर संजन चरनार विंद वंदना नंदित श्री दलेलसिंह विरंचिते शिवसागरे सारदा चरित्र वर्ननो नाम त्रय त्रिसंति तिर्थ संगम ॥

॥ दोहा ॥

स्मत दीन्हेउ राम[३] रस[६] दिन[७] ससि[१] मास वैसाष ।
उमडेउ सागर शंभु कै पूरन जन अभिलाष ॥

इति श्री शिव सागर कांड समाप्त ॥ जो देषा सो लिषा मम दोष न दीयते पोथी गोविंद प्रसाद चउधुरी वंसींदे डुमराव मीती भादो सुदी अष्टमी वार सुक्र सन १२४७ साल द: महीपतीदास मोकामी डुमराव श्री राम जी ॥

विषय—यह ग्रंथ ब्रह्मवैवर्त पुराण के आधार पर लिखा गया है। इसमें तेतीस अध्याय (तीर्थ संगम) हैं जिनका नामादि क्रम निम्नलिखित प्रकार से है :—

८—अष्टम् तीर्थ संगम गंगा चरित्र वर्णन पत्र ५३ से ६३ तक
९—नवम् तीर्थ संगम तुलसी चरित्र वर्णन पत्र ६३ से ७० तक
१०—दशम् तीर्थ संगम सावित्री संवाद वर्णन पत्र ७० से ८० तक
११—एकादश तीर्थ संगम दान धर्म वर्णन पत्र ८० से ८८ तक
१२—द्वादश तीर्थ संगम देहदशा वर्णन पत्र ८८ से ९६ तक
१३—त्रयोदस तीर्थ संगम सुतपातयोपाख्यान पत्र ९६ से १०५ तक
१४—चतुर्दश तीर्थ संगम दुर्गाउपाख्यान पत्र १०५ से ११४ तक
१५—पंचदश तीर्थ संगम गणेश प्रादुर्भाव पत्र ११४ से १२३ तक
१६—षोडश तीर्थ संगम गणपति चरित्र वर्णन पत्र १२३ से १३२ तक
१७—सप्तदश तीर्थ संगम गणपति चरित्र वर्णन पत्र १३२ से १३८ तक
१८—अष्टादश तीर्थ संगम जन्म खंड गोलोक धाम वर्णन पत्र १३८ से १४७ तक
१९—एकोनविंसति ,, ,, गोलोक धाम वर्णन पत्र १४७ से १५८ तक
२०—विंसति तीर्थ संगम कृष्ण बाल चरित्र वर्णन पत्र १५८ से १६८ तक
२१—एकविंसति तीर्थ संगम द्विज पत्नी मुक्तिदान वर्णन पत्र १६८ से १७८ तक
२२—द्वाविंसति तीर्थ संगम चीर हरण लीला वर्णन पत्र १७८ से १८७ तक
२३—त्रयविंशति ,, ,, विधि मोहिनी चरित्र वर्णन पत्र १८७ से १९९ तक
२४—चतुर्विंशति तीर्थ ,, कंसवध पूर्वक नंद व्रज आगमन पत्र १९९ से २०९ तक
२५—पंचविंसति तीर्थ संगम राधा उद्धव संवाद पत्र २०९ से २१८ तक
२६—षट विंशति ,, ,, रुकुमिणी मंगल वर्णन पत्र २१८ से २२८ तक
२७—सप्तविंसति ,, ,, सुदामा दारिद्र भंजन पत्र २२८ से २३७ तक
२८—अष्टविंसति ,, ,, वाण युद्ध वर्णन पत्र २३७ से २४५ तक
२९—एकोनत्रिंसति ,, राधा कृष्ण गोलोक धाम पत्र २४५ से २५८ तक
३०—त्रिंसति तीर्थ संगम गोपिका पुत्र प्रासाद वर्णन पत्र २५८ से २६७ तक
३१—एकत्रिंसति ,, ,, मंजुला चरित्र पत्र २६७ से २८० तक
३२—द्वात्रिंसति ,, ,, भद्राउ रिषभ संवाद राजनीति पत्र २८० से २९१ तक
३३—त्रयत्रिंसति तीर्थ संगम सारदा चरित्र वर्णन पत्र २९१ से ३०४ तक

रचनाकाल

मुनि[7] हरमुष[5] दिन[6] चंद[1] लै संमत संष्या दीन्ह ।
अछैतीज गुरुवार मैं चरित भाषिवे लीन्ह ॥

संख्या १०१ क. वृत्तविचार या पिंगल, रचयिता—दशरथ, कागज—देशी, पत्र—५६, आकार—५½ × ३¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—७३५, पूर्ण, रूप - प्राचीन, पद्य, लिपि, नागरी, लिपिकाल—सं० १७९३ वि०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत सेठ शिवप्रसाद साहु, गोलवारा, सदावर्ती, आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्री गणेशायनमः

गुर गनपति मतिदानि के अति गति नति उर आनि।
जिनके तरुन प्रभाव ते कीने पाहन पानि ॥ १ ॥
कीरति साधन सिद्ध तिन आराधन करि ईस।
कीन्हो वृत्त विचार कवि अमलानुमत अहीस ॥ २ ॥
भाषा प्राकृत संसकृत आदि वचन संसार।
अवछंद इक छंद पुनि तिनके द्वे परकार ॥ ३ ॥

॥ वचनं नाम ॥

जो कछु कहिजै रसन सों व्यक्ता रथ जुत बात।
वचन नाम सो जानिए कहत सुमति अवदात ॥ ४ ॥

॥ अवछंदो नाम ॥

छंदो भंगः

॥ छंदो नाम ॥

अवछंदो भंगः

अँरँजन जति अव छंद है रंजन जति सोइ छंद।
सुकवि छंद द्वै भाति है रहित सहित गण वंद ॥ ५ ॥
अवछंद गणिगन विधि विषै सहित गण वंद।
उदाहरण ते जानि हौ आगे सहित अनंद ॥ ६ ॥

अंत—

॥ अथ वर्ण वृत्तानि ॥

तेषां लद्दणं वसु वसु रिषि रिषि वसु वसु वसु वसु
को डर सद सरस नव विरई।
कोऊ पद रस दस रिषि वसु नियमन मिश्रित प्रतिपद पद निरई।
परहि निरंतर तति सुष दंतर मोहन मंतर मूरि मई।
पद इकतिक्षरि छंदु घनक्षरि जंपइ मक्षरि सुअन कई ॥

॥ यथा ॥

करुना के धाम अभिराम नाम आठौ जाम,
संकट हरन परिनाम एसौ कोनु है।

दीन को दयाल प्रतिपाल सरनागत को,
जागत सुजस जगति नही को तौन है।
एक मुष वारे को विचारे ए सहस मुष,
हारे है न थाक्यो गुन गना को ओनु है।
जोति है सूझति न ऐसे जैसे आरतनि,
सावरे वरन वारो जानुकी को रोनु है।

॥ घनक्षरि छंद ॥

छट्टम गुरु पंचम अगुर सप्तम सम पविराम।
हर पर कल वसु वरन पद छंद अनुष्टुप् नाम॥

॥ यथा ॥

चंद्रा नित करि चाहै जो पै असित जामिनी।
रामचंद्र जसै गावै क्यौं न भूपति कामिनी॥

॥ अनुष्टुप छंद ॥

इति श्री रघुवर कीर्तए दसरथ विरचिते वृत्त विचारे वर्णवृत्त वर्णनो नाम चतुर्थो विचारः॥ भाषा दोष अदेषियो मति दरसन के गर्व॥ करी बिनै व्युत्पन्न प्रति अन्य सिरोमनि सर्व॥ निज बुधि वित हित मै कियो एतोश्रम सभार। इतर विबुध छमि औन है तिन हित वृत्त विचार॥ छ॥ राम॥ इति संपूर्ण संवत्॥ १७९३॥ बदलसिंघ॥

विषय—

छंद शास्त्र का वर्णन किया गया है। इसमें निम्नलिखित चार अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय का नाम 'विचार' रखा गया है।

१—प्रथम् विचार—

मंगलाचारण, वचन नाम, अवछंदोनाम, छंदोनाम, अरंजन रंजन जति नमि, गणनाम, पदनाम, पद्यनाम, चरननाम, विश्राम, प्रस्तार, कलावर्ण, लघु, गुरू, नष्ट, मात्रोदिष्ट, मात्रामेरु, मात्रा पताका, सामान्य मर्कटी, मात्रामर्कटी, वर्णनष्ट, वर्णोदिष्ट, वर्ण मेरु; वर्ण पताका, वर्णमर्कटी, गणभेद, संचारी, स्थायी प्रयोजन, विशेष संचारी, अवछंद भेद, छंद भेद, वृत्त, मात्रावृत्त, वर्णवृत्त लक्षण, उभयवृत्त लक्षण आदि का वर्णन पत्र १ से १८ तक

२—द्वितीय विचार—उभयवृत्त वर्णन पत्र १८ से ४३ तक
३—तृतीय विचार—मात्रावृत्त वर्णन पत्र ४३ से ५५ तक
४—चतुर्थ विचार—वर्णवृत्त वर्णन पत्र ५५ से ५६ तक

संख्या—१०१ ख. नवीनाख्य, रचयिता—दशरथ, कागज—देशी, पत्र—१२७, आकार—५½ × ३¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२३६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७९२ वि०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत सेठ शिवप्रसाद साहु, गोलवारा, सदावर्ती, आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्री गणेशायनमः

दारिद के कदन गज बदन रदन एक,
सदन हदन बुद्धि साधन सुधा के सर।
धूमकेतु धीर के धुरंधर धवल धाम हाम के,
सरन सरना मनौ निधन कर।
लंबोदर हरहे भवती हित बुंद भाल,
चंद कंद आनंद विवुध वंदनीय वर।
सदा सुभ दाएक सकल गुन लाएक,
सु जै जै गननाएक विना एक विघन हर॥ १॥

॥ अथ नायक नाइका निरूप्यते॥ अनयों लछनं॥
होत जाहि अवलंबि कै जामन मदन विकार।
कहो सुनायक नायिका निज संबंध अधार॥ २॥
पति उपपति पर भेद ते नायकु द्विविध बषानि।
अनुकूल दक्ष सठ ध्रिष्ट पुनि चारिभाति पति जानि॥३॥
नाएक चार्यो होंहि ए चारि चारि अनुहारि।
उत्तम मध्यम अधम तौ सामान्य अवधारि॥ ४॥

अंत—

॥ अथ स्वाधीन पति का पंडितयोऽ संकरो यथा॥
सुंदरि एकही सेज द्वै सोइ रही पटु तानि।
चनक मूंद वंचक हरें एक जगाई आनि॥ ४३७॥

इति श्री दशरथ विरचिते नवीनाख्ये अष्टनाइका प्रकरन परिछेद॥

॥ कवि वंस वर्णन॥

महापात्र नरहरनि भयो अनुज तासु सद बंधु।
तिन तन भो चत्रभुज दियो जिहि दिलीस रसबंधु॥ ४३८॥
तिन कुल पंचादरति कवि भौ दशरथ इही नाम।
काढयो निज बुधि सिंधु मथि एक नवीन ललाम॥ ४३९॥

सत्रह[१७] सै अरु बानवे संवत कातिक मास।
सुक्र असित की सप्तमी पुस्तक लिषो प्रकास॥ १॥
घासीराम सुजान मनि रसिक द्विजोत्तम वंस।
ताके हित हरजू लिषी सुषद सो मानस हंस॥ २॥

॥ शुभमस्तु ॥

विषय—नायक नायिका भेद का पाँच प्रकरणों में वर्णन किया गया है :—

१—प्रथम प्रकरण—नायक नायिका लक्षण, नायक के पति, उपपति दो भेद, अनुकूल, दक्षिण, शठ और धृष्ठ नायक के लक्षण और उदाहरण पत्र १ से १० तक

२—द्वितीय प्रकरण—नायिका वर्णन, स्वकीया नायिका वर्णन, स्वकीया के सुर, नर, गंधर्व और असुर विवाह वर्णन पत्र १० से १३ तक

३—तृतीय प्रकरण—परकीया लक्षण, ऊढ़ा अनूढ़ा दो भेद, अभजमान, भजभान लक्षण और उदाहरण, उद्वेग, प्रताप, उन्माद, व्याधि, जड़, संचारी भावों का ऊढा अनूढ़ा में वर्णन गुप्ता, विदग्धा लक्षिता, कुलटा, मुदिता और अनुसयना आदि ऊढ़ा अनूढ़ा में वर्णन, गुप्ता विदग्धा लक्षिता, कुलटा, मुदिता और अनुसयना आदि ऊढ़ा अनूढा के भेद वर्णन पत्र १३ से ७९ तक

४—चतुर्थ प्रकरण—मुग्धा लक्षण और उसके भेद वर्णन, अविज्जोव (अविज्ञात योवना) विज्जोवन (विज्ञात योवना) लक्षित जोवन नवभूषण भूषा, ह्वियाकुला, ह्वियामनोहरा, नवयोवनभूषिता, सुरत कुतूहल कामा, धृति वचना, रतिभीता, पराधीन रति मुग्धा, रतिवामा, विश्रब्ध, नवोडा, मृदुक्रोधा, मन्युभिरामा, चिंतामने आदि मुग्धा वर्णन, मध्वा लक्षण और भेद वर्णन अल्पाधिक लज्जा मध्या लज्जाधिका, समान लज्जा, न्यून लज्जा, उद्धत योवना मध्या, आरूढ़ जोवना, प्रादुर्भूत मनोभवा मध्या परिहास विसारदा मध्या, सुरत विचित्रा मध्या, सोहांतरित मध्यावर्णन, प्रौढ़ लक्षण और भेद, रति प्रीता, आनंद समोहिता, जौवनाधा, मदन मदमत्त, रतिकोविदा, आधरामित कांत, धृष्ट सुरत, उद्दामरति, अद्भुत विभ्रम, लब्धापति प्रौढा वर्णन

पत्र ७९ से १०१ तक

५—पंचम प्रकरण—स्वाधीन पतिका लक्षण और भेद, उपासन्न, निरासन्न, परकीया, सोभा गर्विता, प्रेम गर्विता, स्वाधीन पतिका वर्णन, प्रोषित पति का लक्षण और भेद आगत पति का वर्णन, उत्कंठित लक्षण, वासक सज्जा लक्षण, अभिसंधिता लक्षण, अभिसारिका लक्षण, खंडिता लक्षण धीराधीरा आदि नायिका वर्णन, प्रौढा लक्षण और भेद, उत्तमा, मध्यमा, अधमा तथा अधमाधम लक्षण और उदाहरण, परज्ञा खंडिता, रति परज्ञा, प्रीति परज्ञा और अभिज्ञा

लक्षण, उदाहरण सिरसूना खंडिता, विप्रलब्धा तथा सबल संकर्षन वर्णन ·· पत्र १०१ से ११६ तक

संख्या १०१ ग. नवीन ललाम, रचयिता—दसरथ, कागज—देशी, पत्र—१३९, आकार—६½ × ३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) – ६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२९४, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१७९२, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—

श्री गणेशायनमः

॥ कवित्त ॥

दरिद कदन गज वदन रदन यक सदन,
हदन वुधि साधन सुधाकेसर
धूम केतु धीर के धुरंधर धवल धाम,
हाम के सरन सरना मनौ निधन कर
लंबोदर हर हेमवनी हित तुंद भाल,
चंद कंद आनंद विवुध वंदनीय धर
सदा सुभ दायक सकल गुन लायक,
सु जै जै गननायक विघन हर ॥ १ ॥

॥ अथ नायक नायिका निरूप्यते। अनयोर्लक्षण ॥

होत जाहि अवलंबिकै जामन मदन विकार
कह्यो सु नायक नायका निज संबंध अधार ॥ २ ॥
पति उपपति पर भेद तें नायक द्विविधि वषानि।
अनुकूल दक्ष सठ धृष्ठ पुनि चारि भांति पति जानि ॥ १ ॥

+ + +

सत्रह सै अरुवानवे संवत कातिक मास।
सुक्क असित की सप्तमी पुस्तक लिखा प्रकास ॥ १ ॥
घासीराम सुजान मति रसिक हितोत्तम (? द्विजोत्तम) वंस।
ताकेहित हरजू लिखी सुख सोभा मानस हंस ॥ २ ॥

+ + +

महापात्र नरहरि भयो अनुज तासु सदबंधु।
तिन तन भो चत्रभुज दियो जिहि दिलीस रसबंधु ॥ ४३८ ॥

तिन कुल पंचादरति कवि भौ 'दसरथ' इहिनाम ।
काढ्यो निज बुधि सिंधु मथि एक नवीन ललाम ॥४३९॥

अंत—

॥ परकीया स्वाधीन प्रोषित पतिका यथा ॥

तिय पिय को इहि विरह मैं निरयौ रूप सोहागु ।
औगुन गनै तौ विधि बनै स्वाहरि हींचन लागु ॥४३५॥

॥ स्वकीयोत्कंठित प्रोषित पतिका यथा ॥

पंचम पचाइके रचाइ रुचि और ही सों,
हो ही कै नचाई नांह मानगस रोकिलौ
मंद गंध वाहकै वहै न कौल वन के विहंग,
विहरैनकै मृनाल अवलोकि लौ
कर हरे किंसुक कसाई कौन मौरे न्यून कोउ,
आवै न विचार अवलोकि लौं
फूलत न एसो कौलनि ए गुलाब उहि ओर
भौर कैन ऐसे कौलनि एषोज खोई कोकिलौ ॥४३६॥

॥ अथ स्वाधीन पतिका षंडि (ते) भयो संकरो यथा ॥

सुंदरि एकहि सेज द्वै सोइ रही पछुतानि ।
घनक मूद वंचक कहैर एक जगाई आनि ॥४३७॥

इति श्री दसरथ विरचिते नवीनाख्ये अष्टनाइक प्रकरन परिच्छेद ।

विषय—नायिकाभेद वर्णन ।

संख्या १०१ घ. नवीनाख्य (नवीन), रचयिता—दशरथ राइ, कागज—देशी, पत्र—३८, आकार—९½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—११४९ पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६९ = सन् १८१२ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः

दारिद कंदन गज वंदन रदन एक संदन हदन बुद्धि साधन सुधा केसर ।
धूँमकेतु धीर के धुरंधर धवल धाम हाम के सरन सरनाम नव निधिन कर ।
लंबोदर हर है मवंती हितनंद भालचंद कंद आनंद विबुध वंदनीयवर ।

सदाँ सुभदायक सकल गुन लायक सु जै जै,
गन नायक विनायक विघन हर ॥ १ ॥

॥ अथ नायक नायका निरूप्यते ॥

॥ दोहा ॥

होत जाहि अवलंबि कै जा मन मदन बिकार ।
कहौ सुनायक नायका निज संबंध अधार ॥ २ ॥
पति उपपति परभेद तें नायक दुबिधि बषानि ।
अनुकूल दछ सठ धृष्ट पुनि चारि भाँति पति वानि ॥ ३ ॥

अंत—

॥ स्वाधीन पति का पंडिता संकरोजथा ॥
सुंदरि एकहि सेज ह्वै सोइ रही पट्टतानि ।
चनक मूद पंचक हरैं एक जगाइ आनि ॥४४१॥

इति श्री दसरथराइ विरंचिते नवीनाष्ये अष्ट नाएका प्रकरन परिछेदह

अथ कवि वंस वरनन

महापात्र नरहरि भयो अनुज तासु दस बंधु । (? सदबंधु) ।
तिन तन भो चत्रुभुज दियो जिहि दीलीस्वर बंधु ॥४४२॥
तिनकूल पंचादरित कवि भो दसरथ एहि नाम ।
काढ्यौ निज वूधी सिंधुमथिए नवीन ललाम ॥४४३॥
संवत् १८६९ शमै नाम स्रावन सुदी १० वार सोमार ॥

विषय—

नायक और नायिका भेद वर्णन । ग्रंथ परिच्छेदों में लिखा गया है जो इस प्रकार है:—

१—नायक प्रकरण परिच्छेद	पत्र १ से ४ तक
२—स्वकीया प्रकरण	,, ४ से ५ ,,
३—परकीया प्रकरण	,, ५ से २५ ,,
४—स्वकीया सवल संजोग मुग्धादि	,, २५ से ३१ ,,
५—अष्ट नायिका प्रकरण परिच्छेद	,, ३१ से ३८ ,,

संख्या १०२ क. दामोदर स्वामी के पद, रचयिता—दामोदर, कागज—बांसी, पत्र—१६, आकार—७×५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्) – ११०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी

आदि—

पद दामोदर स्वामी जी के लिख्यते ।
हरि के दास सबतें बड़े ।
नाम धन करि भरे पूरे और सब गड़े ।
दुषित के उपगार को इहि हेत जग मे मंडे ।
विपति संपति मांहि सुमिरत आनि होत अड़े ।
नद नंदन रूप में चित्त संतत गड़े ।
दामोदर हित स्याम जू के सदा अलिक लड़े ॥ १ ॥
हरि के दास सवन ते षरे ।
और मेषी गौर शाली फिरति के सिगरे ।
भक्ति श्री भागौत संमत तिहि टकसार घरे ।
गुर वचन वर घन उजागर नाम सिक्का परे ।
भवन चौदह मद्धि आदर चारि जुग नहिं टरे ।
दामोदर हित नंद नंदन चरन को चरन सभरे ॥ २ ॥

अंत—

हेली ये डफ बाजैं छैला के मन मोहन रसिया नागर के वा
जुलमी ओगुन गरिके सुनि सुनि जीव अति अकुलाई दई ॥
आवत उमगति यौं निध ज्यौं अत्र कापै री क्यौं जाइय
इत गुरु जन की लाज दहत है धरि न सकति देहरी पाइ ।
'दया सखी' अब ही इसु होवो मिलो घन स्यामह धाई ।

विषय—

वृंदावन की होली के अवसर पर राधाकृष्ण की केलि क्रीड़ाओं का वर्णन किया गया है ।

संख्या १०२ ख. श्री राधाकृष्ण वर्णन, रचयिता—दामोदर दास हित (स्थान, वृंदावन), कागज—देशी, पत्र ३, आकार ४'३ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

॥ दोहा ॥

लगी लीक दग पीक तुम काजर ओंठन दीन ।
मानुल लीने भली विधि प्रीतम को वस कीन ॥ १ ॥

सवैया

कैसी लगी दृग पीकन लीक है काजर ओठन में तुम दीनौ।
मानक लाली लगी उर में कल मोतिन की लट टूट नवीनौ।
वैनी के कोदन सों अरुझी पहुँची पिय की लष चित्र प्रवीनो।
जागो अली निसि वीती भली वृष भानु लली पिय को वस कीनो॥ २॥

सोरठा

प्रिया हँसी सुष मोर सारो शुक के वचन सुनि।
विहसे नवल किशोर सषियन के आनंद भयो॥ ३॥

अंत —

देष री देष राधा रूप।

सकल जुवतिन मध्य सजनी एक परम अनूप।
चारू कवरी मांग मंजुल नील पट फवि रह्यौ।
तिलक झलकत सुभग मांथे जात नहिं सुष कह्यौ।
कनक पुटला वने सुंदर कांति दमक कपोल।
वंक भृकुटी चारू चितवन बड़े नैन सलोल।
सुभग नासा बेसरी जुत अधर सुंदर महा।
वचन मोहन दसन सोहन चिवुक दुति कहु कहा।
ग्रीव सोभा अतिहि माई पोंति पुंजा चारू।
षुभि रही गुर नील कंचुकी माल मुक्त सुढार।
बाहु नाहुस अंस मंडित कोक पंडित बाल।
वने कंकन कर मनोहर निरषि रीझे लाल।
उदर श्याम सुदेश रेषा नाभि त्रिवली भली।
लंक सूक्षम किंकनी जुत जंघ सुंदर अली।
कनक नूपुर चरन राजै मंद मधुरी चाल।
सदा सेवहु हित दमोदर लाल प्यारी बाल।

विषय —

प्रस्तुत ग्रंथ में राधा और कृष्ण का संक्षेप में वर्णन है। घर में पले हुए तोता और मैना ने दम्पति की सुरति लीला की चर्चा करते हुए सषियों को जगाया। जागने पर सषियों ने राधा और कृष्ण की छवि का मुग्ध होकर वर्णन किया।

संख्या १०२ ग. हरिनाम महिमा, रचयिता —दामोदरदास हित (स्थान—वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—१४, आकार—४·५ × ५·७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण—

(अनुष्टुप्)—६८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८३४ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

॥ अथ श्री हरिनाम महिमा लिष्यते ॥

॥ चौपाई ॥

नमो नमो गुरू परम अनूप बुद्धि,
प्रकासिक सब सुष रूप ॥
सदा प्रसंन नयन अभिराम,
विकसित कमल वदन सुष धाम ॥
अैसे गुरू कौं उर में आनें,
तव हरि नाम प्रतापहिं जानें ॥
हरि कौ नाम निगम कौ सार,
हरि नाम संतनि कौ आधार ॥
हरि नाम सत धर्मनि में राजै,
हरि नाम लेत सबै दुष भाजै ॥

अंत—

महिमा श्री हरिनाम की सागर ते गंभीर।
कही गई मोपै इती जितौ गहै पग नीर।
प्रीति सदा हरिनाम सों हरि भक्तनि में वास ॥
दामोदर हित दास कें यह मन में है आस ॥ १२० ॥

इति श्री हरिनाम प्रताप लीला संपूर्ण ॥ संवत् १८३४ मिती सावन वदी ८ अंतवार लिषितं श्री वृंदावन मध्ये ॥

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ 'हरिनाम महिमा' में भगवान की महिमा का वर्णन है।

संख्या १०३ क. रसिक संजीवनी, रचयिता—दिनेश पाठक, कागज—देशी, पत्र—१३३, आकार—६.६ × ५ इञ्च, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८६२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसिपल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ श्री सरस्वत्यै नमः ॥

जै श्री कमलनयन गोपीजन वल्लभ ॥

॥ छप्पै ॥

उदित इंदु दुति मध्य सुभग सिंदूर सूर सम।

श्रवत लोल मधु कल कपोल उदंड सुंडवर ॥
इक दसन दिश वसन गवरि आनंद कंद कर ॥

\+ + +

नव निद्धि सिद्धि दायक सुमति महा मुदित मंगल करन ।
दिज्जै 'दिनेश' मागत सुमति जै गणेश संकट हरन ॥ १ ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

श्री राधा राधारमन के किए यथा गुन गान ।
भई रसिक संजीवनी हरि भगतन की प्रान ॥ २० ॥
दामोदर सुर विप्रवर मगपुर पट्टन वास ।
कवि भाषत 'कंठा भरन' हों भाषत हरिदास ॥ २१ ॥

इति...रसिक संजीवन्यां दिनेश पाठक कृता......

विषय—प्रस्तुत 'रसिक संजीवनी' रस विषयक ग्रंथ है। इसमें निम्नलिखित १६ प्रकरण हैं :—

१—(पत्र खंडित हैं)
२—नायक वर्णन ।
३—मुग्धा वर्णन
४—मध्या वर्णन
५—प्रौढ़ा
६—चतुर्विध दर्शन
७—प्रथम स्थान कथन
८—मान लक्षण
९—अष्ट नायिका
१०—पूर्वानुराग
११—मान मोचन
१२—विप्रलंभ शृंगार
१३—सखी जन
१४—सखीजन कथन
१५—अष्टरस वर्णन
१६—विरस और निरस रस वर्णन ।

अंतिम दोहे से रचयिता का दृष्टिकोण स्पष्ट हो जाता है :—

श्री राधा राधारमन के किए यथा गुनगान ।
भई 'रसिक संजीवनी' हरि भगतन की प्रान ॥

अतः 'रसिक संजीवनी' रीति ग्रंथ होते हुए भी भक्ति विषयक रचना है। यद्यपि यह मत सर्वग्राह्य नहीं हो सकता। लक्षणों के उदाहरणों में राधा कृष्ण की प्रेम लीलाओं का वर्णन है। शृंगार रस का विशद और विस्तारपूर्वक वर्णन है। शेष रसों का समावेश केवल नाम के लिए ही हुआ है। ग्रंथ की भाषा व्रज है।

संख्या १०३ ख. रसिक संजीवनी, रचयिता—दिनेश पाठक, कागज—देशी, पत्र—६३, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९६९,

पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७२४ वि०, लिपिकाल—सं० १७६४ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, 'रत्नाकर संग्रह', काशी नागरी-प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः

॥ जय श्री कमल नयन गोपी जन वल्लभाय ॥

छप्पै

उदित इंदु दुति मध्य सुभग सिंदूर सूर सम,
रहत गंड मंडल अनेक गुंजरत मधुप तम।
श्रवत लोल मधु कल कपोल उद्दंड सुंडवर,
इक दसन दिग वसन गवरि आनंद कंदवर।
नव निद्धि सिद्धि दायक सुमति महा मुदित मंगल करन,
दिज्जै दिनेस मागत सुमति जै गनेस संकट हरन ॥ १ ॥

\+ + +

सुर सरिता औसोन के मध्य महावन जानि,
तजि निज देस जै नए रहे सिंघ समआनि।
सिद्धाश्रम के तीर तें जोजन जहाँ प्रमान,
नगर भोजपुर है तहाँ कलि कैलास समान।
वरन चारि आश्रम रहैं सदा सुखी जेहि देस,
पढ़त पढ़ावत वेद अरु विद्या विविध दिनेस।
तहाँ कन्यो करतार नृप रामसाहि सिरमौर,
जाको जस या जगत मै जगमगात प्रतिठौर।
भयो वहुरि सुत ताहि के नृपति साहि संग्राम,
महा सुभट सुंदर सुधी ज्यों दशरथ गृहराम।
पुनि ताके गृह अवतर्‌यो उग्रसेन नृप होय,
सुन्यो प्रथम प्रधु श्रवन श्रव औरन ऐसे कोय।
उग्रसेम नृप के भये होलराय वलबंड,
तेज पुंज करि वार वर जिन्ह जीत्यो नव पंड।
होलराय नृप के भए महा सुमति सुत तीनि,
बड़े नरायण मल्ल जग जिन्ह मार्‌यो आरबीनि।
ताको अनुज प्रताप पुनि कीर्तिसिंह सुजान,
जाकी कीरति जगत मैं कविकुल करत बषान।
नृपति नरायन मल्ल के होतन सूर समान,
जिन्ह मोर्‌यौ सुभ समर मैं सेरषान को मान।

भये पुत्र पुनि ताहि के द्वै दिनेस महि माहि,
जिन्ह देषत देषत जगत चंद सूर लजि जांहि ।
भये न ह्वै है जगत में अमर साहि समपीर,
प्रबलसिंह जाके अनुज महा रसिक रणधीर ।
कियो अमर जस समर करि प्रतिसाहिन के संग,
जिन जीती वहु अरिन की चमू चारु चतुरंग ॥ १२ ॥

दान सील सनमान करि सरि 'दिनेस' कोउ नाहि,
प्रबल सिंह करता कह्यो कल्प वृक्ष जगजान ।
कह्यो "रसिक संजीवनी" पुस्तक परम सुदेस,
हरि जस नवरस में सबै कीजै सुकवि 'दिनेस' ।
द्वितिया शुक्ल आषाढ़ की पुष्य नषत गुरूवार,
सत्रह[१७] सै चौबीस[२४] में करी प्रगट करतार ॥ १९ ॥

अंत—

॥ अथ श्री लाल जू को नीरस रस वर्णनं ॥

॥ कवित्वं ॥

गोपन के सुतए सुजावै समगोपन की,
यातें लषि लाजन अकाज ऐसे कीजिऐ ।
तुम सों है प्रीति उर उनसों कुल की रीति,
लोक में अलोक तातें कैसे कै पतीजिऐ ॥
हरि तुम सरिवौर दूसरो 'दिनेश' को है,
प्रीति फंद परियै अधर सुधा पीजिऐ ॥
कांपै लेत पाए होत सामुहे सकाए मन,
सषिन्हि सों सकुच सषानि साथ लीजिऐ ॥ १९ ॥

॥ दोहा ॥

श्री राधा राधारमन के किए यथा गुन गान ।
भई 'रसिक संजीवनी' हरि भगतन की प्रान ॥ २० ॥

दामोदर सुत विप्रवर मगपुर पट्टन वास ।
कवि भाषत 'कंठाभरण' हौं भाषत हरिदास ॥ २१ ॥

इति श्री नवरस रंजितायां रसिक संजीवन्यां दिनेश पाठक कृतायां मिश्रित रस वर्णनो नाम षोडश प्रकरणं समाप्तं ॥ १६ ॥ शुभमस्तु ॥ संवत् १७६४ फाल्गुन कृष्ण चतुर्थ्यां समाप्तमिदं श्री रामनाथ शर्मणा हिलेनालेखि ॥ शुभं भूयात् ।

विषय—

प्रस्तुत 'रसिक संजीवनी' रस विषयक ग्रंथ है। इसमें निम्नलिखित १६ प्रकरण (अध्याय) हैं :—

संख्या १०४. अलंकार दीपक, रचयिता—दिलेराम (स्थान-तरसोपरि), कागज—देशी, पत्र, ८१, आकार ८'५ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२८८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य-पद्य, लिपि-नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री बिहारी जी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ सवैया ।

मोहनी मूरति स्याम सरोज से गात की सोभा न जाति बषानी ।
सुंदरता को समूह लखे विधि की बुधि विभ्रम ही में भुलानी ।
जाहि लखे नर किन्नर देव अदेव की बामा सकामा विकानी ।
सो नद नंद अनंद को कंद हरे दुख दंद करे सुष षानी ॥ १ ॥
शिव रूप शिव के करन शिव प्रसाद पद धाइ ।
अलंकार दीपक कर्यो भाषा मैं सुख पाई ॥ २ ॥
व्यंगादिक ते भिन्न जह चमत्कार सरसाइ ।
अलंकार तासो कहे जे प्रवीन कवि राय ॥ ३ ॥

विषय कहत उपमेय को विषयी है उपमानु।
से सो सम पद आदि दे उपमा वाचक जानु ॥ ४ ॥
वर्णनीय को कहत हे जह उपमान समानु।
साधारण धर्मादि ते पूरन उपमा जानु ॥ ५ ॥

॥ यथा ॥

ईश शीस सुर सरित सी सोभित मई विशाल।
पहिरत उरज उतंग पर मुकताहल की माल ॥

शंभु शीस गंगा उपभान ॥ उरज उतंग मुक्ताहल की माल उपमेय ॥ सोभित पद धर्म। सो उपमा बाचक ॥ इन चारयो के ग्रहण ते पूर्णोपमा ॥

अंत—

बाण[५] वेद[४] धृति[१८] शक भए श्री विक्रभ भूपाल।
अलंकार दीपक रच्यो जनमाठे नदलाल (जन्माअष्टमी)॥

या पुर श्री मधुसूदन जू तरसोपी ग्राम के पाडे वषाने। श्री मधुसूदन ही की कृपा ते रहे सुष संपति में अति साने। तीन भए तिनके सुत सिद्ध प्रसिद्ध भए घनस्याम सुजाने। जै चंद और भए जिनको जस अति उज्जल हरिचंद समाने ॥

ता कुल में घन स्याम सुत दिले राम कविराय।
अलंकार दीपक रच्यो भाषा में सुष पाइ ॥

इति श्री दिलेराम पांडे कृत अलंकार दीपक संपूर्ण ग्रंथ संख्या २३१० ॥ श्री कृष्णचंद्रा विजयते ॥

विषय—

'अलंकार दीपक' का विषय इसके नाम से स्पष्ट है। इसमें अलंकार विषय का विस्तारपूर्वक निरूपण किया गया है।

संख्या १०५ क. कवित्त, रचयिता—दुखहरन, कागज—देशी, पत्र-३, आकार—७$\frac{3}{4}$ × ४$\frac{3}{4}$ इंच. पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)-१७, परिमाण (अनुष्टुप्)-१८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी। दाता—श्री सरल चौबे, और रामनिरेखन चौबे, स्थान और पो०—सहतवार, जि०-बलिया (उत्तर प्रदेश)

आदि—

कवीत्य

भग्र सुदामा को दालीद्र मेटी कीयो झोपरीउ जे हेम अटारी।
पंडोव को जीन्हीं भीषी मंगाइ के राज दीयो कवरो दल मारी।

राषी लीयो द्रोपती को शभा मो लागी अमारी बढ़ी अती शारी।
जन दुषहरन को वीनती हंशा घर फेरि वशावो विहारी ॥ १ ॥
आदी निरंजण हव दुष भंजण दालीद्र गंजन शंत शहाइ।
नाथ अनाथ के शाथ रहो प्रभु दीन्ह को तुम वाप वो माइ।
नीरधन को धन भग्तन को जन गोपीन्ह को मनशा शुषदाई।
जन दुषहरण करै विनती हंशा घर फेरी वशावो कधाई ॥ २ ॥

अंत—

राम जहा विशराम तहाँ हरी नाम को लेत मेटे अघ ज्वाला।
दालीद्र कोटि बीलाइ तुरंत ही जोपै कहै मुष राम कृपाला।
हे हरी हे हरी हे हरी हो प्रभु हाली हरो तुम दुष जंजाला।
जम दुष हरन करे वीनती हंशा घर फेरी वशावो दे आला ॥ १० ॥
हे मछ राम महा मन शादीक हे कछ राम अछे अभी रामी।
हे वराह मही के उधारण हे नरशीघ जी अंतर जामी।
वावन हो प्रशराम अहो राम क्रीशुन वउध नयो शरनामी।
जन दुष हरण करे वीनती हंशा घर फेरी वशावो होशामी ॥ ११ ॥
दाश को आश जो वेगी पुरावहु शाधु जो आपही पावही ढुका।
राम को भक्ती करो नीशु वाशर माफ करो जन को शव चुका।
जो कोई द्रोह करे हमशो अव ताही परे मुष मे मल थुका।
जण दुषहरण करे वीनती हंशा घर फेरी वशावो मलुका ॥ १२ ॥
सीताराम जीव दशहाए श्री राम जी शरन ॥ १ ॥

विषय—
जीव की मुक्ति के लिये भगवान से प्रार्थना की गई है।

संख्या १०५ ख, भक्तमाल, रचयिता—दुखहरन (संभवतः), कागज—देशी, पत्र—१५३, आकार—११×८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२७८, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी, प्राप्तिस्थान—पं० शिवबचन उपाध्याय, स्थान—सिकंदरपुर, जिला—बलिया

आदि—

× × ×

राम नाम कबहु जनि लेहु। असपर कृत्य छोडि तुम देहु ॥
जो कतहु राजा सुनि पाइहै। ना जानो दहु काह कराईहै ॥
मोर कहल सुनि पहु सीउ। जो तुम चाहै आपन जीउ ॥
नातरु नाही दोस हमारा। तुहु जानहु अब राम तुम्हारा ॥
एहि भातिन्ह गुरुदेव बुझाएउ। पै प्रहलाद के मन नहि आएउ ॥

दोहा

रामनाम लै लागि निशुदिन आठो जाम।
अवरो पढिआ जो रहे शभै पढावै राम॥

अंत—

श्री चेतनदास चरित्र

चेतन भगत भए एक ग्यानी। महा परभु पद पाए न बानी॥
कठवा इत तीन कर असथाना। देश वोडेशा के दोरशउवाना॥
भागीरथी नदी वहै जहाँ। दछीन दीस तठ पूरव तहाँ॥
चेतनीया प्रभुही तंह भैए। भए भगत मांइ भगत एक भैए॥
नुतन पद हरी को रस एएव। भगत वोडेशा दीडारण्ण॥
जब तहँ भएउ वउध अवतारा। दरशन के धाएव संसारा॥
वोडेशा मह जाए जो कोई। जर के देश नीवाहन होई॥

चेतनामा प्रभु जो परमोधी नशोदेश।
लागी भगत करै शभै नीवहै लागी भेश॥
गावही पद चेतन के लोगा।
करही भगत मानही सुष भोगा॥
वोडेशा देश महत जो कोई।
शभै वैशनो भए सीष होई॥
घर वर सुष मानही गुन गावही।
धरम पंथ से चीत न डोलावही॥

+ + +

चेतन औ मीतवानंद ऐ नही गए न होइ।
और सो शभ जन धाए रहै जहा लगी सोइ॥

—अपूर्ण

विषय—भक्तों का वर्णन किया गया है।

संख्या १०५ ग. पुहुपावती, रचयिता—दुखहरन (स्थान—गाधीपुर संभवतः गाजीपुर), कागज—देशी, पत्र—१७२, आकार—८¼ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४७५७, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी, रचनाकाल—सं० १७२६ = सन् १६६९ ई०, लिपिकाल—सं० १८६७ = सन् १८१० ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

॥ श्री रामजी सहाय ॥ श्री गनेसजी सहाय ॥ श्रीगोपाल जी सहाय ॥

श्री पोथी पुहुपावती ।

प्रथम ही सुमीरौ राम क नाउ ।

अलष रूप व्यापीक सब ठाउ ॥

घट घट माह रहा मीली सोइ ।

अस वोह जोतीन देषौ कोई ॥

ससी सूरज दीपक गनतारा ।

इन्ह की जोति जगत उजिआरा ।

गत जोती देषी पहिचानी ।

वह सो जोती जग रहै छपानी ॥

ना कोइ देषै न काहु देषावै ।

जा पर दआ करै सोइ पावै ॥

अस गोसाइ बड सीरजनिहारा ।

तस न कोउ दुसर वरीआरा ॥

जो कछु कीन्ह सो आपु ही कीन्हा ।

नीगुन आ सबही गुन दीन्हा ॥

॥ दोहा ॥

नीसु दीन वंदौ रामपद तुअ अनादी करतार ।

माली आदि तुही भवर फुलवारी संसार ॥

× × ×

तुही नीर से पिंड सवारा ।

तुही प्रान देइ सभ औतारा ॥

तुही सकल जीवन उपराजी ।

तुही दिन्ह वहु दुष सुष साजी ॥

तुही कीन्ह नर नारी सरूपा ।

तुही कीन्ह परजा कोइ भूपा ॥

तुही मआ मंद मोह उपावा ।

तुही काम औ क्रोध बनावा ॥

× × +

श्री गुरदेवजी की असतुती

नाउ मलूकदास गुर केरा ।

जीन्ह की सरन भए हम चेरा ॥

(ज) ग कर लोग करै सेवकाइ ।

देषत दरस पाप सभ जाइ ॥

दोहा

रामनाम लै लागि निशुदिन आठो जाम।
अखरो पढिआ जो रहे शभै पढावै राम ॥

अंत —

श्री चेतनदास चरित्र

चेतन भगत भए एक ग्यानी। महा परभु पद पाए न बानी ॥
कठवा इत तीन कर असथाना। देश वोडेशा के दोरशउवाना ॥
भागीरथी नदी वहै जहाँ। दछीन दीस तठ पूरव तहाँ ॥
चेतनीया प्रभुही तंह भैए। भए भगत मांह भगत एक भैए ॥
नुतन पद हरी को रस एएव। भगत वोडेशा दीडारणण ॥
जव तहँ भएउ वउध अवतारा। दरशन के धाएव संसारा ॥
वोडेशा मह जाए जो कोई। जर के देश नीवाहन होई ॥

चेतनामा प्रभु जो परमोधी नशोदेश।
लागै भगत करै शभै नीवहै लागै भेश ॥
गावही पद चेतन के लोगा।
करही भगत मानही सुष भोगा ॥
वोडेशा देश महत जो कोई।
शभै वैशनो भए सीष होई ॥
घर घर सुष मानही गुन गावही।
धरम पंथ से चीत न डोलावही ॥

+ + +

चेतन औ मीतवानंद ऐ नही गए न होइ।
और सो शभ जन धाए रहै जहा लगी सोइ ॥

—अपूर्ण

विषय—भक्तों का वर्णन किया गया है।

संख्या १०५ ग. पुहुपावती, रचयिता—दुखहरन (स्थान—गाधीपुर संभवतः गाजीपुर), कागज—देशी, पत्र—१७३, आकार—८¼ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४७५७, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी, रचनाकाल—सं० १७२६ = सन् १६६९ ई०, लिपिकाल—सं० १८६७ = सन् १८१० ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

॥ श्री रामजी सहाय ॥ श्री गनेसजी सहाय ॥ श्रीगोपाल जी सहाय ॥

श्री पोथी पुहुपावती ।

प्रथम ही सुमीरौ राम क नाउ ।

अलष रूप व्यापीक सब ठाउ ॥

घट घट माह रहा मीली सोइ ।

अस वोह जोतीन देषौ कोई ॥

ससी सूरज दीपक गनतारा ।

इन्ह की जोति जगत उजिआरा ।

गत जोती देषी पहिचानी ।

वह सो जोती जग रहै छपानी ॥

ना कोइ देषै न काहु देषावै ।

जा पर दआ करै सोइ पावै ॥

अस गोसाइ बड सीरजनिहारा ।

तस न कोउ दुसर बरीआरा ॥

जो कछु कीन्ह सो आपु ही कीन्हा ।

नीगुन आ सबही गुन दीन्हा ॥

॥ दोहा ॥

नीसु दीन वंदौ रामपद तुअ अनादी करतार ।

माली आदि तुही भवर फुलवारी संसार ॥

× × ×

तुही नीर से पिंड सवारा ।

तुही प्रान देह सभ औतारा ॥

तुही सकल जीवन उपराजी ।

तुही दिन्ह वहु दुष सुष साजी ॥

तुही कीन्ह नर नारी सरूपा ।

तुही कीन्ह परजा कोइ भूपा ॥

तुही मआ मंद मोह उपावा ।

तुही काम औ क्रोध बनावा ॥

× × +

श्री गुरदेवजी की असतुती

नाउ मलूकदास गुर केरा ।

जीन्ह की सरन भए हम चेरा ॥

(ज) ग कर लोग करै सेवकाइ ।

देषत दरस पाप सभ जाइ ॥

उपजै सन मनसा कै आवै।
सो तुरंत मनसा सो पावै॥
तिन्हके स्रवन सब्द उन्ह दीआ।
उपजा ग्यान विमल भा हीआ॥

इह संसार असार के जाना। राम नाम सुमिरन मन माहा॥
भए सीध हरी दरसन पावा। आवा गमन क सोच मेटावा॥
…सो साधु भए हरी भगता। करही भगती सो तारही जगता॥

जस कवीर जस गोरष जस नानीक जस व्यास।
तस कलीमल जग हरन के प्रगटे मलुका दास॥

जाकी मोटरी ठाकुर ढोवा। काटा करम 'सकल दुष खोवा॥
दरस देषाइ लीयो अपनाइ। आपु गए तन माह समाइ॥
नैनन्ह मह होइ हीअ मह आए। जैसे भीरंगी भीरंग बनाए॥
चीन्हा ब्रह्म कंवल कह सोधा। घरही बैठे जग परमोधा॥
मह्नु भयो तीन्ह कर सीष जाइ। नाम देइ सब आस पुजाई॥
घटही मह सो पंथ लषावा। आपु ही षोइ कै आपुही पावा॥
सो बुझा जो कहा न जाइ। सुझा सो जहा रहे समाइ॥
जुगुती मुकुती प्रापती भइ उपजा होए सो ग्यान।
ध्यान लगो भगवान सो पावो पद नीवान॥

श्री पातसाह की अस्तुती

दीली साह सराहौ काहा। नौरंगजेव पै रवी माहा॥
नो षंड मह फिरी दोहाइ। रवीहुते तेज तपै अधीकाई॥
सातो दीप के जो सुलताना। परग त्यागि सेवा तिन माना॥
औ जीत वडे भुप वरीआरा। नीसु दीन ठाढे कर ही वीचारा॥
नौषंड सात दीप मही माही। अरी वैरी कोउ रहा सो नाही॥
ऐसी अदल सरवत्र चलाइ। कोउ न काहु से करे वरीआई॥
औ जित देस के परजा दुषी। देइ देइ दान कीन्ह सब सुषी॥

गरबीही गरद मेरावे देइ भीषारी ही राज।
दानी ग्यानी सुरीवा साह गरीब नेवाज॥

जब कहो होइ चले असवारा। सेस कलमलै कटक के मारा॥
है पुर थारन्ह धुरी उड़ाइ। दिनही दुपहरही सुरज छपाइ॥
अगीनीत कटक असूझ अपारा। गनत न आवही तुरै तुषारा॥
हाथी उट की कौन चलावै। जो मागे सो मागे पावै॥
सहन भंडार न लेषे माही। दान देत नीती षागे नाही॥

धरम कथा नीके पहिचाना । निती उठी पढही कीताब पुराना ॥
सो वीधी सो वीधी ऐसनवाजा । एक छत्र चहु षंड वीराजा ॥

नौरंगजेब के पटतर और न दुजा कोइ ।
सीकंदर नौसेरवा सोउ न पटतर होइ ॥

कहै के उन्ह कीन्हा सुलतानी । इन्ह सो वंदगी नीसु दीन ठानी ॥
परगट करही राज सुष भोगु । गुपुत सो तपकर साधही जोगु ॥
लिषी कीताब पुनी वेची मंगावा । ताकर मोल दाम जो पावा ॥
ताकर लीन्ह मोल पुनी गाऊ । जव अनाज उपजे तेहि ठाऊ ॥
वाके रोटी साग से षाही । और स्वाद रस षाहै नाही ॥
भागी जरकसी औ बहुरंगा । वसन सेत सभ पहीरही अंगा ॥
चंद्रवदनी म्रीग लोचनी नारी । तीन्है तजी नाम जपही नीसुसारी ॥

एक मास रोजा रहही निति उठी करही नीमाज ।
गुप्त सो करही फकीरी परगट करही सो राज ॥

श्री गाधीपुर की अस्तुती

वसै गाधीपुर नगर सोहावा । घर घर कंचन घार वंधावा ॥
वसगीत नगर कही नही जाइ । जनु सुरपुर कवीलास सोहाइ ॥
गढ़ उतंग जस उच पहारा । नीरषत द्रीस्टी न जाइ नीहारा ॥
तेही के हेठ वहै तहा गंगा । निसु वासर तहा उठे तरंगा ॥
तहा जाइ जो करै असनाना । ताकर जन्म क पाप वीलाना ॥
नगर लोग भगत सभ ग्यानी । साधु औ पंडीत चतुर वीनानी ॥
मन वच क्रम करही हरी पूजा । चीत मह और न आनही दूजा ॥

\+ + +

चारी वरन हीदु तेही देसा । अपने घर घर सभै भरेसा ॥
वीप्र पढहि सास्तर औ वेदु । वीधाकर जानहि भल भेदु ॥
पुन्य धरम षटक्रम सो जाना । सुमीरही रामही पढही पुराना ॥
छत्री मह वीर वरी आरा । नीसुदीन गहे रहही हथिआरा ॥
वैस धनीक औ पर उपकारी । सत धरम तीन्ह वनीज पसारी ॥
सुद्र वरन सो सभ सुखवासी । ठाउ ठाउ सुर पुरा कलासी ॥

\+ + +

मुसलमान पुनी वसही सुजाना । सइअद सेष औ मोगल पठाना ॥
फाजील उलमा ग्यानी महा । तीन्ह के असतुती जाइ न कहा ॥

× × ×

दुषहरन काएथ तेही गाऊ । घाटम दास पिता कर नाऊ ॥
तीन्ह के वंस महीसुत जामा । जेही के मन मानो हरी नामा ॥
अलपवैस वीधीवुधी मोही दीन्हा । नुतन कथा प्रेम की कीन्हा ॥
तीनी मीत्र हम कह भा लाहा । जोरी मीताइ अंत नीवाहा ॥
'प्रेमराज' अती सुंदर कला । पढंत लीषंत नौ सील भला ॥
'बेचन राम' सभै गुन लोना । जैसे बारह बान क सोना ॥
'मुरलीधर' अती चतुर वीनानी । गाएन वली सुर सग्यानी ॥

एक समे हम चारिउ एक जाती एक वरन ।
प्रेमराज और बेचन मुरलीधर दुषहरन ॥

चारीउ मीत जस चारीउ भाइ । एक से एक भए अधिकाई ॥
चारीउ जुग जस चारीउ वेदा । जलरज पवन अगीनीकर भेदा ॥
जेहीआ वीधी जगमह औतारा । चारीउ कर एक लोद संवारा ॥
एक लोद से पुनी वेगरावा । तेही की चारीव देह बनावा ॥
एक अंस जीव तेही मह कीन्हा । तव औतार जगत मह कीन्हा ॥
जग अवतरी जब भए सआना । तन तन षोजत फीरही भुलाना ॥
एक दीन वीधी संजु मीली गैउ । आपुस मह एकै हम भैऊ ॥

मीले सोहाग कन सम मीले सोजल जल भाती ।
तन मन सभ एकै भए परी हीए मह सांती ॥

वै तीनो वोही भाती वषाना । दुषहरन हरी हाथ वीकाना ॥
एकै अछर गुरु पठावा । जेही से वेद भेद की छुपावा ॥
इह जग जस सपना कै लेषा । भोर भए फीरी कीछु नही देषा ॥

× × ×

दुषहरन एही जग मधे तीनी लाभ है सार ।
प्रथमही सुमीरन राम को पुनी सो दान उपकार ॥

एही जग अमर रहा नहीं कोइ । जेही का सभ अंबर जग सोइ ॥
अमर सुना भरथ औ गोपी । सोउ न देषा रहे अलोपी ॥
बहुतन्ह नाम रहे के काजा । वाग लगाइ इहारा साजा ॥

\+ + +

तेही से सब्द कहै अब लीन्हा । मकु रही जाइ जगत मह चीन्हा ॥

सब्द ब्रह्म सब्द अंब्रित सब्द ही रतै जो कोइ ।
नाम भाषी रस चाषी कै जग मह अमर सो होइ ॥

संमत सत्रह सै छवीसा । हुत सन सहस दुइ चालीसा ॥
कहेउ कथा तब जस मोही ग्याना । कोइ सुनी रोवा कोइ रह साना ॥
जेही जस बुझी तैस तेइ बुझा । जेही जस सुझी तैस तेइ सुझा ॥
वहुतन्ह के मन सर गुन आवो । बहुतन्ह नीगुन पटतर लावो ॥
वहुतन्ह सुनी के हीअ मह राषा । वहुतन्ह सुनी के दोप न भाषा ॥
मोही जस ग्यान रहा हीअ माही । कहेउ सभै कीछु छाड़ेउ नाहीं ॥
एक एक अछर षोजी वनावा । मुरषन दुष पंडीतन्ह सुष पावा ॥

गहौ चरन पंडीतन्ह कर वीनती करौ पुकार ।
ऐगुन सकल दुराइ कै अछर दीहो सवार ॥

यह जग नीसु आइ अधीआरी । जो जागै सो नर अधीकारी ॥
जागही वहुत भाती जग लोगा । जागही जोगी साध ही जोगा ॥
जागही राज करत कै राजा । जागत कथक वजावत वाजा ॥
जागही वीरही वीरही संतावै । जागही दुषीआ जो दुष पावै ॥
जगही तस कर चीत वसै चोरी । जागही चकई चकवा जोरी ॥
जागही जुआ षेलत जुआरी । जागही रसीक पुरुष औ नारी ॥
जागै कारन मै चीत जानी । हिअ उपजाइ प्रेम कहानी ॥

यह जग रैनी अधारी है जागौ कौन उपाइ ।
तव यह रचनी मन रची कहत सुनत नीसु जाइ ॥

॥ श्री आदी कथाषंड ॥

वसै राजपुर उतीम देसा । परजापती तहा आदी नरेसा ॥
महाराज सक वंधी राजा । अगीनीत सभ दल वादर साजा ॥
अतीही भंडारन लेषे माही । कटक गनती मह आवै नाही ॥
अलष वजा के असवारा । वरछी छाहे चले भुआरा ॥
तुरै असंषन्ह रह हित वेला । ठावहि वांधे षाहि महेला ॥
अगिनिति उट औ गज मतवारा । अगीनीति गांड भुमी विस्तारा ॥
भुप आप आएधु नही गहा । गहे केही पर कोउ अरी नही राहा ॥

नौ षंढ सातो दीप मह सो राजा परचंड ।
और जहा लगी राजा ताही देही सो डंड ॥

जो चाही सो सभ प्रभु दीन्हा । वीनु एक पुत्र नीपुत्री कीन्हा ॥

\+ × +

कहै बीचारी हीए गुनी ग्यानी । एही जगमह परतछ भवानी ।।
तीन्ह की सेवा जो चीत लावै । मन सा करै सो मन सा पावै ।।
अब मैं तीन्है सुमीरौ होइ दासा । परसन होइ तो पुरवहि आसा ।।

× × ×

एही डरह्ह हरी सुमीरन कीन्हा । प्रभु परसन होइ एही दीन्हा ।।
अब केही भातीन्ह जाइ जी आवा । इह मेरे पर पाप चढावा ।।
इह मन गुनी सीव सुमीरन कीन्हा । वेगी आइ सीव दरसन दीन्हा ।।
कहेन्ही मोही सुमीरौ का जानी । तव देवी तब कथा वषानी ।।

जीमी राजै सेवा कीवो औ जीमी सुमीरन कीन्ह ।
कहा सभै महदेव से औ जीमी प्रभु सुत दीन्ह ।।

इह सुनी सीव ससी अंत्रीत दीन्हा । आपु गवन कैलास हौ कीन्हा ।।
देवी अंमी नृपती मुष दीआ । मुष मह परतही राजा जीआ ।।
देषेसी जागी कै आवी कुमारी । चढी सीघ पर आदी कुमारी ।।
देषत षन नृीप पावन परा । देवी उठाइ कीन्ह पुनी षरा ।।
तव हंसी देवी कहा सुनु राजा । मम दरसन अघ तुअ सभ भाजा ।।
तै सेवा कीन्हे सुत लागी । देएउ पुत्र तोही वीधी से मागी ।।
करहु राज कै काज सवारी । अब जीअ मह जनि होहु दुषारी ।।

कही इह वचन भवानी तैसेइ गइ छपाइ ।
राजा रहा तवाइ कै जनु ठगुला दुषाइ ।।

+ + +

दसो चढो जब नव वीति गेउ । तब बेटा राजा घर भैउ ।।
अती सरुप सुठी सुन्दर बालक भयो अनूप ।
ससी से अधीक सरीर छबी, रवी से महा सरूप ।।

+ + +

सुनी कै पंढीत पत्रा देषा । गनी गुनी हीअ मह लगन विसेषा ।।
चीत्र नछत्र वार बुधवारा । मास कुआर सींभु औतारा ।।
पांचौ रवी न वए ससी रहा । माथे नक्षत्र परे सुख महा ।।

वुध की दसा जनम भयो नीसी वीती भा भोर ।
उदै कीन्ह रवी जगत मह कुल होइ गयो अजोर ।।

+ + +

आएउ सहस वरीस एक होई। नीप होइ वढा न जेही सर कोइ ॥
वीस वरीस पुजी जव आइ। जनम भुमी तजी पर पुर जाइ ॥
सुंदर नारी देषी अनुरागी। केती कौ दीन होइ ही वैरागी ॥
वहुरी वीआही तही होइ भोगी। जेही के कारन होइ वियोगी ॥

वहुरी चलै जव देस कह मध्य महारन होइ।
जीती मारी तेही आवै वैकुंठ गवनै सोइ ॥

इह सभ लीषी कै भाषी सुनावा। राजा सुनत वहुत सुष पावा ॥
पंडीत कह दछीना वहु दीन्हा। तव दीज गवन भवन कह कीन्हा ॥

× + ×

श्री कुअर वीदेस षंड

पीता क वचन कुअर जव सुना। उठी आयो कर मलि सिर धुना ॥
छठी छीन सुनी भइ गरानी। दहु लोचन भरी आयो पानी ॥
औ जस रन कर कादर कहा। से सुनी भाव सोच दुष महा ॥
होइ उदास भाषेसी मन माही। अव एही देस रहौ भल नाही ॥
फीरौ जाइ कै देस वीदेसा। देषौ को कहा आही नरेसा ॥
तस न सभै जिन देस न देषा। ताकर जीवन जन्म न लेषा ॥
इह मम गुनी मंदील मह जाइ। काहु कह नही बात जनाइ ॥

लीयो जो मनसा मन भइ अंवर द्रव छपाइ।
पौन जीत है पीठी चढ़ि चले निकस अकुलाइ ॥

आधी राती उदासी होइ। है वीनु संग न लीन्हेसी कोइ ॥
छाडेसी और बहुत है हाथी। छाडेसि और जहाँ लगी साथी ॥
छाडेसी मात पिता कै माआ। छाडेसी कुल कुटुव की दाआ ॥
छाडेसी राजपाठ अवराउ। छाडसी नगर देस भुइ गाँऊ ॥
छाडसी हीत मीत प्रान पीयारा। छाडेसी अग्र मलै घन सारा ॥
छाडेसी महल कोट सुखवासु। छाडेसि भोजन अमी गरासु ॥
छाडेसी मानिक मोती जरी। छाडेसी सभ जव पुनी धरी ॥

इह सभ छाडी गयो कुअर जो छाडे नहीं जात।
कोस सहस पहुचे उपर होइ गयो परभात ॥

होत भोर सभ केउ जागा। धंधा जगत करै सभ लागा ॥

+ + +

चला कुंअर तेही वन मह जाइ । जेही अधीआरे मगुन देषाई ॥
कुंअर जोती जस रवी मनीआरा । जहा जाइ तह वही उजिआरा ॥
आपनी जोती चलै मगु हेरी । संक न मानै काहु केरी ॥
एही वीधी चलत देवस दस गैउ । तब तेही बनतें बाहर भैउ ॥
वस्ती पाइ बहुत सुष माना । इह तम निसु जनु भयो विहाना ॥
देषत चला देस पर देसा । एक से एक सो बडे नरेसा ॥
गाउ भुमि जिन्ह के वरिआइ । ठौर ठौर सभ ठाउ सोहाइ ॥

नर नारी सभ सुंदरी उत्तीम सभ वेवहार ।
देषत ऐसन देस सभ गा तहा राजकुमार ॥

॥ श्री अनुप गढ़ षंड ॥

जहा अनुप गढ नगर अनुपा । अंवर सेनी तहा कै भूपा ॥
भांन समान तपै परतापा । सभ राजन्ह मीली वड़ स्थापा ॥
अतीही अपार राज तेही केरा । सनमुष ताही न कोई हेरा ॥
वसगीती नगर सगर उजिआरी । घर घर कंचन धाम अटारी ॥
चमकै गच जस मानीक मोती । जगमग होइ नषत की जोती ॥
सुरुजसेनी तहाँ परधाना । चंद्रकला मंत्री बड़ नाना ॥
अगुआ पौन सो अग्याकारी । मेघ महथ वरीसै घन वारी ॥

घर घर नारी अपछरा नरगन गंध्रप देव ।
वासुक डरै पताल मह इंद्र कर ही नीती सेव ॥

देषी उतंग धौरहर भौना । कुअर ग्राम दिसी कीन्ह गौना ॥
दीरघ ब्रीछ सदा फर फरे । सभ छतनार औ लह लह हरे ॥
हेठ पताल गइ तीन्ह मुला । लगे अकास सषा फर फुला ॥
पांती पांती लागे सभ मेवा । रछा करही सकल मुनि देवा ॥
सभ मीठे अंब्रीत रस पागे । पाके रहही सो डारन्ह लागे ॥
नृप चाहे तव छुरी मंगावे । ना तरु कोइ छुवै न पावै ॥

पंछी तहा क्रीडा कर ही जो भावै सो षाही ।
गीरा परा पंथीक कंह लेत कै बरजही नाही ॥

पुनि तेहि मह लाइ फुलवारी । जगमग होइ रही उजिआरी ॥
पीअर सेत स्याम रतनारा । फूले फूल करहि महकारा ॥
भांति भांति सब रंग विरंगा । देषत जीव मह होइ उमंगा ॥
तीन्ह की वास कही नही जाइ । जो सुंघै सो रहै लोभाइ ॥
तेहि सुवास कह गंध्रव धावही । पौन होइ कै वास न पावही ॥

भंवर भवहि फुलवारी माही। वास लेत को फुल के जाही॥
तेहि फुलवारी नीकट जो गैउ। लागी वास फुलेल सो भैउ॥

रहहि फुल सब फुले छवो रीतु वारही मास।
श्रौर जो फुल वसाहि सब तीन्ह फुलन की वास॥

वारी नीकट सरोवर देषा। सागर सम श्रवगाह वीसेषा॥
चहु दीसि कंचन पालि उठावा। पुनि चारि दीसि घाट वंधावा॥
तेही सरवर मह अंबुजि फूला। गुंजहि वहुतौ मधुकर भुला॥
सहस पापुरीक श्रंवुज होइ। छुवै न पावै ता कंह कोइ॥
श्रौ वहु जतु रहहि तेही माही। कीछु देषा कीछु देषा नाही॥
उलथहि मछ कछ सीर काढे। वगर धदुर वाहर ठाढे॥
श्रौ पंछी जल वासी दीठा। कोउ पौरव कोउ फुल पर बैठा॥

फुल रहे कोई कमल वास उठै महकार।
त्रीमल जल दरपन सम भीटा उचे पहार॥

पुनी चली देषी षेती फरी। श्रति सुंदर श्रौ लहलही॥
चलै रहट षेती सो सीचही। पगहा बाधि वसह मह षीचही॥
षेत षेत पर कुंश्रा इदारा। श्रपरुव विधि से रहे संवारा॥
सुंदरि नारि भरहि तहा पानी। ठुमुकत चलहि श्रधर वी'''नी॥
सभ सरुप जानहु श्रपछरा। मृग नैनी मुष ससी की करा॥
जेहि के गुन से पावे पानी। निगुनी ठाढ तवा हिश्र श्रानी॥
मागे गुन कोइ काहु न देइ। जेहि कर गुन सो भरी भरी लेई॥

एक जो भरी कै ले गइ एक भरे गही डोरी।
एक छुछि लेइ वहुरी एक चली घट फोरी॥

इह विलोकी सभ राज कुमारा। भीतर नगर कीयो पैसारा॥

+ + +

ताही महल मह वसुधा रानी। जाती पदुमीनी नारी वखानी॥
सषी वहुत संग चीत्रनी नारी। सभ सुंदरी उतीम सुकमारी॥
वसुधा सभन्ह महा पटरानी। सभ से सुंदरी पंडीत ग्यानी॥
तेही की सुता पुहुपावती वारी। चंद सुरज कर जस उजीश्रारी॥
चंद सुरज पुनि गहन गरासा। वह उजिश्रारी सदा परगासा॥
जस जस दीन दीन भइ सश्रानी। तस तस भइ श्रनुपम वानी॥
ससि सुरज से श्रधीक सरूपा। दिव्य सो सुरती मुरती श्रनुपा॥

पढी चतुरदस विद्या औ पुनी चारीउ वेद ।
अंग अंग सभ अद वुद रंग रंग मह भेद ॥

सोरह वरीस की जब वह भइ । तन मह आइ चढी तरुनइ ॥
मन मथ मन मह आइ समाना । वालापन कर पेल भुलाना ॥
नीमल वदन अरुन होए गैउ । चहै सोहाग सो कुंदन भेउ ॥
भृकुटी कुटील जनहु धनु ताना । सघन कटाछ सो वरुनी वाना ॥
नैन सुरंग प्रेम रंग राते । अती उतीम दीरघ मद माते ॥
अधरन अधीक अरुनता छाई । गोल कपोल लोल ललीताइ ॥
उर मह कौल कली देषरानी । रोमावली सूठी अधीक सोहानी ॥

भई सआनी पुहु पावती जोवन सभै संजोग ।
लाज सकुच जीव उपजी चाहे पीव संग भोग ॥

जवते भइ सआनी कुमारी । रहै सपी संग सदा अटारी ॥
नाह वीना कीछु लागु न नीका । अंम्रीत भोजन सो सम फीका ॥
चीत मह वीरह प्रेम अधीकाना । चाहै आपन कंत सुजाना ॥
जल नही रुचै पचै नही पानी । चोआ चंदन अनल समानी ॥
भूपन चीर हार उर चोली । वरै आगी लागी जनु होली ॥
गुप्त सकल दुष सहै सो नारी । प्रगट न होए लाज की मारी ॥
रहै संग नीत सपी सहेली । तीन्ह संग वहरावे हंसी पेली ॥

प्रेम वीज पुहुपावति ही, भेद न जानै कोइ ।
झाके षोली झरोषा तब कीछु सुष जीव होइ ॥

तेइ सो षोली झरोषा झाका । चंचल नैन प्रेम मद वांका ॥
हेरत द्रीस्टि कुअर पर आइ । वदन वीलोकत रही लोभाई ॥
परी प्रेम फंद हेरत भोरी । चंद देषी होइ रही चकोरी ॥
हीए ग्यान गुनी करै वीचारा । को अस जगत राम औतारा ॥
महा सरूप अनुप सोहाए । देषत जाहि गइउ वउराइ ॥
कै है इंद्र इहै जो सुना । कै है इहै कान्ह बहु गुना ॥

× + +

जैसेइ कुंअर भयो चषु वोटा । तैसइ लागी वीरह की चोटा ॥
गीरी अटारी पर मुरझाई । देषी सपी चहु दीसते धाइ ॥

× × ×

मालीनी फुल सो आनै आवै । पावै जैसन जैस बीछावै ॥

मनही अचंभीत चुप रहै देषेसि गुन दिन चारी ।
तव पुहुपावती से कहेसि रसना सकुची उघारी ॥

कहौ वात एक राज कुमारी । जौ जीअ मोर देहु वलीहारी ॥
पुहुप कहा कहु कौन सो वाता । कीछु न कहौ तोही आनी वीधाता ॥
पुहुप वचन सुनी दुती भाषा । सुनहु न कुंअरी वात अभी लाषा ॥
जेही सुरती पर मातीहु रानी । सो मुरती मै देवौ आनी ॥
राज कुंअर नाउ तेही केरा । मोरे भवन कीन्ह तीन्ह डेरा ॥
सुनी इह वात कुअरी दुष भरी । रोइ के दूतीक पग लेइ परी ॥

\+ + +

हम पुहुपावती की सषी लषी वात सभ आइ ।
कुअर देहु जौ वाचा तौ अव देही मीलाइ ॥
कुअर कहा जग मह सत वाचा । ब्रह्मा वीस्नु सीव की है वाचा ॥
वाचा देवता तेतीस कोटा । सत छाडे बाचै अघ मोटा ॥
करौ सत्त पुहुपावती केरी । चहौ काम जो राम ही हेरी ॥
जौ सत तजी आसन पुनी करई । जन्म सो नरक मह परई ॥

\+ + +

तव एक सखी गही पुहुप भुज चाहेसीउ मीलाइ ।
नैन चारी जब एक भा दुऔ गीरे मुरझाइ ॥

\+ + +

तव दूती एक रची उपाइ । कुअर पुहुप एक ठाव सुताइ ॥
अधर के उपर अधर ले राखा । दंपती मधुर सुधारस चाखा ॥
जागे दोउ उठे जनु सोइ । लाज न पुहुप रही मुख जोई ॥
तव सभ भागी सषी सहेली । पुहुपावती कह छांडी अकेली ॥

\+ + +

अहेर खंड

अंबर सेनी पुहुप को ताता । सभा माइ बोला एक बाता ॥
भयो चाव मसु भोजन केरा । चलहु सभै मीली करहु अहेरा ॥
जहा लगी कोइ नगर मह होइ । चलै साथ घर रहै न कोई ॥

\+ + +

कुअर सुनत असराज ढीढोरा । वेगी पलानो आपन घोरा ॥
कहेसी भयो मो कह वडी वारा । जाइ न पेलेउ कवहु सीकारा ॥

\+ + +

लागत सर सीघीनी तव भागी। कुंअर परा पाछे तेही लागी ॥

कोस तीस पर षोदी कै सीघीनी मारा जाइ।
आवत नगर अनूप गढ कुअर सो परा भुलाइ ॥

उतरी के सेतवाध के पारा। गै निकसा तेही वाग मझारा ॥
कुंअर ही देषत षन पहीचाना। तुरै चीन्ही अषी को रह साना ॥

तव सग्यान मना करी वैठु कंअर ढिग जाइ।
कुंअर देषी जोगीन्ह कह आस जीव मह आइ ॥

+ + +

कुंअर वचन सुनी जोगीन्ह कीन्ह सुरती सो बैन।
कहा होत पंडित करे सो देषौ नीज नैन ॥

+ + +

उठत ही धरा रहा जो राधा। पाचहु मीली कै कुंअर ही बांधा ॥
षदा सज्ञान है कुंअर षढ़ाई। बाधी कुंअर कटि से कटि लाई ॥
षला हाकि है भयो हुलासा। राती ही गा चली कोस पचासा ॥

+ + +

कासी नगर सुपवासी नृप चीत्रसेनी कर राज।
तही की सुता रूपवंती सव रूप ही कर काज ॥

+ + +

षढै हरदी जब कुंवर के अंगा। हरदी वीसी कर जानु भुअंगा ॥

+ + +

॥ पाती षंड ॥

॥ कवित्त ॥

वन भयो भवन गवन जव कीन्ही पीव तन लागो तवन मदन लाइ तापनी।
भूत भयो भूषन वो चुरी चुरइल भइ हार भयो नाहर करेजे छुटी कांपीनी ॥
दुष हरन पीव वीनु मरन की गती कासो मै वरनी कहो वीथा कहो आपनी ॥
फूल भयो सूल मूल कली भइ कांटा ऐसी राती रकसीनी भइ सेज भइ साथनी ॥

॥ कुंडलीआ ॥

तम जो पसीजै दुषहरन वीरह अनील के जोर।
रोम रोम रोवत सभै देषी देषी दुष मोर ॥

देषी देषी दुष मोर लोर तीन्ह नैन बहाइ ।
जीन्ह कर हीआ कठोर वजूकर पटतर लाइ ॥
पंषेरु गज वाज फीरही सभ रोवत वन वन ।
तलफहाउ कर गुद रोवै रोवा सभ के तन ॥

पीअ दरसन जल ओषा अरील अधर मुष चाह है ।
चात्रीक जेव वीनु स्वाती हीए तेव दाह है ॥
दहु कव पुजै आस पीआसी होइ रहौं ।
परीहा पीअही ते सुष होइ सो पीउ पीउ मैं करौं ॥

\+ + +

॥ दुतीषंड ॥

इह सुनी दूती पाती लेइ । पुहुपावती कहा धीरज देइ ॥
आइके भवन मुडाएसी केसा । होइ चली वैरागीनी भेषा ॥
हाथे कवरी माथे टीका । गरे मेली माला तुलसी का ॥
लीहेसी ग्यान गुर सब्द संभारी । मआ मोह सभ दीहेसी विडारी ॥
अती सुंदरी छवी वैस नवेली । चली उताएल आपु अकेली ॥

गावै नीगुन सरगुन भांती भांती सुर राग ।
वंसी वीन वजावै सुनि उपजै वैराग ॥

× + ×

॥ वैरागी खंड १४ ॥

इह सुनी चीत गुनी दुती कहा । प्रेम पंथ है साकर महा ॥
काम क्रोध मद लोभ नेवारहु । तौ एही पंथ माह पग डारहु ॥
चली एही मगु पग पाछे न फेरहु । सभ सुष सहीत न आगे रोवहु ॥
छाडहु अब सभ सुपरस भोगु । कीछु मती सुनहु कहै जौ लोगु ।
राज छाडी जौ होहु भीषारी । अव तव पावहु प्रान पीआरी ॥
तव की वार गएहु वीस भोरे । नही जानी केही वीधी केहीफेरे ॥
अब तहा जात महा दुष होइही । सो जाइही जो आपुही खोइही ॥

वन गीर सागर नांघत होइ वड़ा संताप ।
जहा पुतही पर हेलही महतारी औ वाप ॥

\+ + +

भेष वीना सीध होइ न काजु । लेहु सो भेष तजहु अब राजु ॥
कपट भेष एक वढइ कीन्हा । जेही नृप सुता व्याही कै दीन्हा ॥
जेही कारन जो भेष वनावै । इछा करै सो राम पुजावै ॥

॥ दोहा ॥

भेष पहीरी सभको उतरा गोरष दत्त कबीर ।
पुहुप के कारन दुषहरन पहीरौ भेष सरीर ॥

कुंवर कहा अब सुनहु न बाता । मै सुष तजी कै दुष मह राता ॥
तुम्ह गुर ग्यानी मैं लघु चेला । माश्रा मोह सकल पर हेला ॥

\+ + +

तीतषन वेगी चले उठी दोउ । और साथ लीन्हा नही कोउ ॥
तीनीउ दीसी तीनो गुन त्यागी । चौथी दीसी चौथे पग लागी ॥

\+ + +

॥ दानो पंड ॥

इह मन गुनी पीव आगे ठाढी भइ कर जोरी ।
दीन वचन लागी कहै मान गरव मन तोरी ॥

ऐ पीउ जीव के सुष देनी हारे । कसन बोलहु प्रान पीआरे ॥
काहे मौन रहेहु तुम्ह पीउ । कही कारन अस्थीर नही जीउ ॥

\+ + +

चीत तुम्हार जेही लागा मै तेही की वली जाऊ ।
जत्रनी ठाव सो पग धरै सीस धरौ तेही ठाउ ॥

कुंअर छोहाना वीनती सुनी कै । लागो उतर कहै सीर धुनीकै ॥
ऐ सुंदरी का वोलौ वाता । कही नही जाइ चरीत्र वीधाता ॥

\+ + +

चीत चंचल तव देषी कै कहै रंगीली नारी ।
ऐ पीउ भौरा जगत के मोही कत चले वीसारी ॥

मोरे तुम्ह वीनु और न कोई । तुम्हरी दश्रा होइ सो होइ ॥
देषहु मन मह बुझी वीचारी । जीव वीनु कीनी जीवन हेनी नारी ॥

जौनेह पात तरु परीत्यागे। केही की डार जाइ सो लागे ॥

\+ + +

लेइ चलहु अब अपने साथा। मोही अनाथ के करहु सनाथा ॥

करी हौ सेवा रैन दीन रही हौ तुम्हरे संग।
महादेव संग जैसे पारवती अरधंग ॥

\+ + +

तै तुम्ह हमरे संग चलहु कै वैरागीनी भेस।
मन सकुच जनि आनहु जात वीराने देस ॥

\+ + +

॥ छवो रीतु रुपवंती वीरह षंड ॥

इहा कुंवर भुला सुष पाइ। पुहुपावती राषो वेलमाइ ॥
रुपवंती जो पहीली वीआही। कंत वीना तेही वीरहै दाही ॥
जौ लह सो नही भयो संजोगा। पीव वीछुरे नही भयो वीयोगा ॥
जव तन मह आइ तरुनाइ। दीन दीन वीरह भयो अधीकाइ ॥
भुला हसी पेल रस भोगु। जनु जोवन उपना तनरोगु ॥
नारी कंत संग करही कलोला। देषी सो सुष हीअ उठै मलोला ॥

\+ + +

हुत पींजरा मह मैना पाली। तेही के वीरह भइ सो काली ॥
अस दुष ताकर देषी सो मैना। पुछै लागु प्रीत से मैना ॥
कहु धनी मोसे अपनी पीरा। केही कारन से दहै सरीरा ॥
देषौ कवहु न करत सींगारा। कौन परा अस तोही पभारा ॥
नैहर सासुर दुनौ राजा। तन औडेरेसी कौने काजा ॥

\+ + +

कहेसी कहा दुष पुछहु मैना। कासो कहो सुनै जो वैना ॥

\+ + +

कहेसी सुनहु मैना दुष पीरा। पीव वीनु दाहै वीरह सरीरा ॥
काही लागी मै करौ सींगारा। जौ घर नाही कंत पीआरा ॥
नैहर औ सासुर कर राजु। कंत वीना आवै केही काजु ॥
सभ सुष दुष है पीव वीनु मैना। पीव संग दुषौ होइ सुष मैना ॥

× × ×

हे धनी अब धीरज कै पीव कह कहहु संदेसा।
औ मोही देहु उडाइ कै हुढौगै परदेसा॥

× × ×

षोजत षोजत हारी मैना। उड़त उड़त थाको जब डैना॥
तव मै वैठीं तेही फुलवारी। पुहुप कुँअर जहा करत धमारी॥
सषी सहेली लीन्हौ जु रंगा। आपुस माह करही रस रंगा॥
कुसुम तोरी के गेद सवारी। गोइ आवारी करही पुनी मारी॥
एहीवीथी षेलत षेलत ससाला। गा तेही तरुवर राजकुमारा॥
जातही डीठी ताही पर परी। देषेसी जस वीरहानल जरी॥

अती उदास चीत चंचल नैन अरुन तन स्याम।
कुँअर देषी गती ताकर भुला सुष वीस्राम॥

+ + +

राजकुमार सुनत इह वैना। पहिचाना दै जैस मैना॥
कहैसी महीहौ सो वैरागी। नीसराहुत पुहुपावती लागी॥
तप वैराग लेइ वोर नीवाहा। पुहुपावती कह आइ वीआहा॥
लागा करै केली रस भोगु। वीसरा कुल कुटंव सब लोगु॥
आजु चाहतै आनी कै दीन्हा। रहा अचेत चेत अब कीन्हा॥
तात मात की कहु कुसलाई। कैसे अहही बाप औ माइ॥
औ कैसेहही परजा पौनी। कहौ सो वेगी मोही चतवनी॥

चलौ चेत के घर कह जहा पीता कर राज।
अब पल एक न अटकों करौ गवन कै साज॥

+ + +

चला कुँअर तव करी परनामा। संग लगाइ पुहुपावती रामा॥
राती रहै वसी जहा परथाना। भोर होत उठी कीन्ह पआना॥
वजे नीसान भेरी सहनाई। अगीनीती कटक चली संग धाई॥
चली संग सब सषी पीआरी। कुँअर साथ जीन्ह कीन्ह धमारी॥

+ + +

रोवही अधम अधीर जी रोवही मोह मआरी।
हसत चली संग चातुरी सुंदर प्रान पीआरी॥

+ + +

॥ उजेन षंड ॥

उतरी कटक जहा सर महा । तेही के नीकट नगर एक रहा ॥
देस उजैन वसै तहा नीका । रोठ गवार भुप कुल टीका ॥
तेही के नगर केर घसिहारा । घास काज गारहा सकारा ॥
तीन्ह सो देषी कुँअर दलसाजा । कहा जाइ जहा आपन राजा ॥
हेमराज राज के धनी । जेही की सैना जाइ न गनी ॥
कहत वात एक संका होइ । कहा चहौ किमि राषौ गोइ ॥
मै नही जानौ मंद की भला । तुम्ह चातुर बुझहु इह कला ॥

दषनि देस को राजा संग लीए दल साज ।
सरवर तट हही उतरन जानी केहाँ काज ॥

इह सुनी चक्रीत रोठ गवारा । पुनी कहुका देपे घसीआरा ॥

× × ×

तव वसीठ कह पठएसी कहौ अस जाइ ।
लेइ हासी (ल) भुइहारी मीलौ सो राजा आइ ॥

जाही तौ लुटी कटक सभ लेवौ । वीना लीए जाए नहीं देवौ ॥

× × ×

सुनी कै कुँअर अचंभौ माना । कै मन रोस वहुरी मुसुकाना ॥
कहेसी उतर अब सुनहु वसीठा । हम न देपु जो अस कोइ ढीठा ॥

× × ×

कहौ तुम्हारे राजा के को परधान देवान ।
को मंत्री को आगुआ जेइ दीन्हा इह ग्यान ॥

कहेसी सुनहु अब सभकरनाउ । जा सेवक राजा के गाऊ ॥
जव से पुरुष कहइ इह राजु । तवसे प्रीती लेही ऐही साजु ॥
नगर उजेन कआ कर जानहु । जीव कह रोठ गवार कै मानहु ॥
रज अप तेज समीर अकासा । सभ घट मह एह तनु नेवासा ॥
पाचहु की परक्रीत है पाचा । जेही के घट कह साचो साचा ॥
हाड मासु जस इत वो माटी । चाम चुनौती जनु गच साटी ॥
वार सघन घन वाग लगावो । पंधक नारी नदी वहावो ॥
लार पसीना झरना पुत्र ओ सोमीत ताल ।
महावली अपरुपी कामदेव कोतवाल ॥

भुष पीआस है भूत परेता। आलस नीद्रा अधीक अचेता ॥
इन्ह महा वड़ा करोध करोरी। उठै आगी चीतवै जेही वोरी ॥
वोलव चलव वीर वड चोरा। वल बौसाव वीदी कह जोरा ॥
अगम अगोचर अगह अपारा। इहवा एक पाएक वरीआरा ॥
माआ माइ मोह महतारा। लोभ लालची राजक सारा ॥
रइआत राग रारी से ठानै। दुष्ट दुएष काहु नहीं मानै ॥
कपट करम करता कर हाथा। चरन चपल है जाकर साथा ॥

स्रबन संदेसी सब्द को दरसन द्रीष्टि देवान।
नेत नासीका वास कह इद्री इद्र समान ॥

मुष है महल रसन दे रानी। सदा रहै वीषी अंम्रीत सानी ॥
ममीता मंत्री पाप परधना। वकसी वैर अगुआ अभीमाना ॥
निद्रा नटी कलपना काला। डंडीआडं मदरोह दलाला ॥
है पहरु पापंडी पापी। दल छल छैल सकल संतापी ॥
झुठा झगर नगर इह जानै। कादर जदड़ा दुषी दुष जानै ॥
दहत दारीद्र अहैरी आसा। मीत्र मंद अंधी आरी फासा ॥
दुरमती दारुन माल दरोगा। ए सभ चाहही आपन भोगा ॥

चोपदार हम चतुर है आए होइ वसीठ।
बात कहै साची समै लागै तीत की मीठ ॥

नरक नर दावा नर के साथा। आएधु वीद्या सभ के हाथा ॥
इह सभ हमरे भुप की सैना। जीन्ह से कवही कोउ जीतैना ॥
तुम्हरे अब को है परधाना। को वकसी को महथ देवाना ॥
को कोतवाल औ को है माला। को अगुआ को अहै दलाला ॥
जेहीकेवल तुम्ह जावहु वाची। हमसो बात कहौ सो साचो ॥
सो हम कहही भुप सो जाइ। तेकर का दहु उतर पाइ ॥
कै जौ देहु जो मागै राजा। काहे के होइ जुझी कै साजा ॥

जौ एही मग तुम्ह आए तौ एतनी कहौ बात।
नाही तो को तुम्ह आगन हासील मागन जात ॥

कुँअर कहा अब सुनहु न वैना। कहौ नाम जेतीक है सैना ॥
पाच प्रान है पान अपाना। औ उद्यान वो व्यान समाना ॥
सहज सुन्या सैन कह जानहु। राजा राम सो राजही मानहु ॥
ब्रह्म है बाप मुकुती है माता। चीत चैतन्या नेह से नाता ॥
मन मंत्री गुस्टी गुर ग्याना। वकसी बुधी पवन परधाना ॥

महिमा महंथ है दील देवाना । धरम धनुकधर धरे है ध्याना ॥
छरीआ छेमा सुरती सुषरासी । अगुआ अंस दीनता दारी ॥

हंस हसी सर समीता साहस है सीकदार ।
फौजदार सो फुरती है अजीत अचल असवार ॥

सत सषमना रानी सती । प्रान पीआरी पुहुपावती ॥
सां (? त) सुसील अभै वह दारा । पोत दार है पुराय पीआरा ॥
नीत नहीं है सुरज सूरा । चोषदार हही चंद हजुरा ॥
···त सुरतो की वीरती वीचारा । वली वीवेक है नाद नगारा ॥
सेवक साच है सकती सहेली । वीरज धजारी धज सकेली ॥
सरवस सीध सार संतोषा । कुसल की कोट नदी नीहमषा ॥
प्रन प्रजा है जाग्रीत जोधा । अमर आत्मा वाहन वोधा ॥

परमातमा पुरुषारथी जीलौदार है जोग ।
अहनीसी सदा अजोर है भाव भला पन भोग ॥

षरा पवास है दान दलाला । मान माल करता कोतवाला ॥
वड़ उमराव अहै अवकारा । उर मह रहै वोकील हमारा ॥
जोती जोती की पंडीत पावन । वेद वीनोदी सभा सोहावन ॥
भाग है भगत भरोसा भला । नीस्चे नेम नाम नीरमला ॥
दआ देवता सोभा साजन । अस्तुती अश्व ततु को ताजन ॥
मीनल महा उतगुन गजराजु । परचै पाए ससुक्रीत साजु ॥
पहर प्रेम न की बनी रासा । वीद्या वहल क्रितक वीलासा ॥
कहा ले कहौ कटक जीत सुर वीदेह अपार ।
अग्याकारी एक मत घरे रहही दरवार ॥

× × × ×

इह सभ रंग अहै तेही केरा । जो तुम्ह देषत कै सुष फेरा ॥
अब चीत मह कीछु करहु अंदेसा । वेगी दे चलहु राज पुर देसा ॥
जेतीक सषी सहेली रानी । तुम्ह सभ माह पाट पर धानी ॥
वै तुम्हार सभ आग्या कारी । वचन न मेटही कौनो नारी ॥
इह कही कुंअर न लावो वारा । चला वेगी है होइ असवारा ॥
औ पुनी कटक चली सव संगा । गाड़ी हाथी उट तुरंगा ॥
चढ़ी वीमान दुनौ लीय चली । और जहा लगी होते आली ॥
मैना आगे पठावा देस में कहे संदेस ।
गा होइ कुंअर भीपारी आयो होइ नरेस ॥

\+ \+ \+ \+

सक वंधी भा राज कुमारा। बड़े भगत औ बडे भुआरा॥
इह सुनी कै तब अधम उधारन। तेही की सत देषैं के कारन॥
वैरागी होइ कै करतारा। जाइ कैं ध्रम साल के वारा॥

+ + + +

पुहुपावती जो नारी तुम्हारी। जेही के कारन भयो है भीषारी॥
देहु सो आनी इहै अब आग्या। देषौं कस तोहार परतंगा॥

अचक रहा इह सुनी कैं लचक परी ही अमाइ।
पुनी मन ग्यान बीचारी कै हसी वोले नर नाइ॥

+ + + +

पुहुपावती जो प्रान पीआरी। तुम्ह कह आनि देहु सो नारी॥

+ + + +

पुहुपावती इह बात सुनी नौसत अभरन कीन।
राजकुमार पकरी कर लै वैरागी ही दीन॥

अंतर जामी मन की जानी। भए प्रगट'''सारग पानी॥

+ + + +

'''हा म्रीगावती जमुनी माना। कहा चित्रावली कुंअर सुजाना'''
'''डा मधुमालती कुंअर मनहर। जनमत भयो सभन घर सोहर॥
मरत न पायो काहुक षोजा। कहा गए दहु वीक्रम भोजा॥

दुष हरन ताते कहा पढी गुनी वेद गरंथ।
ध्रम करहु रामै भजहु तजहु पाप को पंथ॥

एती कथा पुहुपावती दुषहरनदास वीरंचीते संपुरन समप्त संमत १७६७ मीती अगहन वदी ७ वार सोमार के दीन समप्त हुआ जो देषा सो लीषा म्मदोष नन दीअते सजन जन से वीनती मोरी टुटल अछर लेवै जोरी। आगी दसषत लाला रामप्रसाद मीसर सीताराम के असथल गाजीपुर घर प'''का घाट महला नीआजी।११।

विषय—

योगानुकूल एक रूपक द्वारा आध्यात्मिक ज्ञान का वर्णन किया गया है। इसमें २६ खंड हैं जो निम्नलिखित प्रकार से हैं:—

१—मंगला चरण, महादेव, देवी और गणेश की स्तुति तथा गुरु, पातसाह और रचयिता का वर्णन पत्र १ से ८ तक।

२—आदि कथा षंड	पत्र ८ से १२ तक
३—कुंअर विदेस खंड	पत्र १२ से १६ तक
४—अनुपगढ़ खंड	पत्र १७ से २६ तक
५—शृंगार खंड	पत्र २६ से ३१ तक
६—मुरछा खंड	पत्र ३१ से ३८ तक
७—शृंगार कुअर के खंड	पत्र ३८ से ४६ तक
८—दरसन खंड	पत्र ४६ से ५५ तक
९—अहेर खंड	पत्र ५५ से ५९ तक
१०—विछोह खंड	पत्र ५९ से ६३ तक
११—रूपवती खंड	पत्र ६३ से ६७ तक
१२—विरह खंड पुहुपावती	पत्र ६७ से ६९ तक
१३—पाती खंड	पत्र ६९ से ७७ तक
१४—दूती खंड	पत्र ७७ से ८२ तक
१५—वैरागी खंड	पत्र ८३ से ८६ तक
१६—दानौ खंड	पत्र ८६ से ९६ तक
१७—सातौ दीप सातौ समुदर खंड	पत्र ९६ से १०२ तक
१८—सु अमर खंड	पत्र १०२ से ११६ तक
१९—चित्रसारी षंड	पत्र ११९ से १२६ तक
२०—सुखकर बारह मासा	पत्र १२६ से १२९ तक
२१—छओं ऋतु रूपवती वीरह खंड	पत्र १२९ से १३५ तक
२१—गौना खंड	पत्र १३५ से १४३ तक
२३—उज्जैन खंड	पत्र १४३ से १४८ तक
२४—युद्ध खंड	पत्र १४८ से १५४ तक
२५—रंगीली मिलन खंड	पत्र १५४ से १५८ तक
२६—त्रिकालमास खंड	पत्र १५८ से १६७ तक
२७—कथा संपूरण खंड	पत्र १६७ से पत्र संख्या ज्ञात नहीं होती

रूपक द्वारा जो कथा कही गई है उसका सार इस प्रकार है:—

राजपुर देश का राजा प्रजापति था। सात द्वीप नौ खंड में वह सब राजाओं का शिरमौर था। वैरी न रहने के कारण वह कोई अस्त्र नहीं रखता था। भगवती के वरदान से उसे राजकुमार नामक एक पुत्र प्राप्त हुआ था। ज्योतिषियों ने राजकुमार के विषय में भविष्यद्वाणी की कि वह बीस वर्ष की अवस्था में एक रूपवती स्त्री के प्रेम में पड़कर वैराग्य धारण करेगा तथा उसके साथ विवाह कर एवं मार्ग में एक राजा को जीतकर घर आएगा।

निदान बीस वर्ष की अवस्था होने पर एकदिन राजकुमार ने पिता से उन राजाओं को जीतने की आज्ञा चाही जिन्होंने उसके पिता के तपस्या करते समय राज्य का कुछ भाग छीन लिया था। पिता ने बालक समझ कर पुत्र को आज्ञा नहीं दी। इसपर राजकुमार असंतुष्ट होकर परदेश चला गया। मार्ग में उसे ऐसा भयानक और वियावान वन मिला जिसमें न तो कोई रास्ता था और न कोई पथिक ही चलता था। भूख प्यास भी सताने लगी। पास में धन था, परंतु अन्न नहीं था। इस स्थिति में राजकुमार को धन की तुच्छता का ज्ञान हुआ। जब भूख प्यास से प्राण बहुत अकुलाने लगा तो भगवद् कृपा से एक वनजारा मिला। उससे अन्न लेकर क्षुधा तृप्त की, पश्चात् आगे बढ़ा। उस वन में वह केवल अपनी ज्योति के द्वारा ही मार्ग देखता था; दूसरा कोई प्रकाश नहीं था। दस दिन तक इसी प्रकार चलते रहने पर वह अनूपगढ़ नामक एक नगर में आया। यहाँ के राजा का नाम अँबरसेनी और रानी का नाम वसुधा था। सूरजसेनी प्रधान एवं चंद्रकला आदि बड़े मंत्री थे। पवन अगुवा था और मेघ महंत। पाताल में वासुकी इस राजा के डर से डरता था। इंद्र नित्य सेवा करता था। राजा की पुत्री का नाम पुहुपावती था। एक दिन झरोखे से झांकते समय उसकी दृष्टि राजकुमार पर पड़ी। राजकुमार के सौंदर्य ने उसे मुग्ध कर लिया। किसी प्रकार मालिन को दूती बना कर वह राजकुमार से मिली। राजकुमार जो पहले से ही पुहपावती से प्रेम करता था उसे पाकर अत्यंत प्रसन्न हुआ। मिलने पर दोनों ने विधिवत् विवाह होने तक काम के वशीभूत न होने की प्रतिज्ञा की। इस प्रकार अपनी अपनी प्रतिज्ञा पालन करते हुए दोनों मिलते रहे।

एक दिन राजा अंबरसेनी आखेट करने के निमित्त चला। राजकुमार भी साथ में हो लिया। राजा राजकुमार का परिचय पाकर प्रसन्न हुआ। सिंहनी का शिकार करते समय राजकुमार बहुत दूर निकल गया और मार्ग भूल कर सिंहलद्वीप पहुँचा। वहाँ उसे उसका मामा सज्ञान मिला। सज्ञान राजकुमार को पकड़ कर राजपुर ले गया और उसका बिवाह काशीराज चित्रसेन की पुत्री रूपवंती से कर दिया। परंतु पुहुपावती से बिछोह हो जाने के कारण राजकुमार को इस विवाह से कोई प्रसन्नता नहीं हुई और वह उदासीन रहने लगा। उधर पुहुपावती को राजकुमार का वियोग असह्य हो उठा। उसने मालिन को दूती बनाकर राजकुमार को ढूँढ़ लाने के लिये भेजा। दूती राजपुर देश जाकर राजकुमार को वैराग्य भेष में अनूपगढ़ की ओर ले गई। मार्ग के धरमपुर देश में एक दानव राजकुमार को उठाकर ले गया। दूती वहीं छूट गई। दानव ने राजकुमार का विवाह सातसमुद्र पार बेगमपुर देश के राजा बेगमराइ की पुत्री रंगीली से कर दिया। राजकुमार इस विवाह से भी प्रसन्न नहीं हुआ। उसने किसी प्रकार दानव को शिक्षा देकर वैरागी बना दिया और वहाँ से अनूपगढ़ की ओर प्रस्थान किया। रंगीली की प्रार्थना पर राजकुमार ने उसे भी साथ ले लिया। मार्ग में सात समुद्र पड़े जिन्हें पार करते समय रंगीली और राजकुमार बिछुड़ गए। रंगीली एक द्वीप में पहुँची और वहाँ शिव पार्वती की आज्ञा से एक मंदिर में चतुर्भुज देवता की उपासना करने लगी। इससे उसे पति मिल जाने का वरदान शिवजी से

प्राप्त हुआ। राजकुमार चलते चलते फिर धरमपुर पहुँचा और वहाँ दूती से मिलकर अनूपगढ़ पहुँचा जहाँ पुहुपावती से उसका विवाह हो गया। पुहुपावती और राजकुमार आनंदपूर्वक रहने लगे। उधर राजपुर देश में राजकुमार की प्रथम स्त्री रूपवंती ने तरुणावस्था में पदार्पण किया। उसे पति का वियोग सताने लगा। उसने अपनी मैना को राजकुमार ढूँढ़ लाने के निमित्त भेजा। मैना राजकुमार को ढूँढ़ते ढूँढ़ते अनूपगढ़ पहुँची और राजकुमार को रूपवंती का संदेश दिया। राजकुमार को अपने देश की याद आई और वह पुहुपावती को लेकर घर की ओर चला। मार्ग में उज्जैन के राजा रोठ गँवार के साथ युद्ध हुआ जिस पर उसने विजय प्राप्त की। यहीं पर उसे मैना की सहायता से रंगीली (दूसरी स्त्री) भी प्राप्त हो गई। अतः राजकुमार विजय पताका उड़ाता हुआ मैना और दोनों स्त्रियों को साथ लेकर घर पहुँचा। माता पिता पुत्र को पाकर अत्यंत प्रसन्न हुए और शीघ्र ही उसको राजतिलक दे दिया। रूपवंती भी पति को पाकर प्रसन्न हुई। इस प्रकार राजकुमार आनंदपूर्वक राज काज करने लगा। अंत में अधम उधारन (भगवान्) ने राजकुमार की परीक्षा लेने के लिये उससे पुहुपावती माँगी। राजकुमार ने पुहुपावती को सहर्ष प्रदान कर दिया जिस पर अधम उधारन ने प्रसन्न होकर उसे वरदान दिया।

रचनाकाल

संमत सत्रह सै छवीसा। हुत सन सहस दुइ चालीसा ॥

संख्या १०६. साठिका, रचयिता—दुर्गादेवी, कागज—देशी, पत्र—२८, आकार—७½×४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७५९ वि०=१७०२ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री गनेशाये नमः ॥ अथर्घकांड लिष्यते श्री देवोवाच शुक्ल नाम संवत शरे शाठिका मंगल श्यामी शुल्कस्य गुण पार्थिः भाषितं कलयुग कै शमाचारः व्रतहिगे अन्यथा नाहि वर्षा वर्खंति अन्न शस्ते वाषर जागहिगें फाल्गुन पीड़ा होइगा होली लागैगा अजाधृत होइ रूइ अरिष्ट देखावै अकाले विपं मौलिहै पश्चिम देखव अरिष्टा मलेछ पानी पंथहि चाहिगें अतिस्वराजु होइहि मेषे गुरुप्रती न चराय होइहि प्रजा अरोग्य होइहि आनंद शलाह वर्ती है शभिशस्ता अगिले होइगो गोहूदाम १६ मोठ दाम १६ यवदाम १४ बीउ ५ तेज ३।

अंत—

दक्षिन पंडा बाजिहै महर्षं दिन ४५ ज्येष्ठ और पन्द्रह दिन अषाढ रही गु शोठी पीपरि कपरा इव शक्त शंग्रहव यत्न न चलि है माइ को राजा छीजि है महा विरोध होइ है षाड़ा बागैगा। पूर्वं उतर पीड़ा माश २ फाल्गुन चैत्र इति पक्ष यनाम के फला फाल्गुन

२० इति रुद्र विशी समाप्त शुभमस्तु इति शाठिका संपूर्णं सम्वत् १७५९ शर्मनाम ज्येष्ठ शुदि १४ भृगुवासरे ।

विषय—

संवत्सरों के नाम और उनके फलानुसार किस देश में किन किन वस्तुओं का क्या क्या भाव रहेगा आदि गंथ में वर्णित है ।

संख्या १०७ क. चतुरमासा तथा स्फुट पद, रचयिता—देवकीनंदन साहब (स्थान —चिटबड़ा गांव, रामशाला), कागज—देशी, पत्र—११, आकार—६$\frac{3}{4}$×५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८८६, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजाराम जी, मठ, चिटबड़ा गाँव, रामशाला, डा०—चिटबड़ा गाँव, जि०—बलिया

आदि—

॥ चतुरमाशा ॥

सषी री कान्ह वीदेसन आयो । गगन घटा घहरायो ॥ टेक ॥
चलत त्रिविधी समीर पावन वहत जमुना नीर ।
चहुं वोर ते घन दरपीत तरपत भइ छन दुती थीर ।
उडत है वक पंक्ति सुक पिक भंवर करत गुंजार ॥
चढयो मास आसाढ़ प्रभु विनु विरह तन दुष भार ॥ १ ॥
परत कुंद समुह दहु दिसी भरत भरना वारी ।
वन ग्वाल बाल वीहाल डोलत नीर नएन्ह ढारी ॥
सीपर चढी सीषी टेर लावत सुवत सब व्रजबाल ।
भइ अधिक अधीर शावन वसे वो उर नंदलाल ॥ २ ॥
नद नदी भए वो अथाह धारा मीलत जलनिधि जाई ।
पथ पथिक चलि नहीं सकत थाके वो रहे वो सदन बनाई ॥
घन की घन घहरात निसुदिन बढ़त बीरह सरीर ।
भादो भआवन भवन सषीरी हनत मनसीज तीर ॥ ३ ॥

अंत—

राग कल्यान

कछु विनए सुनीए प्रभु कान दे ।
जनमत मरत सहत दारुन दुष करम कठिन अभिमान दै ॥ टेक ॥
तापर काम वो क्रोध मोह मद हनत हृदय धनुवान दै ।
मारुत विषय प्रचंड संग मन चरन सरन नहीं जान दै ।

सुत तीश्र पीश्र धन धाम जानी नीज घटत देषी सठ प्रान दै ।
"देवकी" पतीत पतीत पावन प्रभु भक्ति अभय बरदान दै ॥ २ ॥

+ + +

॥ जोड़ा ॥

जवहि हरी गयो ब्रज छाडी इतो ।
तबही वीपरीत भयो सुष दुष डर वदत कीतो ॥ टेक ॥
चंदन चंद पवन जमुना जल दाहत अनल नीतो ।
सेज भुश्रंग श्रंग महू लागत परत न पलक भीतो ॥ १ ॥
वरषत बुंद झराझरी सावन वीत्यो अवधी भीतो ।
"देवकी" प्रान न रहत छनक घट भई सब श्रास रीतो ॥ २ ॥

श्री राम ॥ श्री राम ॥

विषय—

चतुर्मास, श्रीकृष्ण चरित तथा आध्यात्मिक आदि विषयों का वर्णन ।

संख्या १०७ ख. शब्द, रचयिता—श्री देवकी नंदन साहब (स्थान—चिटबड़ागाँव रामशाला), कागज—देशी, पत्र—७६, आकार—$६\frac{3}{4}$×$५\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—८३६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८८६ वि०, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजाराम जी, मठ, चिटबड़ागाँव, रामशाला, डा०—चिटबड़ागाँव, जि०—बलिया

आदि—

॥ शब्द बीज दशमी ॥ (? विजयदशमी)

वीज दशमी सोइ जन पाइ । जाकह सतगुर देहि लषाइ ।
सरद शरीर शुक्ल पछ ग्याना । त्रीकुटी चंद देषी सुषमाना ॥ १ ॥
नवोद्वार नवदीवश वीराजे । दश ऐ द्वार वीजै दीन छाजै ॥ २ ॥
नीलकंठ नीज दरशन होई । नवोवती गह गह अनहद शोइ ॥ ३ ॥
मनराजा पुलकित होये देषे । अकह अगह अन भो छबी लेषे ॥ ४ ॥
'जन देवकी' गुर भेद बतावा । आपु में आपु वीजै दीन पाश्रा ॥ ५ ॥

× × ×

राग बसंत

चलु सुरति सोहागीनी सुन्य धाम ।
जहाँ जोती अषंडित उठत नाम ॥ टेक ॥

यह गंग जमुन दोउ उलटी धार।
सब रोकी पवन जत तन पसार।
इमी होऐ स्वछंद करु वऐठी ध्यान।
तहाँ सब्द अनाहद परत कान ॥ १ ॥

पुनि उरध द्रिस्टी तकु पछीव वोर। वोह सोहं सुर उगाउ जोर।
जीमी हीम मुरती उर नीर प्यास। तेह लगत तरनी करन सेवो आस ॥२॥
तीमी हम हमार अवीकार भार। सोइ छुटत जीव भयो ब्रह्मकार ॥
'देवकी' तव सुध सरुप एक। रह्यो व्यापी सकल घट होये अनेक ॥३॥

अंत—

धरयो सरूप अधम हीत तुं हरी दीन दयाल।
पतीत अनेक गह्यौ सरनागती पालक प्रनत क्रीपाल ॥ टेक ॥
सबरी गीध अजामिल गनी कहि दीए वो धाम ततकाल।
वास वदन जपे वो जेह अवसर हरयौ दुसह उरशाल ॥ १ ॥
सीला परसी रज गइ धाम नीज त्यागी जगत जंजाल।
सुपच चमार कीरात तिन्हें तुम दीन्हे वो भगति रशाल ॥ २ ॥
तीन्ह ते नीच मीच तें व्याकुल आए वो सरन बेहाल।
'देवकी' पतित राषी अब लीजै दसरथ सुत महीपाल ॥ ३ ॥ १५१ ॥

इति श्री सब्द झुलना हीडौल वा चंचरीक कवीत्य आरील समाप्त संपूर्ण समत् १८८६ समै नाम कुआर मांसे कृष्णपक्षे सप्तम्यां रवीवासरे दसषत सुगंध राए भाट कै मोकाम षड़का गाँव कौसीके का ॥

विषय—निर्गुण तथा सगुण भक्ति का वर्णन।

टिप्पणी—प्रत्येक पद के अंत में 'देवकी' शब्द प्रयुक्त होने से तथा ग्रंथस्वामी के कथनानुसार ग्रंथकार का नाम 'देवकीनंदन साहब' माना गया है। ये चिटबड़ागाँव (जिला बलिया) के निवासी थे। गुलालसाहब के शिष्य हरलाल साहब के वंश में तेजधारी साहब के ये पुत्र थे। इनके पर पौत्र वर्तमान महंत राजाराम जी हैं। ये जाति के कौशिक क्षत्री थे। इनके कुछ 'शब्द' इसी ग्रंथ के साथ एक हस्तलेख में लिपिबद्ध सुरतिकृत 'प्रबोध चंद्रोदय' ग्रंथ के आगे भी दिए हैं जिनके अंत में एक 'चतुरमासा' है। इस 'चतुरमासा' के पश्चात् भिन्न स्याही में ग्रंथकार की मृत्यु की तिथि संवत् १९२३ दी हुई है जो संस्कृत के श्लोकों और हिंदी के दोहों में है :—

गुण[3] ससि[1] ग्रह[9] मेकं[1] सम्बतो सुप्रमाणं दिनकर दिन मद्धे श्रीवने शुक्ल नौम्यां।
सुनषत अनुराधे लग्न तूले सुष्यातः तनु तजि ब्रह्मलीनं देवकी नंदनोयं ॥१॥
राम[3] चंद्र[1] ग्रह[9] चंद्रे[1] नवम्यां श्रावणे सिते देवकीनंदने देहा रवौ ब्रह्माप्तवान ॥१॥

गत संवत उनवीस[19] सत अधि त्रयोदश[13] जान।
श्रावन सीत नौमी तिथी रवी वासर परमान ॥ १ ॥
बुध्यमान गुननिधि चतुर देवकीनंदन उदार।
तजि सरीर स्वतंत्र प्रभु भाए मिले करतार ॥ २ ॥
षोणडृश[19] शत तेरह[13] अधीक शंवत गत अस्थूल।
श्रावन शुक्ल सुपंड तीथि रवि दिन मंगल मूल ॥ १ ॥
सीया राम पद ध्यान करि गुर पद कमल सनेह।
देवकीनंदन सुगवन करि रामधाम तजि देह ॥ २ ॥
संवत जानहु धीर गुन[3] ससि[1] ग्रह[9] गन द्वीज (?)।
देवकी तजेत्र सरीर रवि नउमी श्रावन सुकुल ॥

संख्या १०७ ग. शब्द, रचयिता—देवकी नंदन साहब, स्थान—चिटबड़ा गाँव, रामशाला, कागज—देशी, पत्र—३१, आकार—६$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप)—२९९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपिकाल—सं० १८८६ वि०, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजा राम जी, ग्राम—चिट बड़ागाँव, रामसाला, डा०—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया

आदि—

श्री गनेशायेनमः

॥ राम शब्द ॥

दीजे कान्ह कहा अहै मेरो मोती माला।
हम तुम काली जमुन जल विहर वीह पल संग सकल ब्रीज बाला ॥ टेक ॥
नींद न परी भई जुग सम नीसी मोहन कीएवो कवन एह प्याला।
बार बार आतुर होए मागति बोलत नही कहो गोपाला ॥
तब उरमांह हंसी सील लागत मम तन भइ एह सोच विशाला।
"देवकी" स्यामा फेट गही कर दीन्हें वो हरि विहसि नंदलाला ॥ २ ॥
श्री रघुवीर चरन चीत लए हौं।

अकल अनीह सकल घटवासी रूप अलष दरसए हो ॥ टेक ॥
कामक्रोध मद लोभ मोह भट तीन को जोर मसए हो।
कठीन कुलाज त्यागी या जग को नाम अभय पद पए हो ॥ १ ॥
मन क्रम बचन बीचारी तासु कर हो विनु दास विकाए हो।
जन देव की गुरु देव क्रीपा तै अभी अंतर लव लए हो ॥ २ ॥

+ + +

अंत—

॥ रेषता ॥

व्यापक सम सकल जगमांही । षलकाषाली कहुँ नाही ।
असुर सुर नाग नर नारी । सँभु सनकादी मुनि भारी ॥ १ ॥
सुर ससी नषत नभचारी । वरुन जम इंद्र धनुधारी ।
कुप अरु नदी नद गंगा । समुंद मही जलद गज संगा ॥ २ ॥
गगनगिरि वाग वनवानी । अगीनी ब्रह्मंड पवन पानी ।
पलक छन पहर दीन राती । मांस पछ वरष जुग जाती ॥ ३ ॥
प्रान मन ईस हो तुमही । इंदी गन वीषए जुत जु मही ।
नीर्गुन नीरुपाधी अविनासी । सगुन सोहं रूप सुषरासी ॥ ४ ॥
षाली नहीं सकल घट डेरा । वेद बुध संत जन टेरा ।
"देवकी" अधम नीज जानी । राषी लेहु फंद भ्रम मानी ॥ ५ ॥

इती श्री सब्द झूलना रेषता आरती समाप्त संपूरन समत १८८६ समै माम जेष्ठ मासे शुक्ल पछे नवम्या सुब्रिह श्पति वाशरे दसषत सुगंध राए भाट के

विषय—

इसमें कृष्ण लीला तथा अध्यात्म संबंधी पदों का संग्रह है।

संख्या—१०७ घ. कुंडलिया, रचयिता—देवकीनंदन साहब (स्थान चिटबड़ा गांव, रामशाला), कागज-देशी, पत्र-७, आकार-६$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{1}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—६४, पूर्ण, रूप-प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल सं० १८८६ वि० के लगभग, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजाराम जी, ग्राम—चिटबड़ा गाँव, रामसाला, डा० चिटबड़ा गाँव, जि०-बलिया

आदि—

श्री गणेशाय नमः । कुंडलीआ ॥

राम नाम मन सुमीरीये त्यागी जक्त बकवादी ॥
त्यागी जक्त बकवादी हरीदम हृीदै लय लावै ॥
काम क्रोध मद लोभ ताही को जोर नशावै ॥
आदि अंत और मध्य सदा प्रभु को ठहरावे ॥
आतम राम सरूप आपु मे आपु लषावे ॥
देवकी अकल अनीत सोहं ब्रह्म स्वरूप अनादी ॥
राम नाम मन सुमीरीये त्यागी जक्त बकवादी ॥ १ ॥

अंत—

काल अहेरी जक्त वन नारी फंद ते घेरी।
नारी फंद ते घेरी स्वान उरमी ललकारत।
क्रोध अनल दव लाए चहुँ दासी आतुर जारत।
कठीन धनुष कर गहे ले प्रचंड समै सर।
मृग जीव नहीं लषत वपत गइ आइ सीस पर।
"देवकी" वीसरी सकल सुधी जव डारे गही डेरी।
काल अहेरी जक्त वन नारी फंद ते घेरी॥ १९॥
सीता पती पद कमल रज राषहु ह्रीदय बसाइ।
राषहु ह्रीदय बसाइ ताहा ते सुरती न टारो।
अंजन करी सुषमानी वेगी वोही द्रीष्टी उघारो।
पीआ कै पोजी विचारी रैनि दिन ध्यान लगाइ।
इंगला पिंगला सुषमना त्रिवेनी जाइ नहाइ।
"देवकी" त्रिकुटी अमीअ रस पीवत छकी न अघाइ।
सीता पती पद कमल रज राषहु ह्रीदय वसाई॥ २०॥
इति श्री कुंडलीआ संपूर्ण॥ समाप्त॥

विषय—

सांसारिक विषयों को त्याग कर तथा अपने शरीर के अंदर की कुवृत्तियों पर विजय प्राप्त कर रामनाम स्मरण करने का उपदेश किया गया है।

संख्या १०८ इंद्रजाल, रचयिता—देवदत्त, कागज—देशी, पत्र—३४, आकार—५ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—देवनागरी, प्राप्ति स्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

जंत्र तांवे के पात्र में लिखि के मसान में गाड़े तो शत्रु दिमाना होय हाथ नहीं आवता होय होऊषं लिखै।

अंत—

विधि

गोबर को भैसा कीजै दूध सोन्हवावै पाचऊ दआ के म्हठा में धरिजै शत्रु की घर की तरफ आको मोढ़ो करै पीछे ऊद लै जाय गोबर लै जाय ओऊद निकारि आके घर के तरफ फेंके भस्म होई। इति थाई इंद्रजाले मंत्र भेद संपूर्ण।

विषय—

नाना प्रकार के फल देने वाले जंत्र, मंत्रों का संकलन है।

संख्या १०६ वाणियाँ, रचयिता—देवलनाथ, इनकी वाणियाँ संख्या-५९ के विवरण पत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या ११०. पद, रचयिता—देवाराम बाबा (स्थान—करजा, आरा), कागज—आधुनिक, पत्र—५, आकार—११½×८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२४, (अनुष्टुप्)—१८०, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान— पं० साधुशरण तिवारी, स्थान—सिहाकुंड (सीताकुंड), डा०—हलदी, जिला—बलिया

आदि—

श्री गणेशायनमः

चरण कमल रज शीर पर मेरो मन वच ते हरी चेरो।
जब गजराज के ग्राह लयो है पछीली वैर नीवेरो॥
आरत होइ हरिनाम पुकारे बहुत कीयो जब फेरो॥ १॥
चक्र चक्र ते मारी दीयो है गजही के थल हीय वेरो।
ताके धाम दीयो प्रभु अपना जानत जन बहुतेरो॥ २॥
गाढ़ परे जब द्रौपद सुता पर तब तुम्हरे ओर हेरो।
चीर वढ़ाइ अमार लगायो राज सभा रहे घेरो॥ ३॥
बालापन ते भूली गयो है सुधी नारही हरिकेरो।
अबतो लगन राम से लागी मन माला हीया फेरो॥ ४॥
"देवाराम" जी की जानी आपनो करहु नाथ मति देरो।
भक्ति छाढ़ी अवर ना जची हो करहु सदा हीय डेरो॥ ५॥
अब मगन भइल मन मोर मुरली धुनी सुनी के।
तन तुंपक चीत चीलीगी धारो ज्ञान पलीता जोर॥ १॥
अनहद वाजा बहु बीधी वाजे को कही सकत अनोर।
जाके श्रवण बीच शब्द परतु है ताके प्रीती न थोर॥ ३॥
"देवाराम" हीआ अधीआर सतगुर कीन्ह अजोर॥ ४॥

× × ×

अंत—

राम बिना धृग जीवना जो सुमिरन नाही।
का ब्राह्मण का छत्रीया का वैश्य कहाही।
का वनीआ बहु रंग वने यन मे यगमामी॥ १॥

का कोइ सुष जान चढ़े चवर शीर ढारी।
हय दल रथ दल गजदल पयदल बहुता ही ॥ २ ॥
का राजा का रंक कोई का जाती सराही।
अंतकाल छार होहुगा कीट कुकुट पाही ॥ ३ ॥
'देवाराम' रघुनाथ भजो तेजु सुत वीत नारी।
स्वप्न तुल्य जानो सभ कोइ संग न जाही ॥ ४ ॥

विषय—

भक्ति संबंधी पदों का संग्रह।

संख्या १११. नारदनीति, रचयिता—देवीदास व्यास, कागज—देशी, पत्र—१४, आकार—११ × ७½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७०० वि०, लिपिकाल—४ चैत कृष्ण, १८६८ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसिपल म्यूजियम, प्रयाग

आदि—

श्री गणेशायनमः

॥ अथ नीतिशास्त्र लिष्यते ॥

दूहा

विघ्न राज पद युग बिमल नमौं चितय धरि चित्त।
करूं नीत भाषा अर्थं नारद कहें कवित्त ॥ १ ॥

× × ×

महाराज करणेस सुत अनग धनूआधार।
हुकम कीयौ टीका रची भाषा व्यास विचार ॥

संमत सतरह सै समैं वीसै करण विवेक रसिक राज कारण रची टीका अर्थं अनेक ॥

मध्य—

फेर पूछौं राजा पुरवासी लोक एक मतैं होई तासौं विरुद्धतौ नाहीं होई है ॥ अरु चर लोक विरुद्ध तौ नहीं है ॥ किसउ वास तैं विरोध करै वैरीयौ कैं वैरीयां के रुजगार सौं विके गए होइ ॥ वैरीयौं कौ रोजगार ले तद विरोध करैं हियै में सचेत न होइ ॥ तस्मात् राजा या वात की सावधानी राषौ हौ कि नांहीं ॥ फेर पूछौं राजा वैरी दुर्बल निबलौ पड्यौ अपने बल करि दबायौ कि नांहीं ॥ बलवंत वैरी अपनै बलकरि या मंत्र बलकरि अपने वश्य करीयै ॥

अंत—

इति श्री महाराज कुंमार अनूपसिंह जी करिता भाषा व्यास देवीदास कृत सभापर्णिक च्चिदध्याय टीका ॥ संवत् १८६८ वृषे शाके १७३३ मिती चैत्र मासे कृष्ण पक्षे तिथौ ४ चंद्र वासरे लिखतम् प्रोहित जगराम ज्ञात सनावठ बासबीं कोल्यांको को कोटा नगर मध्ये लखा पीतं गुसाईं जी श्री श्री १०८ श्री दयागिर जी ॥ श्रीरस्तु ॥

विषय—

'नारद नीति' महाभारत के सभापर्व के एक अध्याय का रूपांतर है। राजसूय यज्ञ के अवसर पर नारद ऋषि ने युधिष्ठिर महाराज को राजा के धर्म, कर्तव्य और नीति का जो उपदेश दिया था उसी का इसमें वर्णन है।

संख्या ११२. अंगदवीर (सत्तर रेखता), रचयिता—देवीदास (संभवतः), कागज—देशी, पत्र—२२, आकार—७¾ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६४, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिश्रित, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत सेठ शिवप्रसाद जी साहु गोलवारा, मोहल्ला, सदावर्ती आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्री गनेस जी सहए। श्री अंगद वीर सत्तर रेषता॥
अंगद वीर सो राम जी ने कहा लंक जइऐं।
रावन को सपुन सख्त नरम कही सुनइऐं।
दन हौ जानते हौ बहुतक सीषइऐं।
एतन हमारे काम को मेहनत कर अइऐं।
ले अइऐ सीतव पवर इसन से के वीच॥
श्री बचन सुन सो स...फत हुआ हीआ।
अंगद जाना राम ने मुझपर करम कीया।
सभ पदीमो के बीच मो मुझसे रफ दीआ।
तस्लीम करी सीतव सो लंक कोर हलीआ॥
दील मो नमी कछु पौफ पवर इसन से के बीच॥
तीफलो के साथ बजी जो रावनक एक पीसर।
आपुस मेन दोचर हुइ दोनों की नजर॥
दोनों महावली वो जवानी मो सरषसर।
बातों में गुफत गो हुइ आपुस में एक दीगर।
तीसने उठाअ पाय उपर इसनसे के बीच।
अंगद ने पाय पकर फीराया सीस पर॥

अंत—

रावन सो देषी आपु उठ एह पुकार भी।
मेरा कदम गहे नहीं तेरा उपर भी।
श्रीराम जी क पाय पकर तीसे उवभी।
बैठ षजील तष्त उपर इसन से के बीच ॥
रोने कसी कस्त रूप जो रावन कतद हुआ।
जय महनीम रोजक अवल रद हुआ।
अंगद ने फीरी तीससे कही पदवष्त केय हुआ।
वे राम जी के वंदगी चहै अदद हुआ।
तुसे न बेहआ है दीगर इसन से के बीच ॥
अंगद ने सष्त नरम बचन तुसे बहुत कहा।
मन नहीं षवीस सषपत मो वझी रहा।
अगद चलत है जहा पोद पद पुसमह।
लसकर मो आए कैसो कदम राम की गह।
जीसको भी सेवते हैं अमर इसन से के बीच ॥
'ए देवीदास' ह रफ करो आवत मम तुम ॥

× × ×

विषय—

रावण की सभा में अंगद की वीरता का वर्णन किया गया है।

संख्या ११३. नागलीला, रचयिता—द्विजप्रयोग (संभवतः), कागज—देशी, पत्र—१०, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२२, पूर्ण, रूप—सुन्दर, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी

आदि—

श्री गणेशायनमः। अथ नागलीला लिख्यते ॥ छंद लावनी ॥

सात बरस का हुआ कन्हैया षेलै गोदी वालो में
पाग केसरी मोर परवौआ मोती झलकै कानो में ॥ १ ॥
वाकी भौंह पर हुआ है आसिक जुलफ देत झाई छिन में
स्याम वदनपर षोर विराजै चन्द छिपे मानो बादल में ॥ २ ॥
कमल नेन नासिका वेसर धरे वासुरी अधरों में
गले विच मोतिन्ह के माल हीरा लाल लगे जिसमें ॥ ३ ॥
भुज बीच जोसन के जोड़ा वन माला सोहै उर में
कड़ा बीच हाथों के सोहै सुभग लगे हीरा जिसमें ॥ ४ ॥

पाव पैजनि कसे काछनी पीत वसन भावे मन में
लटक चाल झोके से चलता थिरिक-थिरिक नाचे बृज में ॥५॥
एक समै खेलन को निकला ग्वाल वाल लिन्हें संग में
गया तिर जमुना के मोहन गुलफुल्ला देखा वन में ॥ ६ ॥

अंत—

हलधर हाथ गहे प्रभु के ढिग,
वाम भाग नागिन सोहै।
वीच कान्ह काली के ऊपर,
नटवर भेष धरे विहसै।
अद्भूत रूप देषि बृज वासी,
मन मोहन महिमा वरनै।
चढे विमान देव गुन गावै,
अरि गजन कहि नाम धारे ॥ ५१ ॥

द्विज प्रयोग प्रभु को यह लिला छन्द लावनी गान करै मध्वुर मूर्ति नटवर गिरधारी।

विषय—कृष्ण की नागलीला का वर्णन।

टिप्पणी—रचयिता का नाम 'द्विज प्रयोग' माना गया है। परंतु हो सकता है, यह 'द्विज प्रयाग' हो। 'द्विज प्रयोग' कुछ बेढंगा सा लगता है। 'प्रयाग' नाम होते ही हैं। लिपिकार के हस्तदोष से 'प्रयाग' का 'प्रयोग' हो गया जान पड़ता है।

संख्या ११४ क. धरनीदास जू को संकट मोचन, रचयिता—धरनीदास, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३८ और १८४० के भीतर, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी। दाता—महंत श्री राजाराम जी, स्थान और डा०—चिटबड़ा गाँव, जिला—बलिया

आदि—

धरनीदास जू कै संकटमोचना ॥

संकट मोचना हरीनाम। सब संत जन वीस्राम ॥
जे मनु समीरु करता राम। जाके अचल पदत्रीवान ॥
भरी पूर लोक लोक। जामें हर्ष व्यापै न सोक ॥
जहा भौन भुसाकर। तहा कनक भरत न दर ॥
जहाँ भग्न कह संदेह। तहां आपु धरीआ देह ॥
केती चौगुनी चलि जाहिं। सतसंग बीनु सतनाहिं ॥

सतसंग औ चीत चेत। भग्ततावली कहि देत॥
प्रहलाद संकट पाव। नही लगी ताती वाव॥

अंत—

पीता परम रंको वंक। राम प्रताप भए नीह संक॥
अल्ह जमाल जंगी जानी। जीन्ह के संग सारंग पानी॥
नरसीघ षास कालु कीर। एतौ महामती के धीर॥
नीर्मल नामदेव कबीर। हींदु तुरुक के गुरु पीर॥
नानीक चत्रु भुज की बनी। जीन्ह अपनाइ लीन्हो धनी॥
नीमानंद निजु कै गही। जैसी रही तैसी कही॥
नेपा नैन गोवर्धनु। सोवत जागते तन मनु॥
वलक की पातसाही डारी। प्रभु को मिलो हांकि प्रचारी॥
ग्यानी गोवींदा मुरारि। प्रभु को मिले तनमन मवारि॥
बचन मुर्तजा वाजीद। जिनके काया में महजीद॥

(मसजिद ?)

दादु बूढना कमाल। ऐतौ भए निपट निहाल।
तुलसी सूर नाभा भगत। जिन्ह के सुजस वाढौ जग्त॥
कान्हा कुंवरा हरी वंस। इन्ह मो बड़ो हरी को अंस॥
मीरा पदुमा कर्मा सीता। तिन्ह हरि भक्ति से भव जीता॥
देव इंदुनाथ अतीत। जीन्ह के राम नाम प्रतीत॥
स्यामा वीस्न माधव चार्ज। कीन्हो धना जीव को कार्ज॥
परमानंद माधवदास। उन्ह की भली पुजी आस॥
पोजी टीके टीकमदास। चहुँदीसी फइली रही सुबास॥
अनंता नंद उपजो अग्र। जीन्ह को वनो काज समग्र॥
डर "वनोदा नंद"। जीन्ह की दश्रा सब॥

\+ + + +

अपूर्ण

विषय—प्राचीन तथा अर्वाचीन भक्तों का गुणगान किया गया है।

संख्या ११४ ख. महराई गोसाई धरनीदास, रचयिता—गोसाई धरनीदास जी, कागज—देशी, पत्र-२, आकार ८×२$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)–१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पंडित राधावल्लभजी, स्थान और डा०—रेवती, जि०-बलिया

आदि—

महराई गोसाइ धरनिदास ॥

शुमीरी शुमीरी मन स्रीजनहार । जीन्ह कैला सुरनर सकल पसार ॥
रवि ससी अग्नी पवन कैला पानी । पानी पानी जीआ जंत अनीवनी बानी ॥
धरति समुद्र वन पर्वत सुमेरू । कमठ फनिंद्र इंद्र बैकूंठ कूबेरू ॥
गुर कै चरन रज सीरहि चहाए । जीन्ह लीन्ह भव जल बूडत बचाए ॥
देवता पितर प्रनवो कर जोरी । सेवा लेव मानी अलप बुद्धि मोरी ॥
जाहा लेह जगत भक्त अवतार । वकसी वकसी लेव गुनाह हमार ॥
तीरथ वरत चारी धाम सालीगराम । हाथे माथे परशी करैलो प्रनाम ॥

वीसराम

एकदिन मन मोर चहल पहार ।
गाइ के गोहडी देषो बहत पसार ।
अगीनीत गाइ भाइ गनी न सीराई ।
दहू दीस गोधन रहल छीती छाइ ॥
आकरी वीकरी केत वोसरी दोहान ।
बहिला गाभीनी कत बहत बीआन ।
कत सीगहारी कत सारील अतोह ।
मन भरी भरी दूध गाइके संदोह ॥

बाछी आछी आछा देषो वाछारे बछेल । लेरआ वछरआ मगन मन पेल ॥
लाली गौली धवरी पीअरी कत कारी । सवरी कैइली कत कवरी टिकारी ॥
कत सीगहारी देषो कतरे भूंडेरी । गोरूआ चरत भैया नीपट नीवेरी ॥
तरधैला धरती जे उपर अकास । महरा रचल एक गाइ कै गोआस ॥

वीस्राम

ताहा उपजली घास लहलहि छहरी सीतल पनीवास ।
महरा न देषो वोहि ठहरा मन मोर भैल उदास ॥

पावदुनो पौआ परम झलकार । ढूरूं ढुरसामत न लावल हंकार ॥
लंवहरी कछीआ पतरी करीहाव । पीअरी पीछौरी कटी वरनीन आव ॥
चंदन की षोरीन्ह भरल आठो आंग । धारा अन गनीत बहत जस गांग ॥
माथे मनी मकुट लकुट मुठी लाल । झीनवा तीलक सोभै तुलसी क माल ॥
नीकी नाक पतरी ललनी वडि आषी । मटूक मझार एक मोखक पाषि ॥

प्रफूलीत वदन त मधुर मुसुकात। ऐही छवी उपर धरनी वलिजात ॥
मन कैला डंडवत भूआ धरी सीस। हाथे माथे देपि प्रभु देलहि असीस ॥

वीस्राम

महरा हाथ वीकइ लहि मनूआ भए महरा के दास।
दूसर दूष मेटइ लहि साधु संघति सुषवास ॥
महरा कै डींगर कहेला परचारी।
देषहू चतुर नर हृदैय वीचारी ॥
इहो जनि जानहू केहू मसलक बात।
बूझला परीहिय नीसी अरअतात ॥
जब लगी न देषो धो लोग हंडी चरवाह।
जनु मनु परी गैला जल अवगाह ॥

सोची सोची मनूआ रहल मूरुझाइ। ऐहि अवसर कान्ह मुरली वजाइ।
मुरली की धुनी सुनी मन भैला षूसीहाल। रहली भीछूक जनु भैलो भुअपाल ॥
धुनी सुनी मनुआ उपर चली गेल। तहवा देषल एक अदबूद षेल।
बीना रवी ससी ताहा होला उजियार। रीमी झिमी मोतीआ वरीसु जलधार ॥
गरजैला सुघन घन सुनत सोहाए। दहू दीस वीजुरी चमकी चली जाइ ॥
झरी झरी परत सुरंग रंग फूल। फूले फूले देषै लो भवर एक भूल ॥
चक्र एक फीरत उडत एक सांप। ताहा नही करम धरम पुन्य न पाप ॥

वीस्राम

तापर ढाढ देषीले एक महरा अभरन वरनी न जाए।
मन अनुमान करत हो शुरत सो पति आइ।
पुन कै बदल भैआ दे बहुत षून।
पून कै दीहल से हो पाप न पून ॥
महरा का गौअन्ह करहू जनी पुन।
महरा करीही पुनी ताहु सकचून ॥
महरा का गोअन्ही जे करीहि प्रतीपाल।
महरा करीही पुनि ताहु के नीहाल ॥
छोटि मुटि जीआ जंतु महरा कै गाइ।
जनी कैउ मारै भैया जनी केउ षाइ ॥
जैसन अपन जीव तैसन पराइ।
हाड चाम मासु नहि मानूष अहार ॥
हृदया धरी अधरी सुमीरो लेहु राम।
काहे धन षोअहु तेजहु काहा धाम।

साँच कहै साधुजन झूठ कहै चोर।
दातन्ही के सुष जनी करहु पटोर ॥
साच बचन मन धरी लेहु पूनी झूठ देहु फटकी पछोर।
ऐसन समझा पुनी नही पाइब अबरीक जनी करू भोर ॥
करुआ जो लागेला कहल कछू मोर।
करी न सकहु जीअ अपन अटोर ॥
अकसर जल न दोसर नहि केउ।
दीन चारी भैआ करी करी लेउ ॥
पानी को बुल बुला उपजु वीनसाइ।
देह धरी धरी पुनी मरी मरी जाइ ॥
छोहनी अठारह जे छपन करोर।
केउ न ले गैला संग सहन बटोर ॥
सौन रूप अथर पथर हथीआर।
केउ न ले गैला संग सुइआ मेकदार ॥
गढ मढ महल बहलै है हाथी।
इह उतनाही केउ संग लै साथी।
जेउ नीज जानी ले कुल पलीवार।
इह उतनाही केउ संग जैनीहार ॥
भुइ मरकर मुठि अटकल भटकी रहल संवसार।
जीन्ह जीन्ह साधु संघती धरी सो भैए भव जलपार ॥
महरा कै महरैआ 'भैया' धरनी वरनी नहि जाइ।
कहत सुनत सुष उपजै भाव भगती अधीकाइ ॥

महराइधर

--संपूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

योगसाधानुकूल एक आध्यात्मिक रूपक का वर्णन किया गया है जो इस प्रकार है :—

"एक दिन मेरा मन पहाड़ (त्रिकुटी) पर चढ़ा। उसने वहाँ नाना प्रकार के गौओं (चित्तवृत्तियों) के समूह को विचरते देखा। उस समूह में अगणित गायें थीं जिनसे दसों दिशाएँ आच्छादित थीं। इन गायों में कितनी ही बहिला, कितनी ही गाभिन और कितनी ही ब्याई हुई थीं। कुछ तो सींगवाली और कुछ बिना सींगवाली थीं। इनमें छोटे बड़े तथा मध्यावस्था को बछियाँ और बछड़े थे। इनके लाली, गौली, धवरी, पीली आदि अनेक रंग थे।

'महरा (गोपालक, यहाँ भगवान) ने नीचे धरती और ऊपर आकाश दोनों को ही गायों के विचरने का स्थान बनाया (योग में त्रिकुटी से नीचे शरीर के भाग को धरती माना गया है और ऊपर के भाग को आकाश। तात्पर्य यह कि भगवान ने समस्त शरीर को इंद्रियों का या चित्त वृत्तियों का निवास स्थान बनाया है। आकाश में गायें नहीं चर सकतीं, परंतु यहाँ शरीर के भीतर के आकाश से, जो योगानुसार है, तात्पर्य है) वहाँ (त्रिकुटी) पर उत्तम घास लहलहा रही है तथा वहाँ शीतल जलाशय भी है (त्रिकुटी में अमृत झरने की बात कही जाती है। योगानुसार जब यहाँ तक की क्रिया हो जाती है तो एक अलौकिक सुखानुभव होता है और भूख प्यास दोनों की तृप्ति हो जाती है। 'घास' और 'सीतल पनिवास' से यही संकेत किया गया है); मन ने यह सब देखकर जब महरा को नहीं देखा तो बड़ा उदास हुआ ; परंतु थोड़ी ही देर पश्चात् दो पावों के नूपुरों की बजने की आवाज (अनाहद शब्द जो यहाँ से सुनाई देता है) आई। एक साकार रूप भी दृष्टिगोचर होने लगा जिसकी पतली कटि थी और जो लंबी काछनी (धोती) कसे हुए था तथा ऊपर से पीला दुपट्टा ओढ़े हुए था। उसकी कटि का वर्णन नहीं हो सकता (इस स्थान पर गोलोक की स्थिति मानी जाती है जहाँ श्री कृष्ण भगवान का नित्य निवास है। ऊपर किया गया वर्णन श्रीकृष्ण का ही है)। सारा अंग चंदन की खौर से पुता हुआ था जो अनंत गंगा की धाराओं की शोभा को धारण करता था। मस्तक पर मुकुट और हाथ में सुंदर लाल लकुटी थी। भाल में सूक्ष्म तिलक तथा गले में तुलसी की माला सुशोभित थी। सुन्दर नासिका, पतले होंठ और बड़ी बड़ी आँखें थीं। मुकुट के बीच में मोर का पंख लगा था। प्रफुल्लित मुख पर मुसकान विराजमान थी। फिर क्या था, उस शोभा के ऊपर 'धरनी' (रचयिता) ने अपने को निछावर कर दिया। मन ने भूमि में शिर रखकर उस मूर्ति को प्रणाम किया। प्रभु ने मस्तक के ऊपर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया'।

इसके पश्चात् रचयिता कुछ उपदेश करके कहता है कि यह कोई कहानी मात्र (मसलक बात) नहीं है। जब तक चरवाहा (गोपालक भगवान) को इस मन ने नहीं देख लिया तब तक वह अगाध (अवगाह) जल में (भवसागर में) तैर रहा था। ऐसे अवसर पर जब कान्हा ने वंशी बजाई तो मन अत्यंत आनंदित हुआ। मानों एक भिक्षुक को राज्य प्राप्त हो गया हो। ध्वनि को सुनकर मन ऊपर (सहस्त्रदल कमल की ओर) चला गया। वहाँ तो उसे एक अद्भुत ही खेल देखने को मिला। वहाँ बिना सूर्य चंद्र के भी प्रकाश था। रिमझिम जलधारा मोती के अनुरूप बरसती थी। सुनने में प्रिय लगने वाला सघन घन गरजता था। दसों दिशाओं में बिजली चमक रही थी। वहाँ नाना प्रकार के सुरंग फूल झड़ पड़ते थे। जिनमें वाह ! एक भँवरा (मन) भूल पड़ा (यहाँ पर मन का अस्तित्व नहीं रहता)। वहाँ एक चक्र फिर रहा था, जिसकी ओर एक साँप (कुंडलिनी) उड़ा हुआ चला जाता था। वहाँ न तो कर्म धर्म ही था और न पुण्य पाप ही। उस पर एक महरा खड़ा था जिसका कोई वर्ण नहीं था और जिसका कोई वर्णन भी नहीं किया जा सकता था। उसकी प्रतीति का अनुमान मन को तभी लग सका जब वह सुरति में परिणित हो गया।

इसके आगे रचयिता का कहना है कि इंद्रियों तथा चित्तवृत्तियों का खून (निरोध) नहीं करना चाहिये । यह सब महरा (भगवान) की गायें हैं जो स्वयं ही उनको मिलाकर उनका चून (सकचून) या आटा (सुधार) करता रहता है । इनके ठीक ठीक पालन करने से ही वह मनुष्य को निहाल कर देता है ।

संख्या ११४ ग उधवा प्रसंग, रचयिता—धरनी दास, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—६ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिश्रित, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी । दाता—श्री सरल चौबे और श्री रामनरेखन चौबे स्थान और डा०—सहतवार; जिला—बलिया

आदि—

उधवा प्रसंग

धरनी धरन करम कली हों कछुवो न काम ।
मन वच क्रम भजु हों करताराम ॥ १ ॥
धरनी धुवा धवराहर हो धुरी के धाम ।
अइसन जीआन जगत में हों बीनु हरीनाम ॥ २ ॥
बन मृग केर अहेरीआ हो वड वटवार ।
धरनी मन म्रीग जो बधै हो धनी अवतार ॥ ३ ॥
धरनी जीव जनी मारहु हो मासु जनी षाहु ।
नागे पाव ववुर बन हो नहीं निरवाहु ॥ ४ ॥
धरनी यह मन म्रीग भैला हो गुर भैला व्याध ।
बान सबद हींये चुभी गैला हो दरसन साध ॥ ५ ॥
धरनी जे हो धनी वीरहीनी हो धरइ न धीर ।
वीहवल वीकल दुषीत चित हो दुवर सरीर ॥ ६ ॥
धरनी धीरज न रहे हो बीनु बनवारी ।
रोअत रकत के आसुनही हों पंथ नीहारी ॥ ७ ॥
धरनी पीअ परवत पर हो चढ़त डेराऊँ ।
कवही कै पाव डगमगै हो कतही न ठाऊँ ॥ ८ ॥
धरनी धरकत ही अजनु हो करके करेज ।
ढरकत भरी भरी लोचन ही पीअही न सेज ॥ ९ ॥
धरनी धवल धवराहर हो चढ़ी चढ़ी हेर ।
आवत पीअही न देषो हो भइली अवेर ॥ १० ॥
धरनी भ्रीग से हो जीवन हो हो जाउ वो छाय ।
पर रे पुरुष तर आंचर हो दीहल डसाइ ॥ ११ ॥

धरनी धन धन से हो जीवन हो मीलव जे नाह ।
संग पवढी सुष वेलसव हो सीर धरी वांह ॥ १२ ॥
धरनी ध्यान तहा धरु हो पुलए केवार ।
नीरषी नीरषी परीषत रहु हो वारंवार ॥ १३ ॥
धरनी धइ रहु हरीव्रत हो परी हरी मोह ।
धनी सुत वंधु वीभव जत हो अंत वीछोह ॥ १४ ॥
धरनी धोष न लाइअ हो अपनी ओर ।
प्रभु सो प्रीत नीवाहव हो जीवन थोर ॥ १५ ॥
धरनी अरध उरध भैली हो जोती सरुप ।
देषल मनोहर मुरती हो रूप अनुप ॥ १६ ॥
धरनी करम करैं नही हो डरइ न पाप ।
सत गुरु जीन्हही लषावल हो अजपा जाप ॥ १७ ॥
धरनी फीरही देसंतर हो धरी धरी भेस ।
कोइ कोइ देषही देहंतर हो गुरु उपदेश ॥ १८ ॥
धरनी धनी गनीका भैली हो रसीआ राम ।
सहज सुरंग रंग भीनी गैला हो वनी गैला काम ॥ १९ ॥
धरनी धनी करे वालंमु तो वरनी न जाइ ।
सनमुष रहत रहनी दीन हो मीलत न धाइ ॥ २० ॥
धरनी जीन्ही पीअ पाएउ हो मेटी गैला दंद ।
उधवा उरध सुर गाएउ हो हीदआ अनंद ॥ २१ ॥
धरनी चहु दीस चरचीअ हो करीए पुकार ।
न हम काहुक केउ हो केउ न हमार ॥ २२ ॥
धरनी धाए चलहु जनी हो चीकनी वाट ।
षोटे दाम कवनी सीधी हो, नागरी हाट ॥ २३ ॥
धरनी पलक परे नही हो झलके सोहाए ।
पुनी पुनी पीअत परम रस हो, प्यास न जाए ॥ २४ ॥
धरनी धन तन जीवन हो रहेउ की जाउ ।
हरी के चरन हीरदये धरी हो हेंतु वढाउ ॥ २५ ॥
गोरीआ गरव करहु जनी हो गोरे गात ।
काली परो झरी जइहो पीअरे पात ॥ २६ ॥
धरनी वीलषी वीनती करे हो सुनहु मुरारी ।
सव अपराध छेमो करु हो सरन तोहारी ॥ २७ ॥

अंत—

हाथी ठेल हठीले हो सीपहसलार।
दीन चारी चहल पहल भैला हो पुनी मुषछार। २८।
धरन ऐठली पगीआ हो दुइ तरुआरी।
सोतन पनीआ पेवारीउ हो आगी फोकारी। २९।
धरनी धन धन से हो धनी हो कुल उजिआरी।
जाकर बहीआ धइल प्रभु हो हाथ पसारी। ३०।
धरनेस्वर व्रत चीत धरु हो धरनीदास।
तासु चर वली वली जहाँ हो प्रेम प्रगास। ३१।
धरनेस्वर गुन गावल हो धरनीदास।
जहाँ जैदेव नाम देव हो ताही देहुवास। ३२।
धरनी अपन मरम कलि हो कहीऐ काही।
जानती हार सो जनी हे हो जस कछु आही। ३३।
उधवा कहहु से सुधवा हो तपती बुझाये।
धरनी धनी दरसन वीनु हो अती अकुलाये। ३४।
ऊधव ही देहु देही दुधवा हो कुजहक वाइ।
धरनेस्वर ही लेआवहु हो वेगे जाइ। ३५।
जोवन रतन जतन करी हो धरेउ जोगाए।
धरनेश्वर येही अवसर हो वेलसहु आए। ३६।
हीदुं तुरूक जनी छोडहु हो धरम इमान।
धरनीदास पुकारै हो मउती नीदान। ३७।
धरनी अतीथ कहाएउ हो धन वेवहार।
सहजही सपने वीसरी भैला हो परूवनझार। ३८।
धरमारथ पथ चढी कै हो करम कीन।
जनु घर घोरवा अछते हो गदहा पलान। ३९।
काहु के बहुत वीभौ वल हो काहु परीवार।
धरनी कहत हमही वल हो राम तोहार। ४०।
सबुजा सोभीत सीर पर हो दुइ समसेर।
तेही तन उपर देखीए हो मटीअक ढेर। ४१।

समाप्त

प्राप्त प्रति की पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

ज्ञानोपदेश वर्णन किया गया है।

संख्या ११४ ध. पद, रचयिता—धरनीदास, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—६ × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा काशी। दाता—श्री सरल चौबे और श्री रामनरेखन चौबे, स्थान व डा० सहतवार, जि०—बलिया

आदि—

राग गउरी

सुमिरो हरी नाम ही वौरे।
चक्रहु चाही चले चीत चंचल मुल मंत्र गही नीस्चल कौरे॥
पाँचहु ते परीचे करू प्रानी काहे के परत पचीस के भौरे॥
जौ लगी नीरगुन पंथ न सुझे काज कहां मही मंडल दौरे॥
सब्द अनाहद लषी नहीं आवै चारौ पन चली एसही गौरे॥
जौ तेली कर बैल बेचारा घरही कोस पचासेक भौरे॥
दया ध्रम नही साधु की सेवा काहे के मोजनमे घर चौरे॥
'धरनीदास' तासु बलिहारी झूठ तजौ जीन्ही सांच ही धौरे॥ १॥

सुमीरो एक राम गोसाईं।
जगुधंधा परी हरी अंधा न गहु गुर चरन सरन मन लाइ।
नीरलज्या लरीकन्ही संग डोले तव इआह होती कहां चतुराई।
अव धनी सुत जन धन मन रातो सांच के मानत झूठ सगाई।
जीव दआ सत सुकृत धरी के तजी ममीता हमीता हलुकाई।
काम क्रोध त्रीसना फज्ञ तोरो तब अम्रीत रस पीअहु अघाई।
जोगी पंडीत दानी कवेस्वर एह सभदेह धरै फीरी आइ।
'धरनीदास' कहे गुरू गमी भई भगती वीना भौ पार म जाइ॥ २॥

दील मालीक एक अलाह हमारा।
जाके एक सपुन फरमाए भए गवो चौदह तवक तआरा।
दुज कोइ अवरी नही देषो जैसा मन महवुव पीआरा।
हैं हाजीर नाजीर हरी साइं तीवे तालीव से कोस हजारा।
जाकी जीकीरी कीकीरी करी वांचे मीर पीर पैगमरू सारा।
मका मदीना हाजीती मेटी रोजा इद मसीद वीसारा।
महरम जानी महल वीच राषो मेहरवान होइ देहु दीदारा।
वार वार वंदा सिर नावै धरनीदास गरीब वेचारा॥ ३॥

काहे को होत दीवाना रे वंदे तो।
एक अलाह दोस्त है तेरा और तमाम वेगाना।

कौल करार वीरी वावरे माल मनीमन माना ।
आषीर नही दुनीआ मो रहना वहुरी उहाही जाना ।
जाहीर जीव जहांन जहां लो सभमे एक षोदाई ।
बहुरी गनीम कहां ते आए छुरी चलाई ।
दुरी नही दील का मालीक वीना दरद नाही पैहो ।
धरनी वंग वीलंद पुकारै फीरी पाछे पछतै हो ॥ ४ ॥

॥ राग परज ॥

अंध अभागा रे समुझ नर ।
राम भगती वीसराए के का प्रेतन्ही लागा रे ।
संचारन माडे रहे झुठा उठी भागा रे ।
संत नगारो वाजही अजहुँ नहीं जागा रे ।
गाइ ही ते हत्या भये कहे भइसी के नागा रे ।
सनमुष सरन समाइअै सभ परी हेरी दागा रे ।
धरनी गुर गोविंद भजे ताको काहे के षागारे ।
भइया जाहे राम नेवाजे हो ।
चाहे पगु नागा करे चाहे तुरये तुषारे हो ।
परम तंतुही दए वसे संतन्ह दल माजे हो ।
रहत सदा अनंद से सीर पदुम बीराजे हो ।
काल सरूपी कोइ नही सब आरहती साजे हो ।
...जनी की मुद्दता उठी आपही भाजे हो ।
चारी पदारथ ना चहै सुष सहज समाजे हो ।
धरनी जीवन मुक्ती सो अतुलित छवीछाजे हो ॥ ६ ॥

प्राप्त पदों की पूर्ण प्रतिलिपि ।

विषय—

ज्ञान और भक्ति का विवेचन किया गया है ।

संख्या ११४ ङ. बोधलीला, रचयिता—धरनीदास, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८¾ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी । दाता—श्री गुरु बालक प्रसाद जी, ग्राम गोंठा, डा०—दोहरीघाट, जि०—आजमगढ़

आदि—

॥ बोध लीला ॥

प्रथमहि प्रनवो ए...

···दौ गुरु देव क पाऊ, जिन्ह प्रभु सोवत···

× × ×

देषो निरषि परषि सब कोई। सब फल माह बीज है सोई ॥
पूरन ज्यों जल मध्य अकासा। एकै ब्रह्म सकल घट वासा ॥
मनिगन माल मध्य जिमि डोरा। सागर एक अनेक हिलोरा ॥
एक भंवर सब फूल मंझारा। एक दीप सब घर उजियारा ॥
ततु निरंजन सबके संगा। पसु पंछी नर कीट पतंगा ॥
देषो अपनी काया विलोई। वाद विवाद करे मति कोई ॥
काम क्रोध मद लोभ निवारै। समिता गहि ममिता को मारौ ॥
आनक दोष कबहु नहि धरई। जानत जीव को घात न करई ॥
निरपछी सांचहि अस्थापै। निरदावा धन व्यथा न व्यापै ॥
संतत धर्म अनासित करई। सो प्रानी भौ सागर तरई ॥
दुष सुष एकै भाव जनावै। अंभि अंतर विश्वास बढावै ॥
अस्तुति निंदा दुऔ समाना। सुर नर मुनि गन तासु वषाना ॥

अंत—

तेहि समान तूलै नहि कोई।
जीवन मुक्त जानियै सोई ॥
मन परमोध जाहि मन भावै।
त्रिविध पाप तन ताप नसावै ॥
चित्रगुप्त धर्माधिराजा।
कालदूत जम अहृति साजा ॥
अपनी आपा आपु मेटाइ।
'धरनीदास' तासु बलि जाई ॥
ऐसी दसा विराजै जाकी।
धरनी तहँ कछु रही न बाकी ॥
॥ बोध लीला संपूरण ॥

विषय—

ब्रह्म के विषय में ज्ञानोपदेश।

संख्या ११४ च. ककहरा, रचयिता—धरनीदास, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—८¾ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४९, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी। दाता—श्री गुरु बालक प्रसाद जी, ग्राम—गोंठाखास, डा०—दोहरीघाट, जि०—आजमगढ़

आदि—

ऊ अंकार सब स्रीष्टी बनाई । ऊ अंकार ही विसरो जनि भाई ।
ऊ अंकार ही चहु वेद वषाना । ऊ अंकार विरले जन जाना ॥
नाम सराहे सिरजनि हारा । नाना बर्न कीओ वीस्तारा ॥
निर्गुन पुर्ष निरंतर कोई । नारि पुर्ष सबही ते सोई ॥
मालीक एक जगत फुलवारी । मानिक उहै जोति जुगचारी ॥
मूल मंत्र गुर गम ते गहो । मति बहुतेरा वकी वकी बहो ॥
सीध पुर्ष है एकंकारा । सुन्य सरोअर अगम अपारा ॥
सतगुर मिलै तौ ले पहुचावै । सीषि लिषी पढि गुनि हाथ न आवै ॥
धंधा करत गए कत पुरुषा । धरो भक्ति भौ से तरु सुरूपा ॥
धोषे धोष जनम चलिजाई । धरनेस्वर को धरू सेवकाई ॥
अनहद शब्द लेह ठहराई । अजपा जाप जपहु मनलाई ॥
अरध उर्ध धरि सुरति नीरेषो । आपा मेटि अपानहि देषो ॥

अंत—

होहु दयाल विसंभर देवा ।
हम नहि जान पुजा सेवा ॥
हमरे नहि कछु कर्मनी कोई ।
हरि की कृपा होए से होई ॥
छोरहु कर्म फांस गोसाइ ।
छोरि लेहु बंधन वरि आई ॥
छोटि मति मैं निपट अनारी ।
छुटै जनी एक नाम तोहारी ॥
कर्म ककहरा ··· ··· ··· ।
संत ककहरा कोई कोई जाना ॥
जाघट मौ अनुभौ परगासा ।
तिन्ह की वलि वलि 'धरनीदासा' ॥

॥ एता ककहरा संपुरन समास करता राम राम ॥

विषय—

'ॐ न म' से लेकर 'ह' तक के अक्षरों पर कविता रचकर ज्ञानोपदेश किया गया है ।

संख्या ११५. वाणियाँ, रचयिता—धुंधलीमल । इनकी वाणियाँ संख्या ५९ के विवरण पत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र ।

संख्या ११६. (१) गुणमाया संवादजोग ग्रंथ, (२) गुणादि बोध जोग ग्रंथ, (३) हरिचंद सत, रचयिता—ध्यानदास, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—$10\frac{1}{2} \times 5\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४५, परिमाण (अनुष्टुप्)—५७७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८५६वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ ध्यानदास जी का ग्रंथ

॥ अथ गुणमाया संवाद जोग ग्रंथ लिष्यते ॥

एक कनक अरु कामणी सब जग लीया तुड़ाय ।
साध गहै मत मछ कौ चढ़ै अपूठै बाई ॥ १ ॥
संतो सहज सुनि मन लागा ।
उनमनि चढ्या आस सब परिहरि सबद गगन चढ़ि वागा ॥ २ ॥
पांच पचीस उलटि घरि आवैं तब मन अनंत न डोलै ।
मूरति मांहि अमूरति दरसै नांनावांणी बोलै ॥ ३ ॥
देह उलटि दरिया भइ तब मन रह्या समाई ।
रोम रोम बाजा घुरैं अस्थिर बैठ्यौ आई ॥ ४ ॥

अंत—

गणादिबोध जोग ग्रंथ से

चंद सूर तहां कछु नही नही धरणी आकास ।
पवन नही पाणी नही नही तहां भोग विलास ॥ १ ॥

तेज नही तारा नही नही तहां रूप अरूप ।
सबद नही सुरता नही नही छाया नही धूप ॥ २ ॥

× × ×

आदि अंति मधि संत सब अगणित गिणया न जांहि ।
"ध्यानदास" साहिब सुमरि सब आपउ समांहि ॥ ४५ ॥

हरिचंद सत

ध्याइ तीन्य या ग्रंथ की धरम कथा विस्तार ।
'हरिचंद सत्' हिरदै धरै सो जन उतरै पार ॥ ३११ ॥

जो उचरैया ग्रंथ कूं लो सुनै संत चित्त लाइ ।
"ध्यान" लहै सो परम पद पापताप त्रिय जाई ॥ ३१२ ॥

इति श्री हरिचंद सति ग्रंथ है ता मध्य मुक्ति उपाइ। ग्यान भक्ति बैरांग नध्य सब बिध कहा सुनाई ॥ १ ॥ इति हरिचंदस्त ग्रंथ संपूर्ण ध्याइ ॥ २ ॥

विषय—

गुणमाया जोग ग्रंथ

गुण और माया से रहित होकर भगवद्भक्ति करने का उपदेश किया गया है।

॥ गुणादि जोग ग्रंथ ॥

शून्य के स्वरूप का वर्णन।

॥ हरिचंद सत ॥

राजा हरिचंद का वर्णन।

टिप्पणी—विवरण पत्र में रचयिता की तीन रचनाओं गुण माया जोग ग्रंथ, गुणादि जोग ग्रंथ और हरिचंद सत के विवरण लिए गए हैं।

संख्या ११७ क. भजनाष्टक, रचयिता—ध्रुवदास जी (स्थान—वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८$\frac{1}{8}$×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८३५ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री नारायण दंडी, स्थान—नारायण गढ़ और श्रीनगर, डा०—श्रीनगर, जिला—बलिया

आदि—

॥ अथ भजनाष्टक लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

ज्ञान सांत रस तें अधिक अद्भुत पदवीदास।
साषा (? सषा) भाव तिनतें अधिक जिनकै प्रीति प्रकाश ॥ १ ॥
अद्भुत बाल चरित्र कौ जो जसुदा सुषलेत।
तातें अधिक किशोर रस ब्रज वनितनि कौ हेत ॥ २ ॥
सर्वोपरि है मधुर रस जुगल किशोर विलास।
ललितादिक सेवत तिनहि मिटत न कबहु हुलास ॥ ३ ॥
या पर नाहिन भजन कछु नाहिन है सुष और।
प्रेम मगन विलसत दोऊ परम रसिक सिर मौर ॥ ४ ॥
वृंदावन नित सहज ही नित्य सषी चहुँओर।
मध्य विराजत एक रस रस मै मधुर किशोर ॥ ५ ॥
छैल छबीली लाडिली छैल छबीलौ लाल।
छैल छबीली सहचरी मनौं प्रेम की माल ॥ ६ ॥

पंच बांन जिहि पांन है देषि गिरयौ यह रंग।
तेइ बान तिहिं फिरि लगे जर्जर भए सब अंग ॥ ७ ॥
विवस भयौ सुधि रहि न कछु मोह्यो महा अनंग।
लज्जित ह्वै रह्यौ नमित अति करत न सीस उतंग ॥ ८ ॥
यह अष्टक ध्रुव पढै जौ जुगल चंद संजोग।
ताके हिये प्रकास रहै मिटै तिमिर हृदिरोग ॥ ९ ॥

इति श्री भजनाष्टक संपूर्ण ॥ १९ ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

श्री राधाकृष्ण के युगल विलास का भक्ति पूर्वक भजन करने का उपदेश किया गया है।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना जिस हस्तलेख में है उसमें ध्रुवदास जी की तेईस रचनाएँ हैं और चतुर्भुजदास जी की बारह रचनाएँ जो 'द्वादस जस' नाम से प्रसिद्ध हैं। अंत में गीता का भाषानुवाद (अज्ञात रचयिता कृत) भी है। ध्रुवदास और चतुर्भुजदास जी की रचनाएँ इस प्रकार हैं :—

ध्रुवदासजी की रचनाएँ

१–जीवदसा, २–वैधक लीला, ३–मन सिध्या लीला, ४–वृंदावन सत, ५–ख्याल हुलास, ६–भक्त नामावली, ७–बृहद बावन, ८–प्रीति चौवनी, ९–भजनाष्टक, १०–भजन कुंडली, ११–भजन सत, १२–प्रेमावली लीला, १३–नामावली, १४–बन विहार, १५–रस विहार, १६–आनंददसा विहार, १७–अनुराग लता, १८–प्रेमलता लीला, १९–ब्रजलीला, २०–जुगल ध्यान, २१–नित्य विलास, २२–मानलीला, २३–दानलीला

चतुर्भुजदास जी की रचनाएँ (स्वा० हरिवंश जी के अनुयायी)

१–सिध्या सकल जस, २–धर्मविचार जस, ३–भक्ति प्रताप जस, ४–संत प्रतापजस, ५–सिक्ष्या सार जस, ६–हित उपदेश जस, ७ पतितपावन जस, ८–मोहनी जस, ९–अनन्य भजन जस, १०–राधा प्रताप जस, ११–मंगलसार जस, १२–विमुष भजन जस।

संख्या ११७ ख. भजनाष्टक, रचयिता—ध्रुवदास—कागज—देशी, पत्र—१, आकार—७ × ६½ इञ्च, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ भजनाष्टक लिख्यते

ग्यानं शांति रसतै अधिक अदभुत पदई दास ।
सखी भाव तिन तैं अधिक, जिनके प्रीति प्रकास ॥ १ ॥
अद्भुत बाल चरित्र कौ जो जो जसुधा सुखलेत ।
तातै अधिक कीसोर रस ब्रज जुवती नित लेत ॥ २ ॥

अंत—

यह अष्टक को पढै ध्रुव जुगल चंद संजोग ।
ताके हीय प्रकास रहै मिटै तिमिर हृद रोग ॥ ६ ॥

इति श्री भजन अष्टक संपूर्ण ।

विषय—

८ दोहों में कृष्ण भजन ।

संया ११७ ग. श्रृंगार मणि, रचयिता—ध्रुवदास, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—७×६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—९६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ सिंगार मणि लिख्यते ।
हरिवंस हंस आवत हिये, होत जु बहुत प्रकास ।
अदभुत आनंद प्रेम को, फूल कमल प्रकास ॥ १ ॥
नवल किसोरी सहज ही, झलकत सहजहि जोत ।
उपमा दै डरनी तिन्है, यह दीख्यो अति होत ॥ २ ॥

अंत—

कहै सिंगार मणि नवे चारि अरु आठि ।
प्रेम तिहि उर झलकि रहै जो कह ध्रुव पाठि ॥ १०२ ॥
इति श्री सिंगार मणि ।

विषय—

१०२ दोहों में राधा अंग वर्णन ।

संख्या ११७ घ. रसमंजरी, रचयिता—ध्रुवदास, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—७×६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—५९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ रस मंजरी लिख्यते ॥ दोहा ॥

हरवंस नाम कहत ही बढै आनंद बेलि।
प्रेम रंग उर जगमगै, जुगल कवल रस केलि ॥ १ ॥
हरवंश चरन युग वंदि कै, कहत बुद्धि अनुसार।
ललित विसाखा सखिन को, यह रस प्रेम अधार ॥ २ ॥

अंत—

या रस सौं लाछ्यौ रहै, निस दिन जाको चित्त।
ताकी पद रज सीस धर, बंदति रहै ध्रुव नित ॥ ३५ ॥
इति श्री रस मंजरी।

विषय—

राधाकृष्ण की एकान्त क्रीड़ा का वर्णन।

संख्या ११७ ङ. प्रिया जू की नामावली, रचयिता—ध्रुवदास हित (वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—१०.५ × ७.५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण—(अनुष्टुप्)—२४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७वीं शताब्दी विक्रमी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

॥ अथ प्रिया जू की नामावली लिष्यते ॥
श्री राधा नित्य किशोरी वृंदावन विहारनी वन राजरानी निकुंजेस्वरी ॥

रूप रंगीली छवीली रसीली रस नागरी ॥ लाड़िली प्यारी सुकुमारी रसिकनी ॥ मोहनी लाल मुष जोहनी ॥ मोहन मन मोहनी ॥ रति विलास विनोदनी ॥ लाल लाड लडावनी ॥ रंग केलि वढ़ावनी ॥ सुरति चंदन चरचनी ॥ कोटि दामिनि दमकनी ॥ नवल नासा चटकनी ॥ रहस पुंजे वृंदावन प्रकासिनी ॥ सौंदर्य रासिनी ॥ प्रीतम नैन निवासिनी ॥ नित्य आनंद दर्सिनी ॥ पुजन पिय हिय परसनी ॥ अधर सुधारस बरसनी ॥ रंग विहारनी नेह निहारनि ॥ पिय हित सिंगार सिंगारनी ॥ प्यार सों प्यारे को ले उर धारनी ॥ मोहन नैन विथा निवारनी ॥ जान प्रवीन उदार संभारनी ॥ अनुराग सिंधे स्यामा दामा भामा भामती ॥ जुवती जूथ तिलका ॥ वृंदावन चंद्र चंद्रिका ॥ हासि परिहासि रसिका ॥ नव रंगनी अलकावली ॥ छवि फंदनी ॥ मोहन मुसकनि मंदनी ॥ सहज आनंद कंदनी ॥ नेह कुरंगिनी ॥ नैन विसाला ॥ चंचल चित आकर्षिनी ॥ मदन मान षंढिनी ॥ सकल विद्या विचछने ॥ कुँवर अंक विराजिनी ॥ सुरत समर दल साजिनी ॥ मृग नैंनी पिकबैंनी ॥ सुलज्ज अंचला सहज चंचला ॥ कोक कलानि कुसला ॥ हाव भाव चपला ॥ चातुर्य चतुरा ॥ माधुर्य मधुरा विन भूषन भूषिता ॥ अवधि सुंदर्यता ॥ प्रान वल्लभा कामिनी, भामिनी हंस कल गामिनी ॥ छवि दामिनी ॥ घन स्याम अभिरामिनी ॥ रसिक रवनी ॥ मदन दमिनी ॥

केलि कवनी ॥ चित हरनी ॥ काल उर पर चरन धरनी ॥ छवि कंज वदनी ॥ रसिक आनंदनी ॥ रूप मंजरी सौभाग्य रस भरी ॥ सर्वंग्य सुंदरी ॥ गौरंगी रति रस रंगी ॥ विचित्र कोक कला अंगी ॥ छवि चंद्र बदनी ॥ रसिक लाल वंदिनी ॥ सकल सुष रासि सदने ॥

दोहा

प्रेमसिंधु के रतन ए अद्भुत कुवरि के नाम।
जाकी रसना कहत ध्रुव सो पावै सुषधाम ॥
ललित नाम नामावली जाके उर झलकंत।
ताके हिय में वसत यह स्यामा स्यामल कंत ॥

इति प्रिया जू की नामावली संपूर्ण ॥

विषय—

प्राप्त हस्तलेख से ध्रुवदास कृत ४२ फुटकर रचनाएँ संगृहीत हैं जिनमें से एक श्री प्रिया जू की नामावली है। सं० विवरण के अनुसार अब तक इसका विवरण नही लिया गया था। इसमें श्री राधिका जी की नामावली वर्णन की गई है।

टिप्पणी—ध्रुवदास जी को श्री हित हरिवंश जी का शिष्य कहा जाता है। परंतु प्रस्तुत रचना जिस हस्तलेख में है उसकी पुष्पिका के अनुसार ये श्री हित हरिवंश जी के पुत्र श्री गोपीनाथ जी के कृपापात्र अर्थात् शिष्य थे :—

'इति श्री हित जू के पुत्र श्री गोपीनाथ जू के कृपापात्र ध्रुवदास जू कृत बयालीस लीला संपूर्ण ॥'

इसकी पुष्टि एक अष्टक संग्रह से भी होती है जिसमें निम्नलिखित दोहा है :—

सुंदर स्वामी लालवर और रसिक ध्रुवदास।
ये श्री गोपीनाथ के कहै जु शिष्य प्रकास ॥

संख्या ११७ च. नामावली, रचयिता - ध्रुवदास जी (स्थान —वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—३, आकार—८३/४×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३५ वि०, सन् १७७८ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री नारायण दंडी, स्थान—नारायणगढ़ और श्रीनगर, डा०—श्रीनगर, जिला—बलिया

आदि—

॥ अथ श्री प्रियाजी की नामावली लिष्यते ॥

श्री राधे नित्यकिशोरी ॥ वृंदावन विहारिनी ॥ वनराज रानी ॥ निकुंजैश्वरी ॥ रूप

रंगीली ।। छबीली ॥ रसीली ।। रसनागरी ।। लाडिली ॥ प्यारी ॥ सुकुवारी ॥ रसिकनी ॥ मोहनी ।। लालसुष जोहनी ॥ मोहनी मोहन मन ।। रतिविलास विनोदनी ।। लाल लाड लडावनी ।। रंग केलि बढावनी ॥ सुरत चंदन चर्चिनी ।। कोटि दामिनी दमकनी ।। नवल नासा चटकिनी ।। रहसि पुंजे ॥ १ ॥ वृंदावन प्रकासिनी ॥ रंग बिहार विलासिनी ॥ सौंदर्यं रासिनी ॥ सषी सुष निवासिनी ।। दुलहिनि मृदु हासिनी ।। प्रीतम नैंन निवासिनी ॥ नित्यानंद दरसिनी ।। उरजनि पिय परसिनी ॥ अधर सुधारस वरसिनी ॥ रंग विहारिनि ।। नेहनिहारिनि ॥ पिय हित सिंगार सिंगारनि ॥ प्यार सौं प्यारे कौं लै उर धारनि ॥ मोहन मैंन विथा निरवारनि ।। अनुराग सिंधे ।। १५ ।। स्यामा ।। वामा ।। भामा ।। भावती ।। जुवति जूथ तिलका ॥ वृंदा वनचंद्रचंद्रिका ॥ हास परिहास रसिका ।। नव रंगिनी ।। अलका-वलि छबि फंदनी ।। मोहन मुसकनि मंदनी ।। सहज आनंद कंदिनी ।। नेह कुरंगिनी ।। नैंन विशाला ।। चंचल चित आकरषिनी ।। मदनमान पंडिनी ।। सकल विद्या विचछने ।। कुवरि अंक विराजिनी ।। सुरत समर दल साजिनी ।। प्यार पट निवाजिनी ।। मृगनैंनी पिकबैंनी ।। सलज्ज अंचला ।। सहज चंचला ।। कोक कलानि कुशला ।। हाव भाव चपला ।। चातुर्ज चतुरा माधुर्ज मधुरा ॥ विनु भूषन भूषिता ।। अवधि सौंदज (?र्ज) ता ॥ प्रान वल्लभा ॥ ४ ॥ १६ ॥ रसिक रवनी ॥ कामिनी ॥ भामनी ॥ हंस कल गामिनी ॥ घनस्याम अभिरामिनी ।। मदन दवनी ॥ केलि कवनी ॥ चित्तहरनी ॥ लालन उर पर चरन धरनी ॥ छवि कंज वदनी ॥ रसिक आनंदिनी ॥ रूप मंजरी ॥ सौभाग्य रसभरी ॥ सर्वंग्य सुंदरी ॥ गौरांगी ॥ रति रस रंगी ।। विचित्र कोककला अंगी ॥ छवि चंद्र वदनी ॥ रसिक लाल वंदिनी ।। सकल सुष रासि सदने ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

प्रेम सिंधु के रतन ये अद्भुत कुवरि के नाम।
जाकी रसना रटै ध्रुव सो पावे सुख धाम ॥ १ ॥
ललित नाम नामावली जाके उर झलकंत।
ताके हिय मैं वसत रहैं स्यामा स्यामल कंत ॥ २ ॥
इति श्री प्रिया जी की नामावली संपूर्ण ॥ १३ ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

श्री राधा जी के नामों का वर्णन किया गया है।

संख्या ११७ छ. प्रिया नामावली, रचयिता—ध्रुवदास (वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—१, आकार—७×६३ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ श्री प्रिया जी की नामावली लिख्यते।

श्री राधे नित किशोरी वृंदावन विहारिणी वन राजरी।
वृंदावन सूरीनि निकुंजे सूरी रूप रंगीली छबीली रसीली रसनागरी ॥
लाफिली प्यारी सु कुंवारी रसिकिनी मोहनी लाल मुख जोहनी
मोहन मन मोहनी ॥

रति बिलास विनोदनी लाल लाफि बीनी।
रंगकेलि निबटाबनी सुरत चंदन चर्चिनी ॥
कोटि दांमि दमकनी ललित उर पट लपटनी।
नवल नासा चटकिनी रहसि पूजे ॥ १६ ॥

अंत—

ललित नाव नामावली जाके उर लहकंत।
जाके हियै वसत है स्यामा स्यामल कंत ॥ ७ ॥
इति श्री प्रिया जी की नामावली ॥ संपूर्णं ॥

विषय—राधा के १०८ नाम हैं।

संख्या ११७ ज. दान विनोद, रचयिता—ध्रुवदास, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—६½×७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण—(अनुष्टुप्)—२३, पूर्णं, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ दान विनोद लिख्यते ॥ दोहा ॥

एक समय उर सखिन के बाढ़यो आनंद मोद।
देखें लाडली लाल की लीला दान विनोद ॥ १ ॥
वंशीवट तट हसजा (? हंसजा) सघन कुंज की ठोर।
दानी ह्वै ठाढे भये, नागर नवल किशोर ॥ २ ॥
भाँति रंगीली सखी निशु तन वस छवीली वाल।
आई गई तिहि छिन तहाँ मत्त गयंदनि चाल ॥ ३ ॥

अंत—

नित उठि जो गावै सुनै, यह लीला रस रूप।
'हित ध्रुव' ताके हिय कमल उपजे प्रेम अनूप ॥ २२ ॥
इति श्री दान विनोद संपूर्णं ॥

विषय—

कृष्ण के दान माँगने पर राधा ने अपने को समर्पण कर दिया।

संख्या ११७ भ. आनंदाष्टक, रचयिता—ध्रुवदास (वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—१, आकार—७×६१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ आनंदा अष्टक लिष्यते ।। दोहा ।।

सखी सबै उडगन मनों, रोकी वारि अनंद ।
प्रिय चकोर 'ध्रुव' छकि रहै निरखि कुँवरि मुख चंद ।। १ ।।
ऐसी अद्‌भुत सभा बनी, ईक छत सुख की रास ।
फूले फूल अनंद कै, सहज परसपर हासि ।। २ ।।
देखि लाल के लालचहि ललिचाहूँ ललिचाहि ।
नवल कटाक्ष तरंग रस पीवत हूँ न अघाई ।। ३ ।।

अंत—

जो अष्टक जो पढै, ध्रुव संध्या और सवार ।
जाके हिय प्रकाश रहै, मिटै त्रिगुण अँधियार ।। ८ ।।

इति श्री आनंदाअष्टक सपूरणं ।।

विषय—

आठ दोहों में कृष्ण राधा गुणगान किया गया है ।

संख्या ११७ ञ. आनंदाष्टक और भजनाष्टक, रचयिता—ध्रुवदास (स्थान—वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—१०.२ × ६.४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

॥ अथ श्री आनंदाष्टक लिष्यते ॥ दोहा ॥
सषी सबै उडगन मनौ येकिवारि आनंद ।
पिय चकोर ध्रुव छकि रहे निरषि कुवरि मुषचंद ॥ १ ॥
ऐसी अद्‌भुत सुभावनी इकछत सुष की रासि ।
फूले फूल आनंद के सहज परस्पर हासि ॥ २ ॥
देषि लाल की लालचहि लालचहू ललचाइ ।
नवल कटाक्ष तरंग रस पीवत हू न अघाइ ॥ ३ ॥

एक ही वैगुन प्रेम रस रूप सुसील सुभाव।
अद्भुत जोरी वनी 'ध्रुव' देख वढत चितचाव ॥ ४ ॥

या रस के जे रसिक-जन तिनकी कौन समान।
विना मधुर रस माधुरी परसत नहि कछु आन ॥ ५ ॥

रसिक तवहि पहिचानिये जाकै यह रस रीति।
छिन छिन हिय में झलक रहै लाल लाड़िली प्रीति ॥ ६ ॥

यह रस जिन समझ्यौ नही ताके ढिग जिन जाहु।
तज सत संगत सुधारस सिंधु सुतहि जिन षाहु ॥ ७ ॥

वृंदावन रस अति सरस कैसे करौ वषान।
जिहि आगे वैकुंठ कौ फीकौ लगत पयान ॥ ८ ॥

यह अष्टक जो पढै ध्रुव संध्या और सवार।
ताके हिय आवै जुगल मिटै त्रिगुन अँधियार ॥

इति आनंदाष्टक संपूर्ण।

अंत—

अथ भजनाष्टक लिष्यते

॥ दोहा ॥

ज्ञान सांति रस तै अधिक अदभुत पदवी दास।
सषा भाव ताते अधिक जिनकै प्रीति प्रकास ॥ १ ॥

तातै अधिक किशोर रस वृज वनतनि कौ हेत।
अदभुत बाल चरित्र को जौ जसुदा सुष लेत ॥ २ ॥

सर्वोपर है मधुर रस जुगल किसोर विलास।
ललितादिक सेवति तिनहि मिटत न कबहु हुलास ॥ ३ ॥

यापर नाही भजन कछु नाहिन है सुष और।
प्रेम मगन विलसत दोऊ परम रसिक सिर मौर ॥ ४ ॥

वृंदावन नित सहजही नित्य सषी चहुँ ओर।
मध्य विराजत एक रस रसमय मधुर किसोर ॥ ५ ॥

छैल छवीली लाडिली छैल छवीलौ लाल।
छैल छवीली सहचरी मानौं प्रेम की माल ॥ ६ ॥

पंचवान तेहि पानि है देषि गिर्यौ यह रंग।
तेई वान तेहि फिर लगे जर्जर भये सब अंग ॥ ७ ॥

विवस भयो सुधि रही न कछु मोह्यो महा अनंग।
लज्जित ह्वै रह्यौ अति नमित करत न सीस उतंग ॥ ८ ॥

यह अष्टक जो पढै ध्रुव जुगल चंद संजोग।
ताके हिए प्रकासि है मिटै तिमिर हृदि रोग ॥ ९ ॥

इति श्री भजनाष्टक।

विषय—

प्रस्तुत दोनों अष्टक कृष्ण भक्ति विषयक हैं और पूर्ण रूपेण उद्धृत हैं। ये दोहा छंदों में रचे गए हैं और इनकी भाषा व्रज है।

संख्या ११८ क. नायिका भेद, रचयिता—नंद, कागज—देशी, पत्र—२६, आकार—४ × ८.८ इंच, पंक्ति—(प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४१, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

…रसु जोहै। तुम तें है तुम ही तें सोहै ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

रूप प्रेम आनंद रसु जो कछु जग में आहि।
सो सब गिरिधर देव कौ निधरक बरणौं ताहि ॥ ५ ॥

रसमंजरी अनुसार करि 'नंद' सुमति अनुसार।
बरणत वनिता भेद जहा प्रेमसार विस्तार ॥ ६ ॥

चौपाई

एक मीत हम सों अस गुन्यों। मैं नायका भेद नहि सुन्यों ॥
अरू जु भेद नायक के सुनें। तेउ मैं नीके नहि गुने ॥ ७ ॥

× × ×

मीन कमल के ढिग ही रहै। रूप रंग रस मधु लिह लहै।
तासों नंद कहत तब ऊतर। मूरप जन कौं मोह बड दूतर ॥

अंत—

॥ स्वयं दूती यथा ॥

दृष्टि परहिं जब मोहन लाल। पठई जु अंग अनंग विशाल ॥
धीयँ गलित गलित पुनि वीरा। तनकहि में ह्वै जाई अधीरा ॥ १०२ ॥

पिय तन तनक कनाखिन झकै।
नाभी कुच प्रगटै अरु ढकै ॥
कंदुक खेलै सखि कहुँ ढेलै।
पिय कौ हिय विलास छवि झेलै ॥ २०३ ॥
नयन सेन संकेत जनावै।
स्वयं दूतिका सुतिय कहावै ॥ २०४ ॥

॥ रति लक्षण ॥

उचित स्वधाम काम तौ करै। जानैं नहिंन कवन अनुसरै ॥
भूष पियास सबै मिटि जाई। गुरू जन डर रंचक कछु खाई ॥ २०५ ॥

मनकी वृत्ति पिय पैं इहिं डारा।
समुद मिली जस गंग की धारा ॥
तनक वात जौ पिय की पावै।
सौ वरियाँ सुनि तृप्ति न आवै ॥ २०६ ॥

\+ \+ \+

विषय—

प्रस्तुत 'नायक नायिका भेद' का विषय इसके नाम के अनुकूल ही है। यह ग्रंथ चौपाई तथा व्रजभाषा में लिखा गया है।

टिप्पणी—ग्रंथ आदि और अंत में खंडित होने के कारण इसका वास्तविक नाम तथा रचयिता के विषय में कुछ ज्ञात नहीं हुआ।

संख्या ११८ ख. नाम चिंतामणि माला, रचयिता—नंददास, कागज—देशी, पत्र—४, आकार ५×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४० पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह 'गहलोत', जोधपुर

आदि—

श्री कृष्णोजयति, श्री परमातमने नमः।
श्री कृष्ण कवल लोचन सुखकारी,
अविध भूत ईश्वर अवतारी ॥ १ ॥
तिनकी नाम चिंतामणि माला।
प्रेम सूत्र पोइ रचूं रसाला ॥ २ ॥
छवि दैनी चिंतित फल देनी।
बलि करूं तापर कोटि त्रिवेनी ॥ ३ ॥
जय श्री कृष्ण कृष्ण दामोदर।
तन नव जलधर हलधर सोदर ॥ ४ ॥

अंत—

कामधेनु कहु दैन काम वरु।
कलप तरनि कूं माहा कल्पतरु ॥३६॥
मंगलनिकौ माहा मंगलरूप है।
तातै यह कलि काल अनूप है ॥३७॥
तातै यह हरिनाम दास हित।
'नंददास' कै कंठ वसौ नित ॥३८॥

इति श्री नाव चिंतामणि माला संपूर्ण ॥

विषय—

नामों के पर्याय दिए गए हैं।

संख्या ११६. हारसमय या हारमाला, रचयिता—नरसीमेहता, कागज—देशी, पत्र—८०, आकार—८½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—८००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९४४ वि०, प्राप्ति-स्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ श्री हार समय मेता जी नरसें कृत हारमाला लिख्यते ॥ परबंध, राग आसावरी, भैताल, पद—

श्री दामोदर मंदिर स्वंदिर (अस्ताई)

गढ़ जुनो सुभ साज रे, भगती वंत ने सास्त्र अभ्यासी वृत्ति, वैष्णव मंडली
कनू राम रे ॥ श्री० दामो० ॥ १ ॥
एक समय में तो मुसाले आव्या; माला गृही कर हार रे।
सुर संन्या सखी साथे लीधी, करै कीर्तन राग अपाररे ॥ २ ॥
नित्य प्रति में तो मंदिर में आवे, वैष्णव भली गावे (श्री०) आर रे।
में तो जी मन प्रयत्न थई ने विष्णु कंठ आरोपे हार रे ॥ ३ ॥ श्री० ॥
चर्चा चाली सारा नगर में, सुणी माला आरोपीय तेह।
वैष्णव मलीने सीखज दीधी,
अज बूढे या करसो एह ॥ ४ ॥

अंत—

कहै दामोदर सांभल नरसी, हूं पेम प्रीत बंधाणो रे ॥ अस्ताई ॥
लोक लाज नूं कारण जाणी, महारो रावा केदारो बचाणो रे ॥ कहै० ॥

× + ×

भक्ति भागवत आइ सनातन श्री गोकुल नारायरे ।
भयौ नरसी हूँ दीन उगार्यो, ते संत चरण ने पसारय रे ॥
कहे दामोदर ॥७॥ पद ११६ ॥

इति श्री हार समय नरसी मेता कृत पद एक सो ने सोला संपूरण छै। संवत् १९४४ रा मिति श्रावण मासे शुक्ल पछे तिथि पंचमी ५ वार सोमवार लिखितं ब्राह्मण पुष्करण बोरा मंछाराम (?) जोधपुर मध्ये ॥ श्री रज्जु ॥ कल्याण मस्तु ॥

विषय—

भक्ति विषयक पदों का संग्रह ।

संख्या १२० क. नरहरि के कवित्त, रचयिता—महापात्र नरहरि, कागज—देशी, पत्र—२१ (३८ से ५९ तक), आकार—७.१ × १२.८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—संग्रहालय, हिंदी-साहित्य संमेलन, प्रयाग

आदि—

कवित्त नरहरि महापात्र के ॥ वादु लोहे सोने का ॥
प्रथजेपि (?) जगदीश कहँ करउ कवित्त रचिनेमु ।
जस निर्मल थिर चिर जिवे छत्रपति साहिं सलेमु ॥
एक समय मन मुदित उदित दौ पुरुष बुद्धिवर ।
एकु कंचन अरु लोह उप्प रिझझहि ते अमर नर ॥
तरनि तेज जगमगहि भेष सज्जहि विचित्र तहा ।
कविय गुनिय गुन कहहि झुकित झगरहि अप्पु मह ॥
वहु विधि विनोद वढ़ेउ वमु हे सोकहि नरहरि निरषीत नयन ।
पति लागि परसपर प्रगट हो सो जुगुति कुति वोल्लहि वयन ॥

अंत—

कनक तुला मन मुदित तन दान दिन कहि जो ग्रंथ गन ।
सत सहस गोलछि देत विधि सहित सुद्धमन ॥
अस्व रथ गज रथ वसन ग्राम गनि कहइ कौन कवि ।
बहुरि प्रगटि कलि करन सत्य हरिचंद प्रात रवि ॥
तेहि अथ्थ मुकुति अरु भुगुति द्वौ कही नरहरी तहाँ संचरिय ।
दुरगावति मात समथ्थ कौ कहु केहिविधि पटतर करिय ॥ १२४ ॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में महापात्र नरहरि के कवित्तों का संग्रह है। इसमें उनके दोहा, छप्पै,

कुंडलिया और विशेषतः कवित्त, संमिलित हैं जिनकी संख्या १२४ है। ग्रंथ का विषय विविध और फुटकर है। आरंभ में 'सोने और लोहे का झगड़ा' एवं 'तेली तमोली का झगड़ा' जैसे रोचक विषय हैं। इनके अतिरिक्त कुछ प्रशस्तियाँ हैं, परन्तु अधिक नहीं। कुछ कविता भक्ति भाव की भी है। जो हो, ग्रंथ की लिपि अत्यंत भ्रष्ट और दोषपूर्ण होने के कारण उसका बहुत कुछ अंश पढ़ा नहीं जा सका। अतः कवि की पूरी कृति का स्पष्ट रूप सामने आने से रह गया।

संख्या १२१. मंगल गीत, रचयिता—नवनिधि दास जी (स्थान—लखौलिया), कागज—आधुनिक सफेद, पत्र—९०, आकार—१०$\frac{3}{4}$ × ८$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) १३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७५५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचना काल—१९०५ वि०, लिपिकाल—सं० १९७४ वि०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत कन्हैयालाल जी पटवारी, ग्राम लखौलिया, डा०—नवानगर, जि०—बलिया

आदि—

(खंडित)

सीता सब्द सत है जोई। राम रूप घट व्यापक ओई॥
काया अवध भक्ति सर पावनि। जै जै कहत सकल अघ दावनि॥
सीता जनक लाड़ली नामा। दासरथि रघुनायक नामा॥
अवध समीप बहै सरिपावनि। जै कहते अघ सकल बहावनि॥
जैसु राम मँह अर्थं अनेका। कवन सकै कहि कहा विवेका॥

॥ दोहा ॥

जै सुराम सु अर्थं यह दुइता दुइत (? द्वैताद्वैत) विभेद।
नृगुन अगुण जुक्त करि सकल रसातल भेद॥
श्री गणेश मंगल करन श्री वल्लभ···
नवनिद्धि दास मानस···

\+ + +

श्रीवल्लभ वल्लभ गुन गायो। घड़ी पहर सुचि सो मन लावै॥
ता कंह सुख संपति धन मीता। दिन दिन बढै आयु अमीता॥

\+ + +

॥ दोहा ॥

"जन नवनिद्धि" विचारि के श्री वल्लभ गुन गाय।
जाते ममिता मोह कै दुख दरिद्र छुटि जाय॥

\+ + +

अंत—

मंगल

मंगल यह संवाद है मंगल शुभ आनंद ।
मंगल गीता नाम है मंगल परमानंद ।। ९८ ।।
मंगल पूरन काम भौ राम खेलावन नाम ।
मंगल शुभ सो भवन है मंगल सीताराम ।। ९९ ।।
नवल लाल बृजराज आजु खेले होरी हो ।
नवल वसंत नवल वृंदावन नवल लाल भरि झोरी हो ।।
घर घर ते निकली बृज बनिता एक सावर एक गोरी हो ।
तेहि विच सोभै वृषभानु नंदनी आनंद चंद्र चकोरी ।।
वाजत लाल मृदंग अनाहद ढोल मजिर डफोरीहो ।
नाचत ताता ता थेई थेई धुधुक धुधुक धुधुकोरी हो ।
"चंदरूराम" चंद्र भै पूर्ण ममिता त्यागि वटोरी हो ।।
जन नौ निद्धि ठाढ एक षंभ ते विनै करत कर जोरी हो ।

इति श्री मंगल गीता संपूर्ण संमत १९७४ सा० मि० दूजा भाद्रवदी २ हस्ताक्षर रामदास सिंह सा० हल्दी रामपुर ।

विषय—

निम्नलिखित विषयों पर रचना की गई है:—

(१) कवित्त गंगा जी के, (२) कृष्ण पुकार, (३) ककहरा या कहरा, (४) निर्गुण तथा सगुण विषय के पद, (५) फगुवा, (६) बारहमासा, (७) सिद्धांत संबंधी रचनाएँ, (८) रामखेलावन वाक्य, श्री नवनिधिदास और उनके पुत्र का संवाद । इसमें आत्मज्ञान, संत महिमा, अनुभव वर्णन, राजनीति और तुलसी महात्म्य का वर्णन है ।

कृष्ण पुकार में एक संवत् दिया है जो इस ग्रंथ का रचनाकाल माना जा सकता है:—

त्रिपन छपै जानिए कृष्ण चरित्र शुभ सिद्धि ।
संमत उनइस[१९] सौ पांच[५] सै भाषेउ जन नवनिद्धि ।।

टिप्पणी—पुस्तक का प्रथम पत्र लुप्त है । इसके पश्चात् के ९ पत्रों का अधोअंश खंडित है । रचयिता जाति के कायस्थ थे । ग्रंथ स्वामी का—जो रचयिता के वंशज हैं—कहना है कि ये इसी ग्राम—लखौलिया के निवासी थे । इनका वंश वृक्ष इस प्रकार है:—

नवनिधिदास
|
रामखेलावन
|
महादेवलाल
|
×

रचयिता चार भाई थे, जिनके नाम क्रमशः मनबोधदास, जोधदास, नवनिधिदास और गतिदास थे। इस समय केवल मनबोधदास जी का वंश चल रहा है। शेष भाइयों का वंश एक एक दो दो पीढ़ी पश्चात् रुक गया। इस समय ग्रंथस्वामी ही इन सबके उत्तराधिकारी हैं। ये मनबोधदास जी की चौथी पीढ़ी में हैं। नवनिधि दास जी प्रस्तुत ग्रंथ में अपने पुत्र को उपदेश भी करते हैं। इन्होंने अपने गुरु का नाम 'चनरूराम (रामचंद्र) लिखा है। लोगों के कथनानुसार चनरूराम का शुद्ध नाम 'रामचंद्र' है। ये (रामचंद्र) उच्च कोटि के कवि थे। उनका निवास स्थान चंदाडीह था जो लखौलिया से एक मील की दूरी पर है। उनके वंश में एक सदाचारी पुरुष अभी भी उस ग्राम में रहते हैं जिनका नाम श्यामाचरण दास है जो परमहंस कहे जाते हैं। लखौलिया से थोड़ी दूर पर नवनिधिदास जी का मंदिर है जहाँ प्रत्येक वर्ष चैत्र पूर्णिमा को संत संमेलन होता है।

संक्षिप्त विवरण में उल्लिखित कबीर के अनुयायी नवनिधिदास प्रस्तुत रचयिता ही ज्ञात होते हैं। यद्यपि इन्होंने निर्गुण भक्ति विषयक रचनाएँ की हैं तथापि ये सगुणोपासना का भी गुणगान अच्छी तरह करते हैं। इस दृष्टि से इन्हें कबीर पंथी मान लेना उचित नहीं जान पड़ता। ग्रंथारंभ में इन्होंने 'श्री वल्लभ' और 'वल्लभ' स्वामी का भी उल्लेख किया है, यथाः—

॥ श्री वल्लभ श्री वल्लभ स्वामी। गोकुल नायक अंतरजामी ॥

अतः भले ही इन्होंने कुछ निरगुन विषयक रचना भी की, फिर भी ये कबीरपंथी नहीं कहे जा सकते हैं।

संख्या १२२ क. वर्द्धमान पुराण, रचयिता—नवलदास साहि, कागज—देशी, पत्र—१४६, आकार—७ × १०·३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ट)—१५, परिमाण—(अनुष्टुप्)—५९८६, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८२५ वि०, लिपिकाल—सं० १९५१ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसिपल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

ॐ नमः सिद्धेभ्यः अथ श्री वर्द्धमान पुरांण भाषा लिख्यते ॥ दोहा ॥
ऊवंकार उच्चारि करि ध्यावत मुनि गण सोइ।
तामै गर्भित पंच गुरु तिन पद बंदौ दोइ ॥ १ ॥

गुण अनंत सागर विमल विश्वनाथ भगवांन।
धर्म चक्र मम वीर जिन बंदौ सिर धर पांन ॥ २ ॥
सिद्धारथ कुल कमल रवि त्रसला उर अवतार।
वंदौ सनमति चरण जुग सुभमति के दातार ॥ ३ ॥

छप्पय

जापूरवं अवतार मास षट वैन वलौवर ॥
वरषे रत्न अमोल सुभग छविवंत पिताधर ॥
देष सुअतिशय रूप हेम गिर कर्यौ न वनसुर ॥
त्रपति भयौ नहिं कोइ किये तव सहस अक्षर उर ॥
वर्द्धमान श्रिय वर्द्धअति मांन कीर्ति जग में सही ॥
मान वर्द्ध हिरदै नहीं सुवर्द्धमांन वासव कही ॥ ४ ॥

अंत—

दोहा

उज्जिय अंत विक्रम नृपति सवतसर गति तेह।
सत अठार[१८] पचिस[२५] अधिक समय विकारी येह ॥
सं० १८२५ वि०

× × ×

काय नवल अरू मन नवल, वचन नवल विसराम।
नव प्रकार जुत नवल अति 'नवल साहि' कवि नाम ॥

× × ×

पंच परम गुरु जुग चरण भविजन बुध जुत धाम।
कृपावंत दीजै भगति दास नवल परनांम ॥

इति श्री वर्द्धमान पुराणे भाषायां भगवत विहार गमन सकल देसांतोयात् श्रेणिक कथा भगवत निरवाण कल्पं'''''नाम षोडस्रोत्विकार'''''मिती वैसाख सुदी १३ गुरुवार सं० १९५१ तादिन पूण लि० पं० चोबे पेमचंद ॥ आगासौद ॥

विषय—प्रस्तुत 'वर्द्धमान पुराण' में भगवान महावीर का पवित्र चरित्र वर्णित है। यह ग्रंथ जैन धर्म विषयक है।

संख्या १२३. जालंधर जुद्ध, रचयिता—नवलराम (संभवतः), कागज—देशी, पत्र—७, आकार—५$\frac{3}{4}$ × ४$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३५ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० दीपचंद जी, ग्राम—नोनेरा, डा०—पहाड़ी, रियासत, भरतपुर

आदि—

अथ जालंधर जुद्ध लिषते ॥

कंठ सुरसति सुमर प्रेम आद मनाऊं।
मात पिता गुर सुमरि सिर भक्तन कुं नाऊं ॥
मानुसिंघ ते मथ लई गुर गन कथ गये ग्यान।
विसुवा सुरजे हर कूं सुमरै जैने मिलै भगवान ॥ साध गुन गाइये ॥

नेम धर्म व्रत करै पाप हिरदैं नहिं लावै ॥
आठ कातिग नौमाह प्रीति हर सूं जु लगावै ॥
नेम धर्म व्रत आगलि भगत करी येक ठावै।
राजा वगम लाड़ली श्री बृंदा वाकौ नाम ॥ साधु गुन गाइये ॥

शिव सुतहू प्रचंड तेग आपनि विराजै।
विंदा कू वह जीत व्याह जालंधर चाहै ॥
सुर नर मुनि सब खंग त्याग गये काहू न रही है टेक।
आय मिलौ जवंग वै राजा लै वृंदा की भेट ॥ साधु गुन गाइये ॥

अंत—

बुरी करी तै नार सोच जिया नैक न कीनो।
तनक न राषी कान तुरत ही पलटौ लीनो ॥
अबकौं जनम वकस दै त्रिया वौहौर न विछरू तोही।
हम तौ देह धरै गन गंद्रफ तुम कल तुलसी होय ॥साधु गुन गाइये ॥

वै कल तुलसा हुई देह पानन की पाई।
नार पुरुष औतरै आन कै पूजा चलाई ॥
त्रीया चर्चन जान कै भगत करौ चित्त लाय।
सो या लीला सुनै और गावै तारपान बलराज ॥

इति श्री जालंद्र जुद्ध संपूर्ण। मिती आसौज सुदी संवत् १८३५ बुध वासरे।

विषय—

जलंधर और वृंदा की कथा का वर्णन किया गया है।

संख्या १२४. नागड़ा रा दूहा, रचयिता—नागड़ा, कागज—देशी, पत्र—३ (सं० ५ से ७ तक), आकार—७½×४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

सूतो सोड़ धरेह, पीऊ पडुर पचेवड़ो।
सादे सादन देह, आज नहेजो नागड़ा ॥ १ ॥
टीपा टपटपियांह, विण वादल विछूटियां।
आंख्यां आम थयाह, नेह तुमीणो नागड़ा ॥ २ ॥

अंत—

जे तलियां जग मांहि, बातां बीचै बातियाँ।
अही उहांही मांहि; निबंध्यो न मिटै नागड़ा ॥१९॥
अह्मांडं लगतांह, मोटाई मांनों नही।
पाथर पूजतांह, निफल न हुवै नागड़ा ॥२०॥

नागडै रा दूहा

॥ संपूर्णं ॥

विषय—

नीति के २० सोरठे

संख्या १२५. वाणियाँ, रचयिता—नागाअरजन। इनकी वाणियाँ संख्या ५६ के विवरण पत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त संख्या का विवरणपत्र।

संख्या १२६. पावस पचीसी, रचयिता—नाथकवि, कागज—देशी, पत्र ८, आकार—६$\frac{3}{4}$×४$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण, (अनुष्टुप्)—१४०, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, रचना संवत्—१९३७ वि० = सन् १८८० ई०, प्राप्ति-स्थान—पं० परसुराम जी चतुर्वेदी वकील, स्थान, बलिया, जि० बलिया, (उत्तर प्रदेश)

आदि—

अथ पावस पचीसी

॥ नाथ कवि कृते ॥

॥ दोहा ॥

सघन विघन गनपति हरैं दुख दामिनि को दारि।
सुख वरषा वरखैं हरख नाथ साथ हितधारि॥

॥ कवित्त ॥ घनाक्षरी ॥ राजा का रूपक ॥

कामिन के काज दलसाज दलवे कौ आज महाराज पावस सुराज रूप धारे हैं।
कारे कारे वादर मतंग मतवारे भारे सितासित वारे हय गरज नगारे हैं।

विज्जु छटा छटा वरि भटा केसे पटा झारैं वूंदिन की झड़ी वड़ी तीर के कतारे हैं।
'नाथ' कड़खैत के से दादुर बहादूरसे बलाका पताका पौन पंछी हरकारे हैं ॥ १ ॥

॥ मंत्री का रूपक ॥

मोतीमाल है विशाल भली सी वकावली की पंचरंगी वादर है चादर सुरंग के।
पागरी लता की वांकी फव है अजब पेंच सरपेच फूलन के छाल पटरंग के।
छूरी केवरा की तासु धूरी पूरी ओप आन वीजुरी कृपानवान वूंदी धनुसंग के।
दासैं खग मृग रासैं 'नाथ' मंज कुंज भासैं पावस सुसाहव से साहब अनंग के।

मध्य —

॥ कसाई रूप ॥

अति अँधयारे घन कारे से नकारे भेष मैली कुचैली सी धोती छालन की छाइ है।
वार करैं विज्जु तलवार धार विरही पैं रसरीलता की वाँकी फँसरी बनाई है।
खासा गँडासा का सा सुधार डारपात जुत पूरी छूरी केतकी की धूरी तासु लाई है।
गायसी विरहिनी को ती को हाय 'नाथ' विन नेकहूवसाई नाहि पावस कसाई है ॥१३॥

॥ गज रूप ॥

आगे सटकारी कारी घन की रे धारी सुंड पाछे एक धारी लघु पुच्छ से लफायो है।
बूँदीसुंड सीकर सी छोड़े जनु सीकर सी दांत वकपाँत गुंज घंटा घहरायो है।
गर्जन चिक्कार के प्रकार है अपाररव तडित सुहौदा हेम जड़ित सुहायो है।
'नाथ' विनु साथ सखि आज तो हमारे द्वारे पावस मतंग मतवारे भाँत आयो है ॥१४॥

× × ×

॥ फिरंगी रूप ॥

फुरतीले कुरतीले टोपी पतलून मेघ वीजुरी सी तड़प झड़प हूँ विहंगी है।
फूली लता घड़ी चेन, वकावली छड़ी केन, झींगर भँवर वाजे अरगन रंगी है।
आशव खजूर सो हजूर मधुपान करैं, कंद कूट विसकुट छाल जंगी है।
कुंज···लै मेनेम संग ले मयूरी मेम; दास खगमृग 'नाथ' पावस फिरंगी है ॥ २ ॥

अंत —

॥ शिवरूप ॥

लता की जटा की छटा गज खाल घोर घटा मेघधार गंगधार विज्जु चंद छायो है।
वकमाल मुंडमाल जूगनू नयन भाल, वघछाल पीले पातकेला कौ सुहायो है।

भूरे से भसम सम पुहुप पराग राग अपराजिता फनीस सर सूल भायो है।
मयूरी सुगौरी श्रृंगीभृंगी नादकौरी आज पावसमों पौरीगौरी 'नाथ' बनि आयो है ॥२५

॥ दोहा ॥

द्वीपन[७] में द्रग[३] शंभु के निधि[९] धरती[१] की जान।
जन्म मास व्रजनाथ को मंगल कर कल्यान ॥

॥ शुभम् ॥

विषय—

वर्षाऋतु का राजा, मंत्री, पहलवान, नट, बाजीगर, पंच, पंडित, जोगी, चोर, डाकू, बधिक, कसाई, गज, सिंह, पथिक, गवैया, दूलह, सूम, काम, इंद्र, फिरंगी, कामी, वीर, और शिव का रूपक बनाकर २५ कवित्तों में वर्णन किया गया है।

रचना काल

॥ दोहा ॥

द्वीपन[७] में द्रग[३] शंभु के निधि[९] धरती[१] को जान।
जन्ममास व्रजनाथ को मंगल कर कल्याम ॥

विशेष ज्ञातव्य—हस्तलेख में लिपिकाल नहीं दिया है। इसके मुख पत्र पर किसी लोकनाथ चौबे की पेंसिल में निम्नलिखित टिप्पणी है जिसमें नाम और पता अंग्रेजी में दिया है :—

शुभाशिषः

कृपा कर मेरे श्रम को विचार कर शीघ्रतर इसे छापिये। और एक कापी मेरे पास भेजीये। भारतमित्र के एक पेज (अंग्रेजी अक्षरों) में पूरा होगा और संपूर्ण एकी वार छपने में अच्छा होगा नहीं तो इसका मजा जाता रहेगा।

लोकनाथ चौबे,

ऐट जम्बू सीटी

केर ऑव पंडित गनेश प्रसाद चौबे

चीफ जज ऐट जम्मू

इससे पता चलता है कि काश्मीर जंबू से यह पुस्तिका 'भारत मित्र' में प्रकाशनार्थ भेजी गई थी।

ग्रंथकार, नाथ कवि के विषय में कुछ पता नहीं चलता अनुमान से लोकनाथ चौबे वही विदित होते हैं।

संख्या १२७. प्रबोधचंद्र नाटक, रचयिता—नानकदास, कागज—देशी, पत्र—१५७, आकार—६ ४ ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२३७, पूर्ण, रूप-सुन्दर, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८४६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

ओं स्वस्ति श्री गणेशाय नमः अथ प्रबोधचंद्र नाटक लिख्यते, नानकदास कृत ओं नमो भगवते वासुदेवाय ॥ दोहरा ॥

विध्नन हरन मंगल करन क्षेम कुशल परसदि।
ऊस्तति ऊस्तंति जोग हरि हितकर ऊचरों आदि ॥ १ ॥
जगत नाट जिसु नट रच्यो ऊपतषपत समरथु।
मैं तिस कर्त्ता पुरुष को ध्यावत मंगल अरथु ॥ २ ॥
नरु नारायण को प्रणाम श्री गुरू चर्ण जुहार।
बोधचंद्र नाटक कहों सुनो संत चितधार ॥ ३ ॥

चौपाई

दक्षण देश अवंती नगरी। जाकी प्रजा धरम रत सगरी ॥
तहा रहे कृस्नदास भटनाम। अति प्रवीन पंडित गुन ग्राम ॥
परम विवेकवान हरि भगत। अहिनिस कृस्न भगत आसक्त।
तिनका एक शिष्य था मूढ़ जो बनकर चंचल।
गुरु ताको उपदेश बतावै। पर वहु मंत्र हृदै नहि लावै।
जद्यपि गुरू उपदेश न धरै। पर गुरुकी सेवा नित करै ॥
ताते गुरू को लगे पियारा। चाहे शिष्य का होय ऊधारा।
ज्ञान मुक्ति दायक नर देहा। भजन करन को अवसर एहा ॥

\+ + +

यह पोथी पूरन करी "बली राम" हरि संत
ताको भाखा में रच्यो, "नानक दास" विनवंत ॥ १ ॥

अंत—

दोहरा

मरो जीवरा होइरहु जे पात है लाल।
मरो जीवरे की भई या चहु विध की है चाल ॥ १८६ ॥

प्यारे के कर जेवरो हाथ हथेली प्रान ॥
मुखों मौनता सीस सों चलणों पंथनिवान ॥ १८७ ॥

इह इतहास पुनीत बड़ जहाँ अध्यात्म ज्ञान।
पढ़े सुने जो प्रीत सों पावैं पग भगवान ॥ १८८ ॥
सवत सत अखादस[८] अवर षष्ट[६] चालीस[४०]।
मंवर शुक्ल पंचमी पोथी पूर्ण करीस ॥ १८९ जोड़ ७३० ॥

इति श्री प्रबोध चंद्र नाटके पष्टमों अंक समाप्तं ६ ओं नमो भगवते वासु देवाय ओं नमः शुभम्

विषय—

६ अंकों में, विवेक, वैराग्य, मोह, काम, दंभ, श्रद्धा, शान्ति आदि के कलह वर्णन द्वारा ब्रह्म ज्ञान का उपदेश वर्णित है। कथा मुख्यतया वेदान्त की परिपाटी पर अवलंबित है।

संख्या १२८ क. दत्तात्रेय सत्संग उपदेश सागर, रचयिता—नायक, कागज—देशी, पत्र—२०, आकार—१०½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप)—५६२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२२ वि०, प्राप्तिस्थान महंत श्रीरामचरितर भगत, स्थान और डा०—सनिअर (मठ), जि०—बलिया

आदि—

श्री गनेसायेनमः श्रीरामानुजाये नमः
लीष्यते दात्तात्रेई सतसंग उपदेस सागर।

॥ दोहा ॥

गुरु दयाल लषी शीष्य जव पुछत भए रुचि वएन।
स्वामी कहिये बुझाए मोहि समुझत होए हीए चएन ॥ १ ॥
दातात्रेय मुनीशवर जोगीराज निधान।
चतुरवीस गुर कीन्ह जो कामन करि अनुमान ॥ २ ॥
भाव गहत की ग्यान गुर कीधौं फुंकावत कान।
केहि केहि बीधि मुनि कीन्ह गुर सो सब कहीअ वीधान ॥ ३ ॥
कही पुरन पद प्रेम करि रूपक लछन भेद।
जेहि विधि ते होए राम पद नसै वीपै रस पेद ॥ ४ ॥

श्री गुरोवाक्य ॥ दोहा ॥

सुनहु सीष नीज भेद यह वेद पुरानन्ही गाव।
संतन्ही के मत दीठ करे पुनी भवसागर नाव ॥ ५ ॥
मुनी सुषदेव एह कहिगयो सूनही परीछत राए।
सो मत तुमसे कहत हों वेद वीहित एह न्याए ॥ ६ ॥

अंत

दोहा

ग्यान वीमल सतसंग यह कहेऊ प्रछीतराई ।
षोजी होई सोपाई हे शंत संघती में जाइ ।। ८४ ।।

ईतीश्री उपदेस सागर दात्तात्रेय सतसंग चौवीस गुरू उपदेस करनो नाम चौबीसमो बोध परीकरन ।। संपूरन समापत सुभ समत् १९२२ समै नाम मीती असान्ह सुदी ।। ३ ।। वार सोमार पठनार्थक रामसरन राम कोईरी वो रामलगन राम कोईरी साकीन मनीअर प्रगने षरीद जीले गाजीपुर० ।। दसषत हस्ताअक्षर गंगाराम कायेस्थ मोकाम मनीअर प्रगने षरीद जीले गाजीपुर सन १२७२ साल मोः मनीअर ।।

विषय—

दत्तात्रेय और उनके चौबीस गुरुओं की कथा वर्णित है ।

संख्या १२८ ख. सर्व सिद्धांत श्रीराम मोक्ष परिचय, रचयिता—नायक, कागज—देशी, पत्र—२५४, आकार—१०½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—५३३४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य और पद्य, लिपि—नागरी । लिपिकाल—१९२२ वि० = सन् १८६५ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत श्री रामचरितर भगत, स्थान और डा०—मनिअर (मठिया), जि०—बलिया

आदि—

श्री रामानुजायेनम् ।। सर्वं सीध्यांत श्रीराममोछपचे ।।

।। दोहा ।।

श्रीगुरु चरन सरोज उर आनत सबसुष पुरि ।
जासु वचन रवि उदित भव मोह महातम दुरि ।। १ ।।

।। दोहार्थं ।।

एह ग्रंथ को नाम सर्वं सीध्यांत श्रीराम मोछ
प्रचे धरेव है ताकौ अर्थं सर्वं सीध्यांत

कही सब वेद सव उपनिषत सब स्त्रीती सब शंहिता सब पुरान सब इतिहास सब रामायेन के सीध्यांत श्री राम नाम श्री रामस्वरूप श्री राम रामधाम श्री रामलीला है सोई मोछ रूप कही संसार बिस्मरन प्रम पद के प्रास ताहि के प्रचे कही चीन्हव एह ग्रंथ मो वरनन करेगे ताते एह ग्रंथ के नाम सर्वं सीध्यांत श्री राममोछ प्रचे कहे अरू टीका को नाम प्रमानंद लहरी धरे है ताको अर्थं ।। जैसे अनेक नदी है अनेक नाम है ।। जते जुदा जुदा वहत है ततें भीन्न भीन्न नाम माहातम है ।। जब सब नदी एक समुद्र ही मो मीलो है तब

सर्व नदि नाम माहात्म मिटि के एक सामुद्रहि भयो ॥ जाते सर्व नदीन्ह को पुर्व ॥ सरूप सामुद्र प्राप्त भयो तब जल एक रस निर्मल थीर भयो प्र अगम लहरी बनो है ।

अंत—

अवध में राज काज करे सब लोग को सीषाये हे ।
जाके पद अगम कहत वेद सास्त्र सो दुर्लभ दरस मुनि ध्यानन्ह मो पाये हे ।
अबसो रामचंद जाको वेदहु न अंत पावै भगतन्ह के हेतू नरलोक में कहाये हे ।
'नायेक' कहत सब भांति सुष दीन्ह प्रभू दीन के
दयाल नीज लोक के सीधाये हे ॥ ३४ ॥

॥ सोरठा ॥

हरि महि भार उतारि सुर मुनि सूष सरवदए ।
पुनि निजलोक शीधारि चारि भूजा रूप प्रगट करि ॥ ३५ ॥

इति श्री सरव सीध्वांत श्री राम मोछ प्रचे पुर्व तीनि कल्प श्री रामचंद्र अवतार लीला चरीत वरनमो नाम सपत दसमो स्तरंग ॥ १७ ॥ ईती श्री कथा राममोछ परचे समापत संपुरन शुभ समत १९२२ शमै नामनीति शविनमासे शुकुल पछे शोम वासरे पूनिर्वा पठनारथ रामसरन सन् १२७२ शाल ॥

विषय—

ब्रह्मज्ञान तथा श्री रामचंद्र जी के तीन कल्पों के अवतारों की कथा का वर्णन किया गया है । ग्रंथ १७ तरंगों में है जिनके नाम नीचे दिए जाते हैं :—

संख्या १२६. कवित्त सुकवि नित्यानंद के, रचयिता—नित्यानंद 'सुकवि', कागज—देशी, पत्र—१ (खर्राकार), आकार—८ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—८२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पंडित दयाशंकर जी मिश्र, मोहल्ला—गुरुटोला, आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्री गणेसाय नमः अथ कवीत सुकवि नित्यानंद कृत लिष्यते ॥

॥ कवित्त ॥

मंजुल मराल मन रंजन मनोहर सी मुकुत महसी मकरंद मधुबृंद की।
पावन परम पद पवन प्रकासभान पूरन पुनीत परमानंद पसंद की।
'नंदभनि' निगम अगम कहे नेति नेति मरक निवारन सेस दुति मंद की।
बरनत बरन करन सुष सिर धरि चरन सरोज रज पावन मुकुंद की ॥ १ ॥

॥ श्री गुरु चरनन बरननं ॥

करुन कमल कल कोमल कपाल कमनीय कमलालय प्रभाकर प्रभान के।
सुंदर सवास वास विविध हुलास आस विधि को सदाइक सहाइक सुग्यान के।
रंजित पराग रज अजित द्रगन जग मागत जगत तम नासक अज्ञान के।
मुदित मलींद मन रसिक मकरंद नंद वंदो अरविंद पद सुकवि निधान के ॥ ३ ॥
तामरस लोचन गोविंद अरविंद मुष सुषमा सदन सुषदाइ जग जाल को।
सदाब्रज जीवन सजीवन जसोमति को तेरे ढिग ठाढोरी सराहृ भाग भाल को।
नंद जनिहारी मनुहारि कर पांइपर धाइ धरी लाउ उर उठि नंदलाल को।
माषन करे री मन राषन निहार ग्वारी चाषन दे माषन री मदनगोपाल को।
कलित कलंक न ससंकन मयंक अंक अंकतन पंक संक सुरभान मद की ॥
छविधर छपान छपाइ छबि छाजतन सांइ परीछित को न छुद्रछल छंद की।
राका रजनीस तम पीवन सुदीस तन उकति विचारि नंद जुगति पसंद की ॥
छीर निधि गगन मैं फनिंद कुंड क्रत पै सोवत लसत प्रभा पूरन मकुंद की ॥ ४ ॥
अंवर अवास वास विमल प्रकास कर विविध विबुध गुन गावत महानी के।
चांदनी वितान तारे मुकुतान झालरै सो कलित ललित दुति दीसत प्रभानी के।
रितुराज राका रजनीस उर स्यामता न वरनि अनूप 'नंद' जुगति बषानी के।
सुधानिधि सेजपर सुषमा निवास किधों विथुरे विलास के सवास रमारानी के ॥५॥
सीतल सेज स्वछ अछ परसत गीत नवल धवल छिति छोर लों प्रभासी है।
उडगन मोती महि मंडित अषंड जोति सहित मकरदुति दीपति सुधासी है।
'नंदभनि' वीचनी मरीचनि सों झलकत ललकत राका पाय कौतुक कलासी है।
छीर निधि चंद्रिका मैं इंद्र उर स्याम ज्यों फनिंद सेज सोवत मकुंद अविनासी है॥६॥
मंदिर उठाइ ब्रज राषो पुरंदर ते झारो ग्राह तेड वारो अव अवल महाकरी।
कीनी सिधि सुह्रद सुदामा जु के धाम ठाम द्रोपदी की राषी पति सुनत सुहाकरी।
तारन तरन असरन के सरन नंद वीरद विसारो यते हहर हहाकरी।
आरत पुकारत निहारत न नेक अब करुना करन कान्ह करुना कहाकरी ॥ ७ ॥
पूरन प्रकासमान भासमान भासमान जासमान अंनन अमान दुतिरासी के।
पायतन ताप के सताप के हरनहार वारिज वरन जोग जुगत प्रकासी के।
'नंद' भनि गुन मनि जटित अटित छबि छाजत छबीले छिति छुद्र छलनासी के।
वंदित मुनीश्वर महीश्वर छतीश्वर से संकट हरन पग वंकट बिलासी के ॥ ८ ॥
मंडन मही के रघुकुल कलनी के प्रेम नेमवतजी के ही के अवध विलासी के।
दंडक अषंडन न पावन करन दल दानव दरन वर सेसा चल वासी के।
सेबत अगाध संत पावत प्रसाद जग मेटत विषाद मेघनाद मदवासी के।
वंदत मुनीश्वर महेश्वर छतीश्वर से संकट हरन पग वंकट वीलासी के ॥ ९ ॥
दान वरदानी विधि गावै वेद वानी सदा सारदा वषानी बात मानी मोदरासी के।
असरन सरन परन परिमानि मानि जानि दीनपाल दीन धाम सुपरासी के।
'नंद' लषि आवै ते परमपद पावै फेर अवननि आवै लोभ छोभ छलवासी के।

वंदत मुनिश्वर महीश्वर छतीश्वर से संकट हरन पग बंकट विलासी के ॥ १० ॥
भवभय वारिध के वोहीत अनूप रूप निरलंब अवलंब विरद प्रकासी के।
तत्वग्यान ध्यान के निधान सुरमानत है तिमिर अग्यान दीप दीपति सुभासी के।
जनमन मधुकर के है अरवृंद नंद पावन त्रलोक सोक हरन निवासी के।
वंदित मुनीश्वर महीश्वर छतीश्वर से संकट हरन पग वंकट विलासी के ॥११॥
अरुन वरन दुति धरन हरन दुष भरन सकल सुप सुषमा सुधासी के।
भावन सुहावन है दाहन दुसह दुष पावन अमरपद हद दुति नासी के।
'नंद' नवनीति हुते नरम निहारियत नीरजनी कोइ वारि पारिजात वासी के।
वंदित मुनीश्वर महेश्वर छतीश्वर से संकट हरन पग वंकट विलासी के ॥ १२ ॥
रोधन कुबुधि वसुधा के वुधि वोधन ते सोधन असेप मुक्ति जुक्ति गुन रासिके।
तंत्र तन तत्व से है मंत्र अनुरक्त से हे जगत विरक्त सक्त जुत मनवासी के।
'नंद' सुष कंद से सकल सुरवृंद से सो सेवत अनंद जगवंद अघनासी के।
वंदित मुनीश्वर महीश्वर छविश्वर से संकट हरन पग वंकट विलासी के ॥ १३ ॥
सीतल सुवास वास हीतल निवास कर परम प्रकास भास करत जरासी के।
सिद्धि नव निद्धि वृद्धि दायक सहायक से सब जगलायक सुभायक निवासी के।
नंद भनि निरषत पावत परम पद गावै श्रुति सारद विसारद सुवासी के।
वंदित मुनिश्वर महीश्वर छतिश्वर से संकट हरन पग वंकट विलासी के ॥ १४ ॥
सगुन रजोगुन से रंजत निहारियत वारियत वारीजात गात दुतिरासी के।
तम तेज नायक से परम प्रभाइक से त्रभुवन नायक अषील मनवासी के।
मन जन रंजन असुर दल भंजन है अंजन विहीन छवि लीन अघनासी के।
वंदित मुनीश्वर महीश्वर छतीश्वर से संकट हरन पग वंकट वीलासी के ॥ १५ ॥

कवित्त रामचंद्र की

विकट कपि कटक संघठ उदद भटन के दपटि दल चलत रघुवीर अवनीस के।
गिरत गिरी वंक उठि उदधि सैं पंक सुनि पंक गढ़ लंक उर संक दससीस के।
दुषित दिगदंत दिगपाल भयवंत तरु भरत अनंत बलवंत वलषीस के।
अवनि हलत कुल कोल कल मलत ततल कछतल मलत फन मलत फनीसके ॥१६॥
जलधि उछलत तिहुलोक षलभलत मही मेरु पति हलत मन डुलत अतिधीर के।
बदत उर संक थीर रहत नहि लंक दसमथ्य मदरंक अतंक सुनि नीर के।
अनिल की ज्वाल अति कटत विकराल दिग दुरत दिगपाल छितिपाल वहुभीर के।
कोप परचंड कर त्रिभुवन दल षंड जब गहत कोदंड भुजदंड रघुवीर के ॥ १७ ॥
बाल उर फारि षरदुषनहि मारी दल दनुज संघारि हंकार धाए।
समर जैधीर गंभीर दोडवीर अब कपि कटक लै नीकट छाए।
समुद मद दूरि करि सेतु गिरि पुरि भरि भुवन जस भुरि सुर सुजस गाए।
कहथ दसमाथ तुम ताहि नरनाथ पथ पाथ करि नाथ रघुनाथ आए ॥ १८ ॥

मारयो मेघनाद सुनि स्रवन सुलोचनि के लोचन स्रवत जल मुरति अंदेस की ।
जाचो जगदीस पति सीस मोहि दीजिए जु कीजिए सनाथ नाथ आरत संदेश की ।
सुनि दीन बात जल जात नैन जलजात पुलकित गात भुली सुरत सुरेस की ।
तेरोपति ह्योडराज साज दै पठाउं सुनिवानी अबलीजै रजधानी कौसलेस की ।।१९।।
चारो वोर समुद विहद नदहद कीने दुधष्ट दुरंत कोटि ओठ पुर परके ।
कोटिन कराल काल गंजन विकट वली निकट क्रपान गहेवीर निसिचर के ।
मानत न संक वंक रहत निसंक अंक 'नंदभनि' पाय वरदान दानी हर के ।
वैनवर चर के सुनत हिय हरषे सो करके उदंड भुजदंड रघुबर के ।। २० ।।
पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

राम कृष्ण की वीरता का वर्णन किया गया है ।

संख्या—१३० क. कवित्त हजरत अली साह मरदान सेरे खोदा सलबातुलाह अलेहवाल हीबोसलम की हाल गढ़ खैबर की लड़ाई का तथा कवित्त हजरत अली के मांजिजा के, रचयिता—मैनकवि, कागज - देशी, पत्र—११, आकार—९ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ), १७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि-नागरी और कैथी मिली हुई, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत महेश्वर प्रसाद वर्मा, ग्राम—लखनौर, डा०—रामपुर, जि०—आजमगढ़

आदि—

कवित्त है हजरत अली साह मरदान सेरे षोदा सलबातुलाह अले हवाल हीयो सलम की हाल गढ़ पैबर की लड़ाई का ।।

पर्वतान थहरान भाग असमान भुलान्यौ ।
अतल वितल चल उथल विकल सेस डेरान्यो ।।
मछ कछ आरछ गछ सागर विनुपानी ।
रात दिवस ह्वै गयो धुंध चहुदिस छितरानी ।।
धव धकान अरी को हियौ 'नैन सुकवि' तबयौं पढौ ।
जवे सेर अलाह के सनि सिलाह पैबर चढौ ।। १ ।।
गिरयौ गर्भनी गर्भनाह तन लषत न नारी ।
पवन गवन रहिगयौ अर्याभो चक्र कुभारी ।।
दसो दिसा डग मगी वगी गढ दिसा सिरानी ।
सेस देस 'कविनैन' बनै नहि कहत कहानी ।।
धूर धार लागी गगन, गरजि बंव उछाह की ।
कोह कोह अंदोह जग चली सवारी साह की ।। २ ।।

अंत—

दुल दुल सवार दल काफिर विडार अमियौंके
मोषतार औलियों के सरदार है।
सायल के बार को विकाने कई बाना लगायो
सो अवारनाम मुसकिल कुसार है।
संकट अपर पर्यो सलिमा पुकारत हा
भयो कनहार त्योंहु लास को संभार है।
दीन्हो जुलफिकार जिन्हें परवर दिगार अली हैदर
करार लाफताके ताजदार है ॥ १६ ॥

सिंधु समान जहान के बीच में सीप मदीने की राची थली है
साईं सेवाती को रूप धरे वरष्यौ रसषान जो भाँति भली है।
नूर को नीर पर्यौ तहाँ आइ जहाँ अबद्ल जी की गली है।
चारो विचारो निहारि सबै मिलिमो ··· ··· ···

अपूर्ण

विषय —

हजरत अली की खैबर की लड़ाई तथा हजरत अली के माजिजा का वर्णन क्रमानुसार छप्पय और कवित्तों में किया गया है।

संख्या १३० ख. अंगद रावण संवाद, रचयिता—नैनकवि, कागज—आधुनिक, पत्र—३, आकार—१०½ × ८½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६८, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत महेश्वर प्रसाद वर्मा, ग्राम—लखमौर, डा०—रामपुर, जिला—आजमगढ़

आदि —

सिंधु वाँधि उतर्‌यौ कहूँ भनक परी कवि नैन सो।
सोइ कहत है कपित हूँ रामचंद्र सुनिअत मुको ॥ ३ ॥
गरुडध्रुज गोविंद गरुडगामी गरुडासन।
स्रीपति स्रीधर स्रगुन सिरीमुष हाँस प्रकासन।
कमल नैन कवि नैन कमल करतारु विलासी।
स्याम रंग नवरंग गंग निज चरन उजासी॥
सदाछीर सागर सयन अैन वंस अवतंस भू।
सोइ रामचंद्र दसरथ सुअन रे दसकंधर मंद तू ॥ ४ ॥

+ + +

देवन को दुषहरन करन अपनी प्रभुताई।
राछसगन संघार देन विविषन ठकुराई॥
मंदोदरी सिंदूर दूरि कर चूरन चूरी।
या कारन कवि नैन देखु जल पाहन पूरी॥
चतुरंग सैन तजि संग रह्यौ भालु बांदरन की चमू।
सोई रामचंद्र दसरथ सुग्रन रे दसकंधर मंद तू॥

अंत—

कंपमाम राछस भयौ हिए ममावत ईस को॥ ३०॥
सभा मध्य कवि नैन देषि अंगद रिषि वादी।
धौल फौल बेडोल कहत दसमौल सुगादी।
ऐ सपूत भए प्रगट बालि के बदन निहारो।
इन्ह समाम मही वीर आजु लौं भौ जुग चारो॥
पितहि पिठायौ चचहि मिलि इन्है प्रदछिन कीजिए।
सुपनी सत्रु कै दूत बनि आयौ उत्तर दीजिए॥ २१॥
निज करनी निज साथ होत करनी फल ताको।
कहा बाप कहाँ पुत्र नैन कवि कोउ न काको॥

—अपूर्ण

बिषय—

रावण अंगद संवाद वर्णन किया गया है।

संख्या १३१. भक्ति कल्पतरु, रचयिता—पदुमन (स्थान—वादमनगर), कागज—देशी, पत्र—१४२, आकार—११½ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८३१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७३९ वि०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत रघुनाथ प्रसाद श्रीवास्तव, ग्राम—सोनबरसा, डा०—बैरिया, जि०—बलिया

आदि—

श्री गनेसाय नमः श्री कथा भगत कल्प''कजरेन॥
बंदि भाल सिर नमित करी। सद.....
स दिव्य दिग रोचप ही॥ जय जय गिरिजानंद॥

॥ प्रद॥

पूरन परमानंद॥ प्रगट कामना कल्पतरु........

\+ + +

संमत सत्रहसय जब भैएउ । वोनतालीस उपर चलि गएउ ॥
असित पंचमी मास असारा । गुर दिन कथा कीन्ह अनुसारा ॥
वादमनगर सो ठौर सुहावन । वसै विपुल सरिता सर पावन ॥
बाग तड़ाग निकट चहुँ फेरा । पुरजन मुदित रहहि तहं घेरा ॥

\+ + +

॥ दोहा ॥

भूपति सिंघ दलेल तहं सुमि पुरंदर भोग ।
भंजन अरि रंजन सजन को तसु पटतर जोग ॥

कहो तास पुरुषा नीप मए । करि करि रन्ह अमर पुर गए ॥
वेनु वंस छत्री तसु जाती । पैर वार पै......ज्ञाति ॥
बाघदेव तित ते इत आए । तिलक करनपुरा के पाए ॥
कीरति सिंह तहि सुत भूपा । रामसिंघ तिनके अनुरूपा ॥
माधवसिंघ नीपति तिन्ह जाए । ता सुत जगत सिंह जसु पाए ॥
प्रिथुम मसजि निज देस वसावा । हिमतिसिंह तनै तिन्ह पावा ॥
धरम धुरंधर गुन गन भरे । विपिन विरंचि नरतिन्ह करे ॥
हेमतसिंघ नृपति के नंदन । रामसिंघ नीप वैरि निकंदन ॥

॥ दोहा ॥

नंदनराम नरिन्द के अवहि छत्र जेहि सीस ।
जीअवो सो जुग जुग जगत मह सिंह दलेल छिति ईस ॥

पिता सहोदर सरिस भुआरा । कृष्णसिंह सिरराज कह भारा ॥
आपु सदा सुष भोग विलासु । धरम कथा रत गुनि गन पासु ॥

\+ + +

पंडित सभा नरेस कराए । तुलाराम द्विज मनि हकराए ॥
तुलसी राम सिश्र मति माना । सभ पुरान जिन्ह कंठ वषाना ॥
गुना राम पाठक मति भेछन । अवरो विप्र समूह विचछन ॥

॥ दोहा ॥

सव मिलि कथा प्रसंसहि 'प्रदुमन' करहि प्रकास ।
स्रोता सिंघ दलेल तसू भक्ति कलपतरु जासु ॥

\+ + +

मध्य—

सभै गोप सानंद अति देषि सिद्ध सभ काम ।
'पदुमन' प्रभु के संग भए सभ आए निजधाम ।।

अंत—

पढ़ ते गारिभ नितमह दोषा । पंडित ते पाएउ परितोषा ।
चारि मास मह पुरन कीन्हा । स्रवन भक्ति स्रोतहि जस दीन्हा ।।
मै मति मंदु जै दुचिताई । वरने तजितहि रुछयता आइ ।
तहाँ ते वुद्ध जन लेहि सूधारि । साधु सभा सभके उपकारी ॥

लेषक ना सहिलि प्रतभुलाइ ।
सो अपराधन मोहि सिर भाई ॥

॥ दोहा ॥

'पदुमन' विनवै पानि परि सभहिते सिर नाए ।
पठवहु सुधारि लिषहु सूद्धि जिमि पद छंद न जाए ॥

छंद

जिअउ श्री नृपति सिंघ दलेल सुजान जिन्ह एह जस लिख्यो ।
'दास पदुमन' गुन परम अनुताहि पर्वत सम कियो ।
श्री राम सिंघ नरिन्द नंदन सुजस जुग जुग लिखो ॥

॥ दोहा ॥

भगति कलपतरो पचदस पलोव पहिलो साषा ।
स्रवन भगति अमृत स्रवै सत स्रवन ते'''षा ॥

इति श्री पावन भक्ति कथा इति श्री भगति कल्पतरो स्रेष्ट भक्ति कथवे पंच दस पलो प्रका ॥ १५ ॥

विषय—

श्रीमद्भागवत का संक्षिप्त अनुवाद है। ग्रंथ रचना पंद्रह पलो (? पल्लवों), अध्यायों में हुई है।

रचनाकाल का दोहा

संमत सत्रह[१७] सय जब भैएउ । वोनतालीस[३९] उपर चलि गएउ ॥
असित पंचमी मास असारा । गुर दिन कथा कीन्ह अनुसारा ॥

संख्या १३२. जैमिनि पुराण, रचयिता—परमदास, कागज—देशी, पत्र—१५०, आकार—६३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७१२, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३९ वि०=१५८२ ई०, लिपिकाल—सं० १७९३ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र एम० ए०, प्राध्यापक हिंदी, हिंदू विश्वविद्यालय, बनारस

आदि—

श्री गणेश देग्वता जी शहाये

श्री भवाणिजि शहाये ॥ श्री रामगती देहु शुमति ॥

श्री पुस्तक जैमुणि कथा ॥ श्री अशमेध कथा राजा दुदीश्ठील ॥

प्रनौ सुंदर कुंडल वैना । शशीलिलाट अति शोभीत नैना ॥
कटि किंकिनी श्रवनपुर चरना । विघीनी वीनाशण पातष हरना ॥
लंबोदर प्रशाद तोहारि । हिर्दै आनेवाश कहि देहु विचारि ॥
कथा कवित गीत छुन्द विचारा । जहा थाको तहा करहु नीश्तारा ॥
शुन्डल दशन वीजै शम सोहै । लंवित शुन्ड देवगण मोहै ॥
सुधीम शुद्ध चेत मन दायेक । गौरि तनयै शुभ सदा विनायेक ॥

\+ \+ \+

रशाधानी कर रछ्या जो रीपु दाढै बलवीर ।
परगदास कवी भाषा मोही नीश्तारहु जलतीर ॥

गोरषपुर देश शहुआरा । जगत वीदीत जानै शंशारा ॥
बड़ागाँव वश पुर्ष हमारा । तजीन्ही देश जव परा अकाला ॥
पंछीम देश वीध कै बासा । शहस्त्र नाम मै लिन्ह नेवाशा ॥
हिग हरी माहरी भगत शआना । शजन शंग शुभै सुष माना ॥
साधु तनै भौ मेघ शेआमा । महा वैशनव हरी हीअमाना ॥
जीतीक कुरवी कुर जैशवारा । नीमल कुल परिवार हमारा ॥
अश्मै शमै लीन्ह विधी भाषी । अक्रम कर्म वीधाता शाषी ॥

॥ दोहा ॥

और षंडापन आपन भल भै ऋन बषान ।
धरमुष हाश्व छोन्डा है तव न कही शअ ठान ॥

अंत—

॥ चौपाई ॥

शंवत शोरह [१६] शै चली गयेउ । वरषन्छेआलीश [४६] उपर भयेउ ॥

पतीशाह अकबर शुलीताना। चारिहु षंड ताही कर आना ॥
रहै लहावर सुर शंशारा। दुवरही वरी श्रहीते नही पारा ॥
दुर्ग देस गंढ रहा न कोहे। श्रमल शवत्र ताहि कै होहै ॥
हाजीपुर परम रह जहीश्रा। शुनीश्र पुरान कथा को तहीश्रा।
वशै हाजीपुर गंगा के तीरा। गंगा संगम नीमल नीरा ॥
नीती प्रात (? प्रति) ही नर मंजण करहै। वाढ़ै धरम पाप शंघ रहै ॥
वैशाष माश पांष उजीश्रारा। त्रीत्रीथी तीरोदशी शोम गुरवारा ॥
हस्ता नीन्छीत्र जन्म शशी भयेऊ। कथा श्रारंभ ताही दिन कीयेउ ॥
वशही नरोतम दिच्छत ताहि। भारद्वाज गौत्र शो श्राहि ॥
ताशुत भौ हरशीघ नीप माना। श्रती पवीत्र पंडीत जग जाना ॥

॥ दोहा ॥

ताशु तनयै धरनीधर तीन्ही शभ बुधी न श्रान।
'परमदाश' कीउ भाषा रश दिच्छीत कहा पुरान ॥

॥ चौपाई ॥

जन्मै जै नीप पुन्छै लीन्हा। कैशन जग्य पान्डन्ही कीन्हा ॥
ताही सुनै कै इंछया है मोरे। रीषी जैमुनी पाव वंदौ तोरे ॥

\+ \+ \+

जो येक पर्व शमापतह कीन्हा। जो वाचै तेही भोजन दीन्हा ॥
वश्तु देह शौव्रन कै घोरा। हाटक तौली देही दश तोला ॥
थोर थोर जो वीशनव करावा। दिहले पुन्य होवे श्रलपावा ॥
श्रशमेध्य शो नौवर्ष जो भयेउ। हश्तीनापुर वाश दुदीश्ठील कीयेउ ॥

॥ दोहा ॥

जन्मै जै नीप श्रोता जै मुनी कहा मन लाये।
अशमेध्य जग्य महाभारथ चौदह पर्व शीराये ॥

इति श्री श्रशमेध्य जग्य महाभारथे जैमुनी मुनी शंशक्रीत भाषा परमदाश क्रीश्रते चौशठीमो श्रध्याये ॥ ६४ ॥ ६४ ॥

इति श्री जैमुनी मुनी कथा शमामपतह जो देषा शोलीषा। ममदोष न दीश्रते पंडीत जन शौ वीनती मोरी। छुटल श्रन्छर लेव शव जोरी ॥ शीधीरंश्तु शुभमस्तु ॥ लीषा रहै बहुत दिठा मेटी न शंकै कोई। लीपनीहारा वापुरा शो गली गली मीटी होई ॥ पोथी लीषावल दश्राराम कुरवी शुत नरोतम महतौ शाकीन चंडकुरा प्रगने पीली छी ॥ शंवत १७९२ शाल शमै नाम वैशाख शुदी शतमीदीन बुधवार को लीषा। श्रीपाती साह शाहेव

मेहरवान उमरदराज शलतनती श्री महमदशाह गाजी जी ॥ श्री शुवै अलह बीर दीषा कीलापटने अमल शुवै बीहार ॥ श ११४३ शाल माह जीलकाद ता ॥ ६ रोज ॥ दशषत दाशन्ही दास कुंजमनी दाश कायेश्प भ्मन शाकीन वेरथु प्रगने तेलाठा ॥ मोकाम हीलशा प्रगने पीलीन्छी शरकार शुवै बीहार ॥

विषय—

संस्कृत के जैमिनिपुराण का अनुवाद ।

रचनाकाल

शंम्वत शोरहशै[१६] चली गयेउ । वरषछेआलीश[४६] उपर भयेउ ॥
पातीशाह अकबर सलीताना । चारिहु पंड ताही कर आना ॥

संख्या १३३. दानलीला, रचयिता—परमानंद, कागज—देशी, पत्र—१० (३२ से ४२ तक), आकार—९×६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह गहलोत, जोधपुर

आदि—

श्रीगणेशायनमः

गुरु गणपति ने सीस नांमी रे ।
प्रथम प्रणामुं सीतापति स्वामी रे ।
देवी सरस्वति वाणी दीजै रे ।
पद "दाणलीला" कीजै रे ।
पद बंध कहूं इक दाण ।
खुड सी माथ सुबधना वहु साकरे ॥

\+ × +

संवाद गोपी ने गोविंद नो जे गावे प्रेमे संभले ।
तेने 'परमानन्द' प्रभु परमेश्वर सांची ते प्रीते सुचमले ॥२॥

अंत—

(राग गरवो)

बजाड़ी रे बिढलवा सरीरं,
गोपी व्याकुल थई छै व्याकुल रे ॥
गोपी कुंज भवन सगली गई रे ।
महीनां माहज में ल्यावे गली रे ।

सहु बाला जी वीहीं रही रे ।
इतठी हती व्रजनी सुंदरी रे ।
इतस्यां रूप धर्यां छै श्रीहरी रे ।
लीधां आलिंगन हित ध्यायया ।
जिम सागर भर्यां नीर के सारंग पाणी जी ।
'परमानन्द' प्रभु दाणलीला बखाणी जी ।

इतिदाण लीला संपूर्ण ॥

विषय—

गुजराती मिश्रित भाषा में दानलीला का वर्णन ।

संख्या १३४. वाणियाँ, रचयिता—पारवती । इनकी वाणियाँ संख्या ५९ के विवरण पत्र में दी हुई हैं; अतः देखिए उक्त संख्या का विवरण पत्र ।

संख्या १३५. वाणियाँ, रचयिता—पृथ्वीनाथ । इनकी वाणियाँ गोरखनाथ और सिद्धों की वाणियों के विवरण पत्र संख्या-५९ में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र ।

संख्या १३६. अभय विलास, रचयिता—सांदू पृथ्वीराज, कागज – देशी, पत्र—१८ (२ से १९), आकार—११ × १०½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—११००, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ रूपक अभय विलास । गणेश स्तुति काव्य लिख्यते ॥
उज्वल दन्त सुमेरू गिर्जासुत सुंड डंड प्रचंडयं ।
अंग गुंज कपोल लोल सरद मंद गंध धारा पहं ।
आरत्त स्वस्वन्दुर चर्चित मुख प्रसन स्वनामननं ।
ग्रंथ राजस्य कथितं गनपते वंदे स्वरं अभयं ॥ १ ॥
मूलाधार निरोध बुद्धि फलिनी कंदादि मंदानिले ।
नाकायं ग्रह राज लच्छिदिता प्रागएछिच मातंगता ।
तत्रा धुजल चन्द्रमंडल ग्यान सरयू खयानो—छस
कैवल्यानुभवा सदा खुजगदा निदाय जोगेश्वरी ॥ २ ॥

विषय—

महाराजा अमरसिंह का गुण वर्णन किया गया है । मंगलाचरण से अजयपाल के जन्म तक और आगे महाराजा अमर सिंह के सिरोह (?) में जाकर विवाह करने तक का वर्णन । रचना डिंगल भाषा में है ।

संख्या १३७. राम पदावली, रचयिता—प्रताप कुँवर बाई, कागज—देशी, पत्र—१६१, आकार—८ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९२४ वि०, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

श्री गणेशाय नमः पद राग कल्याण—

पहली गनपती देव मनाऊँ; सब देवन में देव
सुंडालो, रिध सिध पूजा पावै (टेर)

सुख संपत मंगल नित पावत, दुख दालिद्र मिट जाय ॥ १ ॥
कर फरसी मूसा को वाहन, मोदक भोग लगाय ॥ २ ॥
गल माला फूलन की सो है, भाल-तिलक छिबि छाय ॥ ३ ॥
दास "प्रताप" कहै कर जोरी, रिध सिध काज कराय ॥ ४ ॥

(अथ बारह मासौ लिख्यते)

सिवावर सब संपत दाई ।

सब प्रपंच तज भज रसना सै राम नाम भाई ॥ टेर ॥

अंत—

(राग परभाती मंगला)

नागा मारा रघुवर स्यांम, सकल जुग तारण ।
सदकै करूरे सरीर, लेऊं नित वारण ॥ टेर ॥
पट खोलो हस बोलो, दुनियाँ दरसरन करै ।

तन, मन, धनादु मारो प्राण,
रघुवर जी रै ऊपर ॥ १ ॥

\+ + +

दरसन हित सब देव, अजोध्या आविया,
छाये गिगन बीमाण, फूल विरखा विया ॥ ७ ॥
जगे श्री रघुबीरनाथ, दरसण सब कूं दीया ।
गावे 'दास प्रताप" लाभ नरतन को लीया ॥ ८ ॥ पद ३९०

इति श्री रघुवीर जीरा पद संपूरणम्,

विषय —

माजी साहब प्रताप कुँवरि जी ने श्री रामचन्द्र जी का गुण गान किया है ।

'बारह मासा' में रचनाकाल इस प्रकार दिया है:—

उगणी[१९] सै चौबीसो[२४] फागण वद तेरस मांह बारैमासो कियो प्रकट ॥

टिप्पणी—

'बारामासा' के अंत में रचनाकाल सं० १९२४ दिया है:—

संख्या १३८. प्रवीण सागर, रचयिता—प्रभानाथ, कागज—देशी, पत्र, ९८, आकार—१२$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{1}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५५८६, पूर्ण, रूप—अच्छा, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३८ वि०=१७८१ ई०, प्राप्तिस्थान-आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी

आदि—

गणपति गिरजानंद नमो नमः ।
अथ प्रविन सागर ग्रंथ लिख्यते ।।

॥ दोहा ॥

प्रथम गणपति मंगला चरनं ।
वरन करन असरन सरन वंदन अरुन शरीर ।
चंदन धरन बार वदन हरन शरन जनभीर ॥ १ ॥

सवैया

शैल सुतासुत सिंधुर आनन शंकट गंज सदा शिवनंदा ।
राकरदी सुरदी वरदीवर वंदन भाल विराजत चंदा ।
मूपक रूढ परूढ महातम गायक गूढ़ गिरा गुन बृन्दा ।
नावक देव महासिध दायक धायक दुःख्य सदा सुख कंदा ।।१२॥

॥ दोहा ॥

वरन जुक्ति जुत एक रद नित प्रति करहु नवीन ।
बुधि दीजे वरनन वने सागर कथा प्रवीन ॥ ३ ॥

× × ×

संवत अष्टादश[१८] परजंत । तीस[३०] आठ[८] शाला वरतंत ।
सावन सुदी पंचमी कुजवार । कीयो ग्रंथ को मंगलचार ॥१५॥

श्री गुरुनाथ प्रसाद किव चत्रदेव मंगला चरनं ।
प्रेम प्रकाशन ग्रंथे प्रथम 'प्रवीन सागरो' लेहरं ।

अंत—

॥ सोरठा ॥

मंजन की जल गंग करी इंद्रन प्रतिभव भवा।
सुरता नंद सु अंग प्रेम मंत्र सप्तहु सध्यो ॥२६॥
पूर्वायस अनुमान "प्रभानाथ" परसन चढे।
सिध सवे विधि जान गिर आश्रय तजि गमन किये ॥२७॥
पंच घोस विलमंत "प्रभानाथ" आये तहाँ।
तापस लिखित महन्त वंदि चरन अरचे विविध ॥२८॥

गाहा

विछुरन दसा परवीनं। सागर सिध मिलन वद्रिकाश्रमं।
एक सप्त अभिधानं। पूर्नं प्रवीन सागरो लैहेरं ॥२९॥

इति श्री प्रविन सागर ग्रंथे जोगि वद्रिकाश्रमागतो मिधमिलनों नाम एको तेरमो लहेरं ॥ ७१ ॥ अथ "प्रभानाथ" रस सागर चरचा प्रसंग ॥ यथा संख्या ॥ ॥ दोहा ॥

विषय—

अनेक कथाओं का वर्णन ७१ लहरों (अध्याओं) में है। कहीं कहीं एकही लहर में अन्तर्कथा भी आ जाती है। लहरों का परिचय अधोलिखित है :—

६८, ६९, ७० संख्यक तीन लहरों के अंक नहीं हैं।

रचनाकाल—

संवत अष्टादश परजंत। तीस[३०] आठ[८] शाला वरतंत।
सावन सुदी पंचमी कुजवार। कीयो ग्रंथ को मंगलचार ॥१५॥

संख्या १३९. हनुमत जसलीला, रचयिता—प्रह्लाददास पाठक (जन), कागज—देशी, पात्र—२३, आकार—७ × ३$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)-८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८२४ वि० = सन् १७६७ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमह श्री गुरूभ्योनमह: श्री हनुमते नमह:

प्रबल वीर हनुमान सदा प्रय राम को ।

परमदयाल कृपाल राम संतन सुखदाई । दसरथ राजकुमार तीनि लोकनु केराई ॥

करजोरे विनती करूं हृदै वसौ प्रभु आई ।
हनुमान जस की लीला गांऊ कृपा करौ रघुराई ॥
सदा प्रिय राम कौ ॥

पवन पुत्र बलवान सदा संतन सुषदाई ।
रहत राम जु के निकट करत कारज अधिकाई ॥
अंजनि सुत हनुमान जु विनवऊ सीसुनवाई ।
तुमरे गुन कीरति जसु गाऊं कृपा करो कपिराई ॥ १ ॥
सदा प्रिय राम को ।

अंत—

कृपा वलदाइन प्रभु कहे सीसनायौ कपिराई ।
लछिमन अस्तुति करी दई सुग्रीव वड़ाई ॥
करि आये कारज वड़े ह्वै गए प्रभु के दूत ॥
धन्नि अंजनी माय जगत मैं जायो प्रबल सपूत ।
सदा प्रिय राम को ॥ ९२ ॥

पवन पुत्र बल कथा सकल बरनी नहिं जाई ।
कीरति राम प्रताप तीनि लोकनु भै गाई ॥
पढ़ै सुनै सुत से पति देही शीता रघुकुल चंद ।
जन पाठक प्रह्लाद दास को हनुमत करै अनंद ॥
सदा प्रिय राम को ॥ ९३ ॥

जदक्षर पद भ्रष्टा मात्रा हीने जद भवेत तत सर्वं छमितां देवो प्रसीद पुरूषोतमं श्री संवत् १८२४ वैशाख वदि १४ शोम वासे शुभं भुया

विषय—

हनुमान का यश वर्णन ।

संख्या १४०. जैमिनिपुराण, रचयिता—प्राननाथ, कागज—देशी, पत्र—६६, आकार—१३ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७५७ वि० = १७०० ई०, लिपिकाल—१९२४ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥

अथ जैमिनी पुराण भाषा प्राननाथ कृत लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

गजमुख सनमुख होत ही वीतहि कुमति कुतर्क
कोक शोक मेचक महा जथा विलोकत अर्क
'पट्टनि देवी' रकट निकट विनु संकट विकटैन
यथा अगोचर भास्कर मेचक छोर छुटैन ।
प्रथम सिंगार विभत्स मै करुणा अद्भुत हास ॥
सांतवीर पुनि रौद्र मिलि नवरस कथा विलास ।
व्यास सिष्य जैमिनि सुजसु विदित अखिल संसार ॥
जन्मे जै महाराज कहं आगत भये यकवार ।
महा महीस मुनीस को आदर भारी कीन्ह ।
अस्वमेध पावनि कथा पूछत ही लव लीन्ह ॥ ६ ॥

× × ×

संवत सत्रह[१७] सै सुभग सत्तावन[५७] वर मास ।
मकर भूप रितु पंचमी कवि इतिहास प्रकास ।

+ + +

विदित त्रिवेदी कान्ह कुल प्रान नाथ कवि नाथ ।
सादर संभु प्रसाद वर वरन्यो हरि गुन गाथ ॥

अंत—

दोहा

अस्वमेध इतिहांस वर वरन्यो आदि प्रजंत ।
जैमिनि जन्मे जै देव सो मागि विदा विचरन्त ।
अघ हरनी मंगल करनी केशव कथा वदार ।
मग्न होत भव जलधि विच निराधार आधार ।
विदित त्रिवेदी कान्ह कुल प्राननाथ कविनाथ ।
सादर संभु प्रसाद वर वरन्यो हरिगुन गाथ ॥
जैसेहु तैसेहु हरि कथा जेनर कहै सुनै ।
'प्राननाथ' वैकुंठपुर मारग सुगम तिन्है ॥ ३४५ ॥

इति श्री महाभारते अस्वमेध माहात्म्ये कान्ह तिलकोत्तर नाम यव कांड समाप्त मोध्यायः ।। जादशी पुस्तकं दृष्ट्वा तादशी लिखितं मया । यदि शुद्धम शुद्धं वा मम दोषो न दीयते संमत् १६२४ ।। वैशाष मास कृष्न पक्षे त्रयोदशी गुरु वासरे लिखा बालगोविंदमिश्र मारू गाउ के पठनार्थं सरदार वल्देव वकशसिंह वहादुर जिवके ।।

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में महाभारत कथा के अंतर्गत अश्वमेध यज्ञ का वर्णन सात अध्यायों में किया गया है। अध्यायों का विवरण अधोलिखित है:—

अध्याय विषय	पृष्ठ
१—श्याम कर्णहय प्रवेश	१—६
२—ललित नाम	१२
३—महाभारत माहात्म्य	१८
४—सुधन्वा सुरथ वध	३३
५—ववरकांड	५०
६—गौर तिलक कथा	५५
७—कान्ह तिलकोत्तरकांड	६६

इनके अतिरिक्त अन्तर्कथाएं भी बहुत आई हैं।

संख्या १४१. भागवत सुलोचना टीका, रचयिता-प्रियादास, कागज—देशी, पत्र-६०, आकार—९¾ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२१५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी

आदि—

चौपाई

पराभक्ति नवधा हरि प्यारी। हरि रूपा वरणी करन्यारी।
ताकी राधा सह सुख कारी। सेव्य कृष्ण पर पुरुष अधारी।।
यक शुद्ध पर जीव अखण्डित। भिन्न अभिन्न युगुल सुख मंडित।
ज्ञान स्वरूप ज्ञान गुर नागर। कृष्ण अनादी अंश सुखाकर।।
येहु मो करि सेव्य सदाई। श्रीमति सहरस सिंधु कन्हाई।
प्रणता धीन प्रणत हितकारी। जड़ चेतन्य जुगुल तन धारी।
।। हु सेवक कारिका ।। तयातु परया कृस्नः सेव्यो मेराधया सह।
परोपि प्रणता धीन श्चैतन्य जड़ विग्रहः ।। १ ।।

अंत—

चौपाई

जन्म मरण पावन हरन को। जगत विवेकी मन धारन को।
मारग सुखद नाहि सुरपुर जो। धर्म भागवत तें कित दुरु जो।
जाते भक्ति होय भगवत मे। तातें वरको कहहु जगत में।
श्रेष्ठ भागवत धर्म कहावो। यकहि औरन मुनिवर गावो।
यातें जो मन जगत तरने की। वासुख संपति विपुल करने की।
कृष्ण चरणवर रेणुनिहारो। तो मन धर्म भागवत धारो।
जो चाहत अघ सुकृत होई। परम मित्र अरि सब कोई।
होय महत दुखहू सुख सागर। तो गह धर्म भागवत आगर ।। ३३ ।।

।। दोहा ।।

प्रियादास के मन वसहु धर्म भागवत देव।
आवत हरि सह भक्ति हिय जाकी करतहि सेव।
अहो भागयवत धर्म जिन गह्यो परम फल मान।
ताके पदकी सेवको चाहत देव महान।
प्रियादास वर्णन कियो धर्म भागवत सार।
सुनत कहत सेवत सहज होत जगत नीध पार।
महा भागवत धर्म यह सत संगहि ते पाय।
प्रियादास फिर भक्ति करि रहत कान्ह पद जाय ।। ५५३ ।।

इति श्री सुलोचना टीकायां सेव्यत्व भागवत धर्म वर्णनो नाम तृतीय मयूष समूह।

विषय—

तीन मयूखों में भागवत धर्म का ग्रहण और फल कथन है।

संख्या १४२. सेवक जू की जन्म बधाई, रचयिता—प्रियादास, कागज-आधुनिक, पत्र—४८, आकार—६ × ८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—७५९, खंडित, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—गो० श्री राधाकृष्ण जी महाराज, बिहारी जी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद

आदि—

श्री राधावल्लभो जयति। श्री हरिवंश चंद्रो जयति।
अथ श्री सेवक जू की जन्म बधाई लिष्यते ॥ राग भैरो ॥
प्रथम सुसेवक पद सिर नाऊ ॥
करौ कृपा दामोदर मोपर श्री हरिवंश चरन रति पाऊं ॥

गुन गंभीर व्यास नंदन जू तव प्रसाद सुजस रस गाऊँ ।
नागरीदास के तुमही सहायक रसिक अनन्य नृपति मन भाऊँ ॥

+ + +

प्रगट्यौ श्री हरिवंश चरन को षटपद,
सावन तीज सुधाकर वासर घुमड रह्यौ आशक्त मोदहद ॥
तडि घन सुरत हिंडोरै झूलत झगर लेत वधाई हित सों गद ॥
सुनि हरिवंश वरषि झरी हित की सेवक जनम 'प्रिया दासितु' मदसद ॥

अंत —

॥ राग जैत श्री ॥

आजु हमारैसुहेलरा सुहायौ । प्रगट्यौ कुवरिं हिय भाव ।
रस सौन्दर्य प्रेम की आकृति तन मन सकल घुमावै ॥
उलटी समझि सेव्य हित आई रसिक छके जस गावै ॥ १ ॥
सुनत जनम हरिवंश जू आये मंगल निरष रचायौ ॥
अपनी जीवन मूर सुष संपति दंपति दिषै नचायौ ॥ २ ॥
पुनि पुचकारि चूमि उर मधि धर्यौ हियौ द्रग कंठ भरायौ ॥
जानीहौ मोहित जो बिचारी रूक्यौ न नेह तै जनायौ ॥ ३ ॥
जो भाई तुम्हें सोई आछी सेव्य तै सेवक कहावौ ॥
ज्यौ हौं तो···रूप अपासी असें तुम मो कहावौ ॥ ४ ॥
नीके रहियौ वेगी अइयौ बनमाली पै हिय लइयौ ॥
वासौ आयौ कछू न छिपाइयौ वहिय मर्म जनइयौ ॥ ५ ॥
सव हिय भाव गिरा कथ कहियौं मो आपौ रूप लषइयौ ॥
वचन रचन करनीं कें पोषियौ आशक्ति हिताई सुनइयौ ॥ ६ ॥
एक उही रूप समझि हैं तेरौ जुग गिरा संग लिषै है ॥
मिलत सिरइहै वावनमाळी हियौ तुम परवार सवं देहै ॥ ७ ॥
प्रगट विपन दिन सातहि वसियौ पुन इह देह उर लैहै ।
अति लगनीक "प्रियादास" प्रगटै हौं मो तो भेदनि गैहै ॥ ८ ॥
श्रुति धरि मंत्र नाम दियौ सेवक करहु सकल सिर राज ।
लव निमेष तोसौं नहि विछरौ चिर जीवौ करो निजुकाज ॥ ९ ॥
होत विदा पुनि पुनि मुष चुंवत सिर कर कमल फिरावै ।
गद गद सुर दुहूँ द्रग द्रवै उर उर गुथे सियरावै ॥१०॥
वंश विना हरिनाम न लैंहौं तद्प्राण नाथे रतिभावै ।
हित अरु राधा विन को यौ बोलै नेह गिरा दुहु साषै ॥११॥
कुवरि कह्यौ सव भाव हिये कौं जै जै धुनि नभ छाई ॥
बजे दुंदभी कुसुमनि वरषत सुनी वन चंद्र हिताई ॥१६॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में राधावल्लभी संप्रदाय के सेवक जी की बधाइयाँ हैं।

संख्या १४३. जैमुनिपुराण, रचयिता—प्रेमदास, कागज - देशी, पत्र ६, आकार—९ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)-१०, परिमाण (अनुष्टुप्)-८६, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

... ...

ज तेहपुर मह भारी।
सब मिली चला रहा नही कोई। चलहु तुम्हौ अस कह सब कोई॥
का घर रहे कवन तव काजा। विस्नु दरश ते पातप भाजा॥
गंगा जलही करहु अस्नाना। जीवन मुक्ति दरश भगवाना॥

व्रीध भये हरी सुमीरहु गंगा करहु अस्नान।
भुष जे भोजन सारहु तीनौ पद निर्वान॥

नृपती वचन सुनि तब ही कहई। सुनु राजा जैशन कीछु अहई॥
जौ मानुश के लछीमी होई। संग सजन पुछै शव कोई॥
धन ते आदर सव केउ करई। नीरधन धन ही दुरी परी हरई॥
धनते नृपती नीकट वैसावै। नीरधन नर वई ध्यान न पावै॥

द्रव्यं लै बैठवइ शुष मह भौ परमान।
मै कहु नही जाइव जौ लगी कंठ परान॥

अंत—

काजी चीनी कचोरी स्वादन्ह सुरस अपार।
वरनत वरनीन आवै नृमल नौ प्रकार।

॥ चौपाई॥

पापर भुजी देही रूकुमीनी। सीखन मह मीलाइक चीनी॥
खोवा दूध महीष के अना। फेनी भेइ जेउ भगवाना॥
चीनी चीरौंजी लौग मेरावा। नरीअर मेली प्रकार वनावा॥
वुदी लेडु देवकी कीन्हा। हरी पुलकी तभै जेवै लीन्हा॥
अवरा केदली कीन्ह संधाना। फरतवार औरा के आना॥
केदली ऋीची संधाना कीआ। जामवंत रुकुमिनी रस ला...॥
सभ के परीजातक को माला।

पंषा उठी सतोभामा कीन्हा । तीछ वदन हसी कहवे लीन्हा ।।
अब भोजन इहा·····

—अपूर्ण

विषय—

जैमुनी पुराण का हिंदी में अनुवाद किया गया है।

टिप्पणी—रचयिता का नाम पाँचवे अध्याय की पुष्पिका से 'प्रेमदास' प्रकट होता है। पुष्पिका इस प्रकार है:—

"इति श्री असमेध जग्य महाभारत जैमुनी सतकृत पचमो अधा भषा "प्रमदास ॥ छत ।।" 'प्रमदास' का शुद्ध रूप प्रेमदास मानकर यही रचयिता मान लिया है।

संख्या १४४. रामायण (अयोध्याकांड) या अयोध्याकांड, रचयिता—प्रेमरंग (संभवतः), कागज—देशी, पत्र—९, आकार—८½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—५, परिमाण (अनुष्टुप्)—७३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८८५ वि० = सन् १८२८, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः

अथ अयोध्याकांड प्रारंभः

॥ रागणी बरवे तालु जल्द इछंदलावणी हरिंऊम् ॥

भरत शत्रूघन ले गये मांमाँ खिजमत लछमन रामकरी ॥
राजादशरथ कों राजदेन को साल गिरह सायत ठहरी ॥ १ ॥
नहीं राम सा नर है जगमो जग मोहन औ जलधारी ।
मंडलेश्वर मंजुर किया तब नृप करवावत तैय्यारी ॥ २ ॥
रामराज का हुआ हगामा घर खुशिया फैल गई ।
कैकेयी की लोंडी मोंडी देखत जल बल खाख भई ॥ ३ ॥
कैकेयी कौं यों समझाया रामराज मत होय कदी ।
भरत विचारा वाहाँ पठाया तुज पर एन बदी ॥ ४ ॥
क्या जाने क्या जोग सुनाया बसकर राजा बचन लिया ।
कैकेयी बरदान मागकर तिलक आजमा कूब किया ॥ ५ ॥
कैकेयी ने राम वोलाए विदा कराए गुरु जनसौं ।
कौसल्या पर पाय मनाई लछमन कुठके तन मन सों ॥ ६ ॥

नियम किया जब भरत मरन का करुणानिध यह विधि बोले।
यही पावरी राज करेगी जैसे हेम छत्र डोले ॥४२॥

कहत भरत सब सुने सभाजन अहेद अवध लग देह धरों।
जो नहिं देखो चरन कमल तो पैठ अगिन मे वोहीं जरों ॥४३॥

पावर लेकर विदा होयकर सिर पर धरकर नाम किया।
आप अवधपुर उजड़ देखकर भरत आँख भर रोय दिया ॥४४॥

नंदी ग्राम मों बसै वैरागी चौदह वरस बितावन कों।
वहाँ रामगिरि राज त्याग कर चले अत्रि के आश्रम कों ॥४५॥

मुनि पद परसे अनसूया ने सिय सुख सुना स्वयंबर को।
प्रेम रंग प्रभु सुख सों बसे धसे बन धनसर धनुधर को ॥४६॥

इति श्री वा आभास रामा अनुसारेण अयोध्या कांडे समाप्तम् ॥ संवत् १८८५ ॥

विषय--

बाल्मीकि आभास रामायण के अयोध्याकांड की कथा का संक्षेप में वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—रचयिता का नाम केवल निम्नलिखित छंद से 'प्रेम रंग' विदित होता है :--

मुनि पद पर से अनसूया ने सिय सुख सुना स्वयंबर को।
प्रेम रंग प्रभु सुख सो बसे धसे बन धन सर धनुधर को ॥

ग्रंथ की भाषा खड़ी बोली है जिसमें उर्दू शब्दों का भी समावेश है। जान पड़त है, इसकी रचना गाने के लिये हुई। रागनी का नाम 'बरवे' और छंद का नाम 'लावनी' लिखा है। इससे स्पष्ट है कि यह ग्रंथ लावनी बाजों के लिये रचा गया। लावनी बाज और ख्याल बाजों में हिंदू मुसलमान दोनों होते थे। उन्हें दोनों तरह की जनता (हिंदू मुसलमानों) को अपनी ओर आकृष्ट करना पड़ता था। इसलिये ऐसी रचनाओं की भाषा हिंदी-उर्दू दोनों रहती थी। प्रस्तुत रचना इसीका नमूना है।

संख्या १४५. श्री राधाकृष्ण विवाह विनोद, रचयिता—प्रेमा, कागज—देशी, पत्र—१३०, आकार—८·५ × ४·५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०९५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०८ मिती अषाढ़, शुक्ल ७, प्राप्तिस्थान—श्री विहारी जी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद

आदि—

श्री गुरु कृपाल चरण शरणाहं प्रपद्ये ॥ श्री गुरु चरन कमलेभ्यो नमः श्रीराधा-कृष्णाभ्यां नमः अथ व्याह विनोद वर्ननं लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

श्री गुरु परमानंद नित प्रेम रंग रस लीन।
जुगल किशोर विलासु निजु पगे हृदैं सुषलीन ॥ १ ॥

कल्याणदास कल्यानकर श्रीकर कृपा निधान।
हृदै ध्यान धरि पद कमल सदा करै कल्यान ॥ २ ॥

× × ×

(वरसाने के आनंद बागका वर्णन)

॥ दोहा ॥

नंद लाल देषन चले आनंद बाग अनूप।
गोप कुमारनि वृंद में राजत स्याम सरूप ॥ १ ॥

अंत —

॥ दोहा ॥

लहौ शिवानुज परमरस पुलकित ह्वै अंग अंग।
सुषसागर हिय भरि उमगि, विहरौ रूप तरंग।
जुगलकिशोर विवाह नित सुनै, श्रवन चितु लाइ।
प्रेमा रसिक विलास प्रिय पावै प्रेम उपाइ ॥

इति श्री स्कंद पुराणे ब्रह्मषंमे (? डे) उमा माहेस्वर संवादे पर्यंक विधान विविधि पट रतन सुवर्ण रजत अनगनित धनदासी दास अस्व रथ गज गोदान विदा मंगल विलास नगर प्रवेस वधू प्रवेस दुधा मोती कंकन विधान बाग विलास जुगल सुष वर्णन प्रेम रस माधुर्य मंगल नाम राधाकृष्ण विवाह विनोद नाम इक विशंति मो विलासः।

संवत १८०८ मीती असाढ़ मासे शुक्ल पक्षे तिथी सप्तम्यां बुध बासरे लिषित सेवार तिवारी कुठभौवा लक्ष्मणपुर मध्ये पकरिया टोले मैं पठनार्थं अग्रवाल अकबरावादी के वासी लाला अछेलाल जी धर्ममुरति ॥ शुभं भूयात् ॥

लेषक पाठकयो चिरंजीयात्

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में २१ अध्यायों के अंतर्गत श्री राधा और कृष्ण के विवाह का वर्णन है। ग्रंथ का आधार स्कंद पुराण है। विवाह के प्रत्येक कृत्य का बहुत विस्तार के साथ वर्णन है, जैसे—तेल, श्रृंगार, द्वारचार, ज्योनार, मंडप रचना, पाणिग्रहण, भाँवरि गीत आदि। भाषा ब्रज है। दोहा, चौपाई में विशेप रूप से ग्रंथ रचा गया है। कवित और सवैया भी हैं।

टिप्पणी—रचयिता के संबंध में इससे अधिक और कुछ ज्ञात नहीं होता कि वह राधावल्लभी संप्रदाय के किसी कल्याणदास के शिष्य थे :—

श्री गुरु पदारविंद सेवत सुषद सुभ चिंतित सकल जन आनंद निवास है।
दृगनि विलोक ध्यान धरे ते विगत तन मैटत हिये कौ भ्रम करत प्रकास है।
सब विधि सहाइक वरदाइक सकल तन भुव सुरलोक में जे मन के हुलास हैं।
'प्रेमा' सोई 'हित' मेरे अति विभु 'कल्यानदास' देत वर जुगल किसोर के विलास हैं॥

संख्या १४६. शाह फकीर के शब्द, रचयिता—शाह फकीर, कागज—देशी, पत्र-१, आकार १२$\frac{३}{४}$ × ९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६, पूर्ण, रूप—प्राचीय, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६७ वि०, सन् १८१० ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—महंत राजाराम, स्थान और डाकघर—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया

आदि—

राम सब्द साही फकीरे जी कै

॥ राग काफी ॥

नदीया जोर बहै री मैं कैसे के उतरब पार।
नाही मोरे नइआ नाही मोरे भइया न मोरे षेवनिहार॥
सुरती नीरती सो मृतु बनायो एहि विधि उतरो पार।
नाभी कमल ते पवन चलावहु मन लगावहु त्रीपुनीधार॥
एह मत में इक जानै कोई रहनी बिहंगम सार॥
जोर जो जमुना अतिहि भआवनी पनीआ वहत न थीर।
वीजा नाव री वीजा पांवरी उतरैं 'साह फकीर'॥

॥ राग कान्हरा ॥

हैफ तेरा रंग मीयां हैफ तेरा रंग।
गगन चढ़ायो जोति जगावो गंग जमुन के वीच में तहाँ मीलावो संग।
आगे चलै जो एह बुझै सोई सतगुर धीर।
भाई इआरी हम तुम पाई गावै 'साह फकीर'॥

साषी

अजव अजव के पाँचो मारै का पचीस सोइ वाता।
सोरह हेलो छको पेलो तीनी मीलो तेहि जाता॥
चाँद सूर कै उलटैधकै वीच ही वीच समाई।
बारह अंगुल जे करे पैठे सोइ सो ताहा जाइ॥

हींदु पीर सतगुरू कहावै दीन्हो मोही लषाई।
'साही फकीर' जींदा देही इहइ गैव बनाई ॥

राम शब्द

ध्यान लगावहु त्रीपुनीद्वार। गहि सुषमना बीहंगम सार ॥
पैठी पता में पछीव धार। चढ़ी सुमेर भव उतरहु पार ॥
हफ्त कमल नीके हम बूझा। अठयें बिना एकौ नहि सूझा ॥
'साह फकीरा' एह सब दंद। सुरती लगावहु जाहावोह चंद ॥
अनहद ताल मनहि मन गावै। सो भुला प्रभु लोक सीधावै ॥
सुनत अनहद लागै रंग। वरी उठु दीपक़ परै पतंग ॥
'साहा फकीरा' ताहा समावै। चीरुआ पानी नदी ही मीलावै ॥

॥ राम झूलना ॥

लालवे चुनी लाल फीरंगी हीरा ऊपर वलता है।
मन परींदा जोर पवन संग सेत लहरी पर चलता है।
सेत फटक आगम नीसानी तामे 'इआरी' पेलता है।
'साह फकीरा' पेल रचो है पांच तीन दल फरता है ॥

राम साषी

मन कछी अति जोर है मारत नाही थीर।
करार लगाम दै पकरी सचे 'साह फकीर' ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

आध्यात्मिक ज्ञान का वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—शाह फकीर यारी साहब के शिष्य थे। स्वयं अपनी रचना में इन्होंने एक दो स्थानों पर 'इयारी साहब' का उल्लेख किया है। इनका झूलना आद्योपांत खड़ी बोली में है। 'इयारी साहब' आदि के शब्दों के साथ एक ही हस्तलेख में इनकी प्रस्तुत रचना लिपिबद्ध है जिसकी पूर्ण प्रतिलिपि कर दी है।

संख्या १४७. वैताल पचीसी, रचयिता—फकीरसिंह (वास्तविक रचयिता मणिकंठ), कागज—देशी, पत्र—८६, आकार—१०$\frac{3}{4}$×६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२२५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत महेश्वर प्रसाद वर्मा, ग्राम—लखनौर, डा०—रामपुर, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ पोथी वैताल पचीसी लिषते ॥

॥ मंगलाचरन दोहा ॥

स्री गनपति गिरिजा गिरा गौरीपति के पाय ।
वंदो महि धरि सीस तिन्ह कीजै वेगि सहाय ॥

॥ सोरठा ॥

गुरु पद पंकज धूरि धरो हरषि निज भाल मह ।
मिटही मोह भ्रम भूरि जाकी कृपा कटाक्ष तें ॥

कथा कथन चौपाई

प्रतिस्ठानपुर सहर जु एका । मुदित तहा परजासु अनेका ॥
भूप भयो तह गंध्रव सेना । राजनीति रति बसै सुषेना ॥
एक समै गिरि कानन चारी । षेलत रह्यौ सिकार सिकारी ॥
तापस एक नींवि तरु तरही । लाग समाध्य तपेस्या करही ॥
नृप सुत रहि ताहि लषि डरेउ । मनमह कहेउ राज यह हरेउ ॥
फिरे नगर आए गृह अपने । भए विकल कल परै न सपनै ॥
होत प्रात सिंगासन वैसे । हुकुम कीन्ह सेवक सो ऐसे ॥
गनिका नगर माहे की ल्यावो । औरो थल की हेरि मगावो ॥
जेतनी मिलै आनि दे मोही । हीरा हेम देउगौ तोही ॥

अंत—

॥ सोरठा ॥

सेज चतुर उठि भोर कही हकीकति भूप सों ।
सतएपर तब नौर है तोसक में देषिले ॥

॥ दोहा ॥

तुरितहि सतए परत में देषे भूप निहारि ।
लषी धनौरा भै चक्रीत आदर कियौ विचारि ॥
धनि मनि माल दियो तुरित विदा कियौ दिज भौन ।
आसिष दै भूपाल कौ कियौ पिता ढिग गौन ॥

॥ सोरठा ॥

एह कहि कै वैताल विक्रम सो बूझत भए ।
सांची कहो कृपाल इन्ह तीनों मह चतुर को ॥

॥ दोहा ॥

विक्रम दीन्ह जबाब तेहि अधिक चतुर है सोइ ।
भोजन विधि जो जानइ तासो कम है दोइ ॥

एह सुनि कै बैताल तब कूदि धरे द्रुम डार ।
भूपति चित चिंता भई नेकु न पावत पार ॥

इति श्री बैताल पच्चीसी फकीरसींह कारिते मनिकंठ कवि भाषिते त्रैविंसित्तमो कथा समाप्त ॥ अथ चतुर्थ विसितं कथा कर्मं कथनंम्ब ।

—अपूर्ण

विषय—

संस्कृत बैताल पचीसी का हिंदी में पद्यानुवाद ।

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना का वास्तविक रचयिता मनिकंठ कवि है । भूल से फकीरसिंह का उल्लेख हो गया है ।

संख्या १९८. पदितनामा, रचयिता-फरीद जी, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—$10\frac{1}{2} \times 5\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)-३५, परिमाण (अनुष्टुप्)-६६, पूर्ण, गद्य, रुप-प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल सं० १८५५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ श्री फरीद जी का पदित नांमा लिष्यते ॥

बगैर गुन्हा एक घड़ी नहीं गुजरी । सुफ्र परि । हजूरी दिल बंदगी भी एक घड़ी नहीं गुजरी । या निश्चै जांनि । इन नफसनै मेरा साहिब का राह मारया है । नफस इंद्रयांणां सोइ । जो हरहवाल सुकर करै । हरहवाल सुकर करैगा । तब आपनै नफस परि कादर होइगा । जिनि अपणांर गुसा षाये राजवान ॥ सोई संसार मे छुट्या है । सब संसार मैं अहमप सो है । जो इंद्रयो कै पीछै बहक्या फरै । तिसकूं अति साहिव न बकसैगा ।

अंत—

जो कोई कावि कब्रीरी करै । तिसका सब लुटि जाता है उसतैं अमल रहता नांही । फीका होइ जाता है । उसका अमल औरूं मैं जाइ रहै है । उसका दिल याइल होइ रहै । चतुराई जार करी । जिसतैं जबाब मुप बंदकर । पलक तैं आपकूं निरास राषै । तौ तेरे अंदरि रूस नांई होइगी ॥

इति श्री फरीद जी का पदित नांमां संपूर्ण ॥ १ ॥

विषय—

संसार से अलिप्त रहकर भगवद् नाम स्मरण करने का उपदेश ।

टिप्पणी—रचयिता नाम से कोई मुसलमान संत जान पड़ते हैं। इस नाम के एक प्रसिद्ध संत पंजाब में हो चुके हैं। प्रस्तुत रचना प्राचीन खड़ी बोली गद्य में है।

विशेष के लिये देखिए संत 'सेवादास'।

संख्या १४६. श्री भगवद्गीता की भाषा टीका, रचयिता-गुसाईं बद्रीलाल, कागज—देशी, पत्र—१०३, आकार ६·१ × ४·१ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) २०, पूर्ण, रूप—सजिल्द प्रति, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१८ मार्ग शीर्ष वदि २, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह गहलोत, जोधपुर (राजस्थान)

आदि—

(भगवद्गीता का परिचय संस्कृत में देकर, ध्यान आदि की प्रणाली को लिखकर गीता के मूल श्लोक दिए हैं, उनके नीचे प्रति श्लोक गद्य में अर्थ दिये है)

१ ला श्लोक टीका—धर्म को क्षेत्र अरू कुरू क्षेत्र ता विषै जुद्ध की इच्छा करि के मेला जुड़िया है अैसे जो मेरा पुत्र अरू पाडव सोहे संजय कही करता हुवा ॥ १ ॥

२ रा श्लोक टीका—पांडवनि की जो अनेक सेना ताकी जो रचना तहि देषि कैं, ता समैं दुर्योधन जु है सो आचार्य के पास जाय कै वचन बोलतो हुवो ॥ २ ॥

१० मा श्लोक टीका—भीसम जाको रखवारो है अेसी जु हमारी सेना सो हलकी लागै हैं। भीसम है रक्षिक जाको अैसी जु है पंडवन की सेना वहुत भारी सी लगे है।

अंत—

७८ वाँ श्लोक—जा ओर जोगेश्वर श्री कृष्न चंद्र है अरू धनुर्धारी अर्जुन है। ताहि ओर श्री है। ताही ओर विजै है। ताही ओर विभूति है यह मेरी बुद्ध का निश्चै है।

संवत् १९१९ रा मीती मीगसर वद २ लीषतं वैष्नव मंगल दास गढ़ जोधपुर मध्येवासी नागोर के लीषी छै। श्री राम जी शदा साथ छै॥ टीका गुसांई वद्रीलाल कृत्त भाषा वचनक सहित ॥

विषय—

गीता का अनुवाद भाषा में।

टिप्पणी—प्रत्येक अध्याय के समाप्त होने पर टीकाकार ने 'टीकासहित' या टीका सहत' या 'भाषा सहित' या 'भाषा वचनक सहित' जोड़ दिया है।

संख्या १५० क. स्फुट रचना, रचयिता—बलदेव (स्थान—आजमगढ़), कागज—देशी, पत्र—५, आकार—६$\frac{3}{4}$ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७२ के लगभग, सन्

१८१५ ई०, प्राप्तिस्थान—पंडित दयाशंकर मिश्र, गुरुटोला, मोहल्ला, आजमगढ़, जि०—आजमगढ़

आदि—

साधोभाई विषय की झार।
बाहर छेके गुरुजन परिजन विषय घर भीतर परिवार।
रजत पहार पर राजत विरूप दृग,
देव सब सोने के सुमेर पर छाए है।
कंचन की लंका तहा राकसनिसंक बसै दिली ले नगर पर जमन जमाए हैं।
'बलदेव' रिषि मुनि कंदरा करत वास पंडित कुलीन भीषि भूषन बनाए हैं।
आपु हरि मौन कहें बात सुनैं कौन कछु विधि के चरित चित कौतुक सुहाए हैं।

औध उधारन लागे रघुपति०

नर पसु कीट पतंग मुए सब जनम जनम के जागे।
भूषन वसन विविध भांतिन के जथा जोग रूचि बागे।
चढ़ि चढ़ि देव विमान यान सो द्वंद मोह भ्रम भागे।
सैन सहित रघुनाथ चले सुरपति सुर आवत आगे।
हसत जात कोउ बात न पूछत दरस परम पद पागे।
विधि घर नाघि अंधतम नाघ्यो कबहु न जहं सवितागे।
घट लोकेश लोचि लोचन सो उर अंतर अति दागे।
मुकुत क्रोध मंडित निरमल थल, आनंद घन इछागे।
जन "बलदेव" विराग रूप सब राम भजन अनुरागे॥
राम भजहि पछिताहिगा वैरागीजी।
तन धन धाम काम नहीं ऐहै अंत अकेला जाइगा।
मन बहकाइ विषय मै दौरत भोरवत भरम भुलाहिगा।
तेरो सब सब को तू साहेब यह बुझे न डेराहिगा।
फिर पीछे "वलदेव" देषु किन आपुहि आपु समाहिगा॥ वैरागी जी॥

॥ सविता की साहिबी सी कविता हमारी है॥

उदय वढ़ावै सुष अरून बरन ल्यावै मानस कसक लघुमलकी उज्यारी है।
देषि सुनि सब जग जागि सो उठत अति मधुर मधुर मधुकर धुनि भारी है।
मूढ़ तम अंधन के बंधन कटत जात याते 'बलदेव' सुभ किरनि सुधारि है।
दविता सो चंद रहै छवि ताकी कौन कहै,
सविता की साहिबी सो कविता हमारी है।
कविन की रीति लै नरेस को सुरेस कहैं,
रंकहु के राव कहै सातो सिंधु तरि हैं।

कौडी सो सुजस ताहि चंद्रमाते दूनौ करै,
दूनहू के उनो करै षाली कहै भरी है।
"बलदेव" वे जो वाक वानी के प्रसाद वर,
मन वच क्रम करि आपर जो धरि है।
तौ पारथ के वान सो जथारथ लगोइ जालु,
टरि है सुमेरो न सुमेरो वैन टरि है॥

॥ आपे मत्य बुलाइए करत हौ काल्यष्टमी को बिदा ॥
आज्वानंद करौ वलाष्प हिरनी कोरे घेटा पानिले।
चौका दै करि पाक भोजन भली भान्यागने सोइए।
लागी त्तौन छुधा बड़ी तब लगे मागौं चवैना भुना।
यापे मत्य कुत्ता ज करत है काल्यष्टमी कों विदा॥

काहू के हजार दग काहु के हजार भुज,
काहू के हजार मुष जीभ द्वै हजार है।
चारि मुष पंच मुष षटमुष दशमुष,
केतिक मनाउ गुन गरिमा अपार है।
एक एक मुष दै विमुख मौन हहरि,
"बलदेव" कौन जी करत करतार है।
हाथनि ओडाय देहि देहीन कों लागै वाइ,
विधि कौ चरित चित कौतुक उदार है॥
—प्राप्त प्रतिकी पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

जगत के विषय, विधाता के कौतुक सदृश कार्य, श्री रामचंद्र द्वारा अयोध्या के जीवों का उद्धार, रामभजन, सविता की साहिबी सी कविता हमारी है, वाणी सिद्ध कवि, आदि विषय तथा समस्याओं पर कविता की गई है।

विशेष ज्ञातव्य—रचयिता का कुछ भी पता ग्रंथ से नहीं मिलता। ग्रंथ स्वामी के कथनानुसार ये उनके पूर्वज थे:—
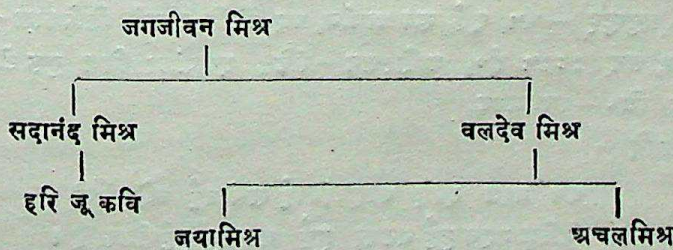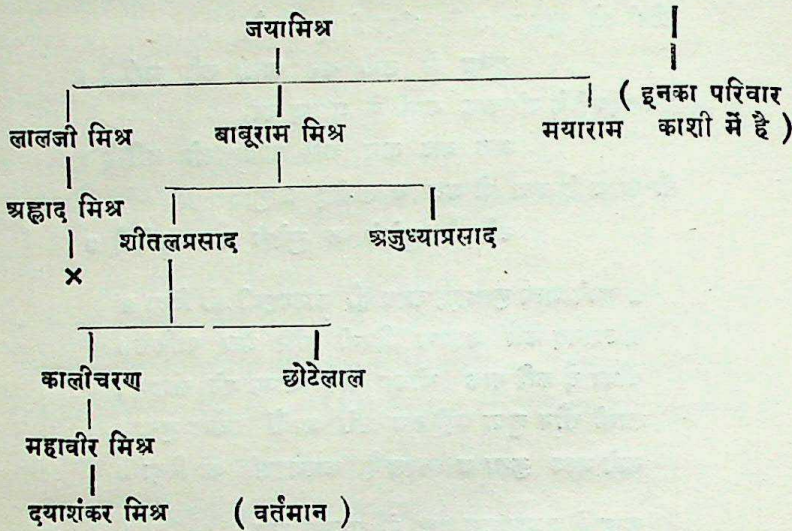
बलदेव मिश्र आजमगढ़ के राजा अजमति खाँ के राज कवि, गुरु और मंत्री थे। प्रस्तुत रचना कुछ अन्य रचनाओं के साथ एक ही हस्तलेख में है। अन्य रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं :—

१—भाषाभूषण	महाराज जसवंत सिंह कृत
२—सिख नख	बलभद्र कृत
३—रामजी की वंसावरी	हरिलाल
४—कथा राजा हरिचंद के विपत्ति की	जन जगन्नाथ
५—संस्कृत रचना	बलदेवकृत
६—भाषा रचना (स्फुट रचना)	,,
७—रहीम के दोहे	रहीम
८—अजमति खाँ यश वर्णन	बलदेव

प्रथम रचना में लिपिकाल सं० १८७१ है तथा दूसरी और तीसरी में संवत् १८७२ है। अन्य रचनाओं में कोई संवत् नहीं दिया है। अतः ये रचनाएँ भी संवत् १८७२ के लगभग की लिखी हुई मान लेना चाहिए।

संख्या १५० ख. अजमति खाँ यश वर्णन, रचयिता—बलदेव मिश्र, स्थान आजमगढ़, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६$\frac{3}{8}$ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—५५, पूर्ण, रूप प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८७२ वि० के लगभग, सन् १८१५ ई०, प्राप्तिस्थान—पंडित दयाशंकर मिश्र, गुरू टोला मोहल्ला, आजमगढ़, जि०—आजमगढ़

आदि—

घन गरज दपट्टै पटह निपट्टै खसं घट्टै ब्योम पट्टै।
निविड़ गहन टुट्टै गढवर छुट्टै गढवइ बुट्टैवीकल है।

अरि सिर अर लुट्टै वहु फर फुट्टै रुधिर विघुट्टै कालिरटै ।
अजमतिषा रूट्टै जवरन जुट्टै षल दल कुट्टै कुटिल भट्टै ॥ १ ॥
दहसति नवखंडन ककुभ प्रचंडन तल ब्रह्म मंडन मोर बढ्यो ।
पर परम अदंडन करि फर षंडन धर सिर झुंडन अवनि मड्यो ।
गहि षड्ग वितुण्डन हनत भुसुंडन भभकत मुंडन रुधिर कढ्यौ ।
अजमति माहि मंडन जदिन उदंडन दुग्रन विहंडन कोपि चढ्यौ ॥ २ ॥
पूरन प्रताप जाको कर को करेरो अति जग मैं जनाइ जोति छाइ नवषंड मै ।

सत्व तम राज को लषे तें जाहि छुटि जात,
भ्रमर जलज पर गुंजरत चंड मै ।
बलदेव जाकी उदै सब सुष पावै अति,
देव सु करै जसु प्रकास ब्रह्ममंड मै ।
महो अधिकारी भुज विक्रम के भुजभारी,
देषो बाबू अजमतिन केधौंमारतंड मै ॥ ३ ॥

करम प्रधान है

करम के वस ह्वै धरम सुत भाइ जुत,
एकै तिय भोग करै भावत पुरान है ।
करम के वस गुर नारी सो रम्यो है ससि,
रति मुनिदार सो करी सो मघवान है ।
कहै "बलदेव" गाधि सुत महा तपवंत,
वार वधु लागी उर प्रीति भान है ।
राम वनवासी भए रावन विलाइ गए,
जानिए प्रधान याते करम प्रधान है ॥ ४ ॥

अजमतिषान कैधों जलज लसतु है—

विधि को सदनु जनु सर मै रहत आपु सूर को
सुहिव जासो हियो हुलसतु है ।
कमला वसि है जाके रहत सुवास ताके,
परम पुरूष जामैं निति ही वसतु है ।
बलदेव रूप उजियारो औ सिंगार समै,
देषे रसु अलि को समूह विलसतु है ।
कोमल अमल ही बुझावै ताप तन कीसु,
अजमति षान कैधो जलज लसतु है ॥ ५ ॥
कैधो य जोगी कै वियोगी फिरै बन मै ॥

तीरथ न जात मन मन मथ कै इजारो कायो,
जए यो वाहु वासर जौ ऐलोकि लियो तन मै ।
भसम चढाय औ वढाय दुष विषवा मै,
बोध की वसति बात आए सुधि छन मैं ।
'बलदेव' ध्यान धरै चिंत्तत सूरूप ही को
जग को सकल सुष देषै ज्यो सपन मैं ।
नग मै उदासी ऐसो मगनै धौ कौन रस,
कैधो यह जोगी कै वियोगी फिरै वन मै ॥ ६ ॥

दोहा

कवि कौतुक बलदेव कहि देषि परेपे राव ।
मूकी मारे सुष लहै कहै पुसामदि चाव ॥ १ ॥
कविता अजमति षान के परची लहै अघाइ ।
नयौ सुजस निति ही करै पढै सभा मै धाइ ॥ २ ॥
लरजत अरज करीए है गरज जानि बलदेव ।
अजमतिषां मरदान मनि दूजो महिसुर देव ॥ ३ ॥
सरस हेतु करि मैन छबि बोलै अजमति षान ।
यहै कहति हौ मान मय उत्तर देहु सुजान ॥ ४ ॥
दानपुरी नीके भए जाहिर नई जहान ।
कवि के दारिद मरज को हादिक अजमति षान ॥ ५ ॥
भयो प्रेम के महत भय भरम भुलानो चित्त ।
प्रीतम से कैसे मिलौं यह दुष ब्यापत नित्त ॥ ६ ॥
लषौ वीर अरि साहि औ बार बधू की वाह ।
जीतन को ठाढी भइ जग लिये माह ॥ ७ ॥

पूर्ण प्रतिलिपि

विषय —

अजमति खाँ के यश का वर्णन किया गया है ।

संख्या १५१. शारंगधर वैद्यक, रचयिता—बलबीर, कागज—देशी, पत्र—६९, आकार—१०३/४ × ६१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८६३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य-पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०० वि० = सन् १८४८ ई०, प्राप्तिस्थान—पं०—सहदेव शर्मा आयुर्वेदाचार्य, डि० बो० औषधालय मनिअर, जिला बलिया

आदि—

श्री गनेसाय नमः श्री देवी जी सहाए श्री वैद सारंगधर ॥

॥ अथ नारी परीछा लीषते ॥

चौपाई

मुल अंगुठा कर गहु भारी। सकल बदन नारी लेहु वीचारी ॥
कारन पीत कया सो भाई। मेडुका काग कुलंग चलाई ॥
कारन कफ की नारी वीचारी। हंस मइ उर चले सो नारी ॥
कारन वदन होइ जो बाइ। सरप जलौ का चाल चलाई ॥

\+ + +

दूसर भेद सुनो मन लाई। कंठ चढै असलेषभ जाई ॥
नैनन जलन औसुज सरीरा। नीस्चे श्रीतु कहत 'बलवीरा' ॥
सुन राजा तै तीसरी गता। सुचक होए सुज सब गाता ॥
व्याकुल वेग बहुत जो होई। उपर स्वास भरे नीज सोई ॥
भेद मउत का सुनो सुजाना। हृदय तपत होइ दुइ काना ॥

अंत—

॥ इलाज गरभ रहे का ॥

पहीले दाइ आवै पंदरह रोज मटी का पुरा लगावै मेहरारू अपने नहान से होए तब नही न करे सफा होइ तब नरमा की पाती नव ठवर ९ मीरीच अडाई अंडा २ ॥ दूध गाइ के पाव भर ऽ। तीनु वीजु के मीस्री के दुध के साथ पीआवै तो गरभ रहै एक महीना पीआवै अपने सामी के साथ एक महीना रहै तो गरभ रहै इछा भगवान के चाही जे आछा होए।

इति सारंगधर वैदक देषा सो लिषा मम दोष ना दीयते दसषत अनंतलाल सीपाही कंपनी ५ रेंजमट ७२ छवनी वैसाष सुदी ॥ १५ सन ११५० महीना अवरैल (? अपरेल) साल १८४३

विषय—

शारंगधर नामक संस्कृत के वैद्यक ग्रंथ का भाषानुवाद किया गया है।

विशेषज्ञातव्य—रचयिता ने अपने नाम का उल्लेख केवल एक चौपाई में किया है जो इस प्रकार है :—

'नैनन जलन औ सुज सरीरा।
निश्चे श्रीतु कहत 'बलवीरा' ॥'

गद्य की भाषा पुरानी खड़ी बोली है।

संख्या १५२. बिना नाम का ग्रंथ, रचयिता—वली या बलिराम, कागज—देशी, पत्र—१४, आकार ६३/४ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—५, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० मुन्नीलाल जी, नंद गाँव, डा० नंद गाँव, जिला—मथुरा।

आदि—

श्री गुरुभ्यो नमः ॥

मांडुक कुलश कर मांह लीया नग तीन कूं तोड चौगान कीया।
नहि प्राज्ञ न विश्व न तैजस है मृग नीरन लोक हिरान कीया ॥
मह तत्व नहीं वहुराट कहा माया पीस कैं इश पीसान कीया।
वह नाह मरै तनु नाह धरै तुरीया विह अमृत पान कीया ॥
प्रज्ञान ब्रह्म यह विश्व चराचर जीव कराकर व्याप रह्यौ है।
स्थूल भोग जाग्रत अवस्था मै छै इंद्रीयन करि निखं छक्यौ है।
स्वप्न मध्य धिसना की संतित काम जनित सुख भार भरयौ है।
सुपुप्ति मध्य अवस्था दोऊ पीवत मधु भुकनाम सौ वेद धरयौ है ॥
माया कर जन भोग भुगावत तुरप प्रसंग सो वेद वरयौ है।
हमकुं रक्षा कर रक्षण विन जनम मरन दोय दंश परयौ है ॥

तत्वं मसी महावाक्य साम की सार मणी। अय अत्मा ब्रह्म वाक्य सु अथर्व मणी ॥
प्रज्ञा काय मंभार वाक्य रिगवेद अणी। ब्रह्माहमस्मी महावाक्य जजुवेद गणी ॥

अंत —

छप्पै

अवस्था तीन अतीत तीन कौ मूल है।
समभ पड़ै बिन नाह जाय जगत सूल है ॥
वही जानिबे योग्य और सब तुछ है।
"वली" कहै आनंद ब्रह्म यह पुछ है ॥
चतुर्थ सांत अद्वैत वेद मे गाइये।
महत पुन विन कहो कहा कह पाइये।
हिरण्य गर्भ ने कही कंज आसन सुन पाई।
तिसते गही वीसिष्ट सक्ती को सुधि सुनाई ॥
शक्ति सुनु ते सुनाकार सुन सुक को दीनी।
सुक के शिष्य उदार गोडसुन श्रधालीनी ॥
उनके शिष्य गोविंद पाद विद्या के आयन।
उनकेभागवत पाद शिष्य सो वृह्म परायण ॥

उनके शिष्य उदार चार विद्या के अंगा।
इनतै प्रगटी आय इहा निज विद्या गंगा ॥
जे अव गाहन करै लाल तिनकी है सारी।
पुण्यहीन प्रतिकूल जीत जगवाजी हारी ॥
प्रथम आगम अद्वैत युक्ति किंचत कर गयी।
दूतिये श्रुष्टिवै तथ्य स्वपन के तुली दिखायी ॥
तृतीये युक्ति अद्वैत वेद की गती वखानी,
तुर्य मध्य मत खंड भ्रांति आलात बुझानी ॥

॥ सोरठा ॥

अजातिवाद यह ग्रंथ चार वाद दूसन सहित।
सेवत संत महंत भ्रांति लेस तहां कछु नहीं ॥

इति श्री यह ग्रंथ पूर्णताया को भयो होत भ्रांति को अंत गर्भवास तिनको नहीं। श्री राम जी।

विषय—

आध्यात्मिक ज्ञान का वर्णन किया गया है।

संख्या १५३. पद संग्रह, रचयिता—बलिहारी 'वलि', कागज—देशी, पत्र—२२, आकार—४.८ × ८.३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४७, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री विहारी जी का मंदिर, महाजनीटोला, इलाहाबाद

आदि—

॥ राग केदारो ॥

रसिक रसीलो रास ॥

नृतत मोहन प्यारो ॥ सरद जोन्ह सी भामिनी राधा हसि हसि करत प्रकास ॥
सुभग पुलिन जमुना बहै परसत धीर समीर ॥
नाचत मंडल करि दोउ जहाँ ब्रज वधुवन की भीर ॥
अलग लाग गति भाव सों साँवरे लई प्रवीन ॥
तबही कुँवरि प्रिया लाडिली रीझि अपनपो दीन ॥
भई मंद गति चंद की देषत नित्य विहार ॥
'वलि' वलि विहरति छवि भरें श्री राधा नंद कुमार ॥ १ ॥

\+ \+ \+

राग विहागरो

राधा रानी को परम सुहाग ।
प्रेम मुदित मन छके रहैं द्रग प्रिय मोहन अनुराग
अंसनि भुजा दीयें दोउ विहरत अति ही रम्य व्रंदावन वाग
जुगल रूप बलिहारी नैन भरि अवलोकत बड़ भाग ॥ ९ ॥

\+ \+ \+

फिरि वो गया मैडे आगणा वो नंद दा ॥ लाज मरेंदी वेषण न पाईयाँ
आँपडीया दा लगणा वो मोहणा ॥ मुरली बजावदा इस्क जगावदा
बोलण मिठडा दिलणू ठगणा ॥ को ई णी मिलावै बलिहारी सावला
नेह उसीदै नाल पगणा ॥ ३० ॥

अंत—

॥ राग श्री ॥

मेरो री गोंहन नैक न छाडै लंगर लगवार डोलैं ॥
वै निधरक, हौं सकुचों लाजन, निकट आय दुरि घूँघट पोलै ॥
भरि गुलाल आंषिन में भाजत बलि समझावै को लै ॥ १०२ ॥

राग धनाश्री

मोरी हरे पाट की ईंदुरी लाल तुम राषी

—अपूर्ण

विषय—

प्रस्तुत खंडित ग्रंथ में बलिहारी कवि के पद संगृहीत हैं। इनकी संख्या केवल १०२ है।

पदों का विषय श्रृंगार है। इनमें राधा, कृष्ण तथा गोपियों की दान, मान, रास, पनघट और वसंत आदि लीलाओं का अत्यंत सुंदर वर्णन है।

अधिकांश पदों की भाषा व्रज है; परंतु बीच बीच में कुछ पद पंजाबी के भी हैं जिनकी संख्या १२ है।

संख्या १५४ क. धवल पचीसी, रचयिता—वांकीदास आसिया, कागज—देशी, पत्र—१ (५२वां), आकार—११ × ६१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर (राजस्थान)

आदि—

(दूहा धमल रा)

धवल पवेचे हे सखी ! दमडां कहा करेह ।
जल ऊमैं थल सांम है, धमलो चीतारेह ॥ २ ॥
धमलो धमलो मत कहो, धमलो धमलो न होय ।
कालोही धुर खंचणो, धमल कही जे सोय ॥ ३ ॥

—अपूर्ण

विषय—

बैल की तारीफ के २५ दोहे हैं; परंतु मिलते ९ ही हैं ।

संख्या १५४ ख. मान जसो मंडन रचयिता—बांकीदास आसिया, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१० X १९८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४००, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर (राजस्थान)

आदि—

श्री गणेशाय नमः श्री जलंधर नाथ जी सत्य छेः । श्री १०८ श्री खाविंदांरी हजूर में दवागीर आसिया बांकीदास दूहा बंध रूपग मान जसो मंडन कह्यो सो मालूम हो ॥

दोहा

निराकार निर्गुण नमो सगुण नमो साकार ।
जालंधर जोगेसवर अनघ चरित्र उदार ॥ १ ॥
सीस होय मुद्रा श्रवण, शिव विभूत तव श्याम ।
पीर कणेरी पावरो नाथ जलंधर नाम ॥ २ ॥

× × ×

कर जस मान कमंधरो परहर आलस पात ।
परतष जास पसावसूं । सदन हुअ सुख सात ॥ ९ ॥
मान तणां गुण जोड मन, कोउ छोड अनकाज ।
सारा करसी काज सिध, मानसिंह महाराज ॥ १० ॥

अंत—

सोरठा

पत मुरधर पतसाह, ईख मान मन ऊपजै ॥
नल दमयन्ती नात, जोधाणे लीधो जनम ॥ २२४ ॥

अजन हरों आसान, कमधज मुसकल मैं करै ।
मोमत हुतां मान, मैं परमेश्वर मानियो ॥ २२५ ॥

समझ दान सयान, अविस्व पालकता अछै ।
राखे सिध राजान, मोनुं चरणां मानरा ॥ २२६ ॥

भूनभ ससहर भाण, अै जालंग तालंग अखै ।
औखां गढ़ जोधारण गोखां करौ गुमान रौ ॥ २२७ ॥

समाप्ति—इति श्रीमान् जसो मंडण संपूर्ण ॥

विषय—

जोधपुर नरेश मानसिंह जी का यश वर्णन ।

संख्या १५५. बाघरारा दूहा, रचयिता—बाघरा, कागज—देशी, पत्र—२ (१-२), आकार—७½ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—११, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर (राजस्थान)

आदि—

श्री गणेशाय नमः
मिलसी तो मिलियांह,
पुड बोई पा पणि तणां ।
नपणां अरु नीदांह
बयर बिलूधो बाघरा ॥ १ ॥

अंत—

सीगरती सिर चढियांह, खहरहि माहि खसोडिया ।
राणा राख थिवांह, वीसारीसूं "बाघरा" ॥ १५ ॥

इति बाघरा ॥

विषय—

विरहिणी की दशा विषयक ११ दोहे ।

संख्या १५६. १–मुख नामौ, २–गुन कठियारा, रचयिता—बाजिद (वाजीद), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—१०½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३५, परिमाण (अनुष्टुप्)—९६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८५९ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

सुपनांमौं जोग ग्रंथ ॥

साधन संग सदा रहूँ सुनौ सयाने लोइ।
मन बच क्रम मोकूं भजै तौ गंजिन सक कोइ ॥ १ ॥
षंभ मांझ नरसिंह ह्वै प्रगट्यौ जनकै काज।
हर नब सिव कूं लैगयौ ज्यूं तीतर कूं बाज ॥ २ ॥
भगत सुमेरी आत्मां जाकू जाइ विरोध।
सुरपुर नरपुर नागपुर जहां तहां मारूं सोध ॥ ३ ॥

अंत—

॥ गुन कठीयारा नामू लिषते ॥
यादरि गहि दिवांन की साधू जन नित जाय।
कठिहारै एक देषि कै दोरि गहे दोइ पाय ॥ १ ॥

चौपई

साध येक साहिब दरगह जाई।
दोरि गहे कठिहारै पाई ॥
अरज हमारी कीज्यौ ऐसी।
निसदिन विपति रहत घरि वैसी ॥ १ ॥

\+ + +

॥ अरिल्ल ॥

तो बहुत कलिय कै जीव वृथा ही मरतु है।
विधना लिष्यौ लिलार सुतौ क्यौं टरतु है।
कूप छाडि सम दै जोबजन जाइ है।
परिहां ठांव प्रवांनैं नीर सही सो आई है ॥ ६३ ॥
इति गुन कठियारा नामौ संपूर्ण ग्रं ॥ ८ ॥

विषय—

ज्ञानोपदेश का वर्णन।

संख्या १५७. रस चंद्रिका, रचयिता—बालकृष्ण, कागज—देशी, पत्र—६४, आकार—९ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—२११६, खंडित, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

ज्यौं निसि नीकी ना लगै बिन चन्द्रिका सुजान।
त्यौंही कवि मग देखियै रस चंद्रिका अजान ॥ २८ ॥

रस देषन की चाह जिहि जगत मोहिये हेत।
ताके हित रस चंद्रिका 'बालकृष्ण' करि देत ॥ २९ ॥

प्रथम प्रकास परंपरा दूजै नवरस रीति।
तीजे रस बिभिचार गनि चौथे नायक नीति ॥ ३० ॥

पंचम षष्टम नाइका दूती सखी विचार।
भाव विभाव अनुभाव अरुभावनि कौ बिभिचार ॥ ३१ ॥

दरसन हाव बखानि कै सप्तम छन्द विधान।
दूषन भूषन अष्टमै नव मै गुण परधान ॥ ३२ ॥

पुनि कवि नियम बषानही जातै कवि गुरू होत।
पुनि दंपती विनोद कही ग्रथनि बाल उद्दोत ॥ ३३ ॥

बहुरि समस्या करण विधि वंध रीति पुनि जानि।
दशा और गुण कौ कथन अलंकार सब मानि ॥ ३४ ॥

'बालकृष्ण' इहि विधि कह्यौ सुनियहु चित्त दै मित।
कला प्रमान प्रकाश जुत रस चंद्रिका सुकृत ॥ ३५ ॥

कवि कुल पंडित सुघर मिलि छमियहु यह अपराध।
रस चंद्रिका बनाउ कौ उपजी मनमो साध ॥ ३६ ॥

अंत—

तिय नैननि सौ रीझि करि हीरति मानै जोरि।
याहू विधि पूरन करौं वाल बुद्धि बल दौरि ॥ ९७८ ॥

पिय बूझत है निज सषी तिय नैननि ही रीझि।
रति मानै यह जुगति कहि बालकृष्ण जनि पीझि ॥ ९७९ ॥

इहि विधि समस्या मित्त पद तुव पदारथ चित्त।
बहुभाँति बूझहु नित्त तव बाल करहु कवित्त ॥ ९८० ॥

अथ युक्त समस्या यथा

जो जाके संतत मिलै सो वरनिय जिहि ठाव।
'बालकृष्ण' कवि जानियहु युक्त समस्या नाव ॥ ९८१ ॥

विषय—

इस ग्रंथ में ११ प्रकाश हैं जिनमें क्रमशः निम्नलिखित विषय वर्णित हैं :—

(१) परंपरा

(२) नवरस विवेचन

(३) रस विचार

(४) नायका निर्णय

(५) (६) नायिका सखि, दूती, तथा भाव, अनुभाव विचार।

(७) छन्द विधान

(८) दोष निरूपण

(९) गुण

(१०) कवि नियम

(११) दंपति विनोद वर्णन।

संख्या १५८. वाणियाँ, रचयिता—बाल गोदाई। इनकी वाणियाँ विवरण पत्र संख्या ५९ में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या १५९. श्री बावरी साहबा के शब्द, रचयिता—श्री बावरी साहबा, कागज—देशी, पत्र४, आकार—१२½ × ९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४, पूर्ण, रूप-प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६७ वि०, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजा रामजी, स्थान और डाक घर—चिटबड़ा गाँव, जि० बलिया (उ० प्र०)

प्रारंभ —

श्री बावरी जी के शब्द

अजपा जाप सकल घट वरतै
जो जानै सो पेषा।
गुर गम जोति अगम घर वासा,
जो पाया सो देषा।
मैं बांदी हौं परम ततु की,
जग जानत किसु भोरी।
कहत 'बावरी' सुनो हो 'बीरू'
सुरति कमल पर डोरी।

विषय—

दार्शनिक ज्ञान का विवेचन किया गया है।

संख्या १६०. दामोदर हरिदास चरित या ज्ञानावली, रचयिता—बीठू बांकीदास, कागज—देशी, पत्र—४ (८२-८५), आकार—८ × ९½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—६२, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८८३ वि०, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर (राजस्थान)

आदि—

श्रीरामाय नमः अथ गीत लिख्यते—

महो पिच्छम ऊड्डूं करे चत्र मासो,
लख पुल सांधा पंथ लियो ॥
मारग मिलै माड़रा मांझी,
दोष सतां उपदेश दियौ ॥ १ ॥
चाय अप्राध गोढियो चित्त में
धारे सिखां चांदियो ध्यान ।
चारू प्रसाद चाढियो चेला
गुरां दूलोई छोटियो ज्ञान ॥ २ ॥

अंत—

दोहा

शस्त्र बसन ले सिखन के, गे खेराये गांम ।
श्रीदयाल गुरुदास करि, धरी भेट गुरू धाम ॥ ५७ ॥
गुरु दामोदर हरि को, पूरन चरित पुनीत ॥
बीठू बांकीदास कवि, गायो जस करि गीत ॥ ५८ ॥
भावन जन ताको भन्यो, विस्तर अरथ विचारि ।
न्यूनाधिक या में निरखि सज्जन लेहु सुधारि ॥ ५९ ॥
ग्रन्थ गोप्य 'ज्ञानावली' दीनों गुरू उपदेश ।
सदा प्रेम संजुत सुणै लोभ न उपजै लेश ॥ ६० ॥

संपूर्णम

विषय—

जोधपुर में खड़ोपा संतों का स्थल है। वहाँ के दो साधु (गुरू शिष्य) शिव परगने के अंड् गाँव में चोमासा करने जाते थे। मार्ग में चोर मिले, उनसे लड़े और अंत में ज्ञान उपदेश द्वारा उन्हें शिष्य बना लिया।

कथा में गीत, दोहा, नाराच आदि ६० छंदों में बात है।

संख्या १६१. श्री बीरू साहब के शब्द, रचयिता—बीरूसाहब, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१२½ × ९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) – २१, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६७ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता —महंत श्री राजाराम जी, स्थान और डाकघर—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया

आदि—

श्री वीरू साहब के शब्द

॥ राग गौरी ॥

हंसा रे वाझल मोर याही घरा। करवो मैं कवन उपाइ।
मोतीआ चुगत हंसा आइल हो। सो तो हंसा रहल भुलाइ॥
झीलर को बकुला भयो है। करम कीट धरी षाइ॥
सत गुरू सत्य दया कीयो। यह बंधन लइ छोड़ाइ॥
यह सँवसार सकल है अंधा। मोह माया लपटाई॥
"बीरू" भगत हंसा भयो। सुषसागर चलेव नहाई॥

अंत—

राग बंगला

त्रीकुटी के नीर तीर बाँसुरी बजावै लाल,
लाल भाल से सभै सुरंग रूप चातुरी।
जमुना ते, अवर गंग अनहद झरतान संग,
फेरी देषु जगमग कों छोड़ी देवै वादरी।
वाइ प्रचंड चंड वंकनाल मेरु दंड,
अनहद को छोड़ी दे आगे चलु बावरी।
ओंकार धार बास उन्हहु को करै वीनास,
षसम को साथ करू चीन्ही ले सइआ मेहरी।
जन 'वीरू' भाव तान आन पौन मौन घोर,
जोर सत गुरू सब्द चाबुक करार री।
काव्य (? रकाव) पग धरु चरु सुर मैदान,
जीति घर आवरी॥ २॥

विषय—आध्यात्मिक ज्ञानोपदेश वर्णन।

संख्या १६२ क. कशफुल वजूद अर्थात् ब्रह्मनिरूपण, रचयिता—शाह बुरहान, कागज—देशी, पत्र—२९, आकार—९ × ५.३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण

(अनुष्टुप्)—५२३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—फारसी, प्राप्तिस्थान—श्री० डा० मुहम्मद हाफीज सैयद, १३ चैथम लाइन, इलाहाबाद

आदि—

॥ बिस्मिल्लाह अर्रहमान अर्रहीम ॥

अल्लह वाहिद सिरजन हार—जों जग आलम जिसथे वार।
जाहिर वातिन अपना रूप—जात मनज्जह सहज सरूप।
दायम कायम आपै आप—जो नापन करे ना मा बाप।

तन मन जोबन ना अंक लेत—
ना उस पीत ना उस चेत।
कहते न आवै कुछ मिसाल—
जाय तरफ ना वहम खयाल।

जात मनज्जह सब थे पाक—वह न आवे किस इदराक।
इश्क कहूँना मोहब्बत शौक—लज्जत कहूँना सोहबत जौक।

नैना विन वह देखे सब,
कानो विन वह सुनता सब।
नासिक विन वह लेबे वास,
वजूद नहीं पन भोग विलास।

जिवहा बिन बोलन हार—हाजिर नाजिर है करतार।
जान पनावै अपना नूर। राखिया अपने नजर हजूर
अविद कर इस किया जुदा। तो उन साबित किया खुदा॥

अंत—

वासिल फिर रूह तसल्ली पाय—
याद फिरसक न जीव अखाय।
तजल्ली का तू बूझ असल,
हक सो बोलू हक मिसल।
मदद हक सों करूं बयान,
रोशन होवे सब अयां
नैन तो किसका होय मजाल,
विन हक पावै ऐसा हाल
तो मैं कुछ करूं निसान,
आरिफ होकर देवै कान,

नफस का भाता सार जाय–
दोनों आलम दिन के पाए
दिल में मुहीत जात असिल,
रूह का होता देख वस्ल।
दिल तो जान पने का संग,
अक्ल लाली केरी रंग।
अम्ल दलाली नफ्स थे जान,
नफस थे मेल देख पहचान
नफ्स थे जावै सब हरकत
दिल मुनज्जा होय सत॥

तम्मत शुद

विषय—

'कशफुलबजूद' सूफी धर्म का ग्रंथ है जिसमें ब्रह्म का निरूपण किया गया है।

संख्या १६२ ख. मुन कातुल ईमान, रचयिता—शाह बुरहान साहब, कागज—देशी, पत्र—११, आकार—९ x ५'३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—फारसी, प्राप्तिस्थान—श्री० डा० मुहम्मद हफीज सैयद, १२ चैथम लाइन, इलाहाबाद

आदि—

बिसमिल्लाह अल रहमान अरहीम
अल्ला वाहिद सिरजन हार, ये जग रचना रचिया अपार।
सकला आलम किया जहूर, अपने बातिन केरे नूर॥
देखन क्यों दे लाया जग, कोई न समझे उसके लक।
गफलत सेता परदा आप, सब जग लेता उसमें नाप।
बहुतों खालिक किया विचार, भूलिया सब जग गफलत यार॥
'नात मुहम्मद मुस्तफा सरे अल्लाह अले वसल्लम'

(मुहम्मद साहब की प्रशंसा)

नबी केरे भूली राह, उनमें थोरे हक आगाह
जिसको होय इरादत हक, तो वह बूझे हक मुतलक
मुलहिदान की ऐसी बात - खुदा पछाने केते घात
वह भी आखों तुम्ह मुईन —परगट बोलो देखें ऐन
कोई इक आँखें ऐनहवा—आपुल विरले करे दवा।
वह कौन हुआ देख उसमे—रचनक जग की हैं जिसमें॥

अंत—

जिसकों तोफीक उसमें होय,
उसके कर्मों समजे कोइ
यूं सब वंदे हैं अनजान—
जिस वो पूरे दे ईमान
ईमान देवे जिसे अता
वह क्यों जावे देख खता
वली नवी के सब अकबाल,
समजिया नाही वह किस हाल
उन वोलों पर थे हो मुरतिव
राह हकीकत थी हो बद
बूजे नाही राह सलूक
गफलत राह लग भूले चूक
मुरशिद पूरे राहनुमा,
तो वह बूझें खूब अघाँ
नही तो फिर फिर भौरी माँन,
बोल वकार में सर वरदान
जिसके दिल पर खोले नजर,
उस पर खोलें सव पदर
अल्लाह राखे गफलत थे,
आप दिखाये कुदरत थे
बंदे सकले नातवाँ—
अल्लाह राखे आप पिन्हा
यो फरमाये शाह बुरहान
इसमें आहे नफा ईमान
तमामशुद

विषय—

प्रस्तुत 'मुन फातुल ईमान' अर्थात् 'धर्म का लाभ' सूफी मत की रचना है। इसमें केवल ११ पत्रे हैं। यह बहुत छोटी सी रचना है और इसमें परमात्मा या खुदा के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति भाव रखने का उपदेश है।

संख्या १६३. इरशादनामा शाह बुरहान उद्दीन जानां, रचयिता—शाहबुरहान उद्दीन जानां, (दक्खिनी), कागज—देशी, पत्र—१६२, आकार—७ × ४.४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२६०, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य

और पद्य, लिपि—फारसी, लिपिकाल—सन् १०२७ हिजरी, प्राप्तिस्थान—श्री० डा० मुहम्मद हफीज सैयद, चैथम लाइन, इलाहाबाद

आदि—

......मशाहिद अकस का लेना हो और रूह का मशाहिद लेना तो आलम तबीयत पर है। दूधवर या ज्यों सोने का मैं हूँ होर इले देखें को जीव क्या आखियाँ पौरैं। विपत रोवै तुरा छीदम दीदये जान वैन वानी होर फाज करोमी अर्ज़ कर कम होर हदीस......सो खोलना नूर के परदे देखने को होर........परदे देखने का नूर होर नवी केरी मुहब्बत सब पर है।

अंत—

परमल नाच परमल वास, नास करें वह......खास।
बने पे कंथरी लाये कली, अपदें सत की सेज मेरी।
अरसी मुतलक पाकर गनी—
गालिव शहवत बहुत मैंनी
जिसके ऊपर होय खयाल,
उसको अपना देय वसाल
जैसी सुनकर मिल वैंसा होय,
तो वह वेधी समझें कोय
जेको इसके मन कों भाये—
अपनी........किन समझाए

—अपूर्ण

विषय—

गुरु शिष्य संवाद के रूप में सूफी मत का प्रतिपादन किया गया है। रचयिता ने पद्य के अतिरिक्त गद्य का भी प्रयोग किया है। पद्य में चौपाई छंद का प्रयोग हुआ है।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत पुस्तक दखिनी भाषा (जिसे दखिनी उर्दू कहा जाता है) में लिखी हुई है। इसके शब्दों के रूपों में प्रायः ये विशेषताएँ मिलती हैं:—

'कुछ' के लिये 'कुज' लिखा गया है
'लेकिन' ,, ,, 'लाकिन' ,,
'और' ,, ,, 'होर' ,,
''भी' ,, ,, 'बी' ,,
क्रिया के रूप 'मानिया', 'जानियाँ' आदि भी मिलते हैं।
लिपिकाल सन् १०२७ हि० है।

संख्या १६४ क. रामायण (किष्किंधाकांड लंकाकांड और उत्तरकांड), रचयिता—बुलाकीनाथ बावा, कागज—देशी, पत्र—३०८, आकार—९¾ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)-५८५२, खंडित, रूप—प्राचीन (जीर्ण शीर्ण), पद्य, लिपि—कैथी और नागरी मिश्रित, रचनाकाल—सं० १८०७ के लगभग, लिपिकाल—सं० १८३३ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—ठा० जगन्नाथ सिंह, ग्राम—बुलाकीदासजी की मठिया, डा०—रसड़ा, जिला—बलिया

आदि—

देषी भएल नीषी मुष (? ऋष्यमूक) नाथ।
देषी दरस भयेउ सनाथ ॥
तेही सीषर पर सुग्रीव। पतनी सहीत बलसीव ॥
नीज देषी जब बल सींव।
उठी मीले नीज सुग्रीव ॥
जसनाथ तुव परभाव।
मोही कीन्ह प्रेम सुभाव।

पुछेन्ही सकल इतिहास। सभ कहेउ नाथ प्रकास ॥
तेही वंधु के बड़ी त्रास। दंपती सहीत उदास ॥
जब कहेउ प्रभु इतिहास। सुनी भएउ जुग उर आस ॥
× × ×
सुनी सुकंठ बहुरी बहलावा। दुतीय धावन बहुरी पठावा ॥
कवन राम कहवाँ रजधानी। पुछहु जाहु दुत मृदुवानी ॥
आएसु मानी सो दोसर आवा। सभ प्रसंग लछुमनही सुनावा ॥

दोहा

सुनत लषन दुतीए बएन तुरीत कहेउ रीसी आई।
सहीत सीवासन पट अवही दीहौं बीहाई ॥ ४० ॥

सोई राम जेही सभ जग जाना। बाली मारी जीन्ह तुम सनमाना।
लछुमन नाम तासु लघुभ्राता। जासुन कीए मइत्री के नाता ॥
जौ अवही के नाही आवहु दुआरा। नतौउ प्रभु अंगद करव भुआरा ॥
जौ अश सुनी अवही देउ वाउ। वीनु प्रभु आएसु नाही वसाउ ॥
अंत—

उत्तरकांड

छंद त्रीभंगी

मंगल बधाव भूप भवन सभए मनोहर गावहीं।

अनुरागता गनी लो ती लोचन प्रेमचारी अन्हावहं ।
सुर शरव जान वेबान नभ शभ भुप अजीर जनावही ।
नाचही अपछरा गान मंगल सुमन क्ररी सभ लावही ॥
रानीन्ह रासन्ह पुर नारी नर तेही काल भवन बोलाइ कै ।
शादर सभही पहीराइ सुषन बीनै वचन सुनाइकै ।
मानीक मनोहर दीयो सभ पुर लोग धनद शंसाकीए ।
बुझी परत नहीं सुलोक कीधों भवन नीज नीज अवधए ।
लछी आवही लछी जावही शीता दरस सभ फल पावही ।
नभ नग्र अनंद वधाव वाजत कोकीला सुर गावही ।
शुर जैती जैती प्रसुन्य वरषही वीवीध वीधी स्तुती करी ।
धन्य धन्य कोसल नाथ शीग्र सभ अवध नभ पावन करी ॥
रनशेधु अगम अगाधी प्रबल प्रताप रीपुदल दलमले ।
सभ बंधु कोसल धनी शीआ रघुबंस कुल भुषन भले ।
सुरलोक सुरपुर रीषी नीप के देव अन्हती गावही ।
शुनी सुजस दशरथ राम के शंग्राम जीती सुहावहीं ।
जए राम कामनी काये चहु जुग शुजश शुरमुनी गाइहे ।
लंकेश भगती प्रशंग शुरमुनी ध्यान उर अवधाइहे ।
जे कीयो तेही तस दीएहु तश फल धन्य धन्य कृपाधनी ।
शभ बंधु सीअ रघुनाथ राम नमामी अस्तुती सुरभनी ।
नीपद्वार चारीउ भाइ देवन्ह दरश देषी मंगल महा ।
'सेंगर बुलाकी' राम अवध प्रशंग उत्तर कथा कहा ॥

इति श्री रामाऐन उत्तरकांड राम लछमन सीता भरत शत्रुहन शैना शषा कुल परिवार नीपद्वार प्रथम राम आसन ॥ अवध कुशल प्रसंग चारीउ भाई षुसी उत्तरकांड कथा देवन्ह अस्तुती नारद वाशीइट शंमाद भाषा क्रीत बुलाकीनाथ शाके सेंगर कुल गौतम गुर..........

विषय—

हरिहर पुराण के अनुसार किष्किंधाकांड, लंकाकांड और उत्तरकांड के रामचरित्र का वर्णन किया गया है। प्रत्येक कांड में निम्नलिखित अध्याय हैं :—

किष्किंधाकांड (पत्रसंख्या—१०५)

१—पहला अध्याय—सुग्रीव रामलक्ष्मण प्रथम मुलाकात ।
२—दूसरा अध्याय—राम लक्ष्मण हनुमान सुग्रीव प्रसंग ।
३—तीसरा अध्याय—सुकंठ इतिहास वर्णन ।
४—चौथा अध्याय—बाली सुग्रीव और अंगद इतिहास वर्णन ।

५—पाँचवाँ अध्याय—अंगद सुकंठ मिलन।

६—छठा अध्याय—सुग्रीव राम तथा अंगद जुवराज वर्णन।

७—सातवाँ अध्याय—संपाती, गरुड़, संपाती राम, तथा अंगद हनुमान, संपाती गरुड़ संवाद वर्णन।

८—आठवाँ अध्याय—रावण तथा लंका पलंका इतिहास वर्णन।

लंकाकांड (पत्र संख्या १५२ के लगभग)

१—पहला अध्याय—कुंभकरण स्वप्न वर्णन।

२—दूसरा अध्याय—अभयनंद मंदोदरी संवाद।

३—तीसरा अध्याय—कुंभकरण, मेघनाद, विभीषण संवाद।

४—चौथा अध्याय—कुंभकरण, विभीषण, सीता संवाद।

५—पाँचवाँ अध्याय—कुंभकरण स्वप्न प्रसंग समाप्त तथा विभीषण की भक्ति का वर्णन।

लंकाकांड (क्रमशः)

१—पहला अध्याय—वैराग और भक्ति संबंधी काव्य।

२—दूसरा अध्याय—अंगद की दूत कार्य में नियुक्ति।

३—तीसरा अध्याय—अंगद रावण संवाद।

४—चौथा अध्याय—अंगद का रावण की सभा में पदरोपण तथा रावण के मुकुटों का हरण।

५—पाँचवाँ अध्याय—अंगद का वापस आना और युद्धारंभ करना।

६—छठा अध्याय—लक्ष्मण का मेघनाद से युद्धारंभ।

७—सातवाँ अध्याय—लक्ष्मण मेघनाथ युद्ध वर्णन।

८—आठवाँ अध्याय—मेघनाथ द्वारा लक्ष्मण का मूर्च्छित होना तथा हनुमान का संजीवनी लाना।

९—नौवाँ अध्याय—मेघनाथ बध और सुलोचना का रामदर्शन को आना।

१०—दसवाँ अध्याय—सुलोचना का सती होना।

११—ग्यारहवाँ अध्याय—रावण कुंभकरण संवाद और ज्ञानप्रसंग वर्णन।

१२—बारहवाँ अध्याय—कुंभकरण संग्राम वर्णन।

१३—तेरहवाँ अध्याय—कुंभकरण संग्राम वर्णन।

१४—चौदहवाँ अध्याय— ,, ,, ,,

१५—पंद्रहवाँ अध्याय—राम रावण और कुंभकरण रामलक्ष्मण समर वर्णन।

१६—सोलहवाँ अध्याय—राम लक्ष्मण और कुंभकरण संग्राम वर्णन।

१७—सत्रहवाँ अध्याय—राम रावण संग्राम तथा विभीषण राम ज्ञानोपदेश।

१८—अठारहवाँ अध्याय— ,, ,, ,,

१९—उन्नीसवाँ अध्याय—राम रावण संग्राम तथा अंगद प्रशस्त संग्राम पथ वर्णन।

२०—बीसवाँ अध्याय—राम रावण संग्राम और हनुमान अंगद प्रताप वर्णन।

२१—इक्कीसवाँ अध्याय—रावणवध तथा हनुमान का विजय संदेश लेकर अशोक वाटिका में सीता जी के पास जाना।

२२—बाइसवाँ अध्याय—सीता जी की अग्निपरीक्षा और राजा दशरथ राम मिलन वर्णन।

२३—तेईसवाँ अध्याय—रामचंद्र जी का अयोध्या को लौटना।

उत्तरकांड (पत्र संख्या ९३)

(इस कांड में अध्याय नहीं हैं)

रामचंद्र जी का राजतिलक, कुल परिवार सहित चारों भाइयों का राजसुखोपभोग तथा अयोध्या की सुख शांति का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—किष्किंधा कांड की पुष्पिका में दो संवतों का उल्लेख है। पुष्पिका इस प्रकार है :—

इति श्री रामाएन हरीहर पुरान ॥ बाली ॥ सुकंठ ॥ अंगद ॥ हनुमान ॥ नल ॥ ॥ नील ॥ दुविद ॥ मग्रंद ॥ जामुअंत ॥ अनकरंम ॥ नील कुद ॥ कटाछ ॥ श्रीकुट ॥वान॥ ॥ सबल ॥ सदद्दव ॥ तार ॥ मघोस ॥ केसरी ॥ असंक ॥ गज ॥ गती ॥ स्रीग सपा ॥ ॥ सदेज ॥ व्रातासपन्या ॥ अस ॥ वीधी ॥ पीड ॥ अवील ॥ ऐता ॥ प्रधान ॥ रावन ॥दु॥ ॥ तीआ ॥ रावन ॥ लंका ॥ दुतीअ ॥ पलंका ॥ कथा प्रसंग ॥सुग्रीत॥ संमाद ॥क्रीकींदा॥ कांड ॥ रामाएन ॥ क्रीत बुलाकीनाथ साके सेंगर कुल गौतम रीषी वंसावरी पुन्य पावन ॥ सीगी रीषी सुत जोधसिंघ गुरु जुड़ावन परवत चरनार त्रींद नमसुतुते ॥ अष्टमो अद्ध्याइ संमत अठारह सै सात १८०७ ॥ समै नाम वैसाष सुदी छठी वार सोमार मोकाम मगध देस गाआ छेत्र राजअस्थान टेकारी ॥ मोकाम सेमुआरा ॥ चौउधुरी केहरीसिंघ का ठहुकर पर रामसागर बुलाकीनाथ कै तपैसा के आसन ॥ जल सएन पच अगीनी असन पोषरा देषीन पुरव क बगला पोथी वनली होम जग्य वेदी पर पंच अगीनी तपैसा पर पोथी बनली सुवे रामपुरी इलाहावास (? इलाहाबाद) भारथ पंडे जम्मुदीपे जनम धरती सरकार गाजीपुर प्रगने जहुराबाद लषनेसर मधी तपै ढाषा जनम धरती तालका लषनराइ साकेन सुरतानपुर रामसाला सुषबेलास नाथनवर कथ संपुरन ॥ कीकींधाकांड सुभमसुतु ग्यानरसुतु मगल लाभ फलदाता स्रोत वकता उकुती हनुमान महाबली बुधीदाता सारदमातु कथा संपुरन लीषल दसषतः नाथ मोकाम अंकरुवा वैसाष परीवा वार आगवा ॥ संमत १८३३ समै माघ सुदी पुरनवासी वार सुकरवार मोंकाम सुरषी दसषत बुलाकीनाथ लीषल संपुरन ॥

प्रथम संवत् १८०७ वि० कदाचित् रचनाकाल और द्वितीय संवत् १८३३ वि० लिपिकाल है।

संख्या १६४ ख. रामायण अयोध्या और बालकांड, रचयिता—बाबा बुलाकीनाथ, स्थान—सुलतानपुर बलिया, कागज—देशी, पत्र—३०२, आकार—१३ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—८४०८, खंडित, रूप—प्राचीन, (जीर्ण), पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिश्रित, रचनाकाल—सं० १८४१ वि= सन् १७८४ ई०, लिपिकाल—सं० १८४१ वि० (संभवतः), प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, वाराणसी। दाता—ठा० जगन्नाथ सिंह जी, ग्राम—बुलाकीदास की मठिया, डा०—रसड़ा, जि०—बलिया

आदि—

श्री गनेसाए नमह ॥ श्री सारद मातु सहाए श्री बालकांड कथा रामाएन सुपवंद क्रीत पयहारी श्री बुलाकीनाथ साके सेंगर ॥

॥ दोहा ॥

आदी जोती सीव सारदा सरब देव अब ध्याई।
सेंगर बुलाकीनाथ हित सभ मिली करीउ सहाई॥
आसीनी अवनी कुमारदीन सुकुल पछ उजियार।
चतुरदसी रघुबर चरीत प्रथम भए अनुसार॥
जथा नीलावर सरब जुग सुरसरी पावन नीर।
सलीता मिले समये वीमल मंज बीमल सरीर॥

× × ×

॥ चौपाई ॥

समत अठारह सै ऐक ताला। कातीक बदी अमावसी काला॥
करउ कथा रस सुधा सुधासु। सुनीही सुसजन मंगल रासु॥
अवनी कुमार नउमी मधुमासा। अवधपुरी सुद मंगल रासा॥

+ + +

सुनि सुनि भूप साधु मुनि बानी। दंपति सहित सुक्रीत गुनखानी॥
कनक कनात बसन बहु आनी। ठाठ करही नृीप थाहील पानी॥

अंत—

॥ छंद ॥

भै हरन जगनीस तरन तन तप धर्म भरथ सुजस नए।
नही कीन्ह राज कबूल भाएप राम लछीमन अस भए।
उत लषन सीता राम कानन भानु वंस दीवाकरं।
इत भरथ तप रीपुदवन सेव प्रेम सीया वरं॥
अस राम चरीत पेउष वारीध भरथ मानस हंस को।
नीती नेम जीवत प्रेम भाजन भरथ वीनु अस करत को॥

ऐही कथा काउ अवध प्रकासीत सुनीही जे नर गाइहे।
धन धाम पुत्र कलत्र फल सुनी मनौ वांछीत पाइ हे।
असमेध कै फल लहहि प्रानी भरथ राम चरीत महा।
सेगर बुलाकीनाथ सीव कल्यास गीरीजा से कहा॥

॥ सोरठा ॥

कथा अजोध्या कांड भरथ चरित तप राम वन।
सुनीही जे चीत धै कान नाथ बुलाकीराम जस।
से पाइही धनधाम चरीत राम सीघ्र वीमल जस॥
सभ पुजीही मन काम सेंगर बुलाकी राम भग्ती॥

ऐती श्री हरीहर पुराने रामाएन अजोध्याकांड कथा राम भरथ संमाद॥ क्रीत भाषा भनीती पयहारी बुलाकीनाथ साके सेगर कुल गौतम वसाउरी सीगी रीषी सुत जोधसीघ गुर जुडावन परवत चरणारव्रींद नमसतुते॥ दशमोअध्याए॥ १०॥ जंबुदीपे भारथ षंडे सरकार अवध सुवे इलाहाबाद सरकार गाजीपुर प्रगने जहुराबाद लषनेसर मधी तपेढषा। तलुका लषनसए जनम धरती मौजे सुरतानपुर रामसाला प्रगने कोपाचीट मौजे कमतइन। आसन मंठनाथ नगर सुषवेलास पोथी पास दसषत संमत १८४१ समै नाम अगहन वदी एकादसी वार रवीवार संपूरन जगरनाथ काएथ लीषल॥ मोकाम नाथ नगर बुलाकीनाथ का रामसाला॥

विषय—

हरिहर पुराण के अनुसार बालकांड और अयोध्या कांड के रामचरित्र का वर्णन किया गया है। इन कांडों में निम्न प्रकार अध्याय हैं:—

बालकांड (पत्र संख्या १४३)

१—पहला अध्याय—मंगलाचरण अस्तुति आदि।
२—दूसरा अध्याय—रामकथा माहात्म्य देवी देवता साधु असाधु वर्णन।
३—तीसरा अध्याय—रामकथा वर्णन के बिषय में सती ईश्वर संवाद, गरुड़ काकभुसुंडी संवाद तथा भारद्वाज याज्ञवल्क्य संवाद।
४—चौथा अध्याय—शिव भवानी राम कथा संवाद वर्णन।
५—पंचम अध्याय—नारद ब्रह्मा संवाद, वाल्मीकि मिलन, नारद उपदेश।
६—छठा अध्याय—रामअवतार का कारण वर्णन।

रामकथा का वर्णन

१—पहला अध्याय—(अध्याय नहीं दिया है परंतु इसमें रामजन्म से लेकर विश्वामित्र के यज्ञ तक का वर्णन जानना चाहिए)।
२—दूसरा अध्याय—सीता स्वयंवर परशुराम संवाद वर्णन।
३—तीसरा अध्याय—जनकपुर शोभा वर्णन।

४—चौथा अध्याय—राजा जनक का अयोध्या को पत्र भेजना।

५—पाँचवा अध्याय—अयोध्या में उत्सव तथा जनकपुर जाने के लिये बारात का सजना।

६—छठा अध्याय—अयोध्या से बारात का श्रृंगी ऋषि के आश्रम में आना।

७—सातवाँ अध्याय—बारात का वाल्मीकि के आश्रम में जाना।

८—आठवाँ अध्याय—ऋषि वाल्मीकि का राजा दशरथ को रामचरित सुनाना।

९—नवाँ अध्याय—जनकपुर में बारात का प्रवेश, जनक दशरथ संवाद।

१०—दसवाँ अध्याय—सीताराम विवाह वर्णन।

११—ग्यारहवाँ अध्याय—बारात का अयोध्या के लिये विदा होना।

॥ अपूर्ण ॥

अयोध्या कांड (पत्र संख्या १६०)

१—पहला अध्याय—राम नारद संवाद।

२—दूसरा अध्याय—मंथरा केकई संवाद।

३—तीसरा अध्याय—राम सीता का कौशिल्या से वन जाने के लिये विदा माँगना।

४—चौथा अध्याय—राम लक्ष्मण सीता का श्रृंगवेरपुर पहुँचना, लक्ष्मण निषाद संवाद।

५—पाँचवा अध्याय—राम लक्ष्मण सीता का चित्रकूट में प्रवेश।

६—छठा अध्याय—अयोध्या में भरत आगमन तथा भरत वशिष्ठ संवाद।

७—सातवाँ अध्याय—भरत का राम को मिलने के लिए चित्रकूट को प्रस्थान करना।

८—आठवाँ अध्याय—पंथवासियों का भरत दर्शन।

९—नवाँ अध्याय—राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुहन का मिलन तथा नागरिकों सहित गुरु वशिष्ठ और कौशिल्यादि माताओं का राम से मिलना।

१०—दसवाँ अध्याय—राजा जनक का चित्रकूट को प्रस्थान।

११—ग्यारहवाँ अध्याय—राजा जनक का चित्रकूट पहुँचना और राम भरत संवाद।

१२—बारहवाँ अध्याय—भरत तथा राजा जनक का चित्रकूट से लौटना।

रचनाकाल

संमत अठारह सै एकताला। कातीक वदी अमावसी काला॥
करउ कथा रस सुधा सुधासु। सुनीही सुसजन मंगल रासु॥
अवनी कुमार नउमी मधुमासा। अवधपुरी मुद मंगल रासा॥

संख्या १६४ ग. गीता ज्ञान सागर, रचयिता—बुलाकीनाथ बाबा, स्थान—सुलतानपुर, बलिया, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—१३ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण—(अनुष्टुप्)—१५०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—कैथी,

लिपिकाल—सं० १८३३ के लगभग, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—जगन्नाथ सिंह जी, ग्राम—बुलाकीदास जी की मठिया, डाकघर—रसड़ा, जिला—बलिया

आदि—

······तवनी घाट मोहि देव बतए।
कहै पेवक सुन प्रीआ आनी।
नारी सुभाव बुधी जडठानी॥
जनम जनम अस नेती न होई।
कमठ छाड मलाह न केइ।
मीन कमठ मकर घरीआरा।
इसभ केवट केर अहारा॥
कवनीहु भांति न मानैइ कवट कै पीआ नारी।
चली अग्र कै कंत पुनी पल पल धरम वीचारी॥
गइ तुरीत जल घाट समीपा।
प्रजा पालै जीमी चलइ महीपा॥
पुछी कछप जल बाहर आए।
षोजत सावक कतहु न पाए।

केवटीनी केवट आउ तेहि बारा। कमठ कमठ तै कीन्ह पुकारा॥
सावक अपन लेहु तुम्ह आइ। कंत हमार परम अनीआइ॥
सुनी असो बचन केवटनी केरा। जलते नीकल षटमुष हेरा॥
सावक लै तेइ धरु तेही आगे। कर जोरी वीनैइ करै तेही आगे॥
पाही पाही हम सरन तुम्हरी। वीनइ बहोरी केवट कै नारी॥
लीजीउ आपन अंड बीचारी। घटै वेगि तस कहेउ वीचारी॥

केवटनी कहै कमठ सनु नेती न कीन्हो कंत।
तुम्ह नीज क्रीपा वीचारीए जीमी पल पालै संत॥

अंत—

\+ \+ \+

सुनी असी वएन वहै नीप रानी।
पगु परी बहुरी बोली म्रीदु वानी।
संकुच सेदेह कहत मीठी बाता,
आए सकल संग तउ ! माता।
केहरी वर कँह लीउ बोलाइ,
सभ कहइ वेगी लेथु हँकराइ॥

आए केहरी वर सुनी आगे,
अएसु होइ सो करउ सुभागे।
कहै धरती वनसपती गाइ।
सभ पसु तुरीत लेहु हँकराई॥
तेही अवसर एक कुंजल धाए।.........

—अपूर्ण

विषय –

हरिहर पुराण के आधार पर केवट केवटनी संवाद पच्छिम के घोड़ों का राम दर्शन के निमित अयोध्या जाना, धरती, वनसपती और पशु संवाद तथा सबका रामदर्शन को चलना। सिंधु-नृप पशु-धरती वनस्पती संवाद।

संख्या १६५. साखी, रचयिता—बुल्लासाहब (भुड़कुड़ा, जिला—गाजीपुर), कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३८ वि० और १८४० के बीच, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—महंत श्री राजारामजी, स्थान और डाकघर—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया

आदि—

श्री स्वामी बुलानंद जी की साषी।

सीस फूल वेंदी फुली सोभा अनंत अपार।
मेर डंड झलकत रहै जन बुला ब्रह्म वीचार॥
'बुला' भजन षरग की घार है कोई त्यागी सनमुष होइ।
लरै तौ कोइ सुरीवा जाती वरन कुल षोइ।
गगन गरजीआ हे सखी 'जन बुलही' भयो अंदेस।
कब पीअ पावो वेलसों नातौ कहौ संदेस।
अधर धार धुधकत रहै सनमुष चढो न जाए।
'बुला' गुर परताप ते चढो नीसान वजाए॥
'बुला' फुला गगन में बंक नाल गहि मूल।
नहीं उपजै नहीं विनसै सदा फूल का फूल॥
ऐन झरोषे नैन है राम वइठी दरवार।
जब 'बुला' हाजुर में रोके सब परिवार॥
पवन पीआदा लाइकै मुंदे नवो दुवार।
पाँच पचीस कसरी करै मोहकम दीजे हमार॥

+ + +

अंत—

'जनबुला' तन मन सोधी कै प्रेम प्रकास मीलाए।
'इआरी जन' सत गुर मिले दुवीधा सकल मीटाए॥
कुल कै पसम पीआरिआ देषी षसम का रूप।
सेत सिंघासन चढ़ी चले जन बुला अलष अनुप॥
जीवो जो लाइ साँच की रही न घट में कांचु।
'जनबुला' हृदय वीचारी कै नीभो होए कै नाचु॥
एह तन को डावां कीयो पत्तन पान धरी राषु।
मन तमोली फेरइ जन बुला हरी रस चाषु॥
माआ मन की मोहनी मोही रही संसार।
'जन बुला' जोती समानेउ माआ मारी पैजार॥
माआ के सबकै रहे करै नीगुन सो हेतु।
नीर्गुन की गती बुझते छुटा सभन सो पेत।
आठ पहर बतीस घरी भरो पीआला प्रेम।
जन वूला कहैं वीचारी कै इहै हमारो नेम।
आठ पहर वत्तीस घरी जन बुला धरत हैं ध्यान।
नहीं जानो कवनी घरी आइ मीलैं भगवान।
आठ पहर वतीस घरी मन रहतु मेरे पास।
'जन बुला' हीदए वीचारीआ इह जानो वीस्वास॥
षट क्रम षट सास्त्रु षट धर्म षट पुन्य।
षट पुजा षट कीरीतन इह सब करी कै सुन्य॥
या तन चंदन मन तीलक है सत्य......॥

× × ×

—अपूर्ण

विषय—

निर्गुण मतानुसार ब्रह्म ज्ञानोपदेश किया गया है।

संख्या १६६. अमृत भाषा गीत गोविंद, रचयिता—भगवानदास, कागज—देशी, पत्र—४७, आकार—१२½ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४१०, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० शिवपूजन प्रसाद मिश्र जी, ग्राम—मिश्र जी की मठिया, डा०—वैरिया, जिला—बलिया (उ० प्र०)

आदि—

मुखरमधीरं त्यज मंजीरं रिपुमिव केलिषु लोलं।
चल सखि कुंजं सतिमिर पुजं शीलय नील निचोलम्।

मुखरमधीरं शब्द करि आतुरहे। त्यज मंजीरं। येसे नुपुर को त्यज। रिपु मिव केलिपु लोलम्। संकेत स्थान के विषे जे वाचाल होइ ते सबै कों उचित न जाने यासे हे नूपुर। चल सखि कुजं। हे सखि राधे तुम कुंज प्रति चलहु। सतिमिर पुजं। अरु अंधकार का पुंज होइ येसे अथवा अंधकार को पुंजहै जा कुंज विषै। शील नील निचोलम्॥ अरुनील साडी को पहिरहु। नीलो वस्त्र ताकरि अनुकूल रसु पोषनो ताकी सामग्री कहीं। अरु गौरांगी जे तूं अरु नीला वस्त्र ताकरि शोभा को विशेषता करि मोहन जे कृष्ण ताकों भी मोहन होइगो यह कह्यो॥ केलि सुलोलं कहीं ये सो पाठ हे॥ तहा क्रीडा के विषै उपजावोगी हे ताते जे बोलहि ताते ये सो आभरण पहिरनो यह तात्पर्यं॥ अहो मंडन के त्याग से शोभा की हानि होइगी या कारण ते परस्पर मिलत जे भूषण को अंग तिन करि परम शोभा होइगी ये सी उत्कंठा को उपजावत स ते कहत है॥

अंत—

श्री राधा अपने शृंगार केऽर्थ आज्ञा दई ताकरि अति प्रीतिवंत भयो तातें सुप्रीत पीताम्बर कस्यो। श्रीभोज प्रवस्य रमादेवी सुत श्री जगदेवस्य परासरादि प्रियबंधु कंठे श्री गीत गोविंद कवित्वमस्तु॥ श्री भोजदेव ताते हे उत्पति जाकी देवी को पुत्र जयदेव तिनको जे श्री गोविंद कवित्व ते परासर आदि दै करि जे प्रियबंधु तिनके कंठ विषे होउ॥

इति श्री किन्दु बिल्वीय कविराज जैदेव कृत गीत गोविन्दस्य प्रबंधः समाप्तः॥ शब्दोदधाव। शब्द को उदधि अलंकार रस छंद प्रबंध हाव भाव संजोग वियोगादिक अरु अनुप्रास दोषादोष इत्यादि कवि कर्म जे हैं॥ नाम्नत॥ जो इतनो न जाने॥ भास्य ज्ञानार्थ निश्चये। भाषा को जो ज्ञान ताके विषे विश्वास होइ। तेषां भगवद्दासेन तिनके हेतु भगवानदास रामानुजा चीरंजी भाषामृत प्रतत्यते॥ अमृत भाष्य गीत गोविंद को विस्तारचौ है जिनि॥ इति श्री वल्लभो जयति॥ श्री कृष्ण॥

शब्दोदधाव नम्नाता भाष्य ज्ञानार्थ निश्चये॥ तेषां भगवद्दासेन भास्यामृत प्रतन्यते॥

विषय—

राधा कृष्ण की क्रीड़ाओं का वर्णन किया गया है। यह गीत गोविंद का गद्य में अनुवाद है।

संख्या १६७. प्रेम पदारथ, रचयिता—भगवानदास, कागज—देशी, पत्र—३९, आकार—५¾ × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५६४, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

आदि—

श्री राधा वल्लभो जयति। श्री हितहरिवंश चंद्रो जयति॥ अथ प्रेमपदारथ लिख्यते।

॥ दोहा॥

लीला ललित गुपाल की सुधा सिंधु सुखरासि।
कहि भगवान हित रामराय के पीवत वाढ़ैप्यास॥ १॥

चौपाई

जाके प्रीतम नंद किसोर। कृष्न नंद ताकें नैन चकोर ॥
चरन कमल पर अलि जाकौ मनु। ताहि न भावै और कछू धन ॥
यह लीला लागे जिय ताके। हरि मूरति हिर्दै होय जाके ॥
वृंदावन अति सघन अनूप। तहा विराजत कृष्ण स्वरूप ॥
खोलि धरयौ कंकनमुख जेसैं। आस बहे जमुना तेसें ॥
प्रिया सखी निजु ता वन रहें। यौं हरि भजे जु हरि मन गहें ॥
जुतो सबै प्रेम की मूरति। कहाँ लगि बरनों तिनकी सूरति ॥
कमल नैंन तन रहें निहारि। वृंदावन में करे विहारि ॥

दोहा

प्रेम भगति जब ऊपजे जाने कृष्ण सरूप।
दुविधा मनते दूरि सरगुन रवि निर्गुन धूप ॥ १ ॥

अंत—

मगन भई सबहिन पायो सुख,
निरषि रही सब संतनि कौ मुख।
जोरि जोरि कर अस्तुत करें।
उमंगि उमंगि सब पायन परें।
वह लीला लागे जिय ताकें,
कमल नैंन प्रीतम होय जाकें।
जापर कृपा करें राधा पिय।
निस दिन वस्यौं रहें ताके जिय।
जाकौ अति ऊजल सुंदर मन।
ताकौ मन हरि लेय श्याम घन ॥
ताकौ और कथा नहिं भावै।
निस दिन मगन कृस्न गुन गावै।
ताहि न काम क्रोध संतापै,
माया चल कबहूँ नहिं व्यापै।
जग जंजाल ताहि नहि काल।
जाके प्रीतम मदन गुपाल।

दोहा

जाकौ भावै यह कथा सोई पुरुष पुरान।
राम राय के हेत जानिके कहे दास भगवान ॥

इति श्री प्रेमपदारथ संपूरन ॥ समापतः ॥
शुभ ॥ मस्त ॥ श्री ॥ श्री ॥ श्री ॥ श्री ॥

विषय—

कृष्ण भक्ति की महिमा, फल तथा लक्षणों का निरूपण है।

संख्या १६८. हरिचरित्र पारायण अमृत कथा (वृंदावन खंड), रचयिता—भगवानदास, कागज—देशी, पत्र-१६०, आकार—७.१ × १०.५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०८०, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३१ वि०, प्राप्तिस्थान—संग्रहालय, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ श्री सरस्वत्ये नमः ॥ श्री राधा कृष्णाय नमः ॥ श्री राम ॥ अथ कृष्ण अवतार कथा वृंदावन खंड लिष्यते ॥

॥ सोरठा ॥

गणपति पद जल जात वंदों वाक समेत हिय।
करत चरित विष्यात प्रभु गुण वोर निवाहिये ॥ १ ॥
शुभ गुन जदुकुल चंद पारिक्षित सुनियै विमल।
पारायण सुख कंद मधुर भक्ति सर सरस वर ॥ २ ॥

चौपाई

जो रस विधि हरिपर मुनि पाये। नारद मुनि पहँ बिमल बताये ॥
नारद व्यास कहा समुझाई। सुनि मुनि रुचिर भागवत गाई ॥
रिषि मुनि संत सुजन रस चाषा। तासु स्वाद मुनि कीन सभाषा ॥

अंत—

रिषि मुनि संत अनेक जुग करत ध्यान मन वीध।
सहज कृपा केवट गुहा सवरी कुविजा गीध ॥ ४८० ॥
सिकिलीगर शुक वचन वर सुजन कृपान समान।
सुनत मलत कलिमल विगत कढ़त और तन ग्यान ॥ ४८१ ॥
सहस दोय सतचार पुनि वृंदावन सुखकंद।
'भगवान दास' वरनी कथा असरसठि तामै छंद ॥ ४८२ ॥
वृंदावन कहि पुनि कहत मथुरा खंड सुदेस।
विमल त गावत व्यास सुत हित करि सुनत नरेस ॥ ४८३ ॥

इति श्री हरिचरित्र पारायण अमृत कथा वृंदावन खंड संपूरणो नाम बहतरिमो अध्याय: ७२ मिती कार्तिक कृष्ण भृगु धन तेरसि सुखदानि। शशि[१] शिवदृग[३] ग्रह[९] चंद्र[१] पुनि सोई संवत जानि। श्री राधाकृष्णायनमः।

विषय—

इस ग्रंथ में 'वृंदावन खंड' और 'मथुराखंड' नाम से दो खंड हैं जिनमें क्रम से भागवत के पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध की कथाएँ दी हुई हैं। हस्तलेख में उक्त ग्रंथ का 'वृंदावन खंड' नामक भाग है। इसमें ७२ अध्याय हैं जिनमें कंस जन्म, देवकी तथा वसुदेव का विवाह, कृष्ण जन्म और व्रज की लीलाएँ वर्णित हैं। अंतिम अध्याय में अक्रूर के साथ कृष्ण के मथुरागमन का भी वर्णन है।

ग्रंथ की रचना व्रजभाषा में हुई है और इसमें २४०० चौपाई तथा ६८ छंद हैं।

संख्या १६९. बारहमासा, रचयिता—भगवतीदास, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—७$\frac{3}{4}$ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी और कैथी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—सरलचौबे तथा रामनिरेखन चौबे, स्थान और डा०—सहतवार, जिला—बलिया (उ० प्र०)

आदि—

उमडी बादल फिरत चहूँओर गरजी गुरूजी सुनावही।
मास ऐसो निठुर हे सषी री सास अरहरनी आवही।
सावन रीमी झीमी बुंद बरषै जोर से झरी लावही।
बनही चात्रीक मोर बोलै दादुल सबद सुनावही॥
भादौ अती घन घेरी आये अवरी दमकै दामिनी।
सुनी सेज घर कंत नाही अवरी डरपै कामीनी।
आसुनी आवनी काहि गये पीअ आस अवन की भए।
ताल भरी भरी नीर सोषत एही बीधी बरषा बीतीगए।
मास कातीक कामी रही पीअ पीअ रहो अकेली हो पड़ी।
हम जीअही कवन अधार उधौ जोगते……जुग भरी।
अगन सषी रीतु जाई आई साम (? स्याम) कीछु औनौं कही गैए।
साम के जे कठिन हीअरा बीहरी के नाही दुरी भैए॥
पुसहु नाही साम (? स्याम) आए कवनी बीरहीनी बसी कीबो।
हीली मीली उनको सुष दीन्हो दुष उनको हरी लीनो।
माघ दुआरे सेज पीअरी कतन सेछा पढाइए।
तुहु जीअत बाला मुअत अबला मुअल आनी जीआइए।
फागुन सषी सभ होली षेलही चीत माह उपज अनंद घना।

चोत्रा चोली लपट केसरी तीलक वेसरी अती घनी ।
चइत चहुँओर फुल फुलै भवर जाइ लोभाइए ।
मुरूष पीअवा मरम नो जानै सभै प्रीत लगाइए ।
''तहु तन की लाज ते सषी चलवु पीअही मनाइए ।
तवतराज सुत जेठ उगै अंगन वीरहीनी सोहूरए ।
गावही 'भगवतीदास' हे सषी बाहूमास सुनाइए ॥
बारहुमासा शंपूरन संमापते जो देषा शीलीषा मम दोषणा दीऐते ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

श्री कृष्ण के परदेश गमन पर किसी गोपिका का विरह वर्णन किया गया है ।

संख्या १५०. नासकेत कथा, रचयिता—भगौतीदास, कागज—देशी, पत्र—२१, आकार—१३ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—५६८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६८८ वि०=सन् १६३१ ई०, लिपिकाल—सं० १८७४ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० चंद्रदीप पांडे, ग्राम—पिड़ोथ, डा०—भमिला, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्री गणेशायनमः श्री सरस्वती नमः श्री भवानी शंकर सहायेनमः । श्रीरामाए नमः श्री नासकेत कथा पिप्पलादिक मुनि ॥ उद्दालिक मुनि शंवादे प्रारंभः ॥

जेहि सुमिरे सवपात निपाता । आपुहि सर्व वस्तु के दाता ।
एक दंत कर संकर लीन्हा । संतन्ह सदा अभै पद दीन्हा ॥
सुरनर मुनि गंध्रप मनावही । निभैं सुमिरत तुअ वर पावही ॥
सिर सुंदर गज वदन विराजै । छुद्र घंटिका सुंदर वाजै ॥
भुजां चारि सोभित सभ सुंदर । वाहन जासु विराजत उदर ॥
कर फरसा कुसरुनि सोहै । गवन घरन सुंदर सुर मोहै ॥

॥ दोहा ॥

मन मोदिक दै परसहि सिधवीष ते लेहि ।
नासकेत गुन वरनौ जौ मति अछर देहि ॥

आदि सकति सुंदरि सुकुमारी । चरन रेनु जनमै वलिहारी ॥
तोहते ब्रह्मा विष्णु तृपुरारी । तुअ माया त्रिभुवन विस्तारी ॥

+ + +

संवत सोरह[१६] सै भए अठासी[८८] । ज्येष्ठ मास दुतिआ परगासी ॥
सुकुल पछ औ सोमक वारा । मिरिगसिरा नक्षत्र कीन्ह उपचारा ॥

\+ + +

॥ दोहा ॥

संत भक्त के सेवक हरि चरनन्ह कै आस ।
नासकेत गुन गावहीं 'नृप भगौतीदास' ॥

अंत—

नासकेत देषि अस आए । ते रिषि सब मंदिलै सिधाए ॥
आदर भाव भगित मनुहारी । रिषि सुष मानि जो चलै विचारी ॥
नासकेत जे सुनहि पुराना । शंतत सुष हरी पुरन कामा ॥
गंगातट सेवहि जो कासी । ते हरिलोक रहि सुषवाशी ॥
तैसे नासकेत अनुमाना । तेन्ह घर होइ सदा कल्याना ॥
नासकेत सुनहि मन लाई । जम व्यापिक दुष सदा नसाई ॥
नासकेत वनज से सुनी । तसि भूषा छापा लै गुनी ॥
ऐहिकर मन अभिमान न कीजेहु । सहज सुभाउ मानि किछु लिजेहु ॥
मानहु वद्रि परसी केदारा । सिव माथे पुजि जलधारा ॥
गंगा मह त्रीवेनी कीन्हा । गाइ सहस्र दीन तहाँ दीन्हा ॥
कासी परसी गया होइ आय । पित्रन्ह पित्र कै पिंड दीआय ॥
पुष्कर पुन्य कीन्ह अस्नाना । ग्रहन समै कुरछेत्र प्रमाना ॥
हरिद्वार हरिराए मनाय । शकल तीर्थ मनकर्मं घनआय ॥
अतना फल पावै पुनि सोई । नासकेत स्रधा से सुनै कोई ॥

॥ दोहा ॥

अमृत कथा नासकेत कै सुनै सो होइ हुलास ।
पापी वर्जित सुनैहि जे कहत 'भगौवति दास' ॥

इति श्री गरुड पुराने नासकेत कथा प्रसंगे सकल रिषि संबोधनो नाम अष्टदसमो अध्याय सम्वत ॥ १८७४ ॥ साके १७४० पुसमासे कृष्णपक्षे ऐकादश्यां तिथौ बुधवासरे ॥

विषय—

नासिकेत ऋषि की कथा का वर्णन ।

रचनाकाल

संवत सोलह[१६] सै भए अठासी[८८] । ज्येष्ठ मास दुतिआ परगासी ॥
सुकल पछ औ सोमकवारा । मिरिगसिरा नक्षत्र कीन्ह उपचारा ॥

संख्या १७१. हित भजनदास की बानी, रचयिता—हित भजनदास, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—९.३ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७६ वि०, प्राप्तिस्थान—इलाहाबाद म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

॥ श्री हित व्यास नंदनो जयति ॥

॥ अथ श्री हित भजनदास की वानी लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

जै श्री चितवनि अलि सुषद नित्य सिद्धि हित रूप ।
जासु कृपा हित भजन गुरु पायो रसद अनूप ॥ १ ॥
श्री हित मंत्र स्वरूप गुरु श्रीहित भजन रसाल ।
प्रगटे भो कल्याण हित सरनागत प्रतिपाल ॥ २ ॥
श्री हित भजन कृपाल बिनु मेरी गति नहि आन ।
जिन मोहू से पतित की पकरि बाँह सुजान ॥ ३ ॥
असे गुरू विन को कहै यह रस अकह अपार ।
जामैं मिले न और कछु केवल प्रेम विहार ॥ ४ ॥
श्रीगुरु मुष तें जो सुन्यौ ताही रस अनुकूल ।
मेरी मति अनुसार कछु कहौं सकल सुष मूल ॥ ५ ॥
श्री हित चितवनि कृपातें कुँवरि चरन चित लाइ ।
वरनौ नित्य विहार रस श्री गुरु पद सिर नाइ ॥ ६ ॥

अंत—

श्रीहित चितवन कृपा बिनु कौने चलै इहिचाल ।
प्रेम गैल अतिही कठिन कछू न लागै ताल ॥ ९७ ॥
याते श्री हरिवंश पद भजि मन करि विस्वास ।
श्री हित दंपति केलि बन पावै निकट निवास ॥ ९८ ॥
यह प्रबोध कल गैल जे उर धरि करैं विचार ।
श्री हित जू के भजन वल पावै नित्य विहार ॥ ९९ ॥
श्रीहित मंत्र इष्ट हित गुरु हित भजन सुजान ।
सदा बसो मो हीय मैं यह मागौं वरदान ॥ १०० ॥
इष्ट गुरु अरु मंत्र निज एक रूप रसषानि ।
इनकौं तजि औरहि भजै सो विभचारी जान ॥ १०१ ॥

दोहा एक अरु एक सत कहे भजन हित हेत।
वांचै जाच विचार जो राचै हित चित चेत ॥ १०२ ॥

इति श्री हित चेतनदास जी के चेला हित भजनदास जी की वानी संपूर्ण ॥ संवत १८७६ ॥ मिती जेठु ५ ॥

विषय—

प्रस्तुत 'हित भजनदास की वाणी' राधा वल्लभी संप्रदाय संबंधी रचना है। इसमें १०२ दोहों में भजनदास जी ने राधाकृष्ण के प्रेमविहार का वर्णन किया है। आरंभ में गुरु चितवनि अलि अथवा चेतनदास जी की वंदना है। तदपश्चात् श्री हितहरिवंश जी की प्रार्थना है। अंत में युगलमूर्ति का रस विहार वर्णित है। रचना धार्मिक अथवा सांप्रदायिक है, काव्य रचना नहीं है।

संख्या १७२. वाणियाँ, रचयिता—भरथरी। इनकी वाणियाँ संख्या ५९ के विवरण पत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या १७३ क. भागवत चरित्र, रचयिता—श्री भागवतदास, स्थान—प्रयाग और शिलावनकुटी, जिला फतेहपुर, कागज—देशी, पत्र—२८०, आकार—५.६ × १३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८६३ वि०, लिपिकाल-सं० १८८० वि०, प्राप्तिस्थान-श्री पं० रामकृष्णजी शुक्ल, सुदर्शन भवन, सूरजकुंड, प्रयाग, इलाहाबाद

आदि—

श्रीमते रामानुजाय नमः अथ भागवत चरित्र लिख्यते ॥ स्यामा बदातमरविंद विशाल नेत्रं बंधून पुष्प सदृशा धरपाणिपादं ॥ सीता सहाय मुदितं भृतचाय वाणं रामंनमामि सिरसा रमणीय वेषं ॥ १ ॥

॥ छप्पै ॥

जय जय जय जगदीस जैति श्रीपति सुषसागर ॥
जै मुकुंद छबि धाम राम रघुपति अति नागर ॥
जै श्रुति संभव ईश जयति गणपति सिद्धि दायक।
जै नारद सनकादि सारदा हरिगुण गायक।
जै भाष्यकार त्रैलोक्य गुर श्रीरामानुज धरनिधर।
भागवत दास पद कंज रज वंदै सिर धरि जोरिकर ॥

वंदो चरित भागवत गंगा। निरषत जाहि होइ अघ भंगा ॥
उपजी दोउ हरि पद ते पावन। जलमय जनमय सरित सुहावन ॥

सुकवि विरंचि कमंडल जैसे । श्रोता भागीरथ वर तैसे ॥
संत कथा यह गंग तरंगा । चली करत अघ पर्वत भंगा ॥
लोक वेद मत मंजु किनारे । कथा प्रसंग मिलत नद नारे ॥
राम कृष्ण कीरति विख्याता । मिली मनहु रविजा सर जाता ॥
वृंदा कीर्ति परसधर नामी । मिल्यो सोन नद सालिग्रामी ॥
जल समूह हरियश छवि छाये । संत कथा बहु भ्रमर सोहाये ॥
चारि व्यूह थल दिव्य सोहाये । घाट विविध अध्याय बनाये ॥
दोहा छंद अमित चौपाई । ते जलचर विचरत सुषपाई ॥
भक्ति तरंग विविध अति शोभा । ज्ञान स्वक्षता लषि मनलोभा ॥
चलत वक्रगति सोई कविताई । भाव मूल उथल गहिराई ॥
उपश्रोता पुर ग्राम सोहावन । संत सभा काशी अति पावन ॥
नित नेमी श्रोता नर नारी । ते वन विटप बाग फुलवारी ॥
मन विहंग सुष फल लहै नाना । प्रश्न परस्पर सोई जल जाना ॥

दोहा

वकता पंडित विप्रवर अन्हवावत हरिदास ।
मंजि चारि फल लहहिं जे सुनहि मानि विश्वास ॥ ७ ॥

मिल्यो उदधि हरि रूप उजागर । भा यह चरित सुगंगा सागर ॥
चारि व्यूह चौमुख वर धारा । कष्ट काष्ट काटै कै आरा ॥
संत कथा यह काम दुहासी । सकल जीव तारै यह कासी ॥

(भा० च० व्यूह १ अ० २)

\+ + +

मोहि गुरु सोइ कथा सुनाई । जो नाभा तुलसी ते गाई ॥
तीरथ राज प्रयाग अति पावन । पाप तिमिर कह रवि दुषदावन ॥
तिहि थल गुरु यह कथा रसाला । मोहि सुनाई करी प्रतिपाला ॥
अष्टादस सै तिरसठि संवत । करौ कथा हरिजन जस संतत ॥
कार्तिक शुक्ल पक्ष बुधवारा । नौमी तिथि शुभ योग उदारा ॥
कृष्ण जन्म धरनी सुचि जानी । नाम मधुपुरी वेद वषानी ॥
तिहि पुर मध्य कथा विस्तारी । निरषत जाहि मिटैं अघ भारी ॥
करि जमुना मज्जन हरि ध्याना । कीन्हेउ चरित भागवत गाना ॥

भा० च० अ० ३ व्यूह १

× × ×

दोहा

रामचंद्र जबते भए दसरथ के गृह माहि।
तबते सुष तजि अवधपुर अनत जात कहु नाहि॥

जो सुष संपति नृप गृह छावा। सो कुवेर पुरहुत न पावा॥
नर पुर सुर पुर सरिता जेती। कहत धन्य सरजू कह तेती॥
देव सकल मुनिवर जग जेते। आए अवधपुरी सब तेते॥
लषि रामहि अतिसै सुपरासी। तजि निज पुर भे अवध नेवासी॥
पोषत कौसिल्या सुत केसे। उजियर पछ निसाकर जैसे॥
उवटन तेल लगावत नीके। फनि मनि सम राखत निजजीके॥
चदुवा चारु चंद मणि दीन्हो। कठुला गजमनि भूषित कीन्हो॥
दीन्ह दिठौना पुनि दृग आजे। जिनहि विलोकि चराचर राजे॥

दोहा

पीत भीन झिगुली लसत सुंदर स्याम सरीर।
दीपावलि छबि देत जनु कालिंदी के नीर॥

कचन मणि मै नृप अंगनाई। सांझ समै वैठे रघुराई॥
अर्द्ध जाम जब जामिनि वीती। राम विलोकेउ ससिहिं सप्रीती॥
पूछेउ मातु सिंधु सुत गावा। कहेउ षेल बना दे मन भावा॥
अति वडि दूरि मिलिहि सुत कैसे। सुनत वचन गे मचलि अनैसे॥
चंद मगाइ राषु हठ मोरा। न तुम मातु न मै सुत तोरा॥
बहुविधि कौसल्या समुझाए। लोटत पुहुमि न उठत उठाए॥
तव जल धरि ससि छाह देषावा। निरषत हरषे जनु ढिग आवा॥
हसत धरत नहि आवै पानी। कौतुक देषै रानि सयानी॥
जासु छाह ते भुवन अनंता। विस्वै प्रकृति कहै श्रुति संता॥
सो ससि कर प्रतिविम्ब निहारी। मगन भयो ह्व सत्य विचारी॥

दोहा

कहेहु जाहु ससि निज सदन दीन्हो जल ठहराई।
कौसिल्या लै राम को भवन सोआए जाई॥

चौपाई

भोरही भूपति जागि सुभाए। गुरु हरिहर पद पदुम मनाए॥
सोअत श्री रघुवीर निहारे। कही जगावहु प्रान पिआरे॥
कर गहि रानि राम जगावै। उठहु तात तव तात वोलावै॥

मुष पट षोलि चितै हसि दीन्हो। बहुरि सलज्जित ह्वै ढकि लीन्हो ॥
भूप कही सुत लेहु षेलवना। ललकि उठे हसि जिमि हरि दवना ॥
भूषन वसन सवांरेउ रानी। मोदक मधुर धरे कर आनी ॥
मोद समेत गोद नृप लाए। तेहि छन कवि पंडित वर आए ॥
विप्रन कह परनाम करावा। रामहिं निरषि सबहि सुष पावा ॥

दोहा

भरत लषन रिपु दवन लै दासिन सहित समोद।
बैठारे महिपाल के आनि सुवन सव गोद ॥

अंत—

श्री हरि हरिजन गुर हृदय पावन विसद अकास।
रवि मनि सम तह नित लसै चरित 'भागवत दास' ॥
कामहि नय त्रिय धन कृपिहि पितु मातहि लघु वाल।
इमि प्रिय लागहि मोहि नित हरि गुरु संत कृपाल ॥

इति श्री भागवत चरित्रे पर्म पवित्रे हरिजन मित्रे चतुर्थ व्यूहे सुचनिका वर्णनोनाम अष्टादशोध्याय १८ च्यारौं व्यूह संपूरन ॥ संवत १८८ लिखितं प्रयाग मध्ये श्री रामदास वैष्णव लिखितं सुक्ल पछे कार्तिक मासे रविवारे ॥

विषय—

प्रस्तुत 'भागवत चरित्र' नामक वृहद् ग्रंथ में चार व्यूह अथवा खंड हैं और प्रत्येक व्यूह में १८-१८ अध्याय हैं। ग्रंथ का मूल विषय भगवान् और भक्तों के चरित्रों का वर्णन करना है। इन चरित्रों में अधिकांश पौराणिक हैं, जैसे—प्रह्लाद, ध्रुव, राम एवं कृष्ण आदि। शेष ऐतिहासिक हैं, जैसे :—

व्यूह १—शंकराचार्य, रामानुज और श्री संप्रदाय, निम्बार्क और सनकादि संप्रदाय, मध्व, विष्णु स्वामी।

व्यूह २—जैमल, मीरा, नरसी, जयदेव, निम्बार्क संप्रदाय के भक्त केशव भट्ट, श्रीभट्ट, हरिव्यास, सोमुराम और चतुरदास।

व्यूह ३—माध्व संप्रदाय चैतन्य, रूप, सनातन, जीव, सूरदासमदनमोहन, श्रीनारायणभट्ट, हित हरिवंश, हरिदास, व्यास, कबीर, पीपा, रैदास, धना।

व्यूह ४—तिलोचन, नामदेव, वल्लभ, विट्ठल, कृष्णदास, सूरदास, गोकुलनाथ, गोविंद गोसांईं, रत्नावती, तुलसीदास।

इन चरित्रों का आधार अनुश्रुतियाँ ही हैं। ग्रंथ का रचनाकाल सं० १८६६ वि० है अतएव ये चरित्र परम्परागत मात्र हैं। इनमें ऐतिहासिक तत्व न्यून है।

ग्रंथ के अंत में अर्थात् चतुर्थव्यूह अध्याय १८ में रचयिता ने समस्त कथावस्तु की सूची प्रस्तुत की है जो नीचे उद्धृत की जाती है :—

चौपाई

प्रथम कहा सत संग अनूपा। चरित भागवत विष्णु स्वरूपा॥
चरन चिन्ह कहि प्रेम दिढावा। श्री हरिनाम महातम गावा॥
पंचाली को पट जिमि बाढा। कह हरि भस्मासुर जिमि डाढा॥
नमुचि वध बुध संकर लीला। वरने सब आचरज सुसीला॥
श्री रामानुज कर अवतारू। श्री पद्धति वरनी अति चारू॥
लाला चारज चरित सुनाये। रामानंद राम सम गाये॥
कृष्णदास अरू कील की गाथा। पृथ्वीराज जिमि भए सनाथा॥
कह जिमि तप किये वद्रीनाथा। अरू अर्जुन मोर धुज गाथा॥
प्रेम विदुर सेवरी कर गावा। स्वेत दीप को चरित सुनावा॥
कुल सेपर जिमि दरसन पावा। संभु अगस्त समागम गावा॥

बाल चरित रघुवीर के वरने विविध प्रकार।
श्री अवतार कथा कही अरू नरसिंह अवतार॥

गुर निष्ठा जैमल चरिताई। वरनि जिमि मीरा गति पाई॥
पद्मकल्प अरू कपिल प्रसाद। वरना जनक जोगि संवाद॥
ध्रुव कै कथा कही मन लाई। जिमि करमैती भक्ति दिंढाई॥
नरसी निबारक चरिताई। कर हरिवासर कथा सुनाई॥
विप्र चरित्र माधव की गाथा। कवि जयदेव लहे जिमि हाथा॥
सुर ब्रज वसे सो कथा वषानी। कंसहि जथा भई नभ बानी॥
कृष्ण जन्मि जिमि गोकुल आये। कहै पूतना चरित सोहाये॥
तृणावर्त्त वध सिसु चरिताई। जिमि मातहि माया देषराई॥
कही कथा जिमि गही मथानी। धनद सुतन कै सुगति वषानी॥
बत्सासुर वक वध कही अवर अघासुर नास।
ब्रह्मा की माया कही पुनि वृंदावन वास॥
धेनुक बध काली की गाथा। कही लीन्ह जिमि गिरवर हाथा॥
रहस केलि कै कथा सुनाई। संष चूड़ अरु अहि गति गाई॥
वृषभा सुर के बध बषाना। नारद कंस दीन्ह जो ज्ञाना॥
केसी वध अक्रूर की गाथा। कह जिमि मधुपुर गे जदुनाथा॥

रजक बद्ध मालीक प्रसंगा। कुविजा सुगति धनुष के भंगा॥
गज जिहि जिहि बिधि मल्ल पसारे। कंस निपाति सुभट रन मारे॥
उग्रसेन कह जिमि नृप कीन्हो। पढ़ि विद्या गुरु सुत जिमि दीन्हो॥
गोपिन्ह मिलि उद्धव जिमि आये। नाभा विसद चरित सब गाये॥

कहि मुचकुंद कथा विसद जरा सिंधु की. जंग।
राम कृष्ण के व्याह कहि अरू मणि को परसंग॥

नारद मुनि की कथा सुनाई। अरू दुर्वासा की चरिताई॥
कृष्ण विभव नाना विधि गावा। विप्र सुदामा जिमि धन पावा॥
बहुरि माध्व संप्रदाय सुनाई। नित्यानंद कृष्ण चरिताई॥
रूप सनातन कर बैरागू। कहा व्यास कर जन अनुरागू॥
श्री हरिवंस की प्रीति बषानी। श्री हरिदास कथा रसषानी॥
अंबरीस कर भाव बषाना। पर्म प्रेम जिमि रानी ठाना॥

वरने रामानंद के दास अनंत कबीर।
धना सेन रैदास दै नृप पीपा गंभीर॥

देव मुरारी गजहि जिमि तारा। कहा भाव जन प्रेम अपारा॥
विश्वामित्र परस धर गाथा। कही जथा भंजे नृप गाथा॥
गाधि तनय जिमि रामहिं ल्याये। कीन्ह यज्ञ सो चरित सुनाये॥
मुनि त्रिय गति गंगा की गाथा। कही मिले जिमि तिरहुत नाथा॥
कही सिया जिमि रामहि देखा। धनुष कथा वरनी सविशेषा॥
धनुष भंग रघुवीर विवाहू। परस राम संवाद निबाहू॥
जन्मेजय ते वैसंपायन। कही कथा सो अति सुषदायन॥
धर्म तनै को मोह प्रकासा। जिमि गंगेय कीन भ्रमनासा॥

वरने हरि ते नाम वपु नाना विध अवतार।
जिमि भीषमवर धर्म कहि भये भवाँ बुधिपार॥

उमा संभु संवाद वषाना। जिमि तुलसी महिमा हरिजाना॥
वरने वृंदा चरित अपारा। बहुरि पवनसुत कर अवतारा॥
विष्णु स्वामि की कथा सुनाई। नामदेव जिमि गाइ 'जिवाई॥
कहे त्रिलोचन वल्लभ ज्ञाता। कृष्णदास विट्ठल सुत साता॥
पुनि समुदाय संत चरिताई। वरनी नाभा अति मन लाई॥
सुमृति पुरान नीत जुत सीला। कह जुत सुतन्ह भक्ति कै लीला॥
वैष्णव दस रहस्य भल वरना। कही प्रश्न उत्तर भ्रम हरना॥
कलजुग गुन कलकि अवतारू। वरना तुलसीदास जस चारू॥

मुनि समूह हरिजन कथा तजि तुलसी तनमान।
हरिहिं भेटि फालिहि गये कृत हरि हरिजन ध्यान ॥

विशेषज्ञातव्य—रचयिता की गुरु परंपरा इस प्रकार है :—

बाबा टहलदास
|
ज्ञानदास
|
रामदास
|
भागवतदास
|
नारायणदास
|
सुदर्शनदास
|
हरिश्चंद्रदास
(वर्तमान)

इनके जन्म अथवा मृत्यु का समय निर्णीत नही हुआ है; परंतु इन्होंने 'भागवत चरित्र' की रचना का आरंभ—जिसका ग्रंथ में उल्लेख है—संवत् १८६३ वि० में मथुरा में किया। इसके अतिरिक्त एक पुराने कागज से इनका सं० १८९७ वि० में होना सिद्ध होता है :—

"मिती पौष सुदी अमावस १५ वार मंगल संवत् १८९७ भूमि ठाकुर क चढाई जिमिदार तिलहापुर के ठाकुर छोटूसिंह दुरगापुर मा० महंत भागवतदास जी कौ जमीन बीगहा २८

दसखत छोटूसिंह"

अतः यह सिद्ध होता है कि ग्रंथकार संवत् १८६३ और १८९७ में वर्तमान था।

संख्या १७३ ख. हनुमान अष्टक, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—६, आकार—३.६ × ४.८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—५, परिमाण, (अनुष्टुप्)—३४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री पं० रामकृष्ण शुक्ल, सुदर्शन भवन, सूरजकुंड, प्रयाग

आदि—

अथ हनुमान अष्टक लिष्यते

॥ दोहा ॥

सकल सुमंगल सुष मिलै विद्या बुद्धि अपार।
जय भगवत सब कार्य कृत सुमिरहु पवन कुमार ॥ १ ॥

तोहि जपै त्रिपुरारि मुरारि सुरेस बिरंचि पदांबुज हेरे।
देव दिगीस चहै करुना सुरसिद्ध लषै पदपंकज तेरे॥
एकहु बार जो नाम कहै न रहै कबहूँ दुष दारिद तेरे।
दीनदयाल बली बजरंग करौ सब सिद्ध मनोरथ मेरे॥ १॥

कार्तिक कृष्ण चतुर्दसि सातौ रिक्ष सनीचर रैन अँधेरे।
जन्म लियौ तव अंजनि के सुर सिद्ध लै आरति पूजि निबेरे॥
कूदि ग्रस्यौ रवि के रथ को उगिले लह्यौ आसिरवाद घनेरे।
दीन दयाल बली बजरंग करौ सब सिद्ध मनोरथ मेरे॥ २॥

बाल की त्रास सुकंठ दुषी न बसै कतहूँ वन पर्वत घेरे।
आइ मिले हनुमंत वली युत मंत्रिन्ह कीन ते मित्र वडेरे।
राम ते भेट कराइ दई तिन भूप किये दिये संपत ढेरे।
दीन दयाल बली बजरंग करौ सब सिद्ध मनोरथ मेरे॥ ३॥

जाई दई मुदरी सिय कों मणि आइ दै राम की सोक निवेरे।
बाग उजारि सुलंकहि जारि हते भट रावन के बहुतेरे॥
सोक विभीषन को करि दूर मिलाइ किये रघुवीर के चेरे।
दीन दयाल बली बजरंग करो सब सिद्ध मनोरथ मेरे॥ ४॥

मूर्छि परे रण लक्षन वीर हनी हिय शक्ति दसानन नेरे।
आनि सजीवन तोषि भरत हते भट रावन के बहुतेरे॥
राम समेत सबै दल को जनु सोक समुद्र ते बूडत फेरे।
एकहु बार जो नाम कहै न रहै कबहूँ दुष दारिद नेरे॥
दीन दयाल बली बजरंग करो सब सिद्ध मनोरथ मेरे॥ ५॥

पैठि पताल वने वर शक्ति सुदेषि प्रभाव महाषल घेरे।
आनि जुरी अति भीरु अपार कपिंद्रहि राम गिराबर ढेरे।
छोरि लये दोउ बंधु गरज्जि मिटे अहिरावन पूछ के फेरे।
दीन दयाल बली बजरंग करो सब सिद्ध मनोरथ मेरे॥ ६॥

बेद पढ़े जब ते जब ही उलटे रथ अग्र उडात करेरे।
कीन मनोरथ देवन को उर साधुन के हरि भाव घनेरे॥
अर्जुन को रथ राखि लियौ जबही भृग दंत गयंदहि फेरे।
दीन दयाल बली बजरंग करो सब सिद्ध मनोरथ मेरे॥ ७॥

कंचन मेरु समान सुदेह लिये कर आयुध रक्षत चेरे।
तको तहाँ तेहि भाँति भए तुम लेहि जहाँ जेहि भांतिहि टेरे।
भागवतदास जु आस किये हरि भक्ति लिये करू चित्त में डेरे।
दीन दयाल बली बजरंग करो सब सिद्ध मनोरथ मेरे॥ ८॥

एकहु बार जु पाठ करै यह अष्टक कै तो त्रिकाल कहाहीं ।
डाकिनि साकिनि भूत पिसाच सबै तेहि देषत दूर पराही ॥
जंत्र औ मंत्र औ तंत्र सबै अनयासहिं तासु के वश्य रहाही ।
भागवतदास कहै तेहि ऊपर श्री हनुमंत दयाल सदाहीं ॥

इति श्री हनुमत अष्टक संपूर्णम् शुभम्

(अष्टक पूर्णरूपेण उद्धृत है)

विषय—

हनुमान जी का अष्टक ।

संख्या १७३ ग. रामायण माहात्म्य, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—४.६ × १०.६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९११ वि० (फाल्गुन कृ० १५), प्राप्तिस्थान—श्री पं० रामकृष्ण शुक्ल, सुदर्शन भवन, प्रयाग

आदि—

श्री गणेशायनमः ॥

अथ रामायण महात्म लिष्यते ॥.........

......कवित्त ॥ वरण प्रीति प्यारी अलंकार जमक भारी कथा अतिसै रुचकारी यहै सर्वोपर ठानिये ॥ गावत त्रीलोक जन भावत है सबके मन कहै यहै संत जन कहां लौ वषानिये ॥ मुक्ति को आगार रामजस सिंगार प्रेम भक्ति को बिचार "भागवत दास" मानिये ॥ तुलसी की बानी श्रीराम पटरानी महा औरन की बानी सबै दासी सम जानिये ॥ ९ ॥

॥ दोहा ॥

देव दनुज नर नाग मुनि जक्ष्य पितर गंधर्व ।
निज मति भरि वर्नन करी कथा राम कै सर्व ॥ १० ॥

श्रोता वकता भवतरे ताही सुनि गाइ ।
पुनि ताको माहात्म को सुनौ सुजन मनुलाइ ॥ ११ ॥

अंत—

छंद

जो रामचरित पवित्र है त्रैकाल नित प्रति ध्यावई ।
सो सर्व पाप नसाई श्री साकेत धामनि पावई ॥

यह रामचरित महात्म भगवत दास वाचै कहूँ मरा।
तिहि धन्य कहि सुर सुमन वरषै स्वर्ग नाचै अपसरा ॥

॥ दोहा ॥

नाम महात्म रामजस वाचै सुनै जौ कोइ।
द्विज गृह तीरथ साधु ढिग तिहि सम धन्य न कोइ ॥ १९ ॥

इति श्री रामचरित महात्म्ये भागवत दास भाषा कृते तृतीयो अंक ॥ ३ ॥ संवत् १९११। मासोत्तमे मासे फागुन मासे कृष्ण पक्षे तिथौ १५ ॥

विषय—प्रस्तुत 'रामायण माहात्म्य' में भगवान् राम के चरित्र की महिमा का वर्णन है। इसमें तीन अध्याय हैं जिनका विषय क्रम से इस प्रकार है :—

अध्याय

(१) संस्कृत के श्लोक
(२) नाभादास का तुलसी विषयक छप्पय
(३) राम की महिमा (जो रामचरितमानस से ली गई है)
(४) राम की महिमा अपनी ओर से
(५) रामायण माहात्म्य की एक कथा

अध्याय २

कुलशेखर की रामभक्ति का वर्णन

अध्याय ३

(१) पद्मभक्त की कथा
(२) नाम महिमा—मानस से
ग्रंथ की रचना दोहा, चौपाई और छंदों में हुई है।

संख्या १७३ घ. रामायण माहात्म, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—४.६ x १०.७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री पं० रामकृष्ण शुक्ल, सुदर्शन भवन, सूरजकुंड, प्रयाग।

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ श्री रामानुजाय नमः ॥ दोहा ॥

चित्रकूट श्री अवधपुर सदा राम को धाम ॥
संत सुषद सब सिधि प्रद सुमिरू कल्पतरु नाम ॥ १ ॥

साधन जिन्ह के लोक कों ब्रह्मा विष्णु महेस ॥
आदि देव श्रीराम भजु जो सब देव दिनेस ॥ २ ॥ चौपाई ॥
नैमष वन तहं रिषय समाजा। सौनक प्रश्न सूत-प्रति साजा।
जग बंधन छूटै मुनि कैसे। राम अचल पद पाइय जैसे।
महाघोर कलजुग अब आवा। आतम ज्ञान वेद नहि भावा।
रत पाषंड ह्रस्व अति देहा। ऊजर घर तन रहित सनेहा।
प्रजा सहित धन हीन अभागे। तन पोषक वैस्या संघ लागे।
तिय पति विमुष पतिउ रतदासी। दोउ कर षंडत सिर दुष रासी।
दंपति अति बाचाल मलीना। सबते नेह रहित धन हीना ॥

\+ + +

यह महात्म निति प्रति सुनै पढ़ै जो भगवत दास।
गंगा का असनान फल पावै बुद्धि प्रकास ॥ ९ ॥

इति श्री अष्ट स्कंधे पुराणे उत्तर षंडे राक्षस विमोचनो नाम प्रथमोऽध्यायः

अंत—

रामायण सब तीरथ तें पर। रहै न भूत पिसाच तासु घर।
ज्येहि के घर रामायण होई। त्येहि घर सम नहि पावन कोई।
वाचै सुनै राम प्रभुताई। सो नर जनु सब तीर्थ अन्हाई।
जोतिवंत नहिं सूर्ज समाना। राम सुजस सम श्रुति न पुराना।
येकहु बार जो सुनै रामायन। सोनर होहि तरन तारायन।
सुनि नारद तें सनत कुमारा। भये नृवृत्ति तुरत संसारा।
सुनै राम प्रिह लीला जो जोई। पुनरावृत्ति नत्येहि कै होई।
वांचै राम चरित जेहि द्विजवर। तासु वदन चितवैं विधि हरिहर ॥

॥ दोहा ॥

धेनु वसन कंचन सहित पोथी विप्रहि देहि।
सो सब पर दातार वनि सहज परम पद लेई ॥

विषय—

प्रस्तुत 'रामायण माहात्म्य' का विषय इसके नाम से स्पष्ट है। इसमें क्रमशः राम की कथा की महिमा उसके प्रभाव से सुदामा नामक व्यक्ति की मुक्ति, संक्षेप में राम की कथा, कथा पारायण की विधि तथा फल वर्णित हैं।

टिप्पणी—रचयिता का एक अन्य 'रामायण महात्म्य' विवरण में आ चुका है; परन्तु प्रस्तुत माहात्म्य में और उसमें अंतर है। दोनों एक दूसरे से भिन्न हैं।

प्रस्तुत माहात्म्य की रचना सूत और सौनक ऋषि के संवाद के रूप में हुई है। कदाचित् इसीलिए इसके प्रथम अध्याय के अंत में 'इतिश्री अष्ट स्कंधे पुराणे उत्तर षंडे राक्षस विमोचनो नाम प्रथमोध्यायः' लिखा है। इससे अनुमान होता है कि इस माहात्म्य में आठ स्कंध होंगे।

संख्या १७३ ङ. तत्वबोध, रचयिता—भागवतदास, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—४'६ × १०'५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री पं० रामकृष्ण शुक्ल, सुदर्शन भवन, प्रयाग

आदि—

श्री गणेशायनमः ॥ अथ तत्वबोध भाषा भागवतदास जी कृत लिष्यते।

॥ दोहा ॥

येकै तत्व अनेक है परमात्मा दरसात।
ताकौ हौं वंदन करौं त्रधा रूप विष्यात ॥ १ ॥

जाकु तनकी समुझ नहि नही तत्व परकास।
तत्वबोध भाषा रच्यौ तिन्ह हित भगवतदास ॥ २ ॥

साधन चारि संजुक्त जो मोक्ष वांक्षा येक।
अस अधिकारी पाइकै कहिये तत्व विवेक ॥ ३ ॥

॥ सोरठा ॥

साधन चारि विभाग नित्या नित्य विवेक यक।
अरु फल भोग विराग षट संपति सुमुमुक्षता ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

ब्रह्म सुसत्य अनित्य जग नित्यानित्य विभाग।
उभौ लोक सुष फल विषै त्यागै स्त्रै वैराग ॥ ५ ॥
सम दम तप सु तितिछा साधन अरू समाधाम।
ये सभ षट संपति कही सुनिये तिनको ज्ञान ॥ ६ ॥
मन निग्रह को सम कहिय दम इंद्री जित ज्ञान।
सुषदुष सहवु तितिछा तप सुधर्म अनुष्ठान ॥ ७ ॥
गुरु श्रुत वानी गहि चलै श्रधा ताहि वषान।
चित येकाग्र डोले नहीं सो कहिये समाधान ॥ ८ ॥
मोक्ष चाह अति सै हृदै वहै मुमुछु आय।
तत्वबोध तासो कहिय अस सुपात्र जन पाय ॥ ९ ॥

अंत—

जीव आत्मा जानिये निर्विकार सुषधाम।
अषिल निरंजन ज्ञानघन सास्वत अज निःकाम ।। ६७ ।।
स्वस्मै स्वयं प्रकास वर निर्मल व्यापक सील।
अहं अर्थ निरलेप अज येक सुसदा सजील ।। ६८ ।।
भिन्न क्षेत्र प्रति जानिय रहित अष्ट गुण सोई।
नित्य अव्यक्त अचिंत्य है लषै सो ज्ञानी कोय ।। ६९ ।।
पंच भूत अहंकार अरु विषय पंच जुत जान।
इंद्री अरु मन बुधि चित अरु अव्यक्त वषान ।। ७० ।।
अचित रूप ईमि जानिये चौविस तत्व प्रकास।
त्रगुण विषय जड है सदा उतपति और बिनास ।। ७१ ।।
सर्व व्याप्त वर बोध जुत अषिल अनंदाकार।
साक्षी सुगुन अनंत अज सास्ता सर्व अधार ।।
श्री प्रभु लीला अधिप प्रभु स्वाधीनो व्यापार।
अति सुंदर लावन्य वपु विग्रह अमित बिहार ।। ७३ ।।
यह पदार्थ त्रै तेज गत प्रभु सरीर है सोई।
जन भगवत त्यहि मग चलै सहज परम पद होई ।। ७४ ।।

इति श्री तत्वबोध भागवत दास भाषाकृत संपुर्णम् सुभमस्तु ।।

विषय—

प्रस्तुत 'तत्वबोध' नामक ग्रंथ का विषय दर्शन है। इसमें आत्मा, परमात्मा और प्रकृति के विषय में संक्षेप में विचार किया गया है।

ग्रंथकार ने 'तत्वबोध' में, दोहा और सोरठा, केवल दो छंदों का प्रयोग किया है।

संख्या १७३ च. रामरसायन, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—२३ (६ पन्ने से २८ तक), आकार—५ × ९.६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप)—१२६५, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति-स्थान—श्री० पं० रामकृष्ण शुक्ल, सुदर्शन भवन, प्रयाग

आदि—

॥ अथ काव्यगुण ॥

वोज और माधुरज रस अरू प्रसाद गनि लेहु।
क्रम ते तीनौ भेदवर समुझि चित्त विच देहु ॥ ६६ ॥

पद कोमल माधुर्ज रस अदभुत हास सिंगार।
सिषवहिं सिय पिय को सषि धूजा को वर द्वार ॥ ६७ ॥

पद आडंबर ओज रस रौद्र वीर भये ग्राम।
धन मदांध दस कंध भर धनु दुहु भो भ्रगुधाम ॥ ६८ ॥

प्रगट अर्थ सुप्रसाद गुण रस सिंगार सुहास।
रामहिं सिय जयमाल दिय छुवै न मुनि तृयत्रास ॥ ६९ ॥

अंत—

॥ अथ इंद्रवजू छंद ॥

जगन तगन पुनि जगन रचि द्वै गुरू दीजै अंत।
इंद्रवजू यह छंद है वरणि कह्यौ अहिकंत ॥ ७६ ॥

॥ छंद ॥

भजे सदा प्रेम समेत जोई ॥
रामापति मोहि मदादि खोई ॥
चराचरो जीव कदापि कोई ॥
लहै परा मुक्ति न बात जोई ॥ ७७ ॥

इतिश्री रामरसायने कवि कुल आनंद दायिने भागवतदास विरचिते मात्रा प्रस्तार वर्णनो नाम द्वितीयो हुलास

विषय—

'रामरसायन' का विषय पिंगल है। संभवतः तीन हुलास या अध्याय हैं। प्रथम में पिंगल संबंधी प्रारंभिक बातें कही गई हैं, जैसे—वर्ण, गण, चरण, मात्रा आदि। द्वितीय अध्याय में मात्रिक छंदों का वर्णन है। तृतीय में वर्णिक वृत्तों पर विचार हुआ है।

पिंगल संबंधी ग्रंथ होने पर भी इसका नाम 'राम रसायन रखा गया है। ऐसा कदाचित् इसलिये किया गया है कि इसमें दिए गए उदाहरण रामचरित संबंधी हैं।

संख्या १७३ छ. रामरसायन, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—२५, आकार—४·७ x १०·७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—८००९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८६७ वि०, प्राप्तिस्थान—हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ रामरसायन पिंगल लिष्यते।

॥ दोहा ॥

जेहि बिरची माया प्रबल जाते जगत अपार।
ऐसे करता राम कों वंदौं बारंबार ॥ १ ॥
वरण वरण में रमि रह्यौ एकै राम विसेषि।
जग में ऐसी वस्तु को जामे परै न देषि ॥ २ ॥

अंत—

॥ अथ ग्रंथ करता को कवित ॥

अवध नैमष विच ग्राम मगरौरा नाम तामैं लीन्हों जन्म विप्र रामपरसाद के ॥
सीताराम दास जू को दास भयौ प्राग माहि जाने भेदनिकी भांति वेद पुनिनाद के।
लैकै बनायो राम धाम श्री सेलावन मै चारि चारि कोस गंगा जमुना जल स्वाद के ॥
भागवतदास अभिराम ग्रंथ प्रगट कीन्हों जाके पढे जानै छंद भेद वेद वाद के ॥

अष्टादस[१८] सत सरसठि[६७] संवत सुभ बुधवार।
भाद्र चतुर्दसी विष्णु व्रत पूर्यो ग्रंथ सूचारु ॥

विषय—

'राम रसायन' का मूल विषय तो पिंगल है; परंतु रचयिता ने इसमें रस और अलंकार आदि अन्य काव्यांगों का भी यथास्थान किन्तु संक्षेप में समावेश किया है। ग्रंथ के अंत में षटऋतुओं का वर्णन है। लक्षणों के उदाहरणों का विषय रामचरित ही है। इसीलिये ग्रंथ का नाम 'रामरसायन' है।

रचनाकाल

अष्टादस[१८] सत सरसठि[६७] संवत सुभ बुधवार।
भाद्र चतुर्दसी विष्णु व्रत पूर्यौ ग्रंथ सूचारु ॥

विशेष ज्ञातव्य—भागवतदास जी मगरौरा (अवध नैमष के बीच) ग्राम के निवासी रामप्रसाद विप्र के पुत्र थे। प्रयाग जाकर ये टहलदास बाबा की परंपरा में बाबा सीताराम जी के शिष्य हुए। पश्चात् जिला फतेहपुर के शिलावन ग्राम में शिलावन कुटी की स्थापना की। रचनाकाल के अनुसार ये संवत् १८६७ में वर्तमान थे।

संख्या १७३ ज. सूर्यपुराण, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—४ × ९.६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९३ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री० पं० रामकृष्ण सुक्क, सुदर्शन भवन, सूरजकुंड, प्रयाग

आदि—

श्रीमते रामानुजाय नमः।
अथ सूर्य पुराण लिष्यते

॥ दोहा ॥

श्री रवि मंडल मध्य जो नारायण छबि देत।
ताहि वंदि आदित सुगुण कहौं आत्म सुषहेत ॥ १ ॥

॥ छप्पै ॥

जै आदित्य दिवाकर भास्कर पर्म प्रभाकर।
सहस्र अंशु हरिदस्व त्रिलोचन श्री सोभाकर॥
सुभ प्रद सूरज देव सु दिलकर बुध जसु गावै।
द्वादश मूर्ति त्रिमूर्ति वरनि सुर सीस नवावै॥
ये द्वादस सूरज नाम जो रविहि नौमि नर नित पढय।
भागवतदास कहै तासु के सुष सोभा संपति बढय॥

॥ चौपाई ॥

जै नारायण दिनकर देवा। सफल करहु निज जन कै सेवा॥
तेज पुंज तम तोम बिनासक। सुषद ज्ञान विज्ञान प्रकासक॥
तुमते जोतिष धर्म प्रचारा। नत विन द्रग बूडत संसारा॥
तुमहीं ते त्रिलोक मग पावै। तुम ते सुभ गति वेद बतावै॥
वेद पुराण सास्त्र तव वानी। तुम उतपति पालन लय षानी॥

॥ छंद ॥

सुष संपदा कौ परम सुरतरु सूर्ज को जसु जानिकै।
सुर नाग नर पावहि मनोरथ सबहि विधि सनमानिकै॥
मार्तंड महिमा नारि नर जे हरषि सुनहि सुनावहीं।
तिन्ह सहित भगवतदास मंगल मोद कीरति पावहीं॥

॥ दोहा ॥

तीरथ राज प्रयाग मैं टहलदास सु प्रकास।
तिन्ह के दास दास को दास भागवत दास॥
विप्रनवर आज्ञा दई रवि छबि सक्ति प्रधान।
तिन्ह कै विसद पुराण यह भाषा करहु बषान॥
रामायण भागवत श्री भारत औरौ ज्ञान।
लैय श्री वेदे व्यास मत कीन्हो सूर्ज पुरान॥ ७॥
रवि मंडल विच जो लसै राम चतुर्भंज रूप।
वसौ भागवतदास उर सो छबि परम अनूप॥

इति श्री सूर्ज पुराणे उमा महेश्वर संवादे भागवतदास जी क्रिते सत नाम महारम पंचमोध्याय ॥ संवत १८९३ लि० चरनदास पांडे गौड ब्राह्मण प्रयाग जी में।

विषय—

'सूर्यपुराण' का विषय उसके नाम से ही स्पष्ट है। यह धार्मिक ग्रंथ है और जैसा पुष्पिका से ज्ञात होता है—रामायण, महाभारत, भागवत एवं अन्य संस्कृत ग्रंथों के आधार पर रचा गया है। इसमें पाँच अध्याय हैं जिनका वर्ण्य विषय क्रम से नीचे दिया जाता है:—

अध्याय—१—सूर्य के बारह नाम, महिमा, पुराण की परंपरा, नारद और ब्रह्मा का संवाद, पूजा विधि।

अध्याय—२—अवतार वर्णन।

अध्याय—३—सूर्य के व्यूहों का वर्णन।

अध्याय—४—नारद यज्ञ।

अध्याय—५—नाम माहात्म्य।

संख्या १७३ क. सच्चिदानंद विहार स्तोत्र, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—३.२ X ६.५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री० पं० रामकृष्ण शुक्ल, सुदर्शन भवन, सूरजकुंड, प्रयाग

आदि—

श्री गणेशाय नमः

तुँअँ चरण प्रणाम्यं व्याक्त निमूंल जो है।
निर्गुण गुणचारी लोक लोकेश सो है॥
अनव्य अजीतं आनरंभं अकामी।
करू मम उर वासं सच्चिदानंद स्वामी॥ १॥

आदिष्टि अरूपं वेद रूप ससरूपं।
आगम्य तूरीयं जोग आत्मा अनूपं॥
परिपूरण माया ब्रह्म ईसं भजामी।
करू मम उर वासं सच्चिदानंद स्वामी॥ २॥

क्षर अक्षर पारं सर्वं आत्मा सनेही।
त्रिभुवन सिर धारं सूक्ष्म देही विदेही॥
त्रैकाल प्रकासी जोति भूपं भजामी।
करू मम उर वासं सच्चिदानंद स्वामी॥ ३॥

आधोक्त तु चाहं मूल उर्द्धां चली है।
गुण सीची साषा वेद पणावली है॥
कुंश मित नित नूतं विश्व व्रक्षं प्रणामी।
करू मम उर वासं सच्चितानंद स्वामी॥ ४॥

ब्रह्मांड निकाया सर्व कल्यान मूर्ते।
सहसांड तिहारे रोम रोम वली ते॥
पुरषोत्तम सरूपं आत्मा अंभजामी।
करू मम उर वासं सच्चितानंद स्वामी॥ ५॥

मनु जलज सरूपं चक्षु मार्तंड जो है।
कं आनन लेष्यो वृक्ष रोमांच सो है॥
सिर सुर पुर पारं चर्ण पाताल धामी।
करू मम उर वासं सच्चितानंद स्वामी॥ ६॥

सर्गुण गुणपारं रूप द्वै है तिहारे।
वैकुंठ नेवासी ब्रह्मचारी निहारे॥
संतन हितकारी राम नामं नमामी।
करू मम उर वासं सच्चितानंद स्वामी॥ ७॥

पै उदधि नेवासी वस्त्र पीतांब्र सोहै।
निज अयुधधारी देव देवी विमोहै॥
उर शुभ वन माला लक्षिमी क्रंत नामी।
करू मम उर वासं सच्चितानंद स्वामी॥ ८॥

सव अधम उधारे जेतन स्वर्ग तारे।
सहसानन वानी नाम गावै तिहारे॥
अब दरसन दीजै शंभु के चित्त गामी।
करू मम उर वासं सच्चितानंद स्वामी॥ ९॥

गो द्विज हितकारी नेति कै वेद गावै।
भगवतजन कै शे तासु को अंत पावै॥
अव करुपा कीजै चर्णं पंकज नमामी।
करू मम उरवासं……………॥ १०॥

जो प्रेम प्रतीते ध्याइ है प्रात सामै।
फल चारि सो पै है कामना अर्थ कामै॥
हरि भक्ति सो पै है मैटि कै दुःख दंदै।
हिय धरि विश्वासै मालिनी गाऊ छंदै॥ ११॥

इति श्री सच्चितानंद विहार स्तोत्र समाप्तं ॥ शुभमस्तु लीष्यतं त्रिपाठी ईश्वरी प्रसाद श्री कृष्णार्पणमस्तु ॥ जो वाँचै ताह को सीताराम पहुँचै ॥

[स्तोत्र पूर्ण उद्धृत है]

विषय—

भगवद् स्तोत्र वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—इस स्तोत्र का रचनाकाल संवत् १८५५ वि० के लगभग है। यह जिस हस्तलेख में है उसमें इस स्तोत्र के पहले 'गर्भगीता' और अनाथ कवि कृत 'विचार-माल' आदि ग्रंथ स्वयं प्रस्तुत रचयिता के हाथ के लिखे हुए हैं तथा उनका लिपिकाल सं० १८५५ वि० दिया हुआ है। स्तोत्र का लिपिकार कोई ईश्वरीप्रसाद त्रिपाठी है। लिपि अत्यंत अशुद्ध है। फिर भी वह सरलता से ज्ञात हो जाता है कि 'स्तोत्र' ग्रंथ कार की प्रारंभिक रचना है। अतः इसमें और 'भागवत चरित्र' (रचनाकाल सं० १८६३ वि०, जो रचयिता की उत्कृष्ट रचनाओं में है) में कम से कम आठ या दस वर्ष का अंतर होना स्वाभाविक है ।

संख्या १७३ ञ. रामरहस्य, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज-देशी, पत्र—५२, आकार—४.६ × १०.८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि नागरी, लिपिकाल—सं० १९११ वि०, प्राप्तिस्थान—हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग

आदि—

श्रीमते रामानुजाय नमः ॥ अथ श्री रामरहस्ये भागवतदासजी कृतः

सोरठा

वंदौ सीताराम नाम कामधुक कल्पतरु ॥
देत सर्व मन काम-विघन हरण मंगल करण ॥ १ ॥

दोहा

उर विरंचि हेमाद्रिवर नारद प्रस्न सुभुमि ॥
रामकथा सुरसरि चली विलसति चहु दिसि भूमि ॥ २ ॥
रहस चरित श्री राम को अद्भुत परम प्रकास ।
निज गुरु तें कर जोरि कै पूछो भगवत दास ॥ ३ ॥

चौपाई

श्रीगुरू पूर्ण कीन्ह अभिलाषा। रचै प्रबंध करिहौ मैं भाषा ॥
अद्भुत रामचरित अतिपावन। सुनत सकल अघ ओघनसावन ॥

कथा जो विधि नारद ते गाई। सोइ बसिष्ट हनुमतहि सुनाई ॥
सोई भुसंडि ते सुनि षग नाथा। भए विगत संदेह सनाथा ॥

अंत—

मोरि कथा यह पवन सुत रामहि दइ सुनाई ॥
अपनो विरद विचारि प्रभु विहसि लई अपनाई ॥
भरद्वाज तें यह कही बालमीकि मुनि भूप।
षट रहस्य रघुनाथ कै तारक मंत्र सरूप ॥ १३ ॥

इति श्री राम रहस्ये महाकाव्ये भागवत दास भाषा कृते जज्ञ वर्ननोनाम षष्टो वर्नः ॥ ६ ॥ संपूर्ण समाप्तम् ॥ संवत् १९११ मासोत्तमे मासे उत्तिम मासे जेष्ठ मासे कृष्ण पक्षे तिथौ ॥ ९ ॥ बार आदित्यवार ॥ हस्त अक्षर देवीदीन। अस्थान प्रयाग राज मध्ये तेलियरगंज गंगातटे ॥

विषय—

प्रस्तुत 'रामरहस्य' में भगवान् रामका यश वर्णित है। यह जैसा कि रचयिता ने लिखा है, एक महाकाव्य है। इसमें नीचे दिए छः सर्ग हैं:—

(१) श्री (सीता) अवतार वर्णन
(२) रामसवित्री—जन्म से लेकर दंडकारण्य तक की कथा।
(३) रामकलस को जागरन व्रत—इसमें दंडकवन की रहस्य लीला का वर्णन है।
(४) साकेत नगर वर्णन
(५) सप्तग्राम लीला वर्णन इसमें जाप की विधि और शूर्पणखा कांड तक की कथा है।
(६) जज्ञवर्णन—इसमें महाप्रयाण की कथा वर्णित है।

संख्या १७३ ट. रामकंठाभरण, रचयिता—भागवतदास (स्थान—प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—३४, आकार—४·७ × १०·९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि नागरी, रचनाकाल—सं० १८८९ वि०, लिपिकाल—सं० १९२६ वि०, प्राप्तिस्थान—हिंदी-साहित्य संमेलन, प्रयाग

आदि—

श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ श्री रामकंठाभरण लिष्यति ॥

राग बेलावल

विघन हरण गज वदन विनायक।
गिरिजा सुत संकर सुषदायक ॥ १ ॥

जन रंजन दारिद दुषभंजन सजन सुमति सदा सब लायक।
धीर गंभीर महाभव मोचन सुभट त्रिचत (?) के गण नायक ॥
विधि हरिहर नित करत प्रसंसा लहहि परम सुष तव गुण गायक ॥
कारज सबै होत सुमिरन क्रत नाग सिद्धि नवनिधि दायक ।।
यह कलिकाल देव नहिं दूजो त्रकालज्ञ तुही सब लायक ॥
भागवत दासहि देहु यहै वर वसहि राम उर धर धनुसायक ।। १ ।।

अंत—

तीरथ राज प्रयाग में टहल दास सुप्रकास ।।
तिनके अनुचर ग्रंथ यह कीन भागवतदास ।। १ ।।
येक[1] सहस अरू आठसै[8] नौवासी[89] को वर्ष।
अगहन शुक्ल सु द्वादसी पूर्यो ग्रंथ सहर्ष ।। २ ।।
अष्ठोत्तर सत पद कवित रामकंठ आभर्न ।।
अव श्री कंठ करिहै सुजन जग भूषण सुषकर्ण ।। ३ ।।

इति श्री भागवतदास जी कृत श्री रामकंठाभरण संपूर्ण ।। शुभमस्तु संवत् १९२६ ।।

विषय—

प्रस्तुत 'रामकंठा भरण' में रचयिता ने १०८ पद और कवित्तों में राम के चरित का वर्णन किया है। रचना में सीताराम के विवाह तथा तदुपरान्त दाम्पत्य सुख की कथा का समावेश है। मुख्य विषय के अतिरिक्त भक्ति और निष्ठा (राम के प्रति) के भी अनेक पद सम्मिलित हैं। पदों में आद्योपांत विषयानुकूल कोई निश्चित क्रम नहीं।

संख्या १७४ क. ककहरा, रचयिता—भीखासाहब (स्थान भुड़कुड़ा, जि०—गाजीपुर), कागज—देशी, पत्र—७, आकार ६ × ४½, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्) ६३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि नागरी, लिपिकाल—सं० १८३८ और १८४० के लगभग, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—महंत श्री राजाराम जी, स्थान और डाकघर—चिटबड़ागाँव; जिला—बलिया

आदि—

लीष्यते रामजी क केकहरा

संतो भजीलेहु सुरती लगाइ के कहरा नाम को।
क काया में करत कलोल रहंनी दीन सोहं वोलै।
ष षीजे चिरा लाइ भरम को अंतर षोलै ।।
गग्यान गुरू दया कीयो दीयो महापरसाद ।।

घ घमंड घरहरात गगन में घंटा अनहद नाद ॥
न नएनन्ह सों देपु उलटी ठाकुर दरवारा ॥
च चमतकार वोह नुर पुर संतन्ह हीतकारा ॥
छ छमान त्रीन कर्म गयो है जीव व्रह्म के पास ।
ज जै सब्द होत तीहुँ पुर में सुध सरूप अकास ॥ २ ॥
झ झकोर झवार झपटी नर समै गवाइ ।
न नही समझत नीज मुलअंध होइ दीस्टी छपाइ ॥

अंत—

लाम अलीफ सों नीकट ही पावो जीत दइ चीतवो ताही ॥ ७ ॥
हमजा हम हमार दोइत उहा नाहीन सोहै ।
ऐ एक तु होइ ग्यान ध्यान तब जनमन मोहै ।
तीनी आंक में वस्तु सकल है रज तम सत समइस ।
'भीपा' नाम सोन जब दीन्हो तब भयो अछर तीस ॥ ८ ॥

केकहरा ग्यानका ॥

विषय—

'क' से लेकर 'ह' तक तथा 'अलिफ से लेकर 'ऐ; तक के प्रत्येक अक्षर पर कविता करके ब्रह्मज्ञानोपदेश किया गया है ।

संख्या १७४ ख. नाम पहारा, रचयिता—भीखासाहब (स्थान-भुड़कुड़ा, गाजीपुर), कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१२½ × ९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल-सं० १८६७ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी । दाता-महंत श्रीराजारामजी, चिटबड़ागाँव, बलिया

आदि—

॥ अथ नाम पहारा ॥

जौ कोई नाम पहारा पढ़ै । विद्या प्रीति दस गुना बढ़ै ॥
ऐका एक मिलै गुर देवा । सीष सोई जो लावै सेवा ॥
तन मन वारी चरन चीत धारा । ऐक दहाइ दसए द्वारा ॥ १ ॥
दुआ दुइ दोइत जौ तजै । जोर जुगति कै अजपा जपै ॥
सुरति वीचारी नीरति यह गैड । दुइ पर सोन वीस गुना भैउ ॥ २ ॥
तीआ त्रीवीध ताप तव मेटै । तबही जीव नरायन भेटै ॥
माका मदीना घठ मैं षोजा । तीन दहाइ तीसो रोजा ॥ ३ ॥

चउथे चारी षानी है जेते । सब मह ब्रह्म बोलता तेते ॥
घटिक हौ नहि हाल हजुरा । चौथी दहाइ चालीस पुरा ॥ ४ ॥
पंच ऐ पाचो मुद्रा साधै । ससी औ सुर अकासही वाधै ॥
प्राना याव (? प्रानायाम) पवन परगासा ।
सौन पाच पर भयो पचासा ॥ ५ ॥
छटए चक्र कठिन मत आही ।
सोनी वहै जेही राम नीबाही ॥
चढै उरध मुष पवन को भाठी ।
छटए दहाइ तेही पर साठी ॥ ६ ॥
सतए चक्र अनाहद बाजा ।
तूर सुनत मनुआँ भौ राजा ॥
है अति बंद अमल बड़ जोरा ।
सतए दहाइ सत नीचोरा ॥ ७ ॥
अठए आठ गमन दल फूला ।
जोति रूप देषी जीअरा भूला ॥
उदीत, भयो प्रगासीत ग्याना ।
अठए दहाइ असी भाना ॥ ८ ॥
नउए नाम नीरंजन जोई ।
सहज समाधी जाही कह होई ॥
सो जानै जो जावै तहाँ ।
नउए दहाइ नवे जहाँ ॥ ९ ॥
दसए दसों दीसा मह मेला ।
"भीषा" ब्रह्म नीरंतर षेला ॥
दसए दहाइ अजपा जापै ।
बढै सैगुना गुर परतापै ॥ १० ॥

विषय—

एक से लेकर दस तक के प्रत्येक अंक पर कविता कर ज्ञानोपदेश किया गया है ।

संख्या १७४ ग. श्री राम कुंडलिया, रचयिता—भीखा साहब (स्थान-भुड़कुड़ा), कागज—देशी, पत्र—८, आकार—६$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{1}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—९२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल-सं० १८८६ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री राजाराम जी, स्थान—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया

आदि—

श्री गनेसायनमः । अथ कुंडलिया लीष्यते ।

जीव कहा सुष पावइ वे सुष बहुत घर माहि ।
वे सुष बहुत घर मांहि एक ते एक अपबंल ।
तेहुते है अधिक अधिक ते अधिक महाबल ।
तेहि महँ मन अरू पवन त्रिगुन कै डोरी लगाइ ।
बाधे सब जग जाल छुटै कोउ नहि पाइ ।
जौं भीषा सुमिरै राम को तो सकल थ होइ जाहि ।
जीव कहा सुष पावइ वेसुष बहुत घर मांहि ॥ १ ॥
राम रूप कौ जौं लषै सो जन परम प्रबीन ।
सो जन परम प्रवीन लोक अरु वेद बषानै ।
सत संगति मैं भाव भक्ती परमानंद जानै ।
सकल विषै को त्यागि बहुरि परवेस न पावै ।
केवल आये आपु आपु में आपु छपावै ।
भीषा सबते छोट होइ रहै चरन लवलिन ।
राम रूप को जो लषै सो जन परम प्रवीन ॥ २ ॥

अंत—

चलनि को पांनी पड़ौस कब रहा भयो न कबही होइ ।
भयो न कबही होइ भजन विनु ध्रिग नर देही ।
झुठ परिपंच मन गह्यो तज्यो हरि परम सनेही ।
ज्यों सपने लागी भूष अन्न विनु तन मर जाही ।
कबही के उठे जाग हरप कहुँ विसमै नाही ॥
भीषा सत्य नाम जाने बिनु सुष चाहै जो कोई ।
चलनी को पानी पडौसक वरहा भयो न कबहीं होई ॥ १८ ॥
इति श्री राम कुंडलीया संपूरन समाप्ता ॥

विषय—

सांसारिक माया मोह को त्यागकर राम भजन करने का उपदेश किया गया है ।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत रचना बड़े गुटकाकार हस्तलेख में निम्नलिखित आठ रचनाओं के साथ लिपिबद्ध है :—

१—कुंडलिया—भीषा साहब, २—कुंडलिया—अग्रदास जी, ३—शब्द—देवकी नंदन साहब, ४—प्रबोध चंद्रोदय ग्रंथ - सूरति कृत, ५—शब्द—देवकीनंदन साहब, ६—चतुरमासा तथा स्फुट पद—देवकीनंदन साहब, ७—पिंगल—सुखदेव मिश्र, ८—कुंडलिया—देवकीनंदन साहब ।

संख्या १७४ घ. श्री रामजी का सहस्र नाम, रचयिता—भीखा (स्थान-भुड़कुड़ा गाजीपुर, जन्मस्थान—खानपुर बोहना, जिला—आजमगढ़), कागज—देशी, पत्र—९, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—११८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३८ और १८४० के लगभग, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता-महंत श्री राजारामजी; स्थान और डाकघर—चिटबड़ागाँव, जिला—बलिया

आदि —

श्री राम जी क सहस्र नाम लीषते ॥

श्री रामचंद रघुबीर सुनाम। राम रमापति रमिता राम ॥
कोसिल्या सुत दसरथ नंदन। रघुवर नाथ नाम जगवंदन ॥
सीतापति सो धन्वाधारी। लछीमी नराएन जन हीतकारी ॥
चक्रपान चरीत सभलाएक। क्रीपा सींधु अजोध्या नाएक ॥
रघुकुल मनि रघुनंदन कहीए। सुंदर सुभग सुलछन गहीए ॥
भानुकुल दीप कवल दल लोचन। नाम प्रताप सकल अघमोचन ॥
दीनकर वंस महावल दाएन। चरीत अपार सो राम रसाएन ॥
मकुंद सीरधर जय सीरताज। भगत भगत बछल सुषकाज ॥
मकसुदन मन मोहन माधो। ताड़का हतन दीज जग्य अवराधो ॥
त्रैलोकिक प्रभु सारंग पानी। अवीगती नाथ नीरंजन जानी ॥
जन रंजन सुष सजन धीरा। नाम दुषहरन हरन सभ पीरा ॥

अंत —

धनराज धनजैं धन्य हैं वोई। नाम है अगुन गनै का कोई ॥
नामै प्रानाआम कहाए। सोहं सोहं नामै गाए ॥
नामै सुंदर नूर जहुर। नामै लामे नीकट हजुर ॥
नाम अनादी एक को एक। 'भीषा' सब्द सरूप अनेक ॥

राम साषी

जाप जपै जो प्रीती सौं बहु वीधी रुचि उपजाइ।
संझा समै अरू प्रात लगु तत पदारथ पाइ ॥
राम को नाम अनंत है अंत न पावै कोई।
'भीषा'' जस लघु बुधी है नाम तब न सुष होई ॥
भीषा' एक संप्रदा सब्द घर एक दवारा सुष संच।
एक आतम सभ भेष मह दुजो जग परी पंच ॥

भीषा भए दीगांमर देषी कै तजी कै जग्त बलाइ ।
कस्त करै नीज रूप कों जहा को तहाँ समाइ ॥
॥ इति श्री राम जी क सहस्त्र नाम ॥

विषय—

श्री रामचंद्र जी के सहस्त्र नामों का वर्णन किया गया है।

संख्या १७४ ङ. रेखता, रचयिता—भीखासाहब (स्थान—भुड़कुड़ा जि०—गाजीपुर), कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१२३/४ × ९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८६७ वि०, प्राप्तिस्थान—महंत श्रीराजाराम जी, स्थान व डाकघर—चिटबड़ा गाँव; जि०—बलिया

आदि—

॥ रेखता ॥

बीतो बारह वरष उपजो रामनाम सो प्रीती ।
नीपट लागी चटपटि मानो चारि मनगौ बीती ॥
नीही षान पान सोहात तेहि बीनु बहुत तन दुरबल हुआ ।
घर ग्राम लागो वीषम धन मानो सकल हारो है जुआ ॥
षटदरस के षोजो चीत दै जहाँ वसत अलष अलेष ।
कीरीपा करि कव मीलहीगै दुहु (धौं) काहा कवनी भेष ।
कोउ कहेब साधु बनारसी तहाँ भक्ति वीज सदा रहे ।
ताहा सास्त्र मत कौ ज्ञान है गुर भेद काहु नाही कहे ॥
दिन दुइ चारी वीचारी देष्यो भरम करम अपार है ।
बहु सेवा पुजा कीरतनामन मात्रा रत बेवहार है ।
चलो वीरह जगाइ छन छन उठत दील अनुराग है ।
दहु (? धौं) कवन दीन और घरी पल कब षुलेगी मेरी भाग है ।
कोइ लीषत सीषत पढ़तनीसु दीन करत हरीगुन गान है ।
कोउ ध्रुपद बहुत वीचीत्र सुनत आभोग भु पूछेव कहाँ ॥
नीअरे भुरकुंडा ग्राम जाको सब्द आये हैं तहाँ ।
चोप लागी बहुत जाइकै चरन पर सीर नाइआ ।
पूछेव कहाँ कही दीबोलई आदर सहित वैसाइआ ।
गुर भाव बुझी मन मग्न भौ तब जन्म को फल पाइआ ।
लषी प्रीती दरद दयाल दखो आपनो अपनाइआ ।
आतमा नीज रूप सांचो कहत हम करी कस्म कै ॥
भीषा आये आपु घट घट बोलत सोहं मस्म कै ॥

विषय—

इस रेखता में रचयिता ने अपनी आत्म कहानी कही है जो इस प्रकार है :—

बारह वर्ष बीतने पर हृदय में रामभक्ति उत्पन्न हुई। वह बहुत ही चटपटी (आनंदप्रद) लगी। साथ ही ऐसा लगा मानो चारों ही अवस्थाएँ बीत गईं। उसी क्षण से खान पान अच्छा नहीं लगने लगा। शरीर बहुत दुर्बल हो गया और घर, ग्राम एवं धन विरुद्ध ज्ञात होने लगे मानों सब वस्तुएँ जुए में हार दी गई हों। सुना कि षट्दर्शनों को पढ़कर परमात्मा का पता लग जाता है, अतः यह समझ कर कि न जाने कब और किस भेष में वे (भगवान्) क्रिपा करके मिल जायँ। चित्त देकर वहाँ भी खोजा। किसी ने कहा, बनारस में साधु लोग रहते हैं जिनके हृदय में ईश्वर भक्ति का बीज सदैव रहता है। वहाँ शास्त्रानुसार सब बातों का विवेचन किया जाता है। परंतु गुरुभेद किसी ने नहीं बताया। दो चार दिन भी यह देखा, किंतु इसमें कर्मों का नाना प्रकार का भ्रम पाया। बहुत सेवा, पूजा, कीर्तन आदि पर भी मन माया के व्यवहार में ही रत रहता हुआ दिखाई दिया। वहाँ से भी क्षण क्षण विरह में जलता हुआ और हृदय में प्रेमानुराग भरता हुआ चला। यह विचारता जाता था कि न जाने कब, किस घड़ी और पल में मेरे भाग खुलेंगे। होते करते, एक गाँव के समीप आया। देखा—कोई लिख रहा है, कोई पढ़ रहा है, रात दिन हरि गुणगान हो रहा है। एक ध्रुपद ने, जो गाया जा रहा था, एक विचित्र ही बात उत्पन्न की। सुनकर न रह गया। पूछा, यह सब कहाँ हो रहा है और यह कौनसा गाँव है ? ज्ञात हुआ भुड़कुड़ा गाँव है। अतः मन की अभिलाषा ने जोर मारा और कीर्तन स्थान पर पहुँचकर गाने वाले के चरणों पर गिर पड़ा। बातचीत होने पर मुझे आदर से बैठाया गया। सहज गुरु भावों को व्यक्त करते हुए उन्होंने मुझसे पूछा। मेरा मन आनंद मग्न हुआ और मुझे जीवन का फल मिला। मेरी प्रीति देखकर उनका हृदय द्रवित हुआ। दया करके उन्होंने मुझे अपना लिया। मैं सौगंधपूर्वक (कस्म कै) सत्य कहता हूँ कि आत्मा ही केवल अपना सत्य स्वरूप है। वह (आत्मा) प्रत्येक के घट में अपने आप सोहं सोहं करता रहता है।

संख्या १७५ क. कृष्ण संहिता, रचयिता—भुवनदास, कागज—देशी, पत्र—१४३, आकार—१३ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (प्रतिपृष्ठ)—३३८९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल—सं० १९२४ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री गणेशायनमः

॥ चौपाई ॥

बंदौ दुरद बदन पद पावन
येक रदन सुचि पर्म सुहावन ॥ १ ॥

सकल सिद्धि दायक सब लायक,
देह बरण गति मति सुखदायक ॥ २ ॥

कहा चहौं हरि चरित अनूपा,
मोपर कृपा करौ गण भूपा ॥ ३ ॥

पवन तनय पद कमल नमामी,
कृपा करौ सब घट विश्रामी ॥ ४ ॥

सदा वसत जन मन घन कानन,
काम क्रोध मद करि पंचानन ॥ ५ ॥

\+ + +

वानी चारि चरण शिरूनाई,
कहि हौं हरि कै कथा सोहाई ॥

\+ + +

पंचामृत भोजन करवाये,
गुनि गण विप्रछेत्र के आये ॥ ६ ॥

\+ + +

संवत वनइस[१९] सत नष[२०] चारी[४] । माधौ मास दुइज उजियारी ॥
संवत प्रान मथी श्रुति गावा । तेहि संवत यह कथा बनावा ॥

अंत—

दोहा

सालीग्राम आदि दय हरि के अमित सरूप ।
अपन इष्ट मन जानि कय पूजै पर्म अनूप ॥

चौपाई

चहै प्रतक्ष चह मन मां पूजा । हरि सम अवर देव नहिं दूजा ॥
यहि प्रकार मुनि व्यास बतावा । ज्ञान ध्यान विज्ञान सुनावा ॥
सुनत नरेस कृष्ण सुखपाये । हरषि व्यास निज थलका आए ॥
कृष्ण गये उठि नंद के धामा । देषि जसोमति मन अभिरामा ॥
चूमि बदन उर लखत माता । गद गद प्रेम न कछु कहि जाता ॥
नीकी विधि भोजन करवाये । बहुरि कृष्ण राधा गृह आये ॥
राधै दीन्ह प्रजंक बिछाई । बहुठि कृष्ण सुख बरनि न जाई ॥
कृष्ण केर रनिवासु अपारा । नित नित घर घर करहि विहारा ॥

॥ दोहा ॥

विष्णु रूप भगवान प्रभु सदा सर्व घट वास ।
येहि विधि नारद मुनि कहेउ सुनि हरषि तव हुलास ॥

इति श्री कृष्ण चरित्रं प (? र) म पावित्रं पाप वहित्रं रजसुईजगि राजा उग्रसेनि व्यासदेव संवाद वरननो नाम अठरह मंडक १८

विषय—

ग्रंथकर्त्ता की सूचना के अनुसार इसमें १८ मंडकों (अध्यायों) में भागवत की कथा का वर्णन है । परंतु १८ के बदले १७ मंडक हैं । ११ के दो मंडक हैं । पत्र संख्याएँ पूर्ण हैं और कथा का क्रम भी अखंडित है ।

मंडकों का विवरण अधोलिखित है :—

मंडक	विषय	पत्र
१	गर्ग शौनक संवादे श्री दामा राधेश्वरी शाप वरनन	८
२	पृथ्वी गोलोक गमन	१५
३	राधाकृष्ण बलराम जन्म	२३
४	पूतना वध	२९
५	तृणायवर्त वध कृष्ण विवाह	३४
६	कुवलय शाप मोचन दुर्वासा मोह	३८
७	अघासुर, वकासुर, धेनुकासुर वध	४६
८	कृष्ण वन विहार	५५
९	चीरहरण, गोप कन्याओं का विवाह	६२
१०	मधुपुरी विप्र भोज	७१
११	कुविजा मिलन	७७
११	कंसवध	८३
१२	मथुरा वृंदावन कथा	९१
१३	कृष्ण विवाह	१००
१४	राधा द्वारिका गमन	१०९
१५	अनेक देश विजय, प्रद्युम्न जनकपुर वर्णन	१२०
१६	शकुनी दैत्य निधन	१३३
१७	उग्रसेन व्यास संवाद	१४५

रचनाकाल

संवत वनइस सत नष चारी । माधौ मास दुइज उजियारी ॥
संवत प्रान मथी श्रुति गावा । तेहि संवत यह कथा बनावा ॥

संख्या १७५ ख. राम संहिता (यज्ञ खंड), रचयिता—भुवनदास, कागज-देशी, पत्र—४३, आकार—१३ × ६$\frac{1}{8}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—९१६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी

आदि—

श्री रामो विजयते। अथ यज्ञ खंड प्रारंभः ॥

चौपाई

सुनि सुमंत कह सुनहु कृपाला। तुम्हरी कृपा कुशल सब काला ॥
सर्व काल गति जानहु स्वामी। प्रभु उदार सब घट विश्रामी ॥

दोहा

राजनीति रापत सदा प्राकृत भूप सुभाउ।
जँह जँह गयो तुरंग तब सो कहि हौं सति भाउ ॥ १ ॥

चौपाई

प्रथम अवध ते चलेउ तुरंगा। पवन वेग गति सुभग कुरंगा।
कामद देश गयो रघुराई। सुमद महीप मिले तहँ आई ॥
परम साधु तव पद प्रभु सेवक। जो नहिं जानहि अवरे देवक ॥
प्रथम कमष्यै तेहि वर दीन्हा। तव ते राम तुमहि वै चीन्हा ॥
अस कहि सुमति सुमद बोलवाई। आइ रामपद शिर तिन नाई ॥
प्रभु गहि भुजा मिले तेहि वारा। सादर सहित राम बैठारा ॥
वहुरि सुनहु अब कृपा निधाना। तहाँ ते हयवर कीन्ह पयाना ॥
चीमन मुनि आश्रम कहँ गयऊ। चीमन अवध चलत तव भयऊ ॥

× × ×

संवत वाण[५] तीन[३] यक ऊन[१९] विंस्सत वाम।
जेठ कृस्न एकादसि शुक्र दिन रजनी गत यक जाम ॥ १ ॥
कृष्ण पक्ष सुचि नषत में राम राम कहि राम।
योगभ्यास तन त्यागि 'जन भवन' गये पर धाम ॥ २ ॥
येक सत पाँच अब्द लगि भजन कीन्ह धरि ध्यान।
राम स्वरूप अनादि जो द्विभुजन जेहि सम आन ॥ ३ ॥
'भवनदास' कृत ग्रंथ यह जे नर करि विस्वास।
पढ़ै सुनै मन मनन करि ते गोलोक नेवास ॥ ४ ॥

अंत—

दोहा

वीर सेन तिनके भये महि मंडल रिपु जीति ।
भली भाँति नृपता कियो सदा वेद की रीति ॥

चौपाई

प्रिया कुसुंभा शुचि नृप पायो । राजा शुभ मस्ती जिन जायो ॥
रानी बाल सुंदरी जिनके । नीति केतु सुत प्रगटे तिनके ॥
रामवंश मय कीन वषाना । देव अंस खग नाथ सुजाना ॥
आगे मानुष होइ अपारा । रहिहै विदित सकल संसारा ॥
तेहि ते नहि मय वर्णि सुनावा । मानुष चरित मोहिं नहि भावा ॥
रामवंस की कथा वषानी । अति पुनीत सुरसरि जिमि जानी ॥
जो कोई पढै सुनै मन लाई । तेहि का वंस बढै अधिकाई ॥

इति श्री राम चरित्रे परम पवित्रे सार संग्रहे रामसंहितायां विरचिते भुवनदास यज्ञे खंडे श्री राम अवतारी वंस वर्णनो नाम सप्तमो मंडकः ॥

विषय—

सात मंडकों (अध्यायों) में राम कथा का वर्णन है । मंडकों का विस्तृत विवरण अधोलिखित है :—

प्रथम—सुमन्त देशदेशांतर वर्णन ।

द्वितीय—अयोध्यापुरी यज्ञस्थल वर्णन ।

तृतीय—कुश लव गान वर्णन ।

चतुर्थ—कुश लव रामायण वर्णन । रुद्रयामलीय सिद्ध सीता संवाद ।

पंचम—यज्ञ सभा वर्णन ।

षष्टम—राम परमधाम गमन वर्णन ।

सप्तम—राम वंश वर्णन ।

संख्या १७६. अर्जुनगीता, रचयिता—जनभुवाल, कागज—देशी, पत्र—७३, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०६८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—कैथी, रचनाकाल—सं० १७०० वि०, लिपिकाल—सं० १८९८ वि०, प्राप्तिस्थान—श्रीराधाप्रसाद जी, स्थान और डाकघर—फेफना; जि०—बलिया

आदि—

श्री गनेस जी सहाए ॥ श्री रामजी सहाए ॥ श्री महादेव जी सहाए ॥ श्री सरस्वती जी सहाए ॥ श्री पोथी आर्जुनगीता लीषते ॥

वरनो आदि अलष करतारा । सुमीरत नाम होए नीसतारा ।
सुमीरो गुर गोविंद के पाऊ । अगम अपार है जाकर नाऊ ॥
करुनामय तुम्ह अंतरजामी । भग्तीभाव देहु गरूरागामी ॥
दीन देआल तुम्ह बाल कन्हाइ । अपने जन कह होहु सहाइ ॥
क्रीपा करहु तुम्ह सारंग पानी । नीरभै अछर कहौ वषानी ॥

दोहा

क्रीपा करहु जग ईश्वर वीनती सुनो चीत मोर ।
भग्तीभाव देहु स्वामी कह 'भुआल' कर जोर ॥

\+ \+ × \+

॥ दोहा ॥

ब्रह्मा वीसन महेसवर तेही सवो मन लाए ।
गीता अरथ कहहु प्रभु 'जन भुआल' वलिजाए ॥

॥ चौपाई ॥

संवत कर अब करौ बषाना ।
सतरह[१७] सैए संपुरन जाना ॥
माघ मास क्रीसन पछ भएऊ ।
दुतीआ तीथ रवीवारही भएउ ॥
तेही दीन कथा कीन्ह मन लाई ।
हरी के नाम चीत भौ आई ॥

अंत

॥ चौपाई ॥

गीता कथा सुनौ मनलाई । सुनत कथा पातष सब जाइ ॥
जीअन उपजै अर्थ सुनावै । जन भुआल तव भाषा गावै ॥
जोइ कथा सुनी लागै थोरी । पंडित गीता देषहु छोरी ॥
गीता महाजप कहा वीचारी । सोभाषा कीहु जग अनुसारी ॥
सुनत कथा मन परम अनंदा । गीता सुनै छुटै सब दंदा ॥

॥ दोहा ॥

हरीजन सौ वीनती एह दोस न लागै मोही।
'जनभुआल' कै स्वामी सब विधि सेवो तोही ॥

इति श्री अरजुनगीता सुपनेषा ग्रंस्तुति ब्रह्मविद्या जोग सास्त्रे श्रीकृष्ण अर्जुनसंवादे सन्यास जोग बरननो नाम अठारमो अध्याये ॥ इती श्री अर्जुन गीता संपुरन जो देष्या सो लीष्या ॥ संवत १८९८ साल मिती भादौ वदी रोज एतवार को पोथी तैआर हुआ दसषत सोहन लाल कायथ अमस्ट साकीन महेल कसबे रानीपुर प्रगनेह पेजी अजीमावाद सरकार सुवे वीहार ॥

विषय—

ब्रह्मज्ञान का वर्णन।

रचनाकाल

॥ चौपाई ॥

संवत कर अवकरौ वषाना। सत्रह[१७] सैए संपूरन जाना ॥
माघ मास क्रीसन पछ भएऊ। दुतीआ तीथ रवीवार ही भएऊ ॥

संख्या १६७. सूर्यकथा, रचयिता—भूपराम, कागज—देशी, पन्ना—२०, आकार—४.२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—संग्रहालय, हिं० सा० स०, प्रयाग

आदि—

नेमधर्म सौं करै अहारा। द्वादस वर्ख करै इतवारा ॥
कुसुम विछाय करै विसरामा। हर्षंत लेहि सूर्य को नामा ॥
दै पीपर वृछ विरत मिष्टाना। ताके धर्म पुत्र भलदाना ॥
निश्चै प्रसन्न होंय भगवाना। पाँच पुत्र होंय अगिनि समाना ॥
बांझ कथा मन लावई टेक धरै वृत ध्यान।
निश्चै पाँच पुत्र तेह तोहि जोधा अगिनि समान ॥

अंत—

दक्षिन देस अनूप हइ सुनहु उमा चितु लाइ।
अगिले अर्थ जस होहिंगे सुनहु कहौं समुझाइ ॥

कल जुग कौ विनास तव ह्वै है। मानुष तव ही भानको गैहै।
तव अवतार होइ निहकलंकी। मानुष तन हुइ हैं जस पंकी ॥

विषय—

प्रस्तुत 'सूर्यकथा' में सूर्य भगवान् की महिमा तथा उनके व्रत का फल वर्णित है। प्रसंगानुसार इसमें त्रिपुर दैत्य, हलधर विप्र, रूपमहेस, तथा जैमल विप्र की कथाएँ भी दी हैं।

ग्रंथ व्रजभाषा और दोहा चौपाई छंदों में लिखा गया है। बीच बीच में कुछ अन्य छंदों का भी प्रयोग हुआ है।

यह उमा और शिव के संवाद के रूप में लिखा गया है।

संख्या १७८. सुदामाचरित्र, रचयिता—भृगुपति, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—७½ × ३¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी, लिपिकाल—सं० १८०३ वि०=१७४६ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० सरल चौबे और रामनरेखन चौबे, स्थान और डाकघर—सहतवार दखिन-टोलाबड़तर, जि०—बलिया

आदि

श्री गणेशाय नमः ॥ पोथी श्री सुदामाचरित्र ॥

श्री कीश्न जीउ को रहा एक मीत। पांडे परम ग्यान सुंदर शुचीत ॥
पढ़ा भी बहुत था शंतोषीबड़ा। जहाँ पाप चरचा न होता खडा ॥
भुषै मरे पै न धावैं कहीं। कछु देऊ मोको कहै भी नहीं ॥

नीशी दीन हरी को शुमरता रहै।
वीना मागते कोउ देतो कहै ॥
जोरू भी उशकी अजवशी रही।
मामा मेहरवान जैशी कही ॥
रहे श्वामी आके नीकट हर घरी।
कहूँ जाए आवै न जौ दुषभरी ॥
तन आपने शौश कै जौ करै।
फल मूल कंद लै आगे धरै ॥
शुवह शौ रहै उह शदा मुनहार।
करै श्वामी का भी जुठा अहार ॥
शाएक दीन ब्राम्हनी उह भली।
बैठी रही एक चरचा चली ॥

ब्राभनी वाच

आपै कहा था कबै एकवार । श्री कीशन जीउ है हमारे इआर ।।
शो हम सुना एक कहता रहे । है द्वारीका मो महाराज है ।।
शोने के चारों तरफ है देवाल । घर मो लगे है जवाहीरलाल ।।
जो कोई जाता दुषी औ गरीब । पावै शवै जाही जैशी नशीव ।।

सुदामावाच

शचु है शुनीत है मौ भी शुना । कमी क्या उन्हे है हमेशै घना ।
शोवै महाराज है नीत के । दाता बडे मोछ के वीत के ।।

ब्राभनीवाच

आपै उहा जाइये एक वार । जो चाहिए शो मीले वे शुमार ।।
जन्म की नशै दुष वीपती शवै । जगत मो जन्म का शोगारथ फवै ।।
हम तौ त्रीआ जात बुझै नही । करौ माफ तशकीर जो हम कही ।।
आपै कछु ग्यान की वातै बोली । करौ दुर मोरी कुमती गाढी षुली ।।

सुदामावाच

नाही कुमती है शुमती है परी । कीश ही भाँति नैना शो देषो हरी ।।
कै काम कै लोभ कै क्रोध शौ । उन शौ मीला चाहीऔ वोध शौ ।।
नर देह पाएन आए तनी । जौ कीशन जी शौ लागै रत बनी ।।

।। ब्राभनीवाच ।।

कहौ जो कहावै भए अइनाव । श्री कीशन जीउ काहे कैशा शुभाव ।।

शुदामावाच

कहा लगी कहौ है कीशा दुरराज । भआ था गुरु के भवन मो शमाज ।।
एक दीन गए कीशन पानी भरै । हमको कही गए इंधन करै ।।
ऐशीकरत जो भआ अवेर । भीछया पुरी मागी वैशे शवेर ।।
भुषे रहे वै नीशा शेज शोए । परै नीद नाही कबै प्रात होवै ।।
दुनौ उठे हम नदी को गए । पीवै को जल नाही भुषे शवैए ।।
गए जाए पहुँचे नदी तट प्रात । प्रात देषा भरा था लहै दाल भात ।।
शंशै भई शो षावै को नाही । स्री कीशन बोले गही मेरी वाही ।।
हम को कहै वै उनै हम कही । शंकोच के भए कोउ नाही गही ।।
मैआ कीआ लै जनेउ शौ हाथ । बाँधा भी अपना उनौ का हाथ ।।
हशी हशी दोउ मीलन लगे षान को । तौ तौ त्रीपती हो गए प्रान को ।।

शुन रीशो पुछी शो ऐसी रही। हम कीश्न जी सो जुदागी नही ॥
अब कीन जानो वीधाता चरीत्र। मनो न मानै दशा है वीचीत्र ॥
तौलौं जाइए देषीए एकवार। मीलै तौ मिलीऐ उजी उशीआर ॥
हम तौ चलै है कीछु घर संदेश। दीजै शो जाना हमै दुर देश ॥
शो शुनी कही व्राभनी उहभली। भीछया करी मागीवउ मीलेइ ॥
शो फरुही अंचल वांधु पोटरी। शो श्वामीआ लै वगल मो करी ॥
चलै पंथ चीता करत चीत माही। कै तौ मीलैंगे फुरै वुधनाही ॥
एही भाती चीत को वीचारत गए। जहाँ कीश्न मंदील चनो भ्रीह नए ॥
गए जाए भीतर अँगन मो परे। पशे जे चरन दुऊ धुलन भरे ॥
स्री कीश्न देष्या शुदामा परा। उतरी शेज शौ जाए अंक मे धरा ॥
धरे हाथ आए त्रीआ थी जहाँ। लागे करै प्रेम पुजा तहाँ ॥
शोने के पल तरे राषी के। शोने के झारी लई नीषी कै ॥
झारी लै नीरषारै वंधु। ऐशे आनंदे शो नाही कंधु ॥
धोए चरन लेप चंदन कीआ। ठढी कनक चौर भरै त्रीआ ॥
वुंदी जीलेवी अछी गोझीआ। चीनी दही थाल आगे कीआ ॥
वाशा मुशुक पान केशर कपूर। शुपारी शुल कथ औ लौंग चुर ॥
वीरी षवाएँ भरे मुंह गाल। छीरके पुहुप तेल लागे गुलाल ॥
धरी हाथ शौ वात पूछन लागे। कैशे मीले जैशे भाई शगे ॥
हहा वहुत रोज वीता हमे। केते फीरे पै न देषा तुमें ॥
कहौ षाह कीआ की नाही अजौ। अवतौ शकुच छाड़ी हमको भजो ॥
है शुध तुमै उश दीन की कहो। गुरु के भवन मो जो पठते रहो ॥
हम तुम धाए जगल को गए। तोरा इंधन वांधी वोझा लीए ॥
वुतै चलै नाही फाटै हीआ। तन शौश कै नाही अपना पीआ ॥
आई झरीमेघ कारी घटा। ठनके वीजुली मानो दामीनी छुटा ॥
जल थल भरा नीर औ अंधकार। तौ तौरई आर रोऐ पुकार ॥
इहां शौ हमारे गुरु शुना पुकार। वोझा लीए चले मेह वेशुमार ॥
देषत गुरु धाए अंकम भरा। माथे शौ वोझा उलटी गीर परा ॥
रोवन लगे लाए छाती अनके। छोड़े नहीं वात वोलै वीव के ॥
अरे हद कीया आगले शौन होए। हमारे भले को चले जीअ षोए ॥
गुरु की भग्ती अव तुमौ हद कीआ। गुरु के शोआरथ को तन मन दीआ ॥
पढौ शव चेले वेद वीध्यान। वीना पढते गरंथ करौ वषान ॥
ऐसे शके ते शहे दुष वडे। हम तुम गुरु के भवन मो षडे ॥
कहा जी हमारो शषीन दीआ। शंदेश वगल मो तुमौ जो दीआ ॥
एते कहते सुदामा लजाए। रहा पोटली को वगल मो छपाए ॥

जेव जेव कहे •तेव तेव टारन लगा। तन मो पशीजा भआ शाग शगा ॥
नीचा करै शीर को और और। शुमरी कनक पुथी आए भरी लोर ॥
खो कीशन बल शौ लीआ फेरीछत। शुदामा करै फेरी लेने को कशत ॥
कल बल शौ षोलु गीरह वेअरा। जतन शौ कीआ है शरा चौहरा ॥
आ आ नीकरी मदर भीवना। भुना कोई एक तीडुल कना ॥
श्री कीशन की गेहनी जो हथी। लषी अचल वदन ऋषी मानो शशी ॥
मेरी प्रकीतनीत कीऐउ शुनो। दीआ प्रीती शौ पावो भुना चनो ॥
वीना प्रीती जो देइ छोहारा वदाम। शो कैशेउ मेरे आवै न काम ॥
रह प्रान शी मोही लागे कनी। दीआ है महा प्रीती शौ वाभनी ॥
भरी हाथ मुष मो दीआ मुषभरा। दुनो भरा गाल तारु गरा ॥
बावन शके नोहनीगल न लगे। रुषे वुरे वै लगे थे गले ॥
रानी लपकी नीर झारी देई। पानी के घोट शौ नीगन फीर गई ॥
बहुरी हाथ डारे भरन को मुठी। धै हाथ रानी वुरी होए उठी ॥
हा हा करत होगआ था अबै। लगा था गले मो मुए थे थवे ॥
दै हाथ छीन गोदी कीआ। गआ था हाथ शौ अपना हीआ ॥
बलीहारी कीआ मै ऐसा संदेश। रोए हंशे राजरानी सुदेश ॥
पांडे संकोच शौ करै शीर गडा। मानो परा नीर शौ शौ घडा ॥
फिरि वे गए सांझ होते तहाँ। श्रीकीशन की शेज रापु जहाँ ॥
उठे प्रातही कीशन शौ होएवीदा। पांडे चले अपने घर जुदा ॥
पुशी होए चले प्रेम सो वशभए। इह शाहेवी कीशन कैशे नए ॥
वडी साहेवी है वडेशाम धान। इती विपती परै श्वामी अनजान ॥
इन धरै नैन रुधे गला। धन का वीगारा कुत्ता भी भला।
परी इह महा अचरजशा लगै। दीआ नाही कीछु जो दालीद्र भगे ॥
थोरा भी नाही दीआ कीछु हमे। रुषा परा दिल हमारा भमै ॥
परी तो हमारी दआ है करी। मती इह छकै मती वीशारै हरी ॥
ऐशे करत आगए जी तहाँ। अपने पुटे कै शीमाना जहाँ ॥
जहाँ झोपरी शो मंदील बना। शोना जवाहीर लागे घना ॥
दोमहला ते महा चौषंडी वाग। द्वारे षडे मद गलीत वीशनाग ॥
शो देषी चौंका सुदामा हीआ। अरे इंह कानै भूप डेरा कीआ ॥
कैशे कीले को बंधे थे वाश। वाती घनी वोझ वाधे येकाश ॥
अरे क्या भआ एक तीनुका नही। टुटा परा भी मीलै जौ कही ॥
एते कहते आगई वांभनी। नषशीष शौ हेम मोती मनी ॥
चलो जी चलो भौ भीतर आवो। धोवो चरन भवन देषो नवो ॥
अरी तू चली जा यहाँ उपरी। हम ब्राभन शौ क्या मशषरी ॥
देषोरे भाई सतावै हमे। देषै नही इह दुरी शीश में ॥

अव पीछु लागी है देषो कहा। रही जो शंपती जुटेउ सव गहा ॥
घरे राषी गया था कउन आया। कुश का आशन कहा दउ गया ॥
शवाहाथ का टाट था कोपीन। शोकी गया दूर द्वारे शेछीन ॥
कापन लगा शो आफतशहा। अरोशी परोशनी शवै मील गहा ॥
महल उठे की हकीकत कहा। तव ते सुदामा भवन मो रहा ॥
तव वुझते वुझते वुझ गआ। स्त्री कीश्न जीउ में पराएन भया ॥
शवै भग्ती की भई जो दया। 'भीर्गपती' कथा इह कीआ ॥
शुदामा चरीत्र पढ़ै मन लाई। वाढ़ै धर्म पाप छै जाई ॥

इती श्री शुदामा चरीत्र कथा शंपुरन शमापत दशपत मानीक चंद शाकीन भागलपुर ११५९ शाल १९ रजवरोज शुक्र ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

संख्या १७६. रस रतनावली, रचयिता—मंडन, कागज—देशी, पत्र—१७, आकार—८.७ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—३९७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७८८, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत बालकृष्ण दास जी, चौखंभा, बनारस

आदि—

श्री महागणपतेय नमः श्री सरस्वती मांता जी सहाय अथ रस रतनावली लिष्यते ॥ सीता राम जू सहाय ॥

॥ दोहा ॥

गुरू गुपाल गोकुल गिरा गोवर्द्धन गगनेस।
मंडन गोधर गंग सुत गिरिजा गिरिस गनेस ॥

अंत—

वारों ये वेर गवारन कौ भषु तैई पै पास जिन्हें कछु हौंनो।
'मंडन लाल' कहा इन सो ललचावत हो अपनो मुंह लौंनों ॥
मेवा जु होइ सुलेहु बलाइ लौं दारिनौ कै दाष विकात जु कौनो।
सो अपने कहि देहु मगाइ कहौ वलिहार जराव और सोनो ॥

इति श्री रस रतनावली मंडन विरचितं समपूरण समाप्त ॥ दोहा कवित्त व सवैया ॥ २३४ ॥ लिषा हीरालाल सुषराम का मिती सावण वदी ४ संवत् १७८८ श्री आंवावती नग्री में लिखी।

विषय—

'रस रतनावली' रीति ग्रंथ है। इसमें श्रृंगार रस का विस्तारपूर्वक निरूपण किया गया है।

संख्या १८०. मकरंद वानी, रचयिता—हित मकरंद, कागज—देशी, पत्र—७०, आकार—५.४ × ८.२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२२५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८१५ वि०, लिपिकाल—सं० १८२५ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यू० म्यूजियम; इलाहाबाद

आदि—

श्री व्यास नंदनो जयति ॥ श्री राधावल्लभो जयति ॥

॥ कवित्त ॥

रवि कांति मनिन के घाटनि के बंगला में,
बैठी सषी करै भाव एक रस सार री।
सुरत के रंग भरे परे आइ कुंज द्वार,
वार अरझाये हार पिय कर धार री॥
अहो रसदानी सुषदानी जानी सुरझन में,
उरझन कौ काहू भाँति पावत न पार री॥
बोली निज अली अहो कहा कहैं सारो शुक,
लये प्यारी हाथ कहे वदौ वार वार री॥१॥

मध्य—

संवत दस से आठ अठारहि। असौजी सुदि द्वैज उर धारहि॥

॥ दोहा ॥

दोहा कवित्त अरु चौपई इत सत ऊपर पाँच।
रति रण केलि लतानि कौ छिन छिन प्रति उर साँचि॥

॥ इति रतिरण केलि लता संपूर्ण ॥

अंत—

॥ राग राइसो साल चंपक ॥

रच्यौ है प्रेम हिंडोरना श्री हरिवंश कृपाल।
श्री वृंदावन रम्य में झूलत ललना लाल॥ टेक॥

उज्वलता अरू स्वच्छता षंभ सरल ह्वै वानि ।
मदन मयारी फबि रही जटित सचिक्कन ठांनि ॥ १ ॥

मरुवा विलुवा स्निग्धता मादकता सरसाई ।
चाह चटपटी अटपटी चटुवा लटु लटकाई ॥

\+ + +

जै श्री हित मकरंद यह सुष सच्यौ मिष्टभाव बिलसांही ।
दृष्टि वृष्टि जिहि पर करै तेई भावक ह्वै जांही ॥ ६६ ॥

विषय—

प्रस्तुत 'मकरंदवानी' में 'हित मकरंद' जी की रचना संगृहीत है । इसमें विशेषतः पद हैं तथा एक रचना 'रति रण केलि लता' नाम से भी है । इसके अतिरिक्त कहीं सवैया भी अपवादस्वरूप आए हैं ।

'मकरंदवानी' उसके रचयिता के समान ही श्री राधावल्लभीय संप्रदाय की चीज है । अतः इसकी मूल भावना उक्त संप्रदाय के आचार विचारों के अनुकूल है । इसमें श्री राधाकृष्ण रास विलास वर्णित है । इसके अतिरिक्त बहुत से स्थानों में श्री हित हरिवंशजी का अभिनंदन अथवा यशोगान भी है ।

वानी के प्रत्येक पद के अंत में 'मिष्टदृष्टि' शब्द अनिवार्य रूप से आया है जो रचयिता के भावदृष्टिकोण का द्योतक है । लिखा भी है :—

'दृष्टि वृष्टि जिहि पर करै तेई भावक है जाही' अर्थात्—वे श्री राधिका जी की प्रेम दृष्टि के अभिलाषी हैं ।

पदों की संख्या ११३ है । रचनाकाल संवत् १८१८ है जो ग्रंथ में इस प्रकार दिया है :—

संवत दस सें आठ अठारहि । असौजी सुदि द्वैज उर धारहि ॥

संख्या १८१. मगनिया रा दूहा, रचयिता—मगनिया, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—६ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—६०, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

श्री जलंधरनाथ जी सत्य छै

॥ दोहा ॥

गुणता गुण भवपार, है मानव खिण एक में ।
बांदो बारंवार, मुद्रा वन पै मगनिया ॥ १ ॥

वेद पुराण विसेक, पर न लाभे पंडितां।
इच्छा सिद्ध पत एक, महा अपरबल मगनियाँ ॥ २ ॥
अति नर करै उपाय, हु अेक अथवा नह हुवै।
जाणी किणियन जाय, महा अलख गत मगनियां ॥ ३ ॥

अंत—

बाट चलण रौ बोझ, सीगांला जाणै सबल।
बलकर खंचे न बोझ, माठो धोरी मगनिया ॥ ४३ ॥
पिसणां न द्रब पाक, दिल आवै जितरो दियो।
अति पय सींचो आक, मीठो हुवै न मगनियां ॥ ४४ ॥

—अपूर्ण

विषय—

नीति धर्म के ४४ सोरठे।

संख्या १८२. पिंगल या छंदसार संग्रह, रचयिता—मतिराम, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—९¾ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)-२०, परिमाण (अनुष्टुप्)-१८०, खंडित, रूप—प्राचीन (जीर्ण), पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय (रत्नाकर संग्रह), काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ मतिराम पिंगल लिषिते ॥

॥ छंद ॥

गवरिगोद महिमोद मगन मोदकर वीलसत सुषकंद।
वंदन वलित ललित उतमंगल हास गहिं सुभग जगमगीय चंद ॥
इमि सरूप सुभगज मुष ध्यावत सरसावत बहुविधि वर छंद।
मंगल करन हरन अध साँचे जै जै सिधि सदन सिव नंद ॥ १ ॥

\+ \+ \+

॥ दोहरा छंद ॥

अंबु चरन चीत लाये वरनौ वंस बूँदेल कों।
वीमल क्रुति गुनगाये निज कुल भाँन समाँन लषि ॥

नृपति 'सरुप सुजाँन' बहुविधि जाके लेषिये।
बढ़त दाँन सनमाँन भीक्षुक आये भवन मै॥
सवनि लहे मन काँम त्योंही नृप कों सुजस सुनी।
आयो कवि मतिराम ताहि वचन सनमानि कै॥
कीन्हो काम सुजाँन ग्रंथ ससक्रत रीति सों।
भाषा करो प्रमान यह सुनि रचना छंद विधि॥
करो सुकवि समुदाइ वृत्त रीति सब जाँनि हैं।
जो पढ़ै चीतलाइ पिंगल करता आदि दै॥

+ + +

छंदसार संग्रहे रच्यो सकल ग्रंथ मति देषि।
बालक कविता सींध कों भाषा सरस विसेषि॥

मध्य—

संपूरन सब कहत है अस कही कीजे फेरि।
सब्द रूप रसग्रंध कहि नाना कुसुम जु हेरि॥
गन औ वरन विचारिकै कीन्ह कुगन विचार।
गन औ सुरगन वीचारि कै कीन्हों व्रत व्योहार॥
अस सब्दादीक आदि दै मंगल वचन अनेक।
ग्रंथादिक को जानि कै नही सुग असुभ विवेक॥

॥ छप्पै ॥

श्री मंहाराज राजा अधीराज वीरसींघ देव हुव।
चन्द्रभान धरनीस धीरता को प्रसीध सुभ॥
मित्रसाहि तिनके सपुत वीष्यात जगत सव।
तासु पुत्र अवतंस अवनी पंचमसिंघ सरूप अब॥
जासु जासु येकु अवलंब सौ मतिराम सुकवि हित चित धरीये।
रची छंदसार संग्रह सरस सुगन नृपति ध्यातीकरिय (गनवती)

॥ संपूरन ॥

अंत—

॥ अथ विंव व्रतं ॥

भगन येक गुर येक फिरि येक चरन में कीन।
विंव व्रत सों जानिये पंचम नृपति प्रवीन॥

जथा

पंचम को वंसवलि साजि सदा फौज भली जाइ जहां जंग जुरे। भुप हीयो हुलसि जाहिले हुंदनसे।

\+ \+ \+

॥ अथ निसमुष व्रत ॥

॥ दोहा ॥

नगन येक फिरि जगन जुग लघु गुरु फेरि मिलाइ।
भूप सरूप अवनीस सुचि निसमुष व्रत सुहाइ ॥
.........सरूपवली जहा तहा सत्रु समाज हली।
बहुविधि सज्जन पातवली दिन दिन कीर्ति आसन ली ॥

॥ अथ वर्ण प्रयातत्र ॥

—अपूर्ण

विषय—

पिंगल विषय वर्णन।

संख्या १८३. विषहरनविधि, रचयिता—मन संतोष, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—१२३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२०, प्राप्तिस्थान—भारतकला भवन, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ विषहरन विधि लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

कछु ग्रथंन मै देष कैं कछु गुर भेद बताइ।
जहर दिनाइ संसकृति भाषा करौ बनाइ ॥ १ ॥

॥ चौपाई ॥

पारवती मन चिन्ता भई। तव शंकर सौ पूछत भई ॥
जे विष है पृथ्वी मै सबै। ते कहिये प्रभु मोसो अबै ॥
केतिक विष केते उपविष जान। केतिक जरकी परवति पान ॥
केतिक जीव विष लै रहै। पूछत गौरा इश्वर कहै ॥ २ ॥

॥ छंद ॥

जे जहर बुरे अरू विकट ज्वाल। ते करै नर नीके विहाल ॥
तुम कहौ जातै होइ काज। नर जीवै विषतै त्रिपुरार ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

विष नाम नीलकंठ पंधारिया परवतिया हरयार।
सौठिया हरदिया नागिया ये अति है वरयार ॥
रतुवा दुधिया तेलिया महावरिया अतिसैन।
निरविसिया जु फिटिकिरिया ओदश श्रंगी ऐन ॥ ६ ॥

मध्य—

पथरा को विष पथरा हरै। कहत 'संतोष' जो सब सुष करै ॥

+ + + +

'संतोष चदेरी' गैद तावै। पीर ना होइ न बहुत गै हागै ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

विषनाशन उपचार सब भये समापत सोइ।
'मन संतोष' विचार कै भापा करी अवलोइ ॥

॥ जुलाब की इलाज ॥

निसोत पीपरी धेला धेलाभर पांडा २५ ठंडे पानीमै षाइ ठंढो पानी पियै फेर दूध भात षाइ वंद होइ ॥

इति श्री विशहरन विधि समाप्तं फाल्गुन सुदी ३ गुरू वासरे संवत् १९२० इदं लिखतं नंदकिसोर गौडेन ॥

विषय—

अनेक प्रकार के विषों की औषधि वर्णन की गई है।

संख्या १८४. कवित्त, रचयिता—मनिवेद, वेदमनि तथा वेदविद, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—७½ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—११२, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि— नागरी, प्राप्तिस्थान—पंडित दयाशंकर मिश्र, गुरूटोला, आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्री भवानी जी सहाइ ॥ राम जी सहाई ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥

हे जगतंब विलंब न कीजै है अवलंब तिहारो ॥
अति अथाइ अवगाह जलधि जल पगनिवाह निहारो ॥
चाहत सुचित होन नहि पावत चितमेरो पचिहारो ।
तुमही कृपा पूरि पदु पंकज जनके मनहि विहारो ॥ १ ॥

विधि हरिहर वाप आप पाय रहे ताप तिंहु पुर प्रगट अलापसुति सेस को ।
सिद्धि ही को कारन विदारन विपति कोहै वारन सो वदन विराजत सुदेस को ।
धूम ध्वज धीरज धरन के चरन करि पावत सुगम धन ध्यावत धनेस को ।
जननु न जानिए अननु उपमा है याते कीजिए मननु गुन गननु गनेस को ॥ २ ॥

\+ \+ \+ \+

अली मंद मंद मुरली धुनि वाजै नृतत्त कुंज विहारी ।
गावत मोद भरी दै दै वृषभान कुमारी तारी ।
फेरनि मृदंगनि सहासनि हेरनि ठगी निरषी सब नारी ।
हाव भाव निरषत नटवर को कोन होइ विचिचारी ।
किंकिनि कल नूपुर धुनि सुनि चित्त चेति मंद पद चारी ।
षोत खेद सुष सोत सदा 'मनिवेद' होत वहारी ॥ ४ ॥

अंत—

बालम भली भाँति विसरौ ।

पापी प्रान चलत प्रिअ तुम्ह से तवै नाही तिसरो ।
फूले नाही नैन पांवडी निसि दिन नीर भरो ।
लीजै सुरति 'वेदमनि' जैसे वरवस गरे परो ॥ १ ॥

अब प्रभु जौ मेरे गुन गहि है ।

तौ तौ कुटिल प्रान कपटी एकैसे सुषी निवही हौ ।
जीवत तुम्है विहीन निलज जौ पथिक जाइ कोउ कहि है ।
प्रीति प्रतीत तजै प्रीतम हम कसन सासना सहि है ।
करनी समस जाइ दै दै अव विरह अनल तन दहि है ।
'वेद' दीन विन सलिल मीन ज्यों तरफराति तरहि हौ ॥ २ ॥

सुनिए विदित तेरो विरद विसाल जन आपने जननि नाहि नेसुक विसारती।
एतो दुष पायो चिंता चिंता न मिरायो दिन एहि कविता यो मो विनै न उर धारती।
गारती गरूर दीह दारीद नेवारति तै दनुज दरन को है पाथर पधारती।
'वेदमनि' आरती हे हरकी उदारती सभारती ख्वारित क्यों न विपति बिदारती ॥१८॥

विषय—

श्रृंगार और भक्ति संबंधी कवित्तों का संग्रह।

संख्या १८५ क. मनीराम के कवित्त, रचयिता—मनीराम, कागज—देशी, पत्र—१९, आकार—९×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—८५५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

साहिब किरान सानी साहि जहा पातिसाह साहिब की जामिसे सु लीन्हें महि माथ हे। दसों दिसा दावें दिग पाल रहें जाके लिये मेरु राषे रहे मध्य तेजु तिन साथ हे। चक्कवे चकत्ता चहू चक्क के साहिब आजु दसों दिसि तेरी दस दिसि कोले नाथ हे। जासों लीजे तासों लीजे जाहि दीजे ताहि दीजे लीवो दीवो आलम पनाह तेरे हाथ हे ॥ १ ॥
तुहीं दानि दुनी में देवैया दीननि को तुही तेरे गुन गणे को जो होइ सेत रूप से। तेरे दिये दान न घटत घर ते घरीक घने घने पेलन पेलाइ देषो जूप से। मरजिया जावक पावत मोज लहरी सों सुजस को सिंधु ते नृपति योर कूप से। सुनि सुनि तेरो दान साहि पिरोजषान भूप भे भिषारी ते भिषारी किए भूप से ॥ २ ॥

अंत—

आलम जियाइवे को आलम पनाह आपु करी न परति महीमा हे अवतार की। जिय की न जाने जोन जोगीस्वर वात सोइ जानतु हे साहिजू के मन के करार की। लंका पतिहू से कोउ थपि थापे एकनि कौ और काहि छबि छाजे एती भुअभार की। साहि किरन सानी साहि जहाँ पाति साहि जामे सब पैये करतूति करतार की ॥ २०५ ॥

गज आननि पुनि देव कटिहि जड़ भाव वित्त कर।
फुर सो मुकि जग पथ्य डिढि दै इसे दुष्य हर।
सेवक पिप्पिहि सिद्धि झुंड गन लिये ठट्ट फल।
लंब जठर भव वंच हु है सुघट मंझ छंडि छल।
वंदहि सो देव फन पत्ति मिलि भवर डिढ मार्मिहिलहि।
'मनिराम' सुमिरि गनपति कहि मन चिंतित अच्छर मिलहि ॥ ६०६ ॥

विषय—

बादशाह शाहजहाँ की प्रशंसा की गई है।

संख्या १८५ ख. पातसाही कवित्त साहिजहां के, रचयिता—मनीराम (स्थान—असनी, फतेहपुर), कागज—देशी, पत्र—३७, आकार—७ × १३·८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)-१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—७४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि-नागरी, प्राप्तिस्थान-हिंदी साहित्य संमेलन, इलाहाबाद

आदि—

॥ श्री गणेशायनमः कवित्त मनीराम के ॥

साहिब किरान सानी साहि जहाँ पातिसाह साहिब की जानि से सुलीन्हें महि माँथ है।
दसौ दिसा दावें दिगपाल रहैं जाके लिएँ मेरू राषें रहैं मध्य तेजु तिन साथ है॥
चक्कवै चकत्ता चहुँ चक्क के साहिब आजु दसौ दिसि तेरी दस दिसि को तै नाथ है।
जासों लीजै तासों लीजै जाहि दीजै ताहि दीजै लीवो दीवो आलम पनाह तेरे हाथ है॥

\+ \+ \+

केता मेरा लसिगर मार विचलाइ दिया आपु जसु लिया देषा कैसी दिल आई है।
सारे षुरासान के मुकाविले अकेला आया सेर सम धाया यों हिम्मत हिए नाई है।
जिस फौज उह सरदार होइ साहि कहें उस फौज में न जाना सामुहैं वडाई है।
ऐसे हिंदू लरते हैं जैसा लरा सत्रुसाल उस सों हमारी हिरगिज न लराई है॥६०॥

अंत—

जान पनी आनि जगति मति गनपति नागपति,
हू की गति धूलि भूलि भरमति है।
तेज आगे तरनि तेज सो तरैया सम कहे,
'मनिराम' ए तौ राजे कविवर में।
परम प्रतापी पाति साहि जहा (जाइ)
डोले दिगपाल जब पगलेत कर में।
मोज सुनि सहमे सुमेरु कसे के कुवेद।
लक्ष पतिहू घेरू होत घर घर में॥ २०४॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में मनीराम के २०५ कवित्त हैं। बीच बीच में १-२ दोहे भी हैं; परंतु वे अपवाद स्वरूप हैं। इस ग्रंथ का विषय शाहजहाँ और उसके दरबार के राजपुरुषों की प्रशंसा है। अतः यह एक प्रशस्ति काव्य है। इसके अतिरिक्त कुछ कवित्तों का विषय देवी, शिव और कृष्ण की भक्ति तथा भ्रमर गीत है।

ग्रंथ में शाहजहाँ के विषय में अधिक कवित्त हैं तथा उसकी बसाई हुई दिल्ली या शाहजहानाबाद का भी वर्णन है। शेष राजपुरुषों में से निम्नलिखित विशेष महत्त्वपूर्ण हैं; क्योंकि वे हिंदी कविता के प्रेमी और कवियों के आश्रयदाता कहे गए हैं :—

१—फीरोज खाँ (कवित्त संख्या २, २५, २६)

२—मुदफर हुसेन (क० सं० ११, १७, १८, ३६, ३७, ७०, ७४)

३—मिरजा साहेब सेष पुल्लह (१९)

४—बहमनियार खाँ असफ खाँ के पुत्र (२४)

५—इतकाद खाँ (असफ खाँ के पुत्र) (६६)

६—मिरजामुतलिब (३०, ३१)

७—दारा शिकोह (३२, ५९, ७२, ७१)

८—तरवियत खाँ (३५)

९—निजावत खाँ (६३, ६४)

१०—असालत खाँ (६७)

११—आसफजाह (१६३, १६७)

१२—माथुर मुकुंद राय (१६८)

१३—जयसिंह (५३, ५४, ५५)

१४—कुँवर अमर सिंह (राजा जयराम के पुत्र ३३)

१५—मित्रसेन (१३)

१६—सदारंग (१४)

टिप्पणी—रचयिता के कुछ कवित्तों की भाषा खड़ी बोली लिये हुये है, देखिए संख्या ६० का कवित्त:—केता मेरा लसिगर मार विचलाइ दिया आपु जसु लिया देषा कैसी दिल आई है······।

संख्या १८६. श्री राधिका रमण रस सागर या राधारमण रस सागर, रचयिता—मनोहरदास जी (स्थान—वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—१७, आकार—१०¼ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५७ वि०, लिपिकाल—सं० १९११ वि०, प्राप्तिस्थान—गो० दामोदराचार्य वैष्णव शास्त्री, राधारमण मंदिर, वृंदावन, जिला—मथुरा

आदि—

श्री राधा रमणो जयति अथ श्री राधारमण रससार लीला लिष्यते ॥

कवित्त

प्रथम प्रणाम गुरू 'श्री रामशरण' नाम चट्टराज चरण सरोज मनभायो है ।
कृपा कीनी दीनी दीक्षा सिक्षा परिचर्या निज राधिका रमण वृंदावन दरसायो है ॥
सद्‌गुन समुद्र दयासिंधु प्रेमा पारावार सील सदाचार कौ वितान जगछायौ है ।
ता दिन सफल जन्म भयौ है अनाथ बंधु 'मनोहर' नाम राषि मोहि अपनायौ है ॥१॥

॥ छप्पै ॥

श्री चैतन्य कृपाल कृपाकर भट्ट गोपालै ।
तिन श्री निवासा चार्य वर्य करुणा कौ आलै ॥
रामचरण तिन कृपा चक्रवर्ति विख्याता ।
रामचरण चटराज कृपा तिन सारहि ज्ञाता ॥
सुद्ध भक्ति रस राग तिन करुणाकर दीक्षा दयी ।
'दास मनोहर' नित्य गुरु पद धूली सिरपर लई ॥ २ ॥

\+ \+ \+

द्वितिय शिष्य अद्वितीय देव वनवासी भूसुर ।
गौड श्री गोपीनाथ गुसाईं गुरु सेवन वर ।
करुणाकर श्री भट्ट गुसाईं कियौ अधिकारी ।
श्री राधिका रमण सौंपि सेवा सुठि भारी ।
हरिनाथरु मथुरादास हरिराम जु निजु अनुगत किये ।
इनके वंस प्रसंस मनोहर परिचर्या चितवित दिये ॥ ५ ॥

अंत —

राधिका रमण रस सागर सरस संत पढत दिवस रैनि चैन नाही मन मैं ।
सेवन की अभिलाष राषत छिनुही छिनु बिनु दरसन तलफत वृंदावन मैं ॥
ऐसो बड़भागी पै करत कृपा अभिमत निरखै युगल हित पुलकित तन मैं ।
मनोहर करै आसपास वास नित्त निकट मैं रहै श्री गोपाल भट्ट परिकर मैं ॥१११॥

॥ अरिल्ल ॥

संवत सत्रह १७ सै सतामन५७ जानि कैं ।
सवन वदि पंचमी महोत्सव मानि कैं ॥
निरखि श्री राधा रमण लडैती लाल कौं ।
हरिहर 'मनोहर' संपूरन वनराज विचारयौ ख्याल कौं ॥ ११४ ॥

इति श्री राधारमण रस सागर नाम लीला संपूर्ण संवत् १९११ कार्तिक दीपमालिकूं लिपि पूर्णा चुन्नीलाल ब्राह्मण मूढोति यामनी पारावास वृंदावन राधारमण इष्ट ॥

विषय—

षटऋतुओं में श्री राधारमण जी के रास विहार का वर्णन किया गया है।

रचनाकाल

संवत सत्रै[१७] सै सत्तामन[५७] जानि कै।
सावन बदि पंचमी महोत्सव मानि कै॥
निरखि श्री राधा रमण लडैती लाल कौं।
हरिहर 'मनोहर' संपूरण वनराज विचार्यौ ख्याल कौं॥

संख्या १८७. उधौपचीसी, रचयिता—मलूक, कागज—पीला, खुरदरा पतला, पत्र—३, आकार—६'५ × ४'५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२५, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५ कवित्त, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह गहलोत; पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ गोपी कौ उराहनौं॥ ऊधो समय॥

सुनि सुनि बातें ऐसी माधौ सौं बझाति नाहि जोग जोग नाही ताके कैसे उर आइहै।
तुमको तो कही है यह कौंन की कही है बात हम तौ सही है जो पे तुम मन लाइहै॥
सुनो हो 'मलूक' यह बात है परवाने वारी वयकै बंबूर कोऊ आव फल खाइहै।
परधन पाइ के जु अति इतराइ ऊधो काहू कलपाइहै सो कैसे कल पाइहै॥ १॥

\+ \+ \+

जोगऊ निदी तों हम लीनों धरि आंखिनी पै
भस्म लगावैंगी जू पाइअहु सीस लौं।
मोह से लगैगी ओर बसनो रंगेगी जाइ ब्रह्मा
सौं लगेंगी औ पगेंगी ध्यान ईस लौं।
सुनो हो 'मलूक' हमें और न परेखौ कछू
कुबिजा कौ नांउ बीच लागत है टीस लौं।
नरगस फूल कीसो डांडियौ न करी प्रीति
तौरे हूँ रहस फूलति उधौ धौस दस बीस लौं॥ ३॥

अंत—

जौ उनि कौ हितु है हम सौं अव तौ यह मोनिहै बात कही कों।
जोग 'मलूक' वनें तबही मन हाथ रहें जब जानें सही कों।

जोग वहै जु कहावत उद्धव जोग करैं हरि बाँह गही कों।
नातरु वात की बात कहौ जु गई सु गई अब राख रही कों ॥ २५ ॥

इति मलूक कृत उधो पचीसी संपूर्ण ॥ श्री ॥ श्री ॥ श्री ॥

विषय—

मथुरा से ज्ञान का संदेश लेकर आए हुए उद्धव को गोपिकाओं का उराहना देना और निर्गुन ब्रह्म की हँसी उड़ाना।

संख्या १८८. प्रकटज्ञान, रचयिता—मलूकदास, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—७·२ × ५·१ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४८, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—कैथी, प्राप्तिस्थान—संग्रहालय, हिंदी साहित्य संमेलन, इलाहाबाद

आदि—

॥ श्री राम मलूक ॥

अथ प्रगट ग्यान गरंथ·संसकीरत में अनभा ॥

॥ दोहा ॥

उपदेस्ठा इस्त्र प्रभु श्री हर प्रमानंद।
व्यापीक कारन जगत के ता नमामी पद वंद ॥

चौपाई

सुनीये प्रगठ ग्यान करी भाषौ, शोई नाम गरंथ को राषो।
तामे मुख शीखा ततशारा, शाधु वीचारहु वारंवारा।

व्रन आस्त्रम को ध्रम तेही तप हरी शंतुस्ठ।
वैराग आदी शहज ही भए शाधन कहौ चतुस्ठ ॥

॥ चारौ शाधन भन्य भीन्य (? भिन्न भिन्न) व्रनन ॥

॥ प्रथम वैराग लछन ॥

व्रमा आदी वीभो शव जेती, अपर शकल लोकन में तेती।
काक वीस्ठी (?) राम सखी करै त्याग।
शो कहीये नीमल वैराग ॥

॥ अथ जोग नाम वरनन ॥

जम औ नेम त्याग की जानो।
मौन देश का लघु वा मानो ॥

आशन मुलबंद जो आही।
देह शमाद्दीग अस्थित काही ॥
शंजम प्रान औ प्रतीअहार।
और धारना को करो वीचार ॥
आतम ध्यान शताधी जानो।
शुनीये भीन्या भीन्या बी'''''' ॥
अथ शाधन भीन्य भीन्य वरनन नाम

चौपाई

पोथी जीर्ण-शीर्ण होने से और उद्धृत नहीं किया जा सका।

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का संबंध संत संप्रदाय से है। इसमें विवेक, घट साधन, विचार, जगत कारन, आत्मदेह, युक्ति, आत्म अनात्म, ज्ञान-जोग वर्णन आदि प्रसंगों के अंतर्गत ज्ञान की चर्चा है।

ग्रंथ दोहा चौपाई में रचा गया है।

संख्या १८९. मनलगन, रचयिता—काजी महमूद बहरी (स्थान—गोगी), कागज—देशी, पत्र—११०, आकार—८.६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—४१८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—फारसी, रचनाकाल—१२ वीं सदी हिजरी, प्राप्तिस्थान—श्री डा० मुहम्मद हफीज सैयद साहब, चैथम लाइन, प्रयाग

आदि—

किताब मन लगन तसनीफ काजी महमूद बहरी साकिन गोगी बिसमिल्लाह अरहमान रहीम ॥ ए रूप तेरा रते रते हैं—ए रूप तेरा रते रते है—परवत परवत पते पते हैं। परवत में आदिक न कम पते में—इकसार है रास होर रते में।

होरय यूँ पैखी न जाय तुझको—जो बीज जगत के जाय तुझको।
सागर तू न सूरमाँ दामें नाका—सन्दूक में सोर क्यों समाका।
तूफान तनिक समन के बू में—समदूर इक अंग के अजूं में।
इकपाल में नौ फलक बसे क्यों—इक घर मैंने दो जहाँ धसे क्यों।
दरिया में सदफ है लाग भरता—पन क्यों भरे हिच सदक में दरिया।

अंत—

कर कोई शुक्र अछोकर कोर-
बहूरी करानाज वसयो मजकूर।

यो लोग खान योगियान पोकत-
यो भेद खान यो पे हकीकत।
कोई छाछ मैंने शकर न भावें-
होर दूध केतें नमक न लखें।
...तो औथाथ ताते जाता-
के भाँत विचार मुख दिखाता।
खामोश कों बोलते पुरुष है-
खेते कों कहें कि बुल हवस है।
तू जिया है अवस हवस केतें होश-
कर होश हवस सवै फरामोश।
रख असिल पैचित्त न छाँव ऊपर-
कर खत्म खुदा के नाँव ऊपर।

विषय--

'मनलगन' सूफी मत की रचना है और इसका विषय दर्शन है। इसमें आरंभ में क्रम से ईश्वर की वंदना है। मुहम्मद साहब की वंदना, सामयिक सम्राट् (बादशाह औरंगजेब) की प्रशंसा, गुरु की वंदना और पुस्तक लिखने का कारण आदि वर्णित हैं। इसके उपरांत पुस्तक का मूल विषय प्रारंभ होता है। पहले हिकायत, अर्थात्--कोई कहानी या दृष्टांत दिया गया है और उसके पश्चात् मत या निष्कर्ष का प्रतिपादन है।

इस प्रकार मूल विषय कहानी और उपदेश के रूप में है। यह रचना १२ वीं सदी हिजरी अर्थात्, औरंगजेब के समय की है जैसा, एक तो ग्रंथ में उक्त बादशाह के उल्लेख से पता चलता है तथा दूसरा स्पष्ट उल्लेख भी है :—

'हे भाई यो वारवीं सदी है
नेकी को दवा वदी वदी है।'

पुस्तक की भाषा हिंदी का दक्खिनी रूप है। फारसी शब्दों का प्रयोग स्वतंत्रता पूर्वक हुआ है और सूफियों के प्रिय छंद दोहे चौपाइयों के स्थान पर फारसी छंदों का प्रयोग किया गया है।

संख्या १६०. वाणियाँ, रचयिता—महादेव। इनकी वाणियाँ संख्या ५८ के विवरणपत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या १६१. श्रीनाग पिंगल, रचयिता—माखन (स्थान—रायपुर), कागज—आधुनिक, पत्र - ३२, आकार—$8\frac{1}{2} \times 6\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५१२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री गणेशायनमः ॥ श्री सरस्वत्यैनमः श्री गुरूभ्यो नमः ॥

॥ सवैया ॥

मंगल श्री गुरुदेव गणेश कृपाल गोपाल गिरा सरसानी ।
वंदन कै पद पंकज पावन पावन छंद विलास बषानी ॥
कोविद बृंदन के कलपद्रुम काम धुका मनि काम निधानी ।
सादर इंदु मयूषन सीतल सुंदर सेस सुधारस वानी ॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

पिंगल सागर छंद मणि वरण वरण बहु रंग ।
रस उपमा उपमेय तैं सुंदर अर्थ तरंग ॥ २ ॥
तातें रच्यो विचारि के नर वषानि नर हेत ।
उदाहरण बहु सरन तैं वरनत सुमति समेत ॥ ३ ॥
राजसिंह नृपराज मणि है हौ वंस प्रकास ।
सुवसरायपुर मे रच्यो सुंदर छंद विलास ॥ ४ ॥
सदा सुकवि गोपाल को श्री गोपाल कृपाल ।
तिन सासन हित तै रच्यो छंद विलास रसाल ॥ ५ ॥
नरवानी पिंगल रच्यो छंद सेसमति धारि ।
जथा सुमति माषन रचो बुधजन लेहु विचारि ॥ ६ ॥

गितिका

पितु सुकवि गोपाल को यह भयो सासन है जबै ।
विमल पद वंदन कियो हिय सुमति वाढी है तबै ॥ ७ ॥
अति भारि पिंगल सिंधु मे मति मीन ह्वै करि संचरौं ।
मथि काढि छंद विलास माषन कविन सों विनती करौं ॥ ८ ॥

द्रुमिला

जिमि कंचन के कन आदि तिला सम ज्यौ न तुला पर नेकु चढै ।
इमि कर्ण तुला कवि लोगन के सुनि छंद विहून कहू न रढे ॥
मति मूढ हुलास प्रवीनन मध्य असुद्ध कवित्त बनाय पढै ।
हँसि बोलि सराहत सो न लषौ उरमै सरसैं फेर फेर कढै ॥ ९ ॥

दोहा

यातें पिंगल ग्रंथ गुणि कीन्हो छंद विलास।
पढ़ै गुनै सुनि तै वढै दिन दिन वुद्धि प्रगास ॥ १० ॥
चारित्री सकल मै सबै द्वादश मात्रा जानि।
नव दीरघ करि लेषिये लघुकर तीन वषानि ॥ ११ ॥

अंत—

॥ हरि मालिक छंद ॥

चरन चमू प्रति कल लै वीसहि दीजै।
विरति दसाइक दै दिग मै पुनि कीजै ॥
अंत गुरु यक देहु कि द्वै करि वंदौ।
कहि 'माषन' तिहि सो हरिमालिक छंदौ ॥ ३१ ॥

॥ जथा ॥

रजनी आजु जगे कित प्रीतम प्यारे।
राजत नयन षरे सु दुवो रतनारे ॥
उरसि नषक्षत ए गुन बिनु माल लसै।
अंजन अधर कपोलनि वंदन दरसै ॥ ३२ ॥

॥ मदन सुमोहन छंद ॥

कल तेइस पद प्रति देहु चरन सु उक्ति करौ।
गुरु एक सुलोचन अंत मध्यहि राम धरौ ॥
जति त्रिदस रुदिना मे राषि पिंगल नाग भनै।
यह मदन सुमोहन छंद भिधा कवि जनहिं गनै ॥ ३३ ॥

॥ जथा ॥

मनमोहन रूप निधान रसिक सुरंग भरे।
वे नृतत ग्वालिन संग मुरली अधर धरे ॥
धरि मंजुल मोर किरीट कुंडल गंडह लै।
यह छबि कवि 'माषन' देषि काम के मात चलै ॥

इति श्री नाग पिंगल भाषा माषनकृत मात्रावृत्त संपूर्ण समाप्त शुभंभवतु ॥

विषय—

वर्णवृत्त और मात्रावृत्तों का वर्णन किया गया है।

संख्या १६२. दोहावली, रचयिता—माखनदास, कागज—देशी, पत्र—२८, आकार—५.८×९.६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—५०४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—हिंदी साहित्य संमेलन, इलाहाबाद

आदि—

श्री गुरुवे नमः ॥ श्री जानकी नाथायनमः ॥

॥ अथ दोहावली लिख्यते ॥

सोरठा

वंदो गुरु पद कंज विगत राग विज्ञान मैं।
नाम अमीरस रंज भाति दानि दाता अचल ॥ १ ॥
गुरु प्रताप जल जान 'माषन' मन विश्वास कर।
आतम तत अग्यान पाइन उतर पार जे ॥ २ ॥
गुरु पद रज उजियार 'माषन' माडामोह मैं।
नासै तिमुर अपार तब सूझै तेहि भगति पथ ॥ ३ ॥
विन रवि गुर अंधियार सोवत देषौ जग्त सब।
त्रिगुणी निसा अपार 'माषन' सुतवित स्वप्न सुष ॥ ४ ॥

अंत—

पंडित कविता बुध नही, नही अगन को ग्यान।
'माषन' मन रुचि जोरि कै, कियो राम गुण गान ॥ ३३७ ॥
विगरो अर्थ सुधारि कै बुध करि है मनु पूर।
'माषन' कटि है कुटिल जे ते हमहू ते कूर ॥ ३३८ ॥

मास अगन पक्ष कृष्ण तिथि सप्तमी सोमवार ॥ संम्तसर १८६१ ॥ श्री रामचंद्र सत्ति ॥ दोहावः ॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'दोहावली', अर्थात्—दोहों का संग्रह है। ये दोहे माखन कवि रचित हैं। इनका विषय ज्ञान, भक्ति और वैराग्य का उपदेश करना है। आरंभ में गुरु की महिमा है। इसके बाद राम नाम का माहात्म्य है। अंत में राम के शील और भक्तवत्सलता का वर्णन है। ग्रंथ के आरंभ में तो एक प्रकार का विषय क्रम लक्षित होता है, किंतु अंत में विविध विषयक दोहे विना किसी क्रम के आने लगते हैं।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत रचना साधारण कोटि की है। कवित्व प्रदर्शन इसका हेतु न होकर रामगुणगान करना ही इसका प्रमुख ध्येय है :—

पंडित कविता बुध नही नहीं आगम को ग्यान।
'माषन' मन रुचि जोरि कै कियो राम गुणगान॥

संख्या १६३. माणकबोध या आत्मविचार (टीकासहित), रचयिता—माणक, कागज—देशी, पत्र—५८, आकार—१० X ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६२१, खंडित, रूप—प्राचीन, गद्य-पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१९१५ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० श्याम सुंदर जी, स्थान और डाकघर—नंदगाँव, जिला—मथुरा

आदि—

श्री रामाय नमः॥ श्री गुरूभ्यौ नमः॥ सकल संतभ्यौ नमः॥ अथ माणक बोध आत्म विचार लिषतं॥

दोहा

मंगलायेन करुणायतन अव कल्याण गुणधाम।
मम मानस सर हंसवत रमण करहु सियाराम॥ १॥

॥ ध्यान कृष्ण जी कौ॥

स्याम सरीर पीताम्बर सोहत दामनी ज्यौं रवि देत दिषाई।
सीस मुकुट अति सोहत है घन ऊपरि ज्यौं रविदेत दिषाई।
कंठ विषै मणि माल वनी मनौं नील गिरि मैंहि गंग जु आई।
माणक कै मन मांहि वसौ असो नंद को नंदन वालकनाई॥ २॥
गोधन के संग आवत गावत वंसी वजावत है मग मैं।
भाल तिलक उरमाल धरि कटि कंकनि नूपर है पग मैं।
चिंतत ही चित्त चोरत है कोऊ है ठग माणक महाठग मैं।
अस ध्यान सदा उर मांहि वसो वड़ जीवन को फल यौ जग मैं॥ ३॥

अंत—

सर्व सास्त्र पारदरसी सर्वज्ञ ईश्वर तुल्य आचार्य दयाकरि तत्वजो वषानही।
तत्व तैं विमुष अति अभिमानी मत्सरी जो तत्व को निसंक होय करै अपमानहीं।
मंद बुद्धि जाकै सर्व सास्त्र को ज्ञान नांही ऐसा ही है कृत्य मेरा ताकूं कषमानही।
ज्ञान की विशुधि काज कियो है विचार ऐसो जांनि बुद्धिवान नांही कोप उर आनही॥२॥

\+ \+ \+

॥ सवैया ॥

यमुना तट केलि करै वहरै संग वाल गोपाल बनै बल भइया।
गावत है कबी बंसी बजावत धावत है कबहुँ संग गइया।
कोकल मोर की नाँई वे बोलत कूदत हैं कपि मृग की नईया।
'माणक' के मन माहि वसो ऐसो नंद को नंदन बालकनइया ॥ ६७ ॥

इति श्री आत्म विचार ग्रंथ महामोक्ष हेतु संपूरण मिति आसोज वदी ११ संवत १९१५

विषय—

आत्मज्ञान का वर्णन किया गया है।

इसमें अधोलिखित चार प्रकरण हैं :—

१—अनुबंध निरूपण नाम प्रथम प्रकरण	१ पत्र से १० तक
२—अध्यात्म निरूपण नाम द्वितीय प्रकरण	१० पत्र से २४ तक
३—आत्मस्वरूपावधारण नाम तृतीय प्रकरण	२४ पत्र से ५४ तक
४—आत्मस्वरूप स्थिति निरूपण नाम चतुर्थ प्रकरण	५४ पत्र से ६३ तक
५—आत्मविचार की फल द्वारा स्तुति प्रकरण	६३ पत्र से ६४ तक

संख्या १६४. करुणाष्टक, रचयिता—माधौदास, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—९ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर (राजस्थान)

आदि—

श्री नाथ जी, अथ करुणाष्टक लिख्यते
......गज घंटा तले सुत राखे टिंटेरी।
अरि तैं राखि लियो पैहलाद जु ॥
शास्त्र बतावत साख घनेरी।
इंद्र कोप समे व्रज गोप गउ हरि।
राखि लिये सब बेर कटैरी।
दीन दयाल कृपाल दयानिधि,
वोहि सहाय करो प्रभु मेरी ॥ १ ॥

अंत—

॥ दोहा ॥
करुणा अष्टक को पढ़ै, सांझ मध्य अरु भौर।
ताकै संकट सब मिटै, निहचै नंद किसोर ॥ ९ ॥